अष्टाध्यायी-पदानुक्रम-कोशः

AṢṬĀDHYĀYĪ-PADĀNUKRAMA-KOŚAḤ

अ – प्रत्याहारसूत्र I

अ – III.i.80 (धिवि तथा कृवि धातुओं से उ प्रत्यय तथा उनको).........

....

....

....

....

ह्वावामः – III.ii.2 (ह्वेञ्, वेञ्, माङ् – इन धातुओं से.........

अवनीन्द्र कुमार

परिमल संस्कृत ग्रन्थमाला 44

सव्याख्य

अष्टाध्यायी-पदानुक्रम-कोशः

A WORD INDEX OF PĀṆINI'S AṢṬĀDHYĀYĪ

सम्पादकः

अवनीन्द्र कुमार

परिमल पब्लिकेशन्स

दिल्ली

प्रकाशक

परिमल पब्लिकेशन्स

कार्यालय : २७/२८, शक्ति नगर, दिल्ली-११०००७

बिक्री केन्द्र : २२/३, शक्ति नगर, दिल्ली-११०००७

दूरभाष : २३८४५४५६, ४७०१५१६८

ई-मेल : order@parimalpublication.com

संस्करण : वर्ष 2015

ISBN : 978-81-7110-118-4

मूल्य - ₹ 800.00

मुद्रक:
बालाजी इमेजिंग सिस्टम,
अशोक विहार, दिल्ली–110052

इस कार्य में व्यस्त रहने के कारण
जिनकी सेवा में मुझसे अनेकशः प्रमाद हुए,
उन स्वर्गीया मां की पुण्य-स्मृति को

—अवनीन्द्र कुमार

पुरोवाक्

मेरे प्रिय अनुजकल्प श्री अवनीन्द्र कुमार ने पाणिनि की अष्टाध्यायी के प्रत्येक पद का अकारादि क्रम से नया कोष प्रस्तुत किया है। वैसे पहले कत्रे द्वारा सम्पादित पाणिनि-कोष है, एक दो और अनुक्रमणिकाएँ हैं, परन्तु इस कोष की अपनी तीन विशेषताएँ हैं—

१. इसमें न केवल पद प्रत्युत उसके सभी व्याकृत रूप पूरे सन्दर्भ के साथ दे दिये गये हैं।

२. प्रत्येक सन्दर्भ के साथ पूरा अर्थ भी सूत्र का दे दिया गया है।

३. जहाँ समास के भीतर भी कोई पद आया हुआ है, उसका भी अपोद्धार कर दिया गया है।

इस दृष्टि से यह कोश अत्यन्त संग्राह्य और उपयोगी हो गया है।

श्री अवनीन्द्र कुमार ने बड़े मनोयोग से पूरी अष्टाध्यायी का मन्थन किया है, अष्टाध्यायी को उसकी समग्रता में पहचानने की कोशिश की है तथा एक-एक पद को पूरी अष्टाध्यायी के परिप्रेक्ष्य में परखा है। यह दुस्साध्य कार्य रहा होगा, मुझे परितोष है कि मेरे अनुज ने कहीं भी अपनी समग्र दृष्टि में शिथिल समाधिदोष नहीं आने दिया है।

पाणिनि को समझना पूरे विश्व को समझना है, केवल भाषा के ही विश्व को नहीं, भारत की सूक्ष्मेक्षिका प्रतिभा द्वारा साक्षात्कृत पूरी वास्तविकता को समेटने वाले अर्थ-विश्व को समझना है और बहुत अच्छा होता यदि प्रत्येक प्रविष्टि में विभक्ति, कारक का निर्देश भी यथा-संभव दे दिया गया होता, उससे अर्थ स्पष्टतर होता। जैसे— अगात् [(अ + ग) = अग, पंचमी १] इतना देने से अगात् का अर्थ अधिक स्फुट हो जाता है, उसमें किसी दुविधा की गुंजाइश नहीं रहती, उसी प्रकार कहाँ प्रविष्टि-पद स्वयं का वाचक है, कहाँ अपने से ज्ञापित समूह का, कहाँ अर्थ-कोटि का, कहाँ प्रत्यय का, कहाँ वर्ण का या वर्ण-समूह का, यह भी स्पष्ट कर दिया गया होता तो कोष बड़ा तो हो जाता, पर पूर्णतर होता। पर ग्रन्थविस्तार का भय रहा होगा, हिन्दी अनुवाद में ही ये बातें कुछ हद तक गम्य हैं, ऐसा सोच लिया गया होगा।

अस्तु, प्रस्तुत पाणिनि-पदानुक्रमणी श्री अवनीन्द्र कुमार के बरसों के तप का श्लाघ्य फल है और पाणिनि-अध्येताओं के लिए उत्तम सन्दर्भग्रन्थ है, मैं कोशकार को हृदय से आशीष देता हूँ। उनका पाणिनि में मनोयोग और बढ़े और वे उत्तरोत्तर व्याकरण के अन्तर्दर्शन में प्रवृत्त हों।

अधिक भाद्रपद शु. १४

वि. सं. २०५०

— विद्यानिवास मिश्र

प्रधान सम्पादक— नवभारत टाइम्स

पूर्वकुलपति—सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय

वाराणसी

द्वे वचसी

महर्षि पाणिनि-विरचित अष्टाध्यायी भारतीय चिन्तन से प्रसूत प्रज्ञा का चरमोत्कर्ष है। महर्षि ने अपनी तपःप्रसूत साधना की सुदृढ़ आधारशिला पर प्रज्ञा-प्रासाद का निर्माण किया और अन्तर्दृष्टि-प्रसूत चिन्तन को आगे आने वाले युगों के लिए भाषा की अनवद्यता-हेतु हमें एक निकषोत्पल उपहृत किया।

पाणिनि की अष्टाध्यायी के अध्येताओं की एक सुदीर्घ परम्परा है। आधुनिक भाषा-वैज्ञानिकों ने भी मनोयोगपूर्वक पाणिनि-परम्परा से जुड़कर ज्ञानधारा में अवगाहन करने का शुभारम्भ किया है। सर्वशास्त्रोपकारक होने के कारण पाणिनि-अष्टाध्यायी के सम्बन्ध में सामग्री का संश्लेषण और विश्लेषण भी कई प्रकार से सुधीजनों के सामने प्रस्तुत हुआ है। प्रस्तुत कोष पाणिनि-अध्ययन-परम्परा के प्रति एक अभिनव अवदान-रूप है।

मेरे प्रिय प्रोफ़ेसर अवनीन्द्र कुमार व्याकरणशास्त्र में कृतभूरि-परिश्रम हैं। इन्होंने पाणिनि-कोष को अपने चिन्तन के परिपाक से एक नूतन दृष्टि दी है। इस तरह के प्रयास पाणिनि के अध्ययन की परम्परा को अक्षुण्ण बनाये रखने में तथा सुधी अध्येता को अनेकधा "दुर्व्याख्याविषमूर्च्छित" होने से बचा लेते हैं। वस्तुतः कोष-ग्रन्थों में प्रयुक्त पद सुधी अध्येता के सम्मुख स्फटिकवत् अपना परिचय प्रस्तुत कर देते हैं। भगवत्पाद पतञ्जलि व्याख्यान को 'विशेषप्रतिपत्ति' का हेतु मानते हैं—"व्याख्यानतो विशेष-प्रतिपत्तिः"। व्याख्यान में प्रत्येक सूत्र का पदच्छेद यदि सन्दर्भ-सहित सहज प्राप्त हो जाय तो वह सुबोध हो जाता है, इसे ही व्याख्यान का प्रथम रूप माना गया है। पद से पदार्थ का बोध सहज होता है। मित्रवर प्रो॰ अवनीन्द्र कुमार ने समस्तपदों का विग्रह प्रस्तुत करके व्याख्यान के तीसरे चरण को भी अपनी इस कोष-ग्रन्थ में पूरा किया है। इनके कोष के उपरिनिर्दिष्ट तीन वैशिष्ट्य इनकी प्रज्ञा से प्रसूत "त्रिरत्न-स्वरूप" हैं। प्राचीन ग्रन्थकारों ने "बालानां सुखबोधाय" रूप में आकर-ग्रन्थों के रहस्य को समझाने में बहुत प्रयास किया है। उसी दिशा में प्राचीन परम्परा के प्रति समर्पित प्रो॰ कुमार ने आधुनिक प्रगत अध्ययन के परिप्रेक्ष्य में इस कोष का निर्माण करके सरस्वती के प्रांगण में अपने बुद्धि-वैभव की क्रीडा का दिग्दर्शन कराया है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि इनका यह बुद्धिविलास सुधी-समुदाय में समादृत होगा। शब्द-ब्रह्म के उपासक के रूप में इनकी साधना और अधिक फलवती हो। परमपिता परमात्मा से यही कामना करता हूँ।

वसन्त पञ्चमी
२४ जनवरी १९९६

प्रो॰ वाचस्पति उपाध्याय
कुलपति
श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रिय
संस्कृत विद्यापीठ
नई दिल्ली-११००१६

भूमिका

भाषा के माध्यम से भावाभिव्यक्ति मनुष्य की अन्यतम विशेषता है। सृष्टि के आदिम समय में सम्भवतः इसी विशेषता को पहचान कर पहली बार मनुष्य अपनी श्रेष्ठता पर मोहित हुआ होगा। विरञ्चिद्वारा चित्रित इस विचित्र प्रपञ्च में जिन चमत्कारों को देखकर मनुष्य मन्त्रमुग्ध हुआ है, उनमें एक चमत्कार भाषा भी है। यही कारण है कि सुदूर अतीतकाल से अद्यावधि भाषा मनुष्य के अध्ययन का प्रिय विषय रहा है।

भाषा के अध्ययन के तीन प्रमुख पक्ष हैं— वैज्ञानिक पक्ष, दार्शनिक पक्ष और वैयाकरण पक्ष। यद्यपि संसार की सभी भाषाओं पर समय-समय पर अध्ययन होते रहे हैं किन्तु भारतीय उपमहाद्वीप की पुण्यभूमि पर आविर्भूत तथा पल्लवित संस्कृतभाषा का जितना सर्वाङ्गीण एवं आमूलचूल अध्ययन हुआ है उतना किसी अन्य भाषा का नहीं। समृद्ध शब्दकोश, अगाध साहित्यभण्डार, प्राञ्जल पदावली तथा सुगठित शब्दार्थविन्यास आदि संस्कृत भाषा की विलक्षण विशेषताओं ने विश्व की सर्वाधिक मेधा को अभिभूत किया है। एशिया महाद्वीप की अधिकांश अद्यतन भाषाएँ संस्कृत भाषा की ऋणी हैं। समस्त भारतीय भाषाएँ संस्कृत भाषा के विना निष्प्राण हैं। अन्य भाषाओं को जीवन्त तथा समृद्ध करने वाली प्राणदायिनी संस्कृत भाषा को मृतभाषा कहने वाले तथाकथित कतिपय बुद्धिजीवियों की बौद्धिक दरिद्रता पर हम परिहास भी क्या करें!

अस्तु, भारत में संस्कृत भाषा के अध्ययन की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। भारतीय परम्परा में संस्कृत के वैज्ञानिक, दार्शनिक तथा वैयाकरण आदि तीनों पक्षों का विशद अध्ययन हुआ है। संस्कृत के वैज्ञानिक पक्ष पर अध्ययन करने वाले आचार्य हैं— यास्क, औदुम्बरायण, शाकटायन आदि; दार्शनिक पक्ष पर अध्ययन करने वाले आचार्य हैं— पतञ्जलि, भर्तृहरि, गौतम, जैमिनि आदि; और वैयाकरण पक्ष पर अध्ययन करने वाले आचार्य हैं— पाणिनि, इन्द्र, शाकटायन, आपिशलि, शाकल्य, काशकृत्स्न, शौनक, व्याडि, कात्यायन, चन्द्रगोमिन्, बोपदेव, हेमचन्द्र, जिनेन्द्रबुद्धि आदि।

संस्कृत के वैज्ञानिक और दार्शनिक पक्षों की अध्ययन-परम्पराओं की अपेक्षा वैयाकरण पक्ष की अध्ययन-परम्परा अत्यन्त प्राचीन तथा समृद्ध है। संस्कृत-व्याकरण-परम्परा का उद्भव कब से हुआ, इस प्रश्न का उत्तर देना कठिन है किन्तु हमें संस्कृत-व्याकरण के मूल रूप का सूक्ष्मदर्शन वेदों से हो जाता है। वैदिक भाषा का सूक्ष्म अध्ययन करने के उपरान्त हमें यह स्वीकार करना पड़ता है कि कतिपय व्यत्ययों के होने पर भी वैदिक भाषा भी व्याकरण-नियमों से प्रतिबद्ध रही होगी, अन्यथा इतने सन्तुलित शब्दार्थ-विन्यास वाले मन्त्रों की रचना संभव नहीं होती। वेदों में बहुत से ऐसे मन्त्र मिलते हैं जिनमें शब्दों की व्युत्पत्ति साथ-साथ स्पष्ट रूप से वर्णित है। जैसे— केतपूः (केत + पू), वृत्रहन् (वृत्र + हन्), उदक (उद् + अन्), आपः (आप्लृ व्याप्तौ), तीर्थ (तॄ) और नदी (नद्) आदि अनेक शब्दों की व्युत्पत्ति मन्त्रों में स्पष्टतया प्रदर्शित है।

वैदिककालीन समाज में जैसे जैसे वेद-मन्त्रों का महत्व बढ़ता गया वैसे वैसे मन्त्रों के शुद्ध उच्चारण, शुद्ध अर्थज्ञान तथा शुद्ध शब्दज्ञान पर बल दिया जाने लगा । परिणामतः शुद्ध उच्चारणज्ञान के लिए शिक्षा ग्रन्थ, शुद्ध अर्थज्ञान के लिए निरुक्त और शुद्ध शब्दज्ञान के लिए व्याकरण ग्रन्थ आदि वेदाङ्गों का आविर्भाव हुआ । वैदिक काल में पुष्पित व्याकरण-परम्परा ब्राह्मण काल में पल्लवित हुई । मैत्रायणी संहिता में छः विभक्तियों का उल्लेख मिलता है । ऐतरेय ब्राह्मण में वाणी के सात भागों (विभक्तियों) का उल्लेख मिलता है । गोपथ ब्राह्मण में व्याकरण के ऐसे पारिभाषिक शब्दों का उल्लेख प्राप्त होता है, जिनका पाणिनीय व्याकरण में प्रयोग होता है ।

ब्राह्मण काल के बाद वेद की प्रत्येक शाखा के लिए प्रातिशाख्य नामक व्याकरण-ग्रन्थों का प्रणयन हुआ । प्रातिशाख्यों में व्याकरण का प्रारम्भिक रूप मिलता है । इस प्रकार संस्कृत-व्याकरण-परम्परा का विधिवत् आरम्भ प्रातिशाख्यों से माना जा सकता है । प्रातिशाख्यों के बाद व्याकरण-परम्परा निरन्तर समृद्ध होती गई । लगभग ई॰ पू॰ पांचवीं शती में आचार्य पाणिनि के आविर्भाव से व्याकरण-परम्परा की समृद्धि चरमोत्कर्ष पर पहुँची । फलतः पाणिनि और संस्कृत-व्याकरण दोनों एक दूसरे के पर्याय हो गये ।

पाणिनि से पूर्व अनेक वैयाकरण हो चुके थे । स्वयं पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी में दस आचार्यों का नामोल्लेख किया है— आपिशलि, काश्यप, गार्ग्य, गालव, चाक्रवर्मण, भारद्वाज, शाकटायन, शाकल्य, सेनक और स्फोटायन । पाणिनि-पूर्व व्याकरणों के सम्बन्ध में भर्तृहरि के वाक्यपदीय से हमें एक तथ्य उपलब्ध होता है । भर्तृहरि के अनुसार व्याकरण दो प्रकार के होते थे— अविभाग और सविभाग । अविभाग व्याकरण वह है जिसमें प्रकृति-प्रत्ययादि के विभाग की कल्पना से रहित शब्दों का पारायण मात्र हो । महाभाष्यकार पतञ्जलि के अनुसार अविभाग व्याकरण को शब्दपारायण कहा जाता था । बृहस्पति द्वारा प्रोक्त व्याकरण तथा व्याडि का संग्रह ग्रन्थ अविभाग-व्याकरण के प्रतिनिधि हैं । सविभाग व्याकरण वह है जिसमें प्रकृति-प्रत्ययादि के विभाग की कल्पना की गई हो । तैत्तिरीय संहिता तथा महाभाष्य में उल्लिखित विभाग की कल्पना को स्पष्ट करने का प्रथम श्रेय आचार्य इन्द्र को ही जाता है । इन्द्र से पहले केवल अविभाग व्याकरण का ही प्रचलन था । ऋक्तन्त्र में उल्लेख है कि इन्द्र ने अपनी व्याकरण की शिक्षा भरद्वाज को दी । ऐन्द्र व्याकरण आजकल अनुपलब्ध है किन्तु इसका उल्लेख जैन शाकटायन व्याकरण, लङ्कावतारसूत्र, यशस्तिलकचम्पू तथा अलबरुनी के भारतयात्रावर्णन में मिलता है । तिब्बतीय अनुश्रुति के अनुसार ऐन्द्र व्याकरण का परिमाण २५ सहस्र श्लोक था जबकि पाणिनीय व्याकरण का परिमाण एक सहस्र श्लोक है । सम्भवतः इन्द्र का व्याकरण दक्षिण में लोकप्रिय रहा होगा, क्योंकि तमिल भाषा के व्याकरण 'तोल्काप्पियम्' पर इन्द्र के व्याकरण का पर्याप्त प्रभाव है ।

ऐन्द्र व्याकरण के बाद भरद्वाज, काशकृत्स्न, आपिशलि, शाकटायन आदि आचार्यों के द्वारा प्रणीत व्याकरणों का उल्लेख उपलब्ध होता है । आपिशलि और शाकटायन के व्याकरणों का सर्वाधिक उल्लेख मिलता है किन्तु पाणिनीय व्याकरण के सर्वग्रासी प्रभाव के कारण समस्त पाणिनिपूर्व व्याकरण काल-कवलित हो चुके हैं । यत्र तत्र उल्लिखित पाणिनिपूर्व व्याकरणों के कुछ सूत्र ही आज उपलब्ध होते हैं । पाणिनिपूर्व व्याकरणों का अध्ययन करने पर पता चलता है कि पाणिनि से पूर्व ऐन्द्र व्याकरण

एक प्रमुख परम्परा के रूप में विकसित हो चुका था। काशकृत्स्न, आपिशलि और शाकटायन इसी पंरम्परा के पोषक थे। ऐन्द्र परम्परा का उत्तरकालीन विकास काशकृत्स्न, आपिशलि, शाकटायन आदि आचार्यों के माध्यम से होता हुआ कातन्त्र व्याकरण के रूप में हुआ।

प्रत्याहार-पद्धति के आविष्कार से संस्कृत-व्याकरण-परम्परा में क्रान्ति आ गई। इस पद्धति का आविष्कर्त्ता कौन है, इस बारे में कुछ निश्चित रूप से कहा नहीं जा सकता किन्तु पाणिनि अपने व्याकरण में इस प्रत्याहार-पद्धति का जितना वैज्ञानिक उपयोग करता है, उतना किसी भी पाणिनिपूर्व व्याकरण में दृष्टिगोचर नहीं होता। अनुश्रुति है कि पाणिनि ने जिन प्रत्याहार-सूत्रों का उपदेश किया है, वे सूत्र महेश्वर-द्वारा पाणिनि को प्रदत्त माने जाते हैं।

पाणिनि से पूर्व वर्णों के वर्गीकरण के सम्बन्ध में दो परम्पराएँ प्रतिष्ठित थीं। एक परम्परा ऐन्द्र व्याकरण और प्रातिशाख्यों से सम्बद्ध थी और दूसरी परम्परा माहेश्वर सूत्रों से सम्बद्ध थी। ऐन्द्र और प्रातिशाख्यों के वर्णसमाम्नाय में अकारादिक्रम से स्वरव्यंजनादि का पाठ किया जाता था और व्यञ्जनों का क्रम भी कण्ठ्य-तालव्य-मूर्धन्यादि वर्गक्रम के अनुसार ही रखा जाता था। ऐन्द्र व्याकरण और प्रातिशाख्यों का उद्देश्य वर्णध्वनियों के उच्चारण का वैज्ञानिक अध्ययन था। माहेश्वर सूत्र-पद्धति का उद्देश्य वर्णोच्चारण का वैज्ञानिक अध्ययन न होकर वर्णों का वैज्ञानिक वर्गीकरण था। माहेश्वरसूत्रपद्धति में जिस वर्णसमाम्नाय का उपदेश किया जाता है उसमें वर्णध्वनियों के पारस्परिक सम्बन्ध तथा विनिमय को स्पष्ट किया जाता है। माहेश्वर पद्धति के इसी दृष्टिकोण के कारण प्रत्याहारों का जन्म हुआ।

पाणिनि-पूर्व की पूर्वोक्त दोनों परम्पराएँ व्याकरण की दो शाखाओं के रूप में विकसित हुईं। ऐन्द्र परम्परा प्राच्यशाखा के रूप में तथा माहेश्वर परम्परा औदीच्य शाखा के रूप में विकसित हुईं। प्रत्याहार-पद्धति का आविष्कार औदीच्य शाखा में ही हुआ, प्राच्य में नहीं। प्राच्यशाखा में प्रत्याहारों का आश्रय न लेकर पूरे-पूरे वर्णों का परिगणन किया गया है। फलतः प्राच्य शाखा के व्याकरण अत्यन्त विस्तृत हो गये। आचार्य पाणिनि औदीच्य शाखा के प्रमुख प्रवक्ता के रूप में अवतरित हुए और प्रत्याहार-पद्धति को चरमोत्कर्ष पर पहुँचाया।

प्रत्याहार-पद्धति संस्कृत-व्याकरण-परम्परा के लिए औदीच्य शाखा की अमूल्य देन है। इसी पद्धति ने पाणिनीय व्याकरण-ग्रन्थ अष्टाध्यायी को इतना लोकप्रिय बनाया कि समस्त पाणिनिपूर्व व्याकरण अप्रासङ्गिक हो गये तथा कातन्त्र, चान्द्र, सारस्वत, हैम, जैनेन्द्र आदि पाणिन्युत्तर व्याकरण भी अष्टाध्यायी के प्रभाव के समक्ष निष्प्रयोजन सिद्ध हुए।

संस्कृत-व्याकरण-परम्परा में आचार्य पाणिनि का नाम महोज्ज्वल नक्षत्र के तुल्य देदीप्यमान है। आचार्य पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी के माध्यम से विश्वसाहित्य को जो अमूल्य देन दी, उतनी अमूल्य देन शायद ही किसी ने दी होगी। पाणिनिकृत अष्टाध्यायी लौकिक संस्कृत का प्रथम सर्वाङ्गीण व्याकरण है और इसमें वैदिक संस्कृत का व्याकरण भी दिया गया है। अष्टाध्यायी सूत्रपद्धति में लिखा ग्रन्थ है। अष्टाध्यायी के सूत्रों की सूक्ष्म संरचना में पाणिनि ने जिस मेधा का परिचय दिया है, वह आधुनिक कम्प्यूटर भी कदाचित् ही दे सकता है।

अष्टाध्यायी में आठ अध्याय हैं और प्रत्येक अध्याय में चार पाद हैं। सूत्रों की संख्या लगभग चार हज़ार है। अष्टाध्यायी प्रत्याहार-सूत्रों को आधार मानकर प्रणीत है। पाणिनि ने केवल वर्णों का प्रत्याहार ही नहीं बनाया अपितु प्रत्ययों का भी प्रत्याहार बनाया, जैसे— सुप्, तिङ् आदि। अष्टाध्यायी में अधिकार-सूत्र-पद्धति को अपनाया गया है। निर्दिष्ट-स्थानपर्यन्त अधिकारसूत्रों का अधिकार चलता है, जैसे— अङ्गस्य, पदस्य, धातोः, आदि। लाघव को ही पुत्रोत्सव मानने वाले महावैयाकरण आचार्य पाणिनि ने गणपाठों का प्रयोग किया है। यदि एक ही कार्य अनेक शब्दों से होना है तो उन सभी शब्दों का एक गण बनाकर, प्रथम शब्द में आदि शब्द लगाकर सूत्र में निर्देश किया जाता है, जैसे— 'नडादिभ्यः फक्'। अष्टाध्यायी में गणों का निर्देश करने वाले लगभग २५८ सूत्र हैं। यद्यपि पाणिनि का प्रमुख उद्देश्य लौकिक संस्कृत का व्याकरण बनाना था तथापि वैदिक संस्कृत के व्याकरण की उपेक्षा नहीं की गई। पाणिनि ने वैदिक व्याकरण को भी पर्याप्त महत्त्व दिया है। लौकिक संस्कृत के लिए 'भाषायाम्' और वैदिक संस्कृत के लिए 'छन्दसि' शब्द का प्रयोग किया है। पाणिनि ने अनेक पारिभाषिक संज्ञाओं का प्रयोग किया है। कुछ संज्ञाएँ परम्परागत हैं, जैसे— आङ्, औङ् आदि; और कुछ संज्ञाएँ सर्वथा नई हैं जैसे नदी, घि आदि। पाणिनि ने अनुबन्ध-प्रणाली का भी वैज्ञानिक उपयोग किया है। पाणिनि का व्याकरण 'अकालक' कहा जाता है। 'वर्त्तमानसमीप्ये वर्त्तमानवद्वा' इत्यादि सूत्रों के विश्लेषण से पता चलता है कि पाणिनि ने काल की अपेक्षा भाव को प्रमुखता दी है। पाणिनि ने काल को स्पष्ट रूप से अशिष्य कहा है। पाणिनि की शैली की यह विशेषता है कि वह किसी विशेष युक्ति से सभी नियमों का विधान करते हैं। उत्सर्गापवाद-युक्ति, परबलीयस्त्व-युक्ति तथा नित्यकार्य-युक्ति पाणिनीय शैली की मौलिक विशेषताएँ हैं। सपादसप्ताध्यायी और त्रिपादी की परिकल्पना पाणिनि की अपूर्व प्रतिभा का परिचायक है। पाणिनि ने लोप की चार स्थितियों का आविष्कार किया है। वे चार स्थितियाँ हैं— लोप, लुक्, श्लु और लुप्। यद्यपि वाजसनेयि-प्रातिशाख्य में वर्ण के अदर्शन को लोप कहा गया है, किन्तु पाणिनि की मौलिकता यह है कि वह लोप को वर्ण तक सीमित न रखकर अदर्शन मात्र को लोप की संज्ञा दे देता है। यद्यपि परवर्त्ती आचार्यों का मत है कि पर्यायवाची शब्दों के प्रयोग में गौरवलाघव-चर्चा नहीं की जानी चाहिए तथापि पाणिनि द्वारा प्रयुक्त 'विभाषा', 'विभाषितम्', 'अन्यतरस्याम्', 'वा', 'बहुलं' आदि पद कुछ निगूढ प्रयोजनों की ओर इंगित करते हैं जो कि अनुसन्धेय हैं।

पाणिनि ने अष्टाध्यायी के पूरक ग्रन्थों के रूप में धातुपाठ, गणपाठ, उणादिकोश और लिङ्गानुशासन की भी रचना की। पाणिनि के व्याकरण में इन पाँचों उपदेश ग्रन्थों का अनिवार्य महत्त्व है, क्योंकि ये पाँच उपदेश ग्रन्थ पाणिनि के व्याकरण को पूर्ण बनाते हैं।

पाणिनि के व्याकरण की चर्चा हो और कात्यायन तथा पतञ्जलि की चर्चा न हो, यह सम्भव ही नहीं है। क्योंकि कात्यायन और पतञ्जलि से अनुस्यूत होकर ही पाणिनि पूर्ण होता है। यही कारण है कि पाणिन्युत्तर-व्याकरण-परम्परा में पाणिनीय व्याकरण को 'त्रिमुनि व्याकरणम्' कहा गया है। कात्यायन ने अष्टाध्यायी के सूत्रों पर वार्त्तिकों की रचना की है। पतञ्जलि ने कात्यायन-कृत वार्तिकों का आश्रय लेते हुए अष्टाध्यायी की सर्वाङ्गीण एवं विस्तृत व्याख्या प्रस्तुत की, जो 'महाभाष्य' नाम से प्रसिद्ध है।

कात्यायन ने अष्टाध्यायी के सूत्रों में आवश्यक परिवर्त्तन, परिवर्धन और संशोधन के लिए जो नियम बनाए हैं, उन्हें वार्त्तिक कहा जाता है। कात्यायनप्रणीत वार्त्तिकों की संख्या बताना कठिन है

क्योंकि महाभाष्य में अन्य आचार्यों के द्वारा रचित वार्त्तिक भी हैं। प्रायः कात्यायन को पाणिनि के आलोचक के रूप में प्रस्तुत किया जाता है किन्तु यह सर्वथा असत्य है। स्वयं कात्यायन पाणिनि को श्रद्धेय आचार्य स्वीकार करते हैं। किसी विषय पर उक्त, अनुक्त और दुरुक्तों का पर्यालोचन करना वाद होता है, विवाद नहीं। यह वाद ही तत्त्वबोध का साधन होता है। कात्यायन का महत्व इसी बात में है कि उन्होंने पाणिनि को आचार्य मानते हुए भी उनका पर्यालोचन करने का साहस दिखाया। यही कात्यायन की निष्पक्ष दृष्टि का निदर्शन है।

पतञ्जलि पाणिनीय व्याकरण-परम्परा में अन्तिम प्रामाणिक आचार्य हैं। पतञ्जलि-प्रणीत महाभाष्य न केवल व्याकरण का ही ग्रन्थ है अपितु एक विश्वकोश है। महाभाष्य में तत्कालीन सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, धार्मिक और सामाजिक तथ्यों का पर्याप्त उल्लेख मिलता है। पतञ्जलि ने व्याकरण जैसे शुष्क और दुरूह विषय को इतने सरस और मनोज्ञ रूप में प्रस्तुत किया है कि अध्येताओं को महाभाष्य एक उपन्यास जैसा प्रतीत होता है। भाषासारल्य, स्फुट विवेचन, विशद एवं स्वाभाविक विषय-प्रतिपादन, प्राञ्जल-सुबोध-वाक्यावली आदि पतञ्जलि की उत्कृष्ट शैली की विशेषताएँ हैं। इसी कारण महाभाष्य संस्कृत वाङ्मय का एक आदर्श ग्रन्थ माना जाता है।

पतञ्जलि ने महाभाष्य में कात्यायन के वार्त्तिकों को आधार मानकर अष्टाध्यायी के सूत्रों पर विशद व्याख्या लिखी है। पतञ्जलि ने यत्र-तत्र पाणिनि के सूत्र तथा सूत्रांशों का और कात्यायन के वार्त्तिकों का प्रत्याख्यान किया है। किन्तु पतञ्जलिकृत इन प्रत्याख्यानों को आलोचना के रूप में नहीं समझना चाहिए। क्योंकि हर बात पर उक्त, अनुक्त और दुरुक्तों पर निष्पक्ष पर्यालोचन करना संस्कृत-व्याकरण-परम्परा की एक अपूर्व विशेषता है। इस प्रसङ्ग में कीलहार्न का यह वक्तव्य उल्लेखनीय है—

"कात्यायन का वास्तविक कार्य पाणिनि के व्याकरण में उक्त, अनुक्त अथवा दुरुक्त अर्थों पर विचार करना था। पतञ्जलि ने न्यायपूर्वक इन वार्त्तिकों को उसी क्रम से रखा है और पाणिनीय व्याकरण के अपने विचार को, उनके और उस समय तक अन्य उपलब्ध वार्त्तिकों के प्रकाश में, पूर्णता तक पहुँचाया है। ऐसा करते हुए पतञ्जलि का यत्न भी वार्त्तिककारों के समान उक्त, अनुक्त और दुरुक्त अर्थ का चिन्तन और उसकी पूर्णता ही रहा है; ताकि एक ऐसा साधन खोजा जा सके, जिसे पाणिनीय दृष्टि में ही पूर्ण कहा जा सके। सूक्ष्मता और संक्षेप की पाणिनीय धारणा को वे इस सीमा तक ले गए हैं कि उन्हें कात्यायन के या अन्यों के वार्त्तिकों में अथवा पाणिनीय सूत्रों में भी, यदि कहीं व्यर्थ का विस्तार या पुनरावृत्ति मिली है, तो उन्होंने उसका भी विरोध ही किया है। परन्तु यह विरोध इतना सुन्दर और इस ढंग का है कि इसे विरोध न कहकर सुधार और समन्वय कहना अधिक उचित लगता है।"

पाणिनि, कात्यायन और पतञ्जलि द्वारा परिपोषित संस्कृत व्याकरण का अमरग्रन्थ अष्टाध्यायी भाषाशास्त्रियों के अनुसन्धान का केन्द्र-बिन्दु रहा है। लगभग २५०० वर्षों से अष्टाध्यायी पर असंख्य अध्ययन और अनुसन्धान हो चुके हैं और आधुनिक काल में भी अष्टाध्यायी पर अनेक अध्ययन और अनुसन्धान हो रहे हैं। अध्ययन और अनुसन्धान की पद्धतियाँ परिवर्त्तनशील रही हैं। आधुनिक अनुसन्धान-पद्धति में कोशों की भूमिका को अत्यन्त महत्त्वपूर्ण माना जा रहा है। अतः अनुसन्धान के

क्षेत्र में अष्टाध्यायी के महत्त्व को देखते हुए अष्टाध्यायी पर एक विस्तृत एवं सर्वाङ्गपूर्ण कोश के निर्माण की आवश्यकता का अनुभव किया जाना स्वाभाविक है ।

अनुमानतः २५०० वर्षों से संस्कृत-कोश-साहित्य के सृजन की परम्परा भारत में अव्याहत गति से चली आ रही है । इस अवधि में १५० से भी अधिक विभिन्न प्रकार के जैसे निघण्टु, पर्यायवाची कोश, समानार्थक, नानार्थक कोश, पारिभाषिक-शब्द कोश, एकाक्षर कोश, द्व्यक्षर कोश, एवं त्र्यक्षरादि कोशों की रचना हुई । यह दुःख का विषय है कि इसका अधिकांश भाग अभी तक अप्रकाशित है, वह या तो मातृकाओं के रूप में विभिन्न ग्रन्थागारों में प्राप्त होता है, अथवा सर्वथा लुप्त हो गया है । आधे से कम ही अंश का कोश-साहित्य प्रकाशित मिलता है। वास्तव में ऐसी स्थिति में कोश-साहित्य को ऐतिहासिक दृष्टि से लिपिबद्ध करना कुछ दुष्कर ही है ।

संस्कृत वाङ्मय में जिस विशाल कोश-साहित्य का सृजन हुआ है, वैसा विशाल कोश-साहित्य विश्व की किसी भाषा में नहीं है । विविधता और समृद्धि की दृष्टि से भी संस्कृत भाषा के कोश अनुपम और अतुलनीय हैं । वैदिक काल में सर्वप्रथम संस्कृत कोशों की रचना का श्रीगणेश हुआ । कोशनिर्माण के प्रथम चरण में वैदिक संहिताओं के मन्त्रों में प्रयुक्त चुने हुए शब्दों का संकलन मात्र किया गया, उनको विभिन्न श्रेणियों में रखकर उनके व्युत्पत्तिलभ्य अर्थों का निर्देश किया गया है । कोशों की रचना का द्वितीय चरण लौकिक संस्कृत-साहित्य पर आधारित अमरकोश की रचना से आरम्भ होता है। अमरकोश की रचना से पूर्व व्याडि, वररुचि आदि कोशकार हुए; दुर्भाग्यवश उनकी रचनाएँ उपलब्ध न होने के कारण उनके बारे में अधिक कहना सम्भव नहीं है । अमरकोश के प्रणेता अमरसिंह ने स्वयं अपने पूर्ववर्त्ती कोशकारों के प्रति कृतज्ञता प्रकट की है, इसी से उन रचनाओं की प्रामाणिकता का पता चलता है । अमरसिंह का समय विद्वानों ने छठी शताब्दी ई० माना है ।

अमरकोश के कुछ टीकाकार क्षीरस्वामी, सर्वानन्द, रघुनाथ चक्रवर्ती आदि मात्र कोशकार ही नहीं, अपितु वैयाकरण भी थे; उन्होंने शब्दों की व्युत्पत्ति देकर, उनके अर्थों का निर्देश कर कोशसाहित्य के विकास का तृतीय चरण आरम्भ किया। व्याकरण-सम्मत व्युत्पत्ति देने से शब्दों के अर्थ की प्रामाणिकता स्वतः सिद्ध हो जाती है । पूर्ववर्त्ती कोशकारों द्वारा दिए गए अर्थ प्रयोगों के ही आधार पर थे ।

कोश-साहित्य के विकास के चौथे चरण में पारिभाषिक शब्दकोशों की रचना हुई । यह धारा अमरसिंहविरचित लौकिक शब्दकोश के समानान्तर कोशरचना की धारा थी। आयुर्वेदशास्त्र के अन्तर्गत वनस्पतिशास्त्र पर रचित कुछ कोश अमरकोश से भी पहले के हैं, ऐसा अनुसन्धानकर्त्ताओं का मत है । धन्वन्तरिनिघण्टु, पर्यायरत्नमाला, शब्दचन्द्रिका आदि मूल रूप में पारिभाषिक शब्दकोश ही हैं, जिनमें आयुर्वेद से सम्बद्ध शब्दों के अतिरिक्त अन्य शब्दों का संग्रह ही नहीं है । ये सभी कोश छन्दोबद्ध थे, अतः उन्हें कण्ठस्थ करना सरल था ।

कोश-साहित्य के पञ्चम चरण में नानार्थकोशों की रचना हुई । वैज्ञानिक सिद्धान्तों के आधार पर कोशों के निर्माण की दिशा में नानार्थ कोश प्रथम प्रयास है । इन कोशों में प्रयोगों के आधार पर एक ही

शब्द के अनेक अर्थ दिये गये हैं। इस प्रकार के कोशों का आरम्भिक रूप अमरकोश के तृतीय काण्ड में भी देखने को मिलता है; लेकिन इसका पूर्ण विकसित रूप मेदिनीकोश तथा हलायुध में दिखाई देता है। नानार्थकोशों में शब्दों की संरचना वर्णानुक्रम से पहली बार की गई, जो आधुनिकता और वैज्ञानिकता की दिशा में प्रथम प्रयास था।

एकाक्षरकोशों की रचना से संस्कृत कोशों के क्षेत्र में नानारूपता आई और इन्होंने निस्सन्देह संस्कृत-कोश-साहित्य को समृद्धतर किया। आधुनिक काल में भी संस्कृत में वैज्ञानिक दृष्टिकोण से कोश लिखे गए। इनमें से अधिकांश कोशों में शब्दों को वर्णानुक्रम से रखकर उनके अर्थों को प्रयोगों के आधार पर दिया गया है। ये कोश कण्ठस्थ किये जाने योग्य नहीं हैं; ये सहायक ग्रन्थ के रूप में ही प्रयुक्त किये जा सकते हैं। इन कोशों में वाचस्पत्यम्, शब्दकल्पद्रुम, सैण्ट पीटर्सबर्ग संस्कृत-जर्मन शब्दकोश, मोनियर विलियम्स-विरचित संस्कृत-अंग्रेजी शब्दकोश, आप्टे-विरचित प्रैक्टिकल संस्कृत-अंग्रेजी शब्दकोश। वैदिक शब्दों के लिए सूर्यकान्तरचित वैदिक शब्दकोश, पारिभाषिक शब्दों के लिए झल्कीकरविरचित न्यायकोश, दातार काशीकर आदि विद्वानों द्वारा रचित श्रौतकोश, लक्ष्मण शास्त्रीविरचित धर्मकोश आदि विशेषेण उल्लेख्य हैं। इन सभी कोशों में शब्दों को वैज्ञानिक पद्धति से व्यवस्थित कर उनके अर्थों को अभिव्यक्त किया गया है। इनमें से अधिकांश कोशों में अर्थों की पुष्टि के लिए प्रयुक्त सन्दर्भों को भी उद्धृत किया गया है।

पूना में आजकल एक नवीन संस्कृत-शब्दकोश के निर्माण का कार्य चल रहा है, जिसमें अनेक प्रतिष्ठित विद्वान् वर्षों से संलग्न हैं। इस आधुनिकतम कोश में ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में किस प्रकार शब्दों के अर्थ परिवर्तित हुए— यह भी बतलाने का प्रयास किया गया है। इसे 'डैस्क्रिप्टिव डिक्शनरी ऑव् संस्कृत लैंग्वेज ऑन हिस्टोरिकल प्रिंसिपल्स' नाम दिया गया है। जैसी कि आशा है यह कोश कोशरचना की कला का अत्यन्त विकसित रूप होगा।

आधुनिक काल में शब्दकोश-प्रणयन-प्रणाली में पर्याप्त प्रगति हो चुकी है और इसका प्रमुख कारण प्राच्य के साथ पाश्चात्य का विद्या के क्षेत्र में आदान-प्रदान कह सकते हैं। ऊपर उल्लिखित कोशों के अतिरिक्त आधुनिक वैज्ञानिक प्रणाली पर निर्मित निम्न कोश महत्वपूर्ण हैं— १. विल्सन द्वारा संकलित संस्कृत-आंग्ल भाषा कोश, २. बॉथलिंक और रॉथ द्वारा संकलित संस्कृत जर्मन वॉर्टरबुश, ३. तारानाथ भट्टाचार्यविरचित शब्दस्तोममहानिधि, ४. वार्नोफरचित संस्कृत-फ्रैञ्च शब्दकोश, ५. आनन्दराम बडुआ-विरचित नानार्थसंग्रह, ६. रामावतार शर्मा द्वारा संकलित वाङ्मयार्णव, ७. मैक्डोनैलविरचित संस्कृत-आंग्लभाषाकोश तथा, ८. मैक्डोनैल एवं कीथ द्वारा रचित वैदिक इण्डैक्स।

आधुनिक अध्ययन-पद्धति में कोश एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भूमिका का संवहन करते हैं। अनेक शास्त्रों को न पढ़ सकने वाला भी एक शब्द के अनेक अर्थों को विभिन्न सन्दर्भों और शास्त्रों अथवा विधाओं के परिप्रेक्ष्य में जान सकता है। सभी समृद्ध भाषाओं के अनेक कोष उपलब्ध होते हैं। संस्कृत, अंग्रेज़ी या इसी प्रकार की अन्य समृद्ध भाषाओं के अनेक तकनीकी, व्यावसायिक एवं भिन्न-भिन्न विज्ञानों से सम्बन्धित पृथक्-पृथक् कोश प्रचुर संख्या में मिलते हैं।

संस्कृत-व्याकरण को उद्देश्य कर भी 'डिक्शनरी ऑव् संस्कृत ग्रामर (के॰ सी॰ चटर्जी) एक उपयोगी और प्रामाणिक ग्रन्थ है; इसमें संस्कृत व्याकरण में बहुधा प्रयोग में आने वाले शब्दों एवं तकनीकी पदों को स्पष्टतया विस्तार से सोदाहरण व्याख्यायित किया गया है। पाणिनीय अष्टाध्यायी को उद्देश्य बनाकर भी जर्मन-देशीय बोथलिंग ने जर्मन-भाषा में सूत्रानुवाद-टिप्पणादि से संवलित पर्याप्त समय पूर्व एक कोश प्रकाशित किया था। यद्यपि अत्यन्त प्रयत्नसाध्य कार्य उन्होंने सम्पादित किया था; परन्तु उनके द्वारा अपनायी गई पद्धति भाषा के अतिरिक्त भी सामान्यतया दुरवगाह्य ही थी। उसके बाद भण्डारकार ऑरियण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट से १९३५ में महामहोपाध्याय वेदान्तवागीश श्रीधरशास्त्री पाठक एवं विद्यानिधि सिद्धेश्वरशास्त्री चित्राव के द्वारा पाणिनि के पञ्चाङ्गों, कात्यायन के वार्त्तिक पाठ के, साथ एक कोष प्रकाश में आया। यद्यपि इस की अपनी सीमाएँ हैं, पर यह कई दृष्टियों से अत्यन्त उपयोगी कहा जायेगा। इसमें किसी शब्द का अर्थ तो नहीं है, मात्र सूत्रों की संख्या का निर्देश कर दिया है; कहीं-कहीं कोई-कोई पद स्खलित भी हो गया प्रतीत होता है; परन्तु इसमें यथासम्भव प्रामाणिक संस्करणों से वार्तिकस्थगणपाठपदसूची, शाकटायनसाधित शब्द, फिट्सूत्रकोश, सवार्त्तिक अष्टाध्यायीसूत्रपाठ, कैयटाद्युक्त परिशिष्टवार्त्तिक, वर्णानुक्रम से अन्तर्गणसूत्र, शाकटायनप्रणीत उणादि-सूत्रपाठ, उणादि सूत्रस्थ गण तथा अन्य अनेकविध उपयोगी सामग्री संकलित की गई है। इस प्रकार यह निस्सन्देह एक उपयोगी कोश है। इसके उपरान्त तीन भागों में आचार्यप्रवर सुमित्र मङ्गेश कत्रे के द्वारा डिक्शनरी ऑव् पाणिनि का डैकन कॉलिज पूना से १९६८ में प्रकाशन हुआ। यह कोश अनेक दृष्टियों से उपयोगी है। अकारादिक्रम से पाणिनि-शास्त्र में प्रयुक्त सभी पदों का अर्थ आँग्ल भाषा में दिया गया है; इसके साथ ही कोष्ठक में पाणिनि-सूत्रों से निष्पन्न उदाहरणों को भी पूरी तरह से समझाने का प्रयत्न किया है। यथासम्भव पाणिनि की सूत्र-शैली का आश्रय लेते हुए आचार्यप्रवर कत्रे जी ने इसे अत्यन्त उपयोगी बनाया है।

प्रस्तुत कोश इन दोनों कोशों से कई रूपों में भिन्न है। इस कोश में प्रत्येक पद के अर्थ को सम्पूर्ण सूत्र के सन्दर्भ में व्याख्यायित करने का प्रयास किया है; इससे यह तो हुआ है कि यदि एक सूत्र में ३,४ पद हैं तो उस सूत्र का अर्थ ३,४ स्थलों पर मिलेगा; पर उससे पद के सही अर्थ को पाणिनि के इष्ट परिप्रेक्ष्य में देखने का अवसर मिलेगा; अन्यथा मात्र पद का अर्थ देने पर तो 'वृद्धि' पद से आ, ऐ, औ (आदैच्) और 'च' पद से समुच्चय, अन्वाचय, इतरेतरयोग एवं समाहार अनेक अर्थों के होने पर भी और, एवं आदि अर्थों को ही व्यक्त किया जा पाता।

प्रस्तुत कोश में यह भी प्रयत्न किया गया है कि लम्बे लम्बे समासयुक्त पदों को अलग से दिखा दिया गया है। यदि किसी जिज्ञासु को मध्यगत भी किसी पद का स्मरण होता है तो वह उसके आधार पर पूर्ण समासयुक्त पद को पाकर अर्थ अथवा प्रसंगज्ञान कर सकता है।

प्रस्तुत कोश की रचना में अष्टाध्यायी के श्री॰ रामलाल कपूर ट्रस्ट, बहालगढ़, सोनीपत द्वारा प्रकाशित संस्करण के आधार पर संख्या दी गई है। अर्थ की अभिव्यक्ति के लिए प्रमुख आधार प॰ ब्रह्मदत्त जिज्ञासुप्रणीत अष्टाध्यायी-भाष्य (प्रथमावृत्ति), वामनजयादित्यप्रणीत काशिका एवं कहीं-कहीं चौखम्बा से आचार्य श्रीनारायणमिश्र द्वारा सम्पादित आभा-भाषावृत्तियुक्त अष्टाध्यायीसूत्रपाठ

हैं। जब कभी कोई द्वन्द्व या समस्या आई तो न्यास, पदमञ्जरी और महाभाष्य एवं वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी से भी परामर्श-साधन किया है। मैं इन सभी ग्रन्थकारों, विद्वानों का ऋणी हूँ, साथ ही इस कोश में किसी भी कारण से आये प्रत्येक दोष का दायित्व स्वयं का स्वीकार करता हूँ। सुधीजनों से क्षमाप्रार्थना के साथ आगे उनको दूर करने का प्रयत्न करूँगा, यही निवेदन कर सकता हूँ।साथ ही विद्वानों से किसी भी सुझाव को मुझ तक निस्संकोच पहुँचाने का निवेदन भी करता हूँ।

पाणिनि के बारे में मुझे कुछ भी यदि आता है तो इसके लिए मैं कीर्तिशेष पूजार्ह प० ज्योतिःस्वरूप जी, संस्थापक आचार्य, आर्ष गुरुकुल एटा के प्रति सश्रद्ध विनयावनत हूँ। लौकिक और व्यावहारिक संस्कृत ज्ञान के लिए स्व० डॉ० नरेन्द्रदेवसिंह शास्त्री, भूतपूर्व अध्यक्ष, संस्कृत-हिन्दी विभाग, बी० आर० कॉलिज आगरा को मैं सादर स्मरण करता हूँ।

इस ग्रन्थ का पुरोवाक् लिखकर पाणिनि-शास्त्र के मूर्धन्य विद्वान् आचार्य डॉ० विद्यानिवास मिश्र ने जो स्नेह व्यक्त किया है; मैं उनका हृदय से आभारी हूँ।

गुरुकल्प आचार्य डॉ० रसिकविहारी जोशी, विज़िटिंग प्रोफ़सर, मेक्सिको ऑटोनोमस यूनिवर्सिटी एवं एल कॉलेजियो द मैहिको को सादर प्रणति प्रस्तुत करता हूँ। इसके शीघ्र प्रकाशन को लेकर वे सदा सचिन्त रहे।

आचार्य सत्यव्रत शास्त्री का मुझे सदा स्नेह प्राप्त होता रहा है; मैं इसे अपना सौभाग्य मानता हूँ और इस अवसर पर उन्हें सादर सश्रद्ध स्मरण करता हूँ।

प्रिय सखा प्रो० वाचस्पति उपाध्याय, कुलपति श्री० लालबहादुर राष्ट्रिय संस्कृत विद्यापीठ, नई दिल्ली को मैं सस्नेह स्मरण करता हूँ। गत २५, २६ वर्षों से वे मेरे अनेक सुख-दुःखों की बराबर बांटते रहे हैं। 'द्वे वचसी' के लिए उन्हें धन्यवाद देकर मैं उनके रोष का पात्र नहीं बनना चाहूंगा।

लगभग १२-१३ वर्ष पूर्व, मेरे सहकर्मी बन्धुवर्य प्रो॰ सत्यपाल नारङ्ग के सत्परामर्शस्वरूप विश्वविद्यालय अनुदान आयोग से Subject Index of the Aṣṭādhyāyī पर कार्य करने के लिए एक प्रोजैक्ट स्वीकृत हुआ था; यद्यपि प्रो॰ नारङ्ग की दृष्टि कुछ भिन्न रूप में कार्य को उपस्थित करने की थी; पर परिस्थितियों या मनःस्थिति ने जिस रूप में भी यह कार्य सम्पादित किया, मैं उन्हें सादर सप्रेम स्मरण कर हृदय से धन्यवाद देता हूँ।

मैं विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के अधिकारियों का भी आभार व्यक्त करता हूँ कि उन्होंने प्रोजैक्ट स्वीकृत कर मुझे पर्याप्त सुविधाएँ प्रदान कीं।

मैं अपने अग्रजकल्प प्रो० कृष्णलाल, संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, डॉ॰ कमलाकान्त मिश्र, निदेशक राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली तथा डॉ॰ काशीराम, रीडर संस्कृत विभाग, हंसराज कॉलिज, दिल्ली को भी उनके अपने प्रति सहज स्नेह के लिए सादर सप्रेम स्मरण करता हूँ।

इस कार्य को पूर्णता की ओर लाने में एक पूरी टीम का योगदान रहा। मैं सर्वाधिक स्नेह से वत्सकल्प प्रिय शिष्य डॉ॰ ओमनाथ बिमली, प्रवक्ता, संस्कृत विभाग, राजधानी कॉलिज, दिल्ली को स्मरण करता हूँ, प्रभु उसे सदा विद्या-व्यसन में लगाएँ। मेरे दो अन्य शिष्य प्रिय श्री वेदवीर एवं श्री अनिल कुमार भी साधुवाद के पात्र हैं। ये तीनों पाणिनि-शास्त्र के अद्भुत विद्वान् और संस्कृत का भविष्य हैं तथा 'विद्याभ्यसनं व्यसनम्' की उक्ति को चरितार्थ करते हैं।

इस कार्य में मेरे प्रिय अनुजकल्प डॉ॰ वागीश कुमार, आचार्य आर्ष गुरुकुल एटा ने प्रचुर सहायता की; वे सदा इसके प्रकाशन के लिए उत्सुक रहे। सुश्री डॉ॰ माया ए॰ चैनानी, अमेरिका; प्रिय डॉ॰ सत्यपालसिंह, प्रवक्ता संस्कृत विभाग, ज़ाकिर हुसैन कॉलिज, दिल्ली, आयुष्मती डॉ॰ एच्॰ पूर्णिमा, प्रवक्ता संस्कृत विभाग, श्री शङ्कराचार्य यूनिवर्सिटी फ़ॉर संस्कृत, तिरुअनन्तपुरम् केन्द्र एवं डॉ॰ कु॰ निशा गोयल ने भी मुझे अपने-अपने ढंग से सहयोग दिया है। मैं इन सबके उज्ज्वल भविष्य की कामना करता हूँ।

अपनी सहधर्मिणी सुश्री उर्मिलाकुमारी एवं प्रिय आत्मजों चि॰ सुधांशु और चि॰ हिमांशु को मेरे स्नेहाशीः।

ग्रन्थ के सुन्दर प्रकाशन के लिए श्री॰ कन्हैयालाल जोशी, स्वामी परिमल पब्लिकेशन्स, दिल्ली धन्यवाद के पात्र हैं। कम्पोज़िंग एवं प्रिण्टिग के लिए एकनिष्ठ संलग्न होकर काम करने वाले चि॰ हिमांशु जोशी को मैं स्नेहाशीः देता हूँ, प्रभु करें कि वह अपने जीवन में प्रगति के उच्चतम शिखर पर पहुँचे।

— अवनीन्द्र कुमार

अ

अ — प्रत्याहारसूत्र I

आचार्य पाणिनि द्वारा अपने प्रथम प्रत्याहार सूत्र में पठित सर्वप्रथम वर्ण । इससे 'अ' के सम्पूर्ण अठारह भेदों का ग्रहण हो जाता है ।

पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का प्रथम वर्ण।

अ — III. i. 80

(धिवि तथा कृवि धातुओं से उ प्रत्यय तथा उनको) अकार अन्तादेश (भी) हो जाता है,(कर्तृवाची सार्वधातुक के परे रहते) ।

अ — III. iii. 102

(प्रत्ययान्त धातुओं से स्त्रीलिङ्ग कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में) अ प्रत्यय होता है ।

...अ...— III. iv. 82

देखें — णलतुसु० III. iv. 82

अ — IV. iii. 9

(मध्य शब्द से साम्प्रतिक अर्थ गम्यमान हो तो शैषिक) अ प्रत्यय होता है।

अ — IV. iii. 31

(अमावास्या प्रातिपदिक से जात अर्थ में) अ प्रत्यय (भी) होता है।

अ — V. iv. 74

(ऋक्,पुर् ,अप् , धुर् तथा पथिन् शब्द अन्त में हैं जिस समास के, तदन्त प्रातिपदिक से समासान्त) अ प्रत्यय होता है,(यदि वह धुर् अक्षसम्बन्धी न हो तो) ।

अ — VIII. iv. 67

(विवृत अकार) संवृत अकार होता है ।

अइउण् — प्रथम प्रत्याहार सूत्र

आचार्य पाणिनि अ,इ,उ – इन तीन वर्णों का उपदेश करके णकार को इत्संज्ञा के लिये रखते हैं। इससे एक प्रत्याहार बनता है- अण् ।

अंश... — V. i. 55

देखें — अंशवस्नभृतय: V. i. 55

अंशम् — V. ii. 69

द्वितीयासमर्थ अंश प्रातिपदिक से (हरण करने वाला अर्थ में कन् प्रत्यय होता है))।

अंशवस्नभृतय: — V. i. 55

(प्रथमासमर्थ प्रातिपदिकों से षष्ठ्यर्थ में यथाविहित प्रत्यय होते हैं, यदि वह प्रथमासमर्थ) अंश = भाग ,वस्न =मूल्य तथा भृति= वेतन समानाधिकरण वाला हो तो।

अंश्वादय: — VI. ii. 193

(प्रति उपसर्ग से उत्तर तत्पुरुष समास में) अंश्वादि-गण-पठित शब्दों को (अन्तोदात्त होता है)।

...अंसाभ्याम् — V. ii. 98

देखें — वत्सांसाभ्याम् V. ii. 98

अ: — VII. ii. 102

(त्यदादि अङ्गों को विभक्ति परे रहते) अकारादेश होता है।

अ: — VII. iv. 18

(टुओश्वि अङ्ग को अङ् परे रहते) अकारादेश होता है।

अ: — VII. iv. 73

(भू अङ्ग के अभ्यास को) अकारादेश होता है,(लिट् परे रहते) ।

अक...— II. iii. 70

देखें — अकेनो: II. iii. 70

अक... — IV. ii. 140

देखें—अकेकान्त० IV. ii. 140

अक...— VIII. iv. 18

देखें — अकखादौ VIII. iv. 18

अक: — VI. i. 97

अक् प्रत्याहार से उत्तर (सवर्ण अच् परे हो तो पूर्व और पर के स्थान में दीर्घ एकादेश होता है, संहिता के विषय में)।

अक: — VI. i. 124

(ऋकार परे रहते) अक् को (शाकल्य आचार्य के मत में प्रकृतिभाव हो जाता है तथा उस अक् को ह्रस्व भी हो जाता है) ।

अकः — VII. ii. 112

ककार से रहित (इदम् शब्द) के (इद् भाग को अन आदेश होता है, आप् विभक्ति परे रहते)।

अकखादौ — VIII. iv. 18

(उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर) जो उपदेश में ककार तथा खकार आदिवाला नहीं है,(एवं षकारान्त भी नहीं है); ऐसे (शेष) धातु के परे रहते (नि के नकार को विकल्प से णकार आदेश होता है)।

अकङ् — IV. i. 97

(सुधातृ शब्द से 'तस्यापत्यम्' अर्थ में इञ् प्रत्यय होता है, तथा (सुधातृ शब्द को) अकङ् आदेश (भी) होता है।

अकच् — V. iii. 71

(अव्यय, सर्वनामवाची प्रातिपदिकों एवं तिङन्तों से इवार्थ से पहले पहले) अकच् प्रत्यय होता है, (और वह टि से पूर्व होता है)।

अकच्चिति — III. iii. 153

(अपने अभिप्राय का प्रकाशन करना गम्यमान हो और) कच्चित् शब्द उपपद में न हो तो (धातु से लिङ् प्रत्यय होता है)।

अकथितम् — I. iv. 51

(अपादानादि कारकों से) अनुक्त (कारक भी कर्मसंज्ञक होता है)।

अकद्रवा — VI. iv. 147

कद्रू शब्द को छोड़कर (जो उवर्णान्त भसञ्ज्ञक अङ्ग, उसका तद्धित 'ढ' प्रत्यय परे रहते लोप होता है)।

अकर्क्यादीनाम् — VI. ii. 87

(प्रस्थ शब्द उत्तरपद रहते) कर्क्यादिगणस्थ (तथा वृद्धसञ्ज्ञक) शब्दों को छोड़कर (पूर्वपद को आद्युदात्त होता है)।

अकर्त्तरि — II. iii. 24

कर्तृभिन्न (हेतुवाची) शब्द में (ऋण वाच्य होने पर पञ्चमी विभक्ति होती है)।

अकर्त्तरि — III. iii. 19

कर्तृभिन्न कारक में (भी धातु से संज्ञाविषय में घञ् प्रत्यय होता है)।

अकर्त्तरि — V. iv. 46

(अतिग्रह, अव्यथन तथा क्षेप विषयों में वर्तमान तृतीयाविभक्त्यन्त प्रातिपदिक से विकल्प से तसि प्रत्यय होता है, यदि वह तृतीया) कर्त्ता में न हो तो।

...अकर्मक ... III. iv. 72

देखें — **गत्यर्थाकर्मक० III. iv. 72**

अकर्मकस्य— VII. iv. 57

अकर्मक (मुच्ल्) धातु को (विकल्प से गुण होता है, सकारादि सन् प्रत्यय परे रहते)।

...अकर्मकाणाम् — I. iv. 52

देखें — **गतिबुद्धिप्रत्यवसानार्थ० I. iv. 52**

अकर्मकात् — I. iii. 26

(उपपूर्वक) अकर्मक (स्था) धातु से (भी आत्मनेपद होता है)।

अकर्मकात् — I. iii. 35

(विपूर्वक) अकर्मक (कृञ्) धातु से (भी आत्मनेपद होता है)।

अकर्मकात् — I. iii. 45

अकर्मक (ज्ञा) धातु से (भी आत्मनेपद होता है)।

अकर्मकात् — I. iii. 49

(अनु उपसर्ग से उत्तर) अकर्मक (वद) धातु से (स्पष्ट वाणी वालों के सहोच्चारण अर्थ में आत्मनेपद होता है)।

अकर्मकात् — I. iii. 85

(उप उपसर्ग से उत्तर) अकर्मक (रम्) धातु से (परस्मैपद होता है)।

अकर्मकात् — I. iii. 88

(अण्यन्तावस्था में) अकर्मक (तथा चेतना कर्ता वाले) धातु से (ण्यन्तावस्था में परस्मैपद होता है)।

अकर्मकात् — III. ii. 148

अकर्मक (चलनार्थक और शब्दार्थक) धातुओं से (तच्छीलादि कर्त्ता हों तो वर्तमानकाल में युच् प्रत्यय होता है)।

अकर्मकेभ्यः — III. iv. 69

(सकर्मक धातुओं से लकार कर्म-कारक में होते हैं, चकार से कर्ता में भी होते हैं, और) अकर्मक धातुओं से (भाव तथा चकार से कर्ता में भी होते हैं)।

अकर्मधारये — VI. ii. 130

कर्मधारयवर्जित (तत्पुरुष) समास में (उत्तरपद राज्य शब्द को आद्युदात्त होता है)।

... अकाभ्याम् — II. ii. 15

देखें — **तृजकाभ्याम् II. ii. 15**

अकामे — VI. iii. 11

(मूर्धन् तथा मस्तकवर्जित हलन्त एवं अदन्त स्वाङ्गवाची शब्दों से उत्तर सप्तमी का) काम से भिन्न शब्द उत्तरपद रहते (अलुक् होता है)।

...अकार्ययोः — V. ii. 20

देखें — **अधृष्टाकार्ययोः V. ii. 20**

अकालात् — VI. ii. 32

(सिद्ध, शुष्क, पक्व तथा बन्ध शब्दों के उत्तरपद रहते) अकालवाची (सप्तम्यन्त) पूर्वपद को (प्रकृतिस्वर होता है)।

अकालात् — VI. iii. 17

(शय, वास तथा वासिन् शब्दों के उत्तरपद रहते) कालवाचियों से भिन्न शब्दों से उत्तर (सप्तमी का विकल्प से अलुक् होता है) ।

अकाले — VI. iii. 80

(अव्ययीभाव समास में भी) अकालवाची शब्दों के उत्तरपद रहते (सह को स आदेश होता है) ।

अकितः — VII. iv. 83

(यङ् अथवा यङ्लुक् परे रहने पर) अकित् = कित्-भिन्न (अभ्यास) को (दीर्घ हो जाता है)।

अकिति — VI. i. 57

(सृज् और दृशिर् धातु को) कित्-भिन्न (झलादि) प्रत्यय परे हो तो (अम् आगम होता है) ।

अकिंवृत्ते — III. iii. 145

(असम्भावन तथा सहन न करना गम्यमान हो तो) किम् के रूप वाले शब्द उपपद न हों (अथवा उपपद हों) तो (भी धातु से काल-सामान्य में सब लकारों के अपवाद लिङ् तथा लृट् प्रत्यय होते हैं)।

... अकृच्छ्रार्थेषु — III. iii. 126

देखें — **कृच्छ्राकृच्छ्रार्थेषु III. iii. 126**

अकृच्छ्रिणि — III. ii. 130

(इङ् तथा धारि धातु से वर्तमान काल में शतृ प्रत्यय होता है); यदि जिसके लिये क्रिया कष्टसाध्य न हो, ऐसा कर्ता वाच्य हो तो।

अकृच्छ्रे — VIII. i. 13

(प्रिय तथा सुख शब्दों को) कष्ट न होना अर्थ द्योत्य हो तो (विकल्प करके द्वित्व होता है, एवं उसको कर्मधारयवत् कार्य होता है)।

अकृञः — VI. ii. 75

(शिल्पिवाची समास में भी अणन्त उत्तरपद रहते पूर्वपद को आद्युदात्त होता है, यदि वह अण्) कृञ् से परे न हो तो।

अकृत् ... — VI. ii. 191

देखें — **अकृत्पदे VI. ii. 191**

अकृत्...— VII. iv. 25

देखें — **अकृत्सार्व० VII. iv. 25**

... अकृत ...— III. iv. 36

देखें — **समूलाकृतजीवेषु III. iv. 36**

अकृत ...— VI. ii. 170

देखें — **अकृतमित० VI. ii. 170**

अकृतमितप्रतिपन्नाः — VI. ii. 170

(आच्छादनवाची शब्द को छोड़कर जो जातिवाची, कालवाची एवं सुखादि शब्द, उनसे आगे) कृत, मित तथा प्रतिपन्न शब्द को छोड़कर (उत्तरपद क्तान्त शब्द को अन्तोदात्त होता है, बहुव्रीहि समास में)।

अकृता — II. ii. 7

अकृदन्त (सुबन्त) के साथ (ईषत् शब्द समास को प्राप्त होता है, और वह तत्पुरुष समास होता है)।

अकृत्पदे — VI. ii. 191

(अति उपसर्ग से उत्तर) अकृदन्त तथा पद शब्द को (अन्तोदात्त होता है)।

...अकृत्रिमा... — IV. i. 42

देखें — **वृत्यमत्रावपना० IV. i. 42**

अकृत्सार्वधातुकयोः — VII. iv. 25

कृत् तथा सार्वधातुक से भिन्न (कित्, ङित् यकार) परे रहते (अजन्त अङ्ग को दीर्घ होता है)।

अक्लृपि...— III. i. 110

देखें — **अक्लृपिचृतेः III. i. 110**

अक्लृपिचृतेः — III. i. 110

(ऋकार उपधा वाली धातुओं से भी क्यप् प्रत्यय होता है), क्लृपि और चृति धातु को छोड़कर।

अके — VI. ii. 73

(जीविकार्थवाची समास में) अकप्रत्ययान्त शब्द के उत्तरपद रहते (पूर्वपद को आद्युदात्त होता है)।

अकेकान्तखोपधात् — IV. ii. 140
अक, इक अन्त वाले तथा खकार उपधावाले जो (देश-वाची वृद्धसंज्ञक) प्रातिपदिक, उनसे (शैषिक छ प्रत्यय होता है)।

अकेनो: — II. iii. 70
(भविष्यत्कालिक और आधमर्ण्य अर्थ होने पर) अक और इन् के योग में (षष्ठी विभक्ति नहीं होती)।

अकेवले — VI. ii. 96
मिश्रित अर्थ के बोधक समास में (उदक शब्द उपपद रहते पूर्वपद को अन्तोदात्त होता है)।

अको: — VI. i. 128
ककार जिनमें नहीं है (तथा जो नञ् समास में वर्तमान नहीं है); ऐसे (एतत् तथा तत्) शब्दों के (सु का लोप हो जाता है, हल् परे रहते, संहिता के विषय में)।

अको: — VII. i. 11
ककाररहित (इदम् और अदस्) के (भिस् को ऐस् नहीं होता)।

... अकौ — VII. i. 1
देखें — अनाकौ VII. i. 1

अक्रान्तात् — VI. ii. 198
क्र अन्त में नहीं है जिसके, ऐसे शब्द के उत्तर (सक्थ शब्द को भी विकल्प से अन्तोदात्त होता है, बहुव्रीहि समास में)।

अक्ष...— II. i. 10
देखें — अक्षशलाकासंख्या: II. i. 10

...अक्ष...— VI. ii. 121
देखें — कूलतीर० VI. ii. 121

अक्ष: — III. i. 75
अक्षू धातु से उत्तर (श्नु प्रत्यय विकल्प से होता है, कर्तृ-वाची सार्वधातुक परे रहने पर)।

अक्षद्यूतादिभ्य: — IV. iv. 19
(तृतीयासमर्थ) अक्षद्यूतादि-गणपठित प्रातिपदिकों से (उत्पन्न किया गया अर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

...अक्षयो: — VI. iii. 103
देखें — पथ्यक्षयो: VI. iii. 103

अक्षशलाकासंख्या: — II. i. 10
अक्ष, शलाका तथा संख्यावाची शब्द (सुबन्त परि के साथ अव्ययीभाव समास को प्राप्त होते हैं)।

...अक्षिभ्रुव...— V. iv. 77
देखें — अचतुर० V. iv. 77

अक्षेषु — III. iii. 70
(ग्लह शब्द में) अक्ष = जुए का पासा विषय हो, तो (ग्रह धातु से अप् प्रत्यय तथा लत्व निपातन से होता है, कर्तृ-भिन्न कारक तथा भाव में) ।

अक्ष्ण: — V. iv. 76
(दर्शन विषय से अन्यत्र वर्तमान) अक्षिशब्दान्त प्राति-पदिक से (समासान्त अच् प्रत्यय हो जाता है)।

....अक्ष्णाम् — VII. i. 75
देखें — अस्थिदधि० VII. i. 75

...अक्ष्णो: — V. iv. 113
देखें — सक्थ्यक्ष्णो: V. iv. 113

अग: — VIII. iv. 3
गकारभिन्न (पूर्वपद में स्थित) निमित्त से उत्तर (सञ्ज्ञा-विषय में नकार को णकारादेश होता है)।

अगते: — VIII. i. 57
(चन, चित्, इव तथा गोत्रादिगणपठित शब्द, तद्धित प्रत्यय एवं आम्रेडित सञ्ज्ञक शब्दों के परे रहते) गतिस-ञ्ज्ञक से भिन्न किसी पद से उत्तर (तिङन्त को अनुदात्त नहीं होता)।

अगतौ — VII. iii. 42
गतिभिन्न अर्थ में वर्तमान ('शद्लृ शातने' अङ्ग को तकारादेश होता है)।

...अगदस्य — VI. iii. 69
देखें — सत्यागदस्य VI. iii. 69

अगस्ति ...— II. iv. 70
देखें — अगस्तिकुण्डिनच् II. iv. 70

अगस्तिकुण्डिनच् — II. iv. 70
(अगस्त्य तथा कौण्डिन्य शब्दों से गोत्र में विहित जो तत्कृत बहुवचन में प्रत्यय, उसका लुक् हो जाता है, शेष बची अगस्त्य एवं कुण्डिनी प्रकृति को क्रमश:) अगस्ति और कुण्डिनच् आदेश भी हो जाते हैं ।

... अगस्त्य... — VI. iv. 149
देखें — सूर्यतिष्य० VI. iv. 149

अगात् — VIII. iii. 99
गकारभिन्न (इण् तथा कवर्ग) से उत्तर (सकार को एकार परे रहते सञ्ज्ञाविषय में मूर्धन्य आदेश होता है)।

अगारान्तात् — IV. iv. 70

(सप्तमीसमर्थ) अगार अन्तवाले प्रातिपदिकों से ('नियुक्त' अर्थ में ठन् प्रत्यय होता है)।

अगारैकदेशे — III. iii. 79

गृह का एकदेश वाच्य हो तो (प्रघण और प्रघाण शब्द में प्र पूर्वक हन् धातु से अप् प्रत्यय और हन को घन आदेश कर्तृभिन्न कारक संज्ञा कर्म में निपातन किये जाते हैं) ।

अगार्ग्य ...— VIII. iv. 66

देखें — **अगार्ग्यकाश्यप० VIII. iv. 66**

अगार्ग्यकाश्यपगालवानाम् — VIII. iv. 66

(उदात्त उदय = परे है जिससे एवं स्वरित उदय = परे है जिससे, ऐसे अनुदात्त को स्वरित आदेश नहीं होता) गार्ग्य, काश्यप तथा गालव आचार्यों के मत को छोड़कर।

अगोत्रात् — IV. i. 157

गोत्र से भिन्न जो (वृद्धसंज्ञक प्रातिपदिक), उससे (उदीच्य आचार्यों के मत में फिञ् प्रत्यय होता है)।

अगोत्रादौ — VIII. i. 69

गोत्रादि-गणपठित शब्दों को छोड़कर (निन्दावाची सुबन्तों के परे रहते भी सगतिक एवं अगतिक दोनों तिङन्तों को अनुदात्त होता है)।

अगोपुच्छ ... — V. i. 19

देखें — **अगोपुच्छसंख्या० V. i. 19**

अगोपुच्छसंख्यापरिमाणात् — V. i. 19

(यहां से आगे 'तदर्हति' पर्यन्त कहे हुए अर्थों में सामान्यतया ठक् प्रत्यय अधिकृत होता है) गोपुच्छ, संख्या तथा परिमाणवाची शब्दों को छोड़कर।

अगौरादयः — VI. ii. 194

(उप उपसर्ग से उत्तर दो अच् वाले शब्दों को तथा अजिन शब्द को तत्पुरुष समास में अन्तोदात्त होता है), गौरादि शब्दों को छोड़कर।

... अग्नि ...— IV. i. 37

देखें — **वृषाकप्यग्नि० IV .i. 37**

...अग्नि... — IV. ii. 125

देखें — **कच्छाग्निवक्त्र० IV. ii. 125**

...अग्निचित्ये — III. i. 132

देखें — **चित्याग्निचित्ये III. i. 132**

...अग्निभ्यः — VIII. iii. 97

देखें — **अम्बाम्ब० VIII. iii. 97**

अग्नीत्प्रेषणे — VIII. ii. 92

अग्नीध् = यज्ञ का ऋत्विग्विशेष के प्रेषण = नियोजन करने में (पद के आदि को प्लुत उदात्त होता है तथा उससे परे को भी होता है, यज्ञकर्म में) ।

...अग्नीषोम ... IV. ii. 31

देखें — **द्यावापृथिवीशुनासीर० IV. ii. 31**

अग्नेः — IV. ii. 32

(प्रथमासमर्थ देवतावाची) अग्नि प्रातिपदिक से (षष्ठ्यर्थ में ढक् प्रत्यय होता है)।

अग्नेः — VI. iii. 26

(देवतावाची द्वन्द्व समास में सोम तथा वरुण शब्द उत्तरपद रहते) अग्नि शब्द को (ईकारादेश होता है)।

अग्नेः — VIII. iii. 82

अग्नि शब्द से उत्तर (स्तुत्, स्तोम तथा सोम के सकार को समास में मूर्धन्य आदेश होता है)।

अग्नौ — III. i. 131

अग्नि अभिधेय होने पर (परिचाय्य, उपचाय्य और समूह्य शब्दों का निपातन किया जाता है) ।

अग्नौ — III. ii. 91

'अग्नि' कर्म उपपद रहते ('चिञ्' धातु से क्विप् प्रत्यय होता है, भूतकाल में)।

अग्न्याख्यायाम् — III. ii. 92

अग्नि की आख्या = कथन गम्यमान होने पर (कर्म उपपद रहते 'चिञ्' धातु से कर्म कारक में 'क्विप्' प्रत्यय होता है, भूतकाल में)।

अग्रगामिनि — VIII. iii. 92

(प्रष्ठ शब्द में षत्व निपातन है) अग्रगामी = आगे चलने वाला अभिधेय हो तो।

..अग्रतस् ...— III. ii. 18

देखें — **पुरोग्रतो० III. ii. 18**

अग्रन्थे — I. iii. 75

ग्रन्थविषयक प्रयोग न हो तो (सम्, उत् एवं आङ् उपसर्ग से उत्तर यम् धातु से आत्मनेपद होता है, यदि क्रिया का फल कर्ता को मिलता हो तो)।

अग्राख्यायाम् — V. iv. 93

प्रधान को कहने में वर्तमान (उरस्- शब्दान्त तत्पुरुष से समासान्त टच् प्रत्यय होता है)।

अग्रात् — IV.. iv. 116

(सप्तमीसमर्थ) अग्र प्रातिपदिक से (वेद-विषयक भवार्थ में यत् प्रत्यय होता है)।

अग्रान्त... — V. iv. 145

देखें — **अग्रान्तशुद्ध० V. iv. 145**

अग्रान्तशुद्धशुभ्रवृषवराहेभ्यः — V. iv. 145

अग्रशब्दान्त तथा शुद्ध, शुभ्र, वृष और वराह शब्दों से उत्तर (भी दन्त शब्द को विकल्प से समासान्त दतृ आदेश होता है, बहुव्रीहि समास में)।

अग्रामणीपूर्वात् — V. iii. 112

ग्रामणी = गाँव का मुखिया पूर्व अवयव न हो जिसके, ऐसे (पूगवाची) प्रातिपदिकों से (ञ्य प्रत्यय होता है, स्वार्थ में)।

अग्रामाः — II. iv. 7

(नदीवाची एवं) ग्रामवर्जित (देशवाची भिन्नलिङ्ग वाले) शब्दों का (द्वन्द्व एकवत् होता है)।

अग्रे... — III. iv. 24

देखें— **अग्रेप्रथमपूर्वेषु III. iv. 24**

अग्रेप्रथमपूर्वेषु — III. iv. 24

अग्रे, प्रथम, पूर्व उपपद हों तो (समानकर्तृक पूर्वकालिक धातु से विकल्प से क्त्वा और णमुल् प्रत्यय होते हैं, पक्ष में लडादि लकार होते हैं)।

...अग्रेभ्यः — VIII. iv. 4

देखें — **पुरगामिश्रका० VIII. iv. 4**

...अग्रेषु — III. ii. 18

देखें — **पुरोऽग्रतो० III. ii. 18**

अग्लोपि... — VII. iv. 2

देखें — **अग्लोपिशास्वृदिताम् VII. iv. 2**

अग्लोपिशास्वृदिताम् — VII. iv. 2

अक् प्रत्याहार के किसी अक्षर का लोप हुआ है जिस अङ्ग में, उसके तथा 'शासु अनुशिष्टौ' एवं ऋदित् अङ्गों की (उपधा को चङ्परक णि परे रहते ह्रस्व नहीं होता है)।

अघञ्...— II. iv. 56

देखें— **अघञपोः II. iv. 56**

अघञपोः —II. iv. 56

घञ् और अप् वर्जित (आर्धधातुक) परे रहते (अज् को वी आदेश होता है)।

...अघस्य — VII. iv. 37

देखें— **अश्वाघस्य VII. iv. 37**

अघोः — VI. iv. 113

(श्नान्त अङ्ग एवं) घुसंज्ञक को छोड़कर (जो अभ्यस्तसञ्ज्ञक अङ्ग, उसके आकार के स्थान में ईकारादेश होता है; हलादि कित्, ङित् सार्वधातुक परे रहते)।

...अघोस... — VIII. iii. 17

देखें—**भोभगो० VIII. iii. 17**

अङ् — III. i. 52

(असु, वच और ख्या धातु से उत्तर कर्तृवाची लुङ् परे रहने पर च्लि के स्थान में) अङ् आदेश होता है।

अङ् — III. i. 86

(धातु से आशीर्वादार्थक लिङ् परे रहते वेद विषय में) अङ् प्रत्यय होता है।

अङ् — III. iii. 104

(षकार इत्संज्ञक है जिनका, ऐसी धातुओं से स्त्रीलिङ्ग में) अङ् प्रत्यय होता है, (कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में)।

...अङ्... VI. i. 176

देखें— **गोश्वन्० VI. i. 176**

अङ्... VI. iv. 34

देखें — **अङ्हलोः VI. iv. 34**

अङि — VII. iv. 16

(ऋवर्णान्त तथा दृशिर् अङ्ग को) अङ् प्रत्यय परे रहते (गुण होता है)।

अङितः —VI. iv. 103

ङिद्-भिन्न (हि) को (भी धि आदेश होता है, वेद विषय में)।

...अङ्क... IV. iii. 126

देखें — **सङ्घाङ्कलक्षणेषु IV. iii. 126**

...अङ्कयोः — VIII. ii. 22

देखें — **घाङ्कयोः VIII. ii. 22**

अङ्कवत् — IV. iii. 80

पञ्चमीसमर्थ गोत्रवाची प्रातिपदिकों से 'आगत' अर्थ में) अङ्क अर्थ में होने वाले प्रत्ययों की तरह प्रत्ययविधि होती है।

...अङ्ग... V. ii. 7

देखें — **पथ्यङ्ग० V. ii. 7**

अङ्ग — VIII. i. 33
(अनुकूलता गम्यमान हो तो) अङ्ग शब्द से युक्त (तिङन्त को अनुदात्त नहीं होता)।

अङ्गम् — I. iv. 13
(जिस धातु या प्रातिपदिक से प्रत्यय का विधान किया जाये, उस धातु या प्रातिपदिक का आदि वर्ण है आदि जिस समुदाय का, उसकी) अङ्ग संज्ञा होती है।

अङ्गम् — III. iii. 81
(अप पूर्वक हन् धातु से) शरीर का अवयव अभिधेय हो तो (अप् प्रत्यय तथा हन् को घन आदेश अपघन शब्द में निपातन किया जाता है, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में)।

अङ्गयुक्तम् — VIII. ii. 96
अङ्ग शब्द से युक्त (आकाङ्क्षा रखने वाले तिङन्त को प्लुत और उदात्त होता है)।

अङ्गविकारः — II. iii. 20
अङ्ग = शरीर का विकार (जिससे लक्षित होवे, उसमें तृतीया विभक्ति होती है)।

अङ्गस्य — I. i. 62
(लुक्, श्लु, लुप् शब्दों के द्वारा जहाँ प्रत्यय का अदर्शन होता हो, उसके परे रहते) जो अङ्ग, उसको (प्रत्ययनिमित्त कार्य नहीं होता है)।

अङ्गस्य — VI. iv. 1
'अङ्गस्य' यह अधिकार सूत्र है, सप्तमाध्याय की समाप्ति-पर्यन्त इसका अधिकार जायेगा।

अङ्गात् — VIII. ii. 27
(ह्रस्वान्त) अङ्ग से उत्तर (सकार का झल् परे रहते लोप होता है)।

अङ्गात् — VIII. iii. 78
(इण् प्रत्याहार अन्तवाले) अङ्ग से उत्तर (षीध्वम्, लुङ् तथा लिट् के धकार को मूर्धन्य आदेश होता है)।

अङ्गानि — VI. ii. 70
(मैरेय शब्द उत्तरपद रहते) उसके अङ्ग = उपादान कारणवाची पूर्वपद को (आद्युदात्त होता है)।

... अङ्गिरोभ्यः — II. iv. 65
देखें — **अत्रिभृगुकुत्स॰ II. iv. 65**

... अङ्गु... — VIII. iii. 97
देखें — **अम्बाम्ब॰ VIII. iii. 97**

... अङ्गुलेः — IV. iii. 62
देखें — **जिह्वामूलाङ्गुलेः IV. iii. 62**

अङ्गुलेः — V. iv. 86.
(सङ्ख्या तथा अव्यय आदि में हैं जिस) अङ्गुलि-शब्दान्त (तत्पुरुष समास के, तदन्त) प्रातिपदिक से (समासान्त अच् प्रत्यय होता है)।

अङ्गुलेः — V. iv. 114
अङ्गुलिशब्दान्त प्रातिपदिक से (समासान्त षच् प्रत्यय होता है, बहुव्रीहि समास में लकड़ी वाच्य हो तो)।

अङ्गुलेः — VIII. iii. 80
(समास में) अङ्गुलि शब्द से उत्तर (सङ्ग शब्द के सकार को मूर्धन्य आदेश होता है)।

अङ्गुल्यादिभ्यः — V. iii. 108
अङ्गुल्यादि प्रातिपदिकों से (इवार्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

अङ्गे — VI. i. 115
(यजुर्वेद-विषय में) अङ्ग शब्द में (जो एङ्, उसको अकार के परे रहते प्रकृतिभाव हो जाता है तथा उस अङ्ग शब्द के आदि में जो अकार उसके परे रहते पूर्व एङ् को प्रकृतिभाव होता है)।

अङ्यः — VI. iii. 60
ङी अन्त में नहीं है जिसके, ऐसा जो (इक् अन्त वाला) शब्द, उसको (गालव आचार्य के मत में विकल्प से ह्रस्व होता है, उत्तरपद परे रहते)।

अङ्हलोः — VI. iv. 34
(शास् अङ्ग की उपधा को इकारादेश हो जाता है) अङ् तथा हलादि (कित्, ङित्) प्रत्यय परे रहते।

अच्...— I. i. 10
देखें — **अज्झलौ I. i. 10**

अच् — I. ii. 27
(उकाल, ऊकाल तथा ऊ३काल अर्थात् एकमात्रिक द्विमात्रिक तथा त्रिमात्रिक) अच् (यथासंख्य करके ह्रस्व, दीर्घ और प्लुतसंज्ञक होते हैं)।

अच् — I. iii. 2
(उपदेश में वर्तमान अनुनासिक) अच् (इत्सञ्ज्ञक होता है)।

अच् — III. ii. 9
(अनुद्यमन अर्थ में वर्तमान हृञ् धातु से कर्म उपपद रहते) अच् प्रत्यय होता है।

अच् – III. iii. 56
(इवर्णान्त धातुओं से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में) अच् प्रत्यय होता है।

अच् – V. ii. 127
(अर्शस् आदि गणपठित प्रातिपदिकों से मत्वर्थ में) अच् प्रत्यय होता है।

अच् – V. iv. 75
(प्रति, अनु तथा अव पूर्ववाले सामन् और लोमन् प्रातिपदिकों से समासान्त) अच् प्रत्यय होता है।

अच् – V. iv. 118
(नासिकाशब्दान्त बहुव्रीहि समास से सञ्ज्ञाविषय में समासान्त) अच् प्रत्यय होता है (तथा नासिका शब्द के स्थान में नस् आदेश भी होता है, यदि वह नासिका शब्द स्थूल शब्द से उत्तर न हो तो)।

...अच् ...– VI. ii. 144
देखें – थाथघञ् ० VI. ii. 144

अच्... – VI. ii. 157
देखें – अच्कौ VI. ii. 157

अच्... – VI. iv. 16.
देखें – अज्झनगमाम् VI. iv. 16.

अच्... – VI. iv. 62.
देखें – अज्झन० VI. iv. 62.

अचः – I. i. 46
(मित् आगम) अचों के मध्य में (जो अन्तिम अच्, उसके आगे होता है)।

अचः – I. i. 56
(पर को निमित्त मानकर) अच् के स्थान में (विहित आदेश पूर्व की विधि करने में स्थानिवत् हो जाता है)।

अचः – I. i. 63
अचों के मध्य में (जो अन्त्य अच्, वह अन्त्य अच् आदि है जिस समुदाय का, उस समुदाय की टि संज्ञा होती है)।

अचः – I. ii. 28
(ह्रस्व हो जाये, दीर्घ हो जाये और प्लुत हो जाये- ऐसा नाम लेकर जब कहा जावे तो वह पूर्वोक्त ह्रस्व, दीर्घ, प्लुत) अच् के स्थान में (ही हो)।

अचः – III. i. 62.
अजन्त धातु से उत्तर (च्लि को विकल्प से चिण् आदेश होता है, कर्मकर्तृवाची लुङ् में 'त' शब्द परे हो तो)।

अचः – III. i. 97
अजन्त धातु से (यत् प्रत्यय होता है)।

...अचः – III. i. 134
देखें – ल्युणिन्यचः III. i. 134

अचः – V. iii. 83.
(इस प्रकरण में पठित ढ तथा अजादि प्रत्ययों के परे रहते दूसरे) अच् से (बाद के शब्दरूप का लोप हो जाता है)।

अचः – VI. i. 189
(कर्त्ता में विहित यक् प्रत्यय के परे रहते उपदेश में जो) अजन्त धातुयें, उनको विकल्प से उदात्त हो जाता है)।

अचः – VI. iv. 138
(भसञ्ज्ञक) लुप्तनकार वाले अञ्चु धातु के (अकार का लोप होता है)।

... अचः –VII. i. 72
देखें – झलचः VII. i. 72

अचः – VII. ii. 3
(वद, व्रज तथा हलन्त अङ्गों के) अच् के स्थान में (वृद्धि होती है, परस्मैपदपरक सिच् परे हो तो)।

अचः – VII. ii. 61
(उपदेश में) जो अजन्त धातु (तास् परे रहते नित्य अनिट्), उससे उत्तर (तास् के समान ही थल् को इट् का आगम नहीं होता)।

अचः – VII. ii. 115
अजन्त अङ्ग को (ञित्, णित् प्रत्यय परे रहते वृद्धि होती है)।

अचः – VII. iv. 47
अजन्त (उपसर्ग) से उत्तर (घुसञ्ज्ञक दा अङ्ग को तकारादि कित् प्रत्यय परे रहते तकारादेश होता है)।

अचः – VII. iv. 54
(मी, मा एवं घुसञ्ज्ञक तथा रभ, डुलभष्, शक्लृ, पत्लृ और पद् अङ्गों के) अच् के स्थान में (इस् आदेश होता है, सकारादि सन् परे रहते)।

अचः – VIII. iv. 28
अच् से उत्तर (कृत् में स्थित जो नकार, उसको उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर णकारादेश होता है)।

अचः – VIII. iv. 45
अच् से उत्तर (वर्तमान रेफ और हकार से उत्तर यर् को विकल्प से द्वित्व होता है)।

अचङि — VII. iii. 56

(अभ्यास से उत्तर 'हि गतौ' धातु के हकार को कवर्गादेश होता है), चङ् परे न हो तो।

अचतुर... — V. i. 120

देखें — अचतुरसंगत० V. i. 120

अचतुर... — V. iv. 77

देखें — अचतुरविचतुर० V. iv. 77

अचतुरविचतुरसुचतुरस्त्रीपुंसधेन्वनडुहर्क्सामवाङ्मनसाक्षिभ्रुवदारगवोर्वष्ठीवपदष्ठीवनक्तंदिवरात्रिन्दिवाहर्दिवसरजसनिश्श्रेयसपुरुषायुषद्व्यायुषत्र्यायुषर्ग्यजुषजातोक्षमहोक्षवृद्धोक्षोपशुनगोष्ठश्वाः — V. iv. 77

अचतुर, विचतुर, सुचतुर, स्त्रीपुंस, धेन्वनडुह, ऋक्साम, वाङ्मनस, अक्षिभ्रुव, दारगव, ऊर्वष्ठीव पदष्ठीव, नक्तन्दिव, रात्रिन्दिव, अहर्दिव, सरजस, निश्श्रेयस, पुरुषायुष, द्व्यायुष, त्र्यायुष, ऋग्यजुष, जातोक्ष, महोक्ष, वृद्धोक्ष, उपशुन तथा गोष्ठश्व शब्द अच्प्रत्ययान्त निपातन किये जाते हैं ।

अचतुरसंगतलवणवटयुधकतरसलसेभ्यः — V. i. 120

(यहां से आगे जो भाव प्रत्यय कहे जायेंगे, वे प्रत्यय नञ् पूर्ववाले तत्पुरुष-समासयुक्त प्रातिपदिकों से नहीं होंगे) चतुर, संगत, लवण, वट, युध, कत, रस तथा लस शब्दों को छोड़कर।

अचाम् — I. i. 72

(जिस समुदाय के) अचों में (आदि अच् वृद्धिसंज्ञक हो, उस समुदाय की वृद्धसंज्ञा होती है)।

...अचाम् — VII. i. 70

देखें — उगिदचाम् VII. i. 70

अचाम् — VII. ii. 117

(ञित्, णित् तद्धित परे रहते, अङ्ग के) अचों के (आदि अच् को वृद्धि होती है)।

अचि — I. i. 58

(द्विर्वचन का निमित्त) अजादि प्रत्यय परे हो तो (अजादेश स्थानिवत् होता है, द्विर्वचन मात्र करने में)।

...अचि — I. iv. 18

देखें — यचि I. iv. 18

अचि — II. iv. 74

अच् प्रत्यय परे रहते (यङ् का लुक् होता है; चकार से अच् परे न हो तो भी बहुल करके लुक् हो जाता है)।

अचि — IV. i. 89

(प्राग्दीव्यतीय) अजादि प्रत्यय की विवक्षा हो तो (गोत्र में उत्पन्न प्रत्यय का लुक् नहीं होता)।

अचि — VI. i. 74

(इक् = इ उ ऋ लृ के स्थान में यथासङ्ख्य करके यण् = य् व् र् ल् आदेश होते हैं), अच् परे रहते, (संहिता के विषय में)।

अचि — VI. i. 121

(प्लुत तथा प्रगृह्यसञ्ज्ञक शब्द) अच् परे रहते (नित्य ही प्रकृतिभाव से रहते हैं)।

अचि — VI. i. 130

('सः' के सु का लोप होता है) अच् परे रहते, (यदि लोप होने पर पाद की पूर्त्ति हो रही हो तो)।

अचि — VI. i. 182

(स्वपादि धातुओं के तथा हिंस् धातु के) अजादि (अनिट् सार्वधातुक) परे हो तो (विकल्प से आदि को उदात्त हो जाता है)।

अचि — VI. iii. 73

(उस लुप्त नकार वाले नञ् से उत्तर नुट् का आगम होता है), अजादि शब्द के उत्तरपद रहते ।

अचि — VI. iii. 100

(कु को तत्पुरुष समास में) अजादि शब्द उत्तरपद हो तो (कत् आदेश होता है)।

अचि — VI. iv. 63

अजादि (कित्, ङित्) प्रत्ययों के परे रहते (दीङ् धातु से उत्तर युट् का आगम होता है)।

अचि — VI. iv. 77

(श्नुप्रत्ययान्त अङ्ग तथा इवर्णान्त, उवर्णान्त धातु, एवं भ्रू शब्द को इयङ्, उवङ् आदेश होते है), अच् परे रहते ।

अचि — VII. i. 61

अजादि प्रत्यय परे रहते ('रध हिंसासंराध्योः' तथा 'जभ गात्रविनामे' अङ्ग को नुम् आगम होता है)।

अचि — VII. i. 73

(इक् अन्त वाले नपुंसक अङ्ग को) अजादि (विभक्ति) परे रहते (नुम् आगम होता है)।

अचि — VII. i. 97

(तृतीयादि) अजादि विभक्तियों के परे रहते (क्रोष्टु शब्द को विकल्प से तृज्वत् अतिदेश होता है)।

अचि — VII. ii. 89
(कोई आदेश जिसको नहीं हुआ है, ऐसी) अजादि (विभक्ति) के परे रहते (युष्मद्, अस्मद् अङ्ग को यकारादेश होता है)।

अचि — VII. ii. 100
(तिसृ और चतसृ अंगों के ऋकार के स्थान में) अजादि (विभक्ति) परे रहते (रेफ आदेश होता है)।

अचि — VII. iii. 72
(क्स का) अजादि प्रत्यय परे रहते (लोप होता है)।

अचि — VII. iii. 87
(अभ्यस्तसञ्ज्ञक अङ्ग की लघु उपधा इक् को) अजादि (पित् सार्वधातुक) परे रहते (गुण नहीं होता)।

अचि — VIII. ii. 21
अजादि प्रत्यय परे रहते (गृ धातु के रेफ को विकल्प करके लत्व होता है)।

अचि — VIII. ii. 108
(उनके अर्थात् प्लुत के प्रसङ्ग में एच् के उत्तरार्द्ध को जो इकार उकार पूर्व सूत्र से विधान कर आये हैं, उन इकार उकार के स्थान में क्रमशः य् व् आदेश हो जाते हैं), अच् परे रहते, (सन्धि के विषय में)।

अचि — VIII. iii. 32
(ह्रस्व पद से उत्तर जो ङम्, तदन्त पद से उत्तर) अच् को (नित्य ही ङमुट् आगम होता है)।

अचि — VIII. iv. 48
अच् परे रहते (शर् प्रत्याहार को द्वित्व नहीं होता)।

अचिण्... — VII. iii. 32
देखें—अचिण्णलोः VII. iii. 32

अचिण्णलोः — VII. iii. 32
(हन् अङ्ग को तकारादेश होता है), चिण् तथा णल् प्रत्ययों को छोड़कर (ञित्, णित् प्रत्यय परे रहते)।

अचित्त....— IV. ii. 46
देखें— अचित्तहस्ति० IV. ii. 46

अचित्तहस्तिधेनोः — IV. ii. 46
(षष्ठीसमर्थ) अचेतनवाची तथा हस्तिन् और धेनु शब्दों से (समूहार्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

अचित्तात् — IV. iii. 96
(प्रथमासमर्थ भक्तिसमानाधिकरणवाची, देशकाल को छोड़कर जो) अचेतनवाची प्रातिपदिक, उनसे (षष्ठ्यर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

अचिरापहते — V. ii. 70
(सप्तमीसमर्थ तन्त्र प्रातिपदिक से) 'अचिरापहत:' = थोड़ा काल खड्डी से बाहर निकलने को बीता है अर्थात् तत्काल बुना हुआ अर्थ में (कन् प्रत्यय होता है)।

अचिरोपसम्पतौ — VI. ii. 56
अचिरकाल सम्बन्ध गम्यमान हो तो (प्रथम पूर्वपद को विकल्प से प्रकृतिस्वर होता है)।

अच्कौ — VI. ii. 157
(नञ् से उत्तर) अच् प्रत्ययान्त तथा क प्रत्ययान्त उत्तरपद को (अशक्ति गम्यमान हो तो अन्तोदात्त होता है)।

अच्छ — I. iv. 68
(गत्यर्थक तथा वद धातु के प्रयोग में) अव्यय अच्छ शब्द (गति और निपातसंज्ञक होता है)।

अच्छन्दसि — V. iii. 49
('भाग' अर्थ में वर्तमान पूरणप्रत्ययान्त एकादश सङ्ख्या से पहले-पहले जो सङ्ख्यावाची शब्द, उनसे स्वार्थ में अन् प्रत्यय होता है), वेदविषय को छोड़कर।

...अच्परः — VIII. iii. 87
देखें— यच्परः VIII. iii. 87

अच्वेः — III. i. 12
च्विप्रत्ययान्त से भिन्न (भृश आदियों) से (भवति के अर्थ में क्यङ् प्रत्यय होता है, और हलन्तों का लोप भी)।

अच्वौ — III. ii. 56
(सुभग, स्थूल, पलित, नग्न, अन्ध, प्रिय, ये च्व्यर्थ में वर्तमान) अच्विप्रत्ययान्त (कर्म) उपपद रहते (कृञ् धातु से करण कारक में ख्युन् प्रत्यय होता है)।

अज...— V. i. 8
देखें — अजाविभ्याम् V. i. 8

अजः — III. iii. 69
(सम्, उत् पूर्वक) अज धातु से (कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में समुदाय से पशुविषय प्रतीत हो तो अप् प्रत्यय होता है)।

...अजगात् — V. ii. 110
देखें — गाण्ड्यजगात् V. ii. 110

... अजन्तस्य VI. iii. 66
देखें — अरुर्द्विषदजन्तस्य VI. iii. 66
अजप ...— I. ii. 34
देखें — अजपन्यूङ्खसामसु I. ii. 34
...अजपद...— V. iv. 120
देखें — सुप्रातसुश्व० V. iv. 120
अजपन्यूङ्खसामसु — I. ii. 34
जप, न्यूङ्ख = आश्वलायनश्रौतसूत्रपठित निगदविशेष तथा सामवेद को छोड़कर (यज्ञकर्म में उदात्त, अनुदात्त तथा स्वरित स्वरों को एकश्रुति स्वर होता है)।
अजर्यम् — III. i. 105
अजर्यम् शब्द (नञ् पूर्वक जृष् धातु से कर्तृवाच्य में यत् प्रत्ययान्त निपातन है, संगत अर्थ अभिधेय होने पर)।
अजर्यम् = संगति या मैत्री।
...अजस...— III. ii. 167
देखें — नमिकम्पि० III. ii. 167
अजसौ — IV. i. 31
(रात्रि शब्द से भी स्त्रीलिङ्ग विवक्षित होने पर संज्ञा तथा छन्द विषय में) जस् विषय से अन्यत्र (ङीप् प्रत्यय होता है)।
...अजस्तुन्दे — VI. i. 150
देखें — कास्तीराजस्तुन्दे VI. i. 150
...अजा...— VII. iii. 47
देखें — भस्त्रैषा० VII. iii. 47
... अजात्... — IV. ii. 38
देखें — गोत्रोक्षोष्ट्रो० IV. ii. 38
अजातेः — I. ii. 52
जातिप्रयोग से पूर्व ही (प्रत्ययलुप् होने पर लुबर्थ-विशेषण भी प्रकृत्यर्थवत् होते हैं)।
अजातौ —III. ii. 78
अजातिवाची (सुबन्त) उपपद रहते (ताच्छील्य = तत्स्वभावता गम्यमान होने पर सब धातुओं से 'णिनि' प्रत्यय होता है)।
अजातौ — III. ii. 98
अजातिवाची (पञ्चम्यन्त) उपपद रहते ('जन' धातु से 'ड' प्रत्यय होता है, भूतकाल में)।
अजातौ — V. iv. 37
जाति में वर्तमान न हो तो (ओषधि प्रातिपदिक से स्वार्थ में अण् प्रत्यय होता है)।
अजातौ —VI. iv. 171
(ब्राह्म शब्द में टिलोप निपातन किया जाता है, अपत्यार्थक) जाति को छोड़कर।
अजात्या — II. i. 67
(कृत्यप्रत्ययान्त सुबन्त तथा तुल्य के पर्यायवाची सुबन्त) अजातिवाची (समानाधिकरण समर्थ सुबन्त) शब्द के साथ (विकल्प से समास को प्राप्त होते हैं, और वह तत्पुरुष समास होता है)।
...अजादात् — IV. i. 171
देखें — वृद्धेत्कोसलाजादात् IV. i. 171
अजादि — II. ii. 33
(द्वन्द्वसमास में) अजादि (तथा अदन्त शब्दरूप का पूर्व-प्रयोग होता है)।
अजादि...— IV. i. 4
देखें — अजाद्यतः IV. i. 4
अजादी — V. iii. 58
(इस प्रकरण में कहे गये) अजादि प्रत्यय अर्थात् इष्ठन्, ईयसुन् (गुणवाची प्रातिपदिक से ही होते हैं)।
...अजादी — VI. i. 167
देखें — नद्यजादी VI. i. 167
अजादीनाम् — VI. iv. 72
अच् आदि वाले अङ्गों को (लुङ्, लङ् तथा लृङ् के परे रहते आट् का आगम होता है और वह आट् उदात्त भी होता है)।
अजादेः — VI. i. 2
अच् आदि में है जिसके, ऐसे शब्द के (द्वितीय एकाच् समुदाय को द्वित्व हो जाता है)।
...अजादौ — V. iii. 83
देखें — ठाजादौ V. iii. 83
अजाद्यतः — IV. i. 4
अजादिगणपठित प्रातिपदिकों से तथा अदन्त प्रातिप-दिकों से (स्त्रीलिङ् में टाप् प्रत्यय होता है)।
अजाद्यदन्तम् — II. ii. 33
अजादि और ह्रस्व अकारान्त शब्दरूप (द्वन्द्व समास में पूर्व प्रयुक्त होते हैं)।
अजाविभ्याम् — V. i. 8
(चतुर्थीसमर्थ) अज एवं अवि प्रातिपदिकों से (हित अर्थ में थ्यन् प्रत्यय होता है)।

अजि...— VII. iii. 60
देखें — अजिव्रज्योः VII. iii. 60

...अजिनम् — VI. ii. 194
देखें — द्व्यजजिन० VI. ii. 194

...अजिनयोः — VI. ii. 165
देखें — मित्राजिनयोः VI. ii. 165

अजिनान्तस्य — V. iii. 82
अजिन शब्द अन्त में है जिसके, ऐसे (मनुष्यनामधेय प्रातिपदिक से अनुकम्पा गम्यमान होने पर कन् प्रत्यय होता है और) उस अजिनान्त शब्द के (उत्तरपद का लोप भी हो जाता है)।

अजिव्रज्योः — VII. iii. 60
अज तथा व्रज धातुओं के (जकार को भी कवर्गादेश नहीं होता)।

अजेः — II. iv. 56
अज् धातु के स्थान में (वी आदेश होता है, घञ् और अप् वर्जित आर्धधातुक परे रहते)।

अज्झनगमाम् — VI. iv. 16
अजन्त अङ्ग तथा हन् एवं गम् अङ्ग को (झलादि सन् परे रहने पर दीर्घ होता है)।

अज्झनग्रहदृशाम् — VI. iv. 62
(भाव तथा कर्म-विषयक स्य, सिच् , सीयुट् , और तास् के परे रहते उपदेश में) अजन्त धातुओं तथा हन् , ग्रह एवं दृश् धातुओं को (चिण् के समान विकल्प से कार्य होता है तथा इट् आगम भी होता है)।

अज्झलौ — I. i. 10
(स्थान और प्रयत्न तुल्य होने पर भी) अच् और हल् (की परस्पर सवर्ण संज्ञा नहीं होती)।

अज्ञाति... I. i. 34
देखें — अज्ञातिधनाख्यायाम् I. i. 34

अज्ञातिधनाख्यायाम् — I. i. 34
(स्व शब्द की जस् सम्बन्धी कार्य में विकल्प से सर्वनाम संज्ञा होती है), ज्ञाति = स्वजन तथा धन के कथन को छोड़कर ।

अज्ञाते — V. iii. 73
'न जाना हुआ' अर्थ में (वर्तमान प्रातिपदिक से तथा तिङन्त से स्वार्थ में यथाविहित प्रत्यय होते हैं)।

अज्वरेः — II. iii. 54
(धात्वर्थ को कहने वाले घञादि प्रत्ययान्तकर्तृक रुजादि धातुओं के कर्म में शेष विवक्षित होने पर षष्ठी विभक्ति होती है), ज्वर धातु को छोड़कर ।

अञ्... — I. ii. 1
देखें — अञ्णित् I. ii. 1

...अञ्... — IV. i. 15
देखें — टिड्ढाणञ्० IV. i. 15

अञ् — IV. i. 86
(उत्सादि समर्थ प्रातिपदिकों से प्राग्दीव्यतीय अर्थों में) अञ् प्रत्यय होता है ।

अञ् — IV. i. 104
(षष्ठीसमर्थ बिदादि प्रातिपदिकों से गोत्रापत्य में) अञ् प्रत्यय होता है, (परन्तु इनमें जो अनृषिवाची हैं, उनसे अनन्तरापत्य में अञ् होता है) ।

अञ्... — IV. i. 141
देखें — अञ्खञौ IV. i. 141

अञ्... — IV. i. 161
देखें — अञ्यतौ IV. i. 161

अञ् — IV. i. 166
(जनपद को कहने वाले क्षत्रियाभिधायक प्रातिपदिक से अपत्य अर्थ में) अञ् प्रत्यय होता है ।

अञ् — IV. ii. 11
(तृतीयासमर्थ द्वैप तथा वैयाघ्र प्रातिपदिकों से 'ढका हुआ रथ', इस अर्थ में) अञ् प्रत्यय होता है ।

अञ् — IV. ii. 43
(षष्ठीसमर्थ अनुदात्त आदि वाले शब्दों से समूहार्थ में) अञ् प्रत्यय होता है ।

अञ् — IV. ii. 70
(प्रथमा, तृतीया तथा षष्ठीसमर्थ उवर्णान्त प्रातिपदिकों से चारों — उस नाम का देश, उससे बोला गया, उसका निवास तथा उससे निकट अर्थों में) अञ् प्रत्यय होता है ।

अञ्... — IV. ii. 105
देखें — अञ्ञौ IV. ii. 105

अञ् — IV. ii. 107
(दिशा पूर्वपद वाले प्रातिपदिक से शैषिक) अञ् प्रत्यय होता है ।

अञ्... — IV. iii. 7
देखें — **अठ्ञौ IV. iii. 7**

अञ् — IV. iii. 118
(तृतीयासमर्थ क्षुद्रा, भ्रमर, वटर व पादप प्रातिपदिकों से 'कृते' अर्थ में संज्ञाविषय गम्यमान होने पर) अञ् प्रत्यय होता है।

अञ् — IV. iii. 121
(पत्र पूर्व वाले षष्ठीसमर्थ रथ शब्द से 'इदम्' अर्थ में) अञ् प्रत्यय होता है ।

अञ्... — IV. iii. 126
देखें — **अञ्यञिञाम् IV. iii. 126**

अञ् — IV. iii. 136
(षष्ठीसमर्थ उवर्णान्त प्रातिपदिक से विकार और अवयव अर्थों में) अञ् प्रत्यय होता है।

अञ् — IV. iii. 151
(षष्ठीसमर्थ प्राणिवाची तथा रजतादिगण में पढ़े प्रातिपदिकों से विकार और अवयव अर्थों में)अञ् प्रत्यय होता है ।

अञ् — IV. iv. 49
(षष्ठीसमर्थ ऋकारान्त प्रातिपदिक से न्याय्य व्यवहार अर्थ में) अञ् प्रत्यय होता है।

अञ् — V. i. 15
(चतुर्थीसमर्थ चर्म के विकृतिवाची प्रातिपदिक से 'विकृति के लिए प्रकृति' अभिधेय होने पर "हित" अर्थ में) अञ् प्रत्यय होता है।

अञ् — V. i. 26
(शूर्प प्रातिपदिक से 'तदर्हति' पर्यन्त कथित अर्थों में) अञ् प्रत्यय होता है।

अञ् — V. i. 60
(परिमाण समानाधिकरण वाले प्रथमासमर्थ सप्तन् प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में) अञ् प्रत्यय होता है;(वेद विषय में, वर्ग अभिधेय होने पर)।

अञ् — V. i. 128
(षष्ठीसमर्थ जीवधारी, जातिवाची, अवस्थावाची तथा उद्गात्रादि प्रातिपदिकों से भाव और कर्म अर्थों में) अञ् प्रत्यय होता है।

अञ् — V. ii. 83
(प्रथमासमर्थ कुल्माष प्रातिपदिक से सप्तम्यर्थ में) अञ् प्रत्यय होता है,(यदि वह प्रथमासमर्थ प्रायः करके सञ्ज्ञाविषय में अन्नविषयक हो तो)।

अञ् — V. iv. 14
(णच्प्रत्ययान्त प्रातिपदिक से स्वार्थ में) अञ् प्रत्यय होता है, (स्त्रीलिंग में) ।

...अञः — IV. i. 73.
देखें — **शार्ङ्गरवाद्यञः IV. i. 73**

अञः — IV. i. 100
अञन्त (हरितादि) प्रातिपदिकों से (अपत्य अर्थ में फक् प्रत्यय होता है)।

...अञोः — II. iv. 64
देखें — **यञञोः II. iv. 64**

...अञौ — IV. iii. 33
देखें — **अणञौ IV. iii. 33**

...अञौ — IV. iii. 93
देखें — **अणञौ IV. iii. 93**

...अञौ — IV. iii. 165
देखें — **यञञौ IV. iii. 165**

...अञौ — V. i. 41
देखें — **अणञौ V. i. 41**

...अञौ — V. iii. 117
देखें — **अणञौ V. iii. 117**

अञ्खञौ — IV. i. 141
(महाकुल प्रातिपदिक से) अञ् और खञ् प्रत्यय (विकल्प से) होते हैं, (पक्ष में ख)।

अञ्चः —VIII. ii. 48
अञ्चु धातु से उत्तर (निष्ठा के तकार को नकारादेश होता है, यदि अञ्चु के विषय में अपादान कारक का प्रयोग न हो रहा हो तो)

अञ्चतौ — VI. ii. 52
(इक् अन्त में है जिसके, ऐसे गतिसञ्ज्ञक को वप्रत्ययान्त) अञ्चु धातु के परे रहते (प्रकृतिस्वर होता है)।

अञ्चतौ — VI. iii. 91
(विष्वग् तथा देव शब्दों को तथा सर्वनाम शब्दों के टिभाग को अद्रि आदेश होता है, वप्रत्ययान्त) अञ्चु धातु के परे रहते ।

...अञ्चवः —II. i. 11
देखें — **अपपरिबहिरञ्चवः II. i. 11**

...अञ्चु... — III. ii. 59
देखें — **ऋत्विग्दधृक्० III. ii. 59**

...अङ्क्षूत्तरपद... — II. iii. 29
देखें — अन्यारादिरते० II. iii. 29

अञ्चेः — V. iii. 30
(दिशा, देश और काल अर्थों में वर्त्तमान सप्तम्यन्त, पञ्चम्यन्त तथा प्रथमान्त) अञ्चु धातु अन्त वाले (दिशावाची) प्रातिपदिकों से उत्पन्न (अस्ताति प्रत्यय का लुक् होता है)।

अञ्चेः — V. iv. 8
(दिशावाचक स्त्रीलिङ्ग न हो तो) अञ्चति उत्तरपद वाले प्रातिपदिक से (स्वार्थ में विकल्प से ख प्रत्यय होता है)।

अञ्चेः — VI. i. 164
अञ्चु धातु से उत्तर (वेदविषय में सर्वनामस्थानभिन्न विभक्ति उदात्त होती है)।

अञ्चेः — VI. iv. 30
(पूजा अर्थ में) अञ्चु अङ्ग की (उपधा के नकार का लोप नहीं होता है)।

अञ्चेः — VII. ii. 53
अञ्चु धातु से उत्तर (पूजा अर्थ में क्त्वा प्रत्यय तथा निष्ठा को इट् आगम होता है)।

अञ्जलेः —V. iv. 102
(द्वि तथा त्रि शब्दों से उत्तर) जो अञ्जलि शब्द, तदन्त (तत्पुरुष) से (समासान्त टच् प्रत्यय होता है)।

...अंञ्जस् — VI. ii. 187
देखें— स्फिगपूत० VI. ii. 187

...अञ्जू... — II. ii. 74
देखें — स्मिपूङ्० VII. ii. 74

अञ्जेः — VII. ii. 71
अञ्जू धातु से उत्तर (सिच् को इट् का आगम होता है)।

अञ्ञौ — IV. ii. 105
(तीर तथा रूप्य उत्तरपद वाले प्रातिपदिकों से यथा-सङ्ख्य करके शैषिक) अञ् तथा यञ् प्रत्यय होते हैं।

अञ्ठञौ — IV. iii. 7
(ग्राम के अवयववाची तथा जनपद के अवयववाची दिशा पूर्वपदवाले अर्धान्त प्रातिपदिक से शैषिक) अञ् तथा ठञ् प्रत्यय होते हैं।

अञ्णित् — I. ii. 1
(गाङ् तथा कुटादिगणस्थ धातुओं से परे) ञित् तथा णित् भिन्न प्रत्यय (ङिद्वत् होते हैं)।

अञ्यञिञाम् — IV. iii. 126
(सङ्घ, अङ्क तथा लक्षण अभिधेय हो तो गोत्रप्रत्ययान्त) अञन्त, यञन्त तथा इञन्त षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिकों से (इदम् अर्थ में अण् प्रत्यय होता है)।

अञ्यतौ — IV. i. 161
(मनु शब्द से जाति को कहना हो तो) अञ् तथा यत् प्रत्यय होते हैं, (तथा मनु शब्द को षुक् आगम भी हो जाता है)।

अट्.... III. iv. 94
देखें — अडाटौ III. iv. 94

अट् — VI. iv. 71
(लुङ्, लङ् तथा लृङ् के परे रहते अङ्ग को) अट् का आगम होता है (और वह अट् उदात्त भी होता है)।

अट् — VII. iii. 99
(रुदादि पांच अङ्गों से उत्तर हलादि अपृक्त सार्वधातुक को) अट् आगम होता है, (गार्ग्य तथा गालव आचार्यों के मत में)।

अट्... — VIII. iv. 2
देखें — अट्कुप्वाङ्० VIII. iv. 2

अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवाये — VIII. iv. 2
(रेफ तथा षकार से उत्तर) अट्, कवर्ग, पवर्ग, आङ् तथा नुम् का व्यवधान होने पर (भी नकार को णकार हो जाता है)।

अटि — VIII. iii. 3
अट् परे रहते (रु से पूर्व आकार को नित्य अनुनासिक आदेश होता है)।

अटि — VIII. iii. 9
(दीर्घ से उत्तर नकारान्त पद को) अट् परे रहते (पादबद्ध मन्त्रों में रु होता है, यदि निमित्त और निमित्ती दोनों एक ही पाद में हों)।

अटि — VIII. iv. 61
(झय् प्रत्याहार से उत्तर शकार के स्थान में) अट् परे रहते (विकल्प से छकार आदेश होता है)।

अठच् —V. ii. 35
(सप्तमीसमर्थ कर्मन् प्रातिपदिक से 'चेष्टा करने वाला' अर्थ में) अठच् प्रत्यय होता है।

अडच्... — V. iii. 80
देखें — अडज्वुचौ V. iii. 80

अडज्वुचौ — V. iii. 80
(उप शब्द आदि वाले बह्वच् मनुष्यनामधेय प्रातिपदिक से नीति और अनुकम्पा गम्यमान होने पर) अडच् एवं वुच् (तथा घन्, इलच् और ठच्) प्रत्यय (विकल्प से) होते हैं, (प्राग्देशीय आचार्यों के मत में)।

अडाटौ — III. iv. 94
(लेट् लकार को पर्याय से) अट् ,आट् आगम होते हैं।

अड्व्यवाये — VIII. iii. 63
(सित शब्द से पहले पहले) अट् का व्यवधान होने पर (तथा अपि ग्रहण से अट् का व्यवधान न होने पर भी सकार को मूर्धन्य आदेश होता है)।

अड्व्यवाये — VIII. iii. 71
(परि, नि तथा वि उपसर्ग से उत्तर सिवादि धातुओं के सकार को) अट् के व्यवधान होने पर (भी विकल्प से मूर्धन्य आदेश होता है)।

अड्व्यवाये — VIII. iii. 119
(नि, वि तथा अभि उपसर्गों से उत्तर सकार को)अट् का व्यवधान होने पर (वेद-विषय में विकल्प करके मूर्धन्य आदेश नहीं होता)।

अण् — I. i. 50
(ऋवर्ण के स्थान में) अण् =अ, इ, उ में से कोई अक्षर (होते ही रपर हो जाता है)।

अण् ... — I. i. 68
देखें — अणुदित् I. i. 68

अण्... — II. iv. 58
देखें — अणिञोः II. iv. 58

अण् — III. ii. 1
(कर्म उपपद रहते धातुमात्र से) अण् प्रत्यय होता है।

अण् — III. iii. 12
(क्रियार्थ क्रिया और कर्म उपपद रहते हुए धातु से भविष्यत्काल में) अण् प्रत्यय होता है।

...अण्... — IV. i. 15
देखें — टिड्ढाणञ्द्वयसज्० IV. i. 15

अण्... — IV. i. 78
देखें — अणिञोः IV. i. 78

अण् — IV. i. 83
('तेन दीव्यति' IV. iv. 2 से पहले पहले) अण् प्रत्यय का अधिकार है।

अण् — IV. i. 112
(शिवादि प्रातिपदिकों से 'तस्यापत्यम्' अर्थ में) अण् प्रत्यय होता है।

अण् — IV. i. 168
(क्षत्रियाभिधायी जनपदवाची दो अच् वाले शब्दों से तथा मगध, कलिंग और सूरमस प्रातिपदिकों से अपत्य अर्थ में) अण् प्रत्यय होता है।

अण् — IV. ii. 37
(षष्ठीसमर्थ भिक्षादि प्रातिपदिकों से समूह अर्थ में) अण् प्रत्यय होता है।

अण् — IV. ii. 76
(सुवास्तु आदि प्रातिपदिकों से चातुरर्थिक - IV. ii. 70 पर निर्दिष्ट) अण् प्रत्यय होता है।

अण् — IV. ii. 99
(रङ्कु शब्द से मनुष्य अभिधेय न हो तो) अण् (और फक्) प्रत्यय (होते हैं)।

अण् — IV. ii. 109
(प्रस्थ शब्द उत्तरपद वाले शब्दों से, पलद्यादि गण के शब्दों से तथा ककार उपधावाले शब्दों से शैषिक) अण् प्रत्यय होता है।

अण् — IV. ii. 131
(देशवाची ककार उपधावाले प्रातिपदिक से शैषिक) अण् प्रत्यय होता है।

अण् — IV. iii. 16.
(सन्धिवेलादिगणपठित शब्दों से तथा ऋतुवाची एवं नक्षत्रवाची शब्दों से) अण् प्रत्यय होता है।

अण् — IV. iii. 22.
(हेमन्त प्रातिपदिक से वैदिक तथा लौकिक प्रयोग में) अण् (तथा ठञ्) प्रत्यय (होते हैं, तथा उस अण् के परे रहने पर हेमन्त शब्द के नकार का लोप भी होता है)।

अण् — IV. iii. 57
(सप्तमीसमर्थ ग्रीवा प्रातिपदिक से भव अर्थ में) अण् और ठञ्) प्रत्यय होते हैं।

अण् — IV. iii. 73
(षष्ठ्यर्थ और सप्तम्यर्थ व्याख्यातव्यनाम जो ऋगयनादि प्रातिपदिक, उनसे भव और व्याख्यान अर्थों में) अण् प्रत्यय होता है।

अण् — IV. iii. 76
(पञ्चमीसमर्थ शुण्डिकादि प्रातिपदिकों से 'आया हुआ' अर्थ में) अण् प्रत्यय होता है।

अण्... IV. iii. 93
देखें — अणञौ IV. iii. 93

अण् — IV. iii. 108
(तृतीयासमर्थ कलापिन् प्रातिपदिक से छन्दविषय में प्रोक्त अर्थ को कहना हो तो) अण् प्रत्यय होता है।

अण् — IV. iii. 126
(संघ, अंक तथा लक्षण अभिधेय हो तो गोत्रप्रत्ययान्त अञन्त, यञन्त तथा इञन्त षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिकों से 'इदम्' अर्थ में) अण् प्रत्यय होता है।

अण् – IV. iii. 133
(षष्ठीसमर्थ बिल्वादि प्रातिपदिकों से विकार और अवयव अर्थों में) अण् प्रत्यय होता है।

अण् – IV. iii. 149
(षष्ठीसमर्थ तसिलादि प्रातिपदिकों से विकार और अवयव अर्थों में) अण् प्रत्यय होता है।

अण् – IV. iii. 161
(षष्ठीसमर्थ प्लक्षादि प्रातिपदिकों से फल के विकार और अवयव की विवक्षा होने पर) अण् प्रत्यय होता है।

अण् – IV. iv. 4
(तृतीयासमर्थ कुलत्थ तथा ककार उपधावाले प्रातिपदिकों से 'संस्कृतम्' अर्थ में) अण् प्रत्यय होता है।

अण् – IV. iv. 18
(तृतीयासमर्थ कुटिलिका प्रातिपदिक से 'हरति' अर्थ में) अण् प्रत्यय होता है।

अण्– IV. iv. 25
(तृतीयासमर्थ मुद्ग प्रातिपदिक से मिला हुआ अर्थ में) अण् प्रत्यय होता है।

अण् – IV. iv. 48
(षष्ठीसमर्थ महिषी आदि प्रातिपदिकों से न्याय्य व्यवहार अर्थ में) अण् प्रत्यय होता है।

अण् – IV. iv. 56
(शिल्पवाची प्रथमासमर्थ मड्डुक तथा झर्झर प्रातिपदिकों से विकल्प से षष्ठ्यर्थ में) अण् प्रत्यय होता है।

अण् – IV. iv. 68
(प्रथमासमर्थ भक्त प्रातिपदिक से 'इसको नियतरूप से दिया जाता है',इस अर्थ में विकल्प से) अण् प्रत्यय होता है।

अण् – IV. iv. 80
(द्वितीयासमर्थ शकट प्रातिपदिक से 'ढोता है' अर्थ में) अण् प्रत्यय होता है।

अण् – IV. iv. 94
(तृतीयासमर्थ उरस् प्रातिपदिक से 'बनाया हुआ' अर्थ में) अण् (और यत्) प्रत्यय (होते हैं)।

अण् – IV. iv. 112
(सप्तमीसमर्थ वेशन्त और हिमवत् प्रातिपदिकों से भव अर्थ में) अण् प्रत्यय होता है,(वेद-विषय में)।

अण् – IV. iv. 124
(षष्ठीसमर्थ असुर शब्द से वेद-विषय में 'असुर की अपनी माया' अभिधेय होने पर) अण् प्रत्यय होता है।

अण् – IV. iv. 126
(उपधान मन्त्र समानाधिकरण वाले मतुबन्त अश्विमान् प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में इष्टका अभिधेय हो तो) अण् प्रत्यय होता है,(तथा मतुप् का लुक् होता है, वेद-विषय में)।

अण् – V. i. 27
(शतमान, विंशतिक, सहस्र तथा वसन प्रातिपदिकों से 'तदर्हति' पर्यन्त कथित अर्थों में) अण् प्रत्यय होता है।

अण्...– V. i. 41
देखें – अणञौ V. i. 41

अण् – V. i. 96
(सप्तमीसमर्थ व्युष्टादि प्रातिपदिकों से 'दिया जाता है' और 'कार्य' अर्थों में) अण् प्रत्यय होता है।

अण् – V. i. 104
(प्रथमासमर्थ ऋतु प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में) अण् प्रत्यय होता है, (यदि वह प्रथमासमर्थ ऋतु प्रातिपदिक प्राप्त समानाधिकरण वाला हो तो)।

अण् – V. i. 109
(प्रयोजन समानाधिकरणवाची प्रथमासमर्थ विशाखा तथा आषाढ प्रातिपदिकों से यथासङ्ख्य करके मन्थ तथा दण्ड अभिधेय होने पर षष्ठ्यर्थ में) अण् प्रत्यय होता है।

अण् – V. i. 129
(षष्ठीसमर्थ हायन शब्द अन्तवाले तथा युवादि प्रातिपदिकों से भाव और कर्म अर्थों में) अण् प्रत्यय होता है।

अण् – V. ii. 38
(प्रथमासमर्थ प्रमाण-समानाधिकरणवाची पुरुष तथा हस्तिन् प्रातिपदिकों से षष्ठ्यर्थ में) अण् (तथा द्वयसच्, दघ्नच् और मात्रच्) प्रत्यय (होते हैं)।

अण् – V. ii. 61
(विमुक्तादि प्रातिपदिकों से 'अध्याय' और 'अनुवाक' अभिधेय हों तो मत्वर्थ में) अण् प्रत्यय होता है।

अण् – V. ii. 103
(तपस् तथा सहस्र प्रातिपदिकों से मत्वर्थ में) अण् प्रत्यय होता है।

अण् – V. iii. 109
(शर्करादि प्रातिपदिकों से इवार्थ में) अण् प्रत्यय होता है।

अण्... – V. iii. 117
देखें – अणञौ V. iii. 117

अण् — V. iv. 15
(इनुण्-प्रत्ययान्त प्रातिपदिक से स्वार्थ में) अण् प्रत्यय होता है।

अण् — V. iv. 36
(उस प्रकाशित वाणी से युक्त कर्मन् प्रातिपदिक से स्वार्थ में) अण् प्रत्यय होता है।

...अण् ...— VI. iii. 49
देखें — लेखयदण्० VI. iii. 49

अणः — IV. i. 156
अणन्त (दो अच् वाले) प्रातिपदिकों से (अपत्यार्थ में फिञ् प्रत्यय होता है)।

...अणः — V. iii. 118
(अभिजित्, विदभृत्, शालावत्, शिखावत्, शमीवत्, ऊर्णावत्, श्रुमत् सम्बन्धी) अणन्त शब्द से (स्वार्थ में यञ् प्रत्यय होता है)।

अणः — VI. iii. 110
(ढकार तथा रेफ का लोप हुआ है जिसके कारण, उसके परे रहते पूर्व के) अण् को (दीर्घ होता है)।

अणः — VII. iv. 13
(क प्रत्यय परे रहते) अण् = अ, इ, उ को (ह्रस्व होता है)।

अणः — VIII. iv. 56
(अवसान में वर्तमान प्रगृह्यसञ्ज्ञक से भिन्न) अण् को (विकल्प से अनुनासिक आदेश होता है)।

...अणके — II. i. 53
देखें — पापाणके II. i. 53

अणञौ — IV. iii. 93
(प्रथमासमर्थ सिन्ध्वादि तथा तक्षशिलादिगणपठित शब्दों से यथासंख्य करके) अण् तथा अञ् प्रत्यय होते हैं, ('इसका अभिजन' कहना हो तो)।

अणञौ — V. i. 40
(षष्ठीसमर्थ सर्वभूमि तथा पृथिवी प्रातिपदिकों से कारण अर्थ में यथासङ्ख्य करके) अण् तथा अञ् प्रत्यय होते हैं, (यदि वह कारण संयोग वा उत्पात हो तो)।

अणञौ — V. iii. 117
(शस्त्रों से जीविका कमाने वाले पुरुषों के समूहवाची पार्श्वादि तथा यौधेयादि-गणपठित प्रातिपदिकों से स्वार्थ में यथासंख्य करके) अण् तथा अञ् प्रत्यय होते हैं।

अणि — I. iv. 52
(गत्यर्थक, बुद्ध्यर्थक, भोजनार्थक तथा शब्द कर्म वाली और अकर्मक धातुओं का) अण्यन्तावस्था में (जो कर्त्ता, वह ण्यन्तावस्था में कर्मसंज्ञक होता है)।

अणि — IV. iii. 2
(उस खञ् तथा) अण् प्रत्यय के परे रहते (युष्मद्, अस्मद् के स्थान पर यथासङ्ख्य युष्माक, अस्माक आदेश होते हैं)।

अणि — VI. ii. 75
अणन्त शब्द उत्तरपद रहते (नियुक्तवाची समास में पूर्वपद को आद्युदात्त होता है)।

अणि — VI. iv. 133
(षकार पूर्व में है जिसके, ऐसा जो अन्, त[illegible] तथा हन् एवं धृतराजन् भसञ्ज्ञक अङ्ग के अन् के अकार का लोप होता है), अण् परे रहते।

अणि — VI. iv. 164
(अपत्य अर्थ से भिन्न अंर्थ में वर्तमान) अण् प्रत्यय के परे रहते (भसञ्ज्ञक इन्नन्त अङ्ग को प्रकृतिभाव हो जाता है)।

अणिञोः — II. iv. 58
(ण्यन्त गोत्रप्रत्ययान्त, क्षत्रियवाची गोत्रप्रत्ययान्त, ऋषि-वाची गोत्रप्रत्ययान्त तथा ञित् गोत्रप्रत्ययान्त शब्द से युवापत्य में विहित) अण् और इञ् प्रत्ययों का (लुक् होता है)।

अणिञोः — IV. i. 78
(गोत्र में विहित ऋष्यपत्य से भिन्न) अण् और इञ् प्रत्ययान्त (उपोत्तमगुरु वाले) प्रातिपदिकों को (स्त्रीलिङ्ग में ष्यङ् आदेश होता है)।

अणुदित् — I. i. 68
अण् प्रत्याहार= अ, इ, उ, ऋ, लृ, ए, ओ, ऐ, औ, ह, य, व र ल तथा उदित् =उकार इत्संज्ञक वर्ण (अपने स्वरूप तथा अपने सवर्ण का भी ग्रहण कराने वाले होते हैं, प्रत्यय को छोड़कर)।

...अणुभ्यः — V. ii. 4
देखें — तिलमाषो० V. ii. 4

अणौ — I. iii. 67
अण्यन्तावस्था में (जो कर्म, वह यदि ण्यन्तावस्था में कर्ता बन रहा हो तो, ऐसी ण्यन्त धातु से आत्मनेपद होता है, आध्यान= उत्कण्ठापूर्वक स्मरण अर्थ को छोड़कर)।

अणौ — I. iii. 88
अण्यन्तावस्था में (अकर्मक तथा चेतन कर्ता वाले धातु से ण्यन्तावस्था में परस्मैपद होता है)।

....अणौ — IV. ii. 28
देखें — अणौ IV. ii. 28

....अणौ — IV. iii. 71
देखें — यदणौ IV. iii. 71

... अण्डात् — V. ii. 111
देखें — काण्डाण्डात् V. ii. 111

अण्यदर्थे — VI. IV. 60
ण्यत् के अर्थ से भिन्न अर्थ में वर्तमान (निष्ठा के परे रहते क्षि अङ्ग को दीर्घ हो जाता है)।

अत्...— I. i. 2
देखें — अदेङ् I. i. 2

अत् — III. iv. 106
[लिङादेश (उत्तमपुरुष एकवचन) 'इट्' के स्थान में] 'अत्' आदेश होता है।

अत् — V. iii. 12
(सप्तम्यन्त किम् प्रातिपदिक से) अत् प्रत्यय होता है।

अत् — VII. i. 31
(युष्मद्, अस्मद् अङ्ग से उत्तर पञ्चमी विभक्ति के भ्यस् के स्थान में) अत् आदेश होता है ।

अत् — VII. i. 85
(पथिन्, मथिन् तथा ऋभुक्षिन् अङ्गों के इकार के स्थान में) अकारादेश होता है, (सर्वनामस्थान परे रहते)।

अत् — VII. i. 86
(अभ्यस्त अङ्ग से उत्तर प्रत्यय के अवयव झकार के स्थान में) अत् आदेश हो जाता है।

अत् — VII. ii. 118
(इकारान्त उकारान्त अङ्ग से उत्तर ङि को औकारादेश होता है तथा घिसञ्ज्ञक को) अकारादेश (भी) होता है।

अत् — VII. iv. 66
(ऋवर्णान्त अभ्यास को) अकारादेश होता है।

अत् — VII. iv. 95
(स्मृ, दृ, त्वरा, प्रथ, म्रद, स्तृञ्, स्पश – इन अङ्गों के अभ्यास को चङ्परक णि परे रहते) अकारादेश होता है।

अतः — II. iv. 83
अदन्त (अव्ययीभाव) से उत्तर (सुप् प्रत्यय का लुक् नहीं होता, अपितु पञ्चमी से भिन्न सुप् प्रत्यय के स्थान में अम् आदेश होता है)।

...अतः — IV. i. 4
देखें — अजाद्यतः IV. I. 4

अतः — IV. i. 95
(षष्ठीसमर्थ) अकारान्त प्रातिपदिक से (अपत्य मात्र को कहने में इञ् प्रत्यय होता है)।

अतः — IV. i. 175
(स्त्रीलिङ्ग अभिधेय हो तो तद्राजसंज्ञक) अकार प्रत्यय का (भी लुक् हो जाता है)।

अतः — V. ii. 115
अकारान्त प्रातिपदिकों से (मत्वर्थ में इनि और ठन् प्रत्यय होते हैं)।

अतः — VI. i. 94
(अपदान्त) अकार से उत्तर (गुणसञ्ज्ञक अ, ए , ओ के परे रहते पूर्व पर के स्थान में पररूप एकादेश होता है, संहिता के विषय में)।

अतः — VI. i. 98
(अव्यक्त के अनुकरण का) जो अत् शब्द, उससे उत्तर (इति शब्द परे रहते पूर्व पर के स्थान में पररूप एकादेश होता है, संहिता के विषय में)

अतः — VI. i. 109
(अप्लुत) अकार से उत्तर (अप्लुत अकार परे रहते रु के रेफ को उकार आदेश होता है, संहिता के विषय में)।

अतः — VI. iii. 134
(दो अच् वाले तिङन्त के) अकार को (ऋचा विषय में दीर्घ होता है, संहिता में)।

अतः — VI. iv. 48
अकारान्त अङ्ग का (आर्धधातुक परे रहते लोप हो जाता है)।

अतः — VI. iv. 105
अकारान्त अङ्ग से उत्तर (हि का लुक् हो जाता है)।

अतः — VI. iv. 110
(उकारप्रत्ययान्त कृ अङ्ग के) अकार के स्थान में (उकारादेश हो जाता है, कित् या ङित् सार्वधातुक परे रहते)।

अतः — VI. iv. 120

(लिट् परे रहते अङ्ग के असहाय हलों के बीच में वर्तमान) जो अकार, उसको (एकारादेश तथा अभ्यास का लोप हो जाता है; कित्, ङित् लिट् परे रहते)।

अतः — VII. i. 9

अकारान्त अङ्ग से उत्तर (भिस् के स्थान में ऐस् आदेश होता है)।

अतः — VII. i. 24

अकारान्त (नपुंसक लिङ्ग वाले) अङ्ग से उत्तर (सु और अम् के स्थान में अम् आदेश होता है)।

अतः — VII. ii. 2

(अकार के समीप वाले रेफान्त तथा लकारान्त अङ्ग के) अकार के स्थान में (ही वृद्धि होती है, परस्मैपदपरक सिच् परे हो तो)।

अतः — VII. ii. 7

(हलादि अङ्ग के लघु) अकार को (परस्मैपदपरक इडादि सिच् परे रहते विकल्प से वृद्धि नहीं होती)।

अतः — VII. ii. 80

अकारान्त अङ्ग से उत्तर (सार्वधातुक या के स्थान में इय् आदेश होता है)।

अतः — VII. ii. 116

(अङ्ग की उपधा के) अकार के स्थान में (वृद्धि होती है, ञित् या णित् प्रत्यय परे रहते)।

अतः — VII. iii. 27

(अर्ध शब्द से परे परिमाणवाची शब्द के अचों में आदि) अकार को (वृद्धि नहीं होती, पूर्वपद को तो विकल्प से होती है; ञित्, णित् तथा कित् तद्धित परे रहते)।

अतः — VII. iii. 44

(प्रत्यय में स्थित ककार से पूर्व के) अकार के स्थान में (इकारादेश होता है, आप् परे रहते, यदि वह आप् सुप् से उत्तर न हो तो)।

अतः — VII. iii. 101

अकारान्त अङ्ग को (दीर्घ होता है, यञादि सार्वधातुक प्रत्यय के परे रहते)।

अतः — VII. iv. 70

(अभ्यास के आदि) अकार को (लिट् परे रहते दीर्घ होता है)।

अतः — VII. iv. 79

(सन् परे रहते) अकारान्त (अभ्यास) को (इत्व होता है)।

अतः — VII. iv. 85

(अनुनासिकान्त अङ्ग के) अकारान्त (अभ्यास) को (नुक् आगम होता है, यङ् तथा यङ्लुक् परे रहते)।

अतः — VII. iv. 88

(चर तथा फल धातुओं के अभ्यास से परे) अकार के स्थान में (उकारादेश होता है, यङ् तथा यङ्लुक् परे रहते)।

अतः — VIII. iii. 46

अकार से उत्तर (समास में जो अनुत्तरपदस्थ अनव्यय का विसर्जनीय, उसको नित्य ही सकारादेश होता है; कृ, कमि, कंस, कुम्भ, पात्र, कुशा तथा कर्णी शब्दों के परे रहते)।

अतदर्थे — VI. ii. 156

(गुणप्रतिषेध अर्थ में जो नञ्, उससे उत्तर) अतदर्थ = 'उसके लिये यह' इस अर्थ में विहित जो न हों, ऐसे (जो य तथा यत् तद्धित प्रत्यय, तदन्त उत्तरपद को भी अन्त उदात्त होता है)।

अतदर्थे —VI. iii. 52

अतदर्थ = 'उसके लिये यह' इस अर्थ में विहित जो न हो, ऐसे (यत् प्रत्यय) के परे रहते (पाद शब्द को पद् आदेश होता है)।

अतद्धितलुकि — V. iv. 92

(गो शब्द अन्त वाले तत्पुरुष समास से समासान्त टच् प्रत्यय होता है, यदि वह तत्पुरुष) तद्धितलुक्-विषयक न हो, अर्थात् तद्धितप्रत्यय का लुक् न हुआ हो तो ।

अतद्धिते — I. ii. 8

(उपदेश में) तद्धितवर्जित प्रत्यय (के आदि) में वर्तमान (लकार, शकार और कवर्ग की इतसञ्ज्ञा होती है)।

अतद्धिते —VI. iv. 133

(भसञ्ज्ञक श्वन्, युवन्, मघवन् अङ्गों को) तद्धितभिन्न प्रत्ययों के परे रहते (सम्प्रसारण होता है)।

अतरुणेषु —I. ii. 73

तरुणों से रहित (ग्रामीण पशुओं के समूह) में (स्त्री शब्द शेष रह जाता है, पुमान् शब्द हट जाते हैं)।

अतसर्थप्रत्ययेन — II. iii. 30

अतसुच् के अर्थ में विहित प्रत्ययों से बने शब्दों के योग में (षष्ठी विभक्ति होती है)।

अतसुच् — V. iii. 28

(दिशा, देश तथा काल अर्थों में वर्त्तमान सप्तम्यन्त, पञ्चम्यन्त तथा प्रथमान्त दिशावाची दक्षिण तथा उत्तर प्रातिपदिकों से स्वार्थ में) अतसुच् प्रत्यय होता है।

अति... — V. i. 22
देखें — अतिशदन्तायाः V. i. 22

अति — VI. i. 105
(पदान्त एङ् प्रत्याहार से उत्तर) अकार परे रहते (पूर्व पर के स्थान में पूर्वरूप एकादेश होता है, संहिता के विषय में)।

अति — VII. ii. 105
अत् विभक्ति के परे रहते (किम् अङ्ग को क्व आदेश होता है)।

अतिः — I. iv. 94
अति शब्द (कर्मप्रवचनीय और निपात संज्ञक होता है, उल्लंघन और पूजा अर्थ में)।

अतिक्रमणे — I. iv. 94
अतिक्रमण = उल्लङ्घन (और पूजा) अर्थ में (अति शब्द की कर्मप्रवचनीय और निपात संज्ञा होती है)।

अतिग्रह...— V. iv. 46
देखें — अतिग्रहाव्यथन० V. iv. 46

अतिग्रहाव्यथनक्षेपेषु — V. iv. 46
अतिग्रह = अन्यों को चरित्रादि के द्वारा अतिक्रमण करके गृहीत होना, अव्यथन = चलायमान या दुःखी न होना तथा क्षेप = निन्दा— इन विषयों में वर्त्तमान (जो तृतीया विभक्ति, तदन्त शब्द से तसि प्रत्यय होता है)।

अतिङ् — II. ii. 19
तिङ् से भिन्न (उपपद का समर्थ शब्दान्तर के साथ नित्य समास होता है और वह तत्पुरुषसंज्ञक समास होता है)।

अतिङ् — III. i. 93
(धातु के अधिकार में विहित) तिङ्-भिन्न प्रत्ययों की ('कृत्' संज्ञा होती है)।

अतिङः — VIII. i. 28
अतिङ् पद से उत्तर (तिङ्पद को अनुदात्त होता है)।

...अतिचर... — III. ii. 142
देखें — सम्पृचानुरुधा० III. ii. 142

...अतिथि...— IV. iv. 104
देखें — पथ्यतिथिवसति० IV. iv. 104

अतिथेः — V. iv. 26
अतिथि प्रातिपदिक से ('उसके लिये यह' अर्थ में ञ्य प्रत्यय होता है)।

...अतिभ्यः ... — I. iii. 80
देखें — अभिप्रत्यतिभ्यः I. iii. 80.

अतिव्यथने — V. iv. 61
(सपत्र तथा निष्पत्र प्रातिपदिकों से) 'अतिपीडन' गम्यमान हो तो (कृञ् के योग में डाच् प्रत्यय होता है)।

अतिशदन्तायाः — V. i. 22
(संख्यावाची प्रातिपदिक से तदर्हति पर्यन्त कथित अर्थों में कन् प्रत्यय होता है, यदि वह संख्यावाची प्रातिपदिक) ति शब्द अन्तवाला और शत् शब्द अन्त वाला न हो तो।

अतिशायने — V. iii. 55
अत्यन्त प्रकर्ष अर्थ में वर्त्तमान (प्रातिपदिक से तमप् और इष्ठन् प्रत्यय होते हैं)।

...अतिसर्ग...— III. iii. 163
देखें — प्रैषातिसर्ग० III. iii. 163

...अतीण्...— III. i. 141
देखें — श्याद्व्यधा० III. i. 141

...अतीत... — II. i. 23
देखें — श्रितातीतपतित० II. i. 23

...अतीसाराभ्याम् — V. ii. 129
देखें — वातातीसाराभ्याम् V. ii. 129

अतु... — VI. iv. 14
देखें — अत्वसन्तस्य VI. iv. 14

अतुला ...— II. iii. 72
देखें — अतुलोपमाभ्याम् II. iii. 72

अतुलोपमाभ्याम् — II. iii. 72
तुला और उपमा शब्दों को छोड़कर (तुल्यार्थक शब्दों के योग में तृतीया विभक्ति विकल्प से होती है, पक्ष में षष्ठी भी)।

...अतुस्...— III. iv. 82
देखें — णलतुसुस० III. iv. 82

...अतृतीयास्थस्य — VI. iii. 98
देखें — अषष्ठ्यतृतीयास्थस्य VI. iii. 98

अतृन् — III. ii. 104
('जॄष् वयोहानौ' धातु से भूतकाल में) अतृन् प्रत्यय होता है।

अतेः — V. iv. 96
अति शब्द से उत्तर (जो श्वन् शब्द, तदन्त प्रातिपदिक तत्पुरुष से समासान्त टच् प्रत्यय होता है)।

अतेः — VI. ii. 191.

अति उपसर्ग से उत्तर (अकृदन्त तथा पद शब्द को अन्तोदात्त होता है)।

अतौ — VI. ii. 50

तु शब्द को छोड़कर (तकारादि एवं नकार इत्सञ्ज्ञक कृत् के परे रहते भी अव्यवहित पूर्वपद गति को प्रकृतिस्वर होता है)।

अत्ति...— VII. ii. 66

देखें — **अत्त्यर्तिव्ययतीनाम् VII. ii. 66**

अत्पूर्वस्य — VIII. iv. 21

(उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर) अकार पूर्व है जिससे, ऐसे (हन् धातु) के (नकार को णकारादेश होता है)।

...अत्यन्त...— III. ii. 48

देखें — **अन्तात्यन्ता० III. ii. 48**

...अत्यन्त...— V. ii. 11

देखें — **अवारपारात्यन्ता० V. ii. 11**

अत्यन्तसंयोगे — II. i. 28

अत्यन्तसंयोग गम्यमान होने पर (भी कालवाची द्विती-यान्तों का समर्थ सुबन्त के साथ विकल्प से समास होता है और वह तत्पुरुष समास होता है)।

क्रिया, गुण या द्रव्य के साथ सम्पूर्णता से काल और अध्ववाचकों के सम्बन्ध का नाम अत्यन्त-संयोग है।

अत्यन्तसंयोगे — II. iii. 5

अत्यन्तसंयोग गम्यमान होने पर (काल और अध्व-वाचक शब्दों में द्वितीया विभक्ति होती है)।

...अत्यय...— II. i. 6

देखें— **विभक्तिसमीपसमृद्धि० II. i. 6**

...अत्यस्त...— II. i. 23

देखें — **श्रितातीतपतित० II. i. 23**

...अत्याकार... — V. i. 133

देखें — **श्लाघात्याकार० V. i. 133**

अत्याधानम् — III. iii. 80

(उद्घन शब्द में) अत्याधान = काष्ठ के नीचे रखा गया काष्ठ वाच्य हो तो (उत् पूर्वक हन् धातु से अप् प्रत्यय तथा हन् को घनादेश निपातन किया जाता है, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा विषय में)।

अत्त्यर्तिव्ययतीनाम् — VII. ii. 66

अद् भक्षणे, ऋ गतौ, व्येञ् संवरणे – इन अङ्गों के (थल् को इट् आगम होता है)।

अत्र — VI. iv. 22

('भस्य' के अधिकारपर्यन्त) समानाश्रय अर्थात् एक ही निमित्त होने पर (आभीय कार्य असिद्ध के समान होता है)।

अत्र — VII. iv. 58

यहाँ अर्थात् सन् परे रहते पूर्व के चार सूत्रों से जो इस् इत् आदि का विधान किया है, उनके (अभ्यास का लोप होता है)।

अत्र — VIII. iii. 2

यहाँ से आगे जिसको रु विधान करेंगे, उससे (पूर्व के वर्ण को विकल्प से अनुनासिक आदेश होता है, यह तथ्य अधिकृत होता है)।

अत्रि ...— II. iv. 65

देखें — **अत्रिभृगुकुत्स० II. iv. 65**

अत्रिभृगुकुत्सवसिष्ठगोतमाङ्गिरोभ्यः — II. iv. 65

अत्रि, भृगु, कुत्स, वसिष्ठ, गोतम, अङ्गिरस् — इन शब्दों से (तत्कृत बहुत्व गोत्रापत्य में विहित जो प्रत्यय, उसका भी लुक् हो जाता है)।

...अत्रिषु — IV. i. 117

देखें — **वत्सभरद्वाजा० IV. i. 117**

...अत्वतः — VI. i. 153

देखें — **कर्षात्वतः VI. i. 153**

अत्वतः — VII. ii. 62

(उपदेश में) जो धातु अकारवान् (और तास् के परे रहते नित्य अनिट्), उससे उत्तर (थल् को तास् के समान ही इट् आगम नहीं होता)।

अत्वसन्तस्य — VI. iv. 14

(धातु-भिन्न) अतु तथा अस् अन्त वाले अङ्ग की (उपधा को भी दीर्घ होता है, सम्बुद्धिभिन्न सु विभक्ति परे रहते)।

अथ — अथ शब्दानुशासनम्

पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित मङ्गल तथा प्रारम्भ अर्थ का वाचक अव्यय। यहाँ से लौकिक तथा वैदिक शब्दों का अनुशासन = उपदेश आरम्भ होता है।

...अथ... — VI. ii. 144

देखें — **थाथघञ्० VI. ii. 144**

अथुच् — III. iii. 89

(टु इत्संज्ञक है जिन धातुओं का, उनसे कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में) अथुच् प्रत्यय होता है।

...अथुस्... — III. iv. 82
देखें — **णलतुसुस्० III. iv. 82**

अदः — I. iv. 69
(अनुपदेश विषय में) अदस् शब्द (क्रियायोग में गति और निपात-संज्ञक होता है)।

अदः — II. iv. 36
अद् के स्थान में (जग्ध् आदेश होता है, ल्यप् और तकारादि कित् आर्धधातुक परे रहते)।

अदः — III. ii. 68
अद् धातु से (अन्न शब्द से भिन्न सुबन्त उपपद रहते 'विट्' प्रत्यय होता है)।

...अदः — III. ii. 160
देखें— **सृघस्यदः III. ii. 160**

अदः — III. iii. 59
(उपसर्ग उपपद रहते हुए) अद् धातु से(अप् प्रत्यय होता है, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में)।

अदः — VII. iii. 100
अद् अङ्ग से उत्तर (हलादि अपृक्त सार्वधातुक को सभी आचार्यों के मत में अट् आगम होता है)।

...अदन्तात् — VI. iii. 8
देखें — **हलदन्तात् VI. iii. 8**

अदन्तात् — VIII. iv. 7
ह्रस्व अकारान्त (पूर्वपद में स्थित) निमित्त से उत्तर (अहन् के नकार को णकारादेश होता है)।

अदर्शनम् — I. i. 59
विद्यमान के अदर्शन = अनुपलब्धि या वर्णविनाश की (लोप संज्ञा होती है)।

अदर्शनम् — I. ii. 55
(सम्बन्ध को वाचक मानकर यदि संज्ञा हो तो भी उस सम्बन्ध के हट जाने पर उस संज्ञा का) अदर्शन = न दिखाई देना (होना चाहिये पर वह होता नहीं है)।

अदर्शनम् — I. iv. 28
(व्यवधान के निमित्त जिससे) छिपना (चाहता हो, उस कारक की अपादान संज्ञा होती है)।

अदर्शनात् — V. iv. 76
दर्शन विषय से अन्यत्र वर्तमान (अक्षि-शब्दान्त प्रातिपदिक से समासान्त अच् प्रत्यय होता है)।

अदसः — I. i. 12
अदस् शब्द के (मकार से परे ईदन्त, ऊदन्त और एदन्त शब्द की प्रगृह्य संज्ञा होती है)।

अदसः — VII. ii. 107
अदस् अङ्ग को (सु परे रहते औ आदेश तथा सु का लोप होता है)।

अदसः — VIII. ii. 80
(असकारान्त) अदस् शब्द के (दकार से उत्तर जो वर्ण, उसके स्थान में उवर्ण आदेश होता है तथा दकार को मकारादेश भी होता है)।

...अदसोः — VII. i. 11
देखें — **इदमदसोः VII. i. 11**

अदाप् — I. i. 29
दाप् और दैप् धातुओं को छोड़कर (दा रूप वाली चार और धा रूप वाली दो धातुओं की घु संज्ञा होती है)।

अदिक्स्त्रियाम् — V. iv. 8
दिशावाचक स्त्रीलिंग न हो तो (अञ्चति उत्तरपद वाले प्रातिपदिक से स्वार्थ में विकल्प से ख प्रत्यय होता है)।

...अदिति... — IV. i. 85
देखें — **दित्यदित्यादित्य० IV. i. 85**

अदिप्रभृतिभ्यः — II. iv. 72
अदादिगण-पठित धातुओं से उत्तर (शप् का लुक् होता है)।

...अदुपदेशात् — VI. i. 180
देखें— **तास्यनुदात्तेत्० VI. i. 180**

अदुपधात् — III. i. 98
अकारोपध (पवर्गान्त) धातु से (यत् प्रत्यय होता है)।

...अदूर... — II. ii. 25
देखें — **अव्ययासन्नादूरा० II. ii. 25**

अदूरभवः — IV. ii. 69
(षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिक से) पास होने के अर्थ में (भी यथाविहित अण् आदि प्रत्यय होते हैं)।

अदूरात् — VIII. ii. 107
दूर से (बुलाने के विषय से) भिन्न (विषय में अप्रगृह्य-सञ्ज्ञक एच् के पूर्वार्द्ध भाग को प्लुत करने के प्रसंग में आकारादेश होता है तथा उत्तरवाले भाग को इकार उकार आदेश होते हैं)।

अदूरे — V. iii. 35

(दिशा, देश और काल अर्थों में वर्तमान पञ्चम्यन्त-वर्जित सप्तमी प्रथमान्त दिशावाची उत्तर, अधर और दक्षिण प्रातिपदिकों से विकल्प से एनप् प्रत्यय होता है), 'निकटता' गम्यमान होने पर।

अदेङ् — I. i. 2

अ, ए, ओ की (गुणसंज्ञा होती है)।

अदेश...— IV. iii. 96

देखें — **अदेशकालात् IV. iii. 96**

अदेश...— IV. iv. 71

देखें — **अदेशकालात् IV. iv. 71**

अदेशकालात् — IV. iii. 96

(प्रथमासमर्थ भक्तिसमानाधिकरणवाची) देशकाल-वर्जित (अचेतनवाची) प्रातिपदिक से (षष्ठ्यर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

अदेशकालात् — IV. iv. 71

(जिस देश व काल में अध्ययन नहीं करना चाहिये, ऐसे अदेशकालवाची सप्तमीसमर्थ प्रातिपदिकों से (अध्ययन करने वाला अभिधेय हो तो ठक् प्रत्यय होता है)।

अदेशे — VIII. iv. 23

(अन्तर शब्द से उत्तर अकार पूर्ववाले हन् धातु के नकार को णकारादेश होता है) देश को न कहा जा रहा हो तो।

अद्ड् — VII. i. 25

(डतर आदि में है जिनके, ऐसे सर्वादिगणपठित पाँच शब्दों से परे सु तथा अम् को) अद्ड् आदेश होता है।

अद्भिः — IV. iv. 134

(तृतीयासमर्थ) आप् प्रातिपदिक से (संस्कृत अर्थ में यत् प्रत्यय होता है, वेद-विषय में)।

...अद्य... — V. iii. 22

देखें — **सद्यःपरुत्० V. iii. 22**

अद्यश्वीन — V. ii. 13

अद्यश्वीन = आज या कल ब्याने वाली गौ आदि-शब्द का निपातन किया जाता है, (निकट प्रसव को कहना हो तो)।

अद्रव्यप्रकर्षे — V. iv. 11

(किम्, एकारान्त, तिङन्त तथा अव्ययों से विहित जो तरप्- तमप् प्रत्यय, तदन्त से आमु प्रत्यय होता है), द्रव्य का प्रकर्ष = उत्कर्ष न कहना हो तो।

अद्रि — VI. iii. 91

(विष्वग् तथा देव शब्दों के तथा सर्वनाम शब्दों के टिभाग को) अद्रि आदेश होता है, (वप्रत्ययान्त अञ्चु धातु के परे रहते)।

अद्वन्द्वे — II. iv. 69

(द्वन्द्व तथा) अद्वन्द्व = द्वन्द्वभिन्न समास में (उपक आदियों से उत्तर गोत्रप्रत्यय का बहुत्व की विवक्षा में विकल्प से लुक् होता है)।

अद्व्यादिभ्यः — V. iii. 2

(यहां से आगे 'दिक्शब्देभ्यः सप्तमीपञ्चमी' V.iii.27' सूत्र तक जितने प्रत्यय कहे हैं, वे किम्, सर्वनाम तथा बहु शब्दों से ही होते है), द्वि आदि शब्दों को छोड़कर।

अद्व्युपसर्गस्य — VI. iv. 96

जो दो उपसर्गों से युक्त नहीं है, ऐसे (छादि) अङ्ग की (उपधा को घ प्रत्यय परे रहने पर ह्रस्व होता है)।

...अध्...— V. iii. 39

देखें — **पुरधवः V. iii. 39**

अधः — VIII. ii. 40

(झष् से उत्तर तकार तथा थकार को धकार आदेश होता है, किन्तु) डुधाञ् धातु से उत्तर (धकारादेश नहीं होता)।

अधनुषा — IV. iv. 83

(द्वितीयासमर्थ प्रातिपदिक से 'बींधता है' अर्थ में) यदि धनुष करण न हो तो (यत् प्रत्यय होता है)।

...अधम...— IV. iii. 5

देखें — **परावराधमो० IV. iii. 5**

...अधर... — II. ii. 1

देखें — **पूर्वापराधरो० II. ii. 1**

...अधर... — V. iii. 34

देखें — **उत्तराधर० V. iii. 34**

...अधर...— V. iii. 39

देखें — **पूर्वाधर० V. iii. 39**

...अधराणि — I. i. 33

देखें — **पूर्वपरावरदक्षिणोत्तरापराधराणि I. i. 33**

...अधरेद्युस् — V. iii. 22

देखें — **सद्यःपरुत्० V. iii. 22**

...अधरोत्तराणाम् — II. iv. 12

देखें — **वृक्षमृगतृणधान्य० II. iv. 12**

अधस्... — VIII. iii. 47
देखें — अधःशिरसी VIII. iii. 47

...अधसः — VIII. i. 7
देखें — उपर्यध्यधसः VIII. i. 7

अधःशिरसी — VIII. iii. 47
(समास में अनुत्तरपदस्थ) अधस् तथा शिरस् के (विसर्जनीय) को सकार आदेश होता है, पद शब्द परे रहते)।

अधातुः — I. ii. 45
(अर्थवान् शब्द प्रातिपदिक संज्ञक होते हैं), धातु (और प्रत्यय) को छोड़कर ।

अधातोः — VI. iv. 14
धातुभिन्न (अतु तथा अस् अन्त वाले अङ्ग की उपधा) को (भी दीर्घ होता है, सम्बुद्धिभिन्न सु विभक्ति परे रहते)।

अधातोः — VII. i. 70
(उक् इत्सञ्ज्ञक है जिसका, ऐसे) धातुवर्जित अङ्ग को (तथा अञ्चु धातु को सर्वनामस्थान परे रहते नुम् आगम होता है)।

अधि... — I. iv. 46
देखें — अधिशीङ्स्थासाम् I. iv. 46

...अधि... — I. iv. 48
देखें — उपान्वध्याङ्वसः I. iv. 48

अधि... — I. iv. 92
देखें — अधिपरी I. iv. 92

...अधि... — VIII. i. 7
देखें — उपर्यध्यधसः VIII. i. 7

अधिः — I. iv. 96
अधि शब्द (कर्मप्रवचनीय और निपातसंज्ञक होता है, ईश्वर अर्थ में)।

...अधिक... — II. ii. 25
देखें — अव्ययासन्नादूरा० II. ii. 25

...अधिक... — VI. ii. 91
देखें — भूताधिक० VI. ii. 91

अधिकम् — II. iii. 9
(जिससे) अधिक हो (और जिसका सामर्थ्य हो, उस कर्मप्रवचनीय के योग में सप्तमी विभक्ति होती है)।

अधिकम् — V. ii. 45
(प्रथमासमर्थ दशन् शब्द अन्त वाले प्रातिपदिक से सप्तम्यर्थ में ड प्रत्यय होता है, यदि वह प्रथमासमर्थ) अधिक समानाधिकरण वाला हो तो ।

अधिकम् — V. ii. 73
'अधिकम्' यह निपातन किया जाता है। (अध्यारूढ शब्द के उत्तरपद आरूढ शब्द का लोप तथा कन् प्रत्यय निपातन से किया जाता है)।

अधिकरणम् — I. iv. 45
(क्रिया के आश्रय कर्त्ता तथा कर्म की धारणक्रिया के प्रति आधार जो कारक, उसकी) अधिकरण संज्ञा होती है ।

...अधिकरणयोः — III. iii. 117
देखें — करणाधिकरणयोः III. iii. 117

अधिकरणवाचिनः — II. iii. 68
अधिकरणवाचक (क्तान्त) के योग में (भी षष्ठी विभक्ति होती है)।

अधिकरणवाचिना — II. ii. 13
अधिकरणवाची (क्तप्रत्ययान्त सुबन्त) के साथ (भी षष्ठ्यन्त सुबन्त समास को प्राप्त नहीं होता)।

अधिकरणे — II. iii. 36
(अनभिहित) अधिकरण कारक में (तथा दूरान्तिकार्थ शब्दों से भी सप्तमी विभक्ति होती है)।

अधिकरणे — II. iii. 64
(कृत्वसुच् प्रत्यय के अर्थ वाले प्रत्ययों के प्रयोग में कालवाची) अधिकरण होने पर (शेषत्व की विवक्षा में षष्ठी विभक्ति होती है)।

अधिकरणे — III. ii. 15
अधिकरण (सुबन्त) उपपद रहते (शीङ् धातु से अच् प्रत्यय होता है)।

अधिकरणे — III. iii. 93
(कर्म उपपद रहने पर) अधिकरण कारक में (भी घुसंज्ञक धातुओं से कि प्रत्यय होता है)।

अधिकरणे — III. iv. 41
अधिकरणवाची शब्द उपपद हों तो (बन्ध धातु से णमुल् प्रत्यय होता है)।

अधिकरणे — III. iv. 76
(स्थित्यर्थक, गत्यर्थक तथा प्रत्यवसान = भक्षण अर्थ वाली धातुओं से विहित जो क्त प्रत्यय, वह) अधिकरण कारक में (होता है तथा चकार से भाव, कर्म, कर्त्ता में भी होता है)।

अधिकरणैतावत्वे — II. iv. 15
वर्तिपदार्थ जो कि समासार्थ का आधार है, उसका परिमाण गम्यमान होने पर (द्वन्द्व एकवद् नहीं होता)।

अधिकारः — I. iii. 11
(स्वरित चिह्न वाले सूत्र से) अधिकार ज्ञात होता है।

अधिकार्थवचने — II. i. 32
अधिकार्थवचन गम्यमान होने पर अर्थात् स्तुति अथवा निन्दा में अध्यारोपित अर्थ के कथन में (कर्त्ता और करणवाची तृतीयान्त सुबन्त पद कृत्यप्रत्ययान्त समर्थ सुबन्तों के साथ विकल्प से समास को प्राप्त होता है और वह समास तत्पुरुष संज्ञक होता है)।

अधिकृत्य — IV. iii. 87
(द्वितीयासमर्थ प्रातिपदिक से उसको) अधिकृत करके (बनाया गया अर्थ में यथाविहित प्रत्यय होता है, यदि बनाया जाना ग्रन्थविषयक हो तो)।

अधिके — I. iv. 89
(उप शब्द) अधिक (तथा हीन) अर्थ द्योतित होने पर (कर्मप्रवचनीय तथा निपातसंज्ञक होता है)।

...अधिके — VI. iii. 78
देखें — **ग्रन्थान्ताधिके VI. iii. 78**

...अधिपति... — II. iii. 39
देखें — **स्वामीश्वराधिपति० II. iii. 39**

अधिपरी — I. iv. 92
अधि और परि शब्द (कर्मप्रवचनीय और निपातसंज्ञक होते हैं, यदि वे अन्य अर्थ के द्योतक न हों तो)।

...अधिभ्याम् — V. ii. 34
देखें — **उपाधिभ्याम् V. ii. 34**

अधिशीङ्स्थासाम् — I. iv. 46
अधिपूर्वक शीङ्, स्था और आस् का (आधार जो कारक, उसकी कर्म संज्ञा होती है)।

अधीगर्थ... — II. iii. 52
देखें — **अधीगर्थदयेशाम् II. iii. 52**

अधीगर्थदयेशाम् — II. iii. 52
अधिपूर्वक इक् धातु के अर्थवाली धातुओं के तथा दय और ईश धातुओं के (कर्म कारक में शेष विवक्षित होने पर षष्ठी विभक्ति होती है)।

अधीते — IV. ii. 58
(द्वितीयासमर्थ प्रातिपदिक से) 'अध्ययन करता है' अर्थ में (यथाविहित प्रत्यय होता है, इसी प्रकार द्वितीया-समर्थ प्रातिपदिक से 'जानता है', के अर्थ में यथाविहित प्रत्यय होता है)।

अधीते — V. ii. 84
(वेद को) 'पढ़ता है' अर्थ में (श्रोत्रियन् शब्द का निपातन किया जाता है)।

...अधीनवचने — V. iv. 54
देखें — **तदधीनवचने V. iv. 54**

...अधीष्ट... — III. iii. 161
देखें — **विधिनिमन्त्रणा० III. iii. 161**

अधीष्टः — V. i. 79
(द्वितीयासमर्थ कालवाची प्रातिपदिकों से) 'सत्कार-पूर्वक व्यापार' अर्थ में (तथा 'खरीदा हुआ', 'हो चुका', और 'होने वाला' — इन अर्थों में यथाविहित ठञ् प्रत्यय होता है)।

अधीष्टे — III. iii. 166
सत्कार गम्यमान हो तो (भी स्म शब्द उपपद रहते धातु से लोट् प्रत्यय होता है)।

अधुना — V. iii. 17
अधुना शब्द का निपातन किया जाता है।

अधृष्ट ... — V. ii. 20
देखें — **अधृष्टाकार्ययोः V. ii. 20**

अधृष्टाकार्ययोः — V. ii. 20
(शालीन तथा कौपीन शब्द यथासङ्ख्य करके) अधृष्ट=जो धृष्ट नहीं है तथा अकार्य =जो करने योग्य नहीं है, वाच्य हों तो (निपातन किये जाते हैं)।

अधेः — I. iii. 33
अधि उपसर्ग से उत्तर (कृञ् धातु से आत्मनेपद होता है, 'पर का अभिभव' अर्थ में)।

अधेः — VI. ii. 188
अधि उपसर्ग से उत्तर (उपरिस्थवाची उत्तरपद को अन्तोदात्त होता है)।

अध्यक्षे — VI. ii. 67
अध्यक्ष शब्द के उत्तरपद रहते (पूर्वपद को विकल्प से आद्युदात्त होता है)।

अध्ययनतः — II. iv. 5
अध्ययन के निमित्त से (जिनकी अविप्रकृष्ट अर्थात् प्रत्यासन्न आख्या है, उनका द्वन्द्व एकवद् होता है)।

अध्ययने — IV. iv. 63
अध्ययन में (वृत्तकर्मसमानाधिकरणवाची प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

अध्ययने — VII. ii. 26
अध्ययन को कहने में (निष्ठा के विषय में ण्यन्त वृति धातु से इडभावयुक्त वृत्त शब्द निपातन किया जाता है)।

...अध्ययनेषु — V. i. 57
देखें — **संज्ञासंघसूत्रा० V. i. 57**

अध्यर्थे — VIII. iii. 51
अधि के अर्थ में वर्तमान (परि शब्द के परे रहते पञ्चमी के विसर्जनीय को सकारादेश होता है, वेद विषय में)।

अध्यर्द्धपूर्व...— V. i. 28
देखें — **अध्यर्द्धपूर्वद्विगो० V. i. 28**

अध्यर्द्धपूर्वद्विगोः — V. i. 28
अध्यर्द्ध शब्द पूर्व हो जिसके, उससे तथा द्विगुसञ्ज्ञक प्रातिपदिक से ('तदर्हति' पर्यन्त कथित अर्थों में आये हुये प्रत्यय का लुक् होता है, सञ्ज्ञा विषय को छोड़कर)।

...अध्यापक....— II. i. 64
देखें — **पोटायुवतिस्तोक० II. i. 64**

अध्याय... — III. iii. 122
देखें — **अध्यायन्याय० III. iii. 122**

अध्याय...— V. ii. 60
देखें — **अध्यायानुवाकयोः V. ii. 60**

अध्यायन्यायोद्यावसंहाराः — III. iii. 122
अधिपूर्वक इङ् धातु से अध्यायः, नि पूर्वक इण् धातु से न्यायः, उत् पूर्वक यु धातु से उद्यावः तथा सम् पूर्वक हृ धातु से संहारः— ये घञन्त शब्द (भी पुंल्लिग में करण तथा अधिकरण कारक संज्ञा में निपातन किये जाते हैं)।

अध्यायानुवाकयोः — V. ii. 60
अध्याय और अनुवाक अभिधेय होने पर (मत्वर्थ में विहित छ प्रत्यय का लुक् होता है)।

अध्यायिनि — IV. iv. 71
(जिस देश व काल में अध्ययन नहीं करना चाहिए, ऐसे सप्तमीसमर्थ देशकालवाची प्रातिपदिकों से) अध्ययन करने वाला अभिधेय हो तो (ठक् प्रत्यय होता है)।

अध्यायेषु — IV. iii. 69
(षष्ठी तथा सप्तमीसमर्थ व्याख्यातव्यनाम ऋषिवाची प्रातिपदिकों से 'तत्र भवः' तथा 'तस्य व्याख्यान' अर्थों में) अध्याय गम्यमान होने पर (ही ठञ् प्रत्यय होता है)।

...अध्युत्तरपदात् — V. iv. 7
देखें — **अषडक्षाशितं० V. iv. 7**

...अध्यै...— III. iv. 9
देखें — **सेसेनसे० III. iv. 9**

...अध्यैन्... — III. iv. 9
देखें — **सेसेनसे० III. iv. 9**

अध्रुवे — III. iv. 54
अध्रुव (स्वाङ्गवाची द्वितीयान्त शब्द) उपपद रहते (धातु से णमुल् प्रत्यय होता है)।
अध्रुव = वह अङ्ग, जिसके नष्ट हो जाने पर भी प्राणी नहीं मरता।

...अध्व... — III. ii. 48
देखें — **अन्तात्यन्ता० III. ii. 48**

...अध्वन्... — VI. ii. 187
देखें — **स्फिगपूत० VI. ii. 187**

अध्वनः ... — V. ii. 16
(द्वितीयासमर्थ) अध्वन् प्रातिपदिक से ('पर्याप्त जाता है' अर्थ में यत् तथा ख प्रत्यय होते हैं)।

अध्वनः... — V. iv. 85
(उपसर्ग से उत्तर) अध्वन् शब्दान्त प्रातिपदिक से (समासान्त अच् प्रत्यय होता है)।

...अध्वनोः — II. iii. 5
देखें — **कालाध्वनोः II. iii. 5**

...अध्वर... — IV. iii. 72
देखें — **द्वयजृद्ब्राह्मणर्क्० IV. iii. 72**

...अध्वर... — VII. iv. 39
देखें — **कव्यध्वर० VII. iv. 39**

...अध्वर्यु... — IV. iii. 122
देखें — **पत्राध्वर्युपरिषदः IV. iii. 122**

अध्वर्यु... — VI. ii. 10
देखें — **अध्वर्युकषाययोः VI. ii. 10**

अध्वर्युकषाययोः — VI. ii. 10
अध्वर्यु तथा कषाय शब्द उत्तरपद रहते (जातिवाची तत्पुरुष समास में पूर्वपद को प्रकृतिस्वर हो जाता है)।

अध्वर्युक्रतुः — II. iv. 4
वेद में जिस क्रतु का विधान है, ऐसे (अनपुंसकलिंग) शब्दों का (द्वन्द्व एकवद् होता है)।

...अध्वानौ — VI. iv. 169
देखें — **आत्माध्वानौ VI. iv. 169**

अन् — V. iii. 5
('दिक्शब्देभ्यः सप्तमी० ' V. iii. 27 सूत्र तक कहे जाने वाले प्रत्ययों के परे रहते एतत् के स्थान में) अन् आदेश होता है।

अन् — V. iii. 48

(भाग अर्थ में वर्तमान पूरणार्थक तीयप्रत्ययान्त प्रातिपदिकों से स्वार्थ में) अन् प्रत्यय होता है।

अन्...— V. iv. 103

देखें — अनसन्तात् V. iv. 103

अन् — VI. ii. 161

देखें — तृन्नन्० VI. ii. 161

अन् — VI. iv. 167

(भसञ्ज्ञक)अन् अन्तवाले अङ्ग को (अण् परे रहते प्रकृतिभाव हो जाता है)।

अन् — VII. ii. 112

(ककार से रहित इदम् शब्द के इद् भाग को) अन् आदेश होता है,(आप् विभक्ति परे रहते)।

अन...— VII. i. 1

देखें — अनाकौ VII. i. 1

अनः — IV. i. 12

(बहुव्रीहि समास में) जो अन्नन्त प्रातिपदिक, उससे (स्त्रीलिंग में ङीप् प्रत्यय नहीं होता)।

अनः — IV. i. 28

अन्नत जो (उपधालोपी बहुव्रीहि समास), उससे (स्त्रीलिंग में विकल्प से ङीप् प्रत्यय होता है)।

अनः — V. iv. 108

(अव्ययीभाव समास में वर्तमान) अन्नन्त प्रातिपदिक से (भी समासान्त टच् प्रत्यय होता है)।

अनः — VI. ii. 150

(भाव तथा कर्मवाची) अन् प्रत्ययान्त उत्तरपद को (कारक से उत्तर अन्तोदात्त होता है)।

अनः — VI. iv. 134

(भसञ्ज्ञक अन् अन्तवाले अङ्ग के) अन् के (अकार का लोप होता है)।

अनः — VIII. ii. 16

(वेद-विषय में) अन् अन्तवाले शब्द से उत्तर (मतुप् को नुट् आगम होता है)।

अनः — VIII. iii. 108

अनकारान्त (सन् धातु) के (सकार को वेद-विषय में मूर्धन्य आदेश होता है)।

अनक्षे — V. iv. 74

(ऋक्, पुर्, अप्, धुर् तथा पथिन् शब्द अन्त में हैं जिस समास के, तदन्त से समासान्त अ प्रत्यय होता है,) यदि वह (धुर्) अक्षसम्बन्धी न हो तो।

अनग्लोपे— VII. iv. 93

(चङ्परक णि के परे रहते अङ्ग के अभ्यास को लघु धात्वक्षर परे रहते सन् के समान कार्य होता है, यदि अङ्ग के) अक् प्रत्याहार का लोप न हुआ हो तो।

अनङ् — V. iv. 131

(ऊधस् शब्दान्त बहुव्रीहि को समासान्त) अनङ् आदेश होता है।

अनङ् — VII. i. 75

(नपुंसकलिङ्ग वाले अस्थि, दधि, सक्थि, अक्षि — इन अङ्गों को तृतीयादि अजादि विभक्तियों के परे रहते) अनङ् आदेश होता है (और वह उदात्त होता है)।

अनङ् — VII. i. 93

(सखि अङ्ग को सम्बुद्धिभिन्न सु परे रहते) अनङ् आदेश होता है।

अनङि — VI. iv. 98

(गम, हन, जन, खन, घस् – इन अङ्गों की उपधा का लोप हो जाता है), अङ्भिन्न (अजादि कित्, ङित्) प्रत्यय परे हो तो।

अनचि — VIII. iv. 46

(अच् से उत्तर यर् को विकल्प करके) अच् परे न हो तो (भी द्वित्व हो जाता है)।

अनजिरादीनाम् — VI. iii. 118

अजिरादि शब्दों को छोड़कर (मतुप् परे रहते बह्वच् शब्दों के अण् को दीर्घ होता है, सञ्ज्ञा विषय में)।

अनञ् — II. i. 59

नञ् रहित (क्तान्त सुबन्त) शब्द (नञ्विशिष्ट समानाधिकरण क्तान्त सुबन्त के साथ विकल्प से समास को प्राप्त होता है और वह तत्पुरुष समास होता है)।

अनञ्... — II. iv. 19

देखें— अनञ्कर्मधारयः II. iv. 19

अनञः — VI. iv. 127

(अर्वन् अङ्ग को तृ आदेश होता है, यदि अर्वन् शब्द से परे सु न हो तथा वह अर्वन् शब्द) नञ् से उत्तर (भी) न हो तो।

अनञ्कर्मधारयः — II. iv. 19

नञ् तथा कर्मधारय वर्जित (तत्पुरुष नपुंसकलिंग होता है)।

अनञ्पूर्वे — VII. i. 37

नञ् से भिन्न पूर्व अवयव है जिसमें, ऐसे (समास) में (क्त्वा के स्थान में ल्यप् आदेश होता है)।

अनञ्समासे — VI. i. 128

(ककार जिनमें नहीं है तथा) जो नञ् समास में वर्तमान नही है, ऐसे (एतत् तथा तत्) शब्दों के (सु का लोप हो जाता है, हल् परे रहते, संहिता के विषय में)।

अनडुहः— VII. i. 82

(सु परे रहते) अनडुह् अङ्ग को (नुम् आगम होता है)।

...अनडुहाम् — VIII. ii. 72

देखें— वसुस्रंसु० VIII. ii. 72

...अनडुहोः — VII. i. 98

देखें — चतुरनडुहोः VII. i. 98

अनतः — VII. i. 5

अनकारान्त अङ्ग से उत्तर (आत्मनेपद में वर्तमान जो प्रत्यय का झकार, उसके स्थान में अत् आदेश होता है)।

अनत्यन्तगतौ — V. iv. 4

(क्त प्रत्यय अन्त वाले प्रातिपदिकों से) निरन्तर सम्बन्ध गम्यमान न हो तो (कन् प्रत्यय होता है)।

अनत्याधाने — I. iv. 74

अत्याधान= चिपकाकर न रखने विषय में (उरसि तथा मनसि शब्दों की कृञ् धातु के योग में विकल्प से गति और निपात संज्ञा होती है)।

अनदितेः — VIII. iii. 50

(कः, करत्, करति, कृधि, कृत – इनके परे रहते) अदिति को छोड़कर (जो विसर्जनीय, उसको सकारादेश होता है, वेद-विषय में)।

अनद्यतनवत् — III. iii. 135

(क्रियाप्रबन्ध तथा सामीप्य गम्यमान हो तो धातु से) अनद्यतन के समान (प्रत्ययविधि नहीं होती); अर्थात् सामान्यभूत में कहा हुआ लुङ् और सामान्य भविष्यत् में कहा हुआ लृट् ही होंगे।

क्रियाप्रबन्ध = निरन्तरता के साथ क्रिया का अनुष्ठान। सामीप्य = तुल्यजातीय काल का व्यवधान न होना।

अनद्यतने — III. ii. 111

अनद्यतन = जो आज का नहीं है ऐसे (भूतकाल) में वर्तमान (धातु से लङ् प्रत्यय होता है)।

अनद्यतने — III. iii. 15

अनद्यतन = जो आज का नहीं है ऐसे (भविष्यत्काल) में (धातु से लुट् प्रत्यय होता है)।

अनद्यतने — V. iii. 21

(सप्तम्यन्त किम्, सर्वनाम और बहु प्रातिपदिकों से र्हिल् प्रत्यय विकल्प से होता है), अनद्यतन काल विशेष को कहना हो तो ।

अनधिकरणवाचि — II. iv. 13

अद्रव्यवाची (परस्परविरुद्ध अर्थ वाले) शब्दों का (द्वन्द्व विकल्प से एकवद् होता है)।

अनध्वनि — II. iii. 12

(चेष्टा क्रिया वाली गत्यर्थक धातुओं के) मार्ग-रहित (कर्म) में (द्वितीया और चतुर्थी विभक्ति होती है)।

...अनन्त... — III. ii. 21

देखें — दिवाविभा० III. ii. 21

अनन्त...— V. iv. 23

देखें — अनन्तावसथे० V. iv. 23

अनन्तरः — VI. ii. 49

(कर्मवाची क्तान्त उत्तरपद रहते पूर्वपदस्थ) अव्यवहित (गति) को (प्रकृतिस्वर होता है)।

अनन्तरम् — VIII. i. 37

(यावत् और यथा से युक्त) अव्यवहित (तिङन्त को पूजा विषय में अनुदात्त नहीं होता अर्थात् अनुदात्त ही होता है)।

अनन्तरम् — VIII. ii. 49

(अविद्यमान पूर्ववाले आहो उताहो से युक्त) व्यवधानरहित (तिङ्) को (भी अनुदात्त नहीं होता है)।

अनन्तराः — I. i. 7

व्यवधानरहित = जिनके बीच में अच् न हों, ऐसे (दो या दो से अधिक हलों की संयोग संज्ञा होती है)।

अनन्तःपादम् — III. ii. 66

(हव्य सुबन्त उपपद रहते वेदविषय में वह् धातु से ञ्युट् प्रत्यय होता है, यदि वह् धातु) पाद के अन्तर अर्थात् मध्य में वर्तमान न हो तो।

अनन्तावसथेतिहभेषजात् — V. iv. 23

अनन्त, आवसथ, इतिह तथा भेषज प्रातिपदिकों से (स्वार्थ में ञ्य प्रत्यय होता है)।

अनन्तिके — VIII. i. 55
(आम् से उत्तर एक पद का व्यवधान है जिसके मध्य में, ऐसे आमन्त्रित सञ्ज्ञक पद को) अनन्तिक = न दूर, न समीप अर्थ में (अनुदात्त नहीं होता)।

...अनन्तेषु — III. ii. 48
देखें—अन्तात्यन्ता० III. ii. 48

अनन्त्ययोः — VII. ii. 106
(त्यदादि अंगों के) अनन्त्य = जो अन्त में नहीं है, ऐसे (तकार तथा दकार) के स्थान में (सु विभक्ति परे रहते सकारादेश होता है)।

अनन्त्यस्य — VII. ii. 79
(सार्वधातुक में लिङ् लकार के) अनन्त्य = जो अन्त में नहीं है, ऐसे (सकार) का (लोप होता है)।

अनन्त्यस्य — VIII. ii. 86
(ऋकार को छोड़कर वाक्य के) अनन्त्य = जो अन्त में न हो ऐसे (गुरुसञ्ज्ञक) वर्ण को (एक-एक करके तथा अन्त्य के टि को भी प्राचीन आचार्यों के मत में प्लुत उदात्त होता है)।

अनन्त्यस्य — VIII. ii. 105
(वाक्यस्थ) अनन्त्य = जो अन्त में नहीं है ऐसे (एवं अपि ग्रहण से अन्त्य) पद की (टि को भी प्रश्न एवं आख्यान होने पर प्लुत उदात्त होता है)।

अनन्ने — III. ii. 68
अन्नभिन्न (सुबन्त) उपपद रहते (अद् धातु से 'विट्' प्रत्यय होता है)।

अनपत्ये — IV. i. 88
(प्राग्दीव्यतीय अर्थों में विहित) अपत्य = सन्तान अर्थ से भिन्न (द्विगुसम्बन्धी जो तद्धित प्रत्यय, उसका लुक् होता है)।

अनपत्ये — VI. iv. 164
अपत्य = सन्तान अर्थ से भिन्न अर्थ में वर्तमान (अण् प्रत्यय के परे रहते भसञ्ज्ञक इन्नन्त अङ्ग को प्रकृतिभाव हो जाता है)।

अनपत्ये — VI. iv. 173
अपत्य = सन्तान अर्थ से भिन्न (अण्) परे रहते (औक्षम्— यहाँ टिलोप निपातन किया जाता है)।

अनपादाने — VIII. ii. 48
(अञ्चु धातु से उत्तर निष्ठा के तकार को नकारादेश होता है, यदि अञ्चु के विषय में) अपादान कारक का प्रयोग न हो रहा हो तो ।

अनपुंसकम् — II. iv. 4
नपुंसकभिन्न (अध्वर्युक्रतु वाचकों का द्वन्द्व एकवद् होता है)।

अनपुंसकस्य — I. i. 42
नपुंसकलिङ्गभिन्न (सुट्) की (सर्वनामस्थान संज्ञा होती है)।

अनपुंसकेन — I. ii. 69
(नपुंसकलिंग शब्द) नपुंसकलिंगभिन्न अर्थात् स्त्रीलिंग पुँल्लिग शब्दों के साथ (शेष रह जाता है तथा स्त्रीलिंग, पुँल्लिग शब्द हट जाते हैं, एवं उस नपुंसकलिंग शब्द को एकवत् कार्य भी विकल्प करके हो जाता है, यदि उन शब्दों में नपुंसक गुण एवं अनपुंसक गुण का ही वैशिष्ट्य हो, शेष प्रकृति आदि समान ही हो)।

अनपेते — IV. iv. 92
(पञ्चमीसमर्थ धर्म, पथिन्, अर्थ, न्याय– इन प्रातिपदिकों से) अनुकूल अर्थ में (यत् प्रत्यय होता है)।

अनभिहिते — II. iii. 1
अनभिहित = अनुक्त = अनिर्दिष्ट (कर्मादि कारकों) में (विभक्ति होवे यह अधिकार सूत्र है)।

अनभ्यासस्य— VI. i. 8
(लिट् के परे रहते धातु के अवयव) अभ्याससञ्ज्ञारहित (प्रथम एकाच् एवं अजादि के द्वितीय एकाच्) को (द्वित्व होता है)।

...अंनयम् — V. ii. 9
देखें — अनुपदसर्वान्नायानयम् V. ii. 9

अनर्थकौ — I. iv. 92
(अधि, परि शब्द) यदि अन्य अर्थ के द्योतक न हों तो (कर्मप्रवचनीय और निपातसंज्ञक होते हैं) ।

अनल्विधौ — I. i. 55
अल् से परे विधि, अल् के स्थान में विधि, अल् परे रहते विधि, अल् के द्वारा विधि – इनको छोड़कर (आदेश स्थानी के तुल्य होता है)।

...अनवः — I. iv. 89
देखें — प्रतिपर्यनवः I. iv. 89

अनवक्लृप्ति... — III. iii. 145
देखें — अनवक्लृप्त्यमर्षयोः III. iii. 145

अनवक्लृप्त्यमर्षयोः — III. iii. 145
असम्भावना तथा सहन न करना गम्यमान हो तो (किंवृत्त उपपद न हो या किंवृत्त उपपद हो तो भी धातु से कालसामान्य में सब लकारों के अपवाद लिङ् तथा लृट् प्रत्यय होते हैं)।

अनवने — I. iii. 66
पालन करने से भिन्न अर्थ में (भुज् धातु से आत्मनेपद होता है)।

अनव्ययस्य — VI. iii. 65
(ख् इत्सञ्ज्ञक है जिसका, ऐसे शब्द के उत्तरपद रहते) अव्यय-भिन्न शब्द को (ह्रस्व हो जाता है)।

अनव्ययस्य — VIII. iii. 46
(अकार से उत्तर समास में जो अनुत्तरपदस्थ) अव्यय-भिन्न का (विसर्जनीय, उसको नित्य ही सकारादेश होता है; कृ, कमि, कंस, कुम्भ, पात्र, कुशा, कर्णी— इन शब्दों के परे रहते) ।

अनस् ...— V. iv. 94
देखें — अनोश्मायः V. iv. 94

अनसन्तात् — V. iv. 103
(नपुंसक लिंग में वर्तमान) अन्नन्त तथा असन्त(तत्पुरुष) से (समासान्त टच् प्रत्यय होता है, वेदविषय में)।

अनस्तेः — VIII. ii. 73
अस् को छोड़कर (जो सकारान्त पद, उसको तिप् परे रहते दकारादेश होता है)।

अनहोरात्राणाम् — III. iii. 137
(कालकृत मर्यादा में अवर भाग कहना हो तो भी भविष्यत्काल में धातु से अनद्यतन की तरह प्रत्यय-विधि नहीं होती, यदि वह काल का मर्यादा विभाग) दिन-रात-सम्बन्धी न हो।

अनाकाङ्क्षे — III. iv. 23
(समानकर्त्तावाले धातुओं में से पूर्वकालिक धात्वर्थ में वर्तमान धातु से यद् शब्द उपपद होने पर क्त्वा और णमुल् प्रत्यय नहीं होते), यदि अन्य वाक्य की आकाङ्क्षा न रखने वाला वाक्य अभिधेय हो।

अनाकौ — VII. i. 1
(अङ्गसम्बन्धी यु तथा वु के स्थान में यथासङ्ख्य करके) अन तथा अक आदेश होते हैं।

अनाङ् — I. i. 14
आङ्शब्दवर्जित (निपात प्रगृह्य संज्ञक होते हैं)।

अनाचमेः — VII. iii. 34
(उपदेश में उदात्त तथा मकारान्त धातु को चिण् तथा ञित्, णित् कृत् परे रहते जो कहा गया वह नहीं होता), आङ्पूर्वक चम् धातु को छोड़कर ।

अनाचितादीनाम् — VI. ii. 146
(गति, कारक तथा उपपद से उत्तर क्तान्त उत्तरपद को अन्तोदात्त होता है, सञ्ज्ञा विषय में), आचितादि शब्दों को छोड़कर।

...अनाच्छादन...— IV. i. 42
देखें — वृत्त्यमत्रावपना॰ IV. i. 42

अनाच्छादनात् — VI. ii. 170
आच्छादनवाची शब्द को छोड़कर जो (जातिवाची शब्द तथा कालवाची एवं सुखादि) शब्द, उनसे उत्तर (क्तान्त उत्तरपद को कृत, मित तथा प्रतिपन्न शब्दों को छोड़कर अन्तोदात्त होता है, बहुव्रीहि समास में)।

अनात् — VI. i. 197
(दो अचों वाले निष्ठान्त शब्दों के आदि को उदात्त होता है, सञ्ज्ञा विषय में), आकार को छोड़कर।

अनाति — VI. iv. 191
(हल् से उत्तर भसञ्ज्ञक अङ्ग के अपत्य-सम्बधी यकार का भी) अनाकारादि (तद्धित) परे रहते (लोप होता है)।

अनात्मनेपदनिमित्ते — VII. ii. 36
(स्नु तथा क्रम् के वलादि आर्धधातुक को इट् आगम होता है, यदि स्नु तथा क्रम्) आत्मनेपद के निमित्त न हों तो।

...अनादरयोः — I. iv. 62
देखें — आदरानादरयोः I. iv. 62

अनादरे — II. iii. 17
अनादर गम्यमान होने पर (मन् धातु के प्राणिवर्जित कर्म में चतुर्थी विभक्ति विकल्प से होती है)।

अनादरे — II. iii. 38
(जिसकी क्रिया से क्रियान्तर लक्षित हो, उसमें) अनादर गम्यमान होने पर (षष्ठी तथा सप्तमी विभक्ति होती है)।

अनादेशादेः — VI. iv. 120
(लिट् परे रहते) जिस अङ्ग के आदि को आदेश नहीं हुआ है, उसके (असहाय हलों के बीच में वर्तमान जो अकार, उसको एकारादेश तथा अभ्यासलोप हो जाता है; कित्, ङित् लिट् परे रहते)।

अनादेशे — VII. ii. 86
(युष्मद् तथा अस्मद् अंग को) आदेशरहित (विभक्ति) परे रहते (आकारादेश होता है)।

अनाध्याने — I. iii. 43
अनाध्यान = उत्कण्ठापूर्वक स्मरण करने अर्थ से भिन्न अर्थ में वर्तमान (सम् तथा प्रति पूर्वक ज्ञा धातु से आत्मनेपद होता है)।

अनाध्याने — I. iii. 67

(अण्यन्तावस्था में जो कर्म, वही यदि ण्यन्तावस्था में कर्ता बन रहा हो तो, ऐसी ण्यन्त धातु से आत्मनेपद होता है) आध्यान = उत्कण्ठा-पूर्वक स्मरण अर्थ को छोड़कर।

अनाम् — VIII. iv. 41

(पदान्त टवर्ग से उत्तर सकार और तवर्ग को षकार और टवर्ग नहीं होता), नाम् को छोड़कर।

...अनायास...— VII. ii. 18

देखें — मन्थमनस्० VII. ii. 18

अनार्तवे — VI. ii. 9

अनार्तवाची अर्थात् ऋतु में न होने वाले (शारद शब्द में) उत्तरपद परे रहते (तत्पुरुष समास में पूर्वपद को प्रकृति-स्वर होता है)।

अनार्षयोः — IV. i. 78

(गोत्र में विहित) ऋष्यपत्य से भिन्न (अण् और इञ् प्रत्ययान्त उपोत्तम गुरुवाले) प्रातिपदिकों को (स्त्रीलिङ्ग में ष्यङ् आदेश होता है)।

अनार्षे — I. i. 16

अवैदिक (इति शब्द) परे रहते (सम्बुद्धिसंज्ञा के निमित्त-भूत ओकारान्त की प्रगृह्य सञ्ज्ञा होती है, शाकल्य आचार्य के अनुसार)।

अनालोचने — III. ii. 60

आलोचन = देखना से भिन्न अर्थ में वर्तमान (दृश् धातु से त्यदादि उपपद रहते कञ् और क्विन् प्रत्यय होते हैं)।

अनालोचने — VIII. i. 25

'न देखना' अर्थ में वर्तमान (ज्ञान अर्थवाले धातुओं के योग में भी युष्मद् अस्मद् शब्दों को पूर्वसूत्रों से प्राप्त वाम् नौ आदि आदेश नहीं होते)।

अनावः — VI. i. 207

(दो अचों वाले यत् प्रत्ययान्त शब्दों को आद्युदात्त होता है), नौ शब्द को छोड़कर।

अनाश्वान् — III. ii. 109

अनाश्वान् = नहीं खाया, शब्द निपातन से सिद्ध होता है।

अनासेवने — VII. iii. 102

(निस् के सकार को तपति परे रहते) अनासेवन = पुनः पुनः न करना अर्थ में (मूर्धन्य आदेश होता है)।

अनास्यविहरणे — I. iii. 20

मुख को खोलने अर्थ से भिन्न अर्थ में (आङ्पूर्वक डुदाञ् धातु से आत्मेनपद होता है)।

अनिः — III. iii. 112

(क्रोधपूर्वक चिल्लाना गम्यमान हो तो नञ् उपपद रहते धातु से, स्त्रीलिङ्ग कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में) अनि प्रत्यय होता है।

अनिगन्तः — VI. ii. 52

इक् अन्त में नहीं है जिसके, ऐसे (गतिसञ्ज्ञक) को (वप्रत्ययान्त अञ्चु धातु के परे रहते प्रकृतिस्वर होता है)।

अनिच् — V. iv. 124

(केवल पूर्वपद से परे जो धर्मशब्द, तदन्त बहुव्रीहि से समासान्त) अनिच् प्रत्यय होता है ।

अनिञः — IV. i. 122

(इकारान्त) इञन्त-भिन्न (द्व्यच्) प्रातिपदिकों से (भी अपत्यार्थ में ढक् प्रत्यय होता है)।

अनिटः — III. 1. 45

इट् रहित जो (शलन्त और इगुपध) धातु, उससे उत्तर (च्लि के स्थान में क्स होता है, लुङ् परे रहते)।

अनिटः — VII. ii. 61

उपदेश में जो (अजन्त धातु, तास् के परे रहते नित्य) अनिट्, उससे उत्तर (तास् के समान ही थल् को इट् आगम नहीं होता)।

अनिटि — VI. i. 182

(स्वपादि धातुओं के तथा हिंस् धातु के अजादि) अनिट् (लसार्वधातुक) परे हो तो (विकल्प से आदि को उदात्त हो जाता है)।

अनिटि — VI. iv. 51

अनिडादि (आर्धधातुक) के परे रहते (णि का विकल्प से लोप होता है)।

अनितिपरम् — I. iv. 61

इति शब्द जिससे परे नहीं है, ऐसा जो (अनुकरणवाची) शब्द, (उसकी भी गति और निपात संज्ञा होती है)।

अनितेः — VIII. iv. 19

(उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर पद के अन्त में वर्त-मान) अन धातु के (नकार को णकार आदेश होता है)।

अनितौ — V. iv. 57

(अव्यक्त शब्द का अनुकरण, जिसमें अर्धभाग दो अच् वाला हो, उससे कृ, भू तथा अस् के योग में डाच् प्रत्यय होता है), यदि इतिशब्द परे न हो तो।

अनित्यसमासे — VI. i. 163

अनित्यसमास = नित्य अधिकार में कहे हुए समास (कुगतिप्रादयः II. ii. 19 आदि) से अन्यत्र (अन्तोदात्त एकाच् उत्तरपद के अनन्तर तृतीयादि विभक्ति विकल्प से उदात्त होती है)।

अनित्ये — III. 1. 127

अनित्य अर्थ में (आनाय्य शब्द आङ् पूर्वक नी धातु से ण्यत् प्रत्यय और आयादेश करके निपातन किया जाता है)।

अनित्ये — V. iv. 31

नित्यधर्मरहित (वर्ण) अर्थ में वर्त्तमान (लोहित प्रातिपदिक से भी स्वार्थ में कन् प्रत्यय होता है)।

अनित्ये — VI. i. 142

अनित्य विषय में (आश्चर्य शब्द में सुट् आगम का निपातन किया जाता है)।

अनिदिताम् — VI. iv. 24

इकार जिसका इत्सञ्ज्ञक नहीं है, ऐसे (हलन्त) अङ्गों की (उपधा के नकार का लोप होता है; कित्, ङित् प्रत्ययों के परे रहते)।

अनिधाने — VI. ii. 192

(नि उपसर्ग से उत्तर उत्तरपद को अन्तोदात्त होता है), प्रकाशन अर्थ में।

अनिरवसितानाम् — II. iv. 10

अनिरवसित = अबहिष्कृत (शूद्रवाची) शब्दों का (द्वन्द्व एकवद् होता है)।

...अनिरोधेषु — III. i. 101

देखें — गर्ह्यपणितव्या० III. i. 101

अनिवसन्तः — VI. ii. 84

(ग्राम शब्द उत्तरपद रहते पूर्वपद को आद्युदात्त होता है, यदि पूर्वपद) निवास करने वाले को न कहता हो तो।

अनिष्ठा — VI. ii. 46

(क्तान्त उत्तरपद रहते कर्मधारय समास में) अनिष्ठा = क्त, क्तवतु से भिन्न अन्त वाले (पूर्वपद को प्रकृतिस्वर हो जाता है)।

अनिष्ठायाम् — VIII. iii. 73

(वि उपसर्ग से उत्तर स्कन्दिर् धातु के सकार को) निष्ठा परे न हो तो (विकल्प से मूर्धन्य आदेश होता है)।

अनीप्सितम् — I. iv. 50

(जिस प्रकार कर्ता का अत्यन्त ईप्सित = चाहा हुआ कारक क्रिया के साथ युक्त होता है, उसी प्रकार कर्त्ता का) न चाहा हुआ (कारक क्रिया के साथ युक्त हो तो उसकी कर्म संज्ञा होती है)।

...अनीयरः — III. i. 96

देखें — तव्यत्तव्यानीयरः III. i. 96

अनु...— I. iii. 21

देखें — अनुसम्परिभ्यः I. iii. 21

अनु...— I. iii. 79

देखें — अनुपराभ्याम् I. iii. 79

अनु...— I. iv. 41

देखें — अनुप्रतिगृणः I. iv. 41

...अनु...— I. iv. 48

देखें — उपान्वध्याङ्वसः I. iv. 48

...अनु...— V. iv. 75

देखें — प्रत्यन्वव० V. iv. 75

अनु...— V. iv. 81

देखें — अन्ववतप्तात् V. iv. 81

अनु...— VIII. iii. 72

देखें — अनुविपर्य० VIII. iii. 72

अनुः — I. iv. 83

अनु शब्द (लक्षण द्योतित हो रहा हो तो कर्मप्रवचनीय और निपातसंज्ञक होता है)।

अनुः — II. 1. 14

(अनु शब्द जिसका समीपवाची हो, उस लक्षणवाची सुबन्त के साथ वह) अनु शब्द (विकल्प से समास को प्राप्त होता है और वह अव्ययीभाव समास होता है)।

अनुक... — V. ii. 74

देखें — अनुकाभिकाभीकः V. ii. 74

अनुकम्पायाम् — V. iii. 76

अनुकम्पा अर्थात् कृपादृष्टि गम्यमान हो तो (प्रातिपदिक से तथा तिङन्त से यथाविहित प्रत्यय होते हैं)।

अनुकरणम् — I. iv. 61

(इतिशब्द जिससे परे नहीं है, ऐसा) अनुकरणवाची शब्द (भी गति और निपातसंज्ञक होता है, क्रियायोग में)।

...अनुकरणस्य — VI. i. 95
देखें — **अव्यक्तानुकरणस्य VI. i. 95**

अनुकाभिकाभीकः — V. ii. 74
('इच्छा करने वाला' अर्थ में) अनुक, अभिक, तथा अभीक शब्दों का निपातन किया जाता है।

...अनुकामम्... — V. ii. 11
देखें— **अवारपारात्यन्ता० V. ii. 11**

अनुगवम् — V. iv. 83
अनुगव शब्द अच्प्रत्ययान्त निपातन किया जाता है, (लम्बाई अभिधेय हो तो) ।

अनुगादिनः — V. iv. 13
अनुगादिन् प्रातिपदिक से (स्वार्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

अनुगुः — V. ii. 15
(द्वितीयासमर्थ) अनुगु प्रातिपदिक से ('पर्याप्त जाता है', अर्थ में ख प्रत्यय होता है)।

अनुज्ञैषणायाम् — VIII. i. 43
अनुमति की इच्छा विषय में (ननु शब्द से युक्त तिङन्त को अनुदात्त नहीं होता)।

अनुतापे — III. i. 65
पश्चात्ताप अर्थ में (तथा कर्मकर्त्ता में तप् धातु से उत्तर च्लि को चिण् आदेश नहीं होता, त शब्द परे रहने पर)।

...अनुत्त... — VIII. ii. 61
देखें — **नसत्तनिषत्ता० VIII. ii. 61**

अनुत्तमम् — VIII. i. 53
(गत्यर्थक धातुओं के लोडन्त से युक्त उपसर्गसहित एवं) उत्तमपुरुषवर्जित (जो लोडन्त तिङन्त, उसे विकल्प करके अनुदात्त नहीं होता, यदि कारक सभी अन्य न हों तो)।

अनुत्तरपदस्थस्य — VIII. iii. 45
जो उत्तरपद में स्थित नहीं है, ऐसे (इस्, उस्) के (विसर्जनीय को समास विषय में नित्य ही षत्व होता है; कवर्ग, पवर्ग परे रहते)।

अनुदके — III. ii. 58
उदक = पानी से भिन्न (सुबन्त) उपपद रहते (स्पृश् धातु से क्विन् प्रत्यय होना है)।

अनुदके — III. iii. 123
उदक विषय न हो तो (पुंल्लिग में उत् पूर्वक अञ्चु धातु से घञ् प्रत्ययान्त उदङ्क शब्द निपातन किया जाता है; अधिकरण कारक में, संज्ञा विषय होने पर)।

अनुदात्त... — I. iii. 12
देखें — **अनुदात्तङितः I. iii. 12**

अनुदात्तः — I. ii. 30
(उच्चारणस्थान के अधोभाग से उच्चारित अच् की) अनुदात्त संज्ञा होती है ।

अनुदात्तः — I. ii. 38
(देव तथा ब्रह्मन् शब्द को स्वरित के स्थान में)अनुदात्त होता है ।

अनुदात्तः — II. iv. 32
(अन्वादेश में वर्त्तमान इदम् के स्थान में) अनुदात्त ('अश्' आदेश) होता है, (तृतीया आदि विभक्ति परे रहते)।

अनुदात्तङितः — I. iii. 92
अनुदात्त जिसका इत्संज्ञक हो उस धातु से तथा ङकार जिसका इत्सञ्ज्ञक हो उस धातु से (आत्मनेपद होता है)।

अनुदात्तम् — VI. i. 152
(जिस एक पद में उदात्त या स्वरित विधान किया है, उसके एक अच् को छोड़कर शेष पद) अनुदात्त अच् वाला हो जाता है ।

अनुदात्तम् — VI. i. 180
(तासि प्रत्यय, अनुदात्तेत् धातु, ङित् धातु तथा उपदेश में जो अवर्णान्त – इनसे उत्तर लकार के स्थान में जो सार्वधातुक प्रत्यय, वे) अनुदात्त होते हैं; (ह्नुङ् तथा इङ् धातु को छोड़कर)।

अनुदात्तम् — VIII. i. 3
(जिसकी आम्रेडित सञ्ज्ञा होती है, वह) अनुदात्त (भी) होता है।

अनुदात्तम् — VIII. i. 18
(यहां से आगे जो कुछ भी कहेगें, वह पाद के आदि में न हो तो सारा) अनुदात्त होता है, (ऐसा जानना चाहिए)।

अनुदात्तम् — VIII. i. 67
(पूजनवाची शब्दों से उत्तर पूजितवाची शब्दों को) अनुदात्त होता है ।

अनुदात्तम् — VIII. ii. 100
(प्रश्नान्त तथा अभिपूजित में विधीयमान प्लुत को) अनुदात्त होता है।

अनुदात्तस्य — VI. i. 58
(उपदेश में) जो अनुदात्त (तथा ऋकार उपधा वाली धातु), उस को (विकल्प से अम् आगम होता है, अकित् झलादि प्रत्यय परे रहते)।

अनुदात्तस्य — VI. i. 155
(जिस अनुदात्त के परे रहते उदात्त का लोप हो, उस) अनुदात्त को (भी आदि उदात्त हो जाता है)।

अनुदात्तस्य — VIII. ii. 4
(उदात्त तथा स्वरित के स्थान में वर्तमान यण् से उत्तर) अनुदात्त के स्थान में (स्वरित आदेश होता है)।

अनुदात्तस्य — VIII. iv. 65
(उदात्त से उत्तर) अनुदात्त को (स्वरित होता है)।

अनुदात्तात् — IV. i. 39
(वर्णवाची अदन्त अनुपसर्जन) अनुदात्तान्त (तकार उपधा वाले) प्रातिपदिकों से (विकल्प से स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय तथा तकार को नकारादेश हो जाता है)।

अनुदात्तात् — VII. ii. 10
(उपदेश में एक अच् वाले तथा) अनुदात्त धातु से उत्तर (इट् का आगम नहीं होता)।

अनुदात्तादेः — IV. ii. 43
(षष्ठीसमर्थ) अनुदात्तादि शब्दों से (समूहार्थ में अञ् प्रत्यय होता है)।

अनुदात्तादेः — IV. iii. 137
(षष्ठीसमर्थ) अनुदात्तादि प्रातिपदिकों से (भी विकार और अवयव अर्थों में अञ् प्रत्यय होता है)।

अनुदात्तादौ— VI. ii. 142
(देवतावाची द्वन्द्व समास में) अनुदात्तादि उत्तरपद रहते (पृथिवी, रुद्र, पूषन्, मन्थी को छोड़कर एक साथ पूर्व तथा उत्तरपद को प्रकृतिस्वर नहीं होता है)।

अनुदात्तानाम् — I. ii. 39
(स्वरित से उत्तर) अनुदात्तों को (संहिता -विषय में एकश्रुति होती है) ।

अनुदात्ते — VI. i. 116
(यजुर्वेद-विषय में कवर्ग तथा धकारपरक) अनुदात्त (अकार) के परे रहते (भी एङ् को प्रकृतिभाव होता है) ।

अनुदात्ते[4]— VI. i. 184
जिसमें उदात्त अविद्यमान है, ऐसे (असार्वधातुक) के परे रहते (भी अभ्यस्तसञ्ज्ञकों के आदि को उदात्त होता है)।

अनुदात्ते — VIII. ii. 6
(पदादि) अनुदात्त के परे रहते (उदात्त के स्थान में हुआ जो एकादेश, वह विकल्प करके स्वरित होता है)।

...अनुदात्तेत्... — VI. i. 180
देखें—तास्यनुदात्तेत्० VI. i. 180

अनुदात्तेतः — III. ii. 149
(हलादि) अनुदात्तेत् धातुओं से (भी तच्छीलादि कर्त्ता हो तो वर्त्तमानकाल में युच् प्रत्यय होता है) ।

अनुदात्तोपदेश... — VI. iv. 37
देखें — अनुदात्तोपदेशवनति० VI. iv. 37

अनुदात्तोपदेशवनतितनोत्यादीनाम् — VI. iv. 37
अनुदात्तोपदेश और जो अनुनासिकान्त, उनके तथा वन एवं तनोति आदि अङ्गों के (अनुनासिक का लोप होता है, झलादि कित् ङित् प्रत्ययों के परे रहते) ।

अनुदात्तौ— II. iv. 33
(अन्वादेश में वर्त्तमान एतद् को त्र और तस् परे रहते अनुदात्त अश् आदेश होता है और वे त्र, तस् प्रत्यय भी) अनुदात्त होते हैं ।

अनुदात्तौ — III. i. 4
(सुप् = स्वादि तथा पित् प्रत्यय) अनुदात्त होते हैं ।

अनुदीचाम् — VI. ii. 89
(नगर शब्द उत्तरपद रहते महत् तथा नव शब्द को छोड़कर पूर्वपद को आद्युदात्त होता है, यदि वह नगर) उदीच्य प्रदेश का न हो तो ।

अनुदेशः — I. iii. 10
(सम सङ्ख्या वाले शब्दों के स्थान में) पीछे आने वाले शब्द (यथाक्रम होते हैं)।

अनुद्यमने — III. ii. 9
अनुद्यमन = पुरुषार्थ सम्पादित न करना अर्थ में वर्त्तमान (हृ धातु से कर्म उपपद रहते अच् प्रत्यय होता है)।

अनुनासिक — VI. iv. 37
(अनुदात्तोपदेश और जो अनुनासिकान्त, उनके तथा वन एवं तनोति आदि अङ्गों के) अनुनासिक का (लोप होता है, झलादि कित्, ङित् प्रत्ययों के परे रहते)।

अनुनासिकः — I. i. 8
(कुछ मुख से तथा कुछ नासिका से अर्थात् दोनों की सहायता से बोले जाने वाले वर्ण की) अनुनासिक संज्ञा होती है।

अनुनासिकः — I. iii. 2
(उपदेश में वर्त्तमान) अनुनासिक (अच् इत्सञ्ज्ञक होता है)।

अनुनासिकः — VI. i. 122
(आङ् को अच् परे रहते संहिता के विषय में बहुल करके) अनुनासिक आदेश होता है (तथा उस अनुनासिक को प्रकृतिभाव भी होता है) ।

अनुनासिकः — VIII. iii. 2
(यहां से आगे जिसको रु विधान करेंगे, उससे पूर्व के वर्ण को विकल्प से) अनुनासिक आदेश होता है, (ऐसा अधिकार इस रुत्व विधान के प्रकरण में समझना चाहिए)।

अनुनासिकः — VIII. iv. 44
(पदान्त यर् प्रत्याहार को अनुनासिक परे रहते विकल्प से) अनुनासिक आदेश होता है ।

अनुनासिकः — VIII. iv. 56
(अवसान में वर्त्तमान प्रगृह्य-सञ्ज्ञक से भिन्न अण् को विकल्प से) अनुनासिक आदेश होता है ।

अनुनासिकस्य — VI. iv. 15
अनुनासिकान्त अङ्ग की (उपधा को दीर्घ होता है, क्विप् तथा झलादि कित्, ङित् प्रत्यय परे रहते) ।

अनुनासिकस्य — VI. iv. 41
(विट् तथा वन् प्रत्यय परे रहते) अनुनासिकान्त अङ्ग को (आकारादेश होता है) ।

अनुनासिकात् — VIII. iii. 4
(रु से पूर्व) अनुनासिक से अन्य वर्ण से (परे अनुस्वार आगम होता है, संहिता में)।

अनुनासिकान्तस्य — VII. iv. 85
अनुनासिकान्त अङ्ग के (अकारान्त अभ्यास को नुक् आगम होता है, यङ् तथा यङ्लुक् परे रहते)।

अनुनासिके — VI. iv. 19
(च्छ् और व् के स्थान में यथासङ्ख्य करके श् और ऊठ् आदेश होता है), अनुनासिकादि (तथा क्विप् और झलादि कित्, ङित्) प्रत्ययों के परे रहते।

अनुनासिके — VIII. iv. 44
(पदान्त यर् प्रत्याहार को) अनुनासिक परे रहते (विकल्प से अनुनासिक आदेश होता है) ।

अनुपद... — V. ii. 9
देखें— अनुपदसर्वान्ना० V. ii. 9

...अनुपदम् — IV. iv. 37
देखें — माथोत्तरपदपदव्य० IV. iv. 37

अनुपदसर्वान्नायानयम् — V. ii. 9
(द्वितीयासमर्थ) अनुपद, सर्वान्न तथा अयानय प्रातिपदिकों से (यथासङ्ख्य करके 'सम्बद्ध', 'खाता है' तथा 'ले जाने योग्य' अर्थों में ख प्रत्यय होता है)।

अनुपदी — V. ii. 90
(अन्वेष्टा = पीछे जाने वाला अर्थ में) अनुपदी शब्द का निपातन किया जाता है ।

अनुपदेशे — I. iv. 69
अनुपदेश = जो स्वयं सोचा जाये, उस विषय में (अदस् शब्द क्रियायोग में गति और निपात संज्ञक होता है)।

अनुपराभ्याम् — I. iii. 79
अनु और परा उपसर्ग से उत्तर (कृञ् धातु से परस्मैपद होता है)।

अनुपसर्गम् — VI. ii. 154
(तृतीयान्त से परे) उपसर्गरहित (मिश्र शब्द उत्तरपद को भी अन्तोदात्त होता है, असन्धि गम्यमान होने पर)।

अनुपसर्गम् — VIII. i. 44
(क्रिया के प्रश्न में वर्त्तमान किम् शब्द से युक्त) उपसर्ग से रहित (तथा प्रतिषेधरहित तिङन्त को अनुदात्त नहीं होता)।

अनुपसर्गस्य — III. iii. 75
उपसर्गरहित (ह्वेञ् धातु) से (भाव में अप् प्रत्यय तथा सम्प्रसारण हो जाता है)।

अनुपसर्गात् — I. iii. 43
उपसर्गरहित (क्रम् धातु) से (विकल्प से आत्मनेपद होता है)।

अनुपसर्गात् — I. iii. 76
उपसर्गरहित (ज्ञा धातु) से (आत्मनेपद होता है, यदि क्रिया का फल कर्त्ता को मिलना हो तो)।

अनुपसर्गात् — III. i. 71
उपसर्गरहित (यसु धातु) से (विकल्प से श्यन् प्रत्यय होता है, कर्तृवाची सार्वधातुक परे रहते)।

अनुपसर्गात् — III. i. 138
उपसर्गरहित (लिम्प, विन्द, धारि, पारि, वेदि, उदेजि, चेति, साति और साहि) धातु से (भी श प्रत्यय होता है)।

अनुपसर्गात् — VIII. ii. 55
उपसर्ग से उत्तर न होने पर (फुल्ल, क्षीब, कृश तथा उल्लाघ शब्द निपातन किये जाते हैं)।

अनुपसर्गे — III. i. 100
उपसर्गरहित (गद, मद, चर और यम् धातुओं से भी यत् प्रत्यय होता है)।

अनुपसर्गे — III. i. 142
उपसर्गरहित (दु और नी धातुओं से 'ण' प्रत्यय होता है)।

अनुपसर्गे — III. ii. 3
उपसर्गरहित (आकारान्त धातु से कर्म उपपद रहते क प्रत्यय होता है)।

अनुपसर्गे — III. iii. 24
उपसर्गरहित (श्रि, णी तथा भू धातुओं से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

अनुपसर्गे — III. iii. 61
उपसर्गरहित (व्यध् तथा जप् धातुओं से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में अप् प्रत्यय होता है)।

अनुपसर्गे — III. iii. 67
उपसर्गरहित (मद् धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में अप् प्रत्यय होता है)।

अनुपसर्जनात् — IV. i. 14
(यहाँ से आगे 'दैवयज्ञिशौचि॰' IV. i. 81 तक कहे जाने वाले प्रत्यय) अनुपसर्जन = प्रधान प्रातिपदिक से (हुआ करेंगे)।

अनुपाख्ये — VI. iii. 79
(अप्रधान) अनुमेय के उत्तरपद रहते (भी सह को स आदेश होता है)।

अनुपात्यये — III. iii. 38
(परिपूर्वक इण् धातु से) क्रम या परिपाटी गम्यमान होने पर (कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

...अनुपूर्वम् — IV. iv. 28
देखें — प्रत्यनुपूर्वम् IV. iv. 28

...अनुपूर्वात् — IV. iii. 61
देखें — पर्यनुपूर्वात् IV. iii. 61

अनुप्रतिगृणः — I. iv. 41
अनु एवं प्रतिपूर्वक गृणाति धातु के प्रयोग में (पूर्व का जो कर्ता, ऐसे कारक की भी सम्प्रदान संज्ञा होती है)।

अनुप्रयुज्यते — III. i. 40
(आम्प्रत्यय के पश्चात् लिट्-परक कृञ् का भी) बाद में प्रयोग होता है।

अनुप्रयोगः — III. iv. 4
(पूर्व के लोट् विधायक सूत्रों के द्वारा जिस धातु से लोट् का विधान किया हो, उसके पश्चात् उसी धातु का) बाद में प्रयोग होता है।

अनुप्रयोगः — III. iv. 46
(कषादि धातुओं में यथाविधि) अनुप्रयोग होता है अर्थात् जिस धातु से णमुल् का विधान करेंगे, उसका ही पश्चात् प्रयोग होता है।

अनुप्रयोगस्य — I. iii. 63
(जिस धातु से आम् प्रत्यय किया गया है, उससे आम् प्रत्यय के समान ही) पश्चात् प्रयोग की गई (कृ धातु) से (आत्मनेपद हो जाता है)।

अनुप्रवचनादिभ्यः — V. i. 110
(प्रयोजन समानाधिकरणवाची प्रथमासमर्थ) अनुप्रवचनादि प्रातिपदिकों से (षष्ठ्यर्थ में छ प्रत्यय होता है)।

अनुब्राह्मणात् — IV. ii. 67
(द्वितीयासमर्थ) अनुब्राह्मण प्रातिपदिक से ('अधीते' और 'वेद' अर्थों में इनि प्रत्यय होता है)।

अनुभवति — V. ii. 10
(द्वितीयासमर्थ परोवर, परम्पर तथा पुत्रपौत्र प्रातिपदिकों से) 'अनुभव करता है' अर्थ में (ख प्रत्यय होता है)।

अनुमः — VI. i. 167
नुम्‌रहित (अन्तोदात्त शतृप्रत्ययान्त) शब्द से परे (नदीसञ्ज्ञक प्रत्यय तथा अजादि सर्वनामस्थानभिन्न विभक्ति को उदात्त होता है)।

...अनुयाजौ — VII. iii. 62
देखें — प्रयाजानुयाजौ VII. iii. 62

अनुयोगे — VIII. ii. 94
(निग्रह करने के पश्चात्) अनुयोग = जिस पक्ष से वह निगृहीत हुआ है, उसी मत का शब्दों द्वारा प्रकाश करना अर्थ में वर्तमान (जो वाक्य, उसकी टि को भी विकल्प से प्लुत उदात्त होता है)।

...अनुराधा ... — IV. iii. 34
देखें — श्रविष्ठाफल्गुन्यनु॰ IV. iii. 34

...अनुरुध... — III. ii. 142
देखें — सम्पृचानुरुधा॰ III. ii. 142

....अनुवाकयोः — V. ii. 60
देखें — अध्यायानुवाकयोः V. ii. 60

अनुवादे — II. iv. 3
(चरणवाचियों का जो द्वन्द्व, उसको) अनुवाद = अन्य प्रमाणों से ज्ञात अर्थ का शब्द से कथनमात्र गम्यमान होने पर (एकवद्भाव हो जाता है)।

अनुविपर्यभिनिभ्यः — VIII. iii. 72
अनु, वि, परि, अभि तथा नि उपसर्गों से उत्तर (स्यन्दू धातु के सकार को मूर्धन्य आदेश होता है, यदि प्राणी का कथन न हो रहा हो तो)।

अनुशतिकादीनाम् — VII. iii. 10
अनुशतिक इत्यादि अङ्गों के (पूर्वपद तथा उत्तरपद दोनों के अचों में आदि अच् को भी ञित् णित् अथवा कित् तद्धित परे रहते वृद्धि होती है)।

अनुसमुद्रम् — IV. iii. 10
समुद्र के समीप अर्थ में वर्तमान (जो द्वीप, उससे शैषिक यञ् प्रत्यय होता है)।

अनुसम्परिभ्यः — I. iii. 21
अनु, सम्, परि (तथा आङ्) उपसर्ग से उत्तर (क्रीड् धातु से आत्मेनपद होता है)।

...अनुस्वार... — I. i. 57
देखें — पदान्तद्विर्वचनवरेयलोप० I. i. 57

अनुस्वारः — VIII. iii. 4
(रु से पूर्व वर्ण, जो अनुनासिक से भिन्न है, उससे परे) अनुस्वार आगम होता है, (संहिता में)।

अनुस्वारः — VIII. iii. 23.
(पदान्त मकार को) अनुस्वार आदेश होता है, (हल् परे रहते, संहिता में)।

अनुस्वारस्य — VIII. iv. 57
अनुस्वार को (यय् प्रत्याहार परे रहते परसवर्ण आदेश होता है)।

...अनूङ् — VI. iii. 33
(एक ही अर्थ में अर्थात् एक ही प्रवृत्तिनिमित्त को लेकर कहा है पुँल्लिग अर्थ को जिस शब्द ने, ऐसे) ऊङ्-वर्जित (भाषितपुंस्क स्त्री) शब्द के स्थान पर (पुँल्लिङ्गवाची शब्द के समान रूप हो जाता है)।

अनूचानः — III. ii. 108
अनूचान(= कहा) शब्द निपातन से सिद्ध होता है।

अनूर्ध्वकर्मणि — I. iii. 24
अनूर्ध्वकर्म(= ऊपर उठने) अर्थ में वर्त्तमान न हो तो (उत् पूर्वक स्था धातु से आत्मनेपद होता है)।

अनृच्छः — III. i. 36
ऋच्छवर्जित (इजादि, गुरुमान् धातुओं) से (आम् प्रत्यय होता है, लौकिक विषय में, लिट् परे रहते)।

अनृतः — VIII. ii. 86
ऋकार को छोड़कर (वाक्य के अन्त्य गुरुसञ्ज्ञक वर्ण को एक-एक करके तथा अन्त्य के टि को भी प्राचीन आचार्यों के मत में प्लुत उदात्त होता है)।

अनृषि — IV. i. 104
(षष्ठीसमर्थ बिदादि प्रातिपदिकों से गोत्रापत्य में अञ् प्रत्यय होता है, परन्तु इनमें) जो अनृषिवाची है, उनसे (अनन्तरापत्य में अञ् होता है)।

अनेकम् — II. ii. 24
(अन्य पदार्थ में वर्तमान) अनेक (सुबन्त परस्पर समास को विकल्प से प्राप्त होते हैं और वह समास बहुव्रीहि सञ्ज्ञक होता है)।

अनेकम् — VIII. i. 35
(हि से युक्त साकाङ्क्ष) अनेक (तिङन्तों) को (भी तथा अपि ग्रहण से एक को भी कहीं-कहीं अनुदात्त नहीं होता, वेद विषय में)।

अनेकाचः — VI. iii. 42
(भाषितपुंस्क शब्द से उत्तर ङ्यन्त) अनेकाच् शब्द को (ह्रस्व हो जाता है; घ, रूप, कल्प, चेलट्, बुव, गोत्र, मत तथा हत शब्दों के परे रहते)।

अनेकाचः — VI. iv. 82
(धातु का अवयव जो संयोग, वह पूर्व नहीं है जिस इवर्ण के, तदन्त) अनेक अच् वाले अङ्ग को (अच् परे रहते यणादेश होता है)।

अनेकाल्... — I. i. 54
देखें — अनेकाल्शित् I. i. 54

अनेकाल्शित् — I. i. 54
अनेकालादेश तथा शिदादेश (सम्पूर्ण षष्ठीनिर्दिष्ट के स्थान में होता है)।

अनेते — VI. ii. 3
(वर्णवाची शब्द के उत्तरपद में रहते वर्णवाची पूर्वपद को प्रकृतिस्वर हो जाता है), एत शब्द उत्तरपद में न हो तो।

अनेन — V. ii. 85
(भुक्त क्रिया के समानाधिकरण वाले प्रथमासमर्थ श्राद्ध प्रातिपदिक से) 'इसके द्वारा' अर्थ में (इनि और ठन् प्रत्यय होते हैं)।

...अनेहसाम् — VII. i. 94
देखें — ऋदुशनस्० VII. i. 94

अनोः — I. iii. 49
अनु उपसर्ग से उत्तर (अकर्मक वद् धातु से व्यक्त वाणी वालों के एक साथ उच्चारण करने अर्थ में आत्मनेपद होता है)।

अनोः — I. iii. 58
अनु उपसर्ग से उत्तर (सन्नन्त ज्ञा धातु से आत्मनेपद नहीं होता है)।

अनोः — VI. ii. 189
अनु उपसर्ग से उत्तर (अप्रधानवाची उत्तरपद को तथा कनीयस् शब्द को अन्तोदात्त होता है)।

अनोः — VI. iii. 97
अनु से उत्तर (अप् शब्द को ऊकारादेश होता है, देश को कहने में)।

अनोत्परः — VIII. iv. 27
(उपसर्ग में स्थित निमित से उत्तर) जो ओकार से परे नहीं है, ऐसे (नस् के नकार) को (णकारादेश होता है)।

अनोश्मायःसरसाम् — V. iv. 94
अनस्, अश्मन्, अयस् तथा सरस् शब्दान्त (तत्पुरुष समास) से (समासान्त टच् प्रत्यय होता है, जाति तथा संज्ञा विषय में)।

अनौ — III. ii. 100
अनु उपसर्ग पूर्वक ('जन्' धातु से कर्म उपपद रहते 'ड' प्रत्यय होता है, भूतकाल में)।

अनौत्तराधर्ये — III. iii. 42
एकधर्मान्वित (संघ) वाच्य हो तो (भी चिञ् धातु से घञ् प्रत्यय होता है तथा आदि चकार को ककारादेश होता है, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में)।

...अन्त... — III. ii. 21
देखें — दिवाविभा० III. ii. 21

अन्त... — III. ii. 48
देखें — अन्तात्यन्ता० III. ii. 48

...अन्त... — VI. iv. 55
देखें — आमन्ता० VI. iv. 55

अन्तः — I. iv. 64
(अपरिग्रह = न स्वीकार करने अर्थ में वर्तमान) अन्तर् शब्द (क्रियायोग में गति और निपात संज्ञक होता है)।

अन्तः ... — V. iv. 117
देखें — अन्तर्बहिर्ध्याम् V. iv.117

अन्तः — VI. i. 153
('कृष् विलेखने' धातु तथा आकारवान् घञन्त शब्द के) अन्त को (उदात्त होता है)।

अन्तः — VI. i. 190
(सेट् थल् परे रहते इट् को विकल्प से उदात्त होता है; एवं चकार से आदि और) अन्त को (विकल्प से होता है)।

अन्तः — VI. i. 213
(अवती शब्दान्त को सञ्ज्ञाविषय में) अन्त (उदात्त होता है)।

अन्तः — VI. ii. 51
(तवै प्रत्यय को) अन्त (उदात्त भी होता है, तथा अव्यवहित पूर्वपद गति को भी प्रकृतिस्वर एक साथ होता है)।

अन्तः — VI. ii. 92
(VI. ii. 109 तक पूर्वपद के) अन्त को (उदात्त होता है, यह अधिकार सूत्र है)।

अन्तः — VI. ii. 143
(यहाँ से आगे पाद की समाप्तिपर्यन्त सर्वत्र समास के उत्तरपद का) अन्त (उदात्त होगा, यह अधिकार है)।

अन्तः — VI. ii. 179
अन्तर् शब्द से उत्तर (वन शब्द को अन्तोदात्त होता है)।

अन्तः — VI. ii. 180
(उपसर्ग से उत्तर उत्तरपद) अन्त शब्द को (भी अन्तोदात्त होता है)।

...अन्तः ... — VI. iii. 96
देखें — द्व्यन्तरुपसर्गेभ्यः VI. iii. 96

अन्तः — VII. i. 3
(प्रत्यय के अवयव झ् के स्थान में) अन्त् आदेश होता है।

...अन्तः ... — VIII. iv. 5
देखें — प्रनिरन्तः० VIII. iv. 5

अन्तः — VIII. iv. 19
(उपसर्ग में स्थित निमित से उत्तर पद के) अन्त में वर्तमान (अन् धातु के नकार को णकार आदेश होता है)।

अन्तः — VIII. iv. 23
अन्तर् शब्द से उत्तर (अकार पूर्ववाले हन् धातु के नकार को णकारादेश होता है, देश को न कहा जा रहा हो तो)।

अन्तःपादम् — VI. i. 111
पाद के मध्य में वर्तमान (अकार के परे रहते एङ् को प्रकृतिभाव हो जाता है)।

अन्तःपादम् — VIII. iii. 103
(इण् तथा कवर्ग से उत्तर सकार को तकारादि युष्मद्, तत् तथा ततक्षुस् परे रहते मूर्धन्यादेश होता है, यदि वह सकार) पाद के मध्य में वर्तमान हो तो ।

अन्तःपूर्वपदात् — IV. iii. 60
अन्तः शब्द पूर्वपद में है जिसके, ऐसे (सप्तमीसमर्थ अव्ययीभावसंज्ञक) प्रातिपदिक से (भवार्थ में ठञ् प्रत्यय होता है)।

अन्तरतमः — I. i. 49
(स्थान में प्राप्त होने वाले आदेशों में) सर्वाधिक सादृश्य वाला (आदेश होवे)।

अन्तरम् — I. i. 35
(बहिर्योग = बाह्य तथा उपसंव्यान = वस्त्र गम्यमान होने पर) अन्तर शब्द की (जस् सम्बन्धी कार्य में विकल्प करके सर्वनाम संज्ञा होती है) ।

अन्तरम् — VI. ii. 166
(व्यवधायकवाची शब्द से उत्तर) अन्तर शब्द को (बहुव्रीहि समास में अन्तोदात्त होता है)।

...अन्तरयोः — III. ii. 179
देखें — **संज्ञान्तरयोः III. ii. 179**

अन्तरा... — II. iii. 4
देखें — **अन्तरान्तरेणयुक्ते II. iii. 4**

अन्तरान्तरेणयुक्ते — II. iii. 4
अन्तरा और अन्तरेण शब्दों के योग में (द्वितीया विभक्ति होती है)।

अन्तराले — II. ii. 26
अन्तराल = बीच का हिस्सा वाच्य होने पर (दिशा के नामवाची सुबन्तों का परस्पर विकल्प से समास होता है और वह बहुव्रीहि समास होता है)।

...अन्तरेणयुक्ते — II. iii. 4
देखें — **अन्तरान्तरेणयुक्ते II. iii. 4**

अन्तर्घनः — III. iii. 78
(देश अभिधेय हो तो कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में) अन्तर्घन शब्द में अन्तर् पूर्वक हन् धातु से अप् प्रत्यय तथा हन को घन आदेश निपातन किया जाता है।

अन्तर्द्धौ — I. iv. 28
व्यवधान के कारण (जिससे अपना छिपना चाहता हो, उस कारक की अपादान संज्ञा होती है)।

अन्तर्द्धौ — I. iv. 60
व्यवधान अर्थ में (तिरः शब्द की क्रिया के योग में गति और निपात संज्ञा होती है)।

अन्तर्बहिर्भ्याम् — V. iv. 117
अन्तर् तथा बहिस् शब्दों से उत्तर (भी जो लोमन् शब्द, तदन्त बहुव्रीहि से समासान्त अप् प्रत्यय होता है)।

अन्तर्वत्... — IV. i. 32
देखें — **अन्तर्वत्पतिवतोः IV. i. 32**

अन्तर्वत्पतिवतोः — IV. i. 32
अन्तर्वत् और पतिवत् शब्दों से (स्त्रीलिंग में ङीप् प्रत्यय होता है तथा उसके सन्नियोग से नुक् आगम भी हो जाता है)।

...अन्तवचनेषु — II. i. 6
देखें — **विभक्तिसमीपसमृद्धि० II. i. 6**

अन्तस्य — VII. ii. 2
(अकार के) समीप वाले (रेफान्त तथा लकारान्त) अङ्ग के (अकार के स्थान में ही वृद्धि होती है, परस्मैपदपरक सिच् के परे रहते)।

अन्तात्यन्ताध्वदूरपारसर्वानन्तेषु — III. ii. 48
अन्त, अत्यन्त, अध्व, दूर, पार, सर्व, अनन्त (कर्मों) के उपपद रहते (गम् धातु से ड प्रत्यय होता है)

अन्तादिवत् — VI. i. 82
('एकः पूर्वपरयोः' के अधिकार में जो पूर्व पर को एकादेश कहा है, वह एकादेश) पूर्व से कार्य पड़ने पर पूर्व के अन्त के समान माना जाये, तथा पर से कार्य पड़ने पर पर के आदि के समान माना जाये।

...अन्तिक... — II. i. 38
देखें — **स्तोकान्तिकदूरार्थ० II. i. 38**

अन्तिक... — V. iii. 63
देखें — **अन्तिकबाढयोः V. iii. 63**

अन्तिकबाढयोः — V. iii. 63
अन्तिक तथा बाढ शब्दों को (यथासङ्ख्य करके नेद तथा साध आदेश होते हैं, अजादि अर्थात् इष्ठन्, ईयसुन् प्रत्यय के परे रहते)।

...अन्तिकार्थेभ्यः — II. iii. 35
देखें — **दूरान्तिकार्थेभ्यः II. iii. 35**

अन्तिकार्थैः — II. iii. 34
देखें — दूरान्तिकार्थैः II. iii. 34

अन्ते — VIII. ii. 29
(पद के) अन्त में (तथा झल् परे रहते संयोग के आदि के सकार तथा ककार का लोप होता है)।

अन्ते — VIII. ii. 39
(पद के) अन्त में (झलों को जश् आदेश होता है)।

...अन्तेवासि... — VI. ii. 69
देखें — गोत्रान्तेवासि० VI. ii. 69

अन्तेवासिनि — VI. ii. 104
(आचार्य है उपसर्जन जिसका, ऐसा) जो अन्तेवासी= शिष्य, उसको कहने वाले शब्द के परे रहते (भी दिशा अर्थ में प्रयुक्त होने वाले पूर्वपद शब्दों को अन्तोदात्त होता है)।

...अन्तेवासिषु — IV. iii. 129
देखें — दण्डमाणवान्तेवासिषु IV. iii. 129

अन्तेवासी — VI. ii. 36
(आचार्य है अप्रधान जिसमें, ऐसे) शिष्यवाची शब्दों का (जो द्वन्द्व, उनके पूर्वपद को प्रकृतिस्वर होता है)।

अन्तोदात्तात् — IV. i. 52
(बहुव्रीहि समास में भी जो क्तान्त) अन्तोदात्त प्रातिपदिक, उससे (स्त्रीलिंग में ङीप् प्रत्यय होता है)।

अन्तोदात्तात् — IV. ii. 108
(बहुत अच् वाले उत्तर दिशा में स्थित ग्रामवाची) अन्तोदात्त प्रातिपदिकों से (भी अञ् प्रत्यय होता है)।

अन्तोदात्तात् — IV. iii. 67
(व्याख्यान और भव अर्थों में षष्ठी और सप्तमीसमर्थ बहुत अच् वाले) अन्तोदात्त (व्याख्यातव्य नाम) प्रातिपदिकों से (ठञ् प्रत्यय होता है)।

अन्तोदात्तात् — VI. i. 163
(अनित्य समास में) अन्तोदात्त (एकाच् उत्तरपद) से उत्तर (तृतीयादि विभक्ति विकल्प से उदात्त होती है)।

...अन्तौ — I. i. 45
देखें — आद्यन्तौ I. i. 45

अन्त्यम् — I. iii. 3
(उपदेश में वर्तमान) अन्तिम (हल्, इत्सञ्ज्ञक होता है)।

अन्त्यस्य — I. i. 51
(षष्ठीनिर्दिष्ट आदेश) अन्त्य (अल्) के स्थान में होता है।

अन्त्यस्य — VI. i. 16
(आम्रेडित सञ्ज्ञक जो अव्यक्तानुकरण का अत् शब्द, उसे इति परे रहते पररूप एकादेश नहीं होता, किन्तु) जो (उस आम्रेडित का) अन्तिम (नकार), उसको (विकल्प से पररूप एकादेश होता है, संहिता के विषय में)।

अन्त्यात् — I. i. 46
(अचों में) जो अन्तिम अच्, उससे (परे मिदागम होता है) ।

अन्त्यात् — I. i. 64
अन्तिम (अल्) से (पूर्व जो अल् उसकी उपधा संज्ञा होती है) ।

अन्त्यात् — VI. ii. 83
('ज' उत्तरपद रहते बहुत अच् वाले पूर्वपद के) अन्तिम अक्षर से (पूर्व को उदात्त होता है)।

अन्त्यात् — VI. ii. 174
(नञ् तथा सु से उत्तर बहुव्रीहि समास में) अन्तिम से (पूर्व को उदात्त होता है)।

अन्त्यादि — I. i. 63
(अचों में) जो अन्तिम अच् , वह है आदि में जिस समुदाय के, (उस समुदाय की टि संज्ञा होती है)।

अन्त्येन — I. i. 70
(आदि वर्ण) अन्तिम (इत्संज्ञक वर्ण) के साथ (मिलकर दोनों के मध्य में स्थित वर्णों का तथा अपने स्वरूप का भी ग्रहण कराता है)।

...अन्ध... — III. ii. 56
देखें — आढ्यसुभग० III. ii. 56

...अन्धक... — IV. i. 114
देखें — ऋष्यन्धकवृष्णि० IV. i. 114

अन्धक... — VI. ii. 34
देखें — अन्धकवृष्णिषु VI. ii. 34

अन्धकवृष्णिषु — VI. ii. 34
(क्षत्रियवाची जो बहुवचनान्त शब्द, उनका द्वन्द्व) यदि अन्धक तथा वृष्णि वंश को कहने में वर्तमान हो तो (पूर्वपद को प्रकृतिस्वर होता है)।

...अन्येभ्यः — V. iv. 78
देखें — अवसमन्धेभ्यः V. iv. 78

अन्नम् — V. ii. 82

(प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से सप्तम्यर्थ में कन् प्रत्यय होता है, यदि वह प्रथमासमर्थ बहुल करके, सञ्ज्ञाविषय में) अन्नविषयक हो तो ।

अन्नात् — IV. iv. 85

(द्वितीयासमर्थ) अन्न प्रातिपदिक से (प्राप्त करने वाला कहना हो तो ण प्रत्यय होता है)।

अन्नेन — II. i. 33

अन्नवाची (समर्थ सुबन्त) के साथ (तृतीयान्त व्यञ्जन-वाची सुबन्त विकल्प से समास को प्राप्त होता है और वह तत्पुरुष समास होता है)।

अ़न्य... — II. iii. 29

देखें — **अन्यारादितरर्तेदिक्छब्दा० II. iii. 29**

...अन्य... — V. iii. 15

देखें — **सर्वैकान्य० V. iii. 15**

अन्यतः — IV. i. 40

तकारोपध वर्णवाची प्रातिपदिकों से अन्य जो (वर्णवाची अदन्त अनुदात्तान्त) प्रातिपदिक, उनसे (स्त्रीलिंग में ङीष् प्रत्यय होता है)।

अन्यतरस्याम् — I. ii. 21

(उकार उपधा वाली धातु से परे भाववाच्य एवं आदि-कर्म में वर्तमान सेट् निष्ठा प्रत्यय) विकल्प करके (कित् नहीं होता है)।

अन्यतरस्याम् — I. ii. 58

(जाति को कहने में एकत्व को) विकल्प से (बहुत्व हो जाता है)।

अन्यतरस्याम् — I. ii. 69

(नपुंसकलिंग शब्द नपुंसकलिंग-भिन्न शब्दों के साथ, अर्थात् पुंल्लिग शब्दों के साथ शेष रह जाता है, तथा स्त्रीलिंग पुंल्लिग शब्द हट जाते है, एवं उस नपुंसकलिंग शब्द को एकवत् कार्य भी) विकल्प करके हो जाता है, (यदि उन शब्दों में नपुंसक गुण एवं अनपुंसक गुण का ही वैशिष्ट्य हो, शेष प्रकृति आदि समान ही हो)।

अन्यतरस्याम् — I. iv. 44

(परिक्रियण में जो साधकतम कारक, उसकी) विकल्प से (सम्प्रदान संज्ञा होती है)।

अन्यतरस्याम् — I. iv. 53

(हृञ् तथा कृञ् धातु का अण्यन्तावस्था का जो कर्ता, वह ण्यन्तावस्था में) विकल्प से (कर्मसंज्ञक होता है)।

अन्यतरस्याम् — II. ii. 3

(द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ तथा तुर्य सुबन्त एकाधिकरण-वाची एकदेशी सुबन्त के साथ) विकल्प से (समास को प्राप्त होता है और वह तत्पुरुष समास होता है)।

अन्यतरस्याम् — II. ii. 21

(उपदंशस्तृतीयायाम् III. iv. 47 से लेकर अन्वच्या-नुलोम्ये III. iv. 64 तक जितने उपपद हैं, वे अमन्त अव्यय के साथ ही) विकल्प से (तत्पुरुष समास को प्राप्त होते है)।

अन्यतरस्याम् — II. iii. 22

(सम् पूर्वक ज्ञा धातु के अनभिहित कर्मकारक में) विकल्प से (तृतीया विभक्ति होती है)।

अन्यतरस्याम् — II. iii. 32

(पृथक्, विना, नाना — इन शब्दों के योग में) विकल्प से (तृतीया विभक्ति होती है, पक्ष में पञ्चमी भी होती है)।

अन्यतरस्याम् — II. iii. 34

(दूरार्थक और अन्तिकार्थक शब्दों के योग में) विकल्प से (षष्ठी विभक्ति होती है, पक्ष में पञ्चमी भी)।

अन्यतरस्याम् — II. iii. 72

(तुला और उपमा-वर्जित तुल्यार्थक शब्दों के योग में) विकल्प से (तृतीया विभक्ति होती है, पक्ष में षष्ठी भी)।

अन्यतरस्याम् — II. iv. 40

(अद् को घस्लृ आदेश) विकल्प से (होता है, लिट् परे रहते)।

अन्यतरस्याम् — II. iv. 44

(आत्मनेपद में हन् के स्थान में) विकल्प से (ही वधादेश होता है, लुङ् लकार में)।

अन्यतरस्याम् — II. iv. 69

(उपकादि शब्दों से परे गोत्र में विहित जो तत्कृत बहु-वचन प्रत्यय, उसका लुक्) विकल्प से (होता है, द्वन्द्व और अद्वन्द्व समास में)।

अन्यतरस्याम् — III. i. 39

(उष, विद तथा जागृ धातुओं से) विकल्प से (अमन्त्र विषय में लिट् परे रहते आम् प्रत्यय होता है)।

अन्यतरस्याम् — III. i. 41

(विदाङ्कुर्वन्तु — यह रूप लोट् के प्रथम पुरुष बहुवचन में) विकल्प से (निपातन किया जाता है)।

अन्यतरस्याम् – III. i. 54
(लिप, सिच तथा ह्वेञ् धातुओं से कर्तृवाची लुङ् आत्मनेपद परे रहने पर) विकल्प से (च्लि के स्थान में अङ् आदेश होता है)।

अन्यतरस्याम् – III. i. 61
(दीप, जन, बुध, पूरि, तायृ तथा ओप्यायी धातुओं से उत्तर च्लि के स्थान में चिण् आदेश) विकल्प से (हो जाता है, कर्तृवाची लुङ् त शब्द परे रहते)।

अन्यतरस्याम् – III. i. 75
(अक्षू धातु से) विकल्प से (श्नु प्रत्यय होता है, कर्तृवाची सार्वधातुक परे रहने पर)।

अन्यतरस्याम् – III. i. 122
(अमावस्या शब्द में अमापूर्वक वस् धातु से काल अधिकरण में ण्यत् परे रहते) विकल्प से (वृद्धि का निपातन किया गया है)।

अन्यतरस्याम् – III. iv. 3
(समुच्चीयमान क्रियाओं को कहने वाली धातु से लोट् प्रत्यय) विकल्प से (होता है और उस लोट् के स्थान में हि और स्व आदेश होते है, पर त और ध्वम् स्थानी लोट् को विकल्प से हि, स्व आदेश होते हैं)।

अन्यतरस्याम् – III. iv. 32
(वर्षा का प्रमाण गम्यमान हो तो कर्म उपपद रहते ण्यन्त पूरी धातु से णमुल् प्रत्यय होता है तथा इस पूरी धातु के ऊकार का लोप) विकल्प से (होता है)।

अन्यतरस्याम् – IV. i. 8
(पादन्त प्रातिपदिक से स्त्रीलिंग में) विकल्प से (ङीप् प्रत्यय होता है)।

अन्यतरस्याम् – IV. i. 13
(दोनों से अर्थात् ऊपर कहे गये मन्नन्त प्रातिपदिकों से तथा बहुव्रीहि समास में जो अन्नन्त प्रातिपदिक, उनसे) विकल्प से (डाप् प्रत्यय होता है)।

अन्यतरस्याम् – IV. i. 24
(प्रमाण अर्थ में वर्तमान जो पुरुष शब्द, तदन्त अनुपसर्जन द्विगुसंज्ञक प्रातिपदिक से तद्धित का लुक् होने पर स्त्रीलिङ्ग में) विकल्प से (ङीप् प्रत्यय नहीं होता है)।

अन्यतरस्याम् – IV. i. 28
(अन्नन्त जो उपधालोपी बहुव्रीहिसमास, उससे स्त्रीलिङ्ग में) विकल्प से (ङीप् प्रत्यय होता है)।

अन्यतरस्याम् – IV. i. 81
(दैवयज्ञि आदि शब्दों से स्त्रीलिङ्ग में ष्यङ् प्रत्यय) विकल्प से (होता है)।

अन्यतरस्याम् – IV. i. 91
(प्राग्दीव्यतीय अजादि प्रत्यय की विवक्षा में युवापत्य फक् और फिञ् का) विकल्प से (लुक् होता है)।

अन्यतरस्याम् – IV. i. 103
(षष्ठीसमर्थ द्रोणादि प्रातिपदिकों से गोत्रापत्य में) विकल्प से (फक् प्रत्यय होता है)।

अन्यतरस्याम् – IV. i. 140
(अविद्यमानपूर्वपद वाले कुल शब्द से) विकल्प से (यत् और ढकञ् प्रत्यय होते हैं, पक्ष में ख)।

अन्यतरस्याम् – IV. i. 159
(गोत्र से भिन्न वृद्धसंज्ञक पुत्रान्त प्रातिपदिक से पूर्वसूत्र से विहित जो फिञ् प्रत्यय, उसके परे रहने पर) विकल्प से (कुक् प्रत्यय होता है)।

अन्यतरस्याम् – IV. ii. 18
(सप्तमीसमर्थ उदश्वित् प्रातिपदिक से 'संस्कृतं भक्षाः' अर्थ में) विकल्प से (ठक् प्रत्यय होता है, पक्ष में अण्)।

अन्यतरस्याम् – IV. ii. 47
(षष्ठीसमर्थ केश तथा अश्व प्रातिपदिकों से समूहार्थ में यथासङ्ख्य) विकल्प से (यञ् तथा छ प्रत्यय होते हैं, पक्ष में ठक्)।

अन्यतरस्याम् – IV. ii. 104
(ऐषमस्, ह्यस् तथा श्वस् प्रातिपदिकों से) विकल्प से (त्यप् प्रत्यय होता है)।

अन्यतरस्याम् – IV. iii. 1
(युष्मद् तथा अस्मद् शब्दों से खञ् तथा चकार से छ प्रत्यय) विकल्प से (होते हैं, पक्ष में औत्सर्गिक अण् होता है)।

अन्यतरस्याम् – IV. iii. 46
(सप्तमीसमर्थ ग्रीष्म तथा वसन्त कालवाची प्रातिपदिकों से 'बोध हुआ' अर्थ में वुञ् प्रत्यय) विकल्प से (होता है)।

अन्यतरस्याम् – IV. iii. 64
(सप्तमीसमर्थ वर्गान्त प्रातिपदिक से अशब्द प्रत्ययार्थ अभिधेय होने पर भव अर्थ में) विकल्प से (यत् तथा ख प्रत्यय होते है)।

अन्यतरस्याम् — IV. iii. 81
(पञ्चमीसमर्थ हेतु तथा मनुष्यवाची प्रातिपदिकों से 'आगत' अर्थ में) विकल्प से (रूप्य प्रत्यय होता है)।

अन्यतरस्याम् — IV. iv. 54
(प्रथमासमर्थ शलालु प्रातिपदिक से 'इसका बेचना' विषय में) विकल्प से (ष्ठन् प्रत्यय होता है)।

अन्यतरस्याम् — IV. iv. 56
(शिल्पवाची प्रथमासमर्थ मड्डुक तथा झर्झर प्रातिपदिकों से) विकल्प से (षष्ठ्यर्थ में अण् प्रत्यय होता है)।

अन्यतरस्याम् — IV. iv. 68
(प्रथमासमर्थ भक्त प्रातिपदिक से 'इसको नियत रूप से दिया जाता है', अर्थ में) विकल्प से (अण् प्रत्यय होता है)।

अन्यतरस्याम् — V. i. 26
(शूर्प प्रातिपदिक से 'तदर्हति' पर्यन्त कथित अर्थों में) विकल्प से (अञ् प्रत्यय होता है)।

अन्यतरस्याम् — V. i. 52
(द्वितीयासमर्थ आढक, आचित तथा पात्र प्रातिपदिकों से 'सम्भव है', 'खाता है', 'पकाता है' अर्थों में) विकल्प से (ख प्रत्यय होता है)।

अन्यतरस्याम् — V. ii. 56
(षष्ठीसमर्थ सङ्ख्यावाची विंशति आदि प्रातिपदिकों से 'पूरण' अर्थ में विहित डट् प्रत्यय को) विकल्प करके (तमट् आगम होता है)।

अन्यतरस्याम् — V. ii. 96
(प्राणिस्थवाची आकारान्त प्रातिपदिक से 'मत्वर्थ' में) विकल्प से (लच् प्रत्यय होता है)।

अन्यतरस्याम् — V. ii. 109
(केश प्रातिपदिक से 'मत्वर्थ' में) विकल्प से (व प्रत्यय होता है)।

अन्यतरस्याम् — V. ii. 136
(बलादि प्रातिपदिकों से 'मत्वर्थ' में) विकल्प से (मतुप् प्रत्यय होता है)।

अन्यतरस्याम् — V. iii. 6
(सर्व शब्द के स्थान में) विकल्प से (स आदेश होता है, दकारादि विभक्ति के परे रहते) ।

अन्यतरस्याम् — V. iii. 21
(सप्तम्यन्त किम्, सर्वनाम और बहु प्रातिपदिकों से) विकल्प से (र्हिल् प्रत्यय होता है, अनद्यतन कालविशेष को कहना हो तो)।

अन्दतरस्याम् — V. iii. 35
(दिशा, देश और काल अर्थों में वर्त्तमान पञ्चम्यन्त-वर्जित सप्तमी, प्रथमान्त दिशावाची उत्तर और दक्षिण प्रातिपदिकों से) विकल्प से (एनप् प्रत्यय होता है, निकटता गम्यमान हो तो) ।

अन्यतरस्याम् — V. iii. 44
(एक प्रातिपदिक से उत्तर जो धा प्रत्यय, उसके स्थान में) विकल्प से (ध्यमुञ् आदेश होता है)।

अन्यतरस्याम् — V. iii. 64
(युव और अल्प शब्दों के स्थान में) विकल्प से (कन् आदेश होता है, अजादि अर्थात् इष्ठन् और ईयसुन् प्रत्यय परे रहते)।

अन्यतरस्याम् — V. iii. 109
(एकशाला प्रातिपदिक से इवार्थ में) विकल्प से (ठच् प्रत्यय होता है)।

अन्यतरस्याम् — V. iv. 42
('बहुत' तथा 'थोड़ा' अर्थ वाले कारकाभिधायी प्रातिपदिकों से) विकल्प से (शस् प्रत्यय होता है)।

अन्यतरस्याम् — V. iv. 105
(कु तथा महत् शब्द से परे जो ब्रह्मन् शब्द, तदन्त तत्पुरुष से) विकल्प से (समासान्त टच् प्रत्यय होता है)।

अन्यतरस्याम् — V. iv. 109
(नपुंसकलिङ्ग में वर्त्तमान जो अन्नन्त अव्ययीभाव, तदन्त से समासान्त टच् प्रत्यय) विकल्प से (होता है)।

अन्यतरस्याम् — V. iv. 121
(नञ्, दुस् तथा सु शब्दों से उत्तर जो हलि तथा सक्थि शब्द, तदन्त बहुव्रीहि से समासान्त अच् प्रत्यय) विकल्प से (होता है) ।

अन्यतरस्याम् — VI. i. 38
(वय् धातु के यकार को कित् लिट् परे रहते) विकल्प से (वकारादेश भी हो जाता है)।

अन्यतरस्याम् — VI. i. 58
(उपदेश में जो अनुदात्त तथा ऋकार उपधावाली धातु, उसको अम् आगम) विकल्प से (होता है, अकित् झलादि प्रत्यय के परे रहते)।

अन्यतरस्याम् — VI. I. 163
(अनित्य समास में अन्तोदात्त एकाच् उत्तरपद से उत्तर तृतीयादि विभक्ति) विकल्प से (उदात्त होती है)।

अन्यतरस्याम् – VI. i. 171
(मतुप् प्रत्यय के परे रहते ह्रस्वान्त अन्तोदात्त शब्द से उत्तर नाम् को) विकल्प से (उदात्त होता है)।

अन्यतरस्याम् – VI. i. 178
(नृ से परे भी झलादि विभक्ति) विकल्प से (उदात्त नहीं होती)।

अन्यतरस्याम् – VI. i. 181
(सिच् अन्तवाला शब्द) विकल्प से (आद्युदात्त होता है)।

अन्यतरस्याम् – VI. i. 188
(णमुल् परे रहते पूर्व धातु को) विकल्प से (आद्युदात्त होता है)।

अन्यतरस्याम् – VI. i. 212
(चङन्त शब्द के उत्तरपद को) विकल्प करके (उदात्त होता है)।

अन्यतरस्याम् – VI. ii. 28
(पूगवाची शब्द उत्तरपद रहते कर्मधारय समास में कुमार शब्द को) विकल्प से (आद्युदात्त होता है)।

अन्यतरस्याम् – VI. ii. 29
(द्विगु समास में इगन्त, कालवाची, कपाल, भगाल तथा शराव शब्दों के उत्तरपद रहते पूर्वपद को) विकल्प से (प्रकृतिस्वर हो जाता है)।

अन्यतरस्याम् – VI. ii. 54
(पूर्वपद ईषत् शब्द को) विकल्प से (प्रकृतिस्वर होता है)।

अन्यतरस्याम् – VI. ii. 110
(बहुव्रीहि समास में उपसर्ग पूर्व वाले निष्ठान्त पूर्वपद को) विकल्प से (अन्तोदात्त होता है)।

अन्यतरस्याम् – VI. ii. 169
(बहुव्रीहि समास में निष्ठान्त तथा उपमानवाची से उत्तर स्वाङ्ग मुख शब्द उत्तरपद को) विकल्प से (अन्तोदात्त होता है)।

अन्यतरस्याम् – VI. iii. 21
(पुत्र शब्द उत्तरपद रहते आक्रोश गम्यमान होने पर) विकल्प करके (षष्ठी का अलुक् होता है)।

अन्यतरस्याम् – VI. iii. 43
(पूर्वसूत्रों से शेष, नदीसञ्ज्ञक शब्दों को) विकल्प करके (ह्रस्व हो जाता है; घ, रूपप्, कल्पप्, चेलट्, बुव, गोत्र, मत तथा हत शब्दों के परे रहते)।

अन्यतरस्याम् – VI. iii. 58
(जिसको पूरा किया जाना चाहिए, तद्वाची एक = असहाय हल् है आदि में जिसके, ऐसे शब्द के उत्तरपद रहते) विकल्प करके (उदक शब्द को उद आदेश होता है)।

अन्यतरस्याम् – VI. iii. 76
(प्राणिभिन्न अर्थ में वर्त्तमान नग शब्द के नञ् को प्रकृतिभाव) विकल्प करके (होता है)।

अन्यतरस्याम् – VI. iii. 109
(संख्या, वि तथा साय पूर्व वाले अह्न शब्द को) विकल्प करके (अहन् आदेश होता है, ङि परे रहते)।

अन्यतरस्याम् – VI. iv. 45
(क्तिच् प्रत्यय परे रहते सन् अङ्ग को आकारादेश हो जाता है तथा) विकल्प से (इसका लोप भी होता है)।

अन्यतरस्याम् – VI. iv. 47
(भ्रस्ज् धातु के रेफ तथा उपधा के स्थान में) विकल्प से (रम् आगम् होता है, आर्धधातुक परे रहने पर)।

अन्यतरस्याम् – VI. iv. 70
('मेङ् प्रणिदाने' अङ्ग को) विकल्प से (इकारादेश होता है, ल्यप् परे रहते)।

अन्यतरस्याम् – VI. iv. 93
(मित् अङ्ग की उपधा को चिण्परक तथा णमुल्परक णि परे रहते) विकल्प से (दीर्घ होता है)।

अन्यतरस्याम् – VI. iv. 107
(असंयोग पूर्व जो उकार, तदन्त प्रत्यय का) विकल्प से (लोप भी होता है, मकारादि तथा वकारादि प्रत्ययों के परे रहते)।

अन्यतरस्याम् – VI. iv. 115
('भी' अङ्ग को) विकल्प करके (इकारादेश होता है, हलादि कित्, ङित् सार्वधातुक परे रहते)।

अन्यतरस्याम् – VII. i. 35
(आशीर्वाद विषय में तु और हि के स्थान में) विकल्प करके (तातङ् आदेश होता है)।

अन्यतरस्याम् – VII. ii. 101
(जरा शब्द को अजादि विभक्तियों के परे रहते) विकल्प से (जरस् आदेश होता है)।

अन्यतरस्याम् – VII. iii. 9
(पद शब्द अन्त में है जिसके, ऐसे श्वन् आदि वाले अङ्ग को जो ऐच् आगम एवं वृद्धिप्रतिषेध कहा है, वह) विकल्प से (नहीं होता)।

अन्यतरस्याम् — VII. iii. 39
(ली तथा ला अङ्ग को स्नेह = घृतादि पदार्थ के पिघलना अर्थ में णि परे रहते) विकल्प से (क्रमशः नुक् तथा लुक् आगम होता है)।

अन्यतरस्याम् — VII. iii. 43
(रुह् अङ्ग को) विकल्प से (णि परे रहते पकारादेश होता है)।

अन्यतरस्याम् — VII. iv. 3
(भ्राज, भास, भाष, दीप, जीव, मील, पीड – इन अङ्गों की उपधा को चङ्परक णि परे रहते) विकल्प से (ह्रस्व होता है)।

अन्यतरस्याम् — VII. iv. 15
(आबन्त अङ्ग को) विकल्प से (ह्रस्व नहीं होता है, कप् प्रत्यय परे रहते)।

अन्यतरस्याम् — VII. iv. 41
(शो तथा छो अङ्ग को) विकल्प करके (इकारादेश होता है, तकारादि कित् प्रत्यय परे रहते)।

अन्यतरस्याम् — VIII. i. 13
(प्रिय तथा सुख शब्दों को 'कष्ट न होना' अर्थ द्योत्य हो तो) विकल्प करके (द्वित्व होता है एवं उस को कर्मधारयवत् कार्य होता है)।

अन्यतरस्याम् — VIII. ii. 54
(प्रपूर्वक स्त्यै धातु से उत्तर निष्ठा के तकार को) विकल्प से (मकारादेश होता है)।

अन्यतरस्याम् — VIII. ii. 56
(नुद, विद, उन्दी, त्रैङ्, घ्रा, ह्री – इन धातुओं से उत्तर) विकल्प से (निष्ठा के तकार को नकारादेश होता है)।

अन्यतरस्याम् — VIII. iii. 42
(तिरस् के विसर्जनीय को) विकल्प करके (सकारादेश होता है, कवर्ग पवर्ग परे रहते)।

अन्यतरस्याम् — VIII. iii. 85
(मातुर् तथा पितुर् शब्द से उत्तर स्वसृ के सकार को समास में) विकल्प करके (मूर्धन्य आदेश होता है)।

अन्यतरस्याम् — VIII. iv. 61
(झय् प्रत्याहार से उत्तर हकार को) विकल्प से (पूर्वसवर्ण आदेश होता है)।

...अन्यतरेद्युस् — V. iii. 22
देखें — सद्यःपरुत् V. iii. 22

अन्यत्र — III. iv. 75
(उणादि प्रत्यय) सम्प्रदान तथा अपादान कारकों से अन्यत्र (कर्मादि कारकों में भी होते है)।

अन्यत्र — III. iv. 96
(लेट् सम्बन्धी जो एकार, उसके स्थान में ऐकारादेश विकल्प से होता है), 'आत ऐ' सूत्र के विषय को छोड़कर।

अन्यथा... — III. iv. 27
देखें — अन्यथैवं० III. iv. 27

अन्यथैवंकथमित्यंसु — III. iv. 27
अन्यथा, एवं, कथं तथा इत्थम् शब्दों के उपपद रहते (कृञ् धातु से णमुल् प्रत्यय होता है, यदि कृञ् का अप्रयोग सिद्ध हो)।

अन्यपदार्थे — II. i. 20
अन्यपद के अर्थ के गम्यमान होने पर (भी सुबन्त का नदीवाचियों के साथ विकल्प से अव्ययीभाव समास होता है, संज्ञा अभिधेय होने पर)।

अन्यपदार्थे — II. ii. 24
(समस्यमान पदों से) भिन्न अर्थ में वर्त्तमान (अनेक सुबन्त परस्पर समास को प्राप्त होते हैं और वह समास बहुव्रीहि-संज्ञक होता है)।

अन्यप्रमाणत्वात् — I. ii. 56
(प्रधानार्थवचन और प्रत्ययार्थवचन अशिष्य होते है, अर्थ के) अन्य = लोक के अधीन होने से।

अन्यस्मिन् — IV. i. 165
भाई से अन्य (सात पीढ़ियों में से कोई, पद तथा आयु दोनों से वृद्ध व्यक्ति जीवित हो तो पौत्रप्रभृति का जो अपत्य, उसके जीवित रहते विकल्प से युवा संज्ञा होती है, पक्ष में गोत्रसंज्ञा)।

अन्यस्य — VI. iii. 98
(आशिस्, आशा, आस्था, आस्थित, उत्सुक, ऊति, कारक, राग, छ – इनके परे रहते अषष्ठीस्थित तथा अतृतीयास्थित) अन्य शब्द को (दुक् आगम होता है)।

अन्यस्य — VI. iv. 68
(घु, मा, स्था, गा, पा, हा तथा सा से) अन्य जो (संयोग आदि वाला आकारान्त) अङ्ग, उसको (कित्, ङित् आर्धधातुक परे रहते विकल्प से एकारादेश होता है)।

...अन्याभ्याम् — VIII. i. 65
देखें — एकान्याभ्याम् VIII. i. 65

अन्यारादितरर्तेदिक्छब्दाञ्चूत्तरपदाजाहियुक्ते — II. iii. 29

अन्य, आरात्, इतर, ऋते, दिक्शब्द, अञ्चूत्तरपद, आच् प्रत्ययान्त तथा आहि प्रत्ययान्त शब्दों के योग में (पञ्चमी विभक्ति होती है)।

...अन्येद्युस् — V. iii. 22

देखें — सद्यःपरुत्० V. iii. 22

अन्येभ्यः — III. ii. 75

अन्य = अनाकारान्त धातुओं से (भी सुबन्त उपपद रहते मनिन्, क्वनिप्, वनिप् और विच् प्रत्यय देखे जाते हैं)।

अन्येभ्यः — III. ii. 178

अन्य धातुओं से (भी तच्छीलादि कर्ता हों, तो वर्त्तमान काल में क्विप् प्रत्यय देखा जाता है)।

अन्येभ्यः — III. iii. 130

(वेद विषय में) गत्यर्थक धातुओं से अन्य धातुओं से (भी कृच्छ्राकृच्छ्र अर्थ में ईषदादि उपपद रहते हुए युच् प्रत्यय देखा जाता है)।

अन्येषाम् — VI. iii. 136

जिन्हें सूत्रों से दीर्घत्व नहीं कहा, उनसे अन्य शब्दों को (भी दीर्घ देखा जाता है)।

अन्येषु — III. ii. 101

(पूर्वसूत्रों से जिनके उपपद रहते जन् धातु से ड प्रत्यय का विधान किया है, उनसे) अन्य कोई उपपद हो तो (भी जन् धातु से ड प्रत्यय देखा जाता है)।

...अन्योन्योपपदात् — I. iii. 16

देखें — इतरेतरान्योन्योपपदात् I. iii. 16

अन्वचि — III. iv. 64

(अनुकूलता गम्यमान हो तो) अन्वक् शब्द उपपद रहते (भू धातु से क्त्वा और णमुल् प्रत्यय होते हैं)।

अन्ववतप्तात् — V. iv. 81

अनु, अव तथा तप्त शब्द से उत्तर (रहस् शब्दान्त प्रातिपदिक से समासान्त अच् प्रत्यय होता है)।

...अन्ववसर्ग... — I. iv. 95

देखें — पदार्थसम्भावनान्ववसर्ग० I. iv. 95

अन्वाजे — I. iv. 62

(उपाजे तथा) अन्वाजे शब्द (कृञ् के योग में निपात और गतिसंज्ञक होते हैं)।

अन्वादिष्टः — VI. ii. 190

(अनु उपसर्ग से उत्तर) अन्वादिष्टवाची = कथन करने के पश्चात् कुछ और कहा जाये अथवा उस कथन में गौण कथन हो, इस अर्थ के वाचक (पुरुष शब्द को भी अन्तोदात्त होता है)।

अन्वादेशे — II. iv. 32

अन्वादेश = कहे हुये वाक्य के पीछे उसी को कुछ और कहने में वर्त्तमान (इदम् शब्द को अनुदात्त अश् आदेश होता है, तृतीया आदि विभक्ति परे रहते)।

अन्विच्छति — V. ii. 75

(तृतीयासमर्थ पार्श्व प्रातिपदिक से) 'चाहता है' अर्थ में (कन् प्रत्यय होता है)।

अन्वेष्टा — V. ii. 90

'अन्वेष्टा' = पीछे जाने वाला अर्थ में (अनुपदी शब्द का निपातन किया जाता है)।

अप् — III. iii. 57

(ऋकारान्त तथा उवर्णान्त धातुओं से कर्तृभिन्न संज्ञा तथा भाव में) अप् प्रत्यय होता है।

...अप् — V. iv. 74

देखें — ऋक्पूरब्धूः० V. iv. 74.

अप् — V. iv. 116

(पूरण-प्रत्ययान्त स्त्रीलिङ्ग तथा प्रमाणी अन्तवाले शब्दों से बहुव्रीहि समास में समासान्त) अप् प्रत्यय होता है।

...अप्... — VI. i. 165

देखें — ऊडिदम्० VI. i. 165

...अप्... — VI. ii. 144

देखें — थाथघञ्० VI. ii. 144

अप्... — VI. iv. 11.

देखें — अप्तृन्तृच्० VI. iv. 11

अप... — I. iv. 87

देखें — अपपरी I. iv. 87

अप... — II. i. 11

देखें — अपपरिबहिरञ्चवः II. i. 11

अप... — II. iii. 10

देखें — अपाङ्परिभिः II. iii. 10

...अप... — VIII. iii. 97

देखें — अम्बाम्ब० VIII. iii. 97

अपः — VI. iii. 96

(द्वि, अन्तर् तथा उपसर्ग से उत्तर) अप् शब्द को (ईकारादेश हो जाता है)।

अपः — VII. iv. 48

अप् अङ्ग को (भकारादि प्रत्यय परे रहते तकारादेश होता है)।

...अपकराभ्याम् — IV. iii. 32

देखें — **सिन्ध्वपकराभ्याम् IV. iii. 32**

अपगुरः — VI. i. 53

अप पूर्वक 'गुरी उद्यमने' धातु के (एच् के स्थान में णमुल् प्रत्यय के परे रहते विकल्प से आत्व हो जाता है)।

अपघनः — III. iii. 81

अपपूर्वक हन् धातु से (शरीर का अवयव अभिधेय हो तो) अप् प्रत्यय तथा हन् को घन आदेश करके अपघन शब्द निपातन किया जाता है,(कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में)।

...अपचर... — III. ii. 142

देखें — **सम्पृचानुरुधा० III. ii. 142**

अपचितः — VII. ii. 30

अपचित शब्द (भी विकल्प से) निपातन किया जाता है।

अपञ्चम्याः — II. iv. 83

(अदन्त अव्ययीभाव समास से उत्तर सुप् का लुक् नहीं होता, अपितु उस सुप् को अम् आदेश हो जाता है), पञ्चमी विभक्ति को छोड़कर।

अपञ्चम्याः — V. iii. 35

(दिशा, देश और काल अर्थों में वर्त्तमान) पञ्चम्यन्तवर्जित अर्थात् सप्तमीप्रथमान्त (दिशावाची उत्तर, अधर और दक्षिण) प्रातिपदिकों से (विकल्प से एनप् प्रत्यय होता है, 'निकटता' गम्यमान हो तो)।

अपण्ये — V. iii. 99

(जीविकोपार्जन के लिये) जो न बेचने योग्य (मनुष्य की प्रतिकृति), उसके अभिधेय होने पर (कन् प्रत्यय का लुप् होता है)।

अपत्यम् — IV. i. 92

(षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिकों से) अपत्य = सन्तान अर्थ को कहना हो तो (यथाविहित प्रत्यय होता है)।

अपत्यम् — IV. i. 162

(पौत्र और उसके आगे की) सन्तान की (गोत्र संज्ञा होती है)।

अपत्ये — VI. iv. 170

सन्तानार्थक (अण्) के परे रहते (वर्मन् शब्द के अन् को छोड़कर जो मकार पूर्ववाला अन्, उसको प्रकृतिभाव नहीं होता)।

...अपत्रप... — III. ii. 136

देखें — **अलंकृञ्० III. ii. 136**

...अपत्रस्तैः — II. i. 37.

देखें — **अपेतापोढमुक्त० II. i. 37**

अपथम् — II. iv. 30

अपथ शब्द (नपुंसकलिंग में होता है)।

अपदातौ — IV. ii. 134

(साल्व शब्द से) अपदाति अर्थात् पैरों से निरन्तर न चलने वाला मनुष्य (तथा मनुष्यस्थ कर्म) अभिधेय हो, तो (शैषिक वुञ् प्रत्यय होता है)।

अपदादौ — VIII. iii. 38

पदादिभिन्न (कवर्ग तथा पवर्ग) परे रहते (विसर्जनीय को सकारादेश होता है)।

अपदान्तस्य — VIII. iii. 24

पद के अन्त में न होने वाले (नकार) को (तथा चकार से मकार को भी झल् परे रहते अनुस्वार आदेश होता है)।

अपदान्तस्य — VIII. iii. 55

अपदान्त को (मूर्धन्य आदेश होता है, ऐसा अधिकार पाद की समाप्तिपर्यन्त जानें)।

अपदान्तात् — VI. i. 93

अपदान्त (अवर्ण) से उत्तर (उस् परे रहते पूर्व पर के स्थान में पररूप एकादेश होता है, संहिता के विषय में)।

अपदेशे — VI. ii. 7

बहाना अर्थ अभिधेय हो तो (तत्पुरुष समास में पद शब्द उत्तरपद रहते पूर्वपद को प्रकृतिस्वर होता है)।

अपनयने — V. iv. 49

चिकित्सा गम्यमान हो तो (रोगवाची शब्द से परे भी जो षष्ठी विभक्ति, तदन्त प्रातिपदिक से विकल्प से तसि प्रत्यय होता है)।

...अपनुदोः — III. ii. 5

देखें — **परिमृजापनुदोः III. ii. 5**

अपपरिबहिरञ्चवः — II. i. 11

अप, परि, बहिस् तथा अञ्चु ये (सुबन्त) शब्द (पञ्चम्यन्त समर्थ सुबन्त शब्द के साथ विकल्प से समास को प्राप्त होते हैं, और वह अव्ययीभाव समास होता है)।

अपपरी — I. i. 86
(छोड़ना अर्थ द्योतित हो रहा हो तो) अप तथा परि शब्द (कर्मप्रवचनीय और निपातसंज्ञक होते हैं)।

अपमित्य... — IV. iv. 21
देखें — अपमित्ययाचिताभ्याम् IV. iv. 21

अपमित्ययाचिताभ्याम् — IV. iv. 21
(तृतीयासमर्थ) अपमित्य और याचित प्रातिपदिकों से (निर्वृत्त अर्थ में यथासंख्य करके कक् और कन् प्रत्यय होते हैं)।

...अपर... — I. i. 33
देखें — पूर्वपरावरदक्षिणोत्तरापराधराणि I. i. 33

...अपर... — II. i. 57
देखें — पूर्वापरप्रथम० II. i. 57

...अपर... — II. ii. 1
देखें — पूर्वापराधरो० II. ii. 1

...अपर... — IV. i. 30
देखें — केवलमामक० IV. i. 30

अपरस्पराः — VI. i. 139
(क्रिया का निरन्तर होना गम्यमान हो तो) अपरस्पराः शब्द में सुट् आगम निपातन किया जाता है ।

...अपराहण... — IV. iii. 28
देखें — पूर्वाहणापराहणा० IV. iii. 28

...अपराहण... — VI. ii. 38
देखें — व्रीह्यपराहण० VI. ii. 38

...अपराहणाभ्याम् — IV. iii. 24
देखें — पूर्वाहणापरा० IV. iii. 24

अपरिग्रहे — I. iv. 64
अपरिग्रह = स्वीकार न करने अर्थ में वर्तमान (अन्तर् शब्द क्रियायोग में गति और निपात संज्ञक होता है)।

अपरिमाण... — IV. i. 22
देखें — अपरिमाणबिस्ताचित० IV. i. 22

अपरिमाणबिस्ताचितकम्बल्येभ्यः — IV. i. 22
(अदन्त) अपरिमाण, बिस्त, आचित और कम्बल्य अन्तवाले (द्विगुसंज्ञक) प्रातिपदिकों से (तद्धित के लुक् हो जाने पर स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय नहीं होता)।

अपरिह्वृताः — VII. ii. 32
(वेद-विषय में) अपरिह्वृताः शब्द (भी) बहुवचनान्त निपातन किया जाता है ।

अपरे — VII. iv. 80
अवर्णपरक (पवर्ग, यण् तथा जकार पर वाले उवर्णान्त अभ्यास को इकारादेश होता है, सन् परे रहते)।

...अपरेद्युस्... — V. iii. 22
देखें — सद्यःपरुत्० V. iii. 22

अपरोक्षे — III. ii. 119
अपरोक्ष अर्थात् परोक्षभिन्न (अनद्यतन भूतकाल) में (भी वर्तमान धातु से स्म उपपद रहते लट् प्रत्यय होता है)।

अपर्शु — VI. ii. 177
(बहुव्रीहि समास में उपसर्ग से उत्तर) पर्शुवर्जित (ध्रुव स्वाङ्ग को अन्तोदात्त होता है)।

अपवर्गे — II. iii. 6
अपवर्ग = फल प्राप्त होने पर क्रिया की समाप्ति अर्थ में (काल और अध्ववाचियों के अत्यन्तसंयोग में तृतीया विभक्ति होती है)।

अपवर्गे — III. iv. 60
(तिर्यक् शब्द उपपद रहते) अपवर्ग गम्यमान होने पर (कृञ् धातु से क्त्वा, णमुल् प्रत्यय होते हैं)।

अपस्करः — VI. i. 149
अपस्कर शब्द सुट् सहित निपातन किया जाता है, (यदि उससे रथ का अवयव कहा जा रहा हो तो)।

अपस्पृधेथाम् — VI. i. 35
(वेद विषय में) अपस्पृधेथाम् शब्द का निपातन किया जाता है ।

...अपहते — V. ii. 70
(पञ्चमीसमर्थ तन्त्र प्रातिपदिक से), 'कुछ समय पहले ही लिया' अर्थ में (कन् प्रत्यय होता है)।

अपह्नवे — I. iii. 44
अपह्नव = मिथ्याभाषण अर्थ में वर्तमान (ज्ञा धातु से आत्मनेपद होता है)।

...अपाः — VI. ii. 33
देखें — परिप्रत्युपापाः VI. ii. 33

अपाङ्परिभिः — II. iii. 10
(कर्मप्रवचनीयसंज्ञक) अप, आङ् और परि के योग में (पञ्चमी विभक्ति होती है)।

...अपाच्... — IV. ii. 100
देखें — द्युप्रागपागु० IV. ii. 100

अपात् — I. iii. 63
अप उपसर्ग से उत्तर (वद धातु से क्रियाफल के कर्त्ता को मिलने की स्थिति में आत्मनेपद होता है)।

अपात् — VI. i. 137
अप उपसर्ग से उत्तर (चार पैर वाले बैल आदि तथा मोर आदि पक्षी का कुरेदना अभिप्राय हो तो उस विषय में, ककार से पूर्व सुट् आगम होता है, संहिता में)।

अपात् — VI. ii. 186
अप उपसर्ग से उत्तर (भी उत्तरपदस्थित मुख शब्द को अन्तोदात्त होता है)।

अपादादौ — VIII. i. 18
(यहाँ से आगे 'तिङि चोदात्तवति' VIII. i. 71 तक जो कुछ कहेगें, वहाँ) पाद के आदि में न हो तो (सारा अनुदात्त होता है, ऐसा अधिकार समझना चाहिये)।

अपादानम् — I. iv. 24
(क्रिया में अपाय= अलग होने पर जो निश्चल रहे, उस कारक की) अपादान संज्ञा होती है।

अपादाने — II. iii. 28
(अनभिहित) अपादान कारक में (पञ्चमी विभक्ति होती है)।

अपादाने — III. iv. 52
(शीघ्रता गम्यमान हो तो) अपादान उपपद रहते (धातु से णमुल् प्रत्यय होता है)।

अपादाने — III. iv. 74
(भीमादि उणादिप्रत्ययान्त शब्द) अपादान कारक में (निपातन किये जाते हैं)।

अपादाने — V. iv. 45
अपादान कारक में (भी जो पञ्चमी, तदन्त से विकल्प से तसिप्रत्यय होता है, यदि वह अपादान कारक हीय तथा रुह सम्बन्धी न हो तो)।

अपाये — I. iv. 24
(क्रिया में) अपाय= अलग होने पर (जो अचल रहे, उस कारक की अपादान संज्ञा होती है)।

अपारलौकिके — VI. i. 48
('षिधु हिंसासंराध्योः' धातु यदि) अपारलौकिक=इहलौकिक अर्थ में वर्त्तमान हो तो (उसके एच् के स्थान में णिच् परे रहते आकारादेश हो जाता है)।

अपि — I. iv. 80
(वेद विषय में गति और उपसर्ग-संज्ञक शब्द धातु से पर में तथा पूर्व में) भी (आते हैं)।

अपिः — I. iv. 95
अपि शब्द (पदार्थ अर्थात् अप्रयुक्त पद का अर्थ, सम्भावन, अन्ववसर्ग अर्थात् कामचार = करे या न करे, गर्हा अर्थात् निन्दा तथा समुच्चय अर्थों में कर्मप्रवचनीय और निपातसंज्ञक होता है)।

अपि — I. iv. 104
(युष्मद् शब्द के उपपद रहते समान अभिधेय होने पर युष्मद् शब्द का प्रयोग न हो) या हो तो भी (मध्यम पुरुष होता है)।

अपि — III. i. 84
(वेद विषय में श्ना के स्थान में शायच् आदेश) भी (होता है तथा पूर्वप्राप्त शानच् होता ही है)।

अपि — III. ii. 61
(सोपसर्ग होने पर भी तथा निरुपसर्ग होने पर) भी (सत्, सू, द्विष, द्रुह, दुह, युज, विद, भिद, छिद, जि, नी, राजृ धातुओं से सुबन्त उपपद रहते क्विप् प्रत्यय होता है)।

अपि — III. ii. 75
(आकारान्त धातुओं से भिन्न धातुओं से) भी (मनिन्, क्वनिप्, वनिप् तथा विच् प्रत्यय देखे जाते हैं)।

अपि — III. ii. 101
(पूर्वसूत्रों में जिनके उपपद रहते जन् धातु से ड प्रत्यय का विधान किया है, उनसे अन्य कोई उपपद हो तो) भी (जन् धातु से ड प्रत्यय देखा जाता है)।

अपि — III. ii. 178
(अन्य धातुओं से) भी (तच्छीलादि कर्ता हो, तो वर्त्तमानकाल में क्विप् प्रत्यय देखा जाता है)।

अपि — III. iii. 2
(उणादि प्रत्यय धातु से भूतकाल में) भी (देखे जाते हैं)।

अपि — III. iii. 130
(वेद विषय में गत्यर्थक धातुओं से अन्य धातुओं से) भी (कृच्छ्राकृच्छ्र अर्थ में ईषदादि उपपद रहते युच् प्रत्यय देखा जाता है)।

अपि... — III. iii. 142
देखें — **अपिजात्वोः III. iii. 142**

अपि — III. iii. 145
(किंवृत्त उपपद न हो या) किंवृत्त उपपद हो तो भी (धातु से काल-सामान्य में सब लकारों के अपवाद लिङ् तथा लृट् प्रत्यय होते हैं, असम्भावना तथा सहन न करना गम्यमान हो तो)।

अपि — IV. ii. 124
(जनपद तथा जनपद अवधिवाची अवृद्ध तथा वृद्ध) भी (बहुवचनविषयक प्रातिपदिकों से शैषिक वुञ् प्रत्यय होता है)।

अपि — V. iii. 14
(सप्तमी और पञ्चमी से अतिरिक्त अन्य भी जो विभक्ति, तदन्त शब्दों से) भी (तसिलादि प्रत्यय देखे जाते हैं)।

अपि — VI. iii. 136
(अन्य शब्दों को) भी (दीर्घ देखा जाता है)।

अपि — VI. iv. 73
(वेद विषय में) भी (आट् आगम देखा जाता है)।

अपि — VI. iv. 75
(लुङ्, लङ्, लृङ् के परे रहने पर वेद-विषय में माङ् का योग होने पर अट्, आट् आगम बहुल करके होते हैं और माङ् का योग न होने पर) भी (नहीं होते)।

अपि — VII. i. 38
(वेद विषय में अनञ्पूर्व वाले समास में क्त्वा के स्थान में क्त्वा आदेश होता है तथा ल्यप्) भी (होता है)।

अपि — VII. i. 76
(अस्थि, दधि, सक्थि – इन अङ्गों को वेद विषय में) भी (अनङ् आदेश देखा जाता है)।

अपि — VII. iii. 47
(भस्त्रा, एषा, अजा, ज्ञा, द्वा, स्वा– ये शब्द नञ् पूर्व वाले हों तो भी) न हों तो भी (इनके आकार के स्थान में जो अकार, उसको उदीच्य आचार्यों के मत में इत्व नहीं होता)।

अपि — VIII. i. 35
(हि से युक्त साकांक्ष अनेक तिङन्तों को भी तथा) अपि-ग्रहण से एक को भी (कहीं कहीं अनुदात्त नहीं होता, वेद-विषय में)।

अपि — VIII. i. 68
(पूजनवाचियों से उत्तर गतिसहित तिङन्त को तथा गति-भिन्न तिङन्त को) भी (अनुदात्त होता है)।

अपि — VIII. ii. 86
(ऋकार को छोड़कर वाक्य के अनन्त्य गुरुसञ्ज्ञक वर्ण को एक एक करके तथा अन्त्य के टि को) भी (प्राचीन आचार्यों के मत में प्लुत उदात्त होता है)।

अपि — VIII. ii. 105
(वाक्यस्थ अनन्त्य एवं) अपि ग्रहण से अन्त्य पद की टि को भी (प्रश्न एवं आख्यान होने पर स्वरित प्लुत होता है)।

अपि — VIII. iii. 58
(नुम्, विसर्जनीय तथा शर् प्रत्याहार का व्यवधान होने पर) भी (इण् तथा कवर्ग से उत्तर सकार को मूर्धन्य आदेश होता है)।

अपि — VIII. iii. 63
(सित शब्द से पहले-पहले अट् का व्यवधान होने पर तथा) अपि ग्रहण से अट् का व्यवधान न होने पर भी (सकार को मूर्धन्य आदेश होता है)।

अपि — VIII. iii. 71
(परि, नि तथा वि उपसर्ग से उत्तर सिवादि धातुओं के सकार को अट् के व्यवधान होने पर) भी (विकल्प से मूर्धन्य आदेश होता है)।

अपि — VIII. iv. 2
(रेफ तथा षकार से परे अट्, कवर्ग, पवर्ग, आङ् तथा नुम् का व्यवधान होने पर) भी (नकार को णकार हो जाता है)।

अपि — VIII. iv. 5
(प्र, निर्, अन्तर्, शर, इक्षु, प्लक्ष, आम्र, कार्ष्य, खदिर, पीयूक्षा – इनसे उत्तर वन शब्द के नकार को असञ्ज्ञा-विषय में भी तथा) अपिग्रहण से सञ्ज्ञाविषय में भी (णका-रादेश होता है)।

अपि — VIII. iv. 14
(उपसर्ग में स्थित निमित से उत्तर णकार उपदेश में है जिसके, ऐसे धातु के नकार को असमास में तथा) अपि-ग्रहण से समास में भी (णकार आदेश होता है)।

अपि — VIII. iv. 37
(निमित्त र, ष तथा निमित्ती न के मध्य पद का व्यवधान होने पर) भी (नकार को णकार नहीं होता)।

अपिजात्वोः — III. iii. 142
(निन्दा गम्यमान हो तो) अपि तथा जातु उपपद रहते (धातु से लट् प्रत्यय होता है)।

अपित् — I. ii. 4
पिद्भिन्न = पकार इत्संज्ञक प्रत्यय को छोड़कर (सार्व-धातुक प्रत्यय ङित्वत् होते हैं)।

अपित् — III. iv. 87
(लोडादेश जो सिप्, उसके स्थान में हि आदेश होता है और) वह अपित् (भी) होता है।

...अपिभ्याम् — III. i. 118
देखें — **प्रत्यपिभ्याम् III. i. 118**

अपीलोः — VI. iii. 120
पीलु शब्द को छोड़कर (जो इगन्त पूर्वपद शब्द, उनको 'वह' शब्द उत्तरपद रहते दीर्घ होता है)।

अपुत्रस्य — VII. iv. 35
पुत्र शब्द को छोड़कर (अवर्णान्त अङ्ग को वेद-विषय में क्यच् परे रहते जो कुछ कहा है, वह नहीं होता)।

...अपूपादिभ्यः — V. i. 4
देखें — **हविरपूपादिभ्यः V. i. 4**

अपूरणी... — VI. iii. 33
देखें — **अपूरणीप्रियादिषु VI. iii. 33**

अपूरणीप्रियादिषु — VI. iii. 33
(एक ही अर्थ में अर्थात् एक ही प्रवृत्ति-निमित्त को लेकर भाषित=कहा है पुल्लिंग अर्थ को जिस शब्द ने, ऐसे ऊङ्वर्जित भाषितपुंस्क स्त्रीलिंग के स्थान में पुंल्लिगवाची शब्द के समान रूप हो जाता है), पूरणी तथा प्रियादिवर्जित (स्त्रीलिंग समानाधिकरण) उत्तरपद परे हो तो।

अपूर्वनिपाते — I. ii. 44
(समास विधीयमान होने पर नियत विभक्ति वाला पद भी उपसर्जन संज्ञक होता है), उपसर्जन के पूर्वप्रयोग वाले कार्य को छोड़कर।

अपूर्वपदात् — IV. i. 140
अविद्यमान पूर्वपद वाले (कुल) शब्द से (विकल्प करके यत् और ढकञ् प्रत्यय होते हैं, पक्ष में ख)।

अपूर्वम् — VIII. i. 47
जिससे पूर्व कोई शब्द विद्यमान नहीं है, ऐसे (जातु शब्द से युक्त तिङन्त को अनुदात्त नहीं होता)।

अपूर्ववचने — IV. ii. 12
(कौमार शब्द) अपूर्ववचन=जिसका पाणिग्रहण पहले न हुआ हो, ऐसे अर्थ को व्यक्त करने में (अण् प्रत्ययान्त निपातन किया जाता है)।

...अपूर्वस्य — VIII. iii. 17
देखें — **भोभगो० VIII. iii. 17**

अपृक्तः — I. ii. 41
(एक=असहाय अल् वाला प्रत्यय) अपृक्त संज्ञक होता है।

अपृक्तम् — VI. i. 66
(हलन्त, ङ्यन्त तथा आबन्त दीर्घ से उत्तर सु, ति तथा सि का) जो अपृक्त (हल्) उसका (लोप होता है)।

अपृक्तस्य — VI. i. 65
अपृक्तसञ्ज्ञक (वि) का (लोप होता है)।

अपृक्ते — VII. iii. 91
(ऊर्णुञ् अङ्ग को) अपृक्त (हल् पित् सार्वधातुक) परे रहते (गुण होता है)।

अपृक्ते — VII. iii. 96
(अस् धातु तथा सिच् से उत्तर) अपृक्त (हलादि सार्वधातुक) को (ईट् आगम होता है)।

अपृथिवी... — VI. ii. 142
देखें — **अपृथिवीरुद्र० VI. ii. 142**

अपृथिवीरुद्रपूषमन्थिषु — VI. ii. 142
(देवतावाची द्वन्द्व समास में अनुदात्तादि उत्तरपद रहते) पृथिवी, रुद्र, पूषन्, मन्थी–इन शब्दों को छोड़कर (एक साथ पूर्व तथा उत्तरपद को प्रकृतिस्वर नहीं होता है)।

अपे — III. ii. 50
(क्लेश तथा तमस् कर्म उपपद रहते) अपपूर्वक (हन् धातु से ड प्रत्यय होता है)।

अपे — III. ii. 144
अपपूर्वक (तथा चकार से विपूर्वक लष् धातु से भी घिनुण् प्रत्यय होता है)।

अपेत... — II. i. 37
देखें — **अपेतापोढमुक्त० II. i. 37**

अपेतापोढमुक्तपतितापत्रस्तैः — II. i. 37
(थोड़े से पञ्चम्यन्त सुबन्त) अपेत, अपोढ, मुक्त, पतित, अपत्रस्त — इन (समर्थ सुबन्तों) के साथ (विकल्प से समास को प्राप्त होते हैं और वे तत्पुरुष होते हैं)।

...अपोः — II. iv. 38
देखें — **घञपोः II. iv. 38**

...अपोः — II. iv. 56
देखें — **अघञपोः II. iv. 56**

...अपोढ...— II. i. 37
देखें — **अपेतापोढमुक्त० II. i. 37**

अपोनप्तृ... — IV. ii. 26
देखें — **अपोनप्त्रपान्नप्तृभ्याम् IV. ii. 26**

अपोनप्त्रपान्नप्तृभ्याम् — IV. ii. 26
देवतावाची अपोनपात् तथा अपांनपात् शब्दों से (षष्ठ्यर्थ में घ प्रत्यय होता है, और घ प्रत्यय के सन्नियोग से इन शब्दों को क्रमशः अपोनप्तृ और अपान्नप्तृ रूपों का आदेश भी होता है)।

अप्तृन्तृच्स्वसृनप्तृनेष्टृत्वष्टृक्षत्तृहोतृपोतृप्रशास्तृणाम् — VI. iv. 11

अप्, तृन्, तृच्प्रत्ययान्त, स्वसृ, नप्तृ, नेष्टृ, त्वष्टृ, क्षत्तृ, होतृ, पोतृ, प्रशास्तृ – इन अङ्गों की (उपधा को दीर्घ होता है, सम्बुद्धिभिन्न सर्वनामस्थान परे रहते)।

...अप्योः — III. iii. 141

देखें — **उताप्योः III. iii. 141**

...अप्योः — III. iii. 152

देखें — **उताप्योः III. iii. 152**

...अप्रख्यानात् — I. ii. 54

देखें — **लुब्योगाप्रख्यानात् I. ii. 54**

अप्रगृह्यस्य — VIII. ii. 107

(दूर से बुलाने के विषय से भिन्न विषय में) प्रगृह्यसञ्ज्ञक से भिन्न (एच् के पूर्वार्द्ध भाग) को (प्लुत करने के प्रसंग में आकारादेश होता है, तथा उत्तरवाले भाग को इकार, उकार आदेश होते हैं)।

अप्रगृह्यस्य — VIII. iv. 56

(अवसान में वर्त्तमान) प्रगृह्यसञ्ज्ञक से भिन्न (अण् को विकल्प से अनुनासिक आदेश होता है)।

अप्रतिषिद्धम् — VIII. i. 44

(क्रिया के प्रश्न में वर्तमान किम् शब्द से युक्त उपसर्ग से रहित तथा) प्रतिषेधरहित (तिङन्त) को (अनुदात्त नहीं होता)।

अप्रतेः — II. iii. 43

प्रति का प्रयोग न होने पर (साधु और निपुण शब्द के योग में सप्तमी विभक्ति होती है, अर्चा गम्यमान होने पर)।

अप्रतेः — VIII. iii. 66

प्रति से भिन्न (उपसर्गस्थ निमित्त) से उत्तर (षद्लृ धातु के सकार को मूर्धन्य आदेश होता है, अड् तथा अभ्यास के व्यवधान में भी)।

अप्रत्ययः — I. i. 68

प्रत्यय को छोड़कर (अण् एवं उदित् वर्ण अपने स्वरूप तथा अपने सवर्ण के ग्राहक होते हैं)।

अप्रत्ययः — I. ii. 40

(अर्थवान् शब्द प्रातिपदिक-संज्ञक होते हैं; धातु), प्रत्यय और प्रत्ययान्त को छोड़कर।

अप्रत्ययस्य — VIII. iii. 41

(इकार और उकार उपधा वाले) प्रत्ययभिन्न समुदाय के (विसर्जनीय को भी षकार आदेश होता है; कवर्ग, पवर्ग परे रहते)।

अप्रथमायाम् — VI. iii. 131

(मन्त्र विषय में) प्रथमा से भिन्न विभक्तियों के परे रहने पर (ओषधि शब्द को भी दीर्घ हो जाता है)।

अप्रथमासमानाधिकरणे — III. ii. 124

(धातु से लट् के स्थान में शतृ तथा शानच् आदेश होते हैं), यदि अप्रथमान्त के साथ उस लट् का सामानाधिकरण्य हो तो।

अप्रधान... — VI. ii. 189

देखें — **अप्रधानकनीयसी VI. ii. 189**

अप्रधानकनीयसी — VI. ii. 189

(अनु अपसर्ग से उत्तर) अप्रधानवाची अर्थात् क्रियादि में जिसे मुख्य रूप से नहीं कहा जा रहा हो, ऐसे उत्तरपद को तथा कनीयस् शब्द को (अन्तोदात्त होता है)।

अप्रधाने — II. iii. 19

(सह अर्थ से युक्त) अप्रधान अर्थात् दोनों में से जिसका क्रियादि के साथ सम्बन्ध साक्षात् शब्द द्वारा नहीं कहा गया है, उसमें (तृतीया विभक्ति होती है)।

...अप्रयोगे — II. i. 56

देखें — **सामान्याप्रयोगे II. i. 56**

अप्रशान् — VIII. iii. 7

प्रशान् को छोड़कर (नकारान्त पद को अम्परक छव् प्रत्याहार परे रहते रु होता है, संहिता में)।

अप्राणिनाम् — II. iv. 6

प्राणिरहित (जातिवाची) शब्दों का (जो द्वन्द्व, उसे एकवद्भाव होता है)।

अप्राणिषष्ठ्याः — VI. ii. 134

प्राणिभिन्न षष्ठ्यन्त शब्द से उत्तर (तत्पुरुष समास में उत्तरपद चूर्णादि शब्दों को आद्युदात्त होता है)।

अप्राणिषु — II. iii. 7

(मन् धातु के) प्राणिवर्जित (कर्म में अनादर गम्यमान होने पर चतुर्थी विभक्ति होती है)।

अप्राणिषु — V. iv. 97

(उपमानवाची श्वन् शब्द) प्राणिविशेष का वाचक न हो तो (तदन्त तत्पुरुष से समासान्त टच् प्रत्यय होता है)।

अप्राणिषु — VI. iii. 76

अप्राणिषु — VIII. iii. 72

(अनु, वि, परि, अभि, नि उपसर्गों से उत्तर स्यन्दू धातु के सकार को मूर्धन्य आदेश होता है), यदि प्राणी का कथन न हो रहा हो तो।

अप्रातिलोम्ये — VIII. i. 33

अनुकूलता गम्यमान हो तो (अङ्ग शब्द से युक्त तिङन्त को अनुदात्त नहीं होता)।

अप्राम्रेडितयोः — VIII. iii. 49

प्र तथा आम्रेडित से भिन्न (कवर्ग तथा पवर्ग) परे हो तो (वेद विषय में विसर्जनीय को विकल्प से सकारादेश होता है)।

अप्लुतवत् — VI. i. 125

(अनार्ष इति के परे रहते प्लुत) अप्लुत के समान हो जाता है।

अप्लुतात् — VI. i. 109

अप्लुत (अकार) से उत्तर (अप्लुत अकार परे रहते रु के रेफ को उकार आदेश होता है, संहिता के विषय में)।

अप्लुते — VI. i. 109

(प्लुतभिन्न अकार से उत्तर) प्लुतभिन्न (अकार) परे रहते (रु के रेफ को उकार आदेश होता है, संहिता के विषय में)।

अबहु... — V. iv. 73

देखें — **अबहुगणात् V. iv. 73**

अबहुगणात् — V. iv. 73

बहु तथा गण शब्द अन्त में नहीं है जिसके, ऐसे (संख्येय अर्थ में वर्तमान बहुव्रीहि-समास-युक्त) प्रातिपदिक से (डच् प्रत्यय होता है)।

अबहुव्रीहि... — VI. iii. 46

देखें — **अबहुव्रीह्यशीत्योः VI. iii. 46**

अबहुव्रीह्यशीत्योः — VI. iii. 46

बहुव्रीहि समास तथा अशीति शब्द से भिन्न (संख्यावाचक) शब्द उत्तरपद हो तो, (द्वि तथा अष्टन् शब्दों को आकारादेश होता है)।

अबह्वच् — VI. ii. 138

(शिति शब्द से उत्तर नित्य ही) जो अबह्वच् अर्थात् एक या दो अच् वाला (उत्तरपद), उसको (बहुव्रीहि समास में प्रकृतिस्वर होता है, भसत् शब्द को छोड़कर)।

भसत् = सूर्य, मांस, बतख, समय, डोंगी, योनि।

अबोधने — II. iv. 46

ज्ञान अर्थ से भिन्न अर्थ में वर्तमान (इण् के स्थान में गम् आदेश होता है, णिच् परे रहते)।

अब्राह्मण... — V. iii. 114

देखें — **अब्राह्मणराजन्यात् V. iii. 114**

अब्राह्मणराजन्यात् — V. iii. 114

(वाहीक देशविशेष में शस्त्र से जीविका कमाने वाले पुरुषों के) ब्राह्मण और राजन्यभिन्न समूहवाची प्रातिपदिकों से (ञ्यङ् प्रत्यय होता है)।

अभक्ष्य... — IV. iii. 140

देखें — **अभक्ष्याच्छादनयोः IV. iii. 140**

अभक्ष्याच्छादनयोः — IV. iii. 140

(षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिकों से) भक्ष्य तथा आच्छादनवर्जित (विकार और अवयव) अर्थों में (लौकिक प्रयोगविषय में विकल्प से मयट् प्रत्यय होता है)।

अभविष्यति — VII. iii. 16

(सङ्ख्यावाची शब्द से उत्तर वर्ष शब्द के अचों में आदि अच् को ञित्, णित् अथवा कित् तद्धित प्रत्यय परे रहते वृद्धि होती है, यदि वह तद्धित प्रत्यय) भविष्यत् अर्थ में न हुआ हो तो।

अभसत् — VI. ii. 138

(शिति शब्द से उत्तर नित्य ही जो अबह्वच् उत्तरपद, उसको बहुव्रीहि समास में प्रकृतिस्वर होता है), भसत् शब्द को छोड़कर।

अभागे — I. iv. 90

('लक्षणेत्थम्भूताख्यान०' I. iv. 89 सूत्र पर कहे गये अर्थों में) भाग अर्थात् हिस्सा अर्थ को छोड़कर (अभि शब्द की कर्मप्रवचनीय और निपात संज्ञा होती है)।

अभाव... — VI. iv. 168

देखें — **अभावकर्मणोः VI. iv. 168**

अभावकर्मणोः — VI. iv. 168

भाव तथा कर्म से भिन्न अर्थ में वर्तमान (यकारादि तद्धित के परे रहते भी अन्नन्त भसञ्ज्ञक अङ्ग को प्रकृतिभाव हो जाता है)।

अभाषितपुंस्कात् — VII. iii. 48

अभाषितपुंस्क = एक ही अर्थ में अर्थात् एक ही प्रवृत्ति निमित्त को लेकर नहीं कहा है पुंल्लिङ्ग अर्थ को जिस शब्द ने, ऐसे शब्द से विहित (प्रत्ययस्थित ककार से पूर्व आकार के स्थान में जो अकार, उसको नञ्पूर्व होने पर और अनञ्पूर्व होने पर भी उदीच्य आचार्यों के मत में इकारादेश नहीं होता)।

अभि... — I. iii. 80
देखें — **अभिप्रत्यतिभ्यः I. iii. 80**

अभि... — I. iv. 46
देखें — **अभिनिविशः I. iv. 46**

अभि... — II. i. 13
देखें — **अभिप्रती II. i. 13**

...अभि... — III. iii. 72
देखें — **न्यभ्युपविषु III. iii. 72**

अभि... — VI. i. 26
देखें — **अभ्यवपूर्वस्य VI. i. 26**

...अभि... — VIII. iii. 72
देखें — **अनुविपर्य० VIII. iii. 72**

अभिः — I. iv. 90
('लक्षणेत्थम्भूताख्यान०' I. iv. 89 सूत्र पर कहे गये अर्थों में भाग अर्थात् हिस्सा अर्थ को छोड़कर) अभि शब्द की (कर्मप्रवचनीय और निपात संज्ञा होती है)।

...अभिक... — V. ii. 74
देखें — **अनुकाभिकाभीकः V. ii. 74**

अभिजनः — IV. iii. 90
(प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में यदि वह प्रथमासमर्थ) अभिजन = पूर्वबन्धु अथवा उनका देश हो तो (भी यथाविहित प्रत्यय होते हैं)।

...अभिजित्... — IV. iii. 36
देखें — **वत्सशालाभिजि० IV. iii. 36**

अभिजित्... — V. iii. 118
देखें — **अभिजिद्विदभृत्० V. iii. 118**

अभिजिद्विदभृच्छालावच्छिखावच्छमीवदूर्णावच्छ्रुमदणः — V. iii. 118
अभिजित्, विदभृत्, शालावत्, शिखावत्, शमीवत्, ऊर्णावत् तथा श्रुमत् सम्बन्धी जो अण् प्रत्ययान्त शब्द, उनसे (स्वार्थ में यत् प्रत्यय होता है)।

अभिज्ञावचने — III. ii. 112
अभिज्ञावचन अर्थात् स्मृति को कहने वाला कोई शब्द उपपद हो तो (अनद्यतन भूतकाल में धातु से लृट् प्रत्यय होता है)।

अभितोभावि — VI. ii. 182
(परि उपसर्ग से उत्तर) अभितोभावि = दोनों ओर से होना स्वभाव है जिसका, इस अर्थ को कथन करने वाले शब्द को (अन्तोदात्त होता है)।

अभिनिविशः — I. iv. 86
अभिनि पूर्वक विश् का (जो आधार, वह भी कर्मसंज्ञक होता है)।

अभिनिष्क्रामति — IV. iii. 86
(द्वितीयासमर्थ प्रातिपदिक से) अभिनिष्क्रमण अर्थात् निकलना क्रिया का (द्वार कर्त्ता अभिधेय हो तो यथाविहित प्रत्यय होता है)।

अभिनिसः — VIII. iii. 86
अभि तथा निस् से उत्तर (स्तन धातु के सकार को शब्द की सञ्ज्ञा गम्यमान हो तो विकल्प से मूर्धन्य आदेश होता है)।

...अभिपूजितयोः — VIII. ii. 100
देखें — **प्रश्नान्ताभिपूजितयोः VIII. ii. 100**

अभिप्रती — II. i. 13
(आभिमुख्य अर्थ में वर्त्तमान) अभि और प्रति शब्द (लक्षणवाची समर्थ सुबन्त के साथ विकल्प से समास को प्राप्त होते हैं, और वह समास अव्ययीभाव संज्ञक होता है)।

अभिप्रत्यतिभ्यः — I. iii. 80
अभि, प्रति और अति उपसर्ग से उत्तर (क्षिप् धातु से परस्मैपद होता है)।

...अभिप्राये — I. iii. 72
देखें — **कर्त्रभिप्राये I. iii. 72**

...अभिप्रेत...— III. iv. 59
देखें — **अयथाभिप्रेताख्याने III. iv. 59**

अभिप्रैति — I. iv. 32
(करणभूत कर्म के द्वारा जिसको) अभिप्रेत = लक्षित किया जाये, (वह कारक सम्प्रदान संज्ञक होता है)।

...अभिभ्यः — VIII. iii. 119
देखें — **निव्यभिभ्यः VIII. iii. 119**

...अभिभ्याम् — V. iii. 9
देखें — **पर्यभिभ्याम् V. iii. 9**

अभिविधौ — III. iii. 44
अभिव्याप्ति गम्यमान हो तो (धातु से भाव में इनुण् प्रत्यय होता है)।

अभिविधौ — V. iv. 53
अभिव्याप्ति गम्यमान हो तो (कृ, भू तथा अस् धातु के योग में तथा सम् पूर्वक पद धातु के योग में भी विकल्प से साति प्रत्यय होता है)।

...अभिविध्योः — II. i. 12
देखें — मर्यादाभिविध्योः II. i. 12
...अभिव्यक्तिषु — VIII. i. 15
देखें — रहस्यमर्यादा० VIII. i. 15
...अभीकः — V. ii. 74
देखें — अनुकाभिकाभीकः V. ii. 74
अभेः — VI. ii. 185
अभि उपसर्ग के आगे (उत्तरपद स्थित मुख शब्द को अन्तोदात्त होता है)।

अभेः — VII. ii. 25
अभि उपसर्ग से उत्तर (भी अर्द् धातु से निष्ठा परे रहते इट् आगम नहीं होता, सन्निकट अर्थ में)।

अभ्यम् — VIII. i. 30
(युष्मद्, अस्मद् अङ्ग से उत्तर भ्यस् के स्थान में भ्यम् अथवा) अभ्यम् आदेश होता है।

...अभ्यम... — III. ii. 157
देखें — जिदृक्षि० III. ii. 157
अभ्यमित्रात् — V. ii. 17
(द्वितीयासमर्थ) अभ्यमित्र प्रातिपदिक से ('पर्याप्त जाता है' अर्थ में छ, यत् और ख प्रत्यय होते हैं)।

अभ्यवपूर्वस्य — VI. i. 27
अभि तथा अव पूर्व वाले (श्यैङ् धातु) को (निष्ठा परे रहते विकल्प से सम्प्रसारण होता है)।

...अभ्यस्त... — III. iv. 107
देखें — सिजभ्यस्त० III. iv. 107
अभ्यस्तम् — VI. i. 5
(धातुओं के एकाच् को किये जाने वाले द्वित्व रूपों में दोनों की) अभ्यस्त संज्ञा होती है।

...अभ्यस्तयोः — VI. iv. 112
देखें — श्नाभ्यस्तयोः VI. iv. 112
अभ्यस्तस्य — VI. i. 32
(सन्परक तथा चङ्परक णि के परे रहते ह्वेञ् धातु को सम्प्रसारण हो जाता है, तथा) अभ्यस्त का निमित्त जो (ह्वेञ् धातु), उसको (भी सम्प्रसारण हो जाता है)।

अभ्यस्तस्य — VII. iii. 87
अभ्यस्त-सञ्ज्ञक अङ्ग की (लघु उपधा इक् को अजादि पित् सार्वधातुक परे रहते गुण नहीं होता)।

अभ्यस्तात् — VII. i. 4
अभ्यस्त अङ्ग से उत्तर (प्रत्यय के अवयव झकार के स्थान में अत् आदेश हो जाता है)।

अभ्यस्तात् — VII. i. 78
(अभ्यस्त अङ्ग से उत्तर) शतृ को (नुम् आगम नहीं होता है)।

अभ्यस्तानाम् — VI. i. 183
(अजादि अनिट् लसार्वधातुक परे हो तो) अभ्यस्त-सञ्ज्ञकों के (आदि को उदात्त होता है)।

अभ्यादाने — VIII. ii. 87
प्रारम्भ में वर्त्तमान (ओम् शब्द को प्लुत उदात्त होता है)।

...अभ्यावृत्ति... — V. iv. 17
देखें — क्रियाभ्यावृत्तिगणने V. iv. 17
अभ्यासः — VI. i. 4
धातुओं के एकाच् को किये गये द्वित्व में प्रथमरूप अभ्यास-सञ्ज्ञक होता है।

अभ्यासलोपः — VI. iv. 119
(घुसञ्ज्ञक अङ्ग एवं अस् को एकारादेश तथा) अभ्यास का लोप होता है; (कित्, ङित् हि परे रहते)।

अभ्यासस्य — III. i. 6
(मान, बध, दान् और शान् धातुओं से सन् प्रत्यय होता है, तथा) अभ्यास के (विकार को दीर्घ आदेश होता है)।

अभ्यासस्य — VI. i. 7
(तुज् के प्रकारवाली धातुओं के) अभ्यास को (दीर्घ होता है)।

अभ्यासस्य — VI. i. 17
(लिट् लकार के परे रहते दोनों अर्थात् वचिस्वपियजादि तथा ग्रहिज्यादि के) अभ्यास को (सम्प्रसारण हो जाता है)।

अभ्यासस्य — VI. iv. 78
(इवर्णान्त, उवर्णान्त) अभ्यास को (सवर्णभिन्न अच् परे रहते इयङ्, उवङ् आदेश होते हैं)।

अभ्यासस्य — VII. iv. 4
('पा पाने' अङ्ग की उपधा का चङ्परक णि परे रहते लोप तथा) अभ्यास को (ईकारादेश होता है)।

अभ्यासस्य – VII. iv. 58

(यहां सन् परे रहते जो कार्य कहा है, अर्थात् जो इस्, ईत् आदि का विधान किया है, उनके) अभ्यास का (लोप होता है)।

अभ्यासस्य – VIII. iii. 64

(सित से पहले पहले स्था इत्यादियों में अभ्यास का व्यवधान होने पर मूर्धन्य आदेश होता है तथा) अभ्यास के (सकार को भी मूर्धन्य होता है) ।

अभ्यासात् – VII. iii. 55

अभ्यास से उत्तर (भी हन् धातु के हकार को कवर्गादेश होता है)।

अभ्यासात् – VIII. iii. 61

अभ्यास के (इण्) से उत्तर (स्तु तथा ण्यन्त धातुओं के आदेश सकार को ही षत्वभूत सन् परे रहते मूर्धन्य आदेश होता है)।

अभ्यासे – I. iii. 71

अभ्यास = बार बार करने अर्थ में (मिथ्या शब्द उपपद वाले ण्यन्त कृञ् धातु से आत्मनेपद होता है)।

अभ्यासे – VIII. iv. 53

अभ्यास में वर्त्तमान (झलों को चर् आदेश होता है तथा चकार से जश् भी होता है)।

अभ्यासेन – VIII. iii. 64

(सित से पहले पहले स्था इत्यादियों में) अभ्यास का व्यवधान होने पर (मूर्धन्य आदेश होता है तथा अभ्यास के सकार को भी मूर्धन्य आदेश होता है)।

...अभ्याहनः – III. ii. 142

देखें – सम्पृचानुरुधा० III. ii. 142

अभ्युत्सादयाम् – III. i. 42

अभ्युत्सादयामकः, (प्रजनयामकः, चिकयामकः, रमयामकः, पावयांक्रियात्, विदामक्रन् शब्दों का विकल्प से) निपातन किया जाता है,(छन्द में)।

...अभ्योः – III. iii. 28

देखें – निरभ्योः III. iii. 28

...अभ्र... – III. i. 17

देखें – शब्दवैरकलहा० III. i. 17

...अभ्र... – III. ii. 42

देखें – सर्वकूल० III. ii. 42

...अभ्रात् – IV. iv. 118

देखें – समुद्राभ्रात् IV. iv. 118

...अभ्रे – III. ii. 32

देखें – वहाभ्रे III. ii. 32

...अभ्रेषयोः – III. iii. 37

देखें – द्यूताभ्रेषयोः III. iii. 37

अम् – II. iv. 83

(अदन्त अव्ययीभाव से उत्तर सुप् का लुक् नहीं होता, अपितु उस सुप् को तो) अम् आदेश हो जाता है,(पञ्चमी विभक्ति को छोड़कर) ।

...अम्... – IV. i. 2

देखें – स्वौजसमौट्० IV. i. 2

अम् – VI. i. 57

(सृज् और दृशिर् धातु को कित् भिन्न झलादि प्रत्यय परे हो तो) अम् आगम होता है ।

अम्... – VI. i. 90

देखें – अम्शसोः VI. i. 90

अम् – VI. iii. 67

(खिदन्त उत्तरपद रहते इजन्त एकाच् को) अम् आगम होता है और वह अम् (प्रत्यय के समान भी माना जाता है)।

अम्... – VI. iv. 80

देखें – अम्शसोः VI. iv. 80

अम् – VII. i. 24

(अकारान्त नपुंसकलिङ्ग वाले अङ्ग से उत्तर सु और अम् के स्थान में) अम् आदेश होता है ।

अम् – VII. i. 28

(युष्मद् तथा अस्मद् अङ्ग से उत्तर ङे तथा प्रथमा एवं द्वितीया विभक्ति के स्थान में) अम् आदेश होता है ।

अम् – VII. i. 99

(संबुद्धि परे रहते चतुर् तथा अनडुह् अङ्गों को) अम् आगम होता है ।

अम्... – VIII. iii. 6

देखें – अम्परे VIII. iii. 6

...अम... – VII. ii. 28

देखें – रुष्यमत्वर० VII. ii. 28

...अमः – III. iv. 101

देखें – तान्तन्तामः III. iv. 101

अमः — VII. i. 40

अम् के स्थान में (मश् आदेश होता है, वेद-विषय में)।

...अमः — VII. iii. 95

देखें — तुरुस्तु० VII. iii. 95

...अमत्र... — IV. i. 42

देखें — वृत्यमत्रा० IV. i. 42

अमत्रेभ्यः — IV. ii. 13

(सप्तमीसमर्थ) पात्रवाची प्रातिपदिकों से (भोजन के पश्चात् अवशिष्ट अर्थ में यथाविहित अण् प्रत्यय होता है)।

अमद्राणाम् — VII. iii. 13

(दिशावाची शब्दों से उत्तर) मद्रशब्दवर्जित (जनपद-वाची उत्तरपद) शब्द के (अचों में आदि अच् को तद्धित ञित्, णित् तथा कित् प्रत्यय परे रहते वृद्धि होती है)।

अमनुष्यकर्तृके — III. ii. 53

मनुष्यभिन्न कर्ता अर्थ में वर्तमान (हन् धातु से कर्म उपपद रहते टक् प्रत्यय होता है)।

...अमनुष्यपूर्वा — II. iv. 23

देखें — राजामनुष्यपूर्वा II. iv. 23

अमनुष्ये — IV. ii. 99

(रङ्कु शब्द से) मनुष्य अभिधेय न हो तो (अण् और ष्फक् प्रत्यय होते हैं)।

अमनुष्ये — IV. ii. 143

मनुष्यभिन्न अभिधेय हो तो (पर्वत शब्द से विकल्प से छ प्रत्यय होता है, पक्ष में अण्)।

अमनुष्ये — VI. iii. 121

(घञन्त उत्तरपद रहते) मनुष्य अभिधेय न होने पर (उपसर्ग के अण् को बहुल करके दीर्घ होता है)।

अमन्त्रे — III. i. 35

(कास् तथा प्रत्ययान्त धातु से लिट् परे रहते आम् प्रत्यय होता है), यदि मन्त्रविषयक प्रयोग न हो तो ।

...अमर्षयोः — III. iii. 145

देखें — अनवक्लृप्त्यमर्षयोः III. iii. 145

अमहत्... — VI. ii. 89

देखें — अमहन्नवम् VI. ii. 89

अमहन्नवम् — VI. ii. 89

(नगर शब्द उत्तरपद रहते) महत् तथा नव शब्द को छोड़कर (पूर्वपद को आद्युदात्त होता है, यदि वह नगर उदीच्य प्रदेश का न हो तो)।

अमा — II. ii. 20

(अव्यय के साथ उपपद का जो समास, वह) अमन्त (अव्यय) के साथ (ही होवे, अन्य के साथ नहीं)।

अमाङ्योगे — VI. iv. 75

(लुङ्, लङ्, लृङ् परे रहने पर वेद-विषय में माङ् का योग होने पर अट्, आट् आगम बहुल करके होते हैं और) माङ् का योग न होने पर (नहीं भी होते)।

अमावस्यत् — III. i. 122

अमा पूर्वक वस् धातु से काल अधिकरण में ण्यत् परे रहते विकल्प से वृद्धि का अभाव निपातन किया गया है।

अमावास्यायाः — IV. iii. 30

(सप्तमीसमर्थ) अमावास्या प्रातिपदिक से (जात अर्थ में वुन् प्रत्यय विकल्प से होता है)।

अमि — VI. i. 103

(अक् प्रत्याहार से) अम् विभक्ति परे रहते (पूर्वरूप एकादेश होता है)।

अमिति — VII. ii. 34

अमिति शब्द (वेदविषय में) इडागमयुक्त निपातन है।

...अमित्रयोः — V. iv. 150

देखें — मित्रामित्रयोः V. iv. 150

अमित्रे — III. ii. 131

(द्विष धातु से) अमित्र अर्थात् शत्रु कर्त्ता वाच्य हो तो (शतृ प्रत्यय होता है, वर्त्तमान काल में)।

अमु — V. iv. 12

(किम्, एकारान्त, तिङन्त तथा अव्ययों से विहित जो तरप्, तमप् प्रत्यय – तदन्त से वेद-विषय में) अमुप्रत्यय (तथा आमु प्रत्यय होते हैं, द्रव्य का प्रकर्ष न कहना हो तो)।

अमूर्ध... — VI. iii. 11

देखें — अमूर्धमस्तकात् VI. iii. 11

अमूर्ध... — VI. iii. 83

देखें — अमूर्धप्रभृ० VI. iii. 83

अमूर्द्धप्रभृत्युदर्केषु — VI. iii. 83
(वेद-विषय में समान शब्द को स आदेश हो जाता है), मूर्धन्, प्रभृति और उदर्क शब्द उत्तरपद न हों तो।

अमूर्धमस्तकात् — VI. iii. 11
मूर्धन् तथा मस्तकवर्जित (हलन्त एवं अदन्त स्वाङ्गवाची) शब्दों से उत्तर (कामभिन्न शब्द उत्तरपद रहते सप्तमी का अलुक् होता है)।

...अमोः — VII. i. 23
देखें — **स्वमोः VII. i. 23**

अमौ... — III. iv. 91
देखें — **वामौ III. iv. 91**

अम्नस् — VIII. ii. 70
देखें — **अम्नरुधर० VIII. ii. 70**

अम्नरुधरवर् — VIII. ii. 70
अम्नस्, ऊधस्, अवस्– इन पदों को (वेदविषय में रु एवं रेफ, दोनों ही होते हैं)।

अम्परे — VIII. iii. 6
अम् प्रत्याहार परे है जिससे, ऐसे (खय्) के परे रहते (पुम् को रु होता है, संहिता में)।

अम्ब... — VIII. iii. 97
देखें — **अम्बाम्ब० VIII. iii. 97**

अम्बाम्बगोभूमिसव्यापद्वित्रिकुशेकुशङ्क्वङ्गुमञ्जिपुञ्जिपरमेबर्हिर्दिव्यग्निभ्यः — VIII. iii. 97
अम्ब, आम्ब, गो, भूमि, सव्य, अप, द्वि, त्रि, कु, शेकु, शङ्कु, अङ्गु, मञ्जि, पुञ्जि, परमे, बर्हिस्, दिवि, अग्नि — इन शब्दों से उत्तर (स्था के सकार को मूर्धन्य आदेश होता है)।

अम्बार्थ... — VII. iii. 107
देखें — **अम्बार्थनद्योः VII. iii. 107**

अम्बार्थनद्योः — VII. iii. 107
अम्बा = माँ के अर्थ वाले तथा नदीसञ्ज्ञक अङ्गों को (सम्बुद्धि परे रहते ह्रस्व हो जाता है)।

अम्बाले — VI. i. 114
(अम्बिके शब्द से पूर्व अम्बे), अम्बाले – (ये दो) पद (यजुर्वेद में पठित होने पर अकार परे रहते प्रकृतिभाव से रहते हैं)।

अम्बिकेपूर्वे — VI. i. 114
अम्बिके शब्द से पूर्व (अम्बे, अम्बाले – ये दो पद यजुर्वेद में पठित होने पर अकार परे रहते प्रकृतिभाव से रहते हैं)।

अम्बे — VI. i. 114
(अम्बिके शब्द से पूर्व) अम्बे, (अम्बाले – ये दो) पद (यजुर्वेद में पठित होने पर अकार परे रहते प्रकृतिभाव से रहते हैं)।

...अम्भस्... — VI. iii. 3
देखें — **ओजःसहोम्भस्० VI. iii. 3**

...अम्भसा — IV. iv. 27
देखें — **ओजःसहोम्भसा IV. iv. 27**

अम्शसोः — VI. i. 90
(ओकारान्त से) अम् तथा शस् विभक्ति के (अच्) परे रहते (पूर्व पर के स्थान में आकार एकादेश होता है, संहिता के विषय में)।

अम्शसोः — VI. iv. 80
अम् तथा शस् विभक्ति के परे रहते (स्त्री शब्द को विकल्प से इयङ् आदेश होता है)।

अय्... — VI. i. 75
देखें — **अयवायावः VI. i. 75**

अय् — VI. iv. 55
(आम्, अन्त, आलु, आय्य, इत्नु, इष्णु – इनके परे रहते णि को) अय् आदेश होता है।

अय् — VII. ii. 111
(इदम् शब्द के इद् रूप को पुल्लिग में) अय् आदेश होता है, (सु विभक्ति परे रहते)।

...अय...— III. i. 37
देखें — **दयायासः III. i. 37**

अयङ् — VII. iv. 22
(यकारादि कित्, ङित् प्रत्यय परे रहते शीङ् अङ्ग को) अयङ् आदेश होता है।

अयच् — V. ii. 43
(प्रथमासमर्थ द्वि तथा त्रि प्रातिपदिकों से षष्ठ्यर्थ में विहित तयप् प्रत्यय के स्थान में विकल्प से) अयच् आदेश होता है।

अयज्ञपात्रेषु — I. iii. 64
यज्ञपात्र से भिन्न विषय में (प्र, उप पूर्वक 'युजिर् योगे' धातु से आत्मनेपद होता है)।

अयज्ञे — III. iii. 32
(प्र पूर्वक 'स्तृञ् आच्छादने' धातु से) यज्ञविषय से अन्यत्र (कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

अयतौ — VIII. ii. 19

अय धातु के परे रहते (उपसर्ग के रेफ को लकारादेश होता है)।

अयथाभिप्रेताख्याने — III. iv. 59

इष्ट का कथन जैसा होना चाहिये वैसा न होना गम्यमान हो तो (अव्यय शब्द उपपद रहते कृञ् धातु से क्त्वा और णमुल् प्रत्यय होते हैं)।

अयदि — III. iii. 155

(सम्भावना अर्थ को कहने वाला धातु उपपद हो तो) यत् शब्द उपपद न होने पर (सम्भावन अर्थ में वर्तमान धातु से विकल्प से लिङ् प्रत्यय होता है, यदि अलम् शब्द का अप्रयोग सिद्ध हो)।

अयदौ — III. iii. 151

यदि का प्रयोग न हो (और यच्च तथा यत्र से भिन्न शब्द उपपद हो तो चित्रीकरण गम्यमान होने पर धातु से लृट् प्रत्यय होता है)।

अयनम् — VIII. iii. 24

(अन्तर शब्द से उत्तर) अयन शब्द के (नकार को भी णकारादेश होता है, देश का अभिधान न हो तो)।

...अयम्... — VI. i. 112

देखें — अव्यादवद्याद० VI. i. 112

अयवादिभ्यः — VIII. ii. 9

यवादि शब्दों से भिन्न (मकारान्त एवं अवर्णान्त तथा मकार एवं अवर्ण उपधा वाले) प्रातिपदिक से उत्तर (मतुप् को वकारादेश होता है)।

अयवायावः — VI. i. 75

(अच् परे रहते एच् = ए, ओ, ऐ, औ के स्थान में यथासङ्ख्य करके) अय्, अव्, आय्, आव् आदेश होते हैं, (संहिताविषय में)।

अयस्... — III. iii. 82

देखें — अयोविद्रुषु III. iii. 82

...अयस्... — V. iv. 94

देखें — अनोश्मायः० V. iv. 94

अयस्मयादीनि — I. iv. 20

अयस्मय इत्यादि शब्द (वेद में साधु माने जाते है)।

अयःशूल... — V. ii. 76

देखें — अयःशूलदण्डा० V. ii. 76

अयःशूलदण्डाजिनाभ्याम् — V. ii. 76

तृतीयासमर्थ अयःशूल तथा दण्डाजिन प्रातिपदिकों से (यथासङ्ख्य करके ठक् तथा ठञ् प्रत्यय होते हैं, 'चाहता है' अर्थ में)।

...अयानयम् — V. ii. 9

देखें — अनुपदसर्वान्ना० V. ii. 9

अयोपधात् — IV. i. 63

जो (नित्य ही स्त्रीविषय में न हो, तथा) यकार उपधावाला न हो, ऐसे (जातिवाची) प्रातिपदिक से (स्त्रीलिंग में ङीप् प्रत्यय होता है)।

...अयोविकार... — IV. i. 42

देखें — वृत्यमत्रावपना० IV. i. 42

अयोविद्रुषु — III. iii. 82

अयस्, वि तथा द्रु उपपद रहते हुए (हन् धातु से करण कारक में अप् प्रत्यय तथा हन् के स्थान में घनादेश भी होता है)।

अरक्त... — VI. iii. 38

देखें — अरक्तविकारे VI. iii. 38

अरक्तविकारे — VI. iii. 38

(वृद्धि का कारण है जिस तद्धित में, ऐसा तद्धित) यदि रक्त तथा विकार अर्थ में विहित न हो तो (तदन्त स्त्री शब्द को पुंवद्भाव नही होता)।

...अरण्य... — IV. i. 48

देखें — इन्द्रवरुणभव० IV. i. 48

अरण्यात् — IV. ii. 128

अरण्य प्रातिपदिक से (मनुष्य अभिधेय हो तो शैषिक वुञ् प्रत्यय होता है)।

अरिष्ट ... — VI. ii. 100

देखें — अरिष्टगौडपूर्वे VI. ii. 100

अरिष्टगौडपूर्वे — VI. ii. 100

अरिष्ट तथा गौड शब्द पूर्व है जिस समास में, (उसके पूर्वपद को भी पुर् शब्द उत्तरपद रहते अन्तोदात्त होता है)।

...अरिष्टस्य — IV. iv. 143

देखें — शिवशमरिष्टस्य IV. iv. 143

अरीहण... — IV. ii. 79

देखें — अरीहणकृशाश्व० IV. ii. 79

अरीहणकृशाश्वर्श्यकुमुदकाशतृणप्रेक्षाश्मसखिसंकाश-बलपक्षकर्णसुतङ्गमप्रगदिन्वराहकुमुदादिभ्यः –IV. ii. 79

अरीहण, कृशाश्व, ऋश्य, कुमुद, काश, तृण, प्रेक्ष, अश्म, सखि, संकाश, बल, पक्ष, कर्ण, सुतङ्गम, प्रगदिन्, वराह, कुमुद आदि 17 गणों के प्रातिपदिकों से (यथासङ्ख्य वुञ्, छण्, क, ठच्, इल, स, इनि, र, ढञ्, ण्य, य, फक्, फिञ्, इञ्, ञ्य, कक्, ठक् चातुरर्थिक प्रत्यय होते हैं)।

अरुस्... — V. iv. 51
देखें — **अरुर्मनस्० V. iv. 51**

अरुस्... — VI. iii. 66
देखें — **अरुर्द्विषदजन्तस्य VI. iii. 66**

अरुर्द्विषदजन्तस्य — VI. iii. 66

अरुष्, द्विषत् तथा (अव्ययभिन्न) अजन्त शब्दों को (खिदन्त उत्तरपद रहते मुम् आगम होता है)।

अरुर्मनश्चक्षुश्चेतोरहोरजसाम् — V. iv. 51

(सम्पद्यते के कर्त्ता में वर्तमान) अरुस्, मनस्, चक्षुस्, चेतस्, रहस् तथा रजस् शब्दों (से कृ, भू तथा अस्ति के योग में च्विप्रत्यय होता है, तथा उन शब्दों) के (अन्त्य सकार का लोप हो जाता है)।

...अरुषः — III. ii. 35
देखें — **विध्वरुषः III. ii. 35**

...अरुष्षु — III. ii. 21
देखें — **दिवाविभा० III. ii. 21**

...अरोकाभ्याम् — V. iv. 144
देखें — **श्यावारोकाभ्याम् V. iv. 144**

...अर्घाभ्याम् — V. iv. 25
देखें — **पादार्घाभ्याम् V. iv. 25**

...अर्चाभ्यः — V. ii. 101
देखें — **प्रज्ञाश्रद्धा० V. ii. 101**

अर्चायाम् — II. iii. 43

अर्चा = पूजा गम्यमान हो तो (साधु और निपुण शब्दों के योग में सप्तमी विभक्ति होती है, यदि 'प्रति' साथ में प्रयुक्त न हो तो)।

...अर्जुनाभ्याम् — IV. iii. 98
देखें — **वासुदेवार्जुनाभ्याम् IV. iii. 98**

अर्त्ति... — III. ii. 184
देखें — **अर्त्तिलूधू० III. ii. 184**

...अर्त्ति... — VII. ii. 66
देखें — **अत्यर्त्तिव्ययतीनाम् VII. ii. 66**

अर्त्ति... — VII. iii. 36
देखें — **अर्त्तिह्री० VII. iii. 36**

...अर्त्ति... — VII. iii. 78
देखें — **पाघ्राध्मा० VII. iii. 78**

अर्त्ति... — VII. iv. 29
देखें — **अर्त्तिसंयोगाद्योः VII. iv. 29**

अर्त्ति... — VII. iv. 77
देखें — **अर्त्तिपिपर्त्योः VII. iv. 77**

अर्त्तिपिपर्त्योः — VII. iv. 77

ऋ तथा पृ धातुओं के (अभ्यास को भी श्लु होने पर इकारादेश होता है)।

...अर्त्तिभ्यः — III. i. 56
देखें — **सर्त्तिशास्त्य० III. i. 56**

अर्त्तिलूधूसूखनसहचरः — III. ii. 184

ऋ, लूञ्, धू, षू, खनु, षह, चर—इन धातुओं से (करण कारक में इत्र प्रत्यय होता है, वर्त्तमान काल में)।

अर्त्तिसंयोगाद्योः — VII. iv. 29

ऋ तथा संयोग आदि में है जिसके, ऐसे (ऋकारान्त) धातु को (यक् तथा यकारादि असार्वधातुक लिङ् परे रहते गुण होता है)।

अर्त्तिह्रीब्लीरीक्नूयीक्ष्माय्याताम् — VII. iii. 36

ऋ, ह्री, ब्ली, री, क्नूयी, क्ष्मायी तथा आकारान्त अङ्ग को (णिच् परे रहते पुक् आगम होता है)।

...अर्थ... — II. i. 35
देखें — **तदर्थार्थबलिहित० II. i. 35**

...अर्थ... — IV. iv. 40
देखें — **प्रतिकण्ठार्थललामम् IV. iv. 40**

...अर्थ... — IV. iv. 92
देखें — **धर्मपथ्यर्थ० IV. iv. 92**

...अर्थवचनम् — I. ii. 56
देखें — **प्रधानप्रत्ययार्थवचनम् I. ii. 56**

...अर्थवचने — II. i. 33
देखें — **अधिकार्थवचने II. i. 33**

अर्थवत् — I. ii. 45

अर्थवान् शब्द (प्रातिपदिक-संज्ञक होते हैं; धातु, प्रत्यय और प्रत्ययान्त को छोड़कर)।

अर्थस्य — I. ii. 56

(प्रधानार्थवचन तथा प्रत्ययार्थवचन अशिष्य होते है), अर्थ के (अन्य अर्थात् लोक के अधीन होने से)।

...अर्थाभाव... — II. i. 6

देखें — **विभक्तिसमीपसमृद्धि० II. i. 6**

अर्थे — VI. ii. 44

अर्थ शब्द उत्तरपद रहते (चतुर्थ्यन्त पूर्वपद को प्रकृति-स्वर हो जाता है)।

अर्थे — VI. iii. 99

अर्थ शब्द उत्तरपद हो तो (अषष्ठीस्थित तथा अतृतीया-स्थित अन्य शब्द को विकल्प करके दुक् आगम होता है)।

अर्थेन — II. i. 29

(तृतीयान्त सुबन्त तृतीयान्तार्थकृत गुणवाची शब्द के साथ तथा) अर्थ शब्द के साथ (समास को प्राप्त होता है, और वह तत्पुरुष समास होता है)।

...अर्दयतिभ्यः — III. i. 51

देखें — **ऊनयतिध्वनयति० III. i. 51**

अर्देः — VII. ii. 24

(सम्, नि तथा वि उपसर्ग से उत्तर) अर्द् धातु को (निष्ठा परे रहते इट् आगम नहीं होता)।

...अर्ध... — I. i. 32

देखें — **प्रथमचरमतयाल्पार्धकतिपयनेमाः I. i. 32**

अर्धम् — II. ii. 2

(नपुंसकलिंग में वर्तमान) अर्ध शब्द (एकाधिकरणवाची एकदेशी सुबन्त के साथ विकल्प से समास को प्राप्त होता है. और वह तत्पुरुष समास होता है)।

...अर्धमास... — V. ii. 57

देखें — **शतादिमासा० V. ii. 57**

अर्धर्चाः — II. iv. 31

अर्धर्च आदि गणपठित शब्द (पुंल्लिग और नपुंसक-लिङ्ग दोनों में होते हैं)।

अर्धस्य — VIII. ii. 107

(दूर से बुलाने के विषय से भिन्न विषय में अप्रगृह्य-सञ्ज्ञक एच् के पूर्व के) अर्ध भाग को (प्लुत करने के प्रसंग में आकारादेश होता है तथा उत्तरवाले भाग को इकार, उकार आदेश होता है)।

अर्द्धह्रस्वम् — I. ii. 32

(उस स्वरित गुणवाले अच् के आदि की) आधी मात्रा (उदात्त और शेष अनुदात्त होती है)।

अर्धात् — IV. iii. 4

अर्ध प्रातिपदिक से (शैषिक यत् प्रत्यय होता है)।

...अर्धात् — V. i. 47

देखें — **पूरणार्धात् V. i. 47**

अर्धात् — V. iv. 100

अर्ध शब्द से उत्तर (भी जो नौ शब्द, तदन्त तत्पुरुष से समासान्त टच् प्रत्यय होता है)।

...अर्धात् — VII. iii. 12

देखें — **सुसर्वार्धात् VII. iii. 12**

अर्धात् — VII. iii. 26

अर्ध शब्द से उत्तर (परिमाणवाची उत्तरपद के अचों में आदि अच् को वृद्धि होती है, पूर्वपद को तो विकल्प से होती है; ञित्, णित् तथा कित् तद्धित परे रहते)।

...अर्पिते — VI. i. 203

देखें — **जुष्टार्पिते VI. i. 203**

अर्मे — VI. ii. 90

अर्म शब्द उत्तरपद रहते (भी महत् तथा नव से भिन्न दो अचों वाले तथा तीन अचों वाले अवर्णान्त पूर्वपद को आद्युदात्त होता है)।

अर्यः — III. i. 103

अर्य शब्द का (स्वामी और वैश्य अर्थ में निपातन होता है)।

...अर्यमादीनाम् — V. iii. 84

देखें — **शेवलसुपरि० V. iii. 84**

...अर्यम्णाम् — VI. iv. 12

देखें — **इन्हन्पूषार्यम्णाम् VI. iv. 12**

अर्वणः — VI. iv. 127

अर्वन् अङ्ग को (तृ आदेश होता है, यदि अर्वन् शब्द से परे सु न हो तथा वह अर्वन् शब्द नञ् से उत्तर भी न हो)।

अर्शआदिभ्यः — V. ii. 127

अर्शस् आदि गणपठित प्रातिपदिकों से (मत्वर्थ में अच् प्रत्यय होता है)।

अर्हः — III. ii. 12

पूजार्थक अर्ह् धातु से (कर्म उपपद रहते अच् प्रत्यय होता है)।

...अर्ह... – III. iii. 111
देखें – पर्यायार्हर्णोत्पत्तिषु० III. iii. 111
...अर्ह... – VI. ii. 155
देखें – संपाद्यर्ह० VI. ii. 155
अर्हः – III. ii. 133
अर्ह् धातु से (प्रशंसा गम्यमान हो तो वर्त्तमान काल में शतृ प्रत्यय होता है)।
अर्हति – IV. iv. 137
(द्वितीयासमर्थ सोम प्रातिपदिक से) 'अर्हति' अर्थात् 'समर्थ है' — इस अर्थ में (य प्रत्यय होता है)।
अर्हति – V. i. 62
(द्वितीयासमर्थ प्रातिपदिकों से) 'समर्थ है' — इस अर्थ में (यथाविहित प्रत्यय होते हैं)।
अर्हम् – V. i. 116
(द्वितीयासमर्थ प्रातिपदिकों से) योग्यताविशिष्ट क्रिया वाच्य हो तो (वति प्रत्यय होता है)।
अर्हात् – V. i. 19
(यहाँ से आगे) अर्ह = 'तदर्हति' पर्यन्त कहे हुए अर्थों में (सामान्यतया ठक् प्रत्यय अधिकृत होता है; गोपुच्छ, संख्या तथा परिमाणवाची शब्दों को छोड़कर)।
अर्हे – III. iii. 169
योग्य कर्ता वाच्य हो तो (धातु से कृत्यसंज्ञक, तृच् तथा चकार से लिङ् प्रत्यय होते हैं)।
अलः – I. i. 51
(षष्ठीनिर्दिष्ट को कहा आदेश अन्त्य) अल् के स्थान में (होता है)।
अलः – I. i. 64
(अन्त्य) अल् से (पूर्व जो अल्, उसकी उपधा संज्ञा होती है)।
...अलङ्कर्म... – V. iv. 7
देखें – अषडक्षा० V. iv. 7
अलङ्कारे – IV. iii. 65
(सप्तमीसमर्थ कर्ण तथा ललाट शब्दों से 'भव' अर्थ में) आभूषण अभिधेय हो तो (कन् प्रत्यय होता है)।
...अलङ्कारेषु – IV. ii. 95
देखें – श्वास्यलङ्कारेषु IV. ii. 95

अलङ्कृञ्... – III. ii. 136
देखें – अलङ्कृञ्निराकृञ्० III. ii. 136
अलङ्कृञ्निराकृञ्प्रजनोत्पचोत्पतोन्मदरुच्यपत्रपवृतुवृधुसहचरः – III. ii. 136
अलंपूर्वक कृञ्, निर् आङ् पूर्वक कृञ्, प्रपूर्वक जन, उत्पूर्वक पच, उत्पूर्वक पत, उत्पूर्वक मद, रुचि, अपपूर्वक त्रप, वृतु, वृधु सह, चर – इन धातुओं से (वर्त्तमान काल में तच्छीलादि कर्ता हो तो इष्णुच् प्रत्यय होता है)।
अलङ्खल्वोः – III. iv. 18
(प्रतिषेधवाची) अलं तथा खलु शब्द उपपद रहते (प्राचीन आचार्यों के मत में क्त्वा प्रत्यय होता है)।
अलङ्गामी – V. ii. 15
(द्वितीयासमर्थ अनुगु प्रातिपदिक से) 'पर्याप्त जाता है' अर्थ में (ख प्रत्यय होता है)।
अलम् – I. iv. 63
(भूषण अर्थ में वर्त्तमान) अलम् शब्द (क्रियायोग में गति और निपातसंज्ञक होता है)।
...अलम्... – II. iii. 16
देखें – नमःस्वस्तिस्वाहा० II. iii. 16
अलम् – III. iii. 154
अलम् अथवा तत्समानार्थक शब्द के (प्रयोग के बिना ही यदि उसका अर्थ प्रतीत हो रहा हो तो पर्याप्तिविशिष्ट सम्भावना) अर्थ में (धातु से लिङ् लकार होता है)।
अलम्... – III. iv. 18
देखें – अलङ्खल्वोः III. iv. 18
...अलमर्थाः – VI. ii. 155
देखें – संपाद्यर्ह० VI. ii. 155
अलमर्थेषु – III. iv. 66
सामर्थ्य अर्थ वाले (परिपूर्णतावाची) शब्दों के उपपद रहते (धातु से तुमुन् प्रत्यय होता है)।
...अलम्पुरुष... – V. iv. 7
देखें – अषडक्षा० V. iv. 7
अलर्षि – VII. iv. 65
अलर्षि शब्द (वेदविषय में) निपातन किया जाता है।
अलिटि – VII. ii. 37
(ग्रह धातु से उत्तर) लिट्-भिन्न (वलादि आर्धधातुक) परे रहते (इट् को दीर्घ होता है)।

अलिटि — VIII. i. 62

लिट्भिन्न (इडादि) प्रत्यय परे रहते (रध अङ्ग को नुम् आगम नहीं होता)।

अलुक् — IV. i. 89

(प्राग्दीव्यतीय अजादि प्रत्यय की विवक्षा हो तो गोत्र में उत्पन्न प्रत्यय का) लुक् नहीं होता।

अलुक् — VI. iii. 1

'अलुक्' (तथा 'उत्तरपदे' पद) का अधिकार आगे के सूत्रों में जाता है।

अलोपे — VI. iii. 93

(तिरस् शब्द को तिरि आदेश होता है, यदि अञ्चु का) लोप न हुआ हो तो।

अलोम... — VI. ii. 117

देखें — **अलोमोषसी VI. ii. 117**

अलोमोषसी — VI. ii. 117

(सु से परे मन् अन्तवाले तथा अस् अन्त वाले उत्तरपद शब्दों को बहुव्रीहि समास में आद्युदात्त होता है), लोमन् तथा उषस् शब्दों को छोड़कर।

...अल्प... — I. i. 32

देखें — **प्रथमचरमतयाल्पार्धकतिपयनेमाः I. i. 32**

...अल्प... — II. iii. 33

देखें — **स्तोकाल्पकृच्छ्र० II. iii. 33**

...अल्पयोः — V. iii. 64

देखें — **युवाल्पयोः V. iii. 64**

अल्पशः — II. i. 36

कुछ (पञ्चम्यन्त सुबन्त अपेत, अपोढ, मुक्त, पतित, अपत्रस्त – इन समर्थ सुबन्तों के साथ विकल्प से समास को प्राप्त होते हैं और वह तत्पुरुष समास होता है)।

अल्पाख्यायाम् — IV. i. 51

(करणपूर्व अनुपसर्जन क्तान्त प्रातिपदिक से) थोड़े की आख्या गम्यमान हो तो (स्त्रीलिङ्ग में ङीष् प्रत्यय होता है)।

अल्पाख्यायाम् — V. iv. 136

थोड़े की आख्या होने पर (बहुव्रीहि समास में गन्ध शब्द को समासान्त इकारादेश होता है)।

अल्पाच्तरम् — II. ii. 34

अपेक्षाकृत कम अच् वाला शब्द रूप (द्वन्द्व समास में पूर्व प्रयुक्त होता है)।

...अल्पार्थात् — V. iv. 42

देखें — **बह्वल्पार्थात् V. iv. 42**

अल्पे — V. iii. 85

'थोड़ा' अर्थ में वर्त्तमान (प्रातिपदिक से तथा तिङन्त से यथाविहित प्रत्यय होते हैं)।

अल्लोपः — VI. iv. 111

(श्नम् प्रत्यय तथा अस् धातु के) अकार का लोप होता है ; (कित्, ङित् सार्वधातुक परे रहते)।

अल्लोपः — VI. iv. 134

(भसञ्ज्ञक अन् अन्तवाले अङ्ग के अन् के) अकार का लोप होता है।

...अव्... — VI. i. 75

देखें — **अयवायावः VI. i. 75**

...अव... — I. iii. 22

देखें — **समवप्रविभ्यः I. iii. 22**

...अव... — II. iii. 57

देखें — **व्यवहृपणोः II. iii. 57**

अव... — III. iii. 26

देखें — **अवोदोः III. iii. 26**

अव... — III. iii. 45

देखें — **अवन्योः III. iii. 45**

अव... — V. iv. 79

देखें — **अवसमन्धेभ्यः V. iv. 79**

...अव... — V. iv. 81

देखें — **अन्ववतप्तात् V. iv. 81**

...अव... — VI. iv. 20

देखें — **ज्वरत्वर० VI. iv. 20**

...अवः — V. iii. 39

देखें — **पुरधवः V. iii. 39**

...अवः — VIII. ii. 70

देखें — **अम्नरुधरवः VIII. ii. 70**

...अवक्रमुः ...— VI. i. 112

देखें — **अव्यादवद्यात्० VI. i. 112**

अवक्रयः — IV. iv. 50

(षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिक से) अवक्रय अर्थ में (ठक् प्रत्यय होता है)।

अवक्रय = नियत मूल्य पर नियत काल के लिये किसी द्रव्य का लेना।

...अवक्षेपण... — I. iii. 32
देखें — **गन्धनावक्षेपणसेवन० I. iii. 32**

अवक्षेपणे — V. iii. 95
'अवक्षेपण'=निन्दा अर्थ में वर्त्तमान (प्रातिपदिक से कन् प्रत्यय होता है)।

अवक्षेपणे — VI. ii. 195
(सु उपसर्ग से परवर्ती उत्तरपद को तत्पुरुष समास में अन्तोदात्त होता है), निन्दा गम्यमान हो तो।

अवग्रहात् — VIII. iv. 25
(वेदविषय में ऋकारान्त) अवगृह्यमाण पूर्वपद से उत्तर (नकार को णकार आदेश होता है)।
अवग्रह =पदपाठकाल में पदों को अलग अलग रखना।

अवङ् — VI. i. 119
(अच् परे रहते पदान्त में गो शब्द को विकल्प से) अवङ् आदेश होता है, (स्फोटायन आचार्य के मत में)।

अवचक्षे — III. iv. 15
(कृत्यार्थ अभिधेय हो तो वेदविषय में) अवपूर्वक चक्षिङ् धातु से शे प्रत्ययान्त अवचक्षे शब्द (भी) निपातन किया जाता है।

अवज्ञाने — III. iii. 55
तिरस्कार अर्थ में वर्त्तमान (परिपूर्वक भू धातु से कर्तृ-भिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में विकल्प से घञ् प्रत्यय होता है, पक्ष में अच् होता है)।

अवत्याः — VI. i. 214
स्त्रीत्वविशिष्ट अवती-शब्दान्त को (सञ्ज्ञा विषय में अन्त्य को उदात्त होता है)।

अवद्य... — III. i. 101
देखें — **अवद्यपण्य० III. i. 101**

अवद्यपण्यवर्याः — III. i. 101
अवद्य, पण्य, वर्य – ये शब्द (यथासंख्य करके गर्ह्य, पणितव्य और अनिरोध अर्थों में यत्प्रत्ययान्त निपातन किये जाते है)।

...अवद्यात्... — VI. i. 112
देखें — **अव्यादवद्यात्० VI. i. 112**

अवधारणम् — VIII. i. 62
(च तथा अह शब्द का लोप होने पर प्रथम तिङन्त को अनुदात्त नहीं होता, यदि एव शब्द वाक्य में) अव-धारण=निश्चय अर्थ में प्रयुक्त किया गया हो तो।

अवधारणे — II. i. 8
अवधारण= इयत्तापरिच्छेद अर्थ में वर्त्तमान (यावत् अव्यय का समर्थ सुबन्त के साथ अव्ययीभाव समास होता है)।

अवन्ति... — IV. i. 174
देखें — **अवन्तिकुन्तिकुरुभ्यः IV. i. 174**

अवन्तिकुन्तिकुरुभ्यः — IV. i. 174
(क्षत्रियाभिधायी जनपदवाची) अवन्ति, कुन्ति तथा कुरु शब्द से (भी उत्पन्न तद्राजसंज्ञक प्रत्ययों का स्त्रीलिङ्ग अभिधेय हो तो लुक् हो जाता है)।

...अवन्तु... — VI. i. 112
देखें — **अव्यादवद्यात्० VI. i. 112**

अवन्योः — III. iii. 45
(आक्रोश गम्यमान हो तो) अव तथा नि पूर्वक (ग्रह् धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

अवपथासि — VI. i. 117
अवपथाः शब्द में (भी जो अनुदात्त अकार, उसके परे रहते यजुर्वेद विषय में एङ् को प्रकृतिभाव होता है)।

...अवपूर्वस्य — VI. i. 26
देखें — **अभ्यवपूर्वस्य VI. i. 26**

...अवपूर्वात् — V. iv. 75
देखें — **प्रत्यन्ववपूर्वात् V. iv. 75**

...अवम... — VI. ii. 25
देखें — **श्रज्यावम० VI. ii. 25**

...अवयवाः — II. i. 44
देखें — **अहोरात्रावयवाः II. i. 44**

अवयवाः — VI. ii. 176
(बहुव्रीहि समास में बहु से उत्तर) गुणादिगणपठित अवयववाची शब्दों को (अन्तोदात्त नहीं होता)।

अवयवात् — VII. iii. 2
अवयववाची पूर्वपद से उत्तर (ऋतुवाची उत्तरपद शब्द के अचों में आदि अच् को ञित्, णित् तथा कित् तद्धित प्रत्यय परे रहते वृद्धि होती है)।

अवयवे — IV. iii. 132
(षष्ठीसमर्थ प्राणिवाची, ओषधिवाची तथा वृक्षवाची प्रातिपदिकों से) अवयव (तथा विकार) अर्थ में (यथा-विहित प्रत्यय होता है)।

अवयवे — V. ii. 42
'अवयव' अर्थ में वर्त्तमान (सङ्ख्यावाची प्रातिपदिकों से षष्ठ्यर्थ में तयप् प्रत्यय होता है)।

अवयसि — V. i. 83
(षण्मास प्रातिपदिक से) अवस्था अभिधेय न हो तो ('हो चुका' अर्थ में ठन् तथा ण्यत् प्रत्यय होते हैं)।

अवयाः — VIII. ii. 67
दीर्घ किये हुए अवयाः शब्द का सम्बुद्धि में निपातन किया जाता है।

...अवर... — I. i. 33
देखें — **पूर्वपरावरदक्षिणोत्तरापराधराणि I. i. 33**

...अवर... — IV. iii. 5
देखें — **परावराधमो० IV. iii. 5**

...अवरयोगे — III. iv. 18
देखें — **परावरयोगे III. iv. 18**

...अवरसमात् — IV. iii. 49
देखें — **ग्रीष्मावरसमात् IV. iii. 49**

अवरस्मिन् — III. iii. 136
अवर प्रविभाग अर्थात् इधर के भाग को लेकर (मर्यादा कहनी हो तो भविष्यत्काल में धातु से अनद्यतनवत् प्रत्ययविधि नहीं होती है)।

अवरस्य — V. iii. 41
(सप्तमी, पञ्चमी, प्रथमान्त दिशा, देश तथा कालवाची) अवर शब्द को (अस्तात् प्रत्यय के परे रहते विकल्प से अवादेश होता है)।

...अवराणाम् — V. iii. 39
देखें — **पूर्वाधरा० V. iii. 39**

...अवराभ्याम् — V. iii. 29
देखे— **परावराभ्याम् V. iii. 29**

...अवर्ण... — VI. i. 176
देखें—**गोश्वन्साववर्णराडङ्क्रुङ्कृद्भ्यः VI. i. 176**

अवर्णम् — VI. ii. 90
(अर्म शब्द उत्तरपद रहते भी) अवर्णान्त (दो तथा तीन अचों वाले महत् एवं नव से भिन्न) पूर्वपद को (आद्युदात्त होता है)।

अवर्णस्य — VI. iii. 111
(ढकार और रेफ का लोप होने पर सह तथा वह धातु के) अवर्ण को (ओकारादेश होता है)।

अवर्म्मणः — VI. iv. 170
(अपत्यार्थक अण् के परे रहते) वर्मन् शब्द के अन् को छोड़कर (जो मकार पूर्व वाला अन्, उसको प्रकृतिभाव नहीं होता)।

अवष्टब्धे — V. ii. 13
(अद्यश्वीन शब्द निपातित किया जाता है), आसन्न = निकट प्रसव को कहना हो तो ।

...अवस् — VIII. ii. 70
देखें — **अम्नरूधर० VIII. ii. 70**

अवसमन्धेभ्यः — V. iv. 79
अव, सम् तथा अन्ध शब्दों से उत्तर (तमस् शब्दान्त प्रातिपदिक से समासान्त अच् प्रत्यय होता है)।

...अवसा... — III. i. 141
देखें — **श्याद्व्यधा० III. i. 141**

अवसानम् — I. iv. 109
(विराम = वर्णोच्चारण के अभाव की) अवसान संज्ञा होती है।

...अवसानयोः — VIII. iii. 15
देखें — **खरवसानयोः VIII. iii. 15**

अवसाने — VIII. iv. 55
अवसान में वर्त्तमान (झलों को विकल्प करके चर् आदेश होता है)।

अवस्करः — VI. i. 143
(अन्न का कचरा अभिधेय हो तो) अवस्कर शब्द में सुट् आगम का निपातन किया जाता है।

...अवस्करात् — IV. iii. 28
देखें — **पूर्वाह्णापराह्णा० IV. iii. 28**

अवस्थायाम् — V. iv. 146
(ककुद-शब्दान्त बहुव्रीहि का समासान्त लोप होता है), समुदाय से अवस्था गम्यमान होने पर।

अवस्थायाम् — VI. ii. 115
अवस्था गम्यमान होने पर (तथा सञ्ज्ञा एवं उपमा विषय में बहुव्रीहि समास में उत्तरपद शृङ्ग शब्द को आद्युदात्त होता है)।

...अवस्युषु — VI. i. 112
देखें — **अव्यादवद्यात्० VI. i. 112**

अवहरति — V. i. 51
(द्वितीयासमर्थ प्रातिपदिक से 'सम्भव है'), 'अवहरण करता है' (और 'पकाता है') अर्थ में (यथाविहित प्रत्यय होते हैं)।

...अवह... — III. i. 141
देखें — श्यादव्यधा० III. i. 141

अवात् — I. III. 51
अव उपसर्ग से उत्तर ('गॄ निगरणे' धातु से आत्मनेपद होता है)।

अवात् — V. ii. 30
अव उपसर्ग प्रातिपदिक से (कुटारच् तथा कटच् प्रत्यय होते हैं)।

अवात् — VIII. iii. 68
अव उपसर्ग से उत्तर (भी स्तन्भु के सकार को आश्रयण एवं समीपता अर्थ में मूर्धन्य आदेश होता है)।

अवाते — VIII. ii. 50
(निस् पूर्वक वा धातु से उत्तर निष्ठा के तकार को नकार आदेश करके निर्वाण शब्द) वात अर्थात् वायु अभिधेय न होने पर (निपातित है)।

अवारपार... — V. ii. 11
देखें — अवारपारात्यन्त० V. ii. 11

...अवारपारात् — IV. ii. 92
देखें — राष्ट्रावारपारात् IV. ii. 92

अवारपारात्यन्तानुकामम् — V. ii. 11
(द्वितीयासमर्थ) अवारपार, अत्यन्त तथा अनुकाम प्रातिपदिकों से ('भविष्य में जानेवाला' अर्थ में ख प्रत्यय होता है)।

...अवि... — VI. iv. 20
देखें — ज्वरत्वरस्रिव्यविमवाम् VI. iv. 20

अवि... — VII. iii. 85
देखें — अविचिण० VII. iii. 85

अविचिणल्ङित्सु — VII. iii. 85
वि, चिण्, णल् तथा ङ् इत् वाले प्रत्ययों को छोड़कर (अन्य सार्वधातुक, आर्धधातुक प्रत्ययों के परे रहते जागृ अङ्ग को गुण होता है)।

अविजिगीषायाम् — VIII. ii. 47
(दिव् धातु से उत्तर) जीतने की इच्छा से भिन्न अर्थ में (निष्ठा के तकार को नकारादेश होता है)।

अविदर्थस्य — II. iii. 51
जानने से भिन्न अर्थ वाली (ज्ञा धातु) के (करण कारक में शेष विवक्षित होने पर षष्ठी विभक्ति होती है)।

अविद्यमानवत् — VIII. i. 72
(किसी पद से पूर्व आमन्त्रित सञ्ज्ञक पद हो तो वह आमन्त्रित पद) अविद्यमान के समान माना जाये।

अविप्रकृष्टकाले — V. iv. 20
आसन्नकालिक (क्रिया की अभ्यावृत्ति के गणन) अर्थ में वर्त्तमान (बहु प्रातिपदिक से विकल्प से धा प्रत्यय होता है)।

अविप्रकृष्टाख्यानाम् — II. iv. 5
(अध्ययन की दृष्टि से) समीपस्थ पदार्थों के वाचक शब्दों का (द्वन्द्व एकवत् हो जाता है)।

...अविभ्याम् — V. i. 8
देखें — अजाविभ्याम् V. i. 8

अविशब्दने — VII. ii. 23
(निष्ठा परे रहते घुषिर् धातु शब्दों द्वारा) अपने भावों को प्रकाशन करने से भिन्न अर्थ में (अनिट् होती है)।

अविशेषे — IV. ii. 4
(यदि नक्षत्रविशेष से युक्त काल का रात्रि आदि) विशेष-रूप विवक्षित न हो तो (पूर्वसूत्रविहित प्रत्यय का लुप् हो जाता है)।

अविष्ट ... — VI. iii. 114
देखें — अविष्टाष्ट० VI. iii. 114

अविष्टाष्टपञ्चमणिभिन्नच्छिन्नच्छिद्रस्रुवस्वस्तिकस्य — VI. iii. 114
(कर्ण शब्द उत्तरपद रहते) विष्ट, अष्टन्, पञ्चन्, मणि, भिन्न, छिन्न, छिद्र, स्रुव, स्वस्तिक – इन शब्दों को छोड़कर (लक्षणवाची शब्दों के अण् को दीर्घ होता है, संहिता के विषय में)।

...अविस्पष्ट ... — VIII. ii. 18
देखें — मन्यमनस्० VIII. ii. 18

अवृद्धम् — VI. ii. 87
(प्रस्थ शब्द उत्तरपद रहते कर्क्यादिगण तथा) वृद्धसंज्ञक शब्दों को छोड़कर (पूर्वपद को आद्युदात्त होता है)।

अवृद्धात् — IV. i. 160
(प्राचीन आचार्यों के मत में) वृद्धसंज्ञाभिन्न प्रातिपदिक से (अपत्यार्थ में बहुल करके फिन् प्रत्यय होता है, अन्यथा इञ्)।

अवृद्धात् — IV. ii. 124

(जनपद तथा जनपदसीमावाची) वृद्धसंज्ञाभिन्न (तथा वृद्ध भी बहुवचनविषयक) प्रातिपदिकों से (शैषिक वुञ् प्रत्यय होता है)।

अवृद्धाभ्यः — IV. i. 113

जिनकी वृद्धसंज्ञा न हो, ऐसे (नदी तथा मानुषी अर्थ वाले; नदी, मानुषी नाम वाले) प्रातिपदिकों से (अपत्य अर्थ में अण् प्रत्यय होता है)।

अवे — III. ii. 72

अव उपसर्ग उपपद रहते (यज धातु से मन्त्र विषय में 'ण्विन्' प्रत्यय होता है)।

अवे — III. iii. 51

(वर्षा के समय में भी वर्षा का न होना अभिधेय होने पर) अव उपसर्ग पूर्वक (ग्रह धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में विकल्प से घञ् प्रत्यय होता है)।

अवे — III. iii. 120

अव उपसर्ग पूर्वक (तृ, स्तृञ् धातुओं से करण और अधिकरण कारक में प्रायः करके घञ् प्रत्यय होता है, संज्ञाविषय हो तो)।

अवेः — V. iv. 28

अवि प्रातिपदिक से (स्वार्थ में क प्रत्यय होता है)।

...अवेभ्यः — I. iii. 18

देखें — **परिव्यवेभ्यः I. iii. 18**

अवोद... — VI. iv. 29

देखें — **अवोदैधौ० VI. iv. 29**

अवोदैधौद्मप्रश्रथहिमश्रथाः — VI. iv. 29

अवोद, एध, ओद्म, प्रश्रथ तथा हिमश्रथ - ये शब्द निपातन किये जाते हैं।

अवोदोः — III. iii. 26

अव और उद् पूर्वक (णी धातु से कर्तृभिन्न संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

अव्यक्तानुकरणस्य — VI. i. 95

अव्यक्त के अनुकरण का (जो अत् शब्द, उससे उत्तर इति शब्द परे रहते पूर्व पर के स्थान में पररूप एकादेश होता है, संहिता के विषय में)।

अव्यक्तानुकरणात् — V. iv. 57

अव्यक्त शब्द के अनुकरण से (जिसमें अर्धभाग दो अच् वाला हो ; उससे कृ, भू तथा अस् के योग में डाच् प्रत्यय होता है, यदि इति शब्द परे न हो तो)।

...अव्यथ... — III. ii. 157

देखें — **जिदृक्षि० III. ii. 157**

...अव्यथन... — V. iv. 46

देखें — **अतिग्रहाव्यथन० V. iv. 46**

अव्यथिष्यै — III. iv. 10

(प्रयै, रोहिष्यै तथा) अव्यथिष्यै शब्द (वेद-विषय में तुमर्थ में निपातन किये जाते हैं)।

...अव्यथ्याः — III. i. 114

देखें — **राजसूयसूर्य० III. i. 114**

अव्यपरे — VI. i. 111

वकार, यकारपरक भिन्न अकार परे रहने पर (पाद के मध्य में वर्तमान एङ् को प्रकृतिभाव होता है)।

...अव्यय... — II. ii. 11

देखें — **पूरणगुणसुहितार्थ० II. ii. 11**

अव्यय... — II. ii. 25

देखें — **अव्ययासन्नादूरा० II. ii. 25**

...अव्यय... — II. iii. 69

देखें — **लोकाव्ययनिष्ठा० II. iii. 69**

अव्यय... — V. iii. 71

देखें — **अव्ययसर्वनाम्नाम् V. iii. 71**

...अव्यय... — VI. ii. 2

देखें — **तुल्यार्थ० VI. ii. 2**

अव्यय... — VI. ii. 168

देखें — **अव्ययदिक्शब्द० VI. ii. 168**

...अव्ययघात् — V. iv. 11

देखें — **किमेत्तिङ० V. iv. 11**

अव्ययदिक्शब्दगोमहत्स्थूलमुष्टिपृथुवत्सेभ्यः — VI. ii. 168

(बहुव्रीहि समास में) अव्यय, दिक्शब्द, गो, महत्, स्थूल, मुष्टि, पृथु, वत्स — इनसे उत्तर (स्वाङ्गवाची मुख शब्द उत्तरपद को अन्तोदात्त नहीं होता)।

अव्ययम् — I. i. 36

(स्वरादिगणपठित शब्दों की तथा निपातों की) अव्यय संज्ञा होती है।

अव्ययम् — I. iv. 66

अव्यय (पुरस् शब्द क्रियायोग में गति और निपात संज्ञक होता है)।

अव्ययम् — II. i. 6
(विभक्ति, समीप, समृद्धि, व्यृद्धि, अर्थाभाव, अत्यय, असम्प्रति, शब्दप्रादुर्भाव, पश्चात्, यथा, आनुपूर्व्य, यौगपद्य, सादृश्य, सम्पत्ति, साकल्य, अन्तवचन – इन अर्थों में विद्यमान) अव्यय पद (समर्थ सुबन्त के साथ समास को प्राप्त होता है और वह अव्ययीभाव समास होता है)।

अव्ययसर्वनाम्नाम् — V. iii. 71
अव्यय तथा सर्वनामवाची प्रातिपदिकों (एवं तिङन्तों) से (इवार्थ से पहले पहले अकच् प्रत्यय होता है और वह टि से पूर्व होता है)।

अव्ययात् — II. iv. 82
अव्यय के उत्तर (आप् और सुप् प्रत्ययों का लुक् होता है)।

अव्ययात् — IV. ii. 103
अव्यय प्रातिपदिकों से (शैषिक त्यप् प्रत्यय होता है)।

...अव्ययादेः — IV. i. 26
देखें — **संख्याव्ययादेः IV. i. 26**

...अव्ययादेः — V. iv. 86
देखें — **संख्याव्ययादेः V. iv. 86**

अव्ययासन्नादूराधिकसङ्ख्याः — II. ii. 25
(सङ्ख्येय में वर्तमान सङ्ख्या के साथ) अव्यय, आसन्न, अदूर, अधिक तथा सङ्ख्या (विकल्प से समास को प्राप्त होते हैं, और वह समास बहुव्रीहि सञ्ज्ञक होता है)।

अव्ययीभावः — I. i. 40
अव्ययीभाव समास (भी अव्ययसंज्ञक होता है)।

अव्ययीभावः — II. i. 5
यहाँ से अव्ययीभाव समास अधिकृत होता है।

अव्ययीभावः — II. iv. 18
अव्ययीभाव समास (भी नपुंसकलिंग होता है)।

अव्ययीभावात् — II. iv. 83
(अदन्त) अव्ययीभाव से उत्तर (सुप् का लुक् नहीं होता, अपितु पञ्चमीभिन्न सुप् प्रत्यय के स्थान में 'अम्' आदेश हो जाता है)।

अव्ययीभावात् — IV. iii. 59
(सप्तमीसमर्थ) अव्ययीभावसंज्ञक प्रातिपदिक से (भी भवार्थ में ञ्य प्रत्यय होता है)।

अव्ययीभावे — V. iv. 107
अव्ययीभाव समास में वर्तमान (शरदादि प्रातिपदिकों से समासान्त टच् प्रत्यय होता है)।

अव्ययीभावे — VI. ii. 121
(उत्तरपद कूल, तीर, तूल, मूल, शाला, अक्ष, सम – इन शब्दों को) अव्ययीभाव समास में (आद्युदात्त होता है)।

अव्ययीभावे — VI. iii. 80
अव्ययीभाव समास में (भी अकालवाची शब्दों के उत्तरपद रहते सह को स आदेश होता है)।

अव्यये — III. iv. 59
(इष्ट का कथन जैसा होना चाहिये वैसा न होना गम्यमान हो तो) अव्यय शब्द उपपद रहते (कृञ् धातु से क्त्वा और णमुल् प्रत्यय होते हैं)।

अव्ययेन — II. ii. 20
(अव्यय के साथ उपपद का यदि समास हो तो वह अमन्त) अव्यय के साथ (ही हो, अन्यों के साथ नहीं)।

...अव्ययेभ्यः — IV. iii. 23
देखें — **सायंचिरम्० IV. iii. 23**

अव्यात्... — VI. i. 112
देखें — **अव्यादवद्यात्० VI. i. 112**

अव्यादवद्यादवक्रमुरव्रतायमवन्त्ववस्युषु — VI. i. 112
अव्यात्, अवद्यात्, अवक्रमु, अव्रत, अयम्, अवन्तु, अवस्यु – इन शब्दों में (वर्तमान अकार के परे रहते पाद के मध्य में जो एङ्, उसको भी प्रकृतिभाव हो जाता है)।

...अव्रत... — VI. i. 112
देखें — **अव्यादवद्यात्० VI. i. 112**

अश् — II. iv. 32
(अन्वादेश में वर्तमान इदम् के स्थान में अनुदात्त) अश् आदेश होता है, (तृतीया आदि विभक्तियों के परे रहते)।

अश् — VII. i. 27
(युष्मद् तथा अस्मत् अङ्ग से उत्तर ङस् के स्थान में) अश् आदेश होता है।

अशक्तौ — VI. ii. 157
(नञ् से उत्तर अच्प्रत्ययान्त तथा अक प्रत्ययान्त उत्तरपद को) सामर्थ्य का अभाव गम्यमान हो तो (अन्तोदात्त होता है)।

अशते — V. i. 21
(शत प्रातिपदिक से 'तदर्हति' पर्यन्त कथित अर्थों में ठन् और यत् प्रत्यय होते है), यदि सौ अभिधेय न हो तो।

अशनाय... — VII. iv. 34
देखें — **अशनायोदन्य० VII. iv. 34**

अशनायोदन्यधनायाः — VII. iv. 34
अशनाय, उदन्य, धनाय – ये शब्द (क्रमशः बुभुक्षा, पिपासा, गर्ध अर्थात् लोभ – इन अर्थों में निपातन किये जाते हैं)।

अशप्... — VII. i. 63
देखें — **अशब्लिटोः VII. i. 63**

अशपथे — V. iv. 66
(सत्य प्रातिपदिक से) सौगन्ध वाच्य न हो तो (कृञ् के योग में डाच् प्रत्यय होता है)।

अशब्दसञ्ज्ञा — I. i. 67
(व्याकरणशास्त्र में) शब्दसंज्ञा को छोड़कर (शब्दों के अपने स्वरूप का ग्रहण होता है, उनके अर्थ अथवा पर्यायवाची शब्दों का नहीं)।

अशब्दसञ्ज्ञायाम् — VII. iii. 67
शब्द की सञ्ज्ञा न हो तो (वच् अङ्ग को ण्य परे रहते कवर्गादेश नहीं होता)।

अशब्दे — III. iii. 33
(विपूर्वक स्तृञ् धातु से) शब्दविषयभिन्न (विस्तार) को कहना हो तो (कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

अशब्दे — IV. iii. 64
(सप्तमीसमर्थ वर्गान्त प्रातिपदिक से) शब्दभिन्न प्रत्ययार्थ अभिधेय होने पर (भव अर्थ में विकल्प से यत् तथा ख प्रत्यय होते हैं)।

अशब्लिटोः — VII. i. 63
शप् तथा लिड्वर्जित (अजादि) प्रत्ययों के परे रहते ('रभ राभस्ये' अङ्ग को नुम् आगम होता है)।

अशरीरे — I. iii. 36
(कर्ता में स्थित) शरीरभिन्न (कर्म के) होने पर (भी णीञ् धातु से आत्मनेपद होता है)।

...अशाम् — VII. ii. 74
देखें — **स्मिपूङ्० VII. ii. 74**

अशाला — II. iv. 24
शाला अर्थ से भिन्न (जो सभा, तदन्त नञ्कर्मधारयभिन्न तत्पुरुष भी नपुंसकलिंग में होता है)।

शाला अर्थात् घर या भवन।

अशि — VIII. iii. 17
(भो, भगो, अघो तथा अवर्ण पूर्व में है जिस रु के, उसके पूर्व को यकार आदेश होता है), अश् परे रहते।

अशिति — VI. i. 44
(उपदेश अवस्था में जो एजन्त धातु, उसको आकारादेश हो जाता है), शित् प्रत्ययों से भिन्न प्रत्ययों के विषय में।

अशिश्वी — IV. i. 62
(सखी तथा) अशिश्वी शब्द (स्त्रीलिंग में ङीप् प्रत्ययान्त निपातन किये जाते हैं, भाषा विषय हो तो)।

अशिष्यम् — I. ii. 53
(उस उपर्युक्त युक्तवद् भाव को) पूर्णतया शासित नहीं किया जा सकता, (उसके लौकिक व्यवहार के अधीन होने से)।

...अशीति... — V. i. 58
देखें — **पंक्तिविंशति० V. i. 58**

...अशीत्योः — VI. iii. 46
देखें — **अबहुव्रीह्यशीत्योः VI. iii. 46**

अशूद्रे — VIII. ii. 83
शूद्र से अन्य विषय में (प्रत्यभिवाद वाक्य के पद की टि को प्लुत होता है और वह प्लुत उदात्त होता है)।

अश्नोतेः — VII. iv. 72
'अशूङ् व्याप्तौ' अङ्ग के (दीर्घ किये हुये अभ्यास से उत्तर भी नुट् आगम होता है)।

...अश्म... — IV. ii. 79
देखें — **अरीहणकृशाश्व० IV. ii. 79**

...अश्म... — V. iv. 94
देखें — **अनोश्मायः० V. iv. 94**

...अश्म... — VI. ii. 91
देखें — **भूताधिक० VI. ii. 91**

...अश्मकात् — IV. i. 171
देखें — **साल्वावयवप्रत्यग्रथ० IV. i. 171**

अश्लील...— VI. ii. 42
देखें — **अश्लीलदृढरूपा VI. ii. 42**

अश्लीलदृढरूपा — VI. ii. 42
'अश्लीलदृढरूपा' इस समास किये हुये शब्द के (पूर्वपद को प्रकृतिस्वर होता है)।

अश्व... — II. iv. 27
देखें — **अश्ववडवौ II. iv. 27**

...अश्व... — V. iii. 91
देखें — **वत्सोक्षा० V. iii. 91**

...अश्व... — VI. iii. 107
देखें — उदराश्वेषुषु VI. iii. 107

...अश्व... — VI. iii. 130
देखें — सोमाश्वे० VI. iii. 130

अश्व... — VII. i. 51
देखें — अश्वक्षीर० VII. i. 51

अश्व... — VII. iv. 37
देखें — अश्वाघस्य VII. iv. 37

अश्वक्षीरवृषलवणानाम् — VII. i. 51
अश्व, क्षीर, वृष, लवण – इन अङ्गों को (क्यच् परे रहते असुक् आगम होता है, आत्मा की प्रीति विषय में)।

...अश्वत्थ... — IV. iii. 48
देखें — कलाप्यश्वत्थ० IV. iii. 48

...अश्वत्थात् — IV. ii. 21
देखें — आग्रहायण्यश्वत्थात् IV. ii. 21

...अश्वत्थाभ्याम् — IV. ii. 5
देखें — श्रवणाश्वत्थाभ्याम् IV. ii. 5

अश्वपत्यादिभ्यः — IV. i. 84
अश्वपति आदि (समर्थ) प्रातिपदिकों से (भी प्राग्दीव्यतीय अर्थों में अण् प्रत्यय होता है)।

...अश्वयुज्... — IV. iii. 36
देखें — वत्सशालाभिजि० IV. iii. 36

...अश्ववडव... — II. iv. 12
देखें — वृक्षमृगतृणधान्य० II. iv. 12

अश्ववडवौ — II. iv. 27
अश्ववडव (का द्वन्द्व समास करने पर पूर्व शब्द के समान लिंग होता है)।

अश्वस्य — V. ii. 19
षष्ठीसमर्थ अश्व प्रातिपदिक से ('एक दिन में जाया जा सकने वाला मार्ग' कहना हो तो खञ् प्रत्यय होता है)।

अश्वाघस्य — VII. iv. 37
अश्व तथा अघ अङ्गों को (क्यच् परे रहते वेद-विषय में आकारादेश होता है)।

अश्वादिभ्यः — IV. i. 110
(षष्ठीसमर्थ) अश्वादि प्रातिपदिकों से (गोत्रापत्य में फञ् प्रत्यय होता है)।

...अश्वादेः — V. i. 38
देखें — असंख्यापरिमाण० V. i. 38

...अश्वाभ्याम् — IV. ii. 47
देखें — केशाश्वाभ्याम् IV. ii. 47

अश्विमान् — IV. iv. 127
(उपधान मन्त्र समानाधिकरण वाले प्रथमासमर्थ मतुबन्त) अश्विमान् प्रातिपदिक से (षष्ठ्यर्थ में इष्टका अभिधेय हो तो अण् प्रत्यय होता है, तथा उसके संयोग से मतुप् का लुक् होता है, वेद-विषय में)।

अषडक्ष... — V. iv. 7
देखें — अषडक्षाशितं० V. iv. 7

अषडक्षाशितंग्वलंकर्मालंपुरुषाध्युत्तरपदात् — V. iv. 7
अषडक्ष, आशितंगु, अलंकर्म, अलम्पुरुष शब्दों से तथा अधि शब्द उत्तरपद वाले प्रातिपदिकों से (स्वार्थ में ख प्रत्यय होता है)।

अषष्ठी... — VI. iii. 98
देखें — अषष्ठ्यतृतीयास्थस्य VI. iii. 98

अषष्ठ्यतृतीयास्थस्य — VI. iii. 98
(आशीष, आशा, आस्था, आस्थित, उत्सुक, ऊति, कारक, राग तथा छ प्रत्यय के परे रहते) अषष्ठीस्थित तथा अतृतीयास्थित (अन्य) शब्द को (दुक् आगम होता है)।

...अषाढा... — IV. iii. 34
देखें — श्रविष्ठाषाढा० IV. iii. 34

अषान्ते — VIII. iv. 18
(उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर) जो (उपदेश में ककार तथा खकार आदिवाला नहीं है, एवं) षकारान्त (भी) नहीं है, ऐसे (शेष) धातु के परे रहते (नि के नकार को विकल्प से णकारादेश होता है)।

...अष्ट... — VI. iii. 114
देखें — अविष्टाष्ट० VI. iii. 114

अष्टनः — VI. i. 166
(दीर्घ अन्त वाले) अष्टन् शब्द से उत्तर (सर्वनामस्थानभिन्न विभक्ति उदात्त होती है)।

...अष्टनः — VI. iii. 46
देखें — द्व्यष्टनः VI. iii. 46

अष्टनः — VI. iii. 124
अष्टन् शब्द को (उत्तरपद परे रहते सञ्ज्ञा-विषय में दीर्घ होता है)।

अष्टनः — VII. ii. 84

अष्टन् अङ्ग को (विभक्ति परे रहते आकारादेश हो जाता है)।

...अष्टमाभ्याम् — V. iii. 50

देखें — षष्ठाष्टमाभ्याम् V. iii. 50

अष्टानाम् — VII. iii. 74

(शम् इत्यादि) आठ अङ्गों को (श्यन् परे रहते दीर्घ होता है)।

अष्टाभ्यः — III. ii. 141

(शमादि) आठ धातुओं से (तच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमान काल में घिनुण् प्रत्यय होता है)।

अष्टाभ्यः — VII. i. 21

आत्त्व किये हुये अष्ट शब्द से उत्तर (जश् और शस् के स्थान में औश् आदेश होता है)।

अष्ठीवत् — VIII. ii. 12

अष्ठीवत् शब्द का निपातन किया जाता है।

अस्... — V. ii. 121

देखें — अस्माया० V. ii. 121

असंयोगपूर्वस्य — VI. iv. 83

(धातु का अवयव) संयोग पूर्व नहीं है जिस (इवर्ण) के, तदन्त (अनेकाच्) अंग को (अजादि सुप् परे रहते यणादेश होता है)।

असंयोगपूर्वात् — VI. iv. 107

संयोग पूर्व में नहीं है जिसके, ऐसे (उकारान्त) अङ्ग से उत्तर (भी हि का लुक् हो जाता है)।

असंयोगात् — I. ii. 5

असंयोगान्त धातु से परे (अपित् लिट् प्रत्यय कित् के समान होता है)।

असंयोगोपधात् — IV. i. 54

(स्वाङ्गवाची उपसर्जन और) असंयोग उपधावाले (अदन्त) प्रातिपदिक से (स्त्रीलिंग में विकल्प से ङीप् प्रत्यय होता है)।

असखि — I. iv. 7

(नदी संज्ञा से अवशिष्ट ह्रस्व इकारान्त उकारान्त शब्दों की घिसंज्ञा होती है), सखि शब्द को छोड़कर।

असङ्ख्या... — V. i. 39

देखें — असङ्ख्यापरिमाणा० V. i. 39

असङ्ख्यादेः — V. ii. 49

सङ्ख्या आदि में न हो जिसके, ऐसे (सङ्ख्यावाची षष्ठीसमर्थ नकारान्त) प्रातिपदिकों से ('पूरण' अर्थ में विहित डट् प्रत्यय को मट् का आगम होता है)।

असङ्ख्यादेः — V. ii. 58

सङ्ख्या आदि में न हो जिनके, ऐसे (षष्ठीसमर्थ सङ्ख्यावाची षष्टि आदि) प्रातिपदिक से (भी 'पूरण' अर्थ में विहित डट् प्रत्यय को नित्य ही तमट् आगम होता है)।

असङ्ख्यापरिमाणाश्वादेः — V. i. 38

सङ्ख्यावाची, परिमाणवाची तथा अश्वादि से भिन्न (षष्ठीसमर्थ गो शब्द तथा दो अच् वाले) प्रातिपदिकों से ('कारण' अर्थ में यत् प्रत्यय होता है, यदि वह कारण संयोग का उत्पात हो तो)।

असञ्ज्ञा...— VII. iii. 17

देखें — असंज्ञाशाणयोः VII. iii. 17

असञ्ज्ञायाम् — I. i. 33

(पूर्व, पर, अवर, दक्षिण, उत्तर, अपर, अधर शब्दों की जस् सम्बन्धी कार्यों में विकल्प से सर्वनाम संज्ञा होती है, यदि) संज्ञाभिन्न (व्यवस्था) गम्यमान हो तो।

असञ्ज्ञायाम् — III. i. 112

असंज्ञाविषय में (भृञ् धातु से क्यप् प्रत्यय होता है)।

असञ्ज्ञायाम् — III. ii. 180

संज्ञा गम्यमान न हो तो (वि, प्र तथा सम्पूर्वक भू धातु से डु प्रत्यय होता है, वर्तमान काल में)।

असञ्ज्ञायाम् — IV. ii. 106

संज्ञा में वर्तमान न हो तो (दिशावाची शब्द पूर्वपद वाले प्रातिपदिक से शैषिक ञ प्रत्यय होता है)।

असञ्ज्ञायाम् — IV. iii. 146

(षष्ठीसमर्थ तिल तथा यव प्रातिपदिकों से) संज्ञा गम्यमान न हो तो (विकार और अवयव अर्थों में मयट् प्रत्यय होता है)।

असञ्ज्ञायाम् — V. i. 24

(विंशति तथा त्रिंशद् प्रातिपदिकों से 'तदर्हति' पर्यन्त कथित अर्थों में ड्वुन् प्रत्यय होता है), सञ्ज्ञाभिन्न विषय में।

असञ्ज्ञायाम् — V. ii. 28

(अध्यर्द्ध शब्द पूर्व में है जिसके, उससे तथा द्विगुसञ्ज्ञक प्रातिपदिक से 'तदर्हति' पर्यन्त कथित अर्थों में उत्पन्न प्रत्यय का लुक् होता है), सञ्ज्ञाविषय को छोड़कर।

असञ्ज्ञायाम् — VIII. iv. 5
(प्र, निर्, अन्तर्, शर, इक्षु, प्लक्ष, आम्र, कार्ष्य, खदिर, पीयूक्षा – इनसे उत्तर वन शब्द के नकार को) असञ्ज्ञा-विषय में (तथा अपि ग्रहण से सञ्ज्ञाविषय में भी णकारा-देश होता है)।

असञ्ज्ञाशाणयोः — VII. iii. 17
(परिमाणवाची शब्द अन्त में है जिस अङ्ग के, उस संख्यावाची शब्द के आगे उत्तरपद के अचों में आदि अच् को ञित्, णित् तथा कित् तद्धित प्रत्यय परे रहते वृद्धि होती है), सञ्ज्ञा-विषय एवं शाण शब्द उत्तरपद को छोड़कर।

...असती — I. iv. 62
देखें — **सदसती I. iv. 62**

असत्ववचनस्य — II. iii. 33
असत्ववाचक = अद्रव्यवाचक (स्तोक, अल्प, कृच्छ्र, कतिपय – इन शब्दों से करण कारक में तृतीया विभक्ति विकल्प से होती है)।

असत्वे — I. iv. 57
द्रव्य अर्थ अभिव्यक्त न हो तो (चादिगणपठित शब्द निपातसंज्ञक होते हैं)।

...असन्... — VI. i. 61
(वेद-विषय में) असृज् शब्द के स्थान में असन् आदेश हो जाता है, (शस् प्रकार वाले प्रत्ययों के परे रहते)।

...असन्तस्य — VI. iv. 14
देखें — **अत्वसन्तस्य VI. iv. 14**

...असन्तात् — V. iv. 103
देखें — **अनसन्तात् V. iv. 103**

असन्धौ — VI. ii. 154
(तृतीयान्त से परे उपसर्गरहित मिश्र शब्द उत्तरपद को भी अन्तोदात्त होता है), सुलह करना गम्यमान न हो तो।

...असमाप्तौ — V. iii. 67
देखें — **ईषदसमाप्तौ V. iii. 67**

असमासे — V. i. 20
समास में वर्तमान न होने पर ('निष्कादि' प्रातिपदिकों से 'तदर्हति'पर्यन्त कथित सब अर्थों में ठक् प्रत्यय होता है)।

असमासे — VII. i. 71
समास न हो तो (युजि अङ्ग को सर्वनामस्थान परे रहते नुम् आगम होता है)।

असमासे — VIII. iv. 14
(उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर णकार उपदेश में है जिसके, ऐसे धातु के नकार को) असमास में (तथा अपि ग्रहण से समास में भी णकार आदेश होता है)।

...असम्प्रति... — II. i. 6
देखें — **विभक्तिसमीपसमृद्धि० II. i. 6**

असम्बुद्धौ — VI. iv. 8
सम्बुद्धिभिन्न (सर्वनामस्थान) के परे रहते (भी नकारान्त अङ्ग की उपधा को दीर्घ हो जाता है)।

असम्बुद्धौ — VII. i. 92
सम्बुद्धि परे नहीं है जिससे, ऐसे (सखि शब्द से उत्तर सर्वनामस्थान विभक्ति णिद्वत् होती है)।

असम्मतौ — III. i. 128
अपूजित अर्थ में (प्रणाय्य शब्द निपातन है)।

असरूपः — III. i. 94
(धातु के अधिकार में उक्त) ऐसे प्रत्यय, जिनका परस्पर समान रूप नहीं है, (विकल्प से बाधक होते हैं, स्त्री अधि-कार में विहित प्रत्ययों को छोड़कर)।

असर्वनामस्थानम् — VI. i. 164
(अञ्चु धातु से उत्तर वेद-विषय में) सर्वनामस्थान-भिन्न विभक्ति (उदात्त होती है)।

असर्वनामस्थाने — I. iv. 17
सर्वनामस्थान = सु, औ, जस्, अम्, औट् से भिन्न (सु आदि) प्रत्ययों के परे रहते (पूर्व की पद संज्ञा होती है)।

असर्वविभक्तिः — I. i. 37
जिससे सब विभक्तियाँ उत्पन्न नहीं होतीं, ऐसे (तद्धित-प्रत्ययान्त) शब्द (भी अव्ययसंज्ञक होते हैं)।

असवर्णे — VI. i. 123
सवर्णभिन्न (अच्) परे हो तो (इक् को शाकल्य आचार्य के मत में प्रकृतिभाव हो जाता है, तथा उस इक् के स्थान में ह्रस्व भी हो जाता है)।

असवर्णे — VI. iv. 78
(इवर्णान्त तथा उवर्णान्त अभ्यास को) सवर्णभिन्न (अच्) परे रहते (इयङ् और उवङ् आदेश होते हैं)।

असहाये — V. iii. 52
'अकेला' अर्थ में वर्तमान (एक प्रातिपदिक से आकि-निच् प्रत्यय तथा कन् और लुक् होते हैं)।

असादृश्ये — II. i. 7

तुल्यता से भिन्न अर्थ में वर्तमान (अव्यय 'यथा' का समर्थ सुबन्त के साथ समास होता है और वह अव्ययीभाव समास होता है)।

...असि... — IV. ii. 95

देखें — **श्वास्यलङ्कारेषु IV. ii. 95**

असि — V. iii. 39

(दिशा, देश तथा काल अर्थों में वर्तमान सप्तम्यन्त, पञ्चम्यन्त तथा प्रथमान्त दिशावाची पूर्व, अधर तथा अवर प्रातिपदिकों से) असि प्रत्यय होता है (और प्रत्यय के साथ-साथ इन शब्दों को यथासंख्य करके पुर्, अध् तथा अव् आदेश होते हैं)।

असिच् — V. iv. 122

(नञ्, दुस् तथा सु शब्दों से उत्तर जो प्रजा तथा मेधा शब्द, तदन्त बहुव्रीहि से नित्य ही समासान्त) असिच् प्रत्यय होता है।

असिचि — VII. ii. 57

(कृती, चृती, उच्छृदिर्, उतृदिर् – इन धातुओं से उत्तर) सिच्भिन्न (सकारादि आर्धधातुक) को (विकल्प से इट् का आगम होता है)।

असिद्धः — VI. i. 83

(षत्व और तुक् विधि करने में एकादेश) असिद्ध अर्थात् कार्य के होने पर भी उसका न माना जाना जैसा होता है।

असिद्धम् — VIII. ii. 1

(यह अधिकार सूत्र है, यहाँ से आगे अध्याय की समाप्तिपर्यन्त 3 पाद के सूत्र पूर्व-पूर्व की दृष्टि में अर्थात् सवा सात अध्याय में कहे गये सूत्रों की दृष्टि में) असिद्ध होते हैं, अर्थात् सिद्ध के समान कार्य नहीं करते।

असिद्धवत् — VI. iv. 22

('भस्य' के अधिकारपर्यन्त समानाश्रय अर्थात् एक ही निमित्त होने पर आभीय कार्य) सिद्ध के समान नहीं होता।

असुक् — VII. i. 50

(वेद-विषय में अवर्णान्त अङ्ग से उत्तर जस् को) असुक् का आगम होता है।

असुङ् — VII. i. 89

(पुंस् अङ्ग के स्थान में सर्वनामस्थान परे रहते) असुङ् आदेश होता है।

असुपः — VII. iii. 44

(आप् परे रहते प्रत्यय में स्थित ककार से पूर्व अकार के स्थान में इकारादेश होता है, यदि वह आप्) सुप् से उत्तर न हो तो।

असुपि — VIII. ii. 69

(अहन् के नकार को रेफ आदेश होता है), सुप् परे न हो तो।

असुरस्य — IV. iv. 123

(षष्ठीसमर्थ) असुर प्रातिपदिक से ('अपना' अर्थ में यत् प्रत्यय होता है, वेद-विषय में)।

असूतजरती — VI. ii. 42

असूतजरती – इस समास किये हुये शब्द के (पूर्वपद को प्रकृतिस्वर होता है)।

...असूयः — III. ii. 146

देखें — **निन्दहिंस० III. ii. 146**

असूया... — VIII. i. 8

देखें — **असूयासम्मति० VIII. i. 8**

असूया... — VIII. ii. 103

देखें — **असूयासम्मति० VIII. ii. 103**

...असूयार्थानाम् — I. iv. 37

देखें — **क्रुधद्रुहेर्ष्यासूयार्थानाम् I. iv. 37**

असूयाप्रतिवचने — III. iv. 28

(यथा और तथा शब्द उपपद रहते) निन्दा से प्रत्युत्तर गम्यमान हो तो (कृञ् धातु से णमुल् प्रत्यय होता है, यदि कृञ् का अप्रयोग सिद्ध हो)।

असूयासम्मतिकोपकुत्सनभर्त्सनेषु — VIII. i. 8

(वाक्य के आदि के आमन्त्रित को द्वित्व होता है, यदि वाक्य से) असूया = दूसरे के गुणों को भी सहन न करना, असम्मति = असत्कार, कोप = क्रोध, कुत्सन = निन्दा तथा भर्त्सन = डराना गम्यमान हो रहा हो तो।

असूयासम्मतिकोपकुत्सनेषु — VIII. ii. 103

(आम्रेडित परे रहते पूर्वपद की टि को स्वरित प्लुत होता है), असूया = दूसरों के गुणों को भी सहन न करना, असम्मति = असत्कार, कोप = क्रोध तथा कुत्सन = निन्दा गम्यमान होने पर।

असूर्य... — III. ii. 36

देखें — **असूर्यललाटयोः III. ii. 36**

असूर्यललाटयोः — III. ii. 36

असूर्य तथा ललाट (कर्म) उपपद हो तो (यथासंख्य करके दृशिर् तथा तप् धातुओं से खश् प्रत्यय होता है)।

...असे... — III. iv. 9

देखें — **सेसेनसे० III. iv. 9**

असेः — VIII. ii. 80

असकारान्त (अदस् शब्द) के (दकार से उत्तर जो वर्ण, उसके स्थान में उवर्ण आदेश होता है तथा दकार को मकारादेश भी होता है)।

...असेन्... — III. iv. 9

देखें — **सेसेनसे० III. iv. 9**

...असेवित... — VI. i. 140

देखें — **सेवितासेवित० VI. i. 140**

...असोः — VI. iv. 111

देखें — **श्नसोः VI. iv. 111**

...असोः — VI. iv. 119

देखें — **घ्वसोः VI. iv. 119**

असोढः — I. iv. 26

(परा पूर्वक जि धातु के प्रयोग में) जो असह्य है, वह (कारक अपादान सञ्ज्ञक होता है)।

असौ — VI. iv. 127

(अर्वन् अङ्ग को तृ आदेश होता है), यदि (अर्वन् शब्द से) परे सु न हो (तथा वह अर्वन् शब्द नञ् से उत्तर भी न हो)।

अस्तम् — I. iv. 67

(अव्यय) अस्तं शब्द (भी क्रियायोग में गति और निपात संज्ञक होता है)।

अस्ताति — V. iii. 40

(सप्तमी, पञ्चमी, प्रथमान्त, पूर्व, अधर तथा अवर शब्दों को) अस्तात् प्रत्यय के परे रहते (भी यथासंख्य करके पुर्, अध् तथा अव् आदेश होते हैं)।

अस्तातिः — V. iii. 27

(दिशा, देश और काल अर्थों में वर्तमान सप्तम्यन्त, पञ्चम्यन्त तथा प्रथमान्त दिशावाची प्रातिपदिकों से स्वार्थ में) अस्ताति प्रत्यय होता है।

अस्ति — IV. ii. 66

अस्ति समानाधिकरण वाले (प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से सप्तम्यर्थ में यथाविहित प्रत्यय होता है, यदि सप्तम्यर्थ से निर्दिष्ट उस नाम वाला देश हो)।

...अस्ति... — IV. iii. 56

देखें — **दृतिकुक्षिकलशि० IV. iii. 56**

अस्ति... — IV. iv. 60

देखें — **अस्तिनास्तिदिष्टम् IV. iv. 60**

अस्ति — V. ii. 94

'है' क्रिया के समानाधिकरण वाले (प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ तथा सप्तम्यर्थ में मतुप् प्रत्यय होता है)।

अस्ति... — VII. iii. 96

देखें — **अस्तिसिचः VII. iii. 96**

अस्तिः — VIII. iii. 87

(उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर तथा प्रादुस् शब्द से उत्तर यकारपरक एवं अच्परक) अस् धातु के (सकार को मूर्धन्य आदेश होता है)।

अस्तिनास्तिदिष्टम् — IV. iv. 60

(प्रथमासमर्थ) अस्ति, नास्ति तथा दिष्ट प्रातिपदिकों से ('इसकी मति' विषय में ठक् प्रत्यय होता है)।

...अस्तियोगे — V. iv. 50

देखें — **कृभ्वस्ति० V. iv. 50**

अस्तिसिचः — VII. ii. 96

अस् धातु तथा सिच् से उत्तर (अपृक्त हलादि सार्वधातुक को ईट् आगम होता है)।

अस्तेः — II. iv. 52

अस् को (भू आदेश होता है, आर्धधातुक विषय उपस्थित होने पर)।

अस्तेये — III. iii. 40

चोरी से भिन्न (हाथ से ग्रहण करना) गम्यमान हो तो (चिञ् धातु से कर्तृभिन्न कारक और भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

...अस्त्यर्थेषु — III. iii. 146

देखें — **किंकिलास्त्यर्थेषु III. iii. 146**

...अस्त्यर्थेषु — III. iv. 65

देखें — **शकधृष० III. iv. 65**

...अस्त्योः — VII. iv. 50

देखें — **तासस्त्योः VII. iv. 50**

अस्त्रियाम् — II. iii. 25

स्त्रीवर्जित (गुणस्वरूप जो हेतु, उस) में (विकल्प से पञ्चमी विभक्ति होती है)।

अस्त्रियाम् — II. iv. 62

(बहुत्व अर्थ में वर्तमान तद्राजसञ्ज्ञक प्रत्यय का लुक् होता है), स्त्रीलिंग को छोड़कर, (यदि वह बहुत्व तद्राज-सञ्ज्ञक-कृत ही हो तो)।

अस्त्रियाम् — III. i. 94

स्त्री अधिकार में 'विहित' प्रत्ययों से भिन्न (जो धातु के अधिकार में विहित असरूप अपवाद प्रत्यय, वे विकल्प से बाधक होते हैं)।

अस्त्रियाम् — IV. i. 94

(युवापत्य की विवक्षा होने पर गोत्र से ही प्रत्यय हो, अनन्तरापत्य तथा प्रकृति से नहीं), स्त्री अपत्य को छोड़कर।

अस्त्रियाम् — V. iii. 113

(व्रातवाची तथा च्फञ् प्रत्ययान्त प्रातिपदिकों से स्वार्थ में ञ्य प्रत्यय होता है), स्त्रीलिंग को छोड़कर।

अस्त्रियाम् — VII. iii. 119

(घिसञ्ज्ञक अङ्ग से उत्तर आङ्=टा के स्थान में ना आदेश होता है), स्त्रीलिंग वाले शब्द को छोड़कर।

अस्त्री — I. iv. 4

(इयङ्, उवङ् स्थान वाले स्त्र्याख्य ईकारान्त ऊकारान्त शब्द नदीसंज्ञक नहीं होते), स्त्री शब्द को छोड़कर।

अस्त्रीविषयात् — IV. i. 63

जो नित्य ही स्त्रीविषय में न हो (तथा यकार उपधावाला न हो), ऐसे (जातिवाची) प्रातिपदिक से (स्त्रीलिंग में ङीप् प्रत्यय होता है)।

अस्थि... — VII. i. 75

देखें — अस्थिदधि० VII. i. 75

अस्थिदधिसक्थ्यक्ष्णाम् — VII. i. 75

(नपुंसकलिंग वाले) अस्थि, दधि, सक्थि, अक्षि – इन अङ्गों को (तृतीयादि अजादि विभक्तियों के परे रहते अनङ् आदेश होता है और वह उदात्त होता है)।

अस्थूलात् — V. iv. 118

(सञ्ज्ञाविषय में नासिका-शब्दान्त बहुव्रीहि से समासान्त अच् प्रत्यय होता है, तथा नासिका शब्द के स्थान में नस आदेश भी हो जाता है), यदि वह नासिका शब्द स्थूल शब्द से उत्तर न हो तो।

अस्पर्शे — VIII. ii. 47

(श्यैङ् धातु से उत्तर निष्ठा के तकार को नकारादेश होता है), स्पर्श अर्थ को छोड़कर।

अस्मदः — I. ii. 59

अस्मदर्थ के (एकत्व और द्वित्व को कहने में बहुवचन विकल्प करके होता है)।

अस्मदि — I. iv. 106

तिङ् समानाधिकरण अस्मद् शब्द के उपपद रहते, (अस्मत् शब्द प्रयुक्त हो या न हो, तो भी उत्तम पुरुष हो जाता है)।

...अस्मदोः — IV. iii. 1

देखें — युष्मदस्मदोः IV. iii. 1

...अस्मदोः — VI. i. 205

देखें — युष्मदस्मदोः VI. i. 205

...अस्मदोः — VII. ii. 86

देखें — युष्मदस्मदोः VII. ii. 86

...अस्मदोः — VIII. i. 20

देखें — युष्मदस्मदोः VIII. i. 20

...अस्मद्भ्याम् — VII. i. 27

देखें — युष्मदस्मद्भ्याम् VII. i. 27

...अस्माकौ — IV. iii. 2

देखें — युष्माकास्माकौ IV. iii. 2

अस्मायामेधास्रजः — V. ii. 121

अस् अन्तवाले तथा माया, मेधा और स्रज् प्रातिपदिकों से (मत्वर्थ में विनि प्रत्यय होता है)।

अस्मिन् — IV. ii. 20

(प्रथमासमर्थ पौर्णमासी विशेषवाची प्रातिपदिक से) सप्तम्यर्थ = अधिकरण अभिधेय होने पर (यथाविहित अण् प्रत्यय होता है)।

अस्मिन् — IV. ii. 66

(अस्ति समानाधिकरण वाले प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से) सप्तम्यर्थ में (यथाविहित प्रत्यय होता है, यदि सप्तम्यर्थ से निर्दिष्ट उस नाम वाला देश हो)।

अस्मिन् — IV. iv. 87

(दृश्यसमानाधिकरण प्रथमासमर्थ पद प्रातिपदिक से) सप्तम्यर्थ में (यत् प्रत्यय होता है)।

अस्मिन् — V. i. 17

(प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ तथा) सप्तम्यर्थ में (यथाविहित प्रत्यय होता है, यदि वह प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक 'स्यात्=सम्भव हो' क्रिया के साथ समानाधिकरण वाला हो तो)।

अस्मिन् — V. i. 46
(प्रथमासमर्थ प्रातिपादिकों से) सप्तम्यर्थ में (यथाविहित प्रत्यय होते हैं, यदि 'वृद्धि' = ब्याज के रूप में दिया जाने वाला द्रव्य, 'आय' = जमीदारों का भाग, 'लाभ' = मूल-द्रव्य के अतिरिक्त प्राप्य द्रव्य, 'शुल्क' = राजा का भाग तथा 'उपदा' = घूस दी जाने वाली क्रिया के कर्म वाच्य हों तो)।

अस्मिन् — V. ii. 45
(प्रथमासमर्थ दशन् शब्द अन्त वाले प्रातिपदिक से) सप्तम्यर्थ में (ड प्रत्यय होता है, यदि वह प्रथमासमर्थ अधिक समानाधिकरण वाला हो तो)।

अस्मिन् — V. ii. 82
(प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से) सप्तम्यर्थ में (कन् प्रत्यय होता है, यदि वह प्रथमासमर्थ बहुल करके सञ्ज्ञाविषय में अन्नविषयक हो तो)।

अस्मिन् — V. ii. 94
('है' क्रिया के समानाधिकरण वाले प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ तथा) सप्तम्यर्थ में (मतुप् प्रत्यय होता है)।

अस्मे — III. ii. 122
स्म शब्दरहित (पुरा शब्द) उपपद रहते (अनद्यतन भूतकाल में धातु से लुङ् प्रत्यय विकल्प से होता है और चकार से लट् भी होता है)।

अस्मै — IV. iv. 66
(प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से) इसके लिए (नियमपूर्वक दिया जाता है, विषय में ठक् प्रत्यय होता है)।

अस्य — I. ii. 69
(नपुंसकलिङ्ग शब्द नपुंसकलिङ्गभिन्न अर्थात् स्त्रीलिङ्ग पुंल्लिङ्ग शब्दों के साथ शेष रह जाता है, तथा स्त्रीलिङ्ग पुंल्लिङ्ग शब्द हट जाते हैं, एवं) उस नपुंसकलिङ्ग शब्द को (एकवत् कार्य भी विकल्प करके हो जाता है, यदि उन शब्दों में नपुंसक गुण एवं अनपुंसक गुण का ही वैशिष्ट्य हो, शेष प्रकृति आदि समान ही हो)।

अस्य — III. iv. 32
(वर्षा का प्रमाण गम्यमान हो तो कर्म उपपद रहते पूरी धातु से णमुल् प्रत्यय होता है तथा) इस पूरी धातु के (अकार का लोप विकल्प से होता है)।

अस्य — IV. ii. 23
(प्रथमासमर्थ प्रातिपदिकों से) षष्ठ्यर्थ में (यथाविहित प्रत्यय होता है, यदि वह प्रथमासमर्थ देवताविशेषवाची प्रातिपदिक हो)।

अस्य — IV. ii. 54
(प्रथमासमर्थ छन्दोवाची प्रातिपदिकों से) षष्ठ्यर्थ में (यथाविहित अण् प्रत्यय होता है, प्रगाथों के आदि के अभिधेय होने पर)।

अस्य — IV. iii. 52
(प्रथमासमर्थ कालवाची सोढ अर्थात् 'जिसे सहन किया गया' समानाधिकरण प्रातिपदिक से) षष्ठ्यर्थ में (यथाविहित प्रत्यय होता है)।

अस्य — IV. iii. 89
(प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से) षष्ठ्यर्थ में (यथाविहित प्रत्यय होता है, यदि प्रथमासमर्थ 'निवास' हो तो)।

अस्य — IV. iv. 51
(प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से) षष्ठ्यर्थ में (ठक् प्रत्यय होता है, यदि वह प्रथमासमर्थ 'जीतने योग्य' हो तो)।

अस्य — IV. iv. 88
(आबर्हि = उत्पाटनीय समानाधिकरण प्रथमासमर्थ मूल प्रातिपदिक से) षष्ठ्यर्थ में (यत् प्रत्यय होता है)।

अस्य — V. i. 16
(प्रथमासमर्थ प्रातिपदिकों से) षष्ठ्यर्थ (तथा सप्तम्यर्थ) में (यथाविहित प्रत्यय होता है, यदि वह प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक स्यात् अर्थात् 'सम्भव हो', क्रिया के साथ समानाधिकरण वाला हो तो)।

अस्य — V. i. 55
(प्रथमासमर्थ प्रातिपदिकों से) षष्ठ्यर्थ में (यथाविहित प्रत्यय होता है, यदि वह प्रथमासमर्थ भाग, मूल्य तथा वेतन समानाधिकरण हो तो)।

अस्य — V. i. 56
(प्रथमासमर्थ परिमाणवाची प्रातिपदिकों से) षष्ठ्यर्थ में (यथाविहित प्रत्यय होते हैं)।

अस्य — V. i. 93
(प्रथमासमर्थ कालवाची प्रातिपदिक से) षष्ठ्यर्थ में (यथाविहित ठञ् प्रत्यय होता है, ब्रह्मचर्य गम्यमान होने पर)।

अस्य — V. i. 103
(प्रथमासमर्थ समय प्रातिपदिक से) षष्ठ्यर्थ में (यथाविहित ठञ् प्रत्यय होता है, यदि वह प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक प्राप्त समानाधिकरण वाला हो तो)।

अस्य — V. ii. 35
(प्रथमासमर्थ संज्ञात समानाधिकरण वाले तारकादि प्रातिपदिकों से) षष्ठ्यर्थ में (इतच् प्रत्यय होता है)।

अस्य — V. ii. 79
(प्रथमासमर्थ शृङ्खल प्रातिपदिक से) षष्ठ्यर्थ में (कन् प्रत्यय होता है, यदि वह प्रथमासमर्थ बन्धन बन रहा हो तथा जो षष्ठी से निर्दिष्ट हो वह करभ=ऊंट का छोटा बच्चा हो तो)

अस्य — V. ii. 94
('है' क्रिया के समानाधिकरणवाले प्रथमासमर्थ प्रातिपदिकों से) षष्ठ्यर्थ (तथा सप्तम्यर्थ) में (मतुप् प्रत्यय होता है)।

अस्य — VI. i. 38
इस वय् के यकार को (कित् लिट् के परे रहते विकल्प करके वकारादेश भी हो जाता है)।

अस्य — VI. iv. 45
(क्तिच् प्रत्यय परे रहते अङ्गसंज्ञक सन् धातु को आकारादेश हो जाता है तथा विकल्प से) इसका (लोप भी होता है)।

अस्य — VI. iv. 107
(असंयोग पूर्व वाले) उकारान्त प्रत्यय का (विकल्प करके लोप भी होता है, मकारादि तथा वकारादि प्रत्ययों के परे रहते)।

...अस्य — VI. iv. 148
देखें — **यस्य VI. iv. 148**

अस्य — VII. iv. 32
अवर्णान्त अङ्ग को (च्वि परे रहते ईकारादेश होता है)।

अस्यति ... III. i. 52
देखें — **अस्यतिवक्ति० III. i. 52**

अस्यति...— III. iv. 57
देखें — **अस्यतितृषोः III. iv. 57**

अस्यतितृषोः — III. iv. 57
(क्रिया के उत्तर = व्यवधान में वर्त्तमान) असु तथा तृष् धातुओं से (कालवाची द्वितीयान्त शब्द उपपद रहते णमुल् प्रत्यय होता है)।

अस्यतिवक्तिख्यातिभ्यः — III. i. 52
असु, वच्, ख्याञ् – इन धातुओं से उत्तर (च्लि के स्थान में अङ् आदेश होता है, कर्तृवाची लुङ् परे रहते)।

अस्यतेः — VII. iv. 17
'असु क्षेपणे' अङ्ग को (अङ् परे रहते थुक् आगम होता है)।

अस्याम् — IV. ii. 56
(प्रथमासमर्थ प्रहरण समानाधिकरण वाले प्रातिपदिकों से) सप्तम्यर्थ में (ण प्रत्यय होता है) यदि 'अस्याम्' से निर्दिष्ट (क्रीडा) हो।

अस्याम् — IV. ii. 57
(प्रथमासमर्थ क्रियावाची घञन्त प्रातिपदिक से) सप्तम्यर्थ में (ञ प्रत्यय होता है)।

अस्वाङ्गपूर्वपदात् — IV. i. 53
स्वाङ्गभिन्न पद जिसके पूर्वपद में है, ऐसे (अन्तोदात्त क्त प्रत्ययान्त बहुव्रीहि समास वाले) प्रातिपदिक से (विकल्प से स्त्रीलिङ्ग में ङीष् प्रत्यय होता है)।

अस्वाङ्गम् —VI. ii. 183
(प्र उपसर्ग से उत्तर) अस्वाङ्गवाची उत्तरपद को (सञ्ज्ञा-विषय में अन्तोदात्त होता है)।

...अस्वैरी — III. i. 119
देखें — **पदास्वैरि० III. i. 119**

...अह... — VIII. i. 24
देखें — **चवाहा० VIII. i. 24**

अह — VIII. i. 61
अह (से युक्त प्रथम तिङन्त को विनियोग तथा चकार से क्षिया अर्थात् शिष्टाचार का व्यतिक्रम गम्यमान होने पर अनुदात्त नहीं होता)।

...अहन् — II. iv. 29
देखें — **रात्राह्नाहाः II. iv. 29**

...अहन्... — III. ii. 21
देखें — **दिवाविभा० III. ii. 21**

अहन् — VI. iii. 109
(संख्या, वि तथा साय पूर्ववाले अह्न शब्द को विकल्प करके) अहन् आदेश होता है, (ङि परे रहते)।

अहन् — VIII. ii. 68
अहन् के नकार को (रु होता है)।

अहनि — IV. iv. 130
(ओजस् प्रातिपदिक से मत्वर्थ में यत् और ख प्रत्यय होते हैं), दिन अभिधेय हो तो (वेद-विषय में)।

अह्न्विङोः — VI. i. 180
(तासि प्रत्यय, अनुदात्तेत् धातु, ङित् धातु तथा उपदेश में जो अवर्णान्त – इन से उत्तर लकार के स्थान में जो सार्वधातुक प्रत्यय, वे अनुदात्त होते हैं), ह्नुङ् तथा इङ् धातुओं को छोड़कर।

अहम्... — V. ii. 140
देखें — अहंशुभमोः V. ii. 140

अहंशुभमोः — V. ii. 140
अहम् तथा शुभम् प्रातिपदिकों से (मत्वर्थ में युस् प्रत्यय होता है)।

अहः ... — II. i. 44
देखें — अहोरात्रावयवाः II. i. 44

अहः ... — II. iv. 28
देखें — अहोरात्रे II. iv. 28

...अहः ... — V. i. 86
देखें — रात्र्यहस्संवत्स० V. i. 86

...अहः ... — V. iv. 91
देखें — राजाहःसखिभ्यः V. iv. 91

...अहः ... — VI. ii. 33
देखें — वर्ज्यमानाहोरात्रा० VI. ii. 33

अहःसर्वैकदेशसङ्ख्यातपुण्यात् — V. iv. 87
अहर्, सर्व, एकदेशवाचक शब्द, सङ्ख्यात तथा पुण्य शब्दों के आगे (तथा सङ्ख्या और अव्यय के आगे भी जो रात्रि शब्द, तदन्त तत्पुरुष से समासान्त अच् प्रत्यय होता है)।

अहर्... — V. iv. 42
देखें — अहःसर्वैक० V. iv. 42

अहरणे — VI. ii. 65
हरण शब्द को छोड़कर (धर्म्यवाची शब्दों के परे रहते सप्तम्यन्त तथा हारिवाची पूर्वपद को आद्युदात्त होता है)।

...अहर्दिव... — V. iv. 77
देखें — अचतुर० V. iv. 77

...अहलोपे — VIII. i. 62
देखें — चाहलोपे VIII. i. 62

अहस्त्यादिभ्यः — V. iv. 138
(उपमानवाचक) हस्त्यादिवर्जित प्रातिपदिकों से उत्तर (जो पाद शब्द, उसका समासान्त लोप हो जाता है, बहुव्रीहि समास में)।

...अहाः — II. iv. 29
देखें — रात्राह्नाहाः II. iv. 29

अहीने — VI ii. 47
हीन = त्यक्त, जहाँ से विभक्त हो चुका हो, उससे भिन्न अर्थ के वाचक समास में (क्तान्त उत्तरपद रहते द्वितीयान्त पूर्वपद को प्रकृतिस्वर हो जाता है)।

अहीय... — V. iv. 45
देखें — अहीयरुहोः V. iv. 45

अहीयरुहोः — V. iv. 45
(अपादान कारक में भी जो पञ्चमी, तदन्त से तसि प्रत्यय विकल्प से होता है, यदि वह अपादान कारक) हीय और रुह सम्बन्धी न हो तो।

...अहेः — IV. iii. 56
देखें — दृतिकुक्षिकलशि० IV. iii. 56

...अहैः — VIII. i. 39
देखें — तुपश्यपश्यताहैः VIII. i. 39

अहो — VIII. i. 40
अहो शब्द से युक्त (तिङन्त को भी पूजाविषय में अनुदात्त नहीं होता)।

अहोरात्रावयवाः — II. i. 44
दिन के अवयववाची तथा रात्रि के अवयववाची (सप्तम्यन्त सुबन्त) शब्द (क्तान्त समर्थ सुबन्त के साथ विकल्प से समास को प्राप्त होते हैं और वह समास तत्पुरुष संज्ञक होता है)।

अहोरात्रे — II. iv. 28
अहन् और रात्रि शब्दों का (द्वन्द्व समास में छन्द विषय में पूर्वपद के समान लिङ्ग होता है)।

...अहौ — VII. ii. 94
देखें — स्वाहौ VII. ii. 94

अह्नः —V. iv. 88
(इन सङ्ख्यावाची, अवयववाची तथा सर्व, एकदेशवाचक शब्द, सङ्ख्यात और पुण्य शब्द से उत्तर) अहन् शब्द के स्थान में (समासान्त अह्न आदेश होता है, तत्पुरुष समास में)।

अह्नः —V. iv. 88
(इन सङ्ख्यावाची, अवयववाची तथा सर्व, एकदेशवाचक शब्द, सङ्ख्यात और पुण्य शब्द से उत्तर अहन् शब्द के स्थान में समासान्त) अह्न आदेश होता है, (तत्पुरुष समास में)।

अह्नः — VI. iv. 145
अहन् अङ्ग के (टि भाग का ट तथा ख तद्धित प्रत्यय परे रहते ही लोप होता है)।

अह्नः — VIII. iv. 7
(अदन्त पूर्वपद में स्थित निमित्त से उत्तर) अहन् के (न को ण आदेश होता है)।

अह्लस्य — VI. iii. 109

(संख्या, वि तथा साय पूर्ववाले) अह्न शब्द को (विकल्प करके अहन् आदेश होता है, ङि प्रत्यय परे रहते)।

आ

आ — I. iv. 1

('कडाराः कर्मधारये' II. ii. 38 सूत्र) तक (एक सञ्ज्ञा होती है, यह अधिकार है)।

आ — III. ii. 134

('भ्राजभास०' III. ii. 177, इस सूत्र से विहित क्विप्) पर्यन्त (जितने प्रत्यय कहे हैं; वे सब तच्छील, तद्धर्म तथा तत्साधुकारी कर्त्ता अर्थों में जानने चाहिए)।

आ — III. iii. 141

('उताप्योः समर्थयोर्लिङ्' III. iii. 152 से) पहले जितने सूत्र हैं, (उनमें लिङ् निमित्त होने पर, क्रिया की अतिपत्ति में, भूतकाल में विकल्प से लृङ् प्रत्यय होता है)।

आ — V. i. 19

(यहाँ से आगे 'अर्हति' अर्थ) पर्यन्त (जितने अर्थ कहे गये हैं, उन सब अर्थों में सामान्य करके ठक् प्रत्यय होता है, यह अधिकार है; गोपुच्छ, संख्या तथा परिमाणवाची शब्दों को छोड़कर)।

आ — V. i. 120

यहां से लेकर ('ब्रह्मणस्त्वः' V. i. 135 पर्यन्त त्व, तल् प्रत्यय होते हैं, ऐसा अधिकार जानना चाहिए)।

आ — VI. i. 90

(ओकारान्त से उत्तर अम् तथा शस् विभक्ति के अच् परे रहते, पूर्व पर के स्थान में) आकार (एकादेश) होता है, (संहिता के विषय में)।

आ... — VI. iii. 34

देखें — आकृत्वसुचः VI. iii. 34

आ — VI. iii. 90

(सर्वनाम-सञ्ज्ञक शब्दों को) आकारादेश होता है; (दृक्, दृश् तथा वतुप् परे रहते)।

आ ... — VI. iv. 22

देखें — आभात् VI. iv. 22

आ — VI. iv. 117

(हि परे रहते, ओहाक् अङ्ग को विकल्प से) आकारादेश होता है (तथा इकारादेश भी)।

...आ... — VII. i. 39

देखें — सुलुक्० VII. i. 39

आ — VII. ii. 84

(अष्टन् अङ्ग को विभक्ति परे रहते) आकारादेश हो जाता है।

आकम् — VII. i. 33

(युष्मद् तथा अस्मद् अङ्ग से उत्तर साम् के स्थान में) आकम् आदेश होता है।

आकर्षात् — IV. iv. 9

(तृतीयासमर्थ) आकर्ष प्रातिपदिक से (चरति अर्थ में ष्ठल् प्रत्यय होता है)।

आकर्षादिभ्यः — V. ii. 64

(सप्तमीसमर्थ) आकर्षादि प्रातिपदिकों से ('कुशल' अर्थ में कन् प्रत्यय होता है)।

आकाङ्क्षम् — VIII. ii. 96

(अङ्ग शब्द से युक्त) आकाङ्क्षा रखने वाले (तिङन्त को भर्त्सना विषय में प्लुत होता है)।

आकाङ्क्षम् — VIII. ii. 104

(वाक्य से क्षिया, आशीः तथा प्रैष गम्यमान हो तो) साकाङ्क्ष (तिङन्त) की (टि को स्वरित प्लुत होता है)।

क्षिया = आचारोल्लंघन, आशीः = इष्टाशंसन, प्रैष = शब्दप्रेरण।

आकालिकट् — V. i. 113

(एक ही काल में उत्पत्ति एवं विनाश कहना हो तो) प्रथमासमर्थ समानकाल शब्द के स्थान में आकाल आदेश और इकट् प्रत्यय का निपातन होता है।

आकिनिच् — V. iii. 52

('अकेला' अर्थ में वर्त्तमान एक प्रातिपदिक से) आकिनिच् (तथा कन् प्रत्यय और लुक् भी होते हैं)।

आकृत्वसुचः — VI. iii. 34

(तसिलादि प्रत्ययों से लेकर) कृत्वसुच् पर्यन्त कहे गये जो प्रत्यय, उनके परे रहते (ऊङ्वर्जित भाषितपुंस्क स्त्रीशब्द को पुंवत् हो जाता है)।

आक्रन्दात् — IV. iv. 38

(द्वितीयासमर्थ) आक्रन्द प्रातिपदिक से ('दौड़ता है' अर्थ में ठञ् तथा ठक् प्रत्यय होते हैं)।

...आक्रीड ... — III. ii. 142

देखें — **सम्पृचानुरुधा० III. ii. 142**

आक्रोश... — VI. iv. 61

देखें — **आक्रोशदैन्ययोः VI. iv. 61**

आक्रोशे — III. iii. 45

आक्रोश = क्रोधपूर्वक चिल्लाना गम्यमान हो तो (अव तथा नि पूर्वक ग्रह् धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

आक्रोशे — III. iii. 112

क्रोधपूर्वक चिल्लाना गम्यमान हो तो (नञ् उपपद रहते धातु से स्त्रीलिङ्ग कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में अनि प्रत्यय होता है)।

आक्रोशे — III. iv. 25

(कर्म उपपद रहते) आक्रोश गम्यमान हो तो (समान-कर्तृक पूर्वकालिक कृञ् धातु से खमुञ् प्रत्यय होता है)।

आक्रोशे — VI. ii. 158

(नञ् से उत्तर) आक्रोश गम्यमान होने पर (भी अच्प्रत्ययान्त तथा कप्रत्ययान्त उत्तरपद को अन्तोदात्त होता है) ।

आक्रोशे —VI. iii. 20

आक्रोश गम्यमान होने पर (उत्तरपद परे रहते षष्ठी विभक्ति का अलुक् होता है)।

आक्रोशे — VIII. iv. 47

आक्रोश गम्यमान हो तो (आदिनी शब्द परे रहते पुत्र शब्द को द्वित्व नहीं होता)।

आक्रोशदैन्ययोः — VI. iv. 61

(क्षि अङ्ग को अण्यदर्थ निष्ठा के परे रहते) आक्रोश तथा दैन्य= दीनता गम्यमान होने पर (विकल्प से दीर्घ होता है)।

आख्याता — I. iv. 29

(नियमपूर्वक विद्याग्रहण में) जो पढ़ाने वाला है, वह (कारक अपादान-संज्ञक होता है)।

...आख्यातात् — IV. iii. 72

देखें — **द्व्यजृद्ब्राह्मणर्क्० IV. iii. 72**

आख्यान ... — III. iii. 110

देखें — **आख्यानपरिप्रश्नयोः III. iii. 110**

...आख्यान... — VI. ii. 103

देखें — **ग्रामजनपदाख्यान० VI. ii. 103**

आख्यानपरिप्रश्नयोः — III. iii. 110

उत्तर तथा परिप्रश्न गम्यमान होने पर (धातु से स्त्रीलिङ्ग कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में विकल्प से इञ् प्रत्यय होता है, चकार से ण्वुल् भी होता है)।

...आख्यानयोः — VIII. ii. 105

देखें — **प्रश्नाख्यानयोः VIII. ii. 105**

आख्यायाम् — IV. i. 48

(पुरुष के साथ सम्बन्ध होने के कारण जो प्रातिपदिक) स्त्रीलिङ्ग में वर्त्तमान हो, तथा पुंल्लिग को पहले कह चुका हो, (ऐसे अदन्त अनुपसर्जन प्रातिपदिक से ङीष् प्रत्यय होता है)।

आगतः — IV. iii. 74

(पञ्चमीसमर्थ प्रातिपदिक से) 'आया हुआ' अर्थ में (यथाविहित प्रत्यय होता है)।

आगनीगन्ति — VII. iv. 65

आगनीगन्ति शब्द (वेदविषय में) निपातन किया जाता है।

आगवीनः — V. ii. 14

'आगवीन' शब्द आङ् पूर्वक गो शब्द से कर्मकर वाच्य हो तो ख प्रत्ययान्त निपातन किया जाता है।

कर्मकर= ऐसा नौकर जो गौ के बदले अर्थात् जब तक गौ वापस न कर सके, सेवा करे।

आगस्त्य ... — II. iv. 70

देखें — **आगस्त्यकौण्डिन्ययोः II. iv. 70**

आगस्त्यकौण्डिन्ययोः — II. iv. 70

आगस्त्य तथा कौण्डिन्य शब्दों से परे (गोत्र में विहित जो तत्कृत बहुवचनप्रत्यय, उसका लुक् हो जाता है ; शेष बची अगस्त्य एव कुण्डिनी प्रकृति को क्रमशः अगस्ति और कुण्डिनच् आदेश भी हो जाते हैं)।

आग्रहायणी... — IV. ii. 22

देखें — **आग्रहायण्यश्वत्थात् IV. ii. 22**

...आग्रहायणीभ्यः — V. iv. 110

देखें — **नदीपौर्णमास्या० V. iv. 110**

...आग्रहायणीभ्याम् — IV. iii. 50

देखें — **संवत्सराग्रहायणीभ्याम् IV. iii. 50**

आग्रहायण्यश्वत्थात् — IV. ii. 21

(प्रथमासमर्थ पौर्णमासी शब्द से समानाधिकरण वाले) आग्रहायणी तथा अश्वत्थ शब्दों से (सप्तम्यर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

...आग्रायणेषु — IV. i. 102
देखें— भृगुवत्सा० IV. i. 102

...आङ् ... — I. iii . 83
देखें — व्याङ्परिभ्यः I. iii. 83

...आङ् ... — I. iv. 48
देखें — उपान्वध्याङ्वसः I. iv. 48

आङ् — I. iv. 88
आङ् शब्द (मर्यादा और अभिविधि अर्थ में कर्म-प्रवचनीय और निपातसंज्ञक होता है)।

आङ् — II. i. 12
(मर्यादा और अभिविधि अर्थ में विद्यमान) 'आङ्' शब्द (पञ्चम्यन्त समर्थ सुबन्त के साथ विकल्प से समास को प्राप्त होता है, और वह समास अव्ययीभावसंज्ञक होता है)।

...आङ् ... — II. iii. 10
देखें — अपाङ्परिभिः II. iii. 10

आङ् ... — VI. i. 72
देखें — आङ्माङोः VI. i. 72

आङ् — VI. i. 122
आङ् को (अच् परे रहते संहिता के विषय में अनुनासिक आदेश होता है तथा उस अनुनासिक को प्रकृतिभाव भी होता है)।

...आङ्... — VIII. iv. 2
देखें — अट्कुप्वाङ्० VIII. iv. 2

आङः — I. iii. 20
आङ् उपसर्ग से उत्तर (डुदाञ् धातु से आत्मनेपद होता है, यदि वह मुख को खोलने अर्थ में वर्त्तमान न हो तो)।

आङः — I. iii. 28
आङ् उपसर्ग से उत्तर (अकर्मक यम् और हन् धातुओं से आत्मनेपद होता है)।

आङः — I. iii. 31
(स्पर्धा– विषय में) आङ् उपसर्ग से उत्तर (ह्वेञ् धातु से आत्मनेपद होता है)।

आङः — I. iii. 40
आङ् उपसर्ग से उत्तर (क्रम् धातु से आत्मनेपद होता है, उद्गमन अर्थ में)।

आङः — VII. i. 65
आङ् से उत्तर (यकारादि प्रत्ययों के विषय में लभ् अङ्ग को नुम् आगम होता है)।

आङः — VII. iii. 119
(घिसंज्ञक अङ्ग से उत्तर) आङ् = टा के स्थान में (ना आदेश होता है स्त्रीलिङ्ग वाले शब्द को छोड़कर)।

आङि — III. ii. 11
आङ् पूर्वक (हृ धातु से कर्म उपपद रहते ताच्छील्य गम्यमान होने पर 'अच्' प्रत्यय होता है)।

आङि — III. iii. 50
आङ् पूर्वक (रु तथा प्लु धातुओं से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में विकल्प से घञ् प्रत्यय होता है)।

आङि — III. iii. 73
(युद्ध अभिधेय हो तो) आङ् पूर्वक (ह्वेञ् धातु को सम्प्रसारण तथा अप् प्रत्यय होता है)।

आङि — VI. iv. 141
(मन्त्र-विषय में) आङ्= टा परे रहते (आत्मन् शब्द के आदि का लोप होता है)।

आङि — VII. iii. 105
(आबन्त अङ्ग को) आङ्= टा परे रहते (तथा ओस् परे रहते एकारादेश होता है)।

...आङोः —VI. i. 92
देखें —ओमाङोः VI. i. 92

आङ्गिरसे — IV. i. 107
(कपि तथा बोध प्रातिपदिकों से) आङ्गिरस गोत्र को कहना हो तो (यञ् प्रत्यय होता है)।

...आङ्भ्यः — I. iii. 75
देखें — समुदाङ्भ्यः I. iii. 75

...आङ्भ्याम् — I. iii. 59
देखें — प्रत्याङ्भ्याम् I. iii. 59

...आङ्भ्याम् — I. iv. 40
देखें — प्रत्याङ्भ्याम् I. iv. 40

आङ्माङोः — V. i. 72
आङ् तथा माङ् को (भी छकार परे रहते तुक् का आगम होता है, संहिता के विषय में)।

...आङ्यम... — I. iii. 89
देखें — पादम्याङ्यमाङ्यस० I. iii. 89

...आङ्यम... — III. ii. 142
देखें — सम्पृचानुरुधा० III. ii. 142

...आङ्यस ... — I. iii. 89

देखें — पादम्याङ्यमाङ्यस० I. iii. 89

...आङ्यस ... — III. ii. 142

देखें —सम्पृचानुरुधा० III. ii. 142

...आङ्वसः — I. iv. 48

देखें — उपान्वध्याङ्वसः I. iv. 48

...आच् ... — II. iii. 29

देखें — अन्यारादितरर्ते० II. iii. 29

आच् — V. iii. 36

(दिशा, देश तथा काल अर्थों में वर्त्तमान पञ्चम्यन्तवर्जित सप्तमीप्रथमान्त दिशावाची दक्षिण प्रातिपदिक से) आच् प्रत्यय होता है।

आचारे — III. i. 10

आचार अर्थ में (उपमानवाची सुबन्त कर्म से विकल्प से 'क्यच्' प्रत्यय होता है)।

आचार्य ... — VI. ii. 133

देखें — आचार्यराज० VI. ii. 133

... आचार्यकरण ... — I. iii. 36

देखें — सम्माननोत्सञ्जनाचा० I. iii. 36

आचार्यराजर्त्विक्संयुक्तज्ञात्याख्येभ्यः — VI. ii. 133

आचार्य, राजन्, ऋत्विक्, संयुक्त तथा ज्ञाति की आख्यावाले शब्दों से उत्तर (पुत्र शब्द को तत्पुरुष समास में आद्युदात्त नहीं होता)।

...आचार्याणाम् — IV. i. 48

देखें — इन्द्रवरुणभव० IV. i. 48

आचार्याणाम् — VII. iii. 49

(अभाषितपुंस्क से विहित प्रत्ययस्थित ककार से पूर्व आकार के स्थान में जो अकार, उसको नञ्पूर्व और अनञ्-पूर्व रहते हुए भी उदीच्य से भिन्न) आचार्यों के मत में (आकारादेश होता है)।

आचार्याणाम् — VIII. iv. 51

(दीर्घ से उत्तर) सभी आचार्यों के मत में (द्वित्व नही होता)।

आचार्योपसर्जनः — VI. ii. 37

आचार्य है अप्रधान जिसमें, ऐसे (शिष्यवाची शब्दों का जो द्वन्द्व, उनके पूर्वपद को भी प्रकृतिस्वर होता है)।

आचार्योपसर्जनः — VI. ii. 104

आचार्य है अप्रधान जिसका, ऐसा (जो अन्तेवासी, उसको कहने वाले शब्द के परे रहते भी दिशा अर्थ में प्रयुक्त होने वाले पूर्वपद शब्दों को अन्तोदात्त होता है)।

...आचिख्यासायाम् — II. iv. 21

देखें — तदाद्याचिख्यासायाम् II. iv. 21

...आचित... — IV. i. 22

देखें — अपरिमाणबिस्ताचित० IV. i. 22

...आचित ... — V. i. 52

देखें — आढकाचितपात्रात् V. i. 52

आच्छादने — III. iii. 54

आच्छादन अर्थ में (प्र पूर्वक वृञ् धातु से कर्तृभिन्न कारक तथा भाव में विकल्प से घञ् प्रत्यय होता है, पक्ष में अप् होता है)।

आच्छादने — V. iv. 6

'ढकने' अर्थ में वर्तमान (प्रातिपदिक से स्वार्थ में कन् प्रत्यय होता है)।

...आच्छादनयोः — IV. iii. 140

देखें — अभक्ष्याच्छादनयोः IV. iii. 140

आजि ... — VI. iii. 51

देखें — आज्यातिगोप० VI. iii. 51

आज्यातिगोपहतेषु — VI. iii. 51

(पाद शब्द को पद् आदेश होता है) ; आजि, आति, ग, उपहत के उत्तरपद रहते।

आज्ञायिनि — VI. iii. 5

आज्ञायी शब्द के उत्तरपद रहते (भी मनस् शब्द से उत्तर तृतीया का अलुक् होता है)।

आट् — III. iv. 92

(लोट् सम्बन्धी उत्तम पुरुष को) आट् का आगम हो जाता है, (और वह उत्तम पुरुष पित् भी माना जाता है)।

आट् — VI. iv. 72

(अच् आदि वाले अङ्गों को लुङ्, लङ् तथा लृङ् के परे रहते) आट् का आगम होता है, (और वह आट् उदात्त भी होता है)।

आट् — VII. iii. 112

(नदीसञ्ज्ञक अङ्ग से उत्तर ङित् प्रत्यय को) आट् आगम होता है।

आटः — VI. i. 87

आट् से उत्तर (भी जो अच् तथा अच् से पूर्व जो आट्, इन दोनों पूर्व पर के स्थान में वृद्धि एकादेश होता है, संहिता के विषय में)।

...आटचौ — V. ii. 125

देखें — **आलजाटचौ V. ii. 125**

...आटौ — III. iv. 94

देखें — **अडाटौ III. iv. 94**

आढक ... — V. i. 52

देखें — **आढकाचितपात्रात् V. i. 52**

आढकाचितपात्रात् — V. i. 52

(द्वितीयासमर्थ) आढक, आचित तथा पात्र प्रातिपदिक से ('सम्भव है', 'अवहरण करता है' तथा 'पकाता है' अर्थों में विकल्प से ख प्रत्यय होता है)।

आढ्य ... — III. ii. 56

देखें — **आढ्यसुभग० III. ii. 56**

आढ्यसुभगस्थूलपलितनग्नान्धप्रियेषु — III. ii. 56

आढ्य, सुभग, स्थूल, पलित, नग्न, अन्ध, प्रिय–इन (च्व्यर्थ में वर्तमान अच्विप्रत्ययान्त कर्मों) के उपपद रहते (कृञ् धातु से करण कारक में ख्युन् प्रत्यय होता है)।

आत् ... — I. i. 1

देखें — **आदैच् I. i. 1**

...आत् ... — III. i. 141

देखें — **श्याद्व्यधा० III. i. 141**

आत् ... — III. ii. 171

देखें — **आदृगम० III. ii. 171**

आत् — VI. i. 44

(उपदेश अवस्था में जो एजन्त धातु,उसको) आकारादेश हो जाता है, (इत्सञ्ज्ञक शकारादि प्रत्यय परे हो तो नहीं होता)।

आत् — VI. i. 84

अवर्ण से उत्तर (जो एच् तथा एच् परे रहते जो पूर्व का अवर्ण – इन दोनों पूर्व पर के स्थान में गुण एकादेश होता है)।

आत् — VI. i. 100

अवर्ण से उत्तर (इच् प्रत्याहार परे रहते, पूर्व पर के स्थान में पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश नहीं होता है)।

आत् — VI. i. 213

(मतुप् से पूर्व) आकार को (उदात्त होता है, यदि वह मत्वन्त शब्द स्त्रीलिंग में सञ्ज्ञाविषयक हो तो)।

आत् — VI. iii. 45

(समानाधिकरण उत्तरपद रहते तथा जातीय-प्रत्यय परे रहते महत् शब्द को) आकारादेश होता है।

आत् — VI. iv. 41

(विट् तथा वन् प्रत्यय के परे रहते अनुनासिकान्त अङ्ग को) आकारादेश होता है ।

आत् — VI. iv. 160

(ज्य अङ्ग से उत्तर ईयस् को) आकार आदेश होता है।

...आत् ... — VII. i. 12

देखें — **इनात्स्याः VII. i. 12**

...आत् ... — VII. i. 39

देखें — **सुलुक्० VII. i. 39**

आत् — VII. i. 50

(वेद-विषय में) अवर्णान्त अङ्ग से उत्तर (जस् को असुक् आगम होता है)।

आत् — VII. i. 80

अवर्णान्त अङ्ग से उत्तर (शी तथा नदी परे रहते शतृ प्रत्यय को विकल्प से नुम् आगम होता है)।

आत् — VII. i. 85

(पथिन्, मथिन् तथा ऋभुक्षिन् अङ्गों को सु परे रहते) आकारादेश होता है।

...आत् ... — VII. ii. 67

देखें — **एकाजाद्घसाम् VII. ii. 67**

आत् — VII. iii. 1

(देविका, शिंशपा, दित्यवाट्, दीर्घसत्र, श्रेयस् – इन अङ्गों के अचों में आदि अच् को वृद्धि का प्रसङ्ग होने पर ञित्, णित् तथा कित् तद्धित परे रहते) आकारादेश होता है।

आत् — VII. iii. 49

(अभाषितपुंस्क से विहित प्रत्ययस्थित ककार से पूर्व आकार के स्थान में जो अकार, उसको नञ्पूर्व और अनञ्पूर्व रहते हुये भी अन्य आचार्यों के मत में) आकारादेश होता है।

आत् — VII. iv. 37

(अश्व और अघ अङ्गों को क्यच् परे रहते वेदविषय में) आकारादेश होता है।

आत् — VIII. ii. 107

(दूर से बुलाने के विषय से भिन्न विषय में, अप्रगृह्य-संज्ञक एच् के पूर्वार्द्ध भाग को प्लुत करने के प्रसङ्ग में) आकारादेश होता है, (तथा उत्तर वाले भाग को इकार, उकार आदेश होते हैं)।

आतः — III. i. 136

आकारान्त धातुओं से (भी उपसर्ग उपपद रहते 'क' प्रत्यय होता है)।

आतः — III. ii. 3

आकारान्त (उपसर्गरहित) धातु से (कर्म उपपद रहते 'क' प्रत्यय होता है)।

आतः — III. ii. 74

आकारान्त धातुओं से (सुबन्त उपपद रहते वेदविषय में मनिन्, क्वनिप्, वनिप् तथा विच् प्रत्यय होते हैं)।

आतः — III. iii. 106

(उपसर्ग उपपद रहते) आकारान्त धातुओं से (भी कर्तृ-भिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में अङ् प्रत्यय होता है)।

आतः — III. iii. 128

आकारान्त धातुओं से (कृच्छ्र, अकृच्छ्र अर्थ में ईषद्, दुस् तथा सु उपपद हो तो युच् प्रत्यय होता है)।

आतः — III. iv. 95

(लेट् सम्बन्धी) जो आकार, उसके स्थान में (ऐकारादेश होता है)।

आतः — III. iv. 110

(सिच् से उत्तर यदि झि को जुस् हो तो) आकारान्त धातु से ही हो।

आतः — V. ii. 96

(प्राणिस्थवाची) आकारान्त प्रातिपदिकों से (मत्वर्थ में विकल्प से लच् प्रत्यय होता है)।

आतः — VI. iv. 64

(इजादि आर्धधातुक तथा कित्, ङित् आर्धधातुक प्रत्ययों के परे रहते) आकारान्त अङ्ग का (लोप होता है)।

आतः — VI. iv. 112

(श्ना तथा अभ्यस्तसञ्ज्ञक के) आकार का (लोप हो जाता है; कित्, ङित् सार्वधातुक परे रहते)।

आतः — VI. iv. 140

आकारान्त जो धातु, तदन्त (भसञ्ज्ञक) अङ्ग के (अकार का लोप होता है)।

आतः — VII. i. 34

आकारान्त अङ्ग से उत्तर (णल् के स्थान में औकारादेश होता है)।

आतः — VII. iii. 46

(यकार तथा ककार पूर्व वाले) आकार के (स्थान में जो प्रत्ययस्थित ककार से पूर्व अकार, उसके स्थान में इकारा-देश नहीं होता, उदीच्य आचार्यों के मत में)।

आतः — VII. ii. 81

आकारान्त अङ्ग से उत्तर (ङित् सार्वधातुक के अवयव या के स्थान में इय् आदेश होता है)।

आतः — VII. iii. 33

आकारान्त अङ्ग को (चिण् तथा ञित्, णित् कृत् प्रत्यय परे रहते युक् आगम होता है)।

आतः — VIII. ii. 43

(संयोग आदि वाले) आकारान्त (एवं यण्वान् धातु) से उत्तर (निष्ठा के तकार को नकारादेश होता है)।

आतः — VIII. iii. 3

(अट् परे रहते रु से पूर्व) आकार को (नित्य अनुनासिक आदेश होता है)।

आततन्थ — VII. ii. 64

'आततन्थ'– यह शब्द (थल् परे रहते वेद विषय में) इडभावयुक्त निपातन किया जाता है।

...आतपयोः — IV. iii. 13

देखें — **रोगातपयोः IV. iii. 13**

...आताम् ... — III. iv. 78

देखें — **तिप्तस्झि० III. iv. 78**

...आताम् — VII. ii. 73

देखें — **यमरम० VII. ii. 73**

...आताम् — VII. iii. 36

देखें — **अर्तिह्री० VII. iii. 36**

...आति ... — VI. iii. 51

देखें — **आज्यातिगो० VI. iii. 51**

आतिः — V. iii. 34

(दिशा, देश तथा काल अर्थों में वर्त्तमान सप्तम्यन्त, पञ्चम्यन्त तथा प्रथमान्त दिशावाची उत्तर, अधर और दक्षिण प्रातिपदिकों से) आति प्रत्यय होता है।

आत्मन् ... — V. i. 8

देखें — **आत्मन्विश्वजन० V. i. 8**

आत्मनः — III. i. 8

(इच्छा करने वाले व्यक्ति के) आत्मीय (इच्छा) के (सुबन्त कर्म से इच्छा अर्थ में विकल्प से क्यच् प्रत्यय होता है)।

आत्मनः — VI. iii. 7

आत्मन् शब्द से परे (भी तृतीया का अलुक् होता है, उत्तरपद परे रहते)।

आत्मनः — VI. iv. 141

(मन्त्र-विषय में आङ्=टा परे रहते) आत्मन् शब्द के (आदि का लोप होता है)।

आत्मनेपदनिमित्ते — VII. ii. 36

(स्नु तथा क्रम् धातुओं के वलादि आर्धधातुक को इट् आगम होता है, यदि स्नु तथा क्रम्) आत्मनेपद के निमित्त न हों तो।

आत्मनेपदम् — I. iii. 12

(अनुदात्तेत् तथा ङित् धातु से) आत्मनेपद होता है।

आत्मनेपदम् — I. iv. 99

(तङ् अर्थात् त, आताम्, झ, थास्, आथाम्, ध्वम्, इड्, वहि, महिङ् और आन अर्थात् शानच् तथा कानच् प्रत्ययों की) आत्मनेपद संज्ञा होती है।

आत्मनेपदानाम् — III. iv. 79

(टित् अर्थात् लट्, लिट्, लुट्, लृट्, लेट्, लोट् लकारों के) जो आत्मनेपदसंज्ञक त, आताम्, झ आदि आदेश – उनके (टि भाग को एकार आदेश हो जाता है)।

आत्मनेपदे — VII. iii. 73

(दुह् प्रपूरणे, दिह् उपचये, लिह आस्वादने, गुहू संवरणे- इन धातुओं के क्स का विकल्प से लुक् होता है, दन्त्य अक्षर आदिवाले) आत्मनेपदसञ्ज्ञक प्रत्ययों के परे रहते।

आत्मनेपदेषु — I. ii. 11

आत्मपेपद विषय में (इक्समीप हल् वाले धातु से परे झलादि लिङ् तथा सिच् प्रत्यय कित्वत् होते हैं)।

आत्मनेपदेषु — II. iv. 44

आत्मनेपद प्रत्ययों के परे रहते (हन् को वध आदेश विकल्प से होता है, लुङ् लकार में)।

आत्मनेपदेषु — III. i. 54

(कर्तृवाची लुङ्) आत्मनेपद परे रहते (लिप्, सिच् और ह्वेञ् धातु से उत्तर च्लि को विकल्प से अङ् आदेश होता है)।

आत्मनेपदेषु — VII. i. 5

(अनकारान्त अङ्ग से उत्तर) आत्मनेपद में वर्तमान (जो प्रत्यय का झकार, उसके स्थान में अत् आदेश होता है)।

आत्मनेपदेषु — VII. i. 41

(वेद-विषय में) आत्मनेपद में वर्त्तमान (तकार का लोप हो जाता है)।

आत्मनेपदेषु — VII. ii. 42

(वृ तथा ऋकारान्त धातुओं से उत्तर) आत्मनेपदपरक (लिङ् तथा सिच् को विकल्प से इट् आगम होता है)।

आत्मन्विश्वजनभोगोत्तरपदात् — V. i. 9

(चतुर्थीसमर्थ) आत्मन्, विश्वजन तथा भोग शब्द उत्तरपद वाले प्रातिपदिकों से ('हित' अर्थ में ख प्रत्यय होता है)।

आत्मप्रीतौ — VII. i. 51

(अश्व, क्षीर, वृष, लवण – इन अङ्गों को क्यच् परे रहते) आत्मा की प्रीति विषय में (असुक् आगम होता है)।

आत्ममाने — III. ii. 83

आत्ममान अर्थात् 'अपने आप को मानना' अर्थ में वर्त्तमान (मन् धातु से सुबन्त उपपद रहते खश् और चकार से 'णिनि' प्रत्यय होता है)।

आत्मम्भरिः — III. ii. 26

आत्मम्भरि शब्द इन्प्रत्ययान्त निपातन किया जाता है।

आत्मा ... — VI. iv. 169

देखें — **आत्माध्वानौ VI. iv. 169**

आत्माध्वानौ — VI. iv. 169

(भसञ्ज्ञक) आत्मन् तथा अध्वन् अङ्गों को (ख प्रत्यय परे रहते प्रकृतिभाव होता है)।

...आथर्वणिक ... — VI. iv. 174

देखें — **दाण्डिनायनहास्ति० VI. iv. 174**

...आथाम् ... — III. iv. 78

देखें — **तिप्तस्झि० III. iv. 78**

...आद् ... — II. iv. 80

देखें — **घसह्वरणश० II. iv. 80**

आदर ... — I. iv. 62

देखें — **आदरानादरयोः I. iv. 62**

आदरानादरयोः — I. iv. 62

(क्रमशः) आदर एवं अनादर अर्थों में वर्तमान (सत् और असत् शब्द क्रियायोग में गति और निपातसंज्ञक होते हैं)।

...आदायेषु – III. ii. 17
देखें – भिक्षासेना० III. ii. 17

आदि ... – I. i. 45
देखें – आद्यन्तौ I. i. 45

...आदि ... – III. ii. 21
देखें – दिवाविभा० III. ii. 21

आदिः – I. i. 70
आदिवर्ण (अन्त्य इत्संज्ञक वर्ण के साथ मिलकर दोनों के मध्य में स्थित वर्णों का तथा अपने स्वरूप का भी ग्रहण कराता है)।

आदिः – I. i. 72
(जिस समुदाय के अचों में) आदि अच् (वृद्धिसंज्ञक हो, उस समुदाय की वृद्धसंज्ञा होती है)।

आदिः – I. iii. 5
(उपदेश में) आदिभूत (ञि, टु और डु की इत्सञ्ज्ञा होती है)।

आदिः – IV. ii. 54
(प्रथमासमर्थ छन्दोवाची प्रातिपदिकों से षष्ठ्यर्थ में यथाविहित अण् प्रत्यय होता है, प्रगाथों के) आदि के अभिधेय होने पर।

आदिः – VI. i. 181
(सिच् अन्त वाला शब्द विकल्प से) आदि(उदात्त होता है)।

आदिः – VI. i. 183
(अजादि अनिट् लसार्वधातुक परे हो तो अभ्यस्तसंज्ञक के) आदि को (उदात्त होता है)।

आदिः – VI. i. 188
(णमुल् परे रहते पूर्व धातु को विकल्प से) आदि (उदात्त होता है)।

आदिः – VI. i. 191
(ञकार इत्सञ्ज्ञक तथा नकार इत्सञ्ज्ञक प्रत्ययों के परे रहते नित्य ही) आदि को (उदात्त होता है)।

आदिः – VI. ii. 27
(प्रत्येनस् शब्द उत्तरपद रहते कर्मधारय समास में कुमार शब्द को) आदि (उदात्त) होता है।

आदिः – VI. ii. 64
(यहाँ से आगे जो कुछ कहेंगे, उसके पूर्वपद के) आदि को (उदात्त होता है, यह अधिकार है)।

आदिः – VI. ii. 125
(नपुंसकलिङ्ग कन्थाशब्दान्त तत्पुरुष समास में चिहणादिगणपठित शब्दों के) आदि को (उदात्त होता है)।

आदिकर्मणि – III. iv. 71
क्रिया के आदि क्षण में विहित (जो क्त प्रत्यय, वह कर्त्ता में होता है तथा चकार से भाव कर्म में भी होता है)।

...आदिकर्मणोः – I. ii. 21
देखें – भावादिकर्मणोः I. ii. 21

...आदिकर्मणोः – VII. ii. 17
देखें – भावादिकर्मणोः VII. ii. 17

आदितः – I. ii. 32
(उस स्वरित गुण वाले अच् के) आदि की (आधी मात्रा उदात्त और शेष अनुदात्त होती है)।

आदितः – III. iv. 84
(ब्रू से परे जो लट् लकार, उसके स्थान में परस्मैपदसंज्ञक) आदि के (पाँच आदेशों के स्थान में क्रम से पाँचों ही णल्, अतुस्, उस्, थल्, अथुस्– आदेश विकल्प से हो जाते हैं, साथ ही ब्रू धातु को आह आदेश भी हो जाता है)।

आदितः – VII. ii. 16
आकार इत्सञ्ज्ञक धातुओं को (भी निष्ठा परे रहते इट् आगम नहीं होता)।

...आदित्य ... – IV. i. 85
देखें – दित्यदित्यादित्य० IV. i. 85

आदिनी – VIII. iv. 47
(आक्रोश गम्यमान हो तो) आदिनी शब्द परे रहते (पुत्र शब्द को द्वित्व नहीं होगा)।

आदिशि... – III. iv. 58
देखें – आदिशिग्रहोः III. iv. 58

आदिशिग्रहोः – III. iv. 58
(द्वितीयान्त नाम शब्द उपपद रहते) आङ् पूर्वक दिश् तथा ग्रह् धातु से (णमुल् प्रत्यय होता है)।

आदुक् – VI. iii. 75
(एक है आदि में जिसके, ऐसे नञ् को भी उत्तरपद परे रहते प्रकृतिभाव होता है तथा एक शब्द को) आदुक् का आगम होता है।

आदृगमहनजनः — III. ii. 171
आत् = आकारान्त, ऋ = ऋकारान्त तथा गम, हन्, जन धातुओं से (तच्छीलादि कर्ता हो, तो वेदविषय में वर्त्तमान काल में कि तथा किन् प्रत्यय होते हैं तथा उन कि, किन् प्रत्ययों को लिट्वत् कार्य होता है)।

आदेः — I. i. 53
(पर को कहा गया कार्य) आदि (अल्) के स्थान में हो।

आदेः — III. iii. 41
(निवास, चयन, शरीर तथा राशि अर्थों में चिञ् धातु से घञ् प्रत्यय होता है तथा चिञ् के) आदि चकार को (ककारादेश होता है, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में)।

आदेः — VI. iv. 141
(मन्त्रविषय में आङ् = टा परे रहते आत्मन् शब्द के) आदि का (लोप होता है)।

आदेः — VII. ii. 117
(ञित्, णित् तद्धित प्रत्यय परे रहते अङ्ग के अचों के) आदि (अच्) को (वृद्धि होती है)।

आदेः — VII. iv. 20
(अभ्यास के) आदि के (अकार को लिट् परे रहते दीर्घ होता है)।

आदेः — VIII. ii. 91
(ब्रूहि, प्रेष्य, श्रौषट्, वौषट्, आवह – इन पदों के) आदि को (यज्ञकर्म में प्लुत उदात्त होता है)।

आदेश...— VIII. iii. 59
देखें — **आदेशप्रत्यययोः VIII. iii. 59**

आदेशः — I. i. 55
आदेश (स्थानी के सदृश होता है, अल्विधि को छोड़कर)।

आदेशप्रत्यययोः — VIII. iii. 59
(इण् तथा कवर्ग से उत्तर) आदेश तथा प्रत्यय के (सकार को मूर्धन्य आदेश होता है)।

आदैच् — I. i. 1
आ, ऐ, औ की (वृद्धि संज्ञा होती है)।

आद्यन्तवचने — V. i. 113
(आकालिकट् – यह निपातन किया जाता है), यदि एक ही काल में उत्पत्ति एवं विनाश कहना हो तो।

आद्यन्तवत् — I. i. 20
(एक में भी) आदि के समान और अन्त के समान (कार्य हो जाते हैं)।

आद्यन्तौ — I. i. 45
(षष्ठीनिर्दिष्ट को जो टित् आगम तथा कित् आगम कहा गया हो, वह क्रम से उसका) आदि और अन्त (अवयव हो)।

आद्युदात्तः — III. i. 3
(जिसकी प्रत्ययसंज्ञा कही है, वह) आद्युदात्त (भी होता है)।

आद्युदात्तम् — VI. ii. 119
(बहुव्रीहि समास में सु से उत्तर दो अच् वाले) आद्युदात्त शब्द को (वेद विषय में आद्युदात्त ही होता है)।

आद्यूने — V. ii. 67
(सप्तमीसमर्थ उदर प्रातिपदिक से) 'पेटू' वाच्य हो तो ('तत्पर' अर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

...आधमर्ण्ययोः — II. iii. 70
देखें — **भविष्यदाधमर्ण्ययोः II. iii. 70**

...आधमर्ण्ययोः — III. iii. 170
देखें — **आवश्यकाधमर्ण्ययोः III. iii. 170**

आधमर्ण्ये — VIII. ii. 60
(ऋणम् शब्द में ऋ धातु से उत्तर क्त के तकार को नकारादेश निपातन है), आधमर्ण्य = कर्ज लेने वाले का ऋण अभिधेय होने पर।

आधारः — I. iv. 45
(क्रिया के आश्रय कर्ता तथा कर्म का धारण क्रिया के प्रति) जो आधार है, वह (कारक अधिकरण संज्ञक होता है)।

आनङ् — VI. iii. 24
(विद्या तथा योनि सम्बन्ध के वाचक ऋकारान्त शब्दों के द्वन्द्व समास में उत्तरपद परे रहते) आनङ् आदेश होता है।

आनन्तर्ये — IV. i. 104
(षष्ठीसमर्थ बिदादि प्रातिपदिकों से गोत्रापत्य में अञ् प्रत्यय होता है, परन्तु इनमें जो अनृषिवाची हैं, उनसे) अनन्तरापत्य में (अञ् होता है)।

...आनाम्य... — IV. iv. 91
देखें — **तार्यतुल्य० IV. iv. 91**

आनायः — III. iii. 124

(जाल अभिधेय हो तो) आङ् पूर्वक नी धातु से करण कारक तथा संज्ञा में आनाय शब्द (घञ् प्रत्ययान्त निपातन किया जाता है)।

आनाय्यः — III. i. 127

'आनाय्य' शब्द का निपातन किया जाता है, (अनित्य अर्थ को कहने के लिये)।

आनि — VIII. iv. 17

(उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर लोडादेश) आनि के (नकार को णकारादेश होता है)।

आनुक् — IV. i. 48

(इन्द्र, वरुण आदि प्रातिपदिक पुंल्लिङ्ग के हेतु से स्त्रीलिङ्ग में वर्तमान हों तो उनसे ङीप् प्रत्यय तथा) आनुक् का आगम होता है।

...आनुपूर्व्य... — II. i. 6

देखें — **विभक्तिसमीपसमृद्धि० II. i. 6**

आनुलोम्ये — III. iv. 64

अनुकूलता गम्यमान हो तो (अन्वक् शब्द उपपद रहते भू धातु से क्त्वा, णमुल् प्रत्यय होते हैं)।

आनुलोम्ये — V. iv. 63

अनुकूलता अर्थ में वर्तमान (सुख तथा प्रिय प्रातिपदिकों से कृञ् के योग में डाच् प्रत्यय होता है)।

...आनुलोम्येषु — III. ii. 20

देखें — **हेतुताच्छील्यानुलोम्येषु III. ii. 20**

आनृचुः — VI. i. 35

(वेदविषय में) आनृचुः शब्द का निपातन किया जाता है।

आनृहुः — VI. i. 35

(वेदविषय में) आनृहुः शब्द का निपातन किया जाता है।

आने — VII. ii. 82

आन परे रहते (अङ्ग के अकार को मुक् आगम होता है)।

...आनौ — I. iv. 99

देखें — **तङानौ I. iv. 99**

आप्... — II. iv. 82

देखें — **आप्सुपः II. iv. 82**

...आप्... — IV. i. 1

देखें — **ङ्याप्प्रातिपदिकात् IV. i. 1**

...आप्... — VII. iii. 116

देखें — **नद्याम्नीभ्यः VII. iii. 116**

आप्... — VII. iv. 55

देखें — **आप्ज्ञप्यृधाम् VII. iv. 55**

...आपः — VI. iii. 62

देखें — **ङ्यापः VI. iii. 62**

आपः — VI. iv. 57

आप् से उत्तर (ल्यप् परे रहते विकल्प से णि के स्थान में अयादेश होता है)।

आपः — VII. i. 18

आबन्त अङ्ग से उत्तर (औङ् = औ तथा औट् के स्थान में शी आदेश होता है)।

...आपः — VII. i. 54

देखें — **ह्रस्वनद्यापः VII. i. 54**

आपः — VII. iii. 105

आबन्त अङ्ग को (आङ् = टा परे रहते तथा ओस् परे रहते एकारादेश होता है)।

आपः — VII. iv. 15

आबन्त अङ्ग को (विकल्प से ह्रस्व नहीं होता, कप् प्रत्यय परे रहते)।

...आपण... — III. iii. 119

देखें — **गोचरसञ्चर० III. iii. 119**

आपत्यस्य — VI. iv. 151

(हल् से उत्तर भसञ्ज्ञक अङ्ग के) अपत्यसम्बन्धी (यकार) का (भी अनाकारादि तद्धित परे रहते लोप होता है)।

आपनीफणत् — VII. iv. 65

आपनीफणत् शब्द (वेद-विषय में) निपातन किया जाता है।

आपन्नः — V. i. 72

(द्वितीयासमर्थ संशय प्रातिपदिक से) 'प्राप्त हो गया' अर्थ में (यथाविहित ठञ् प्रत्यय होता है)।

...आपन्ने — II. ii. 4

देखें — **प्राप्तापन्ने II. ii. 4**

...आपन्नैः ... — II. i. 23
देखें — श्रितातीतपतित० II. i. 23

...आपात्याः — III. iv. 68
देखें — भव्यगेय० III. iv. 68

आपि — VII. ii. 112
(ककार से रहित इदम् शब्द के इद् भाग को अन् आदेश होता है), आप् अर्थात् टा से लेकर सुप् (सप्तमी बहुवचन) तक किसी विभक्ति के परे रहते।

आपि — VII. iii. 44
(प्रत्यय में स्थित ककार से पूर्व अकार के स्थान में इकारादेश होता है); आप् अर्थात् टाप्, डाप् या चाप् परे रहते, (यदि वह आप् सुप् से उत्तर न हो तो)।

आपिशलेः — VI. i. 89
आपिशलि आचार्य के मत में (सुबन्त अवयव वाले ऋकारादि धातु के परे रहते अवर्णान्त उपसर्ग से उत्तर पूर्व पर के स्थान में संहिता-विषय में विकल्प से वृद्धि एकादेश होता है)।

...आपृच्छ्य... — III. i. 123
देखें — निष्टक्यंदेवहूय० III. i. 123

आपो — VI. i. 114
'आपो' – यह पद (यजुर्वेद में पठित होने पर अकार परे रहते प्रकृतिभाव से रहता है)।

आप्ज्ञप्यृधाम् — VII. iv. 55
आप्, ज्ञपि तथा ऋध् अङ्गों के (अच् के स्थान में इकारादेश होता है, सकारादि सन् प्रत्यय परे रहते)।

आप्रपदम् — V. ii. 8
(द्वितीयासमर्थ) आप्रपद प्रातिपदिक से ('प्राप्त होता है' अर्थ में ख प्रत्यय होता है)।

...आप्लाव्य... — III. iv. 68
देखें — भव्यगेय० III. iv. 68

आप्सुपः — II. iv. 82
(अव्यय से उत्तर) आप् = टाप्, डाप्, चाप् स्त्री प्रत्यय तथा सुप् का (लुक् हो जाता है)।

आपः — VII. iii. 113
आबन्त अङ्ग से उत्तर (ङित् प्रत्यय को याट् आगम होता है)।

आबर्हि — IV. iv. 88
आबर्हि = उत्पादनीय समानाधिकरण (प्रथमासमर्थ मूल प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में यत् प्रत्यय होता है)।

...आबाध... — VI. ii. 21
देखें — आशङ्काबाध० VI. ii. 21

आबाधे — VIII. i. 10
पीड़ा अर्थ में वर्त्तमान (शब्द को द्वित्व होता है तथा उस शब्द को बहुव्रीहि के समान कार्य भी हो जाता है)।

...आब्भ्यः — VI. i. 66
देखें — हल्ड्याब्भ्यः VI. i. 66

आभात् — VI. iv. 22
'भस्य' के अधिकारपर्यन्त (समानाश्रय अर्थात् एक ही निमित्त होने पर आभीय कार्य सिद्ध के समान नहीं होता)।

आभिमुख्ये — II. i. 13
आभिमुख्य अर्थ में वर्तमान (अभि और प्रति का चिन्हार्थक सुबन्त के साथ विकल्प से अव्ययीभाव समास होता है)।

...आभीक्ष्ण्ययोः — VIII. i. 27
देखें — कुत्सनाभीक्ष्ण्ययोः VIII. i. 27

आभीक्ष्ण्ये — III. ii. 81
आभीक्ष्ण्य = पुनः पुनः होना अर्थ गम्यमान हो तो (धातु से बहुल करके णिनि प्रत्यय होता है)।

आभीक्ष्ण्ये — III. iv. 22
पौनः पुन्य अर्थ में (समानकर्तृक दो धातुओं में जो पूर्वकालिक धातु, उससे णमुल् प्रत्यय होता है), चकार से क्त्वा प्रत्यय भी होता है)।

आम् — III. i. 35
(कास् धातु और प्रत्ययान्त धातुओं से लिट् परे रहते अमन्त्र विषय में) आम् प्रत्यय होता है।

आम् — III. iv. 90
(लोट् सम्बन्धी जो एकार, उसको) आम् आदेश होता है।

...आम्... — IV. i. 2
देखें — स्वौजसमौट्० IV. i. 2

आम्... — VI. iv. 55
देखें — आमन्ता० VI. iv. 55

आम् — VII. i. 98
(चतुर् तथा अनडुह् अङ्गों को सर्वनामस्थान-विभक्ति परे रहते) आम् आगम होता है (और वह उदात्त होता है)।

आम् — VII. iii. 116
(नदीसञ्ज्ञक आबन्त तथा नी से उत्तर ङि विभक्ति के स्थान में) आम् आदेश होता है।

आमः — II. iv. 81

आम् प्रत्यय से उत्तर (च्लि का लुक् होता है)।

आमः — VIII. i. 55

आम् से उत्तर (एक पद का व्यवधान है जिसके मध्य में, ऐसे आमन्त्रित-सञ्ज्ञक पद को अनन्तिक = दूरवर्ती अर्थ में अनुदात्त नहीं होता)।

आमन्ताल्वाय्येत्न्विष्णुषु — VI. iv. 55

आम्, अन्त, आलु, आय्य, इलु, इष्णु – इनके परे रहते (णि को अय् आदेश होता है)।

...आमन्त्रण... — III. iii. 161

देखें — **विधिनिमन्त्रणा० III. iii. 161**

आमन्त्रितम् — II. iii. 48

(सम्बोधन में विहित प्रथमान्त शब्दों की) आमन्त्रित संज्ञा होती है।

आमन्त्रितम् — VIII. i. 55

(आम् से उत्तर एक पद का व्यवधान है जिसके मध्य में, ऐसे) आमन्त्रित सञ्ज्ञक पद को (अनन्तिक अर्थ में अनुदात्त नहीं होता)।

आमन्त्रितम् — VIII. i. 72

(किसी पद से पूर्व आमन्त्रित-सञ्ज्ञक पद हो तो वह) आमन्त्रित पद (अविद्यमान के समान माना जावे)।

आमन्त्रितस्य — VI. i. 192

आमन्त्रित-सञ्ज्ञक के (भी आदि को उदात्त होता है)।

आमन्त्रितस्य — VIII. i. 8

(वाक्य के आदि के) आमन्त्रित को (द्वित्व होता है, यदि वाक्य से असूया, सम्मति, कोप, कुत्सन एवं भर्त्सन गम्यमान हो रहा हो तो)।

आमन्त्रितस्य — VIII. i. 19

(पाद के आदि में वर्तमान न हो तो पद से उत्तर) आमन्त्रित-सञ्ज्ञक (सम्पूर्ण) पद को (भी अनुदात्त होता है)।

आमन्त्रिते — II. i. 2

आमन्त्रित-सञ्ज्ञक पद के परे रहते (पूर्व के सुबन्त पद को पर के अङ्ग के समान कार्य होता है, स्वरविषय में)।

आमन्त्रिते — VIII. i. 73

(समान अधिकरण वाला) आमन्त्रित पद परे हो तो (उससे पूर्ववाला आमन्त्रित पद अविद्यमान के समान न हो)।

आमि — I. iv. 5

(इयङ्, उवङ्स्थानी स्त्री की आख्यावाले ईकारान्त ऊकारान्त शब्दों की) आम् परे रहते (विकल्प से नदी सञ्ज्ञा नहीं होती, स्त्री शब्द को छोड़कर)।

आमि — VII. i. 52

(अवर्णान्त सर्वनाम से उत्तर) आम् को (सुट् का आगम होता है)।

आमु — V. iv. 11

(किम्, एकारान्त, तिङन्त तथा अव्ययों से विहित जो तरप् तथा तमप् प्रत्यय, तदन्त से) आमु प्रत्यय होता है, (द्रव्य का प्रकर्ष न कहना हो तो)।

...आमुष... — III. ii. 142

देखें — **सम्पृचानुरुधा० III. ii. 142**

आम्प्रत्ययवत् — I. iii. 63

जिस धातु से आम् प्रत्यय किया गया है, उसके समान ही (पश्चात् प्रयोग की गई कृ धातु से आत्मनेपद हो जाता है)।

...आम्ब... — VIII. iii. 97

देखें — **अम्बाम्ब० VIII. iii. 97**

...आम्र... — VIII. iv. 5

देखें — **प्रनिरन्तः० VIII. iv. 5**

आम्रेडितम् — VII. ii. 95

(भर्त्सन में) आम्रेडित को (प्लुत उदात्त होता है)।

आम्रेडितम् — VIII. i. 2

(उस द्वित्व किये हुये के पर वाले शब्दरूप की) आम्रेडित सञ्ज्ञा होती है।

...आम्रेडितयोः — VIII. iii. 49

देखें — **अप्राम्रेडितयोः VIII. iii. 49**

आम्रेडितस्य — VI. i. 96

आम्रेडित-सञ्ज्ञक जो (अव्यक्तानुकरण का अत्) शब्द, उसे (इति परे रहते पररूप एकादेश नहीं हो, किन्तु जो उस आम्रेडित का अन्त्य तकार, उसको विकल्प से पररूप एकादेश होता है, संहिता के विषय में)।

आम्रेडिते — VIII. ii. 103

आम्रेडित परे रहते (पूर्वपद की टि को स्वरित होता है; असूया, सम्मति, कोप तथा कुत्सन गम्यमान होने पर)।

आम्रेडिते — VIII. iii. 12

(कान् शब्द के नकार को रु होता है), आम्रेडित परे रहते।

...आम्रेडितेषु — VIII. i. 57
देखें — चनचिदिव० VIII. i. 57

...आय्... — VI. i. 75
देखें — अयवायाव: VI. i. 75

...आय... — V. i. 46
देखें — वृद्ध्यायलाभ० V. i. 46

आय: — III. i. 28
(गुपू, धूप, विच्छ, पणि और पनि धातुओं से स्वार्थ में) आय प्रत्यय होता है।

आयन्... — VII. i. 2
देखें — आयनेयी० VII. i. 2

आयनेयीनीयियः — VII. i. 2
(प्रत्यय के आदि के फ्, ढ्, ख्, छ् तथा घ् को यथासङ्ख्य करके) आयन्, एय्, ईन्, ईय् तथा इय् आदेश होते हैं।

आयस्थानेभ्यः — IV. iii. 75
(पञ्चमीसमर्थ) आयस्थानवाची = आय अर्थात् स्वामी के ग्राह्य भाग के उत्पन्न होने का स्थल, तद्वाची प्रातिपदिकों से (आगत अर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

आयादयः — III. i. 31
आय आदि = आय, ईयङ्, णिङ् प्रत्यय (आर्धधातुक के विषय में विकल्प से होते हैं)।

आयामः — II. i. 15
(अनु जिसका) आयामवाची = विस्तारवाची है, (ऐसे लक्षणवाची समर्थ सुबन्त के साथ भी अनु का विकल्प से समास होता है और वह अव्ययीभाव समास होता है)।

आयामे — V. iv. 83
(अनुगव शब्द अच् प्रत्ययान्त निपातन किया जाता है), लम्बाई अभिधेय हो तो।

आयुक्त... — II. iii. 40
देखें — आयुक्तकुशलाभ्याम् II. iii. 40

आयुक्तकुशलाभ्याम् — II. iii. 40
आयुक्त तथा कुशल शब्दों के योग में (भी षष्ठी और सप्तमी विभक्ति होती है, तत्परता गम्यमान होने पर)।

आयुधजीविभ्यः — IV. iii. 91
(प्रथमासमर्थ पर्वतवाची प्रातिपदिकों से 'वह इसका अभिजन'– इस अर्थ में छ प्रत्यय होता है), आयुधजीवियों अर्थात् शस्त्रों से जीविका चलाने वालों को कहने के लिये।

आयुधजीविसङ्घात् — V. iii. 114
(वाहीक देशविशेष में) शस्त्रों से जीविका कमाने वाले पुरुषों के समूहवाची प्रातिपदिकों से (ञ्यट् प्रत्यय होता है, ब्राह्मण और राजन्य को छोड़कर)।

आयुधात् — IV. iv. 14
(तृतीयासमर्थ) आयुध प्रातिपदिक से (छ तथा ठन् प्रत्यय होते हैं)।

...आयुषः — VIII. iii. 83
देखें — ज्योतिरायुषः VIII. iii. 83

आयुष्य... — II. iii. 73
देखें — आयुष्यमद्रभद्र० II. iii. 73

आयुष्यमद्रभद्रकुशलसुखार्थहितैः — II. iii. 73
(आशीर्वाद गम्यमान होने पर) आयुष्य, मद्र, भद्र, कुशल, सुख, अर्थ, हित – इन शब्दों के प्रयोग में (शेष विवक्षित होने पर विकल्प से चतुर्थी विभक्ति होती है, चकार से पक्ष में षष्ठी भी होती है)।

...आय्य... — VI. iv. 55
देखें — आमन्ता० VI. iv. 55

आरक् — IV. i. 130
(गोधा प्रातिपदिक से उत्तरदेशवासी आचार्यों के मत में) आरक् प्रत्यय होता है।

...आरात्... — II. iii. 29
देखें — अन्यारादितरर्ते० II. iii. 29

आरुः — III. ii. 173
(शॄ तथा वदि धातुओं से तच्छीलादि कर्ता हो तो वर्त्तमान काल में) आरु प्रत्यय होता है।

...आरूढयोः — V. ii. 34
देखें — आसन्नारूढयोः V. ii. 34

...आर्द्रा... — IV. iii. 28
देखें — पूर्वाह्णापराह्णार्द्रा० IV. iii. 28

आर्धधातुकम् — III. iv. 114
(धातु से विहित तिङ्, शित् से शेष बचे जो प्रत्यय, उनकी) आर्धधातुक संज्ञा होती है।

...आर्धधातुकयोः — VII. iii. 84
देखें — सार्वधातुकार्ध० VII. iii. 84

आर्धधातुकस्य — VII. ii. 35
(वल् प्रत्याहार आदि में है जिसके, ऐसे) आर्धधातुक को (इट् का आगम होता है)।

आर्धधातुके — I. i. 4

जिस आर्धधातुक को निमित्त मानकर (धातु के अवयव का लोप हुआ हो), उसी आर्धधातुक को निमित्त मानकर (इक् के स्थान में जो गुण, वृद्धि प्राप्त होते हैं, वे नहीं होते)।

आर्धधातुके — II. iv. 35

आर्धधातुक के विषय में अथवा परे रहते, यह अधिकार सूत्र है।

आर्धधातुके — III. i. 31

आर्धधातुक के विषय में (आय आदि प्रत्यय विकल्प से होते हैं)।

आर्धधातुके — VI. iv. 47

यह अधिकार सूत्र है; 'न ल्यपि' VI. iv. 68 से पूर्व तक आर्धधातुक का अधिकार जायेगा।

आर्धधातुके — VII. iv. 49

(सकारान्त अङ्ग को सकारादि) आर्धधातुक के परे रहते (तकारादेश होता है)।

आर्यः — VI. ii. 58

(ब्राह्मण तथा कुमार शब्द उत्तरपद रहते कर्मधारय समास में पूर्वपद) आर्य शब्द को (विकल्प से प्रकृतिस्वर होता है)।

...आर्यकृत... — IV. i. 30

देखें — केवलमामक० IV. i. 30

...आर्ष... — II. iv. 58

देखें — ण्यक्षत्रियार्ष० II. iv. 58

...आलः — VII. i. 39

देखें — सुलुक्० VII. i. 39

आलच्... — V. ii. 125

देखे — आलजाटचौ V. ii. 125

आलजाटचौ — V. ii. 125

(वाच् प्रातिपदिक से 'मत्वर्थ' में) आलच् और आटच् प्रत्यय होते है, (बहुत बोलने वाला अभिधेय हो तो)।

आलम्बन... — VIII. iii. 68

देखें — आलम्बनाविदूर्ययोः VIII. iii. 68

आलम्बनाविदूर्ययोः — VIII. iii. 68

(अव उपसर्ग से उत्तर भी स्तन्भु के सकार को) आलम्बन = आश्रयण और आविदूर्य = समीपता अर्थ में (मूर्धन्य आदेश होता है)।

आलिङ्गने — III. i. 46

आलिङ्गन अर्थ में वर्तमान (श्लिष् धातु से उत्तर च्लि के स्थान में क्स आदेश होता है, लुङ् परे रहने पर)।

...आलु... — VI. iv. 55

देखें — आमन्ता० VI. iv. 55

आलुच् — III. ii. 158

(स्पृह, गृह, पत, दय, नि और तत्पूर्वक द्रा, श्रत्पूर्वक डुधाञ् – इन धातुओं से तच्छीलादि कर्त्ता हों तो वर्तमान काल में) आलुच् प्रत्यय होता है।

आलेखने — VI. i. 137

(अप उपसर्ग से उत्तर किरति होने पर चार पैर वाले बैल आदि तथा पक्षी मोर आदि में जो) कुरेदना गम्यमान हो तो (संहिता में ककार से पूर्व सुट् का आगम होता है)।

...आवः — VI. i. 75

देखें — अयवायावः VI. i. 75

आवट्यात् — IV. i. 75

(अनुपसर्जन) आवट्य शब्द से (भी स्त्रीलिंग में चाप् प्रत्यय होता है)।

...आवपन... — IV. i. 42

देखें — वृत्यमत्रावपना० IV. i. 42

आवश्यक... — III. iii. 170

देखें — आवश्यकाधमर्ण्ययोः III. iii. 170

आवश्यकाधमर्ण्ययोः — III. iii. 170

आवश्यक और आधमर्ण्य = ऋण विशिष्ट कर्ता वाच्य हो तो (धातु से णिनि प्रत्यय होता है)।

आवश्यके — III. i. 125

आवश्यक अर्थ द्योतित होने पर (उवर्णान्त धातु से ण्यत् प्रत्यय होता है)।

आवश्यके — VII. iii. 65

(ण्य परे रहते) आवश्यक अर्थ में (अङ्ग के वकार, जकार को कवर्गादेश नहीं होता)।

...आवसथ... — V. iv. 23

देखें — अनन्तावसथे० V. iv. 23

आवसथात् — IV. iv. 74

(सप्तमीसमर्थ) आवसथ प्रातिपदिक से ('बसता है' अर्थ में ष्ठल् प्रत्यय होता है)।

आवहति — V. i. 49

(वंशादिगणपठित प्रातिपदिकों से उत्तर जो भार शब्द, तदन्त द्वितीयासमर्थ प्रातिपदिक से 'हरण करता है', वहन करता है' और) 'उत्पन्न करता है' अर्थ में (यथाविहित प्रत्यय होता है)।

...आवहानाम् — VIII. ii. 91

देखें — ब्रूहिप्रेष्य० VIII. ii. 91

...आविदूर्ययोः — VIII. iii. 68

देखें — आलम्बनाविदूर्ययोः VIII. iii. 68

आविदूर्ये — VII. ii. 25

(अभि उपसर्ग से उत्तर भी) सन्निकट अर्थ में (अर्द् धातु से निष्ठा परे रहते इट् आगम नहीं होता)।

...आवौ — VII. ii. 92

देखें — युवावौ VII. ii. 92

...आशङ्क्योः — III. iv. 8

देखें — उपसंवादाशङ्क्योः III. iv. 8

आशङ्का... — VI. ii. 21

देखें — आशङ्काबाध० VI. ii. 21

आशङ्काबाधनेदीयस्सु — VI. ii. 21

आशङ्क, आबाध तथा नेदीयस् शब्दों के उत्तरपद रहते (सम्भावनवाची तत्पुरुष समास में पूर्वपद को प्रकृतिस्वर हो जाता है)।

...आशंस... — III. ii. 168

देखें — सनाशंस० III. ii. 168

आशंसायाम् — III. iii. 132

आशंसा गम्यमान होने पर (धातु से भविष्यत्काल में विकल्प से भूतकाल के समान तथा वर्तमान काल के समान भी प्रत्यय हो जाते हैं)।

आशंसावचने — III. iii. 134

आशंसावाची शब्द उपपद हो तो (धातु से लिङ् प्रत्यय होता है)।

...आशा... — VI. iii. 98

देखें — आशीराशा० VI. iii. 98

आशितः — VI. i. 201

(कर्तृवाची) आशित शब्द को (आद्युदात्त होता है)।

...आशितङ्गु... — V. iv. 7

देखें — अषडक्ष० V. iv. 7

आशिते — III. ii. 45

आशित सुबन्त उपपद रहते (भू धातु से करण और भाव में खच् प्रत्यय होता है)।

आशिषि — II. iii. 55

आशीर्वचन अर्थ में ('नाथृ' धातु के कर्मकारक में शेष की विवक्षा होने पर षष्ठी विभक्ति होती है)।

आशिषि — II. iii. 73

आशीर्वाद गम्यमान हो तो (आयुष्य, मद्र, भद्र, कुशल, सुख, अर्थ, हित – इन शब्दों के योग में शेष विवक्षित होने पर चतुर्थी विभक्ति विकल्प से होती है, चकार से पक्ष में षष्ठी भी होती है)।

आशिषि — III. i. 86

आशीर्विषयक (लिङ्) परे रहते (धातु से अङ् प्रत्यय होता है, वेद-विषय में)।

आशिषि — III. i. 150

आशीर्वाद अर्थ गम्यमान हो तो (भी धातुमात्र से वुन् प्रत्यय होता है)।

आशिषि — III. ii. 49

आशीर्वचन गम्यमान होने पर (हन् धातु से कर्म उपपद रहते ड प्रत्यय होता है)।

आशिषि — III. iii. 173

आशीर्वाद विशिष्ट अर्थ में वर्तमान (धातु से लिङ् तथा लोट् प्रत्यय होते हैं)।

आशिषि — III. iv. 104

आशीर्वाद अर्थ में विहित (परस्मैपदसंज्ञक लिङ् को यासुट् आगम होता है, वह कित् और उदात्त होता है)।

आशिषि — III. iv. 116

आशीर्वाद अर्थ में (जो लिङ्, वह आर्धधातुकसंज्ञक होता है)।

आशिषि — VI. ii. 148

(सञ्ज्ञाविषय में) आशीर्वाद गम्यमान हो तो (कारक से उत्तर दत्त तथा श्रुत क्तान्त शब्दों को ही अन्तोदात्त होता है)।

आशिषि — VII. i. 35

आशीर्वाद विषय में (तु और हि के स्थान में तातङ् आदेश होता है, विकल्प करके)।

आशिस्... — VI. iii. 98

देखें — आशीराशा० VI. iii. 98

आशीर् — VI. i. 35

(वेदविषय में) आशीर् शब्द का निपातन किया जाता है।

आशीराशास्थास्थितोत्सुकोतिकारकरागच्छेषु — VI. iii. 98

आशिस्, आशा, आस्था, आस्थित, उत्सुक, ऊति, कारक, राग, छ – इनके परे रहते (अषष्ठीस्थित तथा अतृतीया-स्थित अन्य शब्द को दुक् आगम होता है)।

आशीर्ताः — VI. i. 35

(वेदविषय में) आशीर्त शब्द का निपातन किया जाता है।

...आशीः ... — VIII. ii. 104

देखें — **क्षियाशीः० VIII. ii. 104**

आश्चर्यम् — VI. i. 142

(अनित्य विषय में) आश्चर्य शब्द में सुट् आगम का निपातन किया जाता है।

आश्रये — III. iii. 85

(कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में, उपघ्न शब्द में उप पूर्वक हन् धातु से अप् प्रत्यय तथा हन् की उपधा का लोप निपातन किया जाता है), सामीप्य प्रतीत होने पर।

आश्वयुज्याः — IV. iii. 45

(सप्तमीसमर्थ) आश्वयुजी प्रातिपदिक से (बोया हुआ अर्थ में वुञ् प्रत्यय होता है)।

आश्वयुजी = अश्विनी नक्षत्र से युक्त पौर्णमासी।

...आषाढा... — IV. iii. 34

देखें — **श्रविष्ठाफल्गुन्य० IV. iii. 34**

...आषाढात् — V. i. 109

देखें — **विशाखाषाढात् V. i. 109**

...आस... — III. iii. 107

देखें — **ण्यासश्रन्थः III. iii. 107**

...आस... — III. iv. 72

देखें — **गत्यर्थाकर्मक० III. iv. 72**

...आसः — III. i. 37

देखें — **दयायासः III. i. 37**

आसः — VII. ii. 83

आस् से उत्तर (आन को ईकारादेश होता है)।

आसन् — VI. i. 61

(वेद विषय में आस्य शब्द के स्थान में) आसन् आदेश हो जाता है, (शस् प्रकार वाले प्रत्ययों के परे रहते)।

...आसन... — VI. ii. 151

देखें — **मन्क्तिन० VI. ii. 151**

...आसनयोः — VIII. iii. 94

देखे — **वृक्षासनयोः VIII. iii. 94**

आसन्दीवत् — VIII. ii. 12

आसन्दीवत् शब्द का निपातन किया जाता है।

...आसन्न... — II. ii. 25

देखें — **अव्ययासन्नादूरा० II. ii. 25**

आसन्न... — V. ii. 34

देखें — **आसन्नारूढयोः V. ii. 34**

आसन्नकाले — III. ii. 116

समीपकालिक (प्रंष्टव्य अनद्यतन परोक्ष भूतकाल) में वर्तमान (धातु से भी लङ् तथा लिट् प्रत्यय होते हैं)।

आसन्नारूढयोः — V. ii. 34

(यथासङ्ख्य करके) आसन्न और आरूढ अर्थों में वर्तमान (उप और अधि उपसर्गों से त्यकन् प्रत्यय होता है, सञ्ज्ञाविषय में)।

...आसाम् — I. iv. 46

देखें — **अधिशीङ्स्थासाम् I. iv. 46**

आसाम् — IV. iv. 125

(उपधान मन्त्र समानाधिकरण प्रथमासमर्थ मतुबन्त प्रातिपदिक से) षष्ठ्यर्थ में (यत् प्रत्यय होता है, यदि षष्ठ्यर्थ में निर्दिष्ट ईंटें ही हों, तथा मतुप् का लुक् भी हो जाता है, वेद विषय में)।

आसीत् — VII. ii. 102

('उपरिस्वित्'), 'आसीत्' (इनकी टि को प्लुत अनुदात्त होता है)।

आसु... — III. i. 126

देखें — **आसुयुवपि० III. i. 126**

...आसुति... — V. ii. 112

देखें — **रजःकृष्या० V. ii. 112**

आसुयुवपिरपिलपित्रपिचमः — III. i. 126

आङ् पूर्वक षुञ्, यु, वप्, रप्, लप्, त्रप् और चम् – इन धातुओं से (भी ण्यत् प्रत्यय होता है)।

आसेवायाम् — II. iii. 40

आसेवा = तत्परता गम्यमान होने पर (आयुक्त और कुशल शब्दों के योग में षष्ठी और सप्तमी विभक्ति होती है)।

...आसेव्यमानयोः — III. iv. 56

देखें — **व्याप्यमानासेव्य० III. iv. 56**

...आस्था... — VI. iii. 98
देखें — आशीराशा० VI. iii. 98

...आस्थित... — VI. iii. 98
देखें — आशीराशा० VI. iii. 98

आस्पदम् — VI. i. 141
(प्रतिष्ठा अर्थ में) आस्पद शब्द में सुट् आगम का निपातन किया जाता है।

...आस्य... — I. i. 9
देखें — तुल्यास्यप्रयत्नम् I. i. 9

...आस्यप्रयत्नम् — I. i. 9
देखें — तुल्यास्यप्रयत्नम् I. i. 9

...आसु... — III. i. 141
देखें — श्याद्व्यधा० III. i. 141

...आस्वनाम् — VII. ii. 28
देखें — रुष्यमत्वर० VII. ii. 28

आहः — III. iv. 84
(ब्रू धातु से परे जो लट् लकार, उसके स्थान में जो परस्मैपदसंज्ञक आदि के पांच आदेश, उनके स्थान में क्रम से पांच ही णल्, अतुस्, उस्, थल्, अथुस् आदेश विकल्प से हो जाते हैं, साथ ही ब्रू धातु को) आह आदेश (भी) हो जाता है।

आहः — VIII. ii. 35
आह् के (हकार के स्थान में थकारादेश होता है, झल् परे रहते)।

आहत... — V. ii. 120
देखें — आहतप्रशंसयोः V. ii. 120

आहतप्रशंसयोः — V. ii. 120
आहत = साँचे में ठोंककर रूप निखार कर बनाई जाने वाली मुद्राएँ तथा प्रशंसा = स्तुति अर्थों में वर्तमान (रूप प्रातिपदिक से 'मत्वर्थ' में यप् प्रत्यय होता है)।

आहावः — III. iii. 74
(निपात अभिधेय हो तो आङ् पूर्वक ह्वेञ् धातु से अप् प्रत्यय, सम्प्रसारण तथा वृद्धि भी निपातन से करके) आहाव शब्द सिद्ध होता है, (कर्तृभिन्न कारक संज्ञाविषय में)।

आहि — V. iii. 37
(दिशा, देश तथा काल अर्थों में वर्तमान पञ्चम्यन्तवर्जित सप्तमीप्रथमान्त दिशावाची दक्षिण प्रातिपदिक से) आहि (तथा आच् प्रत्यय होते हैं, 'दूरी' वाच्य हो तो)।

आहिताग्न्यादिषु — II. ii. 37
आहिताग्नि आदि शब्दों में (निष्ठान्त का पूर्व प्रयोग विकल्प से होता है)।

आहितात् — VIII. iv. 8
आहित = शकट इत्यादि वाहनों में जो रखा जाये, वह पदार्थ, तद्वाची (जो पूर्वपद, तत्स्थ निमित्त) से उत्तर (वाहन शब्द के नकार को णकार आदेश होता है)।

...आहियुक्ते — II. iii. 29
देखें — अन्यारादितरर्ते० II. iii. 29

आहृतम् — V. i. 76
(तृतीयासमर्थ उत्तरपथ प्रातिपदिक से) 'लाया हुआ' (तथा 'जाता है') अर्थ में (यथाविहित ठञ् प्रत्यय होता है)।

आहो — VIII. i. 49
(अविद्यमान पूर्व वाले) आहो (उताहो) से युक्त (व्यवधान- रहित तिङ् को भी अनुदात्त नहीं होता है)।

इ

इ — प्रत्याहार सूत्र I
आचार्य पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में प्रथम प्रत्याहार सूत्र में पठित द्वितीय वर्ण, जो अपने सम्पूर्ण अठारह भेदों का ग्राहक होता है।

अष्टाध्यायी में पठित वर्णमाला का दूसरा वर्ण।

इ ... — VI. iv. 77
देखें — य्वोः VI. iv. 77

इ ... — VI. iv. 148
देखें — यस्य VI. iv. 148

इ... — VIII. ii. 15
देखें — इरः VIII. ii. 15

इक् — I. i. 44
(यण् = य्, व्, र्, ल् के स्थान में जो हो चुका अथवा होने वाला) इक् = इ, उ, ऋ, लृ, (उसकी सम्प्रसारण संज्ञा होती है)।

यहाँ यण् के स्थान में जो इक् वर्ण और यण् के स्थान में इक् करना- यह वाक्यार्थ भी सम्प्रसारण-संज्ञक है।

इक् — I. i. 47

(एच्=ए, ओ, ऐ, औ के स्थान में ह्रस्वादेश करने में) इक्=इ ,उ, ऋ, लृ ही होता है।

इकः — I. i. 3

(गुण हो जाये, वृद्धि हो जाये ऐसा नाम लेकर जहाँ गुण, वृद्धि का विधान किया जाये, वहाँ वे) इक्=इ, उ, ऋ, लृ के स्थान में ही हों।

इकः — I. ii. 9

इगन्त धातु से परे (झलादि सन् प्रत्यय कित्वत् होता है)।

इकः — VI. i. 74

इक्=इ, उ, ऋ, लृ के स्थान में (यथासंख्य करके यण्=य्, व्, र्, ल् आदेश होते हैं; अच् परे रहते, संहिता के विषय में)।

इकः — VI. i. 123

(असवर्ण अच् परे हो तो) इक् को (शाकल्य आचार्य के मत में प्रकृतिभाव हो जाता है तथा उस इक् के स्थान में ह्रस्व भी हो जाता है)।

इकः — VI. iii. 60

(ङी अन्त में नहीं है जिसके, ऐसा) जो इक् अन्त वाला शब्द, उसको (गालव आचार्य के मत में विकल्प से ह्रस्व होता है, उत्तरपद परे रहते)।

इकः — VI. iii. 120

(पीलु शब्द को छोड़कर) जो इगन्त पूर्वपद, उसको (वह शब्द के उत्तरपद रहते दीर्घ होता है)।

इकः — VI. iii. 122

इगन्त (उपसर्ग) को (काश शब्द उत्तरपद रहते दीर्घ होता है, संहिता के विषय में)।

इकः — VI. iii. 133

इगन्त शब्द को (सुञ् परे रहते ऋचा विषय में दीर्घ हो जाता है)।

इकः — VII. i. 73

इक् अन्तवाले (नपुंसकलिंग) को (अजादि विभक्ति परे रहते नुम् आगम होता है)।

इकः — VII. iii. 50

(अङ्ग के निमित्त ठ को) इक आदेश होता है।

इकः — VIII. ii. 76

(रेफान्त तथा वकारान्त जो धातु पद, उसकी उपधा) इक् को (दीर्घ होता है)।

...इकान्त... — IV. ii. 140

देखें — अकेकान्त० IV. ii. 140

...इक्षु... — VIII. iv. 5

देखें — प्रनिरन्तः० VIII. iv. 5

इगन्त... — VI. ii. 29

देखें — इगन्तकाल० VI. ii. 29

इगन्तकालकपालभगालशरावेषु — VI. ii. 29

(द्विगुसमास में) इगन्त उत्तरपद रहते तथा कालवाची एवं कपाल, भगाल, शराव – इन शब्दों के उत्तरपद रहते (पूर्वपद को प्रकृतिस्वर होता है)।

इगन्तात् — V. i. 130

(षष्ठीसमर्थ लघु=ह्रस्व अक्षर पूर्व में है जिसके, ऐसे) इक्=इ, उ, ऋ, लृ अन्तवाले प्रातिपदिक से (भी भाव और कर्म अर्थों में अण् प्रत्यय होता है)।

इगुपध... — III. i. 135

देखें — इगुपधज्ञा० III. i. 135

इगुपधज्ञाप्रीकिरः — III. i. 135

इक् उपधावाली धातुओं से तथा ज्ञा, प्रीञ्, कृ – इन धातुओं से (क प्रत्यय होता है)।

इगुपधात् — III. i. 45

इक् उपधा वाली जो (शलन्त और अनिट्) धातु, उससे उत्तर (च्लि के स्थान में 'क्स' होता है, लुङ् परे रहते)।

...इङ्... — I. iii. 86

देखें — बुधयुधनशजनेङ्० I. iii. 86

इङ्... — III. ii. 130

देखें — इङ्धार्योः III. ii. 130

...इङ्... — VI. i. 47

देखें — क्रीङ्जीनाम् VI. i. 47

इङः — II. iv. 48

इङ् के स्थान में (भी गम् आदेश होता है, आर्धधातुक सन् परे रहते)।

इङः — III. iii. 21

इङ् धातु से (भी कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

...इडेः — VI. i. 180

देखें — अहृन्विडेः VI. i. 180

इङ्धार्योः — III. ii. 130
इङ् तथा ण्यन्त धृ धातु से (वर्तमान काल में शतृ प्रत्यय होता है, यदि 'जिसके लिए क्रिया कष्टसाध्य न हो', ऐसा कर्ता वाच्य हो तो)।

इच् — V. iv. 127
(कर्मव्यतिहार अर्थ में जो बहुव्रीहि समास, तदन्त से समासान्त) इच् प्रत्यय होता है।

इचः — VI. iii. 67
(खिदन्त उत्तरपद रहते) इजन्त (एकाच्) को (अम् आगम हो जाता है और वह अम् प्रत्यय के समान भी माना जाता है)।

इचि — VI. i. 100
(अवर्ण से उत्तर) इच् प्रत्याहार परे रहते (पूर्व पर के स्थान में पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश नहीं होता है)।

इच्छति — I. iv. 28
(व्यवधान के कारण जिससे छिपना) चाहता है, (उस कारक की अपादान सञ्ज्ञा होती है)।

इच्छा — III. iii. 101
इच्छा शब्द स्त्रीलिंग भाव में श प्रत्ययान्त निपातन किया जाता है।

इच्छायाम् — III. i. 7
इच्छा अर्थ में (इच्छा कर्मवाली जो धातु, इच्छा के साथ समानकर्तृक, उससे सन् प्रत्यय विकल्प से होता है)।

इच्छार्थेभ्यः — III. iii. 160
इच्छार्थक धातुओं से (वर्तमान काल में विकल्प से लिङ् प्रत्यय होता है, पक्ष में लट्)।

इच्छार्थेषु — III. iii. 157
इच्छार्थक धातुओं के उपपद रहते (लिङ् तथा लोट् प्रत्यय होते हैं)।

इच्छुः — III. ii. 169
इष् धातु से उ प्रत्यय तथा ष को छ निपातन से करके इच्छु शब्द का निपातन किया जाता है।

इजादेः — III. i. 36
(ऋच्छ् धातु को छोड़कर) इच् प्रत्याहार आदिवाली (तथा गुरुमान्) धातु से (लिट् परे रहते आम् प्रत्यय होता है, लौकिक विषय में)।

इजादेः — VIII. iv. 31
(उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर) इच् आदि वाला जो (नुम् सहित हलन्त) धातु, उससे विहित (जो कृत् प्रत्यय, तत्स्थ नकार को अच् से उत्तर णकार आदेश होता है)।

इजुपधात् — VIII. iv. 30
इच् उपधा वाले (हलादि) धातु से उत्तर (विहित जो कृत् प्रत्यय, तत्स्थ अच् से उत्तर नकार को भी उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर विकल्प से णकारादेश होता है)।

इञ् — III. iii. 110
(उत्तर तथा परिप्रश्न गम्यमान होने पर धातु से स्त्रीलिंग कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में विकल्प से) इञ् प्रत्यय होता है, (चकार से ण्वुल् भी होता है)।

इञ् — IV. i. 95
(षष्ठीसमर्थ अकारान्त प्रातिपदिक से अपत्य मात्र को कहने में) इञ् प्रत्यय होता है।

इञ् — IV. i. 153
(उदीच्य आचार्यों के मत में सेनान्त, लक्षण तथा कारि-वाची प्रातिपदिकों से अपत्य अर्थ में) इञ् प्रत्यय होता है।

इञ् — IV. i. 171
(क्षत्रियाभिधायी जनपदवाची साल्व के अवयववाची तथा प्रत्यग्रथ, कलकूट तथा अश्मक प्रातिपदिकों से अपत्य अर्थ में) इञ् प्रत्यय होता है।

...इञ्... — IV. ii. 79
देखें — **वुञ्छण्कठ० IV. ii. 79**

इञः — II. iv. 60
(प्राग्देश वालों के गोत्रापत्य में आया) जो इञ् प्रत्यय, तदन्त प्रातिपदिक से (युवापत्य में विहित प्रत्ययों का लुक् होता है)।

इञः — II. iv. 66
इञ् प्रत्यय का (बहुत अच् वाले शब्द से उत्तर भरत गोत्र और प्राच्य गोत्र के बहुत्व की विवक्षा होने पर लुक् होता है)।

इञः — IV. ii. 111
(गोत्रप्रत्ययान्त) इञन्त प्रातिपदिकों से (भी अण् प्रत्यय होता है)।

...इञाम् — IV. iii. 127
देखें — **अञ्यञिञाम् IV. iii. 127**

इञि — VII. iii. 8
(श्वन् आदि वाले अङ्ग को) इञ् प्रत्यय परे रहते (जो कुछ कहा है, वह नहीं होता)।

...इञोः — II. iv. 58
देखें — अणिञोः II. iv. 58

...इञोः — IV. i. 78
देखें — अणिञोः IV. i. 78

...इञोः — IV. i. 101
देखें — यञिञोः IV. i. 101

इट् — I. ii. 2
('ओविजी' से परे) इडादि प्रत्यय (ङिद्वत् होते हैं)।

...इट्... — III. iv. 78
देखें — तिप्तस्झि० III. iv. 78

इट् — V. i. 23
(वतुप्रत्ययान्त सङ्ख्यावाची प्रातिपदिक से 'तदर्हति' पर्यन्त कथित अर्थों में कन् प्रत्यय होता है तथा उस कन् को विकल्प से) इट् आगम होता है।

इट् — VI. i. 190
(सेट् थल् परे रहते) इट् अथवा प्रकृतिभूत शब्द के (अन्त्य अथवा आद्य स्वर को विकल्प से उदात्त होता है)।

इट् — VI. iv. 62
(भाव तथा कर्मविषयक स्य, सिच्, सीयुट् और तास् के परे रहते उपदेश में अजन्त धातुओं तथा हन्, ग्रह् एवं दृश् धातुओं को विकल्प से चिण् के समान कार्य होता है तथा) इट् आगम (भी) होता है।

इट् — VII. ii. 8
(वशादि कृत् प्रत्यय परे रहते) इट् का आगम (नहीं होता)।

इट् — VII. ii. 35
(वल् प्रत्याहार आदि में है जिसके, ऐसे आर्धधातुक को) इट् का आगम होता है।

इट् — VII. ii. 41
(वृ तथा ऋकारान्त धातुओं से उत्तर सन् आर्धधातुक को विकल्प से) इट् आगम होता है।

इट् — VII. ii. 47
(निर् पूर्वक कुष् से उत्तर निष्ठा को) इट् आगम होता है।

इट् — VII. ii. 52
(वस् तथा क्षुध् धातु से परे क्त्वा तथा निष्ठा प्रत्यय को) इट् आगम होता है।

इट् — VII. ii. 58
(गम्लृ धातु से उत्तर सकारादि आर्धधातुक को परस्मैपद परे रहते) इट् का आगम होता है।

इट् — VII. ii. 66
(अद् भक्षणे, ऋ गतौ, व्येञ् संवरणे — इन अङ्गों के थल् को) इट् आगम होता है।

इटः — III. iv. 106
(लिङादेश उत्तमपुरुष एकवचन) इट् के स्थान में (अत् आदेश होता है)।

इटः — VIII. ii. 28
इट् से उत्तर (सकार का लोप होता है, ईट् परे रहते)।

इटः — VIII. iii. 79
(इण् से परे) इट् से उत्तर (षीध्वम्, लुङ् तथा लिट् के धकार को विकल्प से मूर्धन्य आदेश होता है)।

...इटाम् — I. i. 6
देखें — दीधीवेवीटाम् I. i. 6

इटि — VI. iv. 64
इडादि (आर्धधातुक तथा अजादि कित्, ङित् आर्धधातुक) प्रत्ययों के परे रहते (आकारान्त अङ्ग का लोप होता है)।

इटि — VII. i. 62
(लिङ्भिन्न) इजादि प्रत्यय परे रहते (रध् अङ्ग को नुम् आगम नहीं होता)।

इटि — VII. ii. 4
(परस्मैपदपरक) इडादि (सिच्) परे रहते (हलन्त अङ्ग को वृद्धि नहीं होती)।

इडायाः — VIII. iii. 54
इडा शब्द के (षष्ठी विभक्ति के विसर्जनीय को विकल्प से सकार आदेश होता है; पति, पुत्र, पृष्ठ, पार, पद, पयस् तथा पोष शब्द के परे रहते, वेद-विषय में)।

...इण्... — III. ii. 157
देखें — जिदृक्षि० III. ii. 157

इण्... — III. ii. 163
देखें — इण्नश० III. ii. 163

...इण्... — III. iv. 16
देखें — स्थेण्कृञ्० III. iv. 16

इण्... — VIII. iii. 57
देखें — इण्कोः VIII. iii. 57

इणः — II. iv. 45
इण् को (गा आदेश होता है, लुङ् आर्धधातुक परे रहते)।

इणः — III. iii. 38

(परिपूर्वक) इण् धातु से (क्रम या परिपाटी गम्यमान होने पर कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

...इणः — III. iii. 99

देखें — समजनिषद० III. iii. 99

इणः — VI. iv. 81

इण् अङ्ग को (यणादेश होता है, अच् परे रहते)।

इणः — VII. iv. 69

इण् अङ्ग के (अभ्यास को कित् लिट् परे रहते दीर्घ होता है)।

इणः — VIII. iii. 39

इण् से उत्तर (विसर्जनीय को षकारादेश होता है; अपदादि कवर्ग, पवर्ग के परे रहते)।

इणः — VIII. iii. 78

इण् प्रत्याहार अन्त वाले अङ्ग से उत्तर (षीध्वम्, लुङ् तथा लिट् के धकार को मूर्धन्य आदेश होता है)।

...इणोः — III. iii. 37

देखें — नीणोः III. iii. 37

इण्कोः — VIII. iii. 57

(यहां से आगे पाद की समाप्ति पर्यन्त कहे कार्य) इण् एवं कवर्ग से उत्तर (होते हैं, ऐसा अधिकार जानें)।

इण्नशजिसर्तिभ्यः — III. ii. 163

इण्, णश, जि, सृ- इन धातुओं से (तच्छीलादि कर्त्ता हों तो वर्तमानकाल में क्वरप् प्रत्यय होता है)।

इत् — I. ii. 16

(स्था और घुसंज्ञक धातुओं से परे सिच् कित्वत् होता है और उनको) इकारादेश (भी) हो जाता है।

इत् — I. ii. 50

(तद्धित के लुक् हो जाने पर गोणी शब्द को) इकारादेश हो जाता है।

इत् — I. iii. 2

(उपदेश में वर्तमान अनुनासिक अच्) इत्सञ्ज्ञक होता है।

...इत्... — IV. i. 169

देखें — वृद्धेत्कोस० IV. i. 169

इत् — IV. ii. 24

(देवतावाची 'क' प्रतिपदिक से षष्ठ्यर्थ में अण् प्रत्यय होता है तथा प्रत्यय के साथ उस 'क' को) इकारान्तादेश (भी) होता है।

इत् — V. iv. 135

(उत्, पूति, सु तथा सुरभि शब्दों से उत्तर गन्ध शब्द को बहुव्रीहि समास में समासान्त) इकारादेश होता है।

इत् — VI. iii. 27

(देवताद्वन्द्व में वृद्धि किया गया शब्द उत्तरपद रहते अग्नि शब्द को) इकारादेश होता है।

इत् — VI. iv. 34

(शास् अङ्ग की उपधा को) इकारादेश हो जाता है; (अङ् तथा हलादि कित्, ङित् प्रत्यय परे रहते)।

इत् — VI. iv. 90

('मेङ् प्रणिदाने' अङ्ग को विकल्प करके) इकारादेश होता है, (ल्यप् परे रहते)।

इत् — VI. iv. 114

(दरिद्रा धातु के आकार के स्थान में) इकारादेश होता है; (हलादि कित्, ङित् सार्वधातुक परे रहते)।

इत् — VII. i. 100

(ऋकारान्त धातु अङ्ग को) इकारादेश होता है।

इत् — VII. iii. 44

(प्रत्यय में स्थित ककार से पूर्व अकार के स्थान में) इकारादेश होता है; (आप् परे रहते, यदि वह आप् सुप् से उत्तर न हो तो)।

इत्... — VII. iii. 117

देखें — इदुद्भ्याम् VII. iii. 117.

इत् — VII. iv. 5.

(ष्ठा अङ्ग की उपधा को चङ्परक णि परे रहते) इकारादेश होता है।

इत् — VII. iv. 40

(दो, षो, मा तथा स्था अङ्गों को तकारादि कित् प्रत्यय के परे रहते) इकारादेश होता है।

इत् — VII. iv. 56

(दम्भ अङ्ग के अच् के स्थान में) इकारादेश होता है, (तथा चकार से ईकारादेश भी होता है)।

इत् — VII. iv. 76
(डुभृञ् आदि तीन धातुओं के अभ्यास को) इकारादेश होता है।

इत्... — VIII. ii. 106
देखें — **इदुतौ VIII. ii. 106**

इत्... — VIII. ii. 107
देखें — **इदुतोः VIII. ii. 107**

इत्... — VIII. iii. 41
देखें — **इदुदुपधस्य VIII. iii. 41**

इतः — III. iv. 97
(परस्मैपद विषय में लोट् लकार-सम्बन्धी) इकार का (भी विकल्प से लोप हो जाता है)।

इतः — III. iv. 100
(ङित्लकारसम्बन्धी) इकार का (भी नित्य ही लोप हो जाता है)।

इतः — IV. i. 65
इकारान्त (अनुपसर्जन मनुष्यजातिवाची) शब्द से (स्त्रीलिंग में ङीष् प्रत्यय होता है)।

इतः — IV. i. 122
इकारान्त (अनिञन्त द्व्यच्) प्रतिपदिकों से (भी अपत्य अर्थ में ढक् प्रत्यय होता है)।

इतः — VII. i. 86
(पथिन्, मथिन् तथा ऋभुक्षिन् अङ्गों के) इकार के स्थान में (अकारादेश होता है, सर्वनामस्थान परे रहते)।

इतच् — V. ii. 36
(प्रथमासमर्थ संजात समानाधिकरण वाले तारकादि प्रातिपदिकों से षष्ठ्यर्थ में) इतच् प्रत्यय होता है।

...इतर... — II. iii. 29
देखें — **अन्यारादितरर्ते० II. iii. 29**

इतरात् — VII. i. 27
इतर शब्द से उत्तर (सु तथा अम् के स्थान में वेद- विषय में अद्ड् आदेश नहीं होता है)।

इतराभ्यः — V. iii. 14
(सप्तमी और पञ्चमी से) अतिरिक्त अन्य (भी) जो (विभक्ति), तदन्त शब्दों से (भी तसिलादि प्रत्यय देखे जाते है)।

इतरेतर... — I. iii. 16
देखें — **इतरेतरान्योन्योपपदात् I. iii. 16**

इतरेतरान्योन्योपपदात् — I. iii. 16
इतरेतर एवं अयोन्य शब्द उपपद वाले धातु से (भी कर्म-व्यतिहार अर्थ में आत्मनेपद नहीं होता)।

...इतरेद्युस्... — V. iii. 22
देखें — **सद्यःपरुत्० V. iii. 22**

इता — I. i. 62
(आदिवर्ण अन्तिम) इत्संज्ञक वर्ण के (साथ मिल कर तन्मध्यगत वर्णों का एवं स्वस्वरूप का ग्रहण कराते हैं)।

इति — I. i. 43
न अर्थात् निषेध और वा अर्थात् विकल्प — इन अर्थों की विभाषा संज्ञा होती है।

इति — I. i. 65
सप्तमी विभक्ति से निर्देश किया हुआ जो शब्द हो, उससे अव्यवहित पूर्व को ही कार्य होता है।

इति — I. i. 66
पञ्चमीविभक्ति से निर्दिष्ट जो शब्द, उससे उत्तर को कार्य होता है।

इति — II. ii. 27
सप्तम्यन्त तथा तृतीयान्त समानरूप वाले सुबन्त परस्पर इदम् = 'यह' अर्थ में विकल्प से समास को प्राप्त होते हैं, और वह बहुव्रीहि समास होता है।

इति — II. ii. 28
तुल्ययोग में वर्तमान सह— यह अव्यय तृतीयान्त सुबन्त के साथ समास को प्राप्त होता है और वह बहुव्रीहि समास होता है।

इति — III. i. 42
अभ्युत्सादयामकः, प्रजनयामकः, चिकयामकः, रमयामकः, पावयांक्रियात् तथा विदामक्रन् — ये पद वेद- विषय में विकल्प से निपातित होते हैं।

इति — III. ii. 41
विदाङ्कुर्वन्तु यह रूप निपातन किया जाता है, विकल्प करके।

इति — III. iii. 154
पर्याप्तिविशिष्ट सम्भावन अर्थ में वर्तमान धातु से लिङ् प्रत्यय होता है, यदि अलम् शब्द का अप्रयोग सिद्ध हो रहा हो।

इति — IV. i. 62
सखी तथा अशिश्वी — ये शब्द भाषा विषय में स्त्रीलिंग में ङीप् प्रत्ययान्त निपातन किये जाते हैं।

इति — IV. ii. 20

प्रथमासमर्थ पौर्णमासी विशेषवाची प्रातिपदिक से अधिकरण अभिधेय होने पर यथाविहित अण् प्रत्यय होता है।

इति — IV. ii. 54

प्रथमासमर्थ छन्दोवाची प्रातिपदिकों से षष्ठयर्थ में यथाविहित अण् प्रत्यय होता है, प्रगाथों के आदि के अभिधेय होने पर।

इति — IV. ii. 56

प्रथमासमर्थ प्रहरण अर्थात् प्रहार का साधन समानाधिकरण वाले प्रातिपदिकों से सप्तम्यर्थ में ण प्रत्यय होता है, यदि 'अस्यां' से निर्दिष्ट क्रीडा हो।

इति — IV. ii. 57

प्रथमासमर्थ क्रियावाची घञन्त प्रातिपदिक से सप्तम्यर्थ में ञ प्रत्यय होता है।

इति — IV. ii. 66

अस्ति समानाधिकरण वाले प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से सप्तम्यर्थ में यथाविहित प्रत्यय होता है, यदि सप्तम्यर्थ से निर्दिष्ट उस नाम वाला देश हो अर्थात् प्रकृति-प्रत्यय-समुदाय से देश कहा जा रहा हो।

इति — IV. iii. 66

षष्ठीसमर्थ व्याख्यान किये जाने योग्य जो प्रातिपदिक, उनसे व्याख्यान अभिधेय होने पर तथा सप्तमीसमर्थ व्याख्यातव्यनामवाची शब्दों से भव अर्थ में भी यथाविहित प्रत्यय होते हैं।

इति — IV. iv. 125

उपधान मन्त्र समानाधिकरण प्रथमासमर्थ मतुबन्त प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में यत् प्रत्यय होता है, यदि षष्ठ्यर्थ में निर्दिष्ट ईंटें ही हों, तथा मतुप् का लुक् भी होता है, वेद-विषय में।

इति — V. i. 16

प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से षष्ठयर्थ में तथा प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से सप्तम्यर्थ में भी यथाविहित प्रत्यय होता है, यदि वह प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक स्यात् क्रिया के साथ समानाधिकरण वाला हो तो।

इति — V. i. 42

सप्तमीसमर्थ सर्वभूमि तथा पृथिवी प्रातिपदिकों से 'प्रसिद्ध' अर्थ में भी यथाविहित अण् और अञ् प्रत्यय होते हैं।

इति — V. ii. 45

प्रथमासमर्थ दशन् शब्द अन्तवाले प्रातिपदिक से सप्तम्यर्थ में ड प्रत्यय होता है, यदि वह प्रथमासमर्थ 'अधिक' समानाधिकरण वाला हो तो।

इति — V. ii.77

ग्रहण क्रिया के समानाधिकरण वाची पूरण-प्रत्ययान्त प्रातिपदिक से स्वार्थ में कन् प्रत्यय होता है तथा पूरण प्रत्यय का विकल्प से लुक् भी हो जाता है।

इति — V. ii. 93

इन्द्रियम् शब्द का निपातन किया जाता है, 'जीवात्मा का चिन्ह', 'जीवात्मा के द्वारा देखा गया', 'जीवात्मा के द्वारा सृजन किया गया', 'जीवात्मा के द्वारा सेवित', 'ईश्वर के द्वारा दिया गया' – इन अर्थों में, विकल्प से।

इति — V. ii. 94

'है' क्रिया के समानाधिकरण वाले प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ तथा सप्तम्यर्थ में मतुप् प्रत्यय होता है।

इति — V. iv. 10

स्थान-शब्दान्त प्रातिपदिक से विकल्प से छ प्रत्यय होता है, यदि समानस्थान वाले व्यक्ति द्वारा स्थानशब्दान्त-पद-प्रतिपाद्य तत्त्व अर्थवान् हो।

इति — VI. ii. 149

इस प्रकार के व्यक्ति के द्वारा किया गया, इस अर्थ में जो समास, वहाँ भी क्तान्त उत्तरपद को कारक से परे अन्तोदात्त होता है।

इति — VI. iii. 112

साढ्यै, साढ्वा तथा साढा – ये शब्द वेद में निपातन किये जाते हैं।

इति — VII. i. 43

वेद-विषय में 'यजध्वैनम्' शब्द भी निपातन किया जाता है।

इति — VII. i. 48

वेद-विषय में इष्ट्वीनम् यह शब्द भी निपातन किया जाता है।

इति — VII. ii. 34

ग्रसित, स्कभित, स्तभित, उत्तभित, चत्त, विकस्त, विशस्तृ, शंस्तृ शास्तृ, तरुतृ, तरूतृ, वरुतृ, वरूतृ, वरूत्रीः, उज्ज्वलिति, क्षरिति, क्षमिति, वमिति, अमिति – ये शब्द भी वेद विषय में निपातन है।

इति — VII. ii. 64
बभूथ, आततन्थ, जगृभ्म, ववर्थ – ये शब्द थल् परे रहते निपातन किये जाते हैं, वेद विषय में।

इति — VII. iv. 65
दाधर्ति, दर्धर्ति, दर्धर्षि, बोभूतु, तेतिक्ते, अलर्षि, आपनीफणत्, संसनिष्यदत्, करिक्रत्, कनिक्रदत्, भरिभ्रत्, दविध्वतः, दविद्युतत्, तरित्रतः, सरीसृपतम्, वरीवृजन्, मर्मृज्य, आगनीगन्ति – ये शब्द वेद-विषय में निपातन किये जाते हैं।

इति — VII. iv. 74
ससूव– यह शब्द वेदविषय में निपातन किया जाता है।

इति — VIII. i. 43
अनुज्ञा के लिये की गई प्रार्थना-विषय में ननु शब्द से युक्त तिङन्त को अनुदात्त नहीं होता।

इति — VIII. i. 60
'ह' से युक्त प्रथम तिङन्त विभक्ति को धर्मोल्लङ्घन गम्यमान होने पर अनुदात्त नहीं होता।

इति — VIII. i. 61
'अह' से युक्त प्रथम तिङन्त को विनियोग तथा चकार से धर्मोल्लङ्घन गम्यमान होने पर अनुदात्त नहीं होता।

इति — VIII. i. 62
च तथा अह शब्द का लोप होने पर प्रथम तिङन्त को अनुदात्त नहीं होता, यदि 'एव' शब्द वाक्य में अवधारण अर्थ में प्रयुक्त किया गया हो तो।

इति — VIII. i. 64
वै तथा वाव से युक्त प्रथम तिङन्त को भी विकल्प से वेद-विषय में अनुदात्त नहीं होता।

इति — VIII. ii. 70
अम्नस्, ऊधस्, अवस् – इन पदों को वेद-विषय में रु एवं रेफ दोनों ही देखे जाते हैं।

इति — VIII. ii. 101
'चित्' यह निपात भी जब उपमा के अर्थ में प्रयुक्त हो तो वाक्य की टि को अनुदात्त प्लुत होता है।

इति — VIII. ii. 102
'उपरि स्विदासीत्' इसकी टि को भी प्लुत अनुदात्त होता है।

इति — VIII. iii. 43
कृत्वसुच् के अर्थ में वर्तमान द्विस्, त्रिस् तथा चतुर् के विसर्जनीय को षकारादेश विकल्प करके होता है; कवर्ग, पवर्ग परे रहते।

...इतिह... — V. iv. 23
देखें — अनन्तावसथे॰ V. iv. 23

इतौ — I. i. 16
(वैदिकेतर) इति शब्द के परे रहते (शाकल्य आचार्य के अनुसार 'सम्बुद्धि' संज्ञा के निमित्तभूत ओकार की प्रगृह्य संज्ञा होती है)।

...इतौ — V. iii. 4
देखें — एतेतौ V. iii. 4

इतौ — VI. i. 95
(अव्यक्त के अनुकरण का जो अत् शब्द, उससे उत्तर) इति शब्द परे रहते (पूर्व पर के स्थान में पररूप एकादेश होता है, संहिता के विषय में)।

...इत्यंसु — III. iv. 27
देखें — अन्यथैवं॰ III. iv. 27

इत्थम्भूतलक्षणे — II. iii. 21
प्रकारविशिष्टत्व को प्राप्त का जो चिह्न, उसमें (तृतीया विभक्ति होती है)।

...इत्थम्भूताख्यान... — I. iv. 89
देखें — लक्षणेत्थम्भूताख्यानभाग॰ I. iv. 89

इत्थम्भूतेन — VI. ii. 149
प्रकारविशिष्टत्व को प्राप्त हुये के द्वारा ('किया गया' अर्थ में जो समास, वहाँ भी क्तान्त उत्तरपद को कारक से परे अन्तोदात्त होता है)।

...इत्नु... — VI. iv. 55
देखें — आमन्ता॰ VI. iv. 55

इत्यादयः — VI. i. 7
(जक्ष् – यह धातु तथा) यह जक्ष् धातु आरम्भ में है जिन (छः – जागृ, दरिद्रा, कासृ, शासृ, देधीङ् तथा वेवीङ्) धातुओं के, वे धातुयें (अभ्यस्तसंज्ञक होती हैं)।

इत्यादौ — VI. i. 115
(अङ्ग शब्द में जो एङ्, उसको अकार के परे रहते प्रकृतिभाव हो जाता है तथा) उस अङ्ग शब्द के आदि में (जो अकार, उसके परे रहते पूर्व एङ् को प्रकृतिभाव होता है)।

...इत्र... — VI. ii. 144
देखें — थाथघञ्॰ VI. ii. 144

इत्रः — III. ii. 184
(ऋ, लूञ्, धू, षू, खनु, षह, चर – इन धातुओं से करण कारक में) इत्र प्रत्यय होता है, (वर्तमान काल में)।

इथुक् — V. ii. 53
(वतुप् प्रत्ययान्त प्रातिपदिक को 'पूरण' अर्थ में विहित डट् प्रत्यय परे रहते) इथुक् आगम होता है।

इदः — VII. ii. 111
(इदम् शब्द के) इद् रूप को (पुल्लिग में अय् आदेश होता है, सु विभक्ति परे रहते)।

इदङ्किमोः — VI. iii. 89
इदम् तथा किम् शब्द को (यथासङ्ख्य करके ईश् तथा की आदेश हो जाते हैं; दृक्, दृश् तथा वतुप् परे रहते)।

इदन्तः — VII. i. 47
(वेद-विषय में मस् विभक्ति) इकार आगम अन्तवाली हो जाती है)।

इदम् — II. ii. 26
(सप्तम्यन्त तथा तृतीयान्त समान रूप वाले दो सुबन्त परस्पर) इदम् = यह (इस) अर्थ में (विकल्प से समास को प्राप्त होते हैं, और वह बहुव्रीहि समास होता है)।

इदम् — IV. iii. 119
(षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिक से) 'यह' अर्थ में (यथाविहित प्रत्यय होता है)।

...इदम्... — VI. i. 165
देखें — ऊडिदम्० VI. i. 165

इदम्... — VI. ii. 162
देखें — इदमेतत्त० VI. ii. 162

इदम्... — VI. iii. 89
देखें — इदङ्किमोः VI. iii. 89

इदम्... — VII. i. 11
देखें — इदमदसोः VII. i. 11

इदमः — II. iv. 32
(अन्वादेश में वर्तमान) इदम् के स्थान में (अनुदात्त 'अश्' आदेश होता है, तृतीयादि विभक्तियों के परे रहते)।

इदमः — V. iii. 3
('दिक्शब्देभ्यः सप्तमी'० V. iii. 27 सूत्र तक कहे जाने वाले प्रत्ययों के परे रहते) इदम् के स्थान में (इश् आदेश होता है)।

इदमः — V. iii. 11
(सप्तम्यन्त) इदम् प्रातिपदिक से (ह प्रत्यय होता है)।

इदमः — V. iii. 16
(सप्तम्यन्त) इदम् प्रातिपदिक से (र्हिल् प्रत्यय होता है)।

इदमः — V. iii. 24
(प्रकारवचन में वर्तमान) इदम् प्रातिपदिक से (स्वार्थ में थमु प्रत्यय होता है)।

इदमः — VII. iii. 108
इदम् अङ्ग को (सु विभक्ति परे रहते मकारादेश होता है)।

इदमदसोः — VII. i. 11
(ककाररहित) इदम् और अदस् के (भिस् को ऐस् नहीं होता)।

इदमेतत्तद्भ्यः — VI. ii. 162
(बहुव्रीहि समास में) इदम्, एतत् तथा तद् से उत्तर (क्रिया के गणन में वर्तमान प्रथम तथा पूरण प्रत्ययान्त शब्दों को अन्तोदात्त होता है)।

...इदम्भ्याम् — V. ii. 40
देखें — किमिदम्भ्याम् V. ii. 40

इदितः — VII. i. 58
इकार इत्सञ्ज्ञक है जिसका, ऐसे (धातु) को (नुम् का आगम होता है)।

इदुतौ — VIII. ii. 106
(ऐच् के स्थान में जब प्लुत का प्रसङ्ग हो तो उस ऐच् के अवयवभूत) इकार व उकार (प्लुत होते हैं)।

इदुतौ— VIII. ii. 107
(दूर से बुलाने के विषय से भिन्न विषय में अप्रगृह्य-सञ्ज्ञक एच् के पूर्वार्द्ध भाग को प्लुत करने के प्रसङ्ग में आकार आदेश होता है तथा उत्तरवाले भाग को) इकार तथा उकार आदेश होते हैं।

इदुदुपधस्य — VIII. iii. 41
इकार और उकार उपधा वाले (प्रत्ययभिन्न समुदाय) के (विसर्जनीय को भी षकार आदेश होता है; कवर्ग, पवर्ग परे रहते)।

इदुद्भ्याम् — III. iii. 117
इकारान्त, उकारान्त (नदीसंज्ञक) से उत्तर (ङि के स्थान में आम् आदेश होता है)।

इन् — III. ii. 24
('कृ' धातु से स्तम्ब और शकृत् कर्म उपपद रहने पर) इन् प्रत्यय होता है।

इन्... — VI. iii. 18
देखें — इन्सिद्धबध्नातिषु VI. iii. 18

इन्... — VI. iv. 12
देखें — **इन्हन्पूषार्यम्णाम् VI. iv. 12**

इन् — VI. iv. 164
(अपत्य अर्थ से भिन्न अर्थ में वर्तमान अण् प्रत्यय के परे रहते भसञ्ज्ञक) इन्नन्त अङ्ग को (प्रकृतिभाव हो जाता है)।

इन... — IV. iv. 133
देखें — **इनयौ IV. iv. 133**

इन... — VII. i. 12
देखें — **इनात्स्याः VII. i. 12**

इनः — V. iv. 152
(बहुव्रीहि समास में) इन् अन्तवाले शब्दों से (समासान्त कप् प्रत्यय होता है, स्त्रीलिंग विषय में)।

इनङ् — IV. i. 126
(कल्याणी आदि शब्दों से अपत्य अर्थ में ढक् प्रत्यय होता है, तथा उसके सन्नियोग से कल्याणी आदियों को) इनङ् आदेश (भी) हो जाता है।

इनच्... — V. ii. 33
देखें — **इनच्पिटच्० V. ii. 33**

इनच्पिटच् — V. ii. 33
(नि उपसर्ग प्रातिपदिक से 'नासिकासम्बन्धी झुकाव' को कहना हो तो सञ्ज्ञाविषय में) इनच् तथा पिटच् प्रत्यय होते है, (तथा नि शब्द को यथासङ्ख्य करके प्रत्यय के साथ साथ चिक तथा चि आदेश भी होते है)।

इनयौ — IV. iv. 133
(तृतीयासमर्थ पूर्व प्रातिपदिक से 'किया हुआ' अर्थ में) इन और य प्रत्यय होते हैं, (चकार से ख प्रत्यय भी होता है)।

इनात्स्याः — VII. i. 12
(अदन्त अङ्ग से उत्तर टा, ङसि तथा ङस् के स्थान में क्रमशः) इन्, आत् और स्य आदेश होते है।

इनि... — IV. ii. 50
देखें — **इनित्रकट्य० IV. ii. 50**

...इनि... — IV. ii. 79
देखें — **वुञ्छण्क० IV. ii. 79**

इनि... — V. ii. 85
देखें — **इनिठनौ V. ii. 85**

इनि... — V. ii. 115
देखें — **इनिठनौ V. ii. 115**

इनिः — III. ii. 93
(वि पूर्वक क्री धातु से कर्म उपपद रहते भूतकाल में) इनि प्रत्यय होता है।

इनिः — III. ii. 159
(प्र पूर्वक जु धातु से तच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमान काल में) इनि प्रत्यय होता है।

इनिः — IV. ii. 10
(तृतीयासमर्थ पाण्डुकम्बल प्रातिपदिक से 'ढका हुआ रथ' अर्थ में) इनि प्रत्यय होता है।

इनिः — IV. ii. 61
(द्वितीयासमर्थ अनुब्राह्मण प्रातिपदिक से अधीते या वेद अर्थों में) इनि प्रत्यय होता है।

इनिः — IV. iii. 111
(तृतीयासमर्थ कर्मन्द तथा कृशाश्व प्रातिपदिकों से यथासङ्ख्य भिक्षुसूत्र तथा नटसूत्र का प्रोक्त विषय अभिधेय होने पर) इनि प्रत्यय होता है।

इनिः — IV. iv. 23
(तृतीयासमर्थ चूर्ण प्रातिपदिक से 'मिला हुआ' अर्थ में) इनि प्रत्यय होता है।

इनिः — V. ii. 86
(प्रथमासमर्थ पूर्व प्रातिपदिक से 'इसके द्वारा' अर्थ में) इनि प्रत्यय होता है।

इनिः — V. ii. 128
(द्वन्द्वसमास-निष्पन्न शब्दों, रोगार्थक शब्दों तथा प्राणियों में स्थित निन्द्य पदार्थों को कहने वाले अकारान्त प्रातिपदिकों से 'मत्वर्थ' में) इनि प्रत्यय होता है।

इनिठनौ — V. ii. 85
(मुक्त क्रिया के समानाधिकरण वाले प्रथमासमर्थ श्राद्ध प्रातिपदिक से 'इसके द्वारा' अर्थ में) इनि और ठन् प्रत्यय होते हैं।

इनिठनौ — V. ii. 115
(अकारान्त प्रातिपदिकों से 'मत्वर्थ' में) इनि तथा ठन् प्रत्यय होते हैं।

इनित्रकट्यचः — IV. ii. 50
(षष्ठीसमर्थ खल, गो, रथ प्रातिपदिकों से समूह अर्थ में यथासङ्ख्य करके) इनि, त्र तथा कट्यच् प्रत्यय (भी) होते हैं।

...इनी — V. ii. 102
देखें — विनीनी V. ii. 102

इनुण् — III. iii. 44
(अभिव्याप्ति गम्यमान हो तो धातु से भाव में) इनुण् प्रत्यय होता है।

इनुणः — V. iv. 15
इनुण् प्रत्ययान्त प्रातिपदिक से (स्वार्थ में अण् प्रत्यय होता है)।

...इनोः — II. iii. 70
देखें — अकेनोः II. iii. 70

इन्द्र... — IV. i. 48
देखें — इन्द्रवरुणभव० IV. i. 48

...इन्द्रजननादिभ्यः — IV. iii. 88
देखें — शिशुक्रन्दयमसभ० IV. iii. 88

इन्द्रजुष्टम् — V. ii. 93
'जीवात्मा के द्वारा सेवित' अर्थ में (इन्द्रियम् शब्द का निपातन किया जाता है)।

इन्द्रदत्तम् — V. ii. 93
'ईश्वर के द्वारा दिया गया' अर्थ में (इन्द्रियम् शब्द का निपातन किया जाता है)।

इन्द्रदृष्टम् — V. ii. 93
'जीवात्मा के द्वारा देखा गया' अर्थ में (इन्द्रियम् शब्द का निपातन किया जाता है)।

इन्द्रलिङ्गम् — V. ii. 93
'जीवात्मा का चिह्न' अर्थ में (इन्द्रियम् शब्द का निपातन किया जाता है)।

इन्द्रवरुणभवशर्वरुद्रमृडहिमारण्ययवयवनमातुलाचार्याणाम् — IV. i . 48
इन्द्र, वरुण, भव, शर्व, रुद्र, मृड, हिम, अरण्य, यव, यवन, मातुल तथा आचार्य प्रातिपदिक,(पुल्लिंग के हेतु से स्त्रीत्व में वर्तमान हों तो उन) से (ङीप् प्रत्यय तथा आनुक् का आगम होता है)।

इन्द्रसृष्टम् — V. ii. 93
'जीवात्मा के द्वारा सृजन किया गया' अर्थ में (इन्द्रियम् शब्द का निपातन किया जाता है)।

इन्द्रस्य — VII. iii. 22
(परन्तु देवताद्वन्द्व में उत्तरपद के रूप में प्रयुक्त) इन्द्र शब्द के (अचों में आदि अच् को वृद्धि नहीं होती)।

...इन्द्रिय... — VI. iii. 130
देखें — सोमाश्वे० VI. iii. 130

इन्द्रियम् — V. ii. 93
इन्द्रियम् शब्द का (विकल्प से) निपातन किया जाता है, (जीवात्मा का चिह्न,जीवात्मा के द्वारा देखा गया,जीवात्मा के द्वारा सृजन किया गया,जीवात्मा के द्वारा सेवित तथा ईश्वर के द्वारा दिया गया अर्थों में)।

इन्द्रे — VI. i. 120
इन्द्र शब्द में स्थित (अच् के परे रहते भी गो को अवङ् आदेश होता है)।

...इन्यानयोः — VI. i. 209
देखें — वेण्विन्धानयोः VI. i. 209

इन्धि... — I. ii. 6
देखें — इन्धिभवतिभ्याम् I. ii. 6

इन्धिभवतिभ्याम् — I. ii. 6
'ञिइन्धी दीप्तौ' तथा 'भू सत्तायाम्' धातुओं से परे (भी लिट् प्रत्यय कित्वत् होता है)।

इन्सिद्धबध्नातिषु — VI. iii. 18
इन्नन्त, सिद्ध तथा बध्नाति उत्तरपद रहते (भी सप्तमी का अलुक् नहीं होता है)।

इन्हन्पूषार्यम्णाम् — VI. iv. 12
इन्नत्ययान्त,हन्,पूषन् तथा अर्यमन् अङ्ग की (उपधा को शि विभक्ति के परे रहते ही दीर्घ होता है)।

इम् — VII. iii. 92
('तृह हिंसायाम्' अङ्ग को हलादि पित् सार्वधातुक परे रहते) इम् आगम होता है।

इमनिच् — V. i. 121
(षष्ठीसमर्थ पृथ्वादि प्रातिपदिकों से 'भाव' अर्थ में विकल्प से) इमनिच् प्रत्यय होता है।

...इमा... — VI. iv. 154
देखें — इष्ठेमेयस्सु VI. iv. 154

...इमात्... — V. iii. 111
देखें — प्रत्नपूर्व० V. iii. 111

...इयः — VII. i. 2
देखें — आयनेयी० VII. i. 2

इयः — VII. ii. 80
(अकारान्त अङ्ग से उत्तर सार्वधातुक-संज्ञक 'या' के स्थान में) इय् आदेश होता है।

इयः — VII. iii. 2
(केकय, मित्रयु तथा प्रलय अङ्गों के य् आदि वाले भाग को) इय् आदेश होता है; (ञित्, णित्, कित् तद्धित परे रहते)

इयङ्... I. iv. 4
देखें — **इयङुवङ्स्थानौ I. iv. 4**

इयङुवङौ — VI. iv. 77
(श्नुप्रत्ययान्त अङ्ग तथा इवर्णान्त, उवर्णान्त धातु एवं भ्रू शब्द को) इयङ्, उवङ् आदेश होते हैं, (अच् परे रहते)।

इयङुवङ्स्थानौ — I. iv. 4
इयङ् तथा उवङ् स्थान वाले, (स्त्र्याख्य ईकारान्त और ऊकारान्त) शब्द (नदीसंज्ञक नहीं होते, स्त्री शब्द को छोड़कर)।

इरः — VII. ii. 15
इवर्णान्त तथा रेफान्त शब्दों से उत्तर (वेद-विषय में मतुप् को वकारादेश होता है)

...इरम्मद... — III. ii. 37
देखें — **उग्रम्पश्येरम्मद० III. ii. 37**

इरयोः — VI. iv. 76
इरे के स्थान में (वेद विषय में बहुल करके रे आदेश होता है)।

इरितः — III. i. 57
'इर्' इत् संज्ञक है जिनका, ऐसी धातुओं से उत्तर (च्लि को अङ् विकल्प से होता है, कर्तृवाची परस्मैपद लुङ् परे रहते)।

...इरेच् — III. iv. 81
देखें — **एशिरेच् III. iv. 81**

...इल... — IV. ii. 79
देखें — **वुञ्छण्कठ० IV. ii. 79**

इलच् — V. ii. 99
(फेन प्रातिपदिक से 'मत्वर्थ' में) इलच् (तथा लच्) प्रत्यय (विकल्प से होते हैं)।

इलच् — V. ii. 117
(तुन्दादि प्रातिपदिकों से 'मत्वर्थ' में) इलच् प्रत्यय(तथा इनि और ठन् प्रत्यय होते हैं)।

...इलचः — V. ii. 100
देखें — **शनेलचः V. ii. 100**

इलचौ — V. ii. 105
देखें — **लुबिलचौ V. ii. 105**

...इलचौ — V. iii. 79
देखें — **घनिलचौ V. iii. 79**

इव — V. i. 115
(सप्तमीसमर्थ तथा षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिक से) 'समान' अर्थ में (वति प्रत्यय होता है)।

...इव... — VIII. i. 57
देखें — **चनचिदिव० VIII. i. 57**

इवन्त... — VII. ii. 49
देखें — **इवन्तर्ध० VII. ii. 49**

इवन्तर्धभ्रस्जदम्भुश्रिस्वृयूर्णुभरज्ञपिसनाम् — VII. ii. 49
इव् अन्त में है जिनके, उनसे तथा ऋधु वृद्धौ, भ्रस्ज पाके, दम्भु दम्भे, श्रिञ् सेवायाम्, स्वृ शब्दोपतापयोः, यु मिश्रणे, ऊर्णुञ् आच्छादने, भृञ् भरणे, ज्ञपि, सन् — इन धातुओं से उत्तर (सन् को विकल्प से इट् आगम होता है)।

...इवर्णयोः — VII. iv. 53
देखें — **यीवर्णयोः VII. iv. 53**

इवात् — V. iii. 70
'इवे प्रतिकृतौ' V. iii. 96 सूत्र से (पहले पहले 'क' प्रत्यय अधिकृत होता है)।

इवे — V. iii. 96
(प्रतिमाविषयक) इव के अर्थ में वर्तमान (प्रातिपदिक से कन् प्रत्यय होता है)।

इश् — V. iii. 3
('दिक्शब्देभ्यः सप्तमीपञ्चमी'० V. iii. 27 सूत्र तक कहे जाने वाले प्रत्ययों के परे रहते इदम् के स्थान में) इश् आदेश होता है।

...इष... — III. iii. 96
देखें — **वृषेष० III. iii. 96**

इष... — VII. ii. 48
देखें — **इषसहलुभ० VII. ii. 48**

इषसहलुभरुषरिषः — VII. ii. 48
इषु, षह, लुभ, रुष, रिष धातुओं से उत्तर (तकारादि आर्धधातुक को विकल्प से इट् आगम होता है)।

...इषीका... — VI. iii. 64
देखें — **इष्टकेषीका० VI. iii. 64**

इषु... — VII. iii. 77
देखें — **इषुगमियमाम् VII. iii. 77**

इषुगमियमाम् – VII. iii. 77

इषु, गम्लृ तथा यम् अङ्गों को (शित् प्रत्यय परे रहते छकारादेश होता है)।

...इषुषु – VI. ii. 107

देखें – उदराश्वेषुषु VI. ii. 107

इष्टका... – VI. iii. 64

देखें – इष्टकेषीका० VI. iii. 64

इष्टकासु – IV. iv. 165

(उपधान मन्त्र समानाधिकरण प्रथमासमर्थ मतुबन्त प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में यत् प्रत्यय होता है, यदि षष्ठ्यर्थ में निर्दिष्ट) ईंटें ही हों (तथा मतुप् का लुक् भी हो जाता है, वेद-विषय में)।

इष्टकेषीकामालानाम् – VI. iii. 64

(चित, तूल तथा भारिन् शब्दों के उत्तरपद होने पर यथासंख्य करके) इष्टका, इषीका तथा माला शब्दों को (ह्रस्व हो जाता है)।

इष्टादिभ्यः – V. ii. 88

(प्रथमासमर्थ) इष्टादि प्रातिपदिकों से (भी 'इसके द्वारा' अर्थ में इनि प्रत्यय होता है)।

इष्ट्वीनम् – VII. i. 48

(वेद विषय में) इष्ट्वीनम् यह क्त्वाप्रत्ययान्त शब्द (भी) निपातन किया जाता है।

इष्ठ... – VI. iv. 154

देखें – इष्ठेमेयस्सु VI. iv. 154

...इष्ठनौ – V. iii. 55

देखें – तमबिष्ठनौ V. iii. 55

इष्ठस्य – VI. iv. 159

(बहु शब्द से उत्तर) इष्ठन् को (यिट् आगम होता है तथा बहु शब्द को भू आदेश भी होता है)।

इष्ठेमेयस्सु– VI. iv. 154

(तृ का लोप होता है); इष्ठन्, इमनिच् तथा ईयसुन् परे रहते।

इष्णुच् – III. ii. 136

(अलंपूर्वक कृञ्, निर् और आङ् पूर्वक कृञ्, प्रपूर्वक जन, उत्पूर्वक पच, उत्पूर्वक पत, उत्पूर्वक मद, रुचि, अप-पूर्वक त्रप, वृतु, वृधु, सह, चर– इन धातुओं से वर्तमान काल में तच्छीलादि कर्ता हो तो) इष्णुच् प्रत्यय होता है।

...इष्णुच्... – VI. ii. 160

देखें – कृत्योकेष्णुच्० VI. ii. 160

...इष्णुषु – VI. iv. 55

देखें – आमन्ता० VI. iv. 55

...इष्वास... – VI. ii. 38

देखें – व्रीह्यपराहण० VI. ii. 38

इस्... – VI. iv. 97

देखें – इस्मन्त्रन्० VI. iv. 97

इस्... – VII. iii. 51

देखें – इसुसुक्तान्तात् VII. iii. 51

इस् – VII. iv. 54

(मी, मा तथा घुसञ्ज्ञक एवं रभ्, डुलभष्, शक्लृ, पत्लृ और पद अङ्गों के अच् के स्थान में) इस् आदेश होता है; (सकारादि सन् परे रहते)।

इस्... – VIII. iii. 44

देखें – इसुसोः VIII. iii. 44

इसुसुक्तान्तात् – VII. iii. 51

इसन्त, उसन्त, उगन्त तथा तकारान्त अङ्ग से उत्तर (ठ के स्थान में क आदेश होता है)।

इसुसोः – VIII. iii. 44

इस् तथा उस् के (विसर्जनीय को विकल्प से षकारादेश होता है; सामर्थ्य होने पर; कवर्ग, पवर्ग परे रहते)।

इस्मन्त्रन्क्विषु – VI. iv. 97

इस्, मन्, त्रन् तथा क्वि प्रत्ययों के परे रहते (भी छादि अङ्ग की उपधा को ह्रस्व होता है)।

ई

...ई... – I. ii. 26

देखें – व्युपधात् I. ii. 26

ई... – I. iv. 3

देखें – यू I. iv. 3

ई — III. i. 111
(खन् धातु को अन्त्य अल् के स्थान में) ईकार आदेश (और क्यप् प्रत्यय भी होता है)।

ई — VI. iv. 113
(श्नान्त अङ्ग एवं घुसञ्ज्ञक को छोड़कर अभ्यस्तसञ्ज्ञक के आकार के स्थान में) ईकारादेश होता है; (हलादि कित्, ङित् सार्वधातुक परे रहते)।

ई — VII. i. 77
(द्विवचन विभक्ति परे रहते अस्थि, दधि, सक्थि अङ्गों को) ईकारादेश होता है, (और वह उदात्त होता है, वेद-विषय में)।

ई — VII. iv. 31
(घ्रा तथा ध्मा अङ्ग को यङ् परे रहते) ईकारादेश होता है।

ई — VII. iv. 97
(गण् धातु के अभ्यास को) ईकारादेश (तथा चकार से अकारादेश भी) होता है, (चङ्परक णि परे रहते)।

ईकक् — IV. iv. 59
(प्रथमासमर्थ प्रहरणसमानाधिकरणवाची शक्ति तथा यष्टि प्रातिपदिकों से षष्ठ्यर्थ में) ईकक् प्रत्यय होता है।

ईकक् — V. iii. 110
(कर्क तथा लोहित प्रातिपदिकों से स्वार्थ में) ईकक् प्रत्यय होता है।

ईकन् — V. i. 33
(अध्यर्द्धशब्द पूर्ववाले तथा द्विगुसञ्ज्ञक खारी शब्दान्त प्रातिपदिक से 'तदर्हति' पर्यन्त कथित अर्थों में) ईकन् प्रत्यय होता है।

...ईक्ष्योः — I. iv. 39
देखें — राधीक्ष्योः I. iv. 39

ईट् — VII. iii. 93
(ब्रूञ् अङ्ग से उत्तर हलादि पित् सार्वधातुक को) ईट् का आगम होता है।

ईटि — VIII. ii. 28
(इट् से उत्तर सकार का लोप होता है), ईट् परे रहते।

ईड... — VI. i. 208
देखें — ईडवन्द० VI. i. 208

ईड... — VII. ii. 78
देखें — ईडजनोः VII. ii. 78

ईडजनोः — VII. ii. 78
ईड तथा जन् धातु से उत्तर (ध्वे तथा से सार्वधातुक को ईट् आगम होता है)।

ईडवन्दवृशंसदुहाम् — VI. i. 208
ईड, वन्द, वृ, शंस, दुह् धातुओं का (जो ण्यत्, तदन्त शब्द को आद्युदात्त होता है)।

ईत्... — I. i. 11
देखें — ईदूदेत् I. i. 11

ईत्... — I. i. 18
देखें — ईदूतौ I. i. 18

ईत् — VI. iii. 26
(देवतावाची द्वन्द्व समास में सोम तथा वरुण शब्द उत्तरपद रहते अग्नि शब्द को) ईकारादेश होता है।

ईत् — VI. iii. 96
(द्वि, अन्तर् तथा उपसर्ग से उत्तर आप् शब्द को) ईकारादेश होता है।

ईत् — VI. iv. 65
(आकारान्त अङ्ग को) ईकारादेश होता है, (यत् प्रत्यय परे रहते)।

ईत् — VI. iv. 139
(उत् उपसर्ग से उत्तर भसंज्ञक अञ्चु को) ईकारादेश होता है।

ईत् — VII. ii. 83
(आस् से उत्तर आन को) ईकारादेश होता है।

ईत् — VII. iv. 4
('पा पाने' अङ्ग की उपधा का चङ्परक णि परे रहते लोप होता है, तथा अभ्यास को) ईकारादेश होता है।

ईत् — VII. iv. 55
(आप्, ज्ञपि तथा ऋध् अङ्गों के अच् के स्थान में) ईकारादेश होता है, (सकारादि सन् प्रत्यय परे रहते)।

ईत् — VIII. ii. 81
(असकारान्त अदस् शब्द के दकार से उत्तर एकार के स्थान में) ईकारादेश होता है, (एवं दकार को मकार भी होता है; बहुत पदार्थों को कहने में)।

ईतः — VI. iii. 39
(स्वाङ्गवाची शब्द से उत्तर भी) जो ईकार, तदन्त (स्त्रीलिङ्गशब्द) को (पुंवद्भाव नहीं होता)।

ईति — VI. iv. 148
(भसञ्ज्ञक इवर्णान्त तथा अवर्णान्त अङ्ग का लोप होता है), ईकार (तथा तद्धित) के परे रहते ।

...ईतोः — IV. ii. 123
देखें — **रोपधेतोः IV. ii. 123**

...ईदितः — VII. ii. 14
देखें — **श्वीदितः VII. ii. 14**

ईदूतौ — I. i. 18
ईकारान्त और ऊकारान्त शब्दरूप (सप्तमी के अर्थ में प्रयुक्त होने पर प्रगृह्यसंज्ञक होते हैं)।

ईदूदेद् — I. i. 11
द्विवचन ईकारान्त, ऊकारान्त तथा एकारान्त शब्द (प्रगृह्यसंज्ञक होते हैं)।

...ईन्... — VII. i. 2
देखें — **आयनेयी० VII. i. 2**

ईप... — IV. iv. 28
देखें — **ईपलोमकूलम् IV. iv. 28**

ईपलोमकूलम् — IV. iv. 28
(द्वितीयासमर्थ प्रति तथा अनु पूर्ववाले) ईप, लोम और कूल प्रातिपदिक से ('वर्तते' अर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

ईप्सितः — I. iv. 26
(रोकने अर्थवाली धातुओं के प्रयोग में) ईप्सित = इष्ट पदार्थ की (अपादान संज्ञा होती है)।

ईप्सितः — I. iv. 36
(स्पृह धातु के प्रयोग में) ईप्सित = इष्ट पदार्थ (सम्प्रदानसञ्ज्ञक होता है)।

ईप्सिततमम् — I. iv. 49
(कर्ता का अपनी क्रिया के द्वारा) जो अत्यन्त चाहा गया, वह (कारक कर्म-संज्ञक होता है)।

...ईय्... — VII. i. 2
देखें — **आयनेयी० VII. i. 2**

ईयङ् — III. i. 29
(घृणार्थक सौत्र ऋत् धातु से) ईयङ् प्रत्यय होता है।

ईयसः — V. iv. 156
(बहुव्रीहि समास में) ईयसुन् अन्त वाले शब्दों से (भी कप् प्रत्यय नहीं होता)।

ईयसः — VI. iv. 160
(ज्य अङ्ग से उत्तर) ईयस् को (आकार आदेश होता है)।

...ईयसुनौ — V. iii. 57
देखें — **तरबीयसुनौ V. iii. 57**

...ईयस्सु — V. iv. 154
देखें — **इष्ठेमेयस्सु V. iv. 154**

...ईरचौ — V. ii. 111
देखें — **ईरन्नीरचौ V. ii. 111**

ईरन्... — V. ii. 111
देखें — **ईरन्नीरचौ V. ii. 111**

ईरन्नीरचौ — V. ii. 111
(काण्ड तथा आण्ड प्रातिपदिकों से यथासङ्ख्य करके) ईरन् तथा ईरच् प्रत्यय होते हैं, (मत्वर्थ में)।

...ईर्मा — V. iv. 126
देखें — **दक्षिणेर्मा V. iv. 126**
ईर्मन् = व्रण ।

...ईर्ष्य... — I. iv. 37
देखें — **क्रुधद्रुहेर्ष्यासूयार्थानाम् I. iv. 37**

ईवत्याः — VI. i. 215
ईवती शब्दान्त पद को (सञ्ज्ञाविषय में अन्तोदात्त होता है)।

ईश्... — VI. iii. 89
देखें — **ईश्की VI. iii. 89**

...ईश... — III. ii. 175
देखें — **स्थेशभास० III. ii. 175**

ईशः — VII. ii. 77
'ईश् ऐश्वर्ये' धातु से उत्तर ('से'– इस सार्वधातुक को इट् आगम होता है)।

...ईशाम् — II. iii. 52
देखें — **अधीगर्थदयेशाम् II. iii. 52**

ईश्की — VI. iii. 89
(इदम् तथा किम् शब्दों को यथासङ्ख्य करके) ईश् तथा की आदेश हो जाते हैं; (दृक्, दृश् तथा वतुप् परे रहते)।

...ईश्वर... — II. iii. 39
देखें — **स्वामीश्वराधिपति० II. iii. 39**

...ईश्वर... — VII. iii. 30
देखें — **शुचीश्वर० VII. iii. 30**

ईश्वरः — V. i. 41

(षष्ठीसमर्थ सर्वभूमि तथा पृथिवी प्रातिपदिकों से) 'स्वामी' अर्थ में (यथासङ्ख्य करके अण् तथा अञ् प्रत्यय होते हैं)।

ईश्वरवचनम् — II. iii. 9

(जिससे अधिक हो और जिसका) ईश्वरवचन = सामर्थ्य हो, (उसमें कर्मप्रवचनीय के योग में सप्तमी विभक्ति होती है)।

ईश्वरे — I. iv. 96

ईश्वर = स्वस्वामिसम्बन्ध अर्थ में (अधि शब्द की कर्मप्रवचनीय और निपात संज्ञा होती है)।

ईश्वरे — III. iv. 13

ईश्वर शब्द के उपपद रहते (तुमर्थ में धातु से तोसुन्, कसुन् प्रत्यय होते हैं, वेद-विषय में)।

ईषत् — VI. ii. 54

पूर्वपद ईषत् शब्द को (विकल्प से प्रकृतिस्वर होता है)।

ईषत् — II. ii. 7

अल्पार्थक 'ईषत्' शब्द (अकृदन्त सुबन्त के साथ समास को प्राप्त होता है, और वह तत्पुरुष समास होता है)।

ईषत्... — III. iii. 126

देखें — ईषद्दुःसुषु III. iii. 126

ईषदर्थे — VI. iii. 104

ईषत् = 'थोड़ा' के अर्थ में वर्तमान (कु शब्द को उत्तरपद परे रहते का आदेश हो जाता है)।

ईषदसमाप्तौ — V. iii. 67

'किञ्चित् न्यून' अर्थ में वर्तमान (प्रातिपदिक से कल्पप्, देश्य तथा देशीयर् प्रत्यय होते हैं।

ईषद्दुःसुषु — III. iii. 126

(कृच्छ्र अर्थ वाले तथा अकृच्छ्र अर्थ वाले) ईषद्, दुस् तथा सु उपपद हों तो (धातु से खल् प्रत्यय होता है)।

ई३ — VI. i. 128

प्लुत 'ई३' (अच् परे रहते चाक्रवर्मण आचार्य के मत में अप्लुत के समान हो जाता है)।

उ

उ प्रत्याहारसूत्र — I

— आचार्य पाणिनि द्वारा अपने प्रथम प्रत्याहार सूत्र में पठित तृतीय वर्ण, जो अपने सम्पूर्ण अठारह भेदों का ग्राहक होता है।

— पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का तीसरा वर्ण।

उ... — I. ii. 27

देखें — ऊकालः I. ii. 27

...उ... — II. iii. 69

देखें — लोकाव्ययनिष्ठा० II. iii. 69

उ... — V. i. 3

देखें — उगवादिभ्यः V. i. 3

उ — VIII. ii. 80

(असकारान्त अदस् शब्द के दकार से उत्तर जो वर्ण, उसके स्थान में) उवर्ण आदेश होता है, (तथा दकार को मकारादेश भी होता है)।

उः — I. i. 50

ऋवर्ण के स्थान में (अण् = अ, इ, उ में से कोई वर्ण यदि प्राप्त हो तो वह होते ही रपर हो जाता है)।

उः — I. ii. 12

ऋवर्णान्त धातु से परे (भी झलादि लिङ् और सिच् आत्मनेपद विषय में कित्वत् होते हैं)।

उः — III. i. 79

(तनादि गण की धातुओं और डुकृञ् धातु से उत्तर कर्तृवाची सार्वधातुक परे रहने पर) उ प्रत्यय होता है।

उः — III. ii. 168

(सन्नन्त धातुओं से तथा आङ् पूर्वक शसि एवं भिक्ष् धातुओं से तच्छीलादि कर्ता हों तो वर्तमान काल में) उ प्रत्यय होता है।

उः — III. iv. 86

(लोट् लकार के जो तिप् आदि आदेश, उनके इकार को) उकार आदेश होता है।

उः — VII. iv. 7

(चङ्परक णि परे रहते अङ्ग की उपधा) ऋवर्ण के स्थान में (विकल्प से ऋकारादेश होता है)।

उः — VII. iv. 66

ऋवर्णान्त (अभ्यास) को (अकारादेश होता है)।

...उक्... — VII. iii. 51

देखें — इसुसुक्तान्तात् VII. iii. 51

...उक... — II. iii. 69

देखें — लोकाव्ययनिष्ठा० II. iii. 69

...उक... — VI. ii. 160

देखें — कृत्योकेष्णुच्० VI. ii. 160

...उकः — VII. ii. 11

देखें — श्र्युकः VII. ii. 11

उकञ् — III. ii. 154

(लष, पत, पद, स्था, भू, वृष, हन्, कम्, गम्— इन धातुओं से तच्छीलादि कर्त्ता हो तो वर्तमान काल में) उकञ् प्रत्यय होता है।

उकञ् — V. i. 101

(चतुर्थीसमर्थ कर्मन् प्रातिपदिक से 'शक्त है' अर्थ में) उकञ् प्रत्यय होता है।

...उक्थशस्... — III. ii. 71

देखें — श्वेतवहोक्थशस्० III. ii. 71

...उक्थादि... — IV. ii. 59

देखें — क्रतूक्थादि० IV. ii. 59

...उक्ष... — IV. ii. 38

देखें — गोत्रोक्षोष्ट्रो० IV. ii. 38

...उक्षा... — V. iii. 91

देखें — वत्सोक्षा० V. iii. 91

...उखात् — IV. ii. 17

देखें — शूलोखात् IV. ii. 17

...उखात् — IV. iii. 102

देखें — तित्तिरिवरतन्तु० IV. iii. 102

उगवादिभ्यः — V. i. 2

उवर्णान्त और गवादि गण में पठित प्रातिपदिकों से (क्रीत अर्थ से पहले कथित अर्थों में यत् प्रत्यय होता है)।

उगित्... — VII. i. 70

देखें — उगिदचाम् VII. i. 70

उगितः — IV. i. 6

उक्=उ, ऋ, लृ इत् वाले प्रातिपदिक से (भी स्त्रीलिंग में ङीप् प्रत्यय होता है)।

उगितः — VI. iii. 44

उगित् शब्द से परे (जो नदी, तदन्त शब्द को विकल्प करके ह्रस्व होता है; घ, रूप, कल्प, चेलट्, ब्रुव, गोत्र, मत तथा हत शब्दों के परे रहते)।

उगिदचाम् — VII. i. 70

उक् इत्सञ्ज्ञक है जिनका, ऐसे (धातु वर्जित) अङ्ग को तथा अञ्चु धातु को (सर्वनामस्थान परे रहते नुम् आगम होता है)।

उग्रम्पश्य... — III. ii. 37

देखें — उग्रम्पश्येरम्मद० III. ii. 37

उग्रम्पश्येरम्मदपाणिन्धमाः — III. ii. 37

उग्रम्पश्य, इरम्मद तथा पाणिन्धम – ये शब्द (भी) खश् प्रत्ययान्त निपातन किये जाते हैं।

उचः — VII. iii. 64

'उच समवाये' धातु से (क प्रत्यय परे रहते ओक शब्द निपातन किया जाता है)।

उच्चैः — I. ii. 29

ऊर्ध्व भाग से उच्चरित (अच् की उदात्त संज्ञा होती है)।

उच्चैस्तराम् — I. ii. 35

(यज्ञकर्म में वषट्कार अर्थात् वौषट् शब्द विकल्प से) उदात्ततर होता है, (पक्ष में एकश्रुति हो जाती है)।

...उच्छिष्य... — III. i. 123

देखें — निष्टक्र्यदेवहूयो० III. i. 123

उज्ज्वलिति — VII. ii. 34

उज्ज्वलिति शब्द (वेद विषय में) इडभाव युक्त निपातित है।

उञः — I. i. 17

उञ्=उ शब्द की (प्रगृह्यसञ्ज्ञा होती है, अवैदिक इति के परे रहते)।

उञः — VIII. iii. 33

(मय् प्रत्याहार से उत्तर) उञ् को (अच् परे रहते विकल्प करके वकारादेश होता है)।

उञि — VIII. iii. 21

(अवर्ण पूर्ववाले पदान्त य्, व् का) उञ् (पद) के परे रहते (भी लोप होता है)।

उञ्छति — IV. iv. 32

(द्वितीयासमर्थ प्रातिपदिक से) 'चुनता है' अर्थ में (ठक् प्रत्यय होता है)।

उञ्छादीनाम् — VI. i. 157

उञ्छादि शब्दों को (भी अन्तोदात्त हो जाता है)।

उणादयः — III. iii. 1
i. उण् आदि प्रत्यय।
ii. उणादि नाम से पाणिनिरचित अष्टाध्यायी का परिशिष्ट।
iii. (धातुओं से) उण् आदि प्रत्यय (वर्तमान काल में बहुल करके होते हैं)।

उणादयः — III. iv. 75
उणादि प्रत्यय (सम्प्रदान तथा अपादान कारकों से अन्यत्र अर्थात् कर्मादि कारकों में भी होते हैं)।

उत्... — I. iii. 27
देखें — उद्विभ्याम् I. iii. 27

...उत्... — I. iii. 75
देखें — समुदाङ्भ्यः I. iii. 75

उत्... — III. iii. 29
देखें — उन्योः III. iii. 29

उत् — IV. i. 115
(संख्या, सम् तथा भद्र पूर्व वाले मातृ शब्द से अपत्य अर्थ में अण् प्रत्यय होता है; साथ ही मातृ शब्द को) उकार अन्तादेश (भी) हो जाता है।

उत्... — V. iv. 135
देखें — उत्पूति० V. iv. 135

उत्... — V. iv. 148
देखें — उद्विभ्याम् V. iv. 148

उत् — VI. i. 107
(ऋकार से उत्तर ङसि तथा ङस् का अकार हो तो पूर्व पर के स्थान में) उकार एकादेश होता है, (संहिता के विषय में)।

उत् — VI. iv. 110
(उकार प्रत्ययान्त कृ अङ्ग के अकार के स्थान में) उकारादेश हो जाता है; (क्ङित्, ङित् सार्वधातुक परे रहते)।

उत् — VI. i. 127
(दिव् पद को) उकारादेश होता है।

उत् — VII. i. 102
(ओष्ठ्य वर्ण पूर्व है जिस ऋकार से, तदन्त धातु को) उकारादेश होता है।

उत् — VII. iv. 88
(चर तथा त्रिफला धातुओं के अभ्यास से परे अकार के स्थान में) उकारादेश होता है, (यङ् तथा यङ्लुक् परे रहते)।

उत... — III. iii. 141
देखें — उताप्योः III. iii. 141

उत... — III. iii. 152
देखें — उताप्योः III. iii. 152

उतः — IV. i. 44
उकारान्त (गुणवचन) प्रातिपदिक से (स्त्रीलिंग में विकल्प से ङीप् प्रत्यय होता है)।

उतः — IV. i. 66
उकारान्त (मनुष्य जातिवाची) प्रातिपदिकों से (स्त्रीलिङ्ग में ऊङ् प्रत्यय होता है)।

उतः — VI. iv. 106
(असंयोग पूर्व वाले) उकारान्त (प्रत्यय) अङ्ग से उत्तर (हि का लुक् होता है)।

उतः — VII. iii. 89
(हलादि पित् सार्वधातुक परे रहते लुक् हो जाने पर) उकारान्त अङ्ग को (वृद्धि होती है)।

उताप्योः — III. iii. 141
'उताप्योः समर्थयोर्लिङ्' III. iii. 152 से (पहले पहले जितने सूत्र हैं, उनमें लिङ् का निमित्त होने पर क्रिया की अतिपत्ति में विकल्प से लृङ् प्रत्यय होता है, भूतकाल में)।

उताप्योः — III. iii. 152
(समानार्थक) उत तथा अपि उपपद हों तो (धातु से लिङ् प्रत्यय होता है)।

उताहो — VIII. i. 49
(अविद्यमान पूर्ववाले आहो तथा) उताहो से युक्त (व्यवधानरहित तिङन्त को भी अनुदात्त नहीं होता है)।

...उतौ — VIII. ii. 106
देखें — इदुतौ VIII. ii. 106

...उतौ — VIII. ii. 107
देखें — इदुतौ VIII. ii. 107

उत्कः — V. ii. 80
उत्क शब्द उत् पूर्वक कन् प्रत्ययान्त निपातन किया जाता है, ('उदास मन वाला' अर्थ में)।

उत्करादिभ्यः — IV. ii. 89
उत्करादि प्रातिपदिकों से (चातुरर्थिक छ प्रत्यय होता है)।

...उत्कृष्टाः — II. i. 60
देखें — सन्महत्परमोत्त० II. i. 60

...उत्तभित... — VII. ii. 34
देखें — ग्रसितस्कभित० VII. ii. 34

...उत्तम... — II. i. 60
देखें — सन्महत्परमो० II. i. 60

उत्तम... — V. iv. 90
देखें — उत्तमैकाभ्याम् V. iv. 90

उत्तमः — I. iv. 105
(परिहास गम्यमान हो रहा हो तो भी मन्य है उपपद जिसका,ऐसी धातु से युष्मद् उपपद रहते समान अभिधेय होने पर युष्मद् शब्द का प्रयोग हो या न हो,तो भी मध्यम पुरुष हो जाता है तथा उस मन् धातु से) उत्तम पुरुष हो जाता है,(और उत्तम पुरुष को एकत्व हो जाता है)।

उत्तमः — I. iv. 106
(अस्मद् शब्द उपपद रहते समान अभिधेय हो, तो अस्मत् शब्द प्रयुक्त हो या न हो, तो भी) उत्तम पुरुष हो जाता है।

उत्तमः — VII. i. 91
उत्तम-पुरुष-सम्बन्धी (णल् प्रत्यय विकल्प से णित्वत् होता है)।

...उत्तमपूर्वात् — IV. iii. 5
देखें — परावराधमो० IV. iii. 5

उत्तमर्णः — I. iv. 35
(णिजन्त धृञ् धातु के प्रयोग में) जो उत्तमर्ण = ऋण देने वाला, वह (कारक सम्प्रदानसंज्ञक होता है)।

उत्तमस्य — III. iv. 92
(लोट् सम्बन्धी) उत्तम पुरुष को (आट् का आगम हो जाता है, और वह उत्तम पुरुष पित् भी माना जाता है)।

उत्तमस्य — III. iv. 98
(लोट् सम्बन्धी) उत्तम पुरुष के (सकार का लोप विकल्प से हो जाता है)।

...उत्तमाः — I. iv. 100
देखें — प्रथममध्यमोत्तमाः I. iv. 100

उत्तमैकाभ्याम् — V. iv. 90
उत्तम और एक शब्दों से परे (भी तत्पुरुष समास में अहन् शब्द को अह्न आदेश नहीं होता)।

..उत्तर... — I. i. 33
देखें — पूर्वपरावरदक्षिणोत्तरापराधराणि I. i. 33

उत्तर... — V. iii. 34
देखें — उत्तराधर० V. iii. 34

उत्तर... — V. iv. 98
देखें — उत्तरमृगपूर्वात् V. iv. 98

उत्तरपथेन — V. i. 76
तृतीयासमर्थ उत्तरपथ प्रातिपदिक से ('लाया हुआ' अर्थ में तथा 'जाता है' अर्थ में यथाविहित ठञ् प्रत्यय होता है)।

...उत्तरपद... — II. i. 50
देखें — तद्धितार्थोत्तरपद० II. i. 50

उत्तरपदभूम्नि — VI. ii. 175
उत्तरपदार्थ के बहुत्व को कहने में वर्तमान (बहुशब्द से नञ् के समान स्वर होता है)।

...उत्तरपदयोः — VII. ii. 98
देखें — प्रत्ययोत्तरपदयोः VII. ii. 98

उत्तरपदलोपः — V. iii. 82
(अजिन शब्द अन्त वाले मनुष्य नामधेय प्रातिपदिक से 'अनुकम्पा' गम्यमान होने पर कन् प्रत्यय होता है, और उस अजिनान्त शब्द के) उत्तरपद का लोप (भी) हो जाता है।

उत्तरपदवृद्धौ — VI. ii. 105
'उत्तरपदस्य' VII. iii. 10 के अधिकार में कहे गये सूत्रों के द्वारा जो वृद्धि सम्पादित,उस वृद्धि किये हुये शब्द के परे रहते (सर्वशब्द तथा दिक्शब्द पूर्वपद को अन्तोदात्त होता है)।

उत्तरपदस्य — VII. iii. 10
'उत्तरपदस्य' यह अधिकार सूत्र है; 'हनस्तोऽचिण्णलोः' VII. iii. 32 से पूर्व तक जायेगा।

उत्तरपदात् — VI. i. 163
(अनित्य समास में अन्तोदात्त एकाच्) उत्तरपद से आगे (तृतीयादि विभक्ति विकल्प से उदात्त होती है)।

उत्तरपदादिः — VI. ii. 111
यह अधिकार सूत्र है। यह जहाँ तक जायेगा वहाँ तक उत्तरपद के आदि को उदात्त होता जायेगा।

उत्तरपदे — VI. ii. 142
(देवतावाची द्वन्द्व समास में अनुदात्तादि) उत्तरपद रहते (पृथिवी, रुद्र, पूषन्, मन्थी को छोड़कर एक साथ पूर्व तथा उत्तरपद को प्रकृति स्वर नहीं होता)।

उत्तरपदे — VI. iii. 1

('अलुक्' तथा) 'उत्तरपदे'– पद का अधिकार आगे के सूत्रों में जाता है, अतः यह अधिकार सूत्र है।

...उत्तरम् — II. ii. 1

देखें — **पूर्वापराधरोत्तरम् II. ii. 1**

उत्तरम् — VII. iii. 25

(जङ्गल, धेनु तथा वलज अन्तवाले अङ्ग के पूर्वपद के अचों में आदि अच् को वृद्धि होती है तथा इन अङ्गों का) उत्तरपद (विकल्प से वृद्धिवाला होता है; ञित्, णित्, कित् तद्धित परे रहते)।

...उत्तरम् — VIII. i. 48

देखें — **चिदुत्तरम् VIII. i. 48**

उत्तरमृगपूर्वात् — V. iv. 98

उत्तर, मृग और पूर्व (तथा उपमानवाची शब्दों) से उत्तर (भी जो सक्थि शब्द, तदन्त तत्पुरुष से समासान्त टच् प्रत्यय होता है)।

उत्तरस्य — I. i. 66

(पञ्चमी विभक्ति से निर्दिष्ट होने पर) उत्तर को कार्य होता है।

उत्तरस्य — VIII. ii. 107

(दूर से बुलाने के विषय से भिन्न विषय में अप्रगृह्य सञ्ज्ञक एच् के पूर्वार्द्ध भाग को प्लुत करने के प्रसङ्ग में आकारादेश होता है तथा) उत्तरवाले भाग को (इकार, उकार आदेश होते हैं)।

उत्तरात् — V. iii. 38

(दिशा, देश तथा काल अर्थों में वर्तमान पञ्चम्यन्तवर्जित सप्तमी, प्रथमान्त दिशावाची) उत्तर शब्द से (भी आच् और आहि प्रत्यय होते हैं, दूरी वाच्य हो तो)।

उत्तराधरदक्षिणात् — V. iii. 34

(दिशा, देश तथा काल अर्थों में वर्तमान सप्तम्यन्त, पञ्चम्यन्त तथा प्रथमान्त दिशावाची) उत्तर, अधर और दक्षिण प्रातिपदिकों से (आति प्रत्यय होता है)।

...उत्तराभ्याम् — V. iii. 28

देखें — **दक्षिणोत्तराभ्याम् V. iii. 28**

...उत्तरेद्युः — V. iii. 22

देखें — **सद्यःपरुत्० V. iii. 22**

उत्तरेषु — VIII. i. 11

(यहाँ से) आगे द्विर्वचन करने में (कर्मधारय समास के समान कार्य होते हैं, ऐसा जानना चाहिये)।

...उत्पच... — III. ii. 136

देखें — **अलंकृञ्० III. ii. 136**

...उत्पत... — III. ii. 136

देखें — **अलंकृञ्० III. ii. 136**

...उत्पत्तिषु — III. iii. 111

देखें — **पर्यायार्हर्णोत्पत्तिषु III. iii. 111**

...उत्पातौ — V. i. 37

देखें — **संयोगोत्पातौ V. i. 37**

उत्पुच्छे — VI. ii. 196

(तत्पुरुष समास में) उत्पुच्छ शब्द को (विकल्प से अन्तोदात्त होता है)।

उत्पूतिसुसुरभिभ्यः — V. iv. 135

उत्, पूति, सु तथा सुरभि शब्दों से उत्तर (गन्ध शब्द को बहुव्रीहि समास में समासान्त इकारादेश होता है)।

उत्वद्... — IV. iii. 148

देखें — **उत्वद्वद्र्ध्र० IV. iii. 148**

उत्वद्वद्र्ध्रबिल्वात् — IV. iii. 148

उकारवान् द्व्यच् षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिक, वद्‍र्ध्र तथा बिल्व शब्दों से (वेद-विषय में मयट् प्रत्यय नहीं होता)।

उत्सङ्गादिभ्यः — IV. iv. 15

(तृतीयासमर्थ) उत्सङ्गादि प्रातिपदिकों से (हरति = स्थानान्तर प्राप्त करता है अर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

उत्सङ्ग = गोद।

...उत्सञ्जन... — I. iii. 36

देखें — **सम्माननोत्सञ्जना० I. iii. 36**

उत्सादिभ्यः — IV. i. 86

उत्सादि (समर्थ) प्रातिपदिकों से (प्राग्दीव्यतीय अर्थों में अञ् प्रत्यय होता है)।

उत्स = झरना, फव्वारा, स्रोत।

...उत्सुक... — VI. iii. 98

देखें — **आशीराशा० VI. iii. 98**

...उत्सुकाभ्याम् — II. iii. 44

देखें — **प्रसितोत्सुकाभ्याम् II. iii. 44**

उदः — I. iii. 24

उत् उपसर्गपूर्वक ('स्था' धातु से आत्मनेपद होता है, अनूर्ध्वकर्म अर्थात् ऊपर उठने अर्थ में वर्तमान न हो तो)।

उदः — I. iii. 53

उत् उपसर्ग से उत्तर (सकर्मक चर् धातु से आत्मनेपद होता है)।

...उदः — V. ii. 29

देखें — **सम्प्रोदः V. ii. 29**

उदः — VI. iii. 56

(उदक शब्द को) उद आदेश होता है; (सञ्ज्ञा विषय में, उत्तरपद परे रहते)।

उदः — VI. iv. 139

उत् उपसर्ग से उत्तर (भसञ्ज्ञक अञ्चु को ईकारादेश होता है)।

...उदः — VIII. i. 6

देखें — **प्रसमुपोदः VIII. i. 6**

उदः — VIII. iv. 60

उत् उपसर्ग से उत्तर (स्था तथा स्तम्भ् को पूर्वसवर्ण आदेश होता है)।

उदक् — IV. ii. 73

(विपाट् नदी के) उत्तरदेश में (जो कुएँ है, उनके अभिधेय होने पर भी अञ् प्रत्यय होता है)।

उदकस्य — VI. iii. 56

उदक शब्द को (उद आदेश होता है; सञ्ज्ञाविषय में, उत्तरपद परे रहते)।

उदके — VI. ii. 96

(मिश्रित अर्थ के बोधक समास में) उदक शब्द उपपद रहते (पूर्वपद को अन्तोदात्त होता है)।

उदङ्कः — III. iii. 123

(उदक विषय न हो तो पुंल्लिग में) उत् पूर्वक अञ्चु धातु से घञ् प्रत्ययान्त उदङ्क शब्द निपातन किया जाता है, (अधिकरण कारक में, संज्ञा विषय होने पर)।

...उदच्... — IV. ii. 100

देखें — **द्युप्रागपागु० IV. ii. 100**

उदधौ — VIII. ii. 13

(उदन्वान् शब्द) उदधि (तथा सञ्ज्ञा) के विषय में (निपातन है)।

उदन् — VI. i. 61

(वेद-विषय में उदक शब्द के स्थान में) उदन् आदेश हो जाता है, (शस् प्रकार वाले प्रत्ययों के परे रहते)।

...उदन्य... — VII. iv. 34

देखें — **अशनायोदन्य० VII. iv. 34**

उदन्वान् — VIII. ii. 13

उदन्वान् शब्द (उदधि तथा संज्ञा विषय में निपातन है)।

...उदर... — IV. i. 55

देखें — **नासिकोदरौष्ठ० IV. i. 55**

उदर... — VI. ii. 107

देखें — **उदराश्वेषुषु VI. ii. 107**

...उदरयोः — III. iv. 31

देखें — **चर्मोदरयोः III. iv. 31**

उदरात् — V. ii. 67

(सप्तमीसमर्थ) उदर प्रातिपदिक से ('पेटू' वाच्य हो तो 'तत्पर' अर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

उदराश्वेषुषु — VI. ii. 107

उदर, अश्व, इषु – इनके उत्तरपद रहते (बहुव्रीहि समास में सञ्ज्ञाविषय में पूर्वपद को अन्तोदात्त होता है)।

उदरे — VI. iii. 87

उदर शब्द उत्तरपद रहते (य प्रत्यय परे हो तो समान शब्द को विकल्प करके स आदेश हो जाता है)।

...उदर्केषु — VI. iii. 83

देखें — **अमूर्धप्रभृत्यु० VI. iii. 83**

उदश्वितः — IV. ii. 18

(सप्तमीसमर्थ) उदश्वित् प्रातिपदिक से ('संस्कृतं भक्षाः' अर्थ में विकल्प से ठक् प्रत्यय होता है)।

उदात्त... — I. ii. 40

देखें — **उदात्तस्वरितपरस्य I. ii. 40**

उदात्त... — VIII. ii. 4

देखें — **उदात्तस्वरितयोः VIII. ii. 4**

उदात्त... — VIII. iv. 66

देखें — **उदात्तस्वरितोदय० VIII. iv. 66**

उदात्तः — I. ii. 29

(ऊर्ध्व भाग से उच्चरित अच् की) उदात्त संज्ञा होती है।

उदात्तः — I. ii. 37

(सुब्रह्मण्य नाम वाले निगद में एकश्रुति नहीं हो, किन्तु उस निगद में जो स्वरित, उसको) उदात्त (तो) हो जाता है।

उदात्तः — III. iii. 96

(मन्त्रविषय में वृष, इष, पच, मन, विद, भू, वी तथा रा धातुओं से स्त्रीलिङ्ग भाव में क्तिन् प्रत्यय होता है, और) वह उदात्त होता है।

उदात्तः — III. iv. 103

(परस्मैपद-विषयक लिङ् लकार को यासुट् का आगम होता है और वह) उदात्त (और ङिद्वत् भी) होता है।

उदात्तः — IV. i. 37

(वृषाकपि, अग्नि, कुसित, कुसीद – इन अनुपसर्जन प्रातिपदिकों को स्त्रीलिङ्ग में) उदात्त (ऐकारादेश हो जाता है तथा ङीप् प्रत्यय होता है)।

उदात्तः — V. ii. 44

(प्रथमासमर्थ उभ प्रातिपदिक से उत्तर षष्ठ्यर्थ में नित्य ही तयप् के स्थान में अयच् आदेश होता है और वह अयच् आदि) उदात्त होता है।

उदात्तः — VI. i. 153

('कृष् विलेखने' धातु तथा आकारावान् घञन्त शब्द के अन्त को) उदात्त होता है।

उदात्तः — VI. ii. 64

(यहाँ से आगे जो कुछ कहेंगे, उसके आदि को) उदात्त होता है (यह अधिकार है)।

उदात्तः — VI. iv. 71

(लुङ्, लङ् तथा लृङ् के परे रहते अङ्ग को अट् का आगम होता है, और वह अट्) उदात्त (भी) होता है।

उदात्तः — IV. iv. 108

(सप्तमीसमर्थ समानोदर प्रातिपदिक से 'शयन किया हुआ' अर्थ में यत् प्रत्यय होता है, तथा समानोदर शब्द के ओकार को) उदात्त होता है।

उदात्तः — VII. i. 75

(नपुंसकलिंग वाले अस्थि, दधि, सक्थि, अक्षि – इन अङ्गों को तृतीयादि अजादि विभक्तियों के परे रहते अनङ् आदेश होता है और वह) उदात्त होता है।

उदात्तः — VII. i. 98

(चतुर् तथा अनडुह् अङ्गों को सर्वनामस्थान विभक्ति परे रहते आम् आगम होता है और वह) उदात्त होता है।

उदात्तः — VIII. ii. 5

(उदात्त के साथ जो अनुदात्त का एकादेश वह) उदात्त होता है।

उदात्तः — VIII. ii. 82

(यह अधिकार सूत्र है, पाद की समाप्तिपर्यन्त सर्वत्र वाक्य के टि भाग को प्लुत) उदात्त होता है, (ऐसा अर्थ होता जायेगा)।

उदात्तम् — I. ii. 32

(उस स्वरित गुण वाले अच् के आदि की आधी मात्रा) उदात्त (और शेष अनुदात्त) होती है।

उदात्तयणः — VI. i. 168

(हल् पूर्व में है जिसके ऐसा) जो उदात्त के स्थान में यण्, उससे परे (नदीसञ्ज्ञक प्रत्यय तथा अजादि सर्वनामस्थान-भिन्न विभक्ति को उदात्त होता है)।

उदात्तलोपः — VI. i. 155

(जिस अनुदात्त के परे रहते) उदात्त का लोप होता है, (उस अनुदात्त को भी आदि उदात्त हो जाता है)।

उदात्तवति — VIII. i. 71

उदात्तवान् (तिङन्त) के परे रहते (भी गतिसञ्ज्ञक को अनुदात्त होता है)।

उदात्तस्वरितपरस्य — I. ii. 40

उदात्तपरक तथा स्वरितपरक (अनुदात्त) को (सन्नतर अर्थात् अनुदात्ततर आदेश हो जाता है)।

उदात्तस्वरितयोः — VIII. ii. 4

उदात्त तथा स्वरित के स्थान में वर्तमान (यण् से उत्तर अनुदात्त के स्थान में स्वरित आदेश होता है)।

उदात्तस्वरितोदयम् — VIII. iv. 66

उदात्त उदय=परे है जिससे, एवं स्वरित उदय=परे है जिससे, ऐसे (अनुदात्त) को (स्वरित आदेश नहीं हो; गार्ग्य, काश्यप तथा गालव आचार्यों के मत को छोड़कर)।

उदात्तात् — VIII. iv. 65

उदात्त से उत्तर (अनुदात्त को स्वरित आदेश होता है)।

उदात्तेन — VIII. ii. 5

उदात्त के साथ (जो अनुदात्त का एकादेश, वह उदात्त होता है)।

उदात्तोपदेशस्य — VII. iii. 34

उपदेश में उदात्त (तथा मकारान्त) धातु को (चिण् तथा ञित्, णित्, कृत् परे रहते वृद्धि नहीं हो, आङ्पूर्वक चम् धातु को छोड़कर)।

उदि — III. ii. 31

उत् पूर्वक ('रुज्' और 'वह्' धातुओं से 'कूल' कर्म उपपद रहने पर 'खश्' प्रत्यय होता है)

उदि — III. iii. 35

उत् पूर्वक (ग्रह् धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

उदि — III. iii. 49

उत् पूर्वक (श्रि, यु, पू तथा द्रु धातुओं से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

...उदित् — I. i. 68

देखें — अणुदित् I. i. 68

उदितः — VII. ii. 56

उकार इत्सञ्ज्ञक धातुओं से उत्तर (क्त्वा प्रत्यय को विकल्प से इट् आगम होता है)।

उदीचाम् — III. iv. 19

(व्यतीहार अर्थ वाली मेङ् धातु से) उदीच्य आचार्यों के मत में (क्त्वा प्रत्यय होता है)।

उदीचाम् — IV. i. 130

उत्तरदेश निवासी आचार्यों के मत में (गोधा प्रातिपदिक से आरक् प्रत्यय होता है)।

उदीचाम् — IV. i. 152

उदीच्य आचार्यों के मत में (सेनान्त प्रातिपदिकों, लक्षण शब्द तथा शिल्पीवाची प्रातिपदिकों से अपत्य अर्थ में इञ् प्रत्यय होता है)।

उदीचाम् — IV. i. 157

(गोत्र से भिन्न जो वृद्धसंज्ञक प्रातिपदिक, उससे) उदीच्य आचार्यों के मत में (फिञ् प्रत्यय होता है)।

उदीचाम् — VII. iii. 46

उदीच्य आचार्यों के मत में (यकारपूर्व एवं ककारपूर्व आकार के स्थान में जो अकार, उसके स्थान में इकारादेश नहीं होता)।

उदीचाम् — VI. iii. 31

उदीच्य आचार्यों के मत में (मातरपितरौ शब्द निपातन किया जाता है)।

उदीच्यग्रामात् — IV. ii. 108

उत्तर दिशा में होने वाले ग्रामवाची (अन्तोदात्त, बहुत अच् वाले) प्रातिपदिकों से (भी अञ् प्रत्यय होता है)।

...उदुपधस्य — VIII. iii. 41

देखें — इदुदुपधस्य VIII. iii. 41

उदुपधात् — I. ii. 21

उकार उपधा वाली धातु से परे (भाववाच्य तथा आदि कर्म में वर्तमान सेट् निष्ठा प्रत्यय विकल्प करके कित् नहीं होता है)।

...उदेजि — III. i. 138

देखें — लिम्पविन्द० III. i. 138

...उदोः — III. iii. 26

देखें — अवोदोः III. iii. 26

...उद्नोः — III. iii. 69

देखें — समुदोः III. iii. 69

उद्गमने — I. iii. 40

उद्गमन = उदय होना अर्थ में (आङ्पूर्वक क्रम धातु से आत्मनेपद होता है)।

...उद्गात्रादिभ्यः — V. i. 128

देखें — प्राणभृज्जातिवयो० V. i. 128

उद्घनः — III. iii. 80

उद्घन शब्द में उत् पूर्वक हन् धातु से अप् प्रत्यय तथा हन् को घनादेश निपातन किया जाता है, (अत्याधान अर्थात् काष्ठ के नीचे रखा हुआ काष्ठ वाच्य हो तो, कर्तृभिन्न कारक संज्ञाविषय में)।

...उद्घौ — III. iii. 86

देखें — संघोद्घौ III. iii. 86

उद्धृतम् — IV. ii. 13

सप्तमीसमर्थ पात्रवाची प्रातिपदिकों से भोजन के पश्चात् अवशिष्ट अर्थ में (यथाविहित अण् प्रत्यय होता है)।

...उद्ध्यौ — III. i. 114

देखें — भिद्योद्ध्यौ III. i. 114

...उद्भ्याम् — VII. iii. 117

देखें — इदुद्भ्याम् VII. iii. 117

...उद्याव... — III. iii. 122

देखें — अध्यायन्याय० III. iii. 122

उद्वमने — III. i. 16

उद्वमन अर्थ में (वाष्प और ऊष्म कर्म से क्यङ् प्रत्यय होता है)।

उद्वमन = उगलना।

उद्विभ्याम् — I. iii. 27

उत् तथा वि उपसर्ग से उत्तर (अकर्मक तप् धातु से आत्मनेपद होता है)।

उद्विभ्याम् — V. iv. 148

उत् तथा वि से उत्तर (काकुद शब्द का समासान्त लोप होता है, बहुव्रीहि समास में)।

...उन्द... — VIII. ii. 56
देखें — नुदविदोन्द० VIII. ii. 56

उन्नतः — V. ii. 106
उन्नत समानाधिकरण वाले (दन्त प्रातिपदिक से उरच् प्रत्यय होता है, 'मत्वर्थ' में)।
उन्नत = ऊपर की ओर निकला हुआ।

...उन्नीय... — III. i. 123
देखें — निष्टक्र्यदेवहूय० III. i. 123

उन्योः — III. iii. 29
उद् तथा नि उपपद रहने पर (गृ धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

...उन्मद... — III. ii. 136
देखें — अलंकृञ्० III. ii. 136

उन्मनाः — V. ii. 80
(उत्क शब्द उत्पूर्वक कन् प्रत्ययान्त निपातन किया जाता है), 'उदास मन वाला' अभिधेय हो तो।

...उप... — I. iii. 30
देखें — निसमुपविभ्यः I. iii. 30

उप... — I. iii. 39
देखें — उपपराभ्याम् I. iii. 39

उप... — I. iv. 48
देखें — उपान्वध्याङ्वसः I. iv. 48

...उप... — III. iii. 63
देखें — समुप० III. iii. 63

...उप... — III. iii. 72
देखें — न्यभ्युपविषु III. iii. 72

उप... — III. iv. 49
देखे — उपपीडरुधकर्षः III. iv. 49

उप... — V. ii. 34
देखें — उपाधिभ्याम् V. ii. 34

...उप... — VI. ii. 33
देखें — परिप्रत्युपापाः VI. ii. 33

...उप... — VIII. i. 6
देखें — प्रसमुपोदः VIII. i. 6

उपः — I. iv. 86
उप शब्द (अधिक तथा हीन अर्थ में कर्मप्रवचनीय और निपातसंज्ञक होता है)।

...उपकर्ण... — IV. iii. 40
देखें — उपजानूपकर्ण० IV. iii. 40

उपकादिभ्यः — II. iv. 69
उपक आदियों से उत्तर (द्वन्द्व और अद्वन्द्व दोनों में गोत्र प्रत्यय का विकल्प से लुक् होता है; बहुत्व की विवक्षा होने पर)।

...उपक्रम... — VI. ii. 14
देखें — मात्रोपज्ञोप० VI. ii. 14

...उपक्रमम् — II. iv. 21
देखें — उपज्ञोपक्रमम् II. iv. 21

उपघ्नः — III. iii. 85
(सामीप्य प्रतीत होने पर, कर्तृभिन्न संज्ञा में) उपघ्न शब्द उप पूर्वक हन् धातु से अप् प्रत्यय तथा हन् की उपधा का लोप कर निपातन किया जाता है।

...उपचाय्य... — III. i. 131
देखें — परिचाय्योपचाय्य० III. i. 131

...उपचाय्यपृडानि — III. i. 123
देखें — निष्टक्र्यदेवहूय० III. i. 123

उपजानु... — IV. iii. 40
देखें — उपजानूपकर्ण० IV. iii. 40

उपजानूपकर्णोपनीवेः — IV. iii. 40
सप्तमीसमर्थ उपजानु, उपकर्ण तथा उपनीवि शब्द से ('प्रायभवः' अर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

उपज्ञा... — II. iv. 21
देखें — उपज्ञोपक्रमम् II. iv. 21

...उपज्ञा... — VI. ii. 13
देखें — मात्रोपज्ञोप० VI. ii. 13

उपज्ञाते — IV. iii. 115
(तृतीयासमर्थ प्रातिपदिक से) उपज्ञात = नई सूझ अर्थ में (यथाविहित प्रत्यय होता है)।

उपज्ञोपक्रमम् — II. iv. 21
(नञ् तथा कर्मधारयवर्जित) उपज्ञान्त तथा उपक्रमान्त (तत्पुरुष नपुंसकलिंग में होता है, यदि उपज्ञेय तथा उपक्रम्य के आदि = प्रथम कर्ता को कहने की इच्छा हो तो)।

...उपताप... — V. ii. 128
देखें — द्वन्द्वोपताप० V. ii. 128

...उपतापयोः — VII. iii. 61
देखें — पाण्युपतापयोः VII. iii. 61

उपदंशः — III. iv. 47
(तृतीयान्त शब्द उपपद रहते) उपपूर्वक दंश् धातु से (णमुल् प्रत्यय होता है)।

...उपदा — V. i. 46
देखें — **वृद्ध्यायलाभ० V. i. 46**

उपदेशे — I. iii. 2
उपदेश में वर्तमान (अनुनासिक अच् इत्सञ्ज्ञक होता है)।

उपदेश = अष्टाध्यायी, धातुपाठ, उणादिकोष, गणपाठ, लिंगानुशासन।

उपदेशे — VI. i. 44
उपदेश अवस्था में (जो एजन्त धातु, उसको आकारादेश हो जाता है, शित्प्रत्यय परे हो तो नहीं होता)।

उपदेशे — VI. iv. 62
(भाव तथा कर्म-विषयक स्य, सिच्, सीयुट् और तास् के परे रहते) उपदेश में (अजन्त धातुओं तथा हन्, ग्रह् एवं दृश् धातुओं को चिण् के समान विकल्प से कार्य होता है तथा इट् आगम भी होता है)।

उपदेशे — VII. ii. 10
उपदेश में (एक अच् वाले तथा अनुदात्त धातु से उत्तर इट् का आगम नहीं होता)।

उपदेशे — VII. ii. 62
उपदेश में (जो धातु अकारवान् और तास् के परे रहते नित्य अनिट्, उससे उत्तर थल् को तास् के समान ही इट् आगम नहीं होता)।

उपदेशे — VIII. iv. 18
(उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर जो) उपदेश में (ककार तथा खकार आदिवाला नहीं है, एवं षकारान्त भी नहीं है, ऐसे शेष धातु के परे रहते नि के नकार को विकल्प से णकारादेश होता है)।

...उपधयोः — VI. iv. 47
देखें — **रोपधयोः VI. iv. 47**

उपधा — I. i. 64
(अन्त्य अल् से पूर्व अल् की) उपधासंज्ञा हीती है।

उपधानः — IV. iv. 125
उपधान मन्त्र (समानाधिकरण प्रथमासमर्थ मतुबन्त) प्रातिपदिक से (षष्ठ्यर्थ में यत् प्रत्यय होता है, तथा मतुप् का लुक् भी हो जाता है, वेद-विषय में)।

— जिस मन्त्र को बोलकर ईंटों की वेदी बनाई जाये, वह उपधान मन्त्र कहलाता है।

उपधायाः — VI. iv. 7
(नकारान्त अङ्ग की) उपधा को (नाम् परे रहते दीर्घ होता है)।

उपधायाः — VI. iv. 20
(ज्वर्, त्वर्, स्रिवि्, अव्, मव् — इन अङ्गों के वकार तथा) उपधा के स्थान में (ऊठ् आदेश होता है, क्विप् तथा झलादि एवं अनुनासिकादि प्रत्ययों के परे रहते)।

उपधायाः — VI. iv. 24
(इकार जिसका इत्सञ्ज्ञक नहीं है, ऐसे हलन्त अङ्ग की) उपधा के (नकार का लोप होता है; कित्, ङित् प्रत्ययों के परे रहते)।

उपधायाः — VI. iv. 87
(गोह् अङ्ग की) उपधा को (ऊकारादेश होता है, अजादि प्रत्यय परे रहते)।

उपधायाः — VI. iv. 149
(भसञ्ज्ञक अङ्ग की) उपधा (यकार का लोप होता है, ईकार तथा तद्धित के परे रहते; यदि वह य् सूर्य, तिष्य अगस्त्य तथा मत्स्य-सम्बन्धी हो)।

उपधायाः — VII. i. 101
(धातु अङ्ग की) उपधा के (ऋकार के स्थान में भी इकारादेश होता है)।

उपधायाः — VII. ii. 116
(अङ्ग की) उपधा के (अकार के स्थान में वृद्धि होती है; ञित्, णित् प्रत्यय परे रहते)।

उपधायाः — VII. iv. 1
(चङ्परक णि के परे रहते अङ्ग की) उपधा को (ह्रस्व होता है)।

उपधायाः — VIII. ii. 9
(यवादिशब्दवर्जित मकारान्त एवं अवर्णान्त तथा मकार एवं अवर्ण) उपधा वाले प्रातिपदिक से उत्तर (मतुप् को वकारादेश होता है)।

उपधायाः — VIII. ii. 76
(रेफान्त तथा वकारान्त जो धातु पद, उसकी) उपधा (इक्) को (दीर्घ होता है)।

उपधायाम् — VIII. ii. 78

(हल् परे रहते धातु के) उपधाभूत (रेफ एवं वकार की उपधा इक् को भी दीर्घ होता है)।

उपधालोपिनः — IV. i. 28

उपधालोपी अर्थात् जिसकी उपधा का लोप हुआ हो, ऐसे (बहुव्रीहि समासवाले अन्नन्त) प्रातिपदिक से (स्त्रीलिंग में विकल्प से ङीप् प्रत्यय होता है)।

...उपधि... — V. i. 13

देखें — **छदिरुपधिबलेः V. i. 13**

...उपनिषदौ — I. iv. 78

देखें — **जीवकोपनिषदौ I. iv. 78**

...उपनीवेः — IV. iii. 40

देखें — **उपजानूपकर्णो० IV. iii. 40**

उपपदम् — II. ii. 19

समीपोच्चरित पद (तिङ्भिन्न समर्थ शब्दान्तर के साथ नित्य समास को प्राप्त होता है), और वह तत्पुरुष समास होता है।

उपपदम् — III. i. 92

(इस 'धातोः' सूत्र के अधिकार में सप्तमी विभक्ति से निर्दिष्ट पदों की) उपपद संज्ञा होती है।

...उपपदात् — VI. ii. 139

देखें — **गतिकारको० VI. ii. 139**

उपपदे — I. iv. 104

(युष्मद् शब्द के) उपपद रहते (समान अभिधेय होने पर युष्मद् शब्द का प्रयोग हो या न भी हो, तो भी मध्यम पुरुष होता है)।

उपपदेन — I. iii. 77

उपपद = समीपोच्चरित पद के द्वारा (कर्त्रभिप्राय क्रिया-फल के प्रतीत होने पर धातु से विकल्प करके आत्मनेपद होता है)।

उपपराभ्याम् — I. iii. 39

उप एवं परा उपसर्ग से उत्तर (क्रम् धातु से आत्मनेपद होता है; वृत्ति, सर्ग तथा तायन अर्थों में)।

उपपीडरुधकर्षः — III. iv. 49

(तृतीयान्त तथा सप्तम्यन्त उपपद हो तो) उपपूर्वक पीड, रुध तथा कर्ष् धातुओं से (भी णमुल् प्रत्यय होता है)।

...उपमन्त्रणेषु — I. iii. 47

देखें — **भासनोपसम्भाषा० I. iii. 47**

...उपमान... — VI. ii. 2

देखें — **तुल्यार्थ० VI. ii. 2**

उपमानम् — VI. i. 198

उपमानवाची शब्द को (संज्ञा विषय में आद्युदात्त होता है)।

उपमान = तुलना या तुलना का मापदण्ड।

उपमानम् — VI. ii. 80

उपमानवाची (पूर्वपद णिनि प्रत्ययान्त शब्दार्थक धातु के उत्तरपद होने पर ही आद्युदात्त होता है)।

उपमानम् — VI. ii. 127

(तत्पुरुष समास में) उपमानवाची (उत्तरपद चीर) शब्द को (आद्युदात्त होता है)।

उपमानात् — III. i. 10

उपमानवाची (सुबन्त कर्म) से (आचार अर्थ में विकल्प से क्यच् प्रत्यय होता है)।

उपमानात् — V. iv. 97

उपमानवाची (श्वन् शब्दान्त तत्पुरुष) से (समासान्त टच् प्रत्यय होता है, यदि वह श्वन् शब्द प्राणिविशेष का वाचक न हो तो)।

उपमानात् — V. iv. 137

उपमानवाची शब्दों से उत्तर (भी गन्ध शब्द को समासान्त इकारादेश हो जाता है, बहुव्रीहि समास में)।

...उपमानात् — VI. ii. 145

देखें — **सूपमानात् VI. ii. 145**

...उपमानात् — VI. ii. 169

देखें — **निष्ठोपमानात् VI. ii. 169**

उपमानानि — II. i. 54

उपमान वाचक (सुबन्त) शब्द (सामान्य वाचक समानाधिकरण सुबन्तों के साथ विकल्प से तत्पुरुष समास को प्राप्त होते हैं)।

उपमाने — III. ii. 79

उपमानवाची (कर्ता) उपपद रहते (धातुमात्र से 'णिनि' प्रत्यय होता है)।

उपमाने — III. iv. 45

उपमानवाची (कर्म) उपपद रहते (और चकार से कर्ता उपपद रहते धातुमात्र से णमुल् प्रत्यय होता है)।

उपमाने — VI. ii. 72

(गो, बिडाल, सिंह, सैन्धव – इन) उपमानवाची शब्दों के उत्तरपद रहते (पूर्वपद को आद्युदात्त होता है)।

...उपमाभ्याम् — II. iii. 72

देखें — अतुलोपमाभ्याम् II. iii. 72

उपमार्थे — VIII. ii. 101

(चित्– यह निपात भी जब) उपमा के अर्थ में (प्रयुक्त हो, तो वाक्य की टि को अनुदात्त प्लुत होता है)।

उपमितम् — II. i. 55

उपमित = उपमेयवाची (सुबन्त) शब्द (समानाधिकरण व्याघ्रादि सुबन्त शब्दों के साथ विकल्प से तत्पुरुष समास को प्राप्त होता है, साधारणधर्मवाची शब्द के अप्रयोग होने पर)।

उपयमने — I. ii. 16

उपयमन = विवाह करने अर्थ में वर्तमान (यम् धातु से परे सिच् कित्वत् होता है, आत्मनेपद विषय में)।

उपयमने — I. iv. 76

(हस्ते तथा पाणौ शब्द) उपयमन = विवाह विषय में हों तो (नित्य ही उनकी कृञ् के योग में गति और निपात संज्ञा होती है)।

...उपयोः — III. iii. 39

देखें — व्युपयोः III. iii. 39

उपयोगे — I. iv. 29

नियमपूर्वक विद्या ग्रहण करने में (जो पढ़ाने वाला, उस कारक की अपादान संज्ञा होती है)।

उपयोगेषु — I. iii. 32

देखे — गन्धनावक्षेपणसेवन० I. iii. 32

उपरि... — V. iii. 31

देखें — उपर्युपरिष्टात् V. iii. 31

उपरि... — VIII. i. 7

देखें — उपर्यध्यधसः VIII. i. 7

उपरि — VIII. ii. 102

उपरि (स्विदासीत्) की (टि को भी प्लुत अनुदात्त होता है)।

...उपरिष्टात् — V. iii. 31

देखें — उपर्युपरिष्टात् V. iii. 31

उपरिस्थम् — VI. ii. 188

(अधि उपसर्ग से उत्तर) उपरिस्थवाची = ऊपर बैठने वाला, तद्वाची उत्तरपद को (अन्तोदात्त होता है)।

उपर्यध्यधसः — VIII. i. 7

उपरि, अधि, अधस् – इन शब्दों को (समीपता अर्थ कहना हो तो द्वित्व होता है)।

उपर्युपरिष्टात् — V. iii. 31

उपरि और उपरिष्टात् शब्दों का निपातन किया जाता है, (अस्ताति के अर्थ में)।

...उपशुन... — V. iv. 77

देखें — अचतुर० V. iv. 77

उपसंवाद... — III. iv. 8

देखें — उपसंवादाशंकयोः III. iv. 8

उपसंवादाशंकयोः — III. iv. 8

उपसंवाद तथा आशङ्का गम्यमान हों तो (भी धातु से वेद विषय में लेट् प्रत्यय होता है)।

उपसंवाद = पणबन्ध अर्थात् तू ऐसा करे तो मैं भी ऐसा करूँ।

...उपसंव्यानयोः — I. i. 35

देखें — बहिर्योगोपसंव्यानयोः I. i. 35

...उपसमाधानेषु — III. iii. 41

देखें — निवासचिति० III. iii. 41

...उपसम्पत्तौ — VI. ii. 56

देखें — अचिरोपसंपत्तौ VI. ii. 56

...उपसम्भाषा... — I. iii. 47

देखें — भासनोपसम्भाषा० I. iii. 47

उपसर्ग... — VIII. iii. 87

देखें — उपसर्गप्रादुर्भ्याम् VIII. iii. 87

उपसर्गपूर्वम् — VI. ii. 110

(बहुव्रीहि समास में) उपसर्ग पूर्व वाले (निष्ठान्त पूर्वपद) को (विकल्प से अन्तोदात्त होता है)।

उपसर्गप्रादुर्भ्याम् — VIII. iii. 87

उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर तथा प्रादुस् शब्द से उत्तर (यकारपरक एवं अच्परक अस् धातु के सकार को मूर्धन्य आदेश होता है)।

उपसर्गव्यपेतम् — VIII. i. 38
(यावत् और यथा से युक्त एवं) उपसर्ग से व्यवहित (तिङन्त को भी पूजाविषय में अननुदात्त नहीं होता, अर्थात् अनुदात्त होता है)।

उपसर्गस्य — VI. iii. 121
(घञन्त उत्तरपद रहते) उपसर्ग के (अण् को बहुल करके दीर्घ होता है, अमनुष्य अभिधेय होने पर)।

उपसर्गस्य — VIII. ii. 19
(अय धातु के परे रहते) उपसर्ग के (रेफ को लकारादेश होता है)।

उपसर्गाः — I. iv. 58
(प्रादिगणपठित शब्द निपातसंज्ञक होते हैं तथा क्रिया के साथ प्रयुक्त होने पर वे) उपसर्गसंज्ञक होते हैं ।

उपसर्गात् — V. i. 116
(धातु के अर्थ में वर्तमान) उपसर्ग से (स्वार्थ में वति प्रत्यय होता है, वेद-विषय में)।

उपसर्गात् — V. iv. 85
उपसर्ग से उत्तर (अध्वन् शब्दान्त प्रातिपदिक से समासान्त अच् प्रत्यय होता है)।

उपसर्गात् — V. iv. 119
उपसर्ग से उत्तर (भी नासिका-शब्दान्त बहुव्रीहि से समासान्त अच् प्रत्यय होता है, तथा नासिका को नस आदेश भी हो जाता है)।

उपसर्गात् — VI. i. 88
(अवर्णान्त) उपसर्ग से उत्तर (ऋकारादि धातु के परे रहते पूर्व पर के स्थान में वृद्धि एकादेश होता है, संहिता विषय में)।

उपसर्गात् — VI. ii. 177
(बहुव्रीहि समास में) उपसर्ग से उत्तर (पर्शु-वर्जित ध्रुव स्वाङ्ग को अन्तोदात्त होता है)।
पर्शु = पसली की हड्डी ।

उपसर्गात् — VII. i. 67
(खल् तथा घञ् प्रत्ययों के परे रहते) उपसर्ग से उत्तर (लभ् अङ्ग को नुम् आगम होता है)।

उपसर्गात् — VII. iv. 23
उपसर्ग से उत्तर ('ऊह् वितर्के' अङ्ग को यकारादि कित्, ङित् प्रत्यय परे रहते ह्रस्व होता है)।

उपसर्गात् — VII. iv. 47
(अजन्त) उपसर्ग से उत्तर (घुसञ्ज्ञक 'दा' अङ्ग को तकारादि कित् प्रत्यय परे रहते तकारादेश होता है)।

उपसर्गात् — VIII. iii. 65
उपसर्गस्थ निमित्त से उत्तर (सुनोति, सुवति, स्यति, स्तौति, स्तोभति, स्था, सेनय, सेध, सिच, सञ्ज, स्वञ्ज – इनके (सकार को मूर्धन्यादेश होता है)।

उपसर्गात् — VIII. iv. 14
उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर (णकार उपदेश में है जिसके, ऐसे धातु के नकार को असमास में तथा अपि ग्रहण से समास में भी णकार आदेश होता है)।

उपसर्गात् — VIII. iv. 27
उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर (जो आकार से परे नहीं है, ऐसे नस् के नकार को णकारादेश होता है)।

उपसर्गे — II. iii. 59
उपसर्ग होने पर (दिव् धातु के कर्म कारक में षष्ठी विभक्ति होती है)।

उपसर्गे — III. i. 136
उपसर्ग उपपद रहते (आकारान्त धातुओं से भी 'क' प्रत्यय होता है)।

उपसर्गे — III. ii. 61
(सत्, सू, द्विष, द्रुह, दुह, युज, विद, भिद, छिद, जि, नी, राज्, धातुओं से), वे उपसर्गयुक्त हों तो (भी तथा निरुपसर्ग हों तो भी सुबन्त उपपद रहते क्विप् प्रत्यय होता है)।

उपसर्गे — III. ii. 99
उपसर्ग उपपद रहते (भी संज्ञा विषय में जन् धातु से 'ड' प्रत्यय होता है, भूतकाल में)।

उपसर्गे — III. ii. 186
उपसर्गसहित (दिव् तथा क्रुश् धातुओं से भी तच्छीलादि कर्ता हो, तो वर्तमान काल में वुञ् प्रत्यय होता है)।

उपसर्गे — III. iii. 22
उपसर्ग उपपद रहने पर (रु धातु से घञ् प्रत्यय होता है, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में)।

उपसर्गे — III. iii. 59
उपसर्ग उपपद रहते हुए (अद् धातु से अप् प्रत्यय होता है, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में)।

उपसर्गे — III. iii. 92
उपसर्ग उपपद रहने पर (घुसंज्ञक धातुओं से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में कि प्रत्यय होता है)।

उपसर्गे — III. iii. 106
उपसर्ग उपपद रहते (आकारान्त धातुओं से भी स्त्रीलिंग, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में अङ् प्रत्यय होता है)।

...उपसर्गेभ्यः — VI. iii. 96
देखें — द्व्यन्तरुपसर्गेभ्यः VI. iii. 96

उपसर्जनम् — I. ii. 43
(समास-विधायक सूत्रों में जो प्रथमा विभक्ति से निर्दिष्ट पद, उसकी) उपसर्जन संज्ञा होती है।

उपसर्जनम् — II. ii. 30
उपसर्जन संज्ञक (का समास में पूर्व प्रयोग होता है)।

उपसर्जनस्य — I. ii. 48
उपसर्जन (गो शब्दान्त प्रातिपदिक तथा उपसर्जन स्त्रीप्रत्ययान्त प्रातिपदिक) को (ह्रस्व होता है)।

उपसर्जनस्य — VI. iii. 81
जिस समास के सारे अवयव उपसर्जन हैं, तदवयव (सह शब्द) को (विकल्प से 'स' आदेश होता है)।

उपसर्जनात् — IV. i. 54
(स्वाङ्गवाची जो) उपसर्जन (असंयोग उपधा वाले अदन्त प्रातिपदिक), उनसे (स्त्रीलिंग में विकल्प से ङीप् प्रत्यय होता है)।

...उपसर्जने — I. ii. 57
देखें — कालोपसर्जने I. ii. 57

उपसर्या — III. i. 104
उपसर्या शब्द उपपूर्वक सृ धातु से यत्प्रत्ययान्त निपातन है, प्रजन अर्थात् प्रथम गर्भग्रहण का समय जिसका हो गया हो उस अर्थ में)।

उपसिक्ते — IV. iv. 26
(तृतीयासमर्थ व्यञ्जनवाची प्रातिपदिक से) 'ऊपर डाला हुआ' — इस अर्थ में (ठक् प्रत्यय होता है)।

उपसृष्टयोः — I. iv. 38
उपसर्ग से युक्त (क्रुध् तथा द्रुह् धातु) के (प्रयोग में जिसके प्रति कोप किया जाये, उस कारक की कर्म संज्ञा होती है)।

...उपस्थानीय... — III. iv. 68
देखें — भव्यगेय० III. iv. 68

उपस्थिते — VI. i. 125
अनार्ष इति के परे रहते (प्लुत अप्लुत के समान हो जाता है)।

...उपहतेषु — VI. iii. 51
देखें — आज्यातिगो० VI. iii. 51

उपाजे — I. iv. 72
उपाजे (तथा अन्वाजे) शब्द (कृञ् के योग में निपात और गति संज्ञक होते हैं)।

उपात् — I. iii. 25
उप उपसर्ग से उत्तर (स्था धातु से आत्मनेपद होता है, मन्त्रकरण अर्थ में)।

उपात् — I. iii. 56
उप उपसर्ग से उत्तर (पाणिग्रहण अर्थ में वर्तमान यम् धातु से आत्मनेपद होता है)।

उपात् — I. iii. 84
उपपूर्वक (रम् धातु) से (भी परस्मैपद होता है)।

उपात् — VI. i. 134
(प्रतियत्न, वैकृत तथा वाक्याध्याहार अर्थ गम्यमान हो तो कृ धातु के परे रहते) उप उपसर्ग से उत्तर (ककार से पूर्व सुट् का आगम होता है, संहिता के विषय में)।
प्रतियत्न = किसी गुण को किसी और गुण में बदलना।

उपात् — VI. ii. 194
उप उपसर्ग से उत्तर (दो अच् वाले शब्दों तथा अजिन शब्द को तत्पुरुष समास में अन्तोदात्त होता है, गौरादि शब्दों को छोड़कर)।

उपात् — VII. i. 66
(प्रशंसा गम्यमान होने पर) उप उपसर्ग से उत्तर (लभ् अङ्ग को यकारादि प्रत्यय के विषय में नुम् आगम होता है)।

उपादेः — V. iii. 80
उपशब्द आदि वाले (बह्वच् मनुष्य-नामधेय) प्रातिपदिक से (नीति और अनुकम्पा गम्यमान होने पर अडच्, वुच् तथा घन्, इलच् और ठच् प्रत्यय विकल्प से होते हैं, प्राग्देशीय आचार्यों के मत में)।

उपाधिभ्याम् — V. ii. 34
उप और अधि उपसर्ग प्रातिपदिकों से (यथासङ्ख्य करके यदि वह 'आसन्न' और 'आरूढ' अर्थों में वर्तमान हों तो सञ्ज्ञाविषय में त्यकन् प्रत्यय होता है)।

...उपानहोः — V. i. 14
देखें — ऋषभोपानहोः V. i. 14

उपान्वध्याङ्वसः — I. iv. 48

उप, अनु, अधि और आङ्पूर्वक वस् का (जो आधार, वह कर्मसञ्ज्ञक होता है)।

...उपाभ्याम् — I. iii. 42

देखें — **प्रोपाभ्याम् I. iii. 42**

...उपाभ्याम् — I. iii. 64

देखें — **प्रोपाभ्याम् I. iii. 64**

उपे — III. ii. 73

उप उपपद रहते (यज् धातु से छन्द विषय में विच् प्रत्यय होता है)।

उपेयिवान् — III. ii. 109

उपेयिवान् शब्द निपातन से सिद्ध होता है।

उपोत्तमम् — VI. i. 174

(षट्सञ्ज्ञक, त्रि तथा चतुर् शब्द से उत्पन्न झलादि विभक्ति; तदन्त शब्द में) उपोत्तम=तीन या तीन से अधिक स्वरों वाले शब्दों के अन्त्य अक्षर के समीपवाला पूर्व वर्ण (उदात्त होता है)।

उपोत्तमम् — VI. i. 211

(रैफ इत् वाले शब्द के) उपोत्तम=तीन या तीन से अधिक स्वरों वाले शब्दों के अन्त्य अक्षर के समीपवाले पूर्व वर्ण को (उदात्त होता है)।

...उपोत्तमयोः — IV. i. 78

देखें — **गुरूपोत्तमयोः IV. i. 78**

उप्ते — IV. iii. 44

(सप्तमीसमर्थ कालवाची प्रातिपदिकों से) 'बोया हुआ' अर्थ में (भी यथाविहित प्रत्यय होता है)।

उभयथा — III. iv. 117

(वेदविषय में) दोनों=सार्वधातुक, आर्धधातुक संज्ञायें होती हैं; अर्थात् जिसकी सार्वधातुक संज्ञा कही है, उसकी आर्धधातुक संज्ञा और जिसकी आर्धधातुक संज्ञा कही है, उसकी सार्वधातुक संज्ञा होती है।

उभयथा — VI. iv. 5

(वेदविषय में तिसृ, चतसृ अङ्ग को) दोनों प्रकार से (देखा जाता है — दीर्घ भी और ह्रस्व भी)।

उभयथा — VI. iv. 86

(भू तथा सुधी अङ्गों को वेद-विषय में) दोनों प्रकार से देखा जाता है, अर्थात् यणादेश भी होता है तथा नहीं भी होता। न होने की स्थिति में इयङ्, उवङ् आदेश होते हैं।

उभयथा — VIII. ii. 70

(अम्नस्, ऊधस्, अवस् पदों को वेद-विषय में) दोनों प्रकार से अर्थात् रु एवं रेफ दोनों ही होते हैं।

उभयथा — VIII. iii. 8

(नकारान्त पद को अम्परक छव् प्रत्याहार परे रहते पादयुक्त मन्त्रों में) दोनों प्रकार से होता है, अर्थात् एक पक्ष में रु एवं दूसरे पक्ष में नकार ही रहता है।

उभयप्राप्तौ — II. iii. 66

(जिस कृदन्त के योग में कर्त्ता और कर्म) दोनों में (एक साथ षष्ठी विभक्ति की) प्राप्ति हो (वहाँ कर्म कारक में ही षष्ठी विभक्ति होती है, कर्त्ता में नहीं)।

...उभयेद्युस् — V. iii. 22

देखें — **सद्यःपरुत्० V. iii. 22**

उभयेषाम् — VI. i. 17

(लिट् लकार के परे रहते) दोनों अर्थात् वचिस्वपियजादि तथा ग्रहिज्यादियों के (अभ्यास को सम्प्रसारण हो जाता है)।

उभात् — V. ii. 44

(प्रथमासमर्थ) उभ प्रातिपदिक से उत्तर (षष्ठ्यर्थ में नित्य ही तयप् के स्थान में अयच् आदेश होता है और वह अयच् आद्युदात्त होता है)।

उभाभ्याम् — IV. i. 13

दोनों से अर्थात् ऊपर कहे गये मन्नन्त प्रातिपदिकों से तथा बहुव्रीहि समास में जो अन्नन्त प्रातिपदिक, उनसे (स्त्रीलिंग में विकल्प से डाप् प्रत्यय होता है)।

उभे — VI. i. 5

(जो द्वित्वरूप से कहे गये) वे दोनों (अभ्यस्तसञ्ज्ञक होते हैं)।

उभे — VI. ii. 140

(वनस्पत्यादि समस्त शब्दों में) दोनों=पूर्व तथा उत्तरपद को (एक साथ प्रकृतिस्वर होता है)।

उभौ — VIII. iv. 20

(उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर अभ्याससहित अन धातु के) दोनों नकारों को (णकार आदेश होता है)।

उम् — VII. iv. 20

(वच् अङ्ग को अङ् परे रहते) उम् आगम होता है।

उमा... — IV. iii. 155

देखें — **उमोर्णयोः IV. iii. 155**

...उमा... — V. ii. 4
देखें — तिलमाषो० V. ii. 4

उमोर्णयोः — IV. iii. 155
(षष्ठीसमर्थ) उमा तथा ऊर्णा प्रातिपदिक से (विकल्प से विकार तथा अवयव अर्थ में वुञ् प्रत्यय होता है)।

उरः — VI. i. 113
यजुर्वेद-विषय में एङन्त (उरः शब्द को प्रकृतिभाव होता है, अकार परे रहते)।

उरःप्रभृतिभ्यः — V. iv. 151
उरस् इत्यादि अन्तवाले शब्दों से (बहुव्रीहि समास में कप् प्रत्यय होता है)।

उरच् — V. ii. 106
(उन्नत समानाधिकरण वाले दन्त प्रातिपदिकों से मत्वर्थ में) उरच् प्रत्यय होता है।

...उरभ्र... — IV. ii. 38
देखें — गोत्रोक्षोष्ट्रो० IV. ii. 38

उरसः — IV. iii. 114
(तृतीयासमर्थ) उरस् शब्द से (एकदिक् अर्थ में यत् प्रत्यय तथा चकार से तसि प्रत्यय भी होता है)।

उरसः — IV. iv. 94
(तृतीयासमर्थ) उरस् प्रातिपदिक से ('बनाया हुआ' अर्थ में अण् और यत् प्रत्यय होते हैं)।

उरसः — V. iv. 82
(प्रति शब्द से उत्तर) उरस् शब्दान्त प्रातिपदिक से (समासान्त अच् प्रत्यय होता है, यदि वह उरस् शब्द सप्तमी विभक्ति के अर्थवाला हो तो)।

उरसः — V. iv. 93
(प्रधान को कहने में वर्तमान) उरस् शब्दान्त (तत्पुरुष) से (समासान्त टच् प्रत्यय होता है)।

उरसि... — I. iv. 74
देखें — उरसिमनसी I. iv. 74

उरसिमनसी — I. iv. 75
उरसि और मनसि शब्द (कृञ् के योग में विकल्प से निपात और गति संज्ञक होते हैं, अनत्याधान अर्थ में)।

...उरु... — VI. iv. 157
देखें — प्रियस्थिर० VI. iv. 157

...उरु... — VIII. iv. 26
देखें — धातुस्थोरुषुभ्यः VIII. iv. 26

...उरुष्याणाम् — VI. iii. 132
देखें — तुनुघ० VI. iii. 132

...उल्लाघाः — VIII. ii. 55
देखें — फुल्लक्षीब० VIII. ii. 55

...उवङौ — VI. iv. 77
देखें — इयङुवङौ VI. iv. 77

...उवङ्स्थानौ — I. iv. 4
देखें — इयङुवङ्स्थानौ — I. iv. 4

...उशनस् — VII. i. 94
देखें — ऋदुशनस्० VII. i. 94

उशीनरेषु — II. iv. 20
(कन्याशब्दान्त तत्पुरुष संज्ञा विषय में नपुंसकलिंग में होता है), यदि वह कन्था उशीनर जनपदसम्बन्धी हो तो।

उशीनरेषु — IV. ii. 117
उशीनर देश में (जो वाहीक ग्राम वृद्धसंज्ञक है, उनसे विकल्प से ठञ् तथा ञिठ् शैषिक प्रत्यय होते हैं)।

उष... — III. i. 38
देखें — उषविदजागृभ्यः III. i. 38

उषविदजागृभ्यः — III. i. 36
उष, विद तथा जागृ धातुओं से (विकल्प से अमन्त्र विषय में लिङ् परे रहते आम् प्रत्यय होता है)।

...उषसः — IV. ii. 30
देखें — वाय्वृतुपित्रुषसः IV. ii. 30

उषसः — VI. iii. 30
(देवताद्वन्द्व में उत्तरपद परे रहते) उषस् शब्द को (उषासा आदेश होता है)।

...उषसी — VI. ii. 117
देखें — अलोमोषसी VI. ii. 117

उषासा — VI. iii. 30
(देवताद्वन्द्व में उत्तरपद परे रहते उषस् शब्द को) उषासा आदेश होता है।

...उष्ट्र... — IV. ii. 38
देखें — गोत्रोक्षोष्ट्रो० IV. ii. 38

उष्ट्रः — VI. ii. 40
(सादि तथा वामि शब्द उत्तरपद रहते पूर्वपद) उष्ट्र शब्द को (प्रकृतिस्वर होता है)।

उष्ट्रात् — IV. iii. 154
(षष्ठीसमर्थ) उष्ट्र प्रातिपदिक से (विकार और अवयव अर्थों में वुञ् प्रत्यय होता है)।

...उष्णाभ्याम् — V. ii. 72
देखें — शीतोष्णाभ्याम् V. ii. 72

...उष्णिक्... — III. ii. 59
देखें — ऋत्विग्दधृक्० III. ii. 59

...उष्णिके — V. ii. 71
देखें — ब्राह्मणकोष्णिके V. ii. 71

उष्णे — VI. iii. 106
उष्ण शब्द उत्तरपद रहते (कु शब्द को कव आदेश भी होता है, एवं विकल्प से का आदेश भी होता है)।

...उस्... — III. iv. 82
देखें — णलतुसुस्० III. iv. 82

...उस्... — VII. iii. 51
देखें — इसुसुक्तान्तात् VII. iii. 51

उसि — VI. i. 93
(अपदान्त अवर्ण से उत्तर) उस् परे रहते (पूर्व पर के स्थान में पररूप एकादेश होता है)।

...उसोः — VIII. iii. 44
देखें — इसुसोः VIII. iii. 44

ऊ

ऊ ... — I. ii. 26
देखें — व्युपधात् I. ii. 26

ऊ ... — I. ii. 27
देखें — ऊकालः I. ii. 27

ऊ ...— I. iv. 3
देखें — यू I. iv. 3

ऊकः — III. ii. 165
(जागृ धातु से वर्तमान काल में) ऊक प्रत्यय होता है, (तच्छीलादि कर्त्ता हो तो)।

ऊकालः — I. ii. 27
उकाल, ऊकाल तथा ऊ३ काल अर्थात् एकमात्रिक, द्विमात्रिक तथा त्रिमात्रिक (अच् की यथासंख्य करके ह्रस्व, दीर्घ और प्लुत संज्ञा होती है)।

ऊङ् — IV. i. 66
(उकारान्त मनुष्यजातिवाची प्रातिपदिकों से स्त्रीलिंग में) ऊङ् प्रत्यय होता है।

ऊङ् — VI. i. 169
देखें — ऊङ्धात्वोः VI. i. 169

ऊङ्धात्वोः — VI. i. 169
ऊङ् तथा धातु का (जो उदात्त के स्थान में हुआ यण्, हल् पूर्ववाला हो तो उससे उत्तर अजादि सर्वनामस्थान-भिन्न विभक्ति को उदात्त नहीं होता)।

ऊठ्... — VI. i. 165
देखें — ऊडिदम्० VI. i. 165

...ऊठ् — VI. iv. 19
देखें — शूठ्० VI. iv. 19

ऊठ् — VI. iv. 132
(वाह् अन्तवाले भसञ्ज्ञक अङ्ग को सम्प्रसा पञ्ज्ञक) ऊठ् होता है।

...ऊठ्सु — VI. i. 86
देखें — एत्येधत्यठ्सु VI. i. 86

ऊडिदम्पदाद्यप्पुम्रैद्युभ्यः — VI. i. 168
ऊठ्, इदम्, पदादि, अप्, पुम्, रै तथा दिव् शब्दों से उत्तर (सर्वनामस्थानभिन्न विभक्ति उदात्त होती है)।

...ऊत् ...— I. i. 11
देखें — ईदूदेत् I. i. 11

ऊत् — VI. iii. 97
(अनु से उत्तर अप् शब्द को) ऊकारादेश होता है, (देश को कहने में)।

ऊत् — VI. iv. 89
(गोह् अङ्ग की उपधा को) ऊकारादेश होता है, (अजादि प्रत्यय परे रहते)।

ऊति... — III. iii. 97
देखें — ऊतियूति० III. iii. 97

...ऊति... — VI. iii. 98
देखें — आशीराशास्था० VI. iii. 98

ऊतियूतिजूतिसातिहेतिकीर्तयः — III. iii. 97
क्तिन्प्रत्ययान्त ऊति, यूति, जूति, साति, हेति और कीर्ति (शब्द निपातन से सिद्ध होते हैं)।

...ऊतौ — I. i. 18
देखें — ईदूतौ I. i. 18

...ऊदितः — VII. ii. 44
देखें — स्वरतिसूति० VII. ii. 44

...ऊधस्... — VIII. ii. 70
देखें — अम्नरूधर० VIII. ii. 70

ऊधसः — IV. i. 25
(बहुव्रीहि समास में वर्त्तमान ऊधस् शब्दान्त प्रातिपदिक से (स्त्रीलिंग में ङीप् प्रत्यय होता है)।

ऊधसः — V. iv. 131
ऊधस् शब्दान्त (बहुव्रीहि) को (समासान्त अनङ् आदेश होता है)।

ऊनयति... — III. i. 51
देखें — ऊनयतिध्वनयति० III. i. 51

ऊनयतिध्वनयत्येलयत्यर्दयतिभ्यः — III. i. 51
ऊन, ध्वन, इल, अर्द– इन ण्यन्त धातुओं से उत्तर (वेद-विषय में च्लि के स्थान में चङ् आदेश नहीं होता)।

...ऊनार्थ... — II. i. 30
देखें — पूर्वसदृशसमो० II. i. 30

ऊनार्थ... — VI. ii. 153
देखें — ऊनार्थकलहम् VI. ii. 153

ऊनार्थकलहम् — VI. ii. 153
(तृतीयान्त शब्द से परे उत्तरपद) ऊन = स्वल्प अर्थ के वाचक एवं कलह शब्द को (अन्तोदात्त होता है)।

ऊरूत्तरपदात् — IV. i. 69
ऊरु शब्द उत्तरपद वाले प्रातिपदिकों से (औपम्य गम्यमान होने पर स्त्रीलिंग में ऊङ् प्रत्यय होता है)।

...ऊर्जस्वल... — V. ii. 114
देखें — ज्योत्स्नातमिस्रा० V. ii. 114

...ऊर्जस्विन्... — V. ii. 114
देखें — ज्योत्स्नातमिस्रा० V. ii. 114

...ऊर्जि... -- III. ii. 177
देखें — भ्राजभास० III. ii. 177

...ऊर्णयोः — IV. iii. 155
देखें — ऊमोर्णयोः IV. iii. 155

ऊर्णायाः — V. ii. 123
ऊर्णा प्रातिपदिक से ('मत्वर्थ' में युस् प्रत्यय होता है)।

...ऊर्णावत् — V. iii. 118
देखें — अभिजिद्० V. iii. 118

...ऊर्णु... — VII. ii. 49
देखें — इवन्तर्ध० VII. ii. 49

ऊर्णोः — I. ii. 3
'ऊर्णुञ् आच्छादने' धातु से परे (इडादि प्रत्यय विकल्प से ङित्वत् होते हैं)।

ऊर्णोतेः — VII. ii. 6
ऊर्णुञ् अङ्ग को (परस्मैपदपरक इडादि सिच् परे रहते विकल्प से वृद्धि नहीं होती)।

ऊर्णोतेः — VII. iii. 90
(हलादि पित् सार्वधातुक परे रहते) 'ऊर्णुञ् आच्छादने' धातु को (विकल्प से वृद्धि होती है)।

ऊर्ध्वम् — V. iii. 83
(इस प्रकरण में कथित ठ तथा अजादि प्रत्ययों के परे रहते द्वितीय अच् से) बाद के शब्दरूप का (लोप हो जाता है)।

ऊर्ध्वमौहूर्त्तिके — III. iii. 9
दो घड़ी से ऊपर के (भविष्यत्काल) को कहना हो तो (लोडर्थलक्षण में वर्तमान धातु से लिङ् प्रत्यय विकल्प से होता है तथा लट् भी)।

ऊर्ध्वमौहूर्त्तिके — III. iii. 164
(प्रैष, अतिसर्ग तथा प्राप्तकाल अर्थ गम्यमान हों तो) मुहूर्त्त से ऊपर के काल को कहने में (धातु से लिङ् प्रत्यय होता है, तथा चकार से यथाप्राप्त कृत्यसंज्ञक एवं लोट् प्रत्यय होते हैं)।

ऊर्ध्वात् — V. iv. 130
ऊर्ध्व शब्द से उत्तर (जो जानु शब्द, उसको विकल्प से समासान्त ज्ञु आदेश होता है, बहुव्रीहि समास में)।

ऊर्ध्वे — III. iv. 44
(कर्तृवाची) ऊर्ध्व शब्द उपपद हो तो ('शुषि शोषणे' तथा 'पूरी आप्यायने' धातुओं से णमुल् प्रत्यय होता है)।

ऊर्यादि ... — I. iv. 60
देखें — ऊर्यादिच्विडाचः I. iv. 60

ऊर्यादिच्विडाचः — I. iv. 60
ऊर्यादिशब्द, च्व्यन्त और डाजन्त शब्द (भी गति तथा निपातसंज्ञक होते हैं, क्रियायोग में)।

...ऊर्वष्ठीव... — V. iv. 77
देखें — अचतुर० V. iv. 77

ऊलोपः — III. iv. 32
(वर्षा का प्रमाण गम्यमान हो तो कर्म उपपद रहते ण्यन्त पूरी धातु से णमुल् प्रत्यय होता है, तथा इस पूरी धातु के) ऊकार का लोप (विकल्प से) होता है।

ऊष... — V. ii. 107
देखें — ऊषसुषिमुष्कमधः V. ii. 107

ऊषसुषिमुष्कमधः — V. ii. 107
ऊष, सुषि, मुष्क तथा मधु प्रातिपदिकों से ('मत्वर्थ' में र प्रत्यय होता है)।

...ऊष्मभ्याम् — III. i. 16
देखें — वाष्पोष्मभ्याम् III. i. 16

ऊहतेः — VII. iv. 23
(उपसर्ग से उत्तर) 'ऊह वितर्के' अङ्ग को (यकारादि कित्, ङित् प्रत्यय परे रहते ह्रस्व होता है)।

ऊँ — I. i. 16
उञ् को ऊँ आदेश (प्रगृह्य सञ्ज्ञक होता है, शाकल्य के अनुसार)।

ऊ३... — I. ii. 27
देखें — ऊकालः I. ii. 27

ऋ

ऋ — प्रत्याहार सूत्र II
— भगवान् पाणिनि द्वारा अपने द्वितीय प्रत्याहार सूत्र में पठित प्रथम वर्ण जो अपने सम्पूर्ण अठारह भेदों का ग्राहक होता है।

— पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्ण-माला का चौथा वर्ण।

ऋ ... — III. i. 125
देखें — ऋहलोः III. i. 125

...ऋ ...— III. ii. 171
देखें — आदृगम० III. ii. 171

...ऋ ...— VII. ii. 74
देखें — स्मिपूङ्० VII. ii. 74

...ऋ ...— VII. iv. 11
देखें — ऋच्छत्यृताम् VII. iv. 11

ऋ ...— VII. iv. 16
देखें — ऋदृशः VII. iv. 16

ऋलृक् — प्रत्याहार सूत्र II
पाणिनीय अष्टाध्यायी का द्वितीय प्रत्याहार सूत्र। इस सूत्र के ककार से तीन– अक्, इक् और उक् प्रत्याहार बनते हैं। ऋ से 18 प्रकार के और लृ से 12 प्रकार के भेदों का ग्रहण होता है।

...ऋक् ...— IV. iii. 72
देखें — द्व्यजृद्ब्राह्मण० IV. iii. 72

ऋक्... — V. iv. 73
देखें — ऋक्पूरब्धूः० V. iv. 73

ऋक्पूरब्धूःपथाम् — V. iv. 74
ऋक्, पुर्, अप्, धुर् तथा पथिन् शब्द अन्त में है जिस (समास) के, तदन्त से (समासान्त अ प्रत्यय होता है, यदि वह धुर् अक्षसम्बन्धी न हो तो)।

ऋक्षु — VIII. iii. 8
(नकारान्त पद को अम्परक छव् प्रत्याहार परे रहते) पादयुक्त मन्त्रों में (दोनों प्रकार से होता है, अर्थात् एक पक्ष में रु एवं दूसरे पक्ष में नकार ही रहता है)।

...ऋक्साम... — V. iv. 77
देखें — अचतुर० V. iv. 77

ऋगयनादिभ्यः — IV. iii. 73
(षष्ठीसमर्थ तथा सप्तमीसमर्थ व्याख्यातव्यनाम) ऋगय-नादि प्रातिपदिकों से (भव और व्याख्यान अर्थों में अण् प्रत्यय होता है)।

...ऋग्यजुष... — V. iv. 77
देखें — अचतुर० V. iv. 77

ऋचः — VI. iii. 54
ऋचा-सम्बन्धी (पाद शब्द को श परे रहते पद् आदेश होता है)।

...ऋचः — VII. iii. 66
देखें — यजयाच० VII. iii. 66

ऋचि — IV. i. 9
(पादन्त प्रातिपदिक से स्त्रीलिङ्ग में टाप् प्रत्यय होता है), ऋचा वाच्य हो तो।

ऋचि — VI. iii. 132
(तु, नु, घ, मक्षु, तङ्, कु, त्र, उरुष्य – इन शब्दों को) ऋचा-विषय में (दीर्घ हो जाता है)।

ऋचि — VII. iv. 39

(कवि, अध्वर, पृतना – इन अङ्गों को क्यच् परे रहते लोप होता है), पादबद्ध मन्त्र के विषय में।

...ऋच्छ... — VII. iii. 78

देखें — पिबजिघ्र० VII. iii. 78

ऋच्छति — VII. iv. 11

देखें — ऋच्छत्यृताम् VII. iv. 11

ऋच्छत्यृताम् — VII. iv. 11

ऋच्छ, ऋ तथा ऋकारान्त अङ्गों को (लिट् परे रहते गुण होता है)।

...ऋच्छिभ्याम् — I. iii. 29

देखें — गम्यृच्छिभ्याम् I. iii. 29

ऋजोः — VI. iv. 162

ऋजु अङ्ग के (ऋकार के स्थान में विकल्प से र आदेश होता है; वेद विषय में; इष्ठन्, इमनिच्, ईयसुन् परे रहते)।

...ऋण... — III. iii. 111

देखें — पर्यायार्हर्णोत्पत्तिषु III. iii. 111

ऋणम् — VIII. ii. 60

ऋणम् शब्द में ऋ धातु से उत्तर क्त के तकार को नकारादेश निपातन है, (आधमर्ण्य विषय में)।

ऋणे — II. i. 42

ऋण = कर्जा गम्यमान होने पर (कृत्य प्रत्ययान्त के साथ सप्तम्यन्त का तत्पुरुष समास होता है)।

ऋणे — II. iii. 24

(कर्तृभिन्न हेतुवाची शब्द में) ऋण वाच्य होने पर (पञ्चमी विभक्ति होती है)।

ऋणे — IV. iii. 47

(सप्तमीसमर्थ कालवाची प्रातिपदिकों से 'देने योग्य है' कहना हो और) ऋण अभिधेय हो तो (यथाविहित प्रत्यय होता है)।

ऋत्... — IV. i. 5

देखें — ऋन्नेभ्यः IV. i. 5

...ऋत्... — IV. iii. 72

देखें — द्व्यज्‌दृद्ब्राह्मण० IV. iii. 72

ऋत्... — VII. i. 94

देखें — ऋदुशन० VII. i. 94

ऋत्... — VII. ii. 70

देखें — ऋद्धनोः VII. ii. 70

ऋत् — VII. iv. 7

(चङ्परक णि परे रहते अङ्ग की उपधा ऋवर्ण के स्थान में विकल्प से) ऋकारादेश होता है।

ऋत्... — VIII. iv. 25

देखें — ऋद्वग्रहात् VIII. iv. 25

...ऋतः — I. ii. 24

देखें — वञ्चिलुञ्च्यृतः I. ii. 24

ऋतः — IV. iii. 78

(पञ्चमीसमर्थ विद्या तथा योनि-सम्बन्धवाची) ऋकारान्त प्रातिपदिकों से ('आगत' अर्थ में ठञ् प्रत्यय होता है)।

ऋतः — IV. iv. 49

(षष्ठीसमर्थ) ऋकारान्त प्रातिपदिक से (न्याय्य व्यवहार अर्थ में अञ् प्रत्यय होता है)।

...ऋतः — V. iv. 153

देखें — नद्यृतः V. iv. 153

ऋतः — V. iv. 158

(बहुव्रीहि समास में) ऋवर्णान्त शब्दों से (वेदविषय में समासान्त कप् प्रत्यय नहीं होता)।

ऋतः — VI. i. 107

ऋकार से उत्तर (ङसि तथा ङस् का अकार हो तो पूर्वपर के स्थान में उकारादेश होता है, संहिता के विषय में)।

ऋतः — VI. iii. 22

(विद्याकृत सम्बन्धवाची तथा योनिकृत सम्बन्धवाची) ऋकारान्त शब्दों से उत्तर (षष्ठी का उत्तरपद परे रहते अलुक् होता है)।

ऋतः — VI. iii. 24

(विद्या तथा योनि सम्बन्धवाची) ऋकारान्त शब्दों के (द्वन्द्व समास में उत्तरपद परे रहते अनङ् आदेश होता है)।

ऋतः — VI. iv. 161

(हल् आदि वाले भसञ्ज्ञक अङ्ग के लघु) ऋकार के स्थान में (र आदेश होता है; इष्ठन्, इमनिच् तथा ईयसुन् परे रहते)।

ऋतः — VII. ii. 43

(संयोग है आदि में जिसके, ऐसे) ऋकारान्त धातु से उत्तर (भी आत्मनेपदपरक लिङ् सिच् को विकल्प से इट् आगम होता है)।

ऋतः — VII. ii. 63

(तास् परे रहते नित्य अनिट्), ऋकारान्त धातु से उत्तर (थल् को तास् के समान ही इट् आगम नहीं होता, भारद्वाज आचार्य के मत में)।

ऋृतः — VII. ii. 100
(तिसृ तथा चतसृ अङ्गों के) ऋकार के स्थान में (अजादि विभक्ति परे रहते रेफ आदेश होता है)।

ऋृतः — VII. iii. 110
ऋकारान्त अङ्ग को (ङि तथा सर्वनामस्थान विभक्ति परे रहते गुण होता है)।

ऋृतः — VII. iv. 10
(संयोग आदि में है जिसके, ऐसे) ऋकारान्त अङ्ग को (भी गुण होता है, लिट् परे रहते)।

ऋृतः — VII. iv. 27
ऋकारान्त अङ्ग को (कृत्-भिन्न एवं सार्वधातुक-भिन्न यकार तथा च्वि परे हो तो रीङ् आदेश होता है)।

ऋृतः — VII. iv. 92
ऋकारान्त अङ्ग के (अभ्यास को भी रुक्, रिक् तथा रीक् आगम होता है, यङ्लुक् होने पर)।

...ऋृताभ्याम् — VIII. iii. 109
देखें — पृतनर्त्ताभ्याम् VIII. iii. 109

...ऋृति... — III. ii. 43
देखें - मेघर्ति० III. ii. 43

ऋृति — VI. i. 88
(अवर्णान्त उपसर्ग से उत्तर) ऋकारादि धातु के परे रहते (पूर्व पर दोनों के स्थान में वृद्धि एकादेश होता है, संहिता के विषय में)।

ऋृति — VI. i. 124
ऋकार परे रहते (अक् को शाकल्य आचार्य के मत में प्रकृतिभाव तथा साथ ही उस अक् को ह्रस्व भी हो जाता है)।

...ऋृतु... — IV. ii. 30
देखे — वाय्वृतुपित्रुषसः IV. ii. 30

...ऋृतु... — IV. iii. 16
देखें — सन्धिवेला० IV. iii. 16

...ऋृते — II. iii. 29
देखें — अन्यारादितरर्ते० II. iii. 29

ऋृतेः — III. i. 29
घृणार्थक सौत्र ऋत् धातु से (ईयङ् प्रत्यय होता है)।

ऋृतोः — V. i. 104
(प्रथमासमर्थ) ऋतु-प्रातिपदिक से (षष्ठ्यर्थ में अण् प्रत्यय होता है, यदि वह प्रथमासमर्थ ऋतुप्रातिपदिक प्राप्त समानाधिकरण वाला हो तो)।

ऋृतोः — VII. iii. 11
(अवयववाची पूर्वपद से उत्तर) ऋतुवाची (उत्तरपद) शब्द के (अचों में आदि अच् को ञित्, णित् तथा कित् तद्धित प्रत्यय परे रहते वृद्धि होती है)।

ऋृत्विक्... — III. ii. 59
देखें — ऋृत्विग्दधृक्० III. ii. 59

...ऋृत्विक्... — VI. ii. 133
देखें — आचार्यराज० VI. ii. 133

ऋृत्विग्दधृक्स्रग्दिगुष्णिगञ्चुयुजिक्रुञ्चाम् — III. ii. 59
ऋत्विक्, दधृक्, स्रक्, दिक्, उष्णिक् - ये पाँच शब्द क्विन् प्रत्ययान्त निपातन किये जाते हैं तथा अञ्चु, युजि, क्रुञ्च् धातुओं से (भी क्विन् प्रत्यय होता है)।

...ऋृत्विग्भ्याम् — V. i. 70
देखें — यज्ञर्त्विग्भ्याम् V. i. 70

ऋृत्व्य... — VI. iv. 175
देखें — ऋृत्व्यवास्त्व्य० VI. iv. 175

ऋृत्व्यवास्त्व्यवास्त्वमाध्वीहिरण्ययानि — VI. iv. 175
ऋत्व्य, वास्त्व्य, वास्त्व, माध्वी, हिरण्यय —ये शब्दरूप निपातन किये जाते हैं, (वेद विषय में)।

ऋृदवग्रहात् — VIII. iv. 25
(वेद विषय में) ऋकारान्त अवगृह्यमाण = अलग पढ़े गये या पढ़े जाने योग्य पूर्वपद से उत्तर (नकार को णकारादेश होता है)।

...ऋृदिताम् — VII. iv. 2
देखें — अग्लोपिशास्वृदिताम् VII. iv. 2

ऋृदुपधस्य — VI. i. 58
(उपदेश में अनुदात्त तथा) ऋकार उपधा वाली जो धातु, उसको (अम् आगम विकल्प से होता है, झलादि प्रत्यय परे रहते)।

ऋृदुपधस्य — VII. iii. 90
ऋकार उपधा वाले अङ्ग के (अभ्यास को यङ् तथा यङ्लुक् में रीक् आगम होता है)।

ऋृदुपधात् — III. i. 110
ऋकारोपध धातुओं से (भी क्यप् प्रत्यय होता है, क्लृपि और चृति धातुओं को छोड़कर)।

ऋृदुशनस्पुरुदंसोऽनेहसाम् — VII. i. 94
ऋकारान्त तथा उशनस्, पुरुदंसस्, अनेहस् अङ्गों को (भी सम्बुद्धिभिन्न सु परे रहते अनङ् आदेश होता है)।

ऋद्दृशः — VII. iv. 16

ऋवर्णान्त तथा दृशिर् अङ्ग को (अङ् परे रहते गुण होता है)।

ऋद्दोः — III. iii. 57

ऋकारान्त तथा उवर्णान्त धातुओं से (कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में अप् प्रत्यय होता है)।

ऋद्धनोः — VII. ii. 70

ऋकारान्त तथा हन् धातु के (स्य को इट् आगम होता है)।

...ऋध... — VII. ii. 49

देखें — इवन्तर्ध० VII. ii. 49

...ऋधाम् — VII. iv. 55

देखें— आप्ज्ञप्यृधाम् VII. iv. 55

ऋन्नेभ्यः — IV. i. 5

ऋकारान्त तथा नकारान्त प्रातिपदिकों से (स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय होता है)।

...ऋभुक्षाम् — VII. i. 85

देखें — पथिमथ्यृभुक्षाम् VII. i. 85

...ऋश्य... — IV. ii. 79

देखें — अरीहणकृशाश्व० IV. ii. 79

ऋषभ... — V. i. 14

देखें — ऋषभोपानहोः V. i. 14

...ऋषभेभ्यः — V. iii. 91

देखें — वत्सोक्षा० V. iii. 91

ऋषभोपानहोः — V. i. 14

(चतुर्थीसमर्थ विकृतिवाची) ऋषभ और उपानह् प्रातिपदिकों से ('उसकी विकृति के लिए प्रकृति' अभिधेय होने पर 'हित' अर्थ में ञ्य प्रत्यय होता है)।

ऋषि... — III. ii. 186

देखें — ऋषिदेवतयोः III. ii. 186

ऋषि... — IV. i. 114

देखें — ऋष्यन्धकवृष्णि० IV. i. 114

ऋषिदेवतयोः — III. ii. 186

(पूञ् धातु से) ऋषिवाची (करण) तथा देवतावाची (कर्ता) में (इत्र प्रत्यय होता है, वर्तमान काल में)।

ऋषिभ्याम् — IV. iii. 103

(तृतीयासमर्थ) ऋषिवाची (काश्यप और कौशिक) प्रातिपदिकों से (प्रोक्त अर्थ में णिनि प्रत्यय होता है)।

ऋषी — VI. i. 148

(प्रस्कण्व तथा हरिश्चन्द्र शब्द में सुट् का निपातन किया जाता है), ऋषि अभिधेय हो तो।

ऋषेः — IV. iii. 69

(षष्ठी तथा सप्तमीसमर्थ व्याख्यातव्यनाम) ऋषिवाची प्रातिपदिकों से (भव, व्याख्यान अर्थों में अध्याय गम्यमान होने पर ही ठञ् प्रत्यय होता है)।

ऋषौ — IV. iv. 96

(षष्ठीसमर्थ हृदय शब्द से बन्धन अर्थ में भी) वेद अभिधेय होने पर (यत् प्रत्यय होता है)।

ऋषौ — VI. iii. 129

(मित्र शब्द उपपद रहते भी) ऋषि अभिधेय होने पर (विश्व शब्द को दीर्घ हो जाता है)।

ऋष्यन्धकवृष्णिकुरुभ्यः — IV. i. 114

ऋषिवाची तथा अन्धक, वृष्णि और कुरु वंश वाले समर्थ प्रातिपदिकों से (भी अपत्य अर्थ में अण् प्रत्यय होता है)।

ऋहलोः — III. i. 124

ऋवर्णान्त 'और' हलन्त धातुओं से (ण्यत् प्रत्यय होता है)।

ॠ

ॠत्... — III. iii. 57

देखें — ऋद्दोः III. iii. 57

ॠतः — VII. i. 100

ॠकारान्त (धातु अङ्ग) को (इकारादेश होता है)।

...ॠतः — VII. ii. 38

देखें — वॄतः VIII. ii. 38

...ॠताम् — VII. iv. 11

देखें — ऋच्छत्यॄताम् VII. iv. 11

ऌ

ऌ — प्रत्याहार सूत्र II

— भगवान् पाणिनि द्वारा द्वितीय प्रत्याहार सूत्र में पठित द्वितीय वर्ण, जो अपने सम्पूर्ण बारह भेदों का ग्राहक होता है।

— पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का पांचवां वर्ण।

....ऌदितः — III. iv. 55

देखें — **पुषादिद्युता० III. iv. 55**

ए

ए — प्रत्याहार सूत्र III

— आचार्य पाणिनि द्वारा तृतीय प्रत्याहार सूत्र में पठित प्रथम वर्ण, जो अपने सम्पूर्ण बारह भेदों का ग्राहक होता है।

— पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का छठा वर्ण।

ए — III. iv. 79

(टित् अर्थात् लट्, लिट्, लुट्, लृट्, लेट्, लोट् लकारों के जो आत्मनेपद आदेश — त, आताम्, झ आदि, उनके टि भाग को) एकार आदेश हो जाता है।

एः — III. iii. 56

इवर्णान्त धातुओं से (कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में अच् प्रत्यय होता है)।

एः — III. iv. 86

(लोट् लकार के जो तिप् आदि आदेश, उनके) इकार को (उकार आदेश होता है)।

एः — VI. iv. 67

(कित्, ङित् लिङ् आर्धधातुक परे रहते घु, मा, स्था, गा, पा, हा तथा सा – इन अङ्गों को) एकारादेश हो जाता है।

एः — VI. iv. 82

(धात्ववयव असंयोगपूर्व अनेकाच्) इवर्णान्त अङ्ग को (अच् परे रहते यणादेश होता है)।

...एक... — II. i. 48

देखें — **पूर्वकालैकसर्वजरत्० II. i. 48**

एक... — V. ii. 118

देखें — **एकगोपूर्वात् V. ii. 118**

...एक... — V. iii. 15

देखें — **सर्वैकान्य० V. iii. 15**

एक — VI. iii. 61

एक शब्द को (तद्धित तथा उत्तरपद परे रहते ह्रस्व होता है)।

एक... — VIII. i. 65

देखें — **एकान्याभ्याम् VIII. i. 65**

एकः — IV. i. 93

(गोत्र में) एक ही (प्रत्यय) होता है।

एकः — VI. i. 81

(पूर्व और पर दोनों के स्थान में) एक आदेश होगा, (यह अधिकृत होता है)।

एकगोपूर्वात् — V. ii. 118

एक शब्द जिसके पूर्व में हो, तथा गोशब्द जिसके पूर्व में हो; ऐसे प्रातिपदिक से (मत्वर्थ में नित्य ही ठञ् प्रत्यय होता है)।

एकदिक् — IV. iii. 112

(तृतीयासमर्थ प्रातिपदिक से) समानदिशा अर्थ में (यथाविहित प्रत्यय होता है)।

...एकदेश... — V. iv. 87

देखें — **सर्वैकदेश० V. iv. 87**

एकदेशिना — II. ii. 1

(पूर्व, अपर, अधर, उत्तर – ये सुबन्त शब्द एकद्रव्यवाची) एकदेशी = अवयवी (समर्थ सुबन्त) के साथ (विकल्प से समास को प्राप्त होते हैं और वह तत्पुरुष समास होता है)।

एकधुरात् — IV. iv. 79

(द्वितीयासमर्थ) एकधुर प्रातिपदिक से ('ढोता है' अर्थ में ख प्रत्यय तथा उसका लुक् होता है)।

एकम् — VIII. i. 9

(द्वित्व किये हुये) एक शब्द को (बहुव्रीहि के समान कार्य हो जाता है)।

...एकयोः — I. iv. 22
देखें — **द्व्येकयोः I. iv. 22**

एकवचन... — I. iv. 101
देखें — **एकवचनद्विवचनबहुवचनानि I. iv. 101**

एकवचनद्विवचनबहुवचनानि — I. iv. 101
(उन तिङों के तीन-तीन अर्थात् त्रिक की एक-एक करके क्रम से) एकवचन, द्विवचन और बहुवचन संज्ञा होती है।

एकवचनम् — I. ii. 61
(वेदविषय में पुनर्वसु नक्षत्र के द्वित्व अर्थ में विकल्प से) एकत्व होता है।

एकवचनम् — II. iii. 49
(आमन्त्रितसंज्ञक प्रथमा विभक्ति का) एकवचन (संबुद्धिसञ्ज्ञक होता है)।

एकवचनम् — II. iv. 1
(द्विगु समास) एकवचनान्त होता है।

एकवचनस्य — VII. i. 32
(युष्मद्, अस्मद् अङ्ग से उत्तर पञ्चमी के) एकवचन के स्थान में (भी अत् आदेश होता है)।

एकवचनस्य — VIII. i. 22
(पद से उत्तर अपादादि में वर्तमान) एकवचन वाले (युष्मद्, अस्मद् पद) को (क्रमशः ते, मे आदेश होते हैं और वे अनुदात्त होते हैं)।

...एकवचनात् — V. iv. 43
देखें — **संख्यैकवचनात् V. iv. 43**

...एकवचने — I. iv. 22
देखें — **द्विवचनैकवचने I. iv. 22**

एकवचने — IV. iii. 3
एक अर्थ को कहने वाले (युष्मद्, अस्मद् शब्दों के स्थान में यथासङ्ख्य तवक, ममक आदेश होते हैं, उस खञ् तथा अण् प्रत्यय के परे रहते)।

एकवचने — VII. ii. 97
एक अर्थ का कथन करने वाले (युष्मद्, अस्मद् अङ्ग के मपर्यन्त भाग को क्रमशः त्व, म आदेश होते हैं)।

एकवत् — I. ii. 69
(नपुंसकलिङ्ग शब्द नपुंसकलिङ्गभिन्न शब्द अर्थात् स्त्रीलिङ्ग पुंल्लिङ्ग शब्दों के साथ शेष रह जाता है, तथा स्त्रीलिङ्ग पुंल्लिङ्ग शब्द हट जाते है एवं उस नपुंसकलिङ्ग शब्द को विकल्प से) एकवत् अर्थात् एक के समान कार्य (भी) हो जाता है, (यदि उन शब्दों में नपुंसकगुण एवं अनपुंसकगुण का ही वैशिष्ट्य हो, शेष प्रकृति आदि समान ही हो)।

एकवत् — I. iv. 105
(परिहास गम्यमान हो रहा हो तो भी, मन्य है उपपद जिसका, ऐसी धातु से युष्मद् उपपद रहते, समान अभिधेय होने पर युष्मद् शब्द का प्रयोग हो या न हो, मध्यम पुरुष हो जाता है तथा उस मन धातु से उत्तम पुरुष हो जाता है और उस उत्तम पुरुष को) एकवत् = एकत्व (भी) हो जाता है।

एकवर्जम् — VI. i. 152
(जिस एक पद में उदात्त या स्वरित विधान किया है, उसी के) एक अच् को छोड़कर (शेष पद अनुदात्त अच् वाला हो जाता है)।

एकविभक्ति — I. ii. 44
(समास विधीयमान होने पर) नियतविभक्तिवाला पद (भी उपसर्जन संज्ञक होता है, पूर्वनिपात उपसर्जन कार्य को छोड़कर)।

एकविभक्तौ — I. ii. 64
एक = समान विभक्ति के परे रहते (समानरूप वाले शब्दों में से एक शेष रह जाता है, अन्य हट जाते हैं)।

एकशः — I. iv. 101
(उन तिङों के तीन-तीन की) एक एक करके क्रम से (एकवचन, द्विवचन और बहुवचन संज्ञा होती है)।

एकशालायाः — V. iii. 109
एकशाला प्रातिपदिक से (इवार्थ में विकल्प से ठच् प्रत्यय होता है)।

एकशेषः — I. ii. 64
(समान रूप वाले शब्दों में से) एक शेष रह जाता है (अन्य हट जाते है, एक विभक्ति के परे रहते)।

एकश्रुति — I. ii. 33
(दूर से बुलाने में वाक्य) एकश्रुति = एक जैसा स्वर वाला हो जाता है।

एकस्मिन् — I. i. 20
एक में (भी आदि के समान और अन्त के समान कार्य होते हैं)।

एकस्मिन् — I. ii. 58
(जाति को कहने में) एकत्व अर्थ में (विकल्प करके बहुत्व हो जाता है)।

एकस्य — V. iii. 92
(किम्, यत् तथा तत् प्रातिपदिकों से दो में से) एक का (पृथक्करण अर्थ में डतरच् प्रत्यय होता है)।

एकस्य — V. iv. 19
एक शब्द के स्थान में ('क्रियागणन' अर्थ में सकृत् आदेश तथा सुच् प्रत्यय होता है)।

एकस्य — VI. iii. 75
(एक है आदि में जिसके, ऐसे नञ् को भी उत्तरपद परे रहते प्रकृतिभाव होता है तथा) एक शब्द को (आदुक् का आगम होता है)।

एकहलादौ — VI. iii. 58
(जिसको पूरा किया जाना चाहिये, तद्वाची) एक = असहाय हल् है आदि में जिसके, ऐसे शब्द के उत्तरपद रहते (विकल्प करके उदक शब्द को उद आदेश होता है)।

एकहल्मध्ये — VI. iv. 120
(लिट् परे रहते जिस अङ्ग के आदि को आदेश नहीं हुआ है, उसके) असहाय हलों के बीच में वर्तमान (अकार को एकारादेश तथा अभ्यासलोप हो जाता है; कित्, ङित् लिट् परे रहते)।

एका — I. iv. 1
('कडाराः कर्मधारये' II. ii. 38 सूत्र तक) एक (संज्ञा होती है, यह अधिकार है)।

एकाच् — I. i. 14
(आङ् से भिन्न) एक स्वर वाले (निपातसंज्ञक शब्दों की प्रगृह्य संज्ञा होती है)।

एकाच् — VI. iv. 163
(भसञ्ज्ञक) एक अच् वाला अङ्ग (प्रकृतिवत् बना रहता है; इष्ठन्, इमनिच्, ईयसुन् परे रहते)।

एकाच्... — VII. ii. 67
देखें — **एकाजाद्घसाम् VII. ii. 67**

एकाचः — III. i. 22
एक अच् है जिसमें, ऐसी (हलादि धातु) से (क्रियासमभिहार या अतिशय अर्थ में यङ् प्रत्यय होता है)।

एकाचः — VI. i. 1
(प्रथम) एक अच् वाले समुदाय को (द्वित्व हो जाता है)।

एकाचः — VI. i. 162
(सप्तमी बहुवचन सु के परे रहते) एक अच् वाले शब्द से उत्तर (तृतीया विभक्ति से लेकर आगे की विभक्तियों को उदात्त होता है)।

एकाचः — VI. iii. 67
(खिदन्त उत्तरपद रहते इजन्त) एकाच् को (अम् आगम होता है, और वह अम् प्रत्यय के समान भी माना जाता है)।

एकाचः — VII. ii. 10
(उपदेश में) एक अच् वाले (तथा अनुदात्त) धातु से उत्तर (इट् का आगम नहीं होता)।

एकाचः — VIII. ii. 37
(धातु का अवयव) जो एक अच् वाला (तथा झषन्त), उसके अवयव (बश् के स्थान में भष् आदेश होता है, झलादि सकार तथा झलादि ध्व शब्द के परे रहते, पदान्त में)।

एकाजाद्घसाम् — VII. ii. 67
(कृतद्विर्वचन) एकाच् धातु तथा आकारान्त एवं घस् से उत्तर (वसु को इट् आगम होता है)।

एकाजुत्तरपदे — VIII. iv. 12
एक अच् है उत्तरपद में जिस समास के, वहां (पूर्वपद में स्थित निमित्त से उत्तर प्रातिपदिकान्त, नुम् तथा विभक्ति के नकार को णकार आदेश होता है)।

एकात् — V. iii. 44
'एक' प्रातिपदिक से उत्तर (जो धा प्रत्यय, उसके स्थान में विकल्प से ध्यमुञ् आदेश होता है)।

एकात् — V. iii. 52
('अकेले' अर्थ में वर्तमान) 'एक' प्रातिपदिक से (आकिनिच् प्रत्यय तथा कन् और लुक् होते हैं)।

एकात् — V. iii. 94
एक प्रातिपदिक से (भी अपने अपने विषयों में डतरच् तथा डतमच् प्रत्यय होते हैं, प्राचीन आचार्यों के मत में)।

एकादशभ्यः — V. iii. 49
('भाग' अर्थ में वर्तमान पूरण-प्रत्ययान्त) एकादश सङ्ख्या से पहले पहले जो सङ्ख्यावाची शब्द, उनसे (स्वार्थ में अण् प्रत्यय होता है, वेद-विषय को छोड़कर)।

एकादिः — VI. iii. 75
एक है आदि में जिसके, ऐसे (नञ्) को (भी उत्तरपद परे रहते प्रकृतिभाव होता है, तथा एक शब्द को आदुक् का आगम होता है)।

एकादेशः — VIII. ii. 5
(उदात्त के साथ हुआ अनुदात्त का) एकादेश (उदात्त होता है)।

एकाधिकरणे — II. ii. 1
(पूर्व, अपर, अधर, उत्तर – ये सुबन्त) एकाधिकरणवाची = एकद्रव्यवाची (एकदेशी = अवयवी समर्थ सुबन्त) के साथ (विकल्प से समास को प्राप्त होते हैं और वह तत्पुरुष समास होता है)।

एकान्तरम् — VIII. i. 55
(आम् से उत्तर) एकपद का व्यवधान है जिसके मध्य में, ऐसे (आमन्त्रितसञ्ज्ञक) पद को (आमन्त्रित अर्थ में अनुदात्त नहीं होता)।

एकान्याभ्याम् — VIII. i. 65
(समान अर्थ वाले) एक तथा अन्य शब्दों से युक्त (प्रथम तिङन्त को विकल्प से अनुदात्त नहीं होता, वेदविषय में)।

...एकाभ्याम् — V. iv. 90
देखें — **उत्तमैकाभ्याम् V. iv. 90**

एकाल् — I. ii. 41
एक = असहाय अल् वाला (प्रत्यय अपृक्तसंज्ञक होता है)।

एकाहगमः — V. ii. 19
(षष्ठीसमर्थ अश्व प्रातिपदिक से) 'एक दिन में जाया जा सकने वाला मार्ग' कहना हो तो (खञ् प्रत्यय होता है)।

एकेषाम् — VIII. iii. 104
(यजुर्वेद में तकारादि युष्मद्, तत् तथा ततक्षुस् परे रहते इण् तथा कवर्ग से उत्तर सकार को) कुछ आचार्यों के मत में (मूर्धन्य आदेश होता है)।

एकैकस्य — VIII. ii. 86
(ऋकार को छोड़कर वाक्य के अनन्त्य गुरुसञ्ज्ञक वर्ण को) एक-एक करके (तथा अन्त्य के टि) को (भी प्राचीन आचार्यों के मत में प्लुत उदात्त होता है)।

...एङ् — I. i. 2
देखें — **अदेङ् I. i. 2**

एङ् — I. i. 74
(जिस समुदाय के अचों का आदि अच्) एङ् = ए, ओ में से कोई (हो, उसकी पूर्वदेश को कहने में वृद्ध संज्ञा होती है)।

एङ्... — VI. i. 67
देखें — **एङ्ह्रस्वात् VI. i. 67**

एङः — VI. i. 105
(पदान्त) एङ् से उत्तर (अकार परे रहते पूर्व पर के स्थान में पूर्वरूप एकादेश होता है, संहिता के विषय में)।

एङि — VI. i. 90
(अवर्णान्त उपसर्ग से उत्तर) एङ् आदिवाले (धातु) के परे रहते (पूर्व पर के स्थान में पररूप एकादेश होता है)।

एङ्ह्रस्वात् — VI. i. 68
एङन्त तथा ह्रस्वान्त प्रातिपदिक से उत्तर (हल् का लोप होता है, यदि वह हल् सम्बुद्धि का हो तो)।

एचः — I. i. 46
एच् = ए, ओ, ऐ, औ के स्थान में (ह्रस्वादेश करने में इक् ही ह्रस्व हो)।

एचः — VI. i. 44
(उपदेश अवस्था में) जो एजन्त धातु, उसको (आकारादेश हो जाता है, इत्सञ्ज्ञक शकारादि प्रत्यय परे हो तो नहीं होता)।

एचः — VI. i. 75
एच् = ए, ओ, ऐ, औ के स्थान में (यथासङ्ख्य करके अय्, अव्, आय्, आव् आदेश होते हैं; अच् परे रहते, संहिता- विषय में)।

एचः — VIII. ii. 107
(दूर से बुलाने के विषय से भिन्न विषय में अप्रगृह्यसञ्ज्ञक) एच् के (पूर्वार्द्ध भाग को प्लुत करने के प्रसङ्ग में आकारादेश होता है, तथा उत्तरवाले भाग को इकार उकार आदेश होते हैं)।

एचि — VI. i. 85
(अवर्ण से उत्तर जो एच् तथा) एच् के परे रहते (जो अवर्ण – इन दोनों पूर्व पर के स्थान में वृद्धि एकादेश होता है)।

...एजन्तः — I. i. 38
देखें — **मेजन्तः I. i. 38**

एजेः — III. ii. 28
'एजृ कम्पने', इस णिजन्त धातु से (कर्म उपपद रहते 'खश्' प्रत्यय होता है)।

...एणीपद... — V. iv. 120
देखें — **सुप्रातसुश्व० V. iv. 120**

एण्यः — IV. iii. 17
(प्रावृष् प्रातिपदिक से) एण्य प्रत्यय होता है।

एण्याः — IV. iii. 156
(षष्ठीसमर्थ एणी प्रातिपदिक से (विकार और अवयव अर्थों में ठञ् प्रत्यय होता है)।

...एत् — I. i. 11
देखें — **ईदूदेत् I. i. 11**

...एत्... — V. iv. 11
देखें — किमेत्तिङ० V. iv. 11

एत् — VI. iv. 119
(घु सञ्ज्ञक अङ्ग एवं अस् को) एकारादेश (तथा अभ्यास का लोप) होता है; (हि, क्ङित् परे रहते)।

एत् — VII. iii. 103
(अकारान्त अङ्ग को बहुवचन झलादि सुप् परे रहते) एकारादेश होता है।

एत... — V. iii. 4
देखें — एतेतौ V. iii. 4

एतः — III. iv. 90
(लोट् सम्बन्धी) जो एकार, उसे (आम् आदेश होता है)।

एतः — III. iv. 93
(लोट् लकार सम्बन्धी उत्तम पुरुष का) जो एकार, उसके स्थान में ('ऐ' आदेश होता है)।

एतः — III. iv. 96
(लेट् सम्बन्धी) जो एकार, उसके स्थान में (ऐकारादेश विकल्प से होता है, 'आत ऐ' सूत्र के विषय को छोड़कर)।

एतः — VIII. ii. 81
(असकारान्त अदस् शब्द के दकार से उत्तर) एकार के स्थान में (ईकारादेश भी होता है, एवं दकार को मकार भी होता है; बहुत पदार्थों को कहने में)।

एतत्...— VI. i. 128
देखें — एतत्तदोः VI. i. 128

...एतत्... — VI. ii. 162
देखें — इदमेतत्० VI. ii. 162

एतत्तदोः — VI. i. 128
(ककार जिनमें नहीं है तथा जो नञ् समास में वर्तमान नहीं हैं; ऐसे) एतत् तथा तत् शब्दों के (सु का लोप हो जाता है, हल् परे रहते; संहिता के विषय में)।

एतदः — II. iv. 33
(अन्वादेश में वर्तमान) एतत् के स्थान में (त्र और तस् प्रत्ययों के परे रहते अनुदात्त अश् होता है, तथा त्र और तस् भी अनुदात्त हो जाते हैं)।

एतदः — V. iii. 5
('दिक्शब्देभ्यः सप्तमी०' V. iii. 27 सूत्र तक कहे जाने वाले प्रत्ययों के परे रहते) एतत् के स्थान में (अन् आदेश होता है)।

एतयोः — IV. iii. 140
(षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिकों से भक्ष्य तथा आच्छादन-वर्जित) विकार तथा अवयव अर्थों में (लौकिक प्रयोग विषय में विकल्प से मयट् प्रत्यय होता है)।

एति... — III. i. 109
देखें — एतिस्तु० III. i. 109

एति — IV. iv. 42
(द्वितीयासमर्थ प्रतिपथ प्रातिपदिक से) 'जाता है'- अर्थ में (ठन् तथा ठक् प्रत्यय होते हैं)।

एति... — VI. i. 86
देखें — एत्येधत्यूठ्सु VI. i. 86

एति — VII. iii. 99
(गकार-भिन्न इण् तथा कवर्ग से उत्तर सकार को) एकार परे रहते (सञ्ज्ञाविषय में मूर्धन्य आदेश होता है)।

एति — VII. iv. 51
(तास् और अस् के सकार को एकारादेश होता है), एकार परे रहते।

एतिस्तुशास्वृदृजुषः — III. i. 109
इण्, ष्टुञ्, शासु, वृञ्, दृङ्, जुषी — इन धातुओं से (क्यप् प्रत्यय होता है)।

एतेः — VII. iv. 14
(उपसर्ग से उत्तर) 'इण् गतौ' अङ्ग को (यकारादि कित्, ङित् लिङ् परे रहते ह्रस्व होता है)।

एतेतौ — V. iii. 4
(इदम् शब्द के स्थान में रेफादि तथा थकारादि प्रत्ययों के परे रहते यथासङ्ख्य करके) एत तथा इत् आदेश होते हैं।

...एतेभ्यः — V. ii. 39
देखें — यत्तदेतेभ्यः V. ii. 39

एतेभ्यः — V. iv. 88
इन (सङ्ख्यावाची, अव्ययवाची तथा सर्व, एकदेशवाचक शब्द सङ्ख्यात और पुण्य शब्द) से उत्तर (अहन् शब्द के स्थान में अह्न आदेश होता है, तत्पुरुष समास में)।

एत्येधत्यूठ्सु — VI. i. 86
इण् गतौ धातु के एच् से पूर्व तथा एध एवं ऊठ् के अच् से पूर्व (जो अवर्ण तथा उस अवर्ण से उत्तर जो अच्, उन दोनों पूर्व पर के स्थान में संहिता के विषय में वृद्धि एकादेश होता है)।

...एदिताम् — VII. ii. 5
देखें — ह्म्यन्तक्षण० VII. ii. 5

...एध... – VI. iv. 29
देखें – अवोदैधौ० VI. iv. 29
...एधति... – VI. i. 86
देखें – एत्येधत्यूठ्सु VI. i. 86
एधाच् – V. iii. 46
(द्वि तथा त्रि सम्बन्धी धा प्रत्यय को विकल्प से) एधाच् आदेश (भी) होता है।

एनः – II. iv. 34
(अन्वादेश में वर्तमान इदम् और एतद् के स्थान में द्वितीया, टा और ओस् विभक्ति परे रहते) एन आदेश होता है।

एनप् – V. iii. 35
(दिशा, देश और काल अर्थों में वर्तमान पञ्चम्यन्तवर्जित सप्तमीप्रथमान्त दिशावाची उत्तर अधर और दक्षिण प्रातिपदिकों से विकल्प से) एनप् प्रत्यय होता है, (निकटता गम्यमान हो तो)।

एनपा – II. iii. 31
एनप् प्रत्ययान्त के योग में (द्वितीया विभक्ति होती है)।

....एय्... – VII. i. 2
देखें – आयनेयी० VII. i. 2
...एलयति – III. i. 51
देखें – ऊनयतिध्वनयति० III. i. 51
एव – I. ii. 65
(वृद्ध=गोत्र प्रत्ययान्त शब्द युवा प्रत्ययान्त के साथ शेष रह जाता है, यदि वृद्ध युव प्रत्यय-निमित्तक) ही (भेद हो तो)।

एव – I. iv. 8
(पति शब्द समास में) ही (घिसंज्ञक होता है)।

एव – II. ii. 20
(अव्यय के साथ उपपद का यदि समास होता है तो वह अमन्त अव्यय के साथ) ही (होता है, अन्य अव्ययों के साथ नहीं)।

एव – II. iv. 62
(बहुत्व अर्थ में वर्तमान तद्राजसंज्ञक प्रत्यय का लुक् होता है, स्त्रीलिंग को छोड़कर यदि वह बहुत्व उस तद्राजसंज्ञक-कृत) ही (हो तो)।

एव – III. i. 88
('तप सन्तापे' धातु के कर्ता को कर्मवद्भाव हो जाता है, यदि वह तप धातु तप कर्मवाली) ही हो, (अन्य किसी कर्म वाली न हो)।

एव – III. iv. 70
(कृत्यसंज्ञक प्रत्यय, क्त और खल् अर्थ वाले प्रत्यय भाव और कर्म में) ही (होते हैं)।

एव – III. iv. 111
(आकारान्त धातुओं से उत्तर लङ् के स्थान में जो झि आदेश उसको जुस् आदेश होता है, शाकटायन आचार्य के मत में) ही।

एव – IV. iii. 69
(षष्ठी तथा सप्तमीसमर्थ व्याख्यातव्यनाम ऋषिवाची प्रातिपदिकों से भव, व्याख्यान अर्थों में अध्याय गम्यमान होने पर) ही (ठञ् प्रत्यय होता है)।

एव – V. iii. 58
(इस प्रकरण में कहे गये अजादि प्रत्यय अर्थात् इष्ठन्, ईयसुन् गुणवाची प्रातिपदिक से) ही (होते हैं)।

एव – VI. i. 77
(यकारादि प्रत्यय-निमित्तक) ही (जो धातु का एच्, उसको यकारादि प्रत्यय के परे रहते वकारान्त अर्थात् अव्, आव् आदेश होते हैं, संहिता के विषय में)।

एव – VI. ii. 80
(शब्दार्थवाली प्रकृति है जिन णिनन्त शब्दों की, उनके उत्तरपद रहते) ही (उपमानवाची पूर्वपद को आद्युदात्त होता है)।

एव – VI. ii. 148
(सञ्ज्ञाविषय में आशीर्वाद गम्यमान हो तो कारक से उत्तर क्तान्त दत्त तथा श्रुत शब्दों को) ही (अन्त उदात्त होता है)।

एव – VI. iv. 145
(अहन् अङ्ग के टि भाग का ट तथा ख तद्धित प्रत्यय परे रहते) ही (लोप होता है)।

एव – VIII. i. 62
(च तथा ह का लोप होने पर प्रथम तिङन्त को अनुदात्त नहीं होता यदि) एव (शब्द वाक्य में अवधारण अर्थ में प्रयुक्त किया गया हो तो)।

एव — VIII. iii. 61

(अभ्यास के इण् से उत्तर स्तु तथा ण्यन्त धातुओं के आदेश सकार को) ही (षत्वभूत सन् परे रहते मूर्धन्य आदेश होता है)।

...एवम्... — III. iv. 27

देखें — **अन्यथैवंकथ० III. iv. 27**

...एवयुक्ते — VIII. i. 24

देखें — **चवाहा० VIII. i. 24**

एश्... — III. iv. 81

देखें — **एशिरेच् III. iv. 81**

एशिरेच् — III. iv. 81

(लिट् के स्थान में जो त और झ आदेश, उनको यथासङ्ख्य करके) एश् और इरेच् आदेश होते हैं।

...एषा... — VII. iii. 47

देखें — **भस्त्रैषा० VII. iii. 47**

एषाम् — V. ii. 78

(प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से) षष्ठ्यर्थ में (कन् प्रत्यय होता है, यदि वह प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक ग्राम का मुखिया हो तो)।

एषाम् — V. iii. 39

(दिशा, देश तथा काल अर्थों में वर्तमान सप्तम्यन्त, पञ्चम्यन्त तथा प्रथमान्त दिशावाची पूर्व, अधर तथा अवर प्रातिपदिकों से असि प्रत्यय होता है और प्रत्यय के साथ-साथ) इन शब्दों को (यथासङ्ख्य करके पुर्, अध् तथा अव् आदेश भी होते हैं)।

एहि... — VIII. i. 46

देखें — **एहिमन्ये VIII. i. 46**

एहिमन्ये — VIII. i. 46

एहि तथा मन्ये से युक्त (लृडन्त तिडन्त को प्रहास गम्यमान हो तो अनुदात्त नहीं होता)।

ऐ

ऐ — प्रत्याहार सूत्र IV

— आचार्य पाणिनि द्वारा अपने चतुर्थ प्रत्याहार सूत्र में पठित प्रथम वर्ण, जो अपने सम्पूर्ण बारह भेदों का ग्राहक होता है।

— पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का आठवां वर्ण।

ऐ — III. iv. 93

(लोट् लकार-सम्बन्धी उत्तम पुरुष का जो एकार, उसके स्थान में)'ऐ' आदेश होता है।

ऐ — III. iv. 95

(लेट् सम्बन्धी जो आकार उसके स्थान में) ऐकारादेश होता है।

ऐ — IV. i. 36

(अनुपसर्जन पूतक्रतु प्रातिपदिक से स्त्रीलिंग में ङीप् प्रत्यय होता है, तथा) ऐकारान्तादेश (भी) हो जाता है।

ऐकागारिकट् — V. i. 112

(प्रयोजनसमानाधिकरणवाची प्रथमासमर्थ एकागार प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में) 'ऐकागारिकट्' शब्द का निपातन किया जाता है, (चोर अभिधेय हो तो)।

...ऐक्ष्वाक... — VI. iv. 174

देखें — **दाण्डिनायनहास्ति० VI. iv. 174**

...ऐच् — I. i. 1

देखें — **आदैच् I. i. 1**

ऐच् — VII. iii. 3

(पदान्त यकार तथा वकार से उत्तर ञित्, णित्, कित् तद्धित परे रहते अङ्ग के अचों में आदि अच् को वृद्धि नहीं होती, किन्तु उन यकार वकार से पूर्व तो क्रमशः) ऐ, औ आगम होता है।

ऐचः — VIII. ii. 106

ऐच् के स्थान में (जब प्लुत का प्रसङ्ग हो तो उस ऐच् के अवयवभूत इकार उकार प्लुत होते हैं)।

ऐरक् — IV. i. 128

(चटका शब्द से अपत्य अर्थ में) ऐरक् प्रत्यय होता है।

ऐश्वर्ये — V. ii. 126

('स्वामिन्'– यह शब्द आमिन्-प्रत्ययान्त 'मत्वर्थ में' निपातन किया जाता है), ऐश्वर्य गम्यमान हो तो।

ऐश्वर्ये — VI. ii. 18

ऐश्वर्यवाची (तत्पुरुष समास) में (पति शब्द उत्तरपद रहते पूर्वपद को प्रकृतिस्वर हो जाता है)।

ऐषमस्... — IV. ii. 104
देखें — **ऐषमोह्यःश्वसः IV. ii. 104**

...ऐषमस्... — V. iii. 22
देखें — **सद्यःपरुत्० V. iii. 22**

ऐषमोह्यःश्वसः — IV. ii. 104
ऐषमस्, हास्, श्वस् प्रातिपदिकों से (विकल्प से त्यप् प्रत्यय होता है)।

ऐषमः = इस वर्ष में।

...ऐषुकार्यादिभ्यः — IV. ii. 53
देखें — **भौरिक्याद्यैषु० IV. ii. 53**

ऐस् — VII. i. 9
(अकारान्त अङ्ग से उत्तर भिस् के स्थान में) ऐस् आदेश होता है।

ओ

ओ — प्रत्याहारसूत्र III
— आचार्य पाणिनि द्वारा अपने तृतीय प्रत्याहार सूत्र में पठित द्वितीय वर्ण, जो अपने सम्पूर्ण बारह भेदों का ग्राहक होता है।
— पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का सातवाँ वर्ण।

ओ — IV. iv. 108
(सप्तमीसमर्थ समानोदर प्रातिपदिक से 'शयन किया हुआ' अर्थ में यत् प्रत्यय होता है, तथा समानोदर शब्द के) ओकार को (उदात्त होता है)।

ओः — III. i. 125
उवर्णान्त धातु से (आवश्यक द्योतित होने पर ण्यत् प्रत्यय होता है)।

...ओः — III. iii. 57
देखें — **ऋद्रोः III. iii. 57**

ओः — IV. ii. 70
(प्रथमा, तृतीया तथा षष्ठीसमर्थ) उवर्णान्त प्रातिपदिकों से (उपरिकथित चारों अर्थों में अञ् प्रत्यय होता है)।

ओः — IV. ii. 118
उवर्णान्त (देशवाची प्रातिपदिकों) से (शैषिक ठञ् प्रत्यय होता है)।

ओः — IV. iii. 136
(षष्ठीसमर्थ) उवर्णान्त प्रातिपदिक से (विकार और अवयव अर्थों में अञ् प्रत्यय होता है)।

ओः — VI. iv. 83
(धातु का अवयव, संयोग पूर्व नहीं है) जिस उवर्ण के, तदन्त (अनेकाच्) अङ्ग को (अजादि सुप् परे रहते यणादेश होता है)।

ओः — VI. iv. 146
(भसञ्ज्ञक) उवर्णान्त अङ्ग को (गुण होता है, तद्धित परे रहते)।

ओः — VII. iv. 80
(अवर्णपरक पवर्ग, यण् तथा जकार पर वाले) उवर्णान्त (अभ्यास) को (इकारादेश होता है, सन् परे रहते)।

ओकः — VII. iii. 64
('उच समवाये' धातु से क प्रत्यय परे रहते) ओक शब्द निपातन किया जाता है।

ओजःसहोम्भसा — IV. iv. 27
(तृतीयासमर्थ) ओजस्, सहस्, अम्भस् प्रातिपदिकों से ('व्यवहार करता है' अर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

ओजःसहोम्भस्तमसः — VI. iii. 3
ओजस्, सहस्, अम्भस् तथा तमस् शब्दों से उत्तर (तृतीया विभक्ति का उत्तरपद परे रहते अलुक् होता है)।

ओजस्... — IV. iv. 27
देखें — **ओजःसहोम्भसा IV. iv. 27**

ओजस्... — VI. iii. 3
देखें — **ओजःसहोम्भस्० VI. iii. 3**

ओजसः — IV. iv. 130
ओजस् प्रातिपदिक से (मत्वर्थ में यत् और ख प्रत्यय होते हैं; दिन अभिधेय हो तो, वेद विषय में)।

ओत् — I. i. 15
ओकारान्त (निपात प्रगृह्यसञ्ज्ञक होता है)।

ओत् — VI. iii. 111
(ढकार और रेफ का लोप होने पर सह् तथा वह् धातु के अवर्ण को) ओकारादेश होता है।

ओतः — VI. i. 90

ओकारान्त से उत्तर (अम् तथा शस् विभक्ति के अच् परे रहते पूर्व पर के स्थान में आकार एकादेश होता है, संहिता के विषय में)।

ओतः — VII. iii. 71

ओकारान्त अङ्ग का (श्यन् परे रहते लोप होता है)।

ओतः — VIII. iii. 20

ओकार से उत्तर (यकार का लोप होता है, गार्ग्य आचार्य के मत में)।

...ओदन... — VI. iii. 59
देखें — **मन्थौदन० VI. iii. 59**

...ओदनात् — IV. iv. 67
देखें — **श्राणामांसौदनात् IV. iv. 67**

ओदितः — VIII. ii. 45

ओकार इत् वाले धातुओं से उत्तर (भी निष्ठा के त् को नकारादेश होता है)।

...ओद्य... — VI. iv. 29
देखें — **अवोदैधौ० VI. iv. 29**

ओम्... — VI. i. 92
देखें — **ओमाङोः VI. i. 92**

ओम् — VIII. ii. 87

(प्रारम्भ में वर्तमान) ओम् शब्द को (प्लुत उदात्त होता है)।

ओमाङोः — VI. i. 92

(अवर्ण से उत्तर) ओम् तथा आङ् के परे रहते (भी पूर्व पर के स्थान में पररूप एकादेश होता है, संहिता के विषय में)।

...ओषधि... — IV. iii. 132
देखें — **प्राण्योषधिवृक्षेभ्यः IV. iii. 132**

ओषधि... — VIII. iv. 6
देखें — **ओषधिवनस्पतिभ्यः VIII. iv. 6**

ओषधिवनस्पतिभ्यः — VIII. iv. 6

ओषधिवाची तथा वनस्पतिवाची (पूर्वपद में स्थित निमित्त) से उत्तर (वन शब्द के नकार को विकल्प करके णकारादेश होता है)।

ओषधेः — V. iv. 37

(जाति में वर्तमान न हो तो) ओषधि प्रातिपदिक से (स्वार्थ में अण् प्रत्यय होता है)।

ओषधेः — VI. iii. 131

(मन्त्र विषय में प्रथमा से भिन्न विभक्ति के परे रहते) ओषधि शब्द को (भी दीर्घ हो जाता है)।

...ओष्ठ... — IV. i. 55
देखें — **नासिकोदरौष्ठ० IV. i. 55**

ओष्ठ्य... — VII. I. 102
देखें — **ओष्ठ्यपूर्वस्य VII. i. 102**

ओष्ठ्यपूर्वस्य — VII. i. 102

ओष्ठ्य वर्ण पूर्व है जिस (ऋकार) से, तदन्त (धातु) को (उकारादेश होता है)।

...ओस्... — IV. i. 2
देखें — **स्वौजसमौट्० IV. i. 2**

ओसि — VII. iii. 104

ओस् परे रहते (भी अकारान्त अङ्ग को एकारादेश होता है)।

...ओस्सु — II. iv. 34
देखें — **द्वितीयाटौस्सु II. iv. 34**

औ

औ — प्रत्याहार सूत्र IV

— आचार्य पाणिनि द्वारा चतुर्थ प्रत्याहार सूत्र में पठित द्वितीय वर्ण, जो अपने सम्पूर्ण बारह भेदों का ग्राहक होता है।

— पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का नौवां वर्ण।

...औ... — IV. i. 2
देखें — **स्वौजसमौट् IV. i. 2**

औ — IV. i. 38

(मनु शब्द से स्त्रीलिंग में विकल्प से ङीप् प्रत्यय) औकार अन्तादेश (एवं ऐकार अन्तादेश भी हो जाता है, और वह ऐकार उदात्त भी होता है)।

औ — VII. i. 34

(आकारान्त अङ्ग से उत्तर णल् के स्थान में) औकारादेश हो जाता है।

औ — VII. ii. 107
(अदस् अङ्ग को) औ आदेश (तथा सु का लोप होता है)।

... औक्थिक... — IV. iii. 128
देखें — **छन्दोगौक्थिक० IV. iii. 128**

औक्षम् — VI. iv. 173
(अनपत्यार्थक अण् परे रहते) औक्षम् यहाँ टिलोप निपातन किया जाता है।

औङः — VII. i. 18
(आबन्त अङ्ग से उत्तर) औङ् = औ तथा औट् के स्थान में (शी आदेश होता है)।

...औट्... — IV. i. 2
देखें — **स्वौजसमौट् IV. i. 2**

औत् — VII. i. 84
(दिव् अङ्ग को सु परे रहते) औकारादेश होता है।

औत् — VII. iii. 118
(इकारान्त, उकारान्त अङ्ग से उत्तर ङि को) औकारादेश होता है, (तथा घिसञ्ज्ञक को अकारादेश होता है)।

... औपम्ययोः — VI. ii. 113
देखें — **संज्ञौपम्ययोः VI. ii. 113**

औपम्ये — I. iv. 78
(जीविका और उपनिषद् शब्दों की) उपमा के विषय में (कृञ् के योग में नित्य गति और निपात संज्ञा होती है)।

औपम्ये — IV. i. 69
(ऊरु शब्द उत्तरपद वाले प्रातिपदिकों से) औपम्य गम्यमान होने पर (स्त्रीलिंग में ऊङ् प्रत्यय होता है)।

औश् — VII. i. 21
(आत्व किये हुये अष्ट शब्द से उत्तर जस् और शस् के स्थान में) औश् आदेश होता है।

क

क् — प्रत्याहारसूत्र II
— भगवान् पाणिनि द्वारा अपने द्वितीय प्रत्याहार सूत्र में इत्सञ्ज्ञार्थ पठित वर्ण।
इससे तीन प्रत्याहार बनते हैं — अक्, इक् और उक्।

...क् — I. i. 5
देखें — **क्ङिति I. i. 5**

क्... — VI. iv. 15
देखें — **क्ङिति VI. iv. 15**

क्... — VI. iv. 24
देखें — **क्ङिति VI. iv. 24**

क्... — VI. iv. 63
देखें — **क्ङिति VI. iv. 63**

क्... — VI. iv. 98
देखें — **क्ङिति VI. iv. 98**

क्... — VII. iv. 22
देखें — **क्ङिति VII. iv. 22**

ᳲक... — VIII. iii. 37
देखें — **ᳲकᳲपौ VIII. iii. 37**

ᳲकᳲपौ — VIII. iii. 37
(कवर्ग तथा पवर्ग परे रहते विसर्जनीय को यथासङ्ख्य करके) ᳲक अर्थात् जिह्वामूलीय तथा ᳲप अर्थात् उपध्मानीय आदेश होते हैं, (तथा चकार से विसर्जनीय भी होता है)।
(ᳲक= जिह्वामूलीय, ᳲप= उपध्मानीय)।

क — प्रत्याहारसूत्र XII.
— आचार्य पाणिनि द्वारा अपने बारहवें प्रत्याहार सूत्र में पठित प्रथम वर्ण।
— पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का अड़तीसवां वर्ण।

क — III. ii. 77
(सोपसर्ग या निरुपसर्ग स्था धातु से सुबन्त उपपद रहते) क (तथा क्विप्) प्रत्यय होता है।

क — III. iii. 83
(स्तम्ब शब्द उपपद रहते हुए करण कारक में हन् धातु से) क प्रत्यय (तथा अप् प्रत्यय भी होता है और अप् प्रत्यय परे रहने पर हन को घन आदेश भी हो जाता है)।

...क... — IV. ii. 79
देखें — **वुञ्छण्कठ० IV. ii. 79**

क — IV. ii. 139
(राजन् शब्द से शैषिक छ प्रत्यय होता है, तथा उसको) क अन्तादेश (भी) होता है।

...क — VII. ii. 9
देखें — **तितुत्र० VII. ii. 9**

कंशम्भ्याम् — V. ii. 138
कम् तथा शम् प्रातिपदिकों से (मत्वर्थ में ब, भ, युस्, ति, तु, त तथा यस् प्रत्यय होते हैं)।

कः — III. i. 135
(इक् उपधावाली धातुओं से तथा ज्ञा, प्री तथा कृ धातु से) क प्रत्यय होता है।

कः — III. i. 144
(गेह वाच्य होने पर ग्रह् धातु से) क प्रत्यय होता है।

कः — III. ii. 3
(अनुपसर्ग आकारान्त धातु से कर्म उपपद रहते) क प्रत्यय होता है।

कः — III. iii. 41
(निवास, चिति =चयन, शरीर तथा उपसमाधान =राशि अर्थों में चिञ् धातु से घञ् प्रत्यय होता है तथा चिञ् के आदि चकार को) ककारादेश हो जाता है, (कर्तृ-भिन्न कारक संज्ञाविषय तथा भाव में)।

कः — V. iii. 70
('इवे प्रतिकृतौ' V. iii. 70 सूत्र से पहले पहले) क प्रत्यय अधिकृत होता है।

कः — V. iv. 28
(अवि प्रातिपदिक से स्वार्थ में) क प्रत्यय होता है।

कः — VII. ii. 103
(किम् अङ्ग को विभक्ति परे रहते) क आदेश होता है।

कः — VII. iii. 51
(इसन्त, उसन्त, उगन्त तथा तकारान्त अङ्ग से उत्तर ठ के स्थान में) क आदेश होता है।

कः — VIII. ii. 41
(षकार तथा ढकार के स्थान में) क आदेश होता है, (सकार परे रहते)।

कः — VIII. ii. 51
('शुष् शोषणे' धातु से उत्तर निष्ठा के तकार को) ककारादेश होता है।

कः — VIII. iii. 50
देखें — कःकरत्० VIII. iii. 50

कःकरत्करतिकृधिकृतेषु — VIII. iii. 50
कः, करत्, करति, कृधि, कृत – इनके परे रहते (अदिति को छोड़कर जो विसर्जनीय उसको सकारादेश होता है, वेद-विषय में)।

...कक्... — IV. ii. 79
देखें — वुञ्छण्कठ० IV. ii. 79

कक्... — IV. iv. 21
देखें — कक्कनौ IV. iv. 21

कक्कनौ — IV. iv. 21
(तृतीयासमर्थ अपमित्य और याचित प्रातिपदिकों से निर्वृत्त अर्थ में यथासङ्ख्य करके) कक् और कन् प्रत्यय होते हैं।

ककुदस्य — V. iv. 146
(बहुव्रीहि समास में) ककुद शब्दान्त का (समासान्त लोप होता है, अवस्था गम्यमान होने पर)।

कक्षीवत् — VIII. ii. 12
कक्षीवत् शब्द का निपातन किया जाता है।

...कच्चित् — VIII. i. 30
देखें — यद्यदि० VIII. i. 30

कच्छ... — IV. ii. 125
देखें — कच्छाग्निवक्त्र० IV. ii. 125

कच्छाग्निवक्त्रगर्तोत्तरपदात् — IV. ii. 125
(देश में वर्तमान) कच्छ, अग्नि, वक्त्र, गर्त्त — ये उत्तरपद में है जिनके, ऐसे (वृद्धसंज्ञक तथा अवृद्धसंज्ञक) प्रातिपदिकों से (शैषिक वुञ् प्रत्यय होता है)।

कच्छादिभ्यः — IV. ii. 132
(देशविशेषवाची) कच्छादि प्रातिपदिकों से (भी शैषिक अण् प्रत्यय होता है)।

...कज्जलम् — VI. ii. 91
देखें — भूताधिक० VI. ii. 91

कञ् — III. ii. 60
(अनालोचन अर्थ में वर्तमान 'दृश्' धातु से त्यदादि शब्द उपपद रहते) कञ् प्रत्यय होता है, (तथा चकार से क्विन् भी होता है)।

...कञ्... — IV. i. 15
देखें — टिड्ढाणञ्० IV. i. 15

कटच् — V. ii. 29
(सम्, प्र, उत् तथा वि – इन उपसर्ग प्रातिपदिकों से) कटच् प्रत्यय होता है।

कटादेः — IV. ii. 138
कट शब्द आदि में है जिनके, ऐसे (प्राग्देशवाची) प्रातिपदिकों से (शैषिक छ प्रत्यय होता है)।

...कटुक... — VI. ii. 126
देखें — चेलखेट० VI. ii. 126
...कट्यचः — IV. ii. 50
देखें — इनित्रकट्यचः IV. ii. 50
कठ... — IV. iii. 107
देखें — कठचरकात् IV. iii. 107
कठचरकात् — IV. iii. 107
कठ और चरक शब्द से उत्पन्न (प्रोक्त प्रत्यय का छन्द-विषय में लुक् होता है)।
कठिनान्त... — IV. iv. 72
देखें — कठिनान्तप्रस्तार० IV. iv. 72
कठिनान्तप्रस्तारसंस्थानेषु — IV. iv. 72
(सप्तमीसमर्थ) कठिन शब्द अन्तवाले, प्रस्तार तथा संस्थान प्रातिपदिकों से ('व्यवहार करता है' अर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।
कडङ्कर... — V. i. 68
देखें — कडङ्करदक्षिणात् V. i. 68
कडङ्करदक्षिणात् — V. i. 68
(द्वितीयासमर्थ) कडङ्कर और दक्षिणा प्रातिपदिकों से (छ और यत् प्रत्यय होते हैं, 'समर्थ है' अर्थ में)।
कडाराः — II. ii. 38
कडारादि शब्द (कर्मधारय समास में पूर्व प्रयुक्त होते हैं, विकल्प से)।
कडारात् — I. iv. 1
'कडाराः कर्मधारये' II. ii. 38 सूत्र (तक एक संज्ञा है, यह अधिकार है)।
कडारात् — II. i. 3
'कडाराः कर्मधारये' II. ii. 38 से (पहले पहले समास सञ्ज्ञा का अधिकार जायेगा)।
कणे... — I. iv. 65
देखें — कणेमनसी I. iv. 65
कणेमनसी — I. iv. 65
कणे और मनस् शब्द (क्रियायोग में गति और निपात संज्ञक होते हैं, श्रद्धा के प्रतीघात अर्थ में)।
कण्ठ... — VI. ii. 114
देखें — कण्ठपृष्ठ० VI. ii. 114

कण्ठपृष्ठग्रीवाजङ्घम् — VI. ii. 114
(सञ्ज्ञा तथा औपम्य विषय में वर्तमान बहुव्रीहि समास में) कण्ठ, पृष्ठ, ग्रीवा, जङ्घा — इन उत्तरपद शब्दों को (भी आद्युदात्त होता है)।
कण्ड्वादिभ्यः — III. i. 27
कण्डूञ् आदि = कण्ड्वादिगणपठित धातुओं से (यक् प्रत्यय होता है)।
...कण्व... — III. i. 17
देखें — शब्दवैरकलहा० III. i. 17
कण्वादिभ्यः — IV. ii. 110
कण्वादि प्रातिपदिकों से (गोत्र में विहित जो प्रत्यय, तदन्त प्रातिपदिक से शैषिक अण् प्रत्यय होता है)।
कत् — VI. iii. 100
(कु को तत्पुरुष समास में अजादि शब्द उत्तरपद हो तो) कत् आदेश होता है।
...कत... — V. i. 120
देखें — अचतुरमङ्गल० V. i. 120
...कतन्तेभ्यः — IV. i. 18
देखें — लोहितादिकतन्तेभ्यः IV. i. 18
...कतमौ — II. i. 62
देखें — कतरकतमौ II. i. 62
...कतमौ — VI. ii. 57
देखें — कतरकतमौ VI. ii. 57
कतर... — II. i. 62
देखें — कतरकतमौ II. i. 62
कतर... — VI. ii. 57
देखें — कतरकतमौ VI. ii. 57
कतरकतमौ — II. i. 62
(जाति के विषय में विविध प्रश्न में वर्तमान) कतर, कतम शब्द (समानाधिकरण समर्थ सुबन्त के साथ तत्पुरुष समास को प्राप्त होते हैं)।
कतरकतमौ — VI. ii. 57
कतर तथा कतम पूर्वपद को (कर्मधारय समास में विकल्प से प्रकृतिस्वर होता है)।
...कति... — V. ii. 51
देखें — षट्कति० V. ii. 51
...कतिपय... — I. i. 32
देखें — प्रथमचरमतयाल्पार्धकतिपयनेमाः I. i. 32

...कतिपय... — II. i. 64
देखें — पोटायुवतिस्तोक० II. i. 64
...कतिपय... — V. ii. 51
देखें — षट्कति० V. ii. 51.
...कतिपयस्य — II. iii. 33
देखें — स्तोकाल्पकृच्छ्र० II. iii. 33
...कत्थ... — III. ii. 143
देखें — कषलस० III. ii. 143
कत्र्यादिभ्यः — IV. ii. 94
कत्र्यादि प्रातिपदिकों से (शैषिक अर्थों में ढकञ् प्रत्यय होता है)।
...कत्थ... — III. ii. 143
देखें — कष...स्रम्भः III. ii. 143
...कथम्... — III. iv. 27
देखें — अन्यथैवंकथ० III. iv. 27
कथमि — III. iii. 143
(गर्हा गम्यमान हो तो) कथम् शब्द उपपद रहते (विकल्प करके लिङ् प्रत्यय होता है, तथा चकार से लट् प्रत्यय भी होता है)।
कथादिभ्यः — IV. iv. 102
(सप्तमीसमर्थ) कथादि प्रातिपदिकों से (साधु अर्थ में ठक् होता है)।
...कथि... — III. iii. 105
देखें — चिन्तिपूजि० III. iii. 105
कदा... — III. iii. 5
देखें — कदाकर्ह्योः III. iii. 5
कदाकर्ह्योः — III. iii. 5
कदा और कर्हि उपपद रहने पर (भविष्यत् काल में धातु से विकल्प से लट् प्रत्यय होता है)।
कद्रु... — IV. i. 71
देखें — कद्रुकमण्डल्वोः IV. i. 71
कद्रुकमण्डल्वोः IV. i. 71
कद्रु और कमण्डलु शब्दों से (वेद-विषय में स्त्रीलिंग में ऊङ् प्रत्यय होता है)।
...कध्यै... — III. iv. 9
देखें — सेसेनसे० III. iv. 9
...कध्यैन्... — III. iv. 9
देखें — सेसेनसे० III. iv. 9

कन् — IV. ii. 130
(देशविशेषवाची मद्र, वृजि शब्दों से शैषिक) कन् प्रत्यय होता है।
कन् — IV. iii. 32
(सप्तमीसमर्थ सिन्धु तथा अपकर शब्दों से जातार्थ में) कन् प्रत्यय होता है।
कन् — IV. iii. 65
(सप्तमीसमर्थ कर्ण तथा ललाट शब्दों से भव अर्थ में आभूषण अभिधेय हो तो) कन् प्रत्यय होता है।
कन् — IV. iii. 144
(षष्ठीसमर्थ पिष्ट प्रातिपदिक से संज्ञाविषय में विकार अर्थ कहना हो तो) कन् प्रत्यय होता है।
कन् — V. i. 22
(सङ्ख्यावाची प्रातिपदिक से 'तदर्हति' पर्यन्त कथित अर्थों में) कन् प्रत्यय होता है, (यदि वह सङ्ख्यावाची प्रातिपदिक तिशब्दान्त तथा शतशब्दान्त न हो तो)।
...कन्... — VI. ii. 25
देखें — श्रज्यावम० VI. ii. 25
कन् — V. ii. 64
(सप्तमीसमर्थ आकर्षादि प्रातिपदिकों से 'कुशल' अर्थ में) कन् प्रत्यय होता है।
कन्... — V. iii. 51
देखें — कन्लुकौ V. iii. 51
कन् — V. iii. 64
(युव और अल्प शब्दों के स्थान में विकल्प से) कन् आदेश होता है, (अजादि अर्थात् इष्ठन्, ईयसुन् प्रत्यय परे रहते)।
कन् — V. iii. 65
('निन्दित' अर्थ में वर्तमान प्रातिपदिक से स्वार्थ में) कन् प्रत्यय होता है, (संज्ञा गम्यमान होने पर)।
कन् — V. iii. 81
(मनुष्यनामधेय जातिवाची प्रातिपदिक से) कन् प्रत्यय होता है, (नीति तथा अनुकम्पा गम्यमान हो तो)।
कन् — V. iii. 87
('छोटा' अर्थ में वर्तमान प्रातिपदिक से सञ्ज्ञा गम्यमान हो तो) कन् प्रत्यय होता है।
कन् — V. iii. 95
('अवक्षेपण' अर्थ में वर्तमान प्रातिपदिक से) कन् प्रत्यय होता है।

कन् — V. iv. 3
(स्थूलादि प्रातिपदिकों से प्रकारवचन गम्यमान हो तो) कन् प्रत्यय होता है।

कन् — V. iv. 29
(यावादि प्रातिपदिकों से स्वार्थ में) कन् प्रत्यय होता है।

कनिक्रदत् — VII. iv. 65
कनिक्रदत् शब्द (वेद-विषय में) निपातन किया जाता है।

कनीन — IV. i. 116
(कन्या शब्द से अपत्य अर्थ में अण् प्रत्यय होता है तथा अण् परे रहते कन्या शब्द को) कनीन आदेश (भी) हो जाता है।

...कनीयसी — VI. ii. 189
देखें — **अप्रधानकनीयसी VI. ii. 189**

...कनौ — IV. iv. 21
देखें — **कक्कनौ IV. iv. 21**

...कनौ — V. i. 50
देखें — **ठन्कनौ V. i. 50**

कन्या — II. iv. 20
कन्यान्त (तत्पुरुष संज्ञा विषय में नपुंसक लिंग में होता है, यदि वह कन्या उशीनर जनपद-सम्बन्धी हो तो)।

कन्या... — IV. ii. 141
देखें — **कन्यापलद० IV. ii. 141**

कन्या — VI. ii. 124
(नपुंसक लिंग) कन्यान्त (तत्पुरुष समास में भी उत्तरपद को आद्युदात्त होता है)।

कन्यापलदनगरग्रामह्रदोत्तरपदात् — IV. ii. 141
कन्या, पलद, नगर, ग्राम तथा ह्रद शब्द उत्तरपद में हैं जिनके, ऐसे (वृद्धसंज्ञक देशवाची) प्रातिपदिकों से (छ प्रत्यय होता है)।

कन्यायाः — IV. ii. 101
कन्या प्रातिपदिक से (शैषिक ठक् प्रत्यय होता है)।

कन्यायाः — IV. i. 116
कन्या शब्द से (अपत्य अर्थ में अण् प्रत्यय होता है तथा अण् परे रहने पर) कन्या शब्द को (कनीन आदेश भी हो जाता है)।

कन्लुकौ — V. iii. 51
(मान = माप का पश्वङ्ग अर्थात् पशु का अंग रूपी षष्ठ और अष्टम शब्दों से यथासंख्य करके) कन् तथा लुक् प्रत्यय होते है, (भाग अभिधेय हो तो)।

कप् — III. ii. 70
सुबन्त उपपद रहते 'दुह्' धातु से कप् प्रत्यय होता है (तथा अन्त्य हकार को घकारादेश होता है)।

कप् — V. iv. 151
(उरस् इत्यादि अन्तवाले शब्दों से बहुव्रीहि समास में) कप् प्रत्यय होता है।

...कपाटयोः — III. ii. 54
देखें — **हस्तिकपाटयोः III. ii. 54**

...कपाल... — VI. ii. 29
देखें — **इगन्तकाल० VI. ii. 29**

कपि... — IV. i. 107
देखें — **कपिबोधात् IV. i. 107**

कपि... — V. i. 126
देखें — **कपिज्ञात्योः V. i. 126**

कपि — VI. ii. 173
(नञ् तथा सु से उत्तर उत्तरपद के) कप् के परे रहते (उससे पूर्व को उदात्त होता है)।

कपि — VI. iii. 126
कप् परे रहते (चिति शब्द को दीर्घ हो जाता है, संहिता विषय में)।

कपि — VII. iv. 14
कप् प्रत्यय परे रहते (अण् = अ, इ, उ को ह्रस्व नहीं होता है)।

कपिज्ञात्योः — V. i. 126
(षष्ठीसमर्थ) कपि तथा ज्ञाति प्रातिपदिकों से (भाव और कर्म अर्थ में ढक् प्रत्यय होता है)।

कपिबोधात् — IV. i. 107
कपि तथा बोध प्रातिपदिकों से (आङ्गिरस गोत्र कहना हो तो यञ् प्रत्यय होता है)।

कपिष्ठलः — VIII. iii. 91
(कपिष्ठल में मूर्धन्य आदेश निपातन है, गोत्र विषय को कहने में)।

...कपूर्वायाः — VII. iii. 46
देखें — **यकपूर्वायाः VII. iii. 46**

...कबरात् — IV. i. 42
देखें — **जानपदकुण्ड० IV. i. 42**

कम्... — V. ii. 138
देखें — **कंशंभ्याम् V. ii. 138**

...कम... — III. ii. 154
देखें — लषपतपद० III. ii. 154

...कम... — III. ii. 167
देखें — नमिकम्पि० III. ii. 167

...कमण्डल्वोः — IV. i. 71
देखें — कद्रुकमण्डल्वोः IV. i. 71

...कमि... — VIII. iii. 46
देखें — कृकमि० VIII. iii. 46

...कमि... — VIII. iv. 33
देखें — भाभूपू० VIII. iv. 33

कमिता — V. ii. 74
'इच्छा करने वाला' अर्थ में (अनुक, अभिक तथा अभीक शब्दों को निपातन किया जाता है)।

...कमुलौ — III. iv. 12
देखें — णमुल्कमुलौ III. iv. 12

कमेः — III. i. 30
कान्त्यर्थक कमु धातु से (णिङ् प्रत्यय होता है)।

...कम्पि... — III. ii. 167
देखें — नमिकम्पि० III. ii. 167

कम्बलात् — V. i. 3
'कम्बल' — इस प्रातिपदिक से (भी क्रीत अर्थ से पहले कहे गये अर्थों में यत् प्रत्यय होता है, सञ्ज्ञा-विषय के होने पर)।

...कम्बल्येभ्यः — IV. i. 22
देखें — अपरिमाणबिस्ता० IV. i. 22

कम्बोजात् — IV. i. 173
(क्षत्रियाभिधायी जनपदवाची) जो कम्बोज शब्द, उससे (अपत्यार्थ में विहित तद्राज-संज्ञक प्रत्यय का लुक् हो जाता है)।

करण... — III. ii. 45
देखें — करणभावयोः III. ii. 45

करण... — III. iii. 117
देखें — करणाधिकरणयोः III. iii. 117

करण... — IV. iv. 97
देखें — करणजल्पकर्षेषु IV. iv. 97

करणजल्पकर्षेषु — IV. iv. 97
(षष्ठीसमर्थ मत, जन, हल प्रातिपदिकों से यथासङ्ख्य करके) करण, जल्प, कर्ष — इन अर्थों में (यत् प्रत्यय होता है)।

करणपूर्वात् — IV. i. 50
करण कारक पूर्व वाले (क्रीत-शब्दान्त अनुपसर्जन) प्रातिपदिक से (स्त्रीलिंग में ङीप् प्रत्यय होता है)।

करणभावयोः — III. ii. 45
(आशित सुबन्त उपपद रहते भू धातु से) करण और भाव में (खच् प्रत्यय होता है)।

करणम् — I. iv. 42
(क्रिया की सिद्धि में जो सबसे अधिक सहायक, उस कारक की) करणसंज्ञा होती है।

करणम् — III. i. 102
करण कारक में (वह् धातु से यत् प्रत्यय करके 'वह्यम्' शब्द का निपातन होता है)।

करणम् — VI. i. 196
करणवाची (जय शब्द आद्युदात्त होता है)।

...करणयोः — II. iii. 18
देखें — कर्तृकरणयोः II. iii. 18

...करणयोः — VI. iv. 27
देखें — भावकरणयोः VI. iv. 27

...करणयोः — VIII. iv. 10
देखें — भावकरणयोः VIII. iv. 10

करणाधिकरणयोः — III. iii. 117
(धातु से) करण और अधिकरण कारक में (भी ल्युट् प्रत्यय होता है)।

...करणे — II. i. 31
देखें — कर्तृकरणे II. i. 31

करणे — II. iii. 33
करण कारक में (असत्ववाची स्तोक, अल्प, कृच्छ्र और कतिपय — इन शब्दों से विकल्प से तृतीया और पञ्चमी विभक्ति होती है)।

करणे — II. iii. 51
(अविदर्थक 'ज्ञा' धातु के) करण कारक में (शेष विवक्षित होने पर षष्ठी विभक्ति होती है)।

करणे — II. iii. 63
(यज् के) करण कारक में (वेद-विषय में बहुल करके षष्ठी विभक्ति होती है)।

करणे — III. i. 17
करण अर्थात् करने अर्थ में (कर्मवाची शब्द, वैर, कलह, अभ्र, कण्व और मेघ शब्दों से क्यङ् प्रत्यय होता है)।

विशेष — यहाँ करण शब्द क्रिया का वाचक है; पारिभाषिक 'साधकतमं करणम्' वाला करण नहीं।

करणे — III. ii. 56

(च्व्यर्थ में वर्तमान, अच्विप्रत्ययान्त आढ्य, सुभग, स्थूल, पलित, नग्न, अन्ध तथा प्रिय कर्म उपपद रहते कृञ् धातु से) करण कारक में (ख्युन् प्रत्यय होता है)।

करणे — III. ii. 85

करण कारक उपपद रहते (यज् धातु से 'णिनि' प्रत्यय होता है, भूतकाल में)।

करणे — III. ii. 182

(दाप्, णीञ्, शसु, यु, युज्, ष्टुञ्, तुद्, षिञ्, षिचिर्, मिह्, पत्लृ, दंश, णह् — इन धातुओं से) करण कारक में (ष्ट्रन् प्रत्यय होता है)।

करणे — III. iii. 82

(अयस्, वि तथा द्रु उपपद रहते हन् धातु से) करण कारक में (अप् प्रत्यय होता है तथा हन् के स्थान में घनादेश भी होता है)।

करणे — III. iv. 37

करण कारक उपपद हो तो (हन् धातु से णमुल् प्रत्यय होता है)।

...करत्... — VIII. iii. 50

देखें — **कः करत्करति० VIII. iii. 50**

....करति... — VIII. iii. 50

देखें — **कः करत्करति० VIII. iii. 50**

करभे — V. ii. 79

(प्रथमासमर्थ शृङ्खल प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में कन् प्रत्यय होता है; यदि वह प्रथमासमर्थ बन्धन बन रहा हो, तथा) जो षष्ठी से निर्दिष्ट हो वह करभ=ऊँट का छोटा बच्चा हो तो।

करिक्रत् — VII. iv. 65

करिक्रत् शब्द (वेद-विषय में) निपातन किया जाता है।

...करीषेषु — III. ii. 42

देखें — **सर्वकूलाभ्र० III. ii. 42**

करे — IV. iv. 143

(षष्ठीसमर्थ शिव, शम् और अरिष्ट प्रातिपदिकों से) 'करने वाला' अर्थ में (स्वार्थ में तातिल् प्रत्यय होता है)।

करोति — IV. iv. 34

(द्वितीयासमर्थ शब्द और दर्दुर प्रातिपदिकों से) 'करता है' अर्थ में (ठक् प्रत्यय होता है)।

करोतेः — VI. iv. 108

(वकारादि अथवा मकारादि प्रत्यय परे रहते) कृ अङ्ग से उत्तर (उकार प्रत्यय का नित्य ही लोप हो जाता है)।

करोतौ — V. i. 132

(भूषण अर्थ में सम् तथा परि उपसर्ग से उत्तर) कृ धातु के परे रहते (ककार से पूर्व सुट् का आगम होता है, संहिता के विषय में)।

कर्कलोहितात् — V. iii. 110

कर्क तथा लोहित प्रातिपदिकों से (इवार्थ में ईकक् प्रत्यय होता है)।

...कर्ण... — IV. i. 55

देखें — **नासिकोदरौष्ठ० IV. i. 55**

...कर्ण... — IV. i. 64

देखें — **पाककर्णपर्ण० IV. i. 64**

...कर्ण... — IV. ii. 79

देखें — **अरीहणकृशाश्व० IV. ii. 79**

कर्ण... — IV. iii. 65

देखें — **कर्णललाटात् IV. iii. 65**

कर्णः — VI. ii. 112

(बहुव्रीहि समास में वर्णवाची तथा लक्षणवाची से परे उत्तरपद) कर्ण शब्द को (आद्युदात्त होता है)।

...कर्णयोः — III. ii. 13

देखें — **स्तम्बकर्णयोः III. ii. 13**

कर्णललाटात् — IV. iii. 65

(सप्तमीसमर्थ) कर्ण तथा ललाट शब्दों से (भव अर्थ में आभूषण अभिधेय हो तो कन् प्रत्यय होता है)।

...कर्णादिभ्यः — V. ii. 24

देखें — **पील्वादिकर्णादिभ्यः V. ii. 24**

...कर्णीषु — VIII. iii. 46

देखें — **कृकमि० VIII. iii. 46**

कर्णे — VI. iii. 114

कर्ण शब्द उत्तरपद रहते (विष्ट, अष्टन्, पञ्चन्, मणि, भिन्न, छिन्न, छिद्र, स्रुव, स्वस्तिक — इन शब्दों को छोड़कर लक्षणवाची शब्दों के अण् को दीर्घ होता है, संहिता के विषय में)।

कर्त्तरि — I. iii. 14

(क्रिया के व्यतिहार अर्थात् अदल बदल करने अर्थ में) कर्तृवाच्य में (धातु से आत्मनेपद होता है)।

कर्त्तरि – I. iii. 78
(जिन धातुओं से, जिस विशेषण द्वारा आत्मनेपद का विधान किया है, उनसे अवशिष्ट धातुओं से) कर्तृवाच्य में (परस्मैपद होता है)।

कर्त्तरि – II. ii. 15
कर्ता में (जो तृच् और अक प्रत्ययान्त सुबन्त, उनके साथ कर्म में जो षष्ठी, वह समास को प्राप्त नहीं होती)।

कर्त्तरि – II. ii.16
कर्ता में (जो षष्ठी, वह भी अक प्रत्ययान्त सुबन्त के साथ समास को प्राप्त नहीं होती)।

कर्त्तरि – II. iii. 71
(कृत्य प्रत्ययों के योग में) कर्तृ कारक में (विकल्प से षष्ठी विभक्ति होती है, न कि कर्म में)।

कर्त्तरि – III. i. 48
कर्तृवाची (लुङ्) परे रहते (णिजन्तों से तथा श्रि, द्रु और स्रु से उत्तर च्लि को चङ् होता है)।

कर्त्तरि – III. i. 68
कर्तृवाची (सार्वधातुक) परे रहते (धातु से शप् प्रत्यय होता है)।

कर्त्तरि – III. ii. 19
कर्तृवाची (पूर्व शब्द) उपपद रहते ('सृ' धातु से 'ट' प्रत्यय होता है)।

कर्त्तरि – III. ii. 57
(च्व्यर्थ में वर्तमान अच्व्यन्त आढ्य, सुभग, स्थूल, पलित, नग्न, अन्ध, प्रिय – ये सुबन्त उपपद हों तो) कर्तृ कारक में (भू धातु से खिष्णुच् तथा खुकञ् प्रत्यय होते हैं)।

कर्त्तरि – III. ii. 79
(उपमानवाची) कर्त्ता के उपपद रहते (धातुमात्र से णिनि प्रत्यय होता है)।

कर्त्तरि – III. ii. 186
(पूञ् धातु से ऋषिवाची करण तथा देवतावाची) कर्त्ता में (इत्र प्रत्यय होता है, वर्तमान काल में)।

कर्त्तरि – III. iv. 67
(इस धातु के अधिकार में सामान्य विहित कृत् संज्ञक प्रत्यय) कर्तृ कारक में (होते हैं)।

कर्त्तरि – III. iv. 71
(क्रिया के आरम्भ के आदि क्षण में विहित जो क्त प्रत्यय, वह) कर्त्ता में (होता है तथा चकार से भावकर्म में भी होता है)।

कर्त्ता – I. iii. 67
(अण्यन्तावस्था में जो कर्म, वही यदि ण्यन्तावस्था में) कर्त्ता बन रहा हो तो (ऐसी ण्यन्त धातु से आत्मनेपद होता है, आध्यान = उत्कण्ठापूर्वक स्मरण अर्थ में)।

कर्ता – I. iv. 40
(प्रति एवं आङ् पूर्वक श्रु धातु के प्रयोग में पूर्व का) जो कर्ता, वह (कारक सम्प्रदान संज्ञक होता है)।

कर्त्ता – I. iv. 52
(गत्यर्थक, बुद्ध्यर्थक, भोजनार्थक तथा शब्द कर्म वाली और अकर्मक धातुओं का) जो (अण्यन्तावस्था में) कर्ता, वह (ण्यन्तावस्था में कर्मसंज्ञक हो जाता है)।

कर्त्ता – I. iv. 54
(क्रिया की सिद्धि में स्वतन्त्र रूप से विवक्षित कारक की) कर्तृ संज्ञा होती है।

कर्त्ता – VI. i. 201
कर्तृवाची (आशित शब्द को आद्युदात्त होता है)।

कर्तुः – I. iv. 49
कर्त्ता को (अपनी क्रिया के द्वारा जो अत्यन्त ईप्सित हो, उस कारक की कर्म संज्ञा होती है)।

कर्तुः – III. i. 11
(उपमानवाची सुबन्त) कर्त्ता से (विकल्प से क्यङ् प्रत्यय होता है, और विकल्प से ही सकार का लोप भी)।

कर्तुः – III. iii. 116
(जिस कर्म के संस्पर्श से) कर्त्ता को (शरीर का सुख उत्पन्न हो, ऐसे कर्म के उपपद रहते भी धातु से ल्युट् प्रत्यय होता है)।

कर्तृ... – II. i. 31
देखें – **कर्तृकरणे II. i. 31**

कर्तृ... – II. iii. 18
देखें – **कर्तृकरणयोः II. iii. 18**

कर्तृ... – II. iii. 65
देखें – **कर्तृकर्मणोः II. iii. 65**

...कर्तृ... – III. ii. 21
देखें – **दिवाविभा० III. ii. 21**

कर्तृ... – III. iii. 127
देखें – **कर्तृकर्मणोः III. iii. 127**

कर्तृकरणयोः — II. iii. 18

(अनभिहित) कर्त्ता और करण कारक में (तृतीया विभक्ति होती है)।

कर्तृकरणे — II. i. 31

कर्त्ता और करण कारक में (जो तृतीया, तदन्त सुबन्त का समर्थ कृदन्त सुबन्त के साथ बहुल करके समास होता है, और वह समास तत्पुरुष संज्ञक होता है)।

कर्तृकर्मणोः — II. iii. 65

(अनभिहित) कर्त्ता और कर्म कारक में (कृत् प्रत्यय के प्रयुक्त होने पर षष्ठी विभक्ति होती है)।

कर्तृकर्मणोः — III. iii. 127

(भू तथा कृञ् धातु से यथासङ्ख्य करके) कर्ता एवं कर्म उपपद रहते, (चकार से कृच्छ्र तथा अकृच्छ्र अर्थ में वर्तमान, ईषद्, दुस् अथवा सु उपपद हों तो भी खल् प्रत्यय होता है)।

कर्त्तर्यकि — VI. i. 189

कर्ता में विहित यक् प्रत्यय के परे रहते (उपदेश में अजन्त धातुओं के आदि स्वर विकल्प से उदात्त हो जाते हैं)।

कर्तृवेदनायाम् — III. i. 18

कर्त्ता-सम्बन्धी अनुभव अर्थ में (सुख आदि कर्म-वाचकों से क्यङ् प्रत्यय होता है)।

कर्तृस्थे — I. iii. 37

कर्ता में स्थित (शरीरभिन्न कर्म के) होने पर (भी णीञ् धातु से आत्मनेपद होता है)।

कर्त्रभिप्राये — I. iii. 72

(स्वरितेत् तथा ञित् धातुओं से आत्मनेपद होता है, यदि क्रिया का फल) कर्ता को मिलता हो तो।

कर्त्रोः — III. iv. 43

कर्त्तृवाची (जीव तथा पुरुष) शब्द उपपद हों तो (यथासङ्ख्य करके नश् तथा वह् धातुओं से णमुल् प्रत्यय होता है)।

कर्म — I. iii. 67

(अण्यन्तावस्था में जो) कर्म, (वही यदि ण्यन्तावस्था में कर्ता बन रहा हो, तो ऐसी ण्यन्त धातु से आत्मनेपद होता है; आध्यान= उत्कण्ठापूर्वक स्मरण अर्थ को छोड़कर)।

कर्म — I. iv. 38

(उपसर्ग से युक्त क्रुध् तथा द्रुह् धातु के प्रयोग में जिसके प्रति क्रोध किया जाये, उस कारक की) कर्म संज्ञा होती है।

कर्म — I. iv. 43

(दिव् धातु का जो साधकतम कारक, उसकी) कर्म (और करण) संज्ञा होती है।

कर्म — I. iv. 46

(अधिपूर्वक शीङ्, स्था और आस् का आधार जो कारक, उसकी) कर्म संज्ञा होती है।

कर्म — I. iv. 49

(कर्ता को अपनी क्रिया के द्वारा जो अत्यन्त ईप्सित हो, उस कारक की) कर्म संज्ञा होती है।

...कर्म... — III. ii. 89

देखें — **सुकर्म० III. ii. 89**

कर्म — IV. iv. 63

(अध्ययन में वर्तमान) कर्म (समानाधिकरणवाची प्रथमासमर्थ) प्रातिपदिक से (षष्ठ्यर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

कर्म... — V. i. 99

देखें — **कर्मवेषात् V. i. 99**

...कर्म... — V. ii. 7

देखें — **पथ्यङ्ग० V. ii. 7**

कर्मकर्त्तरि — III. i. 62

कर्मकर्तृवाची (लुङ् में त शब्द) परे रहते (अजन्त धातु से उत्तर च्लि को 'चिण्' आदेश होता है, विकल्प से)।

कर्मणः — III. i. 7

(इच्छा क्रिया के) कर्म का (अवयव समानकर्तृक धातु से इच्छा अर्थ में विकल्प करके सन् प्रत्यय होता है)।

कर्मणः — III. i. 15

कर्मकारकस्थ (रोमन्थ और तपस्) शब्द से (आचरण अर्थ में विकल्प से क्यङ् प्रत्यय होता है)।

कर्मणः — V. i. 102

(चतुर्थीसमर्थ) कर्मन् प्रातिपदिक से ('शक्त है' अर्थ में उकञ् प्रत्यय होता है)।

कर्मणः — V. iv. 36

(सन्देश सुनकर किये गये कार्य के प्रतिपादक) कर्मन् प्रातिपदिक से (स्वार्थ में अण् प्रत्यय होता है)।

कर्मणा — I. iv. 32

(करणभूत) कर्म के द्वारा (जिसको अभिप्रेत किया जाये, वह कारक सम्प्रदान संज्ञक होता है)।

कर्मणा — III. i. 87

कर्मस्थ क्रिया से (तुल्य क्रिया वाला कर्त्ता कर्मवत् हो जाता है) ।

कर्मणि — I. iii. 37

(कर्ता में स्थित शरीर-भिन्न) कर्म के होने पर (भी णीञ् धातु से आत्मनेपद होता है)।

कर्मणि — II. ii. 14

कर्म कारक में (विहित जो षष्ठी, वह भी समर्थ सुबन्त के साथ समास को प्राप्त नहीं होती)।

कर्मणि — II. iii. 2

(अनभिहित) कर्म कारक में (द्वितीया विभक्ति होती है)।

कर्मणि — II. iii. 14

(क्रियार्थ क्रिया उपपद में है जिस धातु के, उस अप्रयुज्यमान धातु के अनभिहित) कर्म कारक में (चतुर्थी विभक्ति होती है)।

कर्मणि — II. iii. 22

(सम् पूर्वक ज्ञा धातु के अनभिहित) कर्मकारक में (विकल्प से तृतीया विभक्ति होती है)।

कर्मणि — II. iii. 52

(स्मरण अर्थवाली धातु, दय् तथा ईश् धातु के) कर्म कारक में (शेष षष्ठी विभक्ति होती है)।

कर्मणि — II. iii. 66

(जहाँ कर्त्ता और कर्म दोनों में षष्ठी की प्राप्ति हो, वहाँ) कर्म कारक में (ही षष्ठी विभक्ति होती है)।

कर्मणि — III. ii. 1

कर्म उपपद रहते (धातु मात्र से अण् प्रत्यय होता है)।

कर्मणि — III. ii. 22

कर्म शब्द उपपद रहते ('कृ' धातु से 'ट' प्रत्यय होता है, भृति= वेतन गम्यमान होने पर)।

कर्मणि — III. ii. 86

कर्म उपपद रहते ('हन्' धातु से भूतकाल में 'णिनि' प्रत्यय होता है)।

कर्मणि — III. ii. 92

कर्म उपपद रहते (कर्म कारक के अभिधानार्थ ही 'चिञ्' धातु से भी क्विप् प्रत्यय होता है, अग्नि की आख्या अभिधेय हो तो)।

कर्मणि — III. ii. 93

कर्मत्वविशिष्ट सुबन्त के उपपद होने पर (विपूर्वक क्री धातु से इनि प्रत्यय होता है)।

कर्मणि — III. ii. 100

कर्म उपपद रहते (अनु पूर्वक जन् धातु से 'ड' प्रत्यय होता है, भूतकाल में)।

कर्मणि — III. iii. 12

(क्रियार्थ क्रिया और) कर्म उपपद रहने पर (धातु से भविष्यत्काल में अण् प्रत्यय होता है)।

कर्मणि — III. iii. 93

कर्म उपपद रहने पर (अधिकरण कारक में भी घु-संज्ञक धातुओं से कि प्रत्यय होता है)।

कर्मणि — III. ii. 116

(जिस कर्म के संस्पर्श से कर्त्ता को शरीर का सुख उत्पन्न हो, ऐसे) कर्म के उपपद रहते (भी धातु से ल्युट् प्रत्यय होता है)।

कर्मणि — III. ii. 189

(धा धातु से) कर्मकारक में (ष्ट्रन् प्रत्यय होता है, वर्तमान काल में)।

कर्मणि — III. iv. 25

कर्म उपपद रहते (आक्रोश गम्यमान हो तो समानकर्तृक पूर्वकालिक कृञ् धातु से खमुञ् प्रत्यय होता है)।

कर्मणि — III. iv. 29

(सम्पूर्णताविशिष्ट) कर्म उपपद हो तो (दृशिर् तथा विद् धातुओं से णमुल् प्रत्यय होता है)।

कर्मणि — III. iv. 45

(उपमानवाची) कर्म उपपद रहते (और कर्ता भी उपपद रहते धातुमात्र से णमुल् प्रत्यय होता है)।

कर्मणि — III. iv. 69

(सकर्मक धातुओं से लकार) कर्म कारक में (होते हैं, चकार से कर्ता में भी होते है और अकर्मक धातुओं से भाव में होते हैं तथा चकार से कर्ता में भी होते है)।

कर्मणि — V. i. 123
(षष्ठीसमर्थ गुणवचन ब्राह्मणादि प्रातिपदिकों से) कर्म के अभिधेय होने पर (तथा भाव में ष्यञ् प्रत्यय होता है)।

कर्मणि — V. ii. 35
सप्तमीसमर्थ कर्मन् प्रातिपदिक से ('चेष्टा करनेवाला' अर्थ में अठच् प्रत्यय होता है)।

कर्मणि — VI. ii. 48
कर्मवाची (क्तान्त) उत्तरपद रहते (तृतीयान्त पूर्वपद को प्रकृतिस्वर हो जाता है)।

...कर्मणी — IV. iv. 120
देखें — **भागकर्मणी IV. iv. 120**

...कर्मणोः — I. iii. 13
देखें — **भावकर्मणोः I. iii. 13**

...कर्मणोः — II. iii. 65
देखें — **कर्तृकर्मणोः II. iii. 65**

...कर्मणोः — III. i. 66
देखें — **भावकर्मणोः III. i. 66**

...कर्मणोः — III. iii. 127
देखें — **कर्तृकर्मणोः III. iii. 127**

...कर्मणोः — VI. iv. 62
देखें — **भावकर्मणोः VI. iv. 62**

...कर्मणोः — VI. iv. 168
देखें — **अभावकर्मणोः VI. iv. 168**

कर्मधारय... — VI. iii. 41
देखें— **कर्मधारयजातीय० VI. iii. 41**

कर्मधारयः — I. ii. 42
(समान है अधिकरण जिनका, ऐसे पदों वाले तत्पुरुष की) कर्मधारय संज्ञा होती है।

कर्मधारयजातीयदेशीयेषु — VI. iii. 41
कर्मधारय समास में तथा जातीय एवं देशीय प्रत्ययों के परे रहते (ऊङ्वर्जित भाषितपुंस्क स्त्रीशब्द को पुंवद्-भाव हो जाता है)।

कर्मधारयवत् — VIII. i. 11
(यहाँ से आगे द्विर्वचन करने में) कर्मधारय समास के समान कार्य होते हैं, (ऐसा जानना चाहिये)।

कर्मधारये — II. ii. 38
कर्मधारय समास में (कडारादियों का पूर्व प्रयोग विकल्प से होता है)।

कर्मधारये — VI. ii. 25
(श्र, ज्य, अवम, कन् तथा पापवान् शब्द के उत्तरपद रहते) कर्मधारय समास में (भाववाची पूर्वपद को प्रकृतिस्वर होता है)।

कर्मधारये — VI. ii. 46
(क्तान्त शब्द उत्तरपद रहते) कर्मधारय समास में (अनिष्ठान्त पूर्वपद को प्रकृतिस्वर हो जाता है)।

कर्मधारये — VI. ii. 57
(कतर तथा कतम पूर्वपद को) कर्मधारय समास में (विकल्प से प्रकृति-स्वर होता है)।

कर्मन्द... — IV. iii. 111
देखें — **कर्मन्दकृशाश्वात् IV. iii. 111**

कर्मन्दकृशाश्वात् — IV. iii. 111
(तृतीयासमर्थ) कर्मन्द तथा कृशाश्व प्रातिपदिकों से (यथासङ्ख्य भिक्षुसूत्र तथा नटसूत्र का प्रोक्त विषय अभिधेय हो तो इनि प्रत्यय होता है)।

कर्मप्रवचनीययुक्ते — II. iii. 8
कर्मप्रवचनीय-संज्ञक शब्दों के योग में (द्वितीया विभक्ति होती है)।

कर्मप्रवचनीयाः — I. iv. 82
यह अधिकार है, आगे I. iv. 96 तक कर्मप्रवचनीय संज्ञा का विधान किया जायेगा।

...कर्मवचनः — VI. ii. 150
देखें — **भावकर्मवचनः VI. ii. 150**

कर्मवत् — III. i. 87
(जिस कर्म के कर्त्ता हो जाने पर भी क्रिया वैसी ही लक्षित हो, जैसी कर्मावस्था में थी, उस कर्म के साथ तुल्य क्रिया वाले कर्त्ता को) कर्मवद्भाव होता है।

कर्मवेषात्— V. i. 99
(तृतीयासमर्थ) कर्मन् तथा वेष प्रातिपदिकों से ('शोभित किया' अर्थ में यत् प्रत्यय होता है)।

कर्मव्यतिहारे — I. iii. 18
कर्मव्यतिहार=क्रिया के अदल बदल करने अर्थ में (धातु से आत्मनेपद होता है)।

कर्मव्यतिहारे — III. iii. 43
क्रिया का अदल बदल गम्यमान हो तो (स्त्रीलिंग में धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञाविषय तथा भाव में णच् प्रत्यय होता है)।

कर्मव्यतिहारे— V. iv. 127
कर्मव्यतिहार =क्रिया के अदल बदल करने के अर्थ में (जो बहुव्रीहि समास, तदन्त से समासान्त इच् प्रत्यय होता है)।

कर्मव्यतिहारे — VII. iii. 6
कर्मव्यतिहार =क्रिया के अदल बदल करने अर्थ में (पूर्वसूत्र से जो कुछ कहा है, वह नहीं होता)।

कर्ष... — VI. i. 153
देखें — **कर्षात्वतः VI. i. 153**

...कर्षः — III. iv. 50
देखें— **उपपीडरुधकर्षः III. iv. 50**

...कर्षाः — VI. ii. 129
देखें — **कूलसूद० VI. ii. 129**

कर्षात्वतः — VI. i. 153
कृष् विलेखने धातु तथा आकारवान् (घञन्त) शब्द के (अन्त को उदात्त होता है)।

...कर्षेषु — IV. iv. 97
देखें — **करणजल्प० IV. iv. 97**

...कर्ह्योः — III. iii. 5
देखें — **कदाकर्ह्योः III. iii. 5**

...कल... — III. i. 21
देखें — **मुण्डमिश्र० III. i. 21**

...कलकूट... — IV. i. 171
देखें — **साल्वावयवप्रत्यग्रथ० IV. i. 171**

...कलशि... — IV. iii. 56
देखें — **दृतिकुक्षिकलशि० IV. i. 56**

...कलह... — II. i. 30
देखें — **पूर्वसदृशसमो० II. i. 30**

...कलह... — III. i. 17
देखें — **शब्दवैरकलहा० III. i. 17**

...कलह... — III. ii. 23
देखें — **शब्दश्लोक० III. ii. 23**

...कलहम् — VI. ii. 153
देखें— **ऊनार्थकलहम् VI. ii. 153**

कलापि... — IV. iii. 48
देखें — **कलाप्यश्वत्थ० IV. iii. 48**

कलापि... — IV. iii. 104
देखें — **कलापिवैशम्पाय० IV. iii. 104**

कलापिनः — IV. iii. 108
(तृतीयासमर्थ) कलापिन् प्रातिपदिक से (द्वन्द्व विषय में प्रोक्त अर्थ कहना हो तो अण् प्रत्यय होता है)।

कलापिवैशम्पायनान्तेवासिभ्यः — IV. iii. 104
(तृतीयासमर्थ) कलापी के अन्तेवासी तथा वैशम्पायन के अन्तेवासी के वाचक प्रातिपदिकों से (प्रोक्तार्थ में णिनि प्रत्यय होता है, द्वन्द्व विषय में)।

कलाप्यश्वत्थयवबुसाद् — IV. iii. 48.
(सप्तमीसमर्थ कालवाची) कलापि, अश्वत्थ, यव, बुस शब्दों से (वुन् प्रत्यय होता है, 'देयमृणे' विषय में)।

...कलिङ्ग... — IV. i. 168
देखें— **द्व्यञ्मगध० IV. i. 168**

...कल्क... — III. i. 117
देखें — **मुञ्जकल्क० III. i. 117**

...कल्प... — VI. iii. 42
देखें — **घरूप० VI. iii. 42**

कल्पप्... — V. iii. 67
देखें— **कल्पब्देश्य० V. iii. 67**

कल्पब्देश्यदेशीयरः— V. iii. 67
('किञ्चित् न्यून' अर्थ में वर्तमान प्रातिपदिक से) कल्पप्, देश्य तथा देशीयर् प्रत्यय होता है।

...कल्पेषु — IV. iii. 105
देखें— **ब्राह्मणकल्पेषु IV. iii. 105**

कल्याण्यादीनाम् — IV. i. 126
कल्याणी आदि शब्दों से (अपत्य अर्थ में ठक् प्रत्यय होता है) तथा कल्याण्यादियों को (इनङ् आदेश भी हो जाता है)।

कवचिनः — IV. ii. 40
(षष्ठीसमर्थ) कवचिन् शब्द से (समूह अर्थ में ठञ् प्रत्यय भी होता है)।

कवतेः — VII. iv. 63
कुङ् अङ्ग के (अभ्यास को यङ् परे रहते चवर्गादेश नहीं होता)।

कवम् — VI. iii. 107
(उष्ण शब्द उत्तरपद रहते कु शब्द को) कव आदेश (भी) होता है, (एवं विकल्प से का आदेश भी)।

कवि... — VII. iv. 39
देखें— **कव्यध्वर० VII. iv. 39**

कव्य... — III. ii. 65
देखें — कव्यपुरीष० III. ii. 65

कव्यध्वरपृतनस्य — VII. iv. 39
कवि, अध्वर, पृतना – इन अङ्गों का (क्यच् परे रहते लोप होता है, पादबद्ध मन्त्र के विषय में)।

कव्यपुरीषपुरीष्येषु— III. ii. 65
कव्य, पुरीष, पुरीष्य – ये (सुबन्त) उपपद हों, तो (वेद विषय में वह् धातु से ञ्युट् प्रत्यय होता है)।

कशेः — VI. i. 147
(प्रतिष्कश शब्द में प्रति पूर्वक) कश् धातु को (सुट् आगम तथा उसी सुट् के सकार को षत्व निपातन किया जाता है)।

कष... — III. ii. 143
देखें — कषलस० III. ii. 143

कषः — III. ii. 42
कष् धातु से (सर्व, कूल, अभ्र और करीष कर्म उपपद रहते 'खच्' प्रत्यय होता है)।

कषः — III. iv. 34
(निमूल तथा समूल कर्म उपपद रहते) कष् धातु से (णमुल् प्रत्यय होता है)।

कषः — VII. ii. 22
(दुःख तथा गंभीर अर्थ में) कष् हिंसायाम् धातु को (निष्ठा परे रहते इट् आगम नहीं होता)।

कषलसकत्थस्रम्भः — III. ii. 143
(विपूर्वक) कष्, लस्, कत्थ, स्रम्भ् – इन धातुओं से (तच्छीलादि कर्ता हो, तो वर्तमान काल में घिनुण् प्रत्यय होता है)।

कषादिषु— III. iv. 46
कषादि धातुओं में (यथाविधि अनुप्रयोग होता है, अर्थात् जिस धातु से णमुल् का विधान करेंगे, उसका ही पश्चात् प्रयोग होगा)।

...कषाययोः — VI. ii. 10
देखें — अध्वर्युकषाययोः VI. ii. 10

कष्टाय — III. i. 14
चतुर्थी समर्थ कष्ट शब्द से (कुटिल अर्थ में क्यङ् प्रत्यय होता है)।

...कस... — VII. iv. 84
देखें — वञ्चुस्रंसु० VII. iv. 84

...कसः — III. ii. 175
देखें — स्थेशभास० III. ii. 175

...कसन्तेभ्यः — III. i. 140
देखें — ज्वलितिकसन्तेभ्यः III. i. 140

कसुन् — III. iv. 17
(भावलक्षण में वर्तमान सृपि तथा तृद् धातुओं से तुमर्थ में) कसुन् प्रत्यय होता है, (वेद-विषय में)।

...कसुनः — I. i. 39
देखें — क्त्वातोसुन्कसुनः I. i. 39

...कसुनौ — III. iv. 13
देखें— तोसुन्कसुनौ III. iv. 13

...कसेन्... — III. iv. 9
देखें — सेसेनसे० III. iv. 9

कस्कादिषु — VIII. iii. 48
कस्कादि-गणपठित शब्दों के (विसर्जनीय को भी यथायोग सकार अथवा षकार आदेश होता है; कवर्ग, पवर्ग परे रहते)।

कस्य— IV. ii. 24
'क' देवतावाची प्रातिपदिक से (षष्ठयर्थ में अण् प्रत्यय होता है) तथा 'क' को (प्रत्यय के साथ साथ इकारान्तादेश भी होता है)।

कस्य— V. iii. 72
ककारान्त अव्यय को (अकच् प्रत्यय के साथ साथ दकारादेश भी होता है)।

कंस... — VI. ii. 122
देखें— कंसमन्थ० VI. ii. 122

... कंस... — VIII. iii. 46
देखें — कृकमि० VIII. iii. 46

कंसमन्थशूर्पपाय्यकाण्डम् — VI.ii. 122
कंस, मन्थ, शूर्प, पाय्य, काण्ड – इन उत्तरपद शब्दों को (द्विगु समास में आद्युदात्त होता है)।

कंसात् — V. i. 25
कंस प्रातिपदिक से ('तदर्हति' पर्यन्त कथित अर्थों में टिठन् प्रत्यय होता है)।

कंसीय... — IV. iii. 165
देखें — कंसीयपरशव्ययोः IV. iii. 165

कंसीयपरशव्ययोः — IV. iii. 165
(षष्ठीसमर्थ कंसीय तथा परशव्य प्रातिपदिकों से विकार अर्थ में यथासङ्ख्य करके यञ् और अञ् प्रत्यय होते हैं, तथा प्रत्यय के साथ साथ) कंसीय और परशव्य का (लुक् भी होता है)।

काकुदस्य — V. iv. 148
(उत् तथा वि से उत्तर) काकुद शब्द को (समासान्त लोप होता है, बहुव्रीहि समास में)।

काठके — VII. iv. 38
(देव तथा सुम्न अङ्ग को क्यच् परे रहते आकारादेश होता है, यजुर्वेद की) काठक शाखा में।

...काणाम् — VI. ii. 144
देखें — थाथघञ्० VI. ii. 144

...काण्ठेविद्धिभ्यः — IV. i. 81
देखें — दैवयज्ञिशौचिवृक्षि० IV. i. 81

काण्ड... — V. ii. 111
देखें — काण्डाण्डात् V. ii. 111

...काण्डम् — VI. ii. 122
देखें — कंसमन्थ० VI. ii. 122

...काण्डम् — VI. ii. 126
देखें — चेलखेट० VI. ii. 126

काण्डाण्डात् — V. ii. 111
काण्ड तथा अण्ड प्रातिपदिकों से (यथासङ्ख्य करके ईरन् और ईरच् प्रत्यय होते हैं, 'मत्वर्थ' में)।

काण्डादीनि — VI. ii. 135
(अप्राणिवाची षष्ठ्यन्त शब्द से उत्तर पूर्वोक्त छः) काण्डादि उत्तरपद को (भी आद्युदात्त होता है)।

काण्डान्तात् — IV. i. 23
काण्ड शब्दान्त (अनुपसर्जन द्विगु-संज्ञक) प्रातिपदिक से (तद्धित का लुक् हो जाने पर स्त्रीलिंग में ङीप् प्रत्यय नहीं होता, क्षेत्र वाच्य होने पर)।

कात् — VI. i. 131
ककार से (पूर्व सुट् का आगम होता है), यह अधिकार है।

कात् — VII. iii. 44
(प्रत्यय में स्थित) ककार से (पूर्व अकार के स्थान में इकारादेश होता है, आप् परे रहते; यदि वह आप् सुप् से उत्तर न हो तो)।

कान् — VIII. iii. 12
कान् शब्द के (नकार को रु होता है, आम्रेडित परे रहते)।

कानच् — III. ii. 106
(वेद-विषय में भूतकाल में विहित लिट् के स्थान में विकल्प से) कानच् आदेश होता है।

कापिश्याः — IV. ii. 98
कापिशी शब्द से (शैषिक ष्फक् प्रत्यय होता है)।

काम... — V. ii. 98
देखें — कामबले V. ii. 98

कामप्रवेदने — III. iii. 153
अपने अभिप्राय का प्रकाशन करना गम्यमान हो (और कच्चित् शब्द उपपद में न हो तो धातु से लिङ् प्रत्यय होता है)।

कामबले — V. ii. 98
(वत्स और अंस प्रातिपदिकों से मत्वर्थ में यथासङ्ख्य करके) कामवान् = प्रेमयुक्त और बलवान् अर्थ गम्यमान हो तो (लच् प्रत्यय होता है)।

...कामुक... — IV. i. 42
देखें — जानपदकुण्ड० IV. i. 42

कामे — V. ii. 65
(सप्तमीसमर्थ धन और हिरण्य प्रातिपदिकों से) 'इच्छा' अर्थ में (कन् प्रत्यय होता है)।

काम्यच् — III. i. 9
(आत्मसम्बन्धी सुबन्त कर्म से इच्छा अर्थ में विकल्प से) 'काम्यच्' प्रत्यय (भी) होता है।

...कार... — III. ii. 21
देखें — दिवाविभा० III. ii. 21

...कारक... — VI. ii. 139
देखें — गतिकारको० VI. ii. 139

...कारक... — VI. iii. 98
देखें — आशीराशास्था० VI. iii. 98

कारकम् — VIII. i. 51
(गत्यर्थक धातुओं के लोट् लकार से युक्त लृडन्त तिडन्त को अनुदात्त नहीं होता, यदि) कारक (सारा अन्य न हो तो)।

कारकात् — V. iv. 42

(बहुत तथा थोड़ा अर्थ वाले) कारकाभिधायी प्रातिपदिकों से (विकल्प से शस् प्रत्यय होता है)।

कारकमध्ये — II. iii. 7

दो कारकों के बीच में (जो काल और अध्व-वाचक शब्द, उनसे सप्तमी और पञ्चमी विभक्ति होती है)।

कारकात् — VI. ii. 148

(सञ्ज्ञा विषय में आशीर्वाद गम्यमान हो तो) कारक से उत्तर (क्तान्त दत्त तथा श्रुत शब्दों का ही अन्त वर्ण उदात्त होता है)।

कारके — I. iv. 23

कारके – यह अधिकार सूत्र है।

कारके — III. iii. 19

(कर्तृभिन्न) कारक में (भी धातु से संज्ञाविषय में घञ् प्रत्यय होता है)।

कारनाम्नि — VI. iii. 9

(प्राच्यदेशों के) जो करों के नाम वाले शब्द, उनमें (भी हलादि शब्द के परे रहते हलन्त तथा अदन्त शब्दों से उत्तर सप्तमी विभक्ति का अलुक् होता है)।

कारिणि— V. ii. 72

(द्वितीयासमर्थ शीत तथा उष्ण प्रातिपदिकों से) 'करने वाला' अभिधेय हो तो (कन् प्रत्यय होता है)।

...कारिभ्यः — IV. i. 152

देखें — **सेनान्तलक्षण॰ IV. i. 152**

कारे — VI. iii. 69

कार शब्द उत्तरपद रहते (सत्य तथा अगद शब्द को मुम् आगम हो जाता है)।

कार्त्तकौजपादयः — VI. ii. 37

कार्त्तकौजपादि जो द्वन्द्वसमास वाले शब्द, उनके पूर्वपद को (भी प्रकृति स्वर हो जाता है)।

...कार्तिकी... — IV. ii. 23

देखें— **फाल्गुनीश्रवणा॰ IV. ii. 23**

कात्स्न्ये— V. iv. 52

(कृ, भू तथा अस् धातु के योग में सम् पूर्वक पद् धातु के कर्त्ता में वर्तमान प्रातिपदिक से) 'सम्पूर्णता' गम्यमान हो तो (विकल्प से साति प्रत्यय होता है)।

कार्मः — VI. iv. 172

'कार्म' – इस शब्द में ताच्छील्यार्थक ण परे रहते टिलोप का निपातन किया जाता है।

...कार्मार्याभ्याम् — IV. i. 155

देखें — **कौसल्यकार्मार्याभ्याम् IV. i. 155**

...कार्य... — V. i. 92

देखें — **परिजय्यलभ्य॰ V. i. 92**

कार्यम् — I. iv. 2

(विप्रतिषेध = तुल्य बल विरोध होने पर परसूत्र-कथित) कार्य होता है।

कार्यम्— V. i. 95

(सप्तमीसमर्थ कालवाची प्रातिपदिकों से 'दिया जाता है' और) 'कार्य' = काम (अर्थों में भव अर्थ के समान ही प्रत्यय हो जाते हैं)।

कार्षापण... — V. i. 29

देखें — **कार्षापणसहस्राभ्याम् V. i. 29**

कार्षापणसहस्राभ्याम् — V. i. 29

(अध्यर्द्ध शब्द पूर्व में है जिसके, ऐसे तथा द्विगुसञ्ज्ञक) कार्षापण एवं सहस्र-शब्दान्त प्रातिपदिक से (तदर्हति पर्यन्त कथित अर्थों में उत्पन्न प्रत्यय का विकल्प से लुक् होता है)।

...कार्ष्य... — VIII. iv. 5

देखें — **प्रनिरन्तः॰ VIII. iv. 5**

काल... — I. ii. 57

देखें — **कालोपसर्जने I. ii. 57**

काल... — II. iii. 5

देखें — **कालाध्वनोः II. iii. 5**

काल... — III. iii. 167

देखें — **कालसमयवेलासु III. iii. 167**

...काल... — IV. i. 42

देखें — **जानपदकुण्ड॰ IV. i. 42**

काल... — V. ii. 81

देखें — **कालप्रयोजनात् V. ii. 81**

...काल... — VI. ii. 29

देखें — **इगन्तकाल॰ VI. ii. 29**

...काल... — VI. ii. 170

देखें — **जातिकाल॰ VI. ii. 170**

...काल... — VI. iii. 14
देखें — **प्रावृट्शरत्० VI. iii. 14**
...काल... — VI. iii. 16
देखें — **घकालतनेषु VI. iii. 16**

कालः — IV. ii. 3
(नक्षत्रविशेषवाची तृतीयासमर्थ प्रातिपदिक से उन नक्षत्रों से युक्त) काल अर्थ को कहने में) (यथाविहित = अण् प्रत्यय होता है)।

कालनाम्नः — VI. iii. 16
काल के नामवाची शब्दों से उत्तर (सप्तमी का घसञ्ज्ञक प्रत्यय, काल शब्द तथा तनप्रत्यय के उत्तरपद रहते विकल्प करके अलुक् होता है)।

कालप्रयोजनात् — V. ii. 81
कालवाची तथा प्रयोजनवाची प्रातिपदिकों से ('रोग' अभिधेय हो तो कन् प्रत्यय होता है)।

...कालयोः — III. i. 148
देखें — **व्रीहिकालयोः III. i. 148**

कालविभागे — III. iii. 137
कालकृतमर्यादा में (अवरभाग को कहना हो तो भी भविष्यत्काल में धातु से अनद्यतन के समान प्रत्ययविधि नहीं होती, यदि वह काल का मर्यादाविभाग दिन-रात-सम्बन्धी न हो)।

कालसमयवेलासु — III. iii. 167
काल, समय, वेला – ये शब्द उपपद रहते (धातु से तुमुन् प्रत्यय होता है)।

कालाः — II. i. 27
कालवाचक (द्वितीयान्त) शब्द (क्तान्त समर्थ सुबन्त के साथ विकल्प से समास को प्राप्त होते हैं, और वह तत्पुरुष समास होता है)।

कालाः — II. ii. 5
(परिमाणवाची) काल शब्द (परिमाणीवाची सुबन्त के साथ विकल्प से समास को प्राप्त होते हैं, और वह तत्पुरुष समास होता है)।

कालात् — IV. iii. 11
कालविशेषवाची प्रातिपदिकों से (शैषिक ठञ् प्रत्यय होता है)।

कालात् — IV. iii. 43
कालवाची (सप्तमीसमर्थ) प्रातिपदिकों से (साधु, पुष्प्यत्, पच्यमान अर्थों में यथाविहित प्रत्यय होता है)।
साधु = उचित, उपयोगी।
पुष्प्यत् = खिलता हुआ।
पच्यमान = परिपक्व होता हुआ।

...कालात् — IV. iv. 71
देखें — **अदेशकालात् IV. iv. 71**

कालात् — V. i. 77
(यहाँ से आगे V. i. 96 तक के कहे हुए प्रत्यय) कालवाची प्रातिपदिकों से (हुआ करेंगे, ऐसा जानें)।

कालात् — V. i. 106
(प्रथमासमर्थ) काल प्रातिपदिक से (षष्ठ्यर्थ में यत् प्रत्यय होता है, यदि वह प्रथमासमर्थ काल प्रातिपदिक प्राप्त समानाधिकरण वाला हो तो)।

कालात् — V. iv. 33
(अनित्य वर्ण में तथा 'रँगा हुआ' अर्थ में वर्तमान) काल प्रातिपदिक से (भी कन् प्रत्यय होता है)।

कालाध्वनोः — II. iii. 5
काल के अर्थ वाले शब्दों में तथा अध्व=मार्गवाची शब्दों में (द्वितीया विभक्ति होती है, अत्यन्तसंयोग गम्यमान होने पर)।

काले — II. iii. 64
काल (अधिकरण) होने पर (कृत्वसुच् अर्थ वाले प्रत्ययों के प्रयोग में षष्ठी विभक्ति होती है, शेषत्व की विवक्षा में)।

काले — V. iii. 15
(सप्तम्यन्त सर्व, एक, अन्य, किम्, यत् तथा तत् प्रातिपदिकों से) काल अर्थ में (दा प्रत्यय होता है)।

कालेभ्यः — IV. ii. 33
कालविशेषवाची प्रातिपदिकों से ('सास्य देवता' विषय में 'भव' अधिकार के समान प्रत्यय होते हैं)।

कालेषु — III. iv. 57
(क्रिया के व्यवधान में वर्तमान असु तथा तृष् धातुओं से) कालवाची (द्वितीयान्त) शब्द उपपद रहते (णमुल् प्रत्यय होता है)।

...कालेषु – V. iii. 27
देखें – **दिग्देशकालेषु V. iii. 27**

कालोपसर्जने – I. ii. 57

काल तथा उपसर्जन = गौण (भी अशिष्य होते हैं, तुल्य हेतु होने से अर्थात् पूर्वसूत्रोक्त लोकाधीनता के हेतु होने से)।

काल्या – III. i. 104

(प्रथम गर्भ के ग्रहण का) समय हो गया है – इस अर्थ में (उपसर्या शब्द निपातन किया जाता है)।

...काश... – IV. ii. 79
देखें – **अरीहणकृशाश्व० IV. ii. 79**

...काश... – VI. ii. 82
देखें – **दीर्घकाश० VI. ii. 82**

काशे – VI. iii. 122

(इगन्त उपसर्ग को) काश शब्द उत्तरपद रहते (दीर्घ होता है, संहिता के विषय में)।

काश्यप... – IV. iii. 103
देखें – **काश्यपकौशिकाभ्याम् IV. iii. 103**

...काश्यप... – VIII. iv. 66
देखें – **अगार्ग्यकाश्यप० VIII. iv. 66**

काश्यपकौशिकाभ्याम् – IV. iii. 103

(तृतीयासमर्थ ऋषिवाची) काश्यप और कौशिक प्रातिपदिकों से (प्रोक्त अर्थ में णिनि प्रत्यय होता है)।

काश्यपस्य – I. ii. 25

काश्यप आचार्य के मत में (तृष्, मृष्, कृश् – इन धातुओं से परे सेट् क्त्वा कित् नहीं होता है)।

काश्यपे – IV. i. 124

(विकर्ण तथा कुषीतक शब्दों से) काश्यप अपत्य विशेष को कहना हो (तो ठक् प्रत्यय होता है)।

काश्यादिभ्यः – IV. ii. 115

काशी आदि प्रातिपदिकों से (शैषिक ठञ् तथा ञिठ् प्रत्यय होते हैं)।

...काषि... – VI. iii. 53
देखें – **हिमकाषिहतिषु VI. iii. 53**

कास्... – III. i. 35
देखें – **कास्प्रत्ययात् III. i. 35**

कासू... – V. iii. 90
देखें – **कासूगोणीभ्याम् V. iii. 90**

कासूगोणीभ्याम् – V. iii. 90

('छोटा' अर्थ गम्यमान हो तो) कासू तथा गोणी प्रातिपदिकों से (ष्टरच् प्रत्यय होता है)।

कासू = शक्ति नामक अस्त्र।

गोणी = बोरी।

कास्तीर... – VI. i. 150
देखें – **कास्तीराजस्तुन्दे VI. i. 150**

कास्तीराजस्तुन्दे – VI. i. 150

कास्तीर तथा अजस्तुन्द शब्दों में सुट् का निपातन किया जाता है, (नगर अभिधेय हो तो)।

कास्प्रत्ययात् – III. i. 35

'कासृ शब्दकुत्सायाम्' धातु से तथा प्रत्ययान्त धातुओं से (लट् लकार परे रहते आम् प्रत्यय होता है, यदि मन्त्रविषयक प्रयोग न हो तो)।

कि... – III. ii. 171
देखें – **किकिनौ III. ii. 171**

किः – III. iii. 92

(उपसर्ग उपपद रहने पर घुसंज्ञक धातुओं से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में) कि प्रत्यय होता है।

किकिनौ – III. ii. 169

(आत् = आकारान्त, ऋ = ऋकारान्त तथा गम्, हन्, जन् धातुओं से तच्छीलादि कर्ता हो तो वेदविषय में वर्तमानकाल में) कि तथा किन् प्रत्यय होते हैं, (और उन कि, किन् प्रत्ययों को लिट्वत् कार्य होता है)।

किङ्किल... – III. iii. 146
देखें – **किङ्किलास्त्य० III. iii. 146**

किङ्किलास्त्यर्थेषु – III. iii. 146

(अनवक्लृप्ति तथा अमर्ष गम्यमान न हो तो) किङ्किल तथा अस्ति अर्थ वाले पदों के उपपद रहते (धातु से लृट् प्रत्यय होता है)।

कित् – I. ii. 5

(असंयोगान्त धातु से परे अपित् लिट् प्रत्यय) कित् के समान होता है।

कित् — III. iv. 104

(आशीर्वाद में विहित परस्मैपद-संज्ञक लिङ् को यासुट् आगम होता है), तथा वह कित् (और उदात्त) होता है।

कितः — VI. i. 159

(तद्धितसञ्ज्ञक) कित् प्रत्यय को (अन्तोदात्त होता है)।

...कितवादिभ्यः — II. iv. 68

देखें — **तिककितवादिभ्यः II. iv. 68**

किति — II. iv. 36

(अद् को जग्ध् आदेश होता है, ल्यप् तथा तकारादि) कित् (आर्धधातुक) परे रहते।

किति — VI. i. 15

(वच्, ञिष्वप् तथा यजादि धातुओं को) कित् प्रत्यय के परे रहते (सम्प्रसारण हो जाता है)।

किति — VI. i. 38

(इस वय् के यकार को) कित् (लिट्) प्रत्यय के परे रहते (विकल्प करके वकारादेश भी हो जाता है)।

किति — VII. ii. 11

(श्रि तथा उगन्त धातुओं को) कित् प्रत्यय परे रहते (इट् आगम नहीं होता)।

किति — VII. ii. 118

(तद्धित) कित् परे रहते (भी अङ्ग के अचों में आदि अच् को वृद्धि होती है)।

किति — VII. iv. 40

(दो, षो, मा तथा स्था अङ्गों को तकारादि) कित् प्रत्यय के परे रहते (इकारादेश होता है)।

किति — VII. iv. 69

(इण् अङ्ग के अभ्यास को) कित् (लिट्) परे रहते (दीर्घ होता है)।

...कितौ — I. i. 45

देखें — **टकितौ I. i. 45**

...किद्भ्यः — III. i. 5

देखें — **गुप्तिज्किद्भ्यः III. i. 5**

...किनौ — III. ii. 171

देखें — **किकिनौ III. ii. 171**

किम् — II. i. 63

किम् शब्द (निन्दा गम्यमान होने पर समानाधिकरण समर्थ सुबन्त के साथ विकल्प से समास को प्राप्त होता है, और वह समास तत्पुरुषसंज्ञक होता है)।

...किम्... — III. ii. 21

देखें — **दिवाविभा० III. ii. 21**

किम्... — V. ii. 40

देखें — **किमिदम्भ्याम् V. ii. 40**

किम्... — V. iii. 2

देखें — **किंसर्वनाम० V. iii. 2**

...किम्... — V. iii. 15

देखें — **सर्वैकान्य० V. iii. 15**

किम्... — V. iii. 92

देखें — **किंयत्तदः V. iii. 92**

किम्... — V. iv. 11

देखें — **किमेत्तिङ० V. iv. 11**

किम् — VIII. i. 44

(क्रिया के प्रश्न में वर्तमान) किम् शब्द से युक्त (उपसर्ग से रहित तथा प्रतिषेधरहित तिङन्त को अनुदात्त नहीं होता)।

किमः — V. ii. 41

(सङ्ख्या के परिमाण अर्थ में वर्तमान प्रथमासमर्थ) किम् प्रातिपदिक से (षष्ठ्यर्थ में डति तथा वतुप् प्रत्यय होते हैं, और उस वतुप् प्रत्यय के वकार के स्थान में घकार आदेश होता है)।

किमः — V. iii. 12

(सप्तम्यन्त) किम् प्रातिपदिक से (अत् प्रत्यय होता है)।

किमः — V. iii. 25

(प्रकारवचन में वर्तमान) किम् प्रातिपदिक से (भी थमु प्रत्यय होता है)।

किमः — V. iv. 70

('निन्दा' अर्थ में वर्तमान) किम् प्रातिपदिक से (समासान्त प्रत्यय नहीं होते)।

किमः — VII. ii. 103

किम् अङ्ग को (विभक्ति परे रहते 'क' आदेश होता है)।

किमिदम्भ्याम् — V. ii. 40
(प्रथमासमर्थ परिमाण समानाधिकरणवाची) किम् तथा इदम् प्रातिपदिकों से (षष्ठ्यर्थ में वतुप् प्रत्यय होता है, और वतुप् के वकार को घकार आदेश हो जाता है)।

किमेत्तिङव्ययघात् — V. iv. 11
किम्, एकारान्त, तिङन्त तथा अव्ययों से जो घ अर्थात् तरप् तथा तमप् प्रत्यय, तदन्त से (आमु प्रत्यय होता है, द्रव्य का प्रकर्ष न कहना हो तो)।

...किमोः — VI. iii. 89
देखें — इदङ्किमोः VI. iii. 89

किंयत्तदः — V. iii. 92
किम्, यत् तथा तत् प्रातिपदिकों से ('दो में से एक का पृथक्करण' अर्थ में डतरच् प्रत्यय होता है)।

किंवृत्तम् — VIII. i. 48
(जिससे उत्तर चित् है तथा जिससे पूर्व कोई शब्द नहीं है, ऐसे) किंवृत्त शब्द से युक्त (तिङन्त को भी अनुदात्त नहीं होता)।

किंवृत्ते — III. iii. 6
(लिप्सा अर्थात् लेने की इच्छा गम्यमान होने पर) किंवृत्त = क्या, कौन, किसे आदि से सम्बद्ध प्रश्न उपपद होने पर (भविष्यत्काल में धातु से विकल्प से लट् प्रत्यय होता है)।

किंवृत्ते — III. iii. 144
किंवृत्त उपपद हो तो (गर्हा गम्यमान होने पर धातु से लिङ् तथा लृट् प्रत्यय होते हैं)।

...किंशुलकादीनाम् — VI. iii. 116
देखें — कोटरकिंशुलकादीनाम् VI. iii. 116

किंसर्वनामबहुभ्यः — V. iii. 2
(यहाँ से आगे 'दिक्शब्देभ्यः सप्तमीपञ्चमी०' V. iii. 27 तक जितने प्रत्यय कहे हैं, वे सब) किम्, सर्वनाम तथा बहु शब्दों से ही होते हैं, (द्वि आदि शब्दों को छोड़कर)!

...किरः — III. i. 35
देखें — इगुपधज्ञा० III. i. 35

किरः — VII. ii. 75
कृ इत्यादि (पाँच) धातुओं से उत्तर (भी सन् को इट् आगम होता है)।

किरतौ — VI. i. 135
(काटने के विषय में) कॄ विक्षेपे धातु के परे रहते (उप उपसर्ग से उत्तर ककार से पूर्व सुट् का आगम होता है, संहिता के विषय में)।

किशरादिभ्यः — IV. iv. 53
(प्रथमासमर्थ) किशरादि प्रातिपदिकों से ('इसका बेचना' अर्थ में ष्ठन् प्रत्यय होता है)।
किशर = सुगन्धिविशेष।

की — VI. i. 21
(चायृ धातु को यङ् प्रत्यय के परे रहते) की आदेश होता है।

की — VI. i. 34
(चायृ धातु को वेदविषय में बहुल करके) 'की' आदेश हो जाता है।

...की — VI. iii. 89
देखें — ईश्की VI. iii. 89

...कीर्त्तयः — III. iii. 97
देखें — ऊतियूति० III. iii. 97

...कु... — I. iii. 8
देखें — लशकु० I. iii. 8

कु... — II. ii. 18
देखें — कुगतिप्रादयः II. ii. 18

कु... — V. iv. 105
देखें — कुमहद्भ्याम् V. iv. 105

कु... — VI. i. 116
देखें — कुधपरे VI. i. 116

...कु... — VI. iii. 132
देखें — तुनुघ० VI. iii. 132

कु — VII. ii. 104
(तकारादि तथा हकारादि विभक्तियों के परे रहते किम् को) कु आदेश होता है।

कु... — VII. iv. 62
देखें — कुहोः VII. iv. 62

कु... — VIII. iii. 37
देखें — कुप्वोः VIII. iii. 37

...कु... – VIII. iii. 96

देखें – विकुशमि० VIII. iii. 96

...कु... – VIII. iii. 97

देखें – अम्बाम्ब० VIII. iii. 97

...कु... – VIII. iv. 2

देखें – अट्कुप्वाङ्० VIII. iv. 2

कुः – VII. iii. 52

(चकार तथा जकार के स्थान में) कवर्ग आदेश होता है, (घित् तथा ण्यत् प्रत्यय परे रहते)।

कुः – VIII. ii. 30

(चवर्ग के स्थान में) कवर्ग आदेश होता है, (झल् परे रहते या पदान्त में)।

कुः – VIII. ii. 62

(क्विन् प्रत्यय हुआ है जिस धातु से, उस पद को) कवर्ग (अन्त) आदेश होता है।

कुक् – IV. i. 158

(गोत्रभिन्न, वृद्धसंज्ञक वाकिनादि प्रातिपदिकों से उदीच्य आचार्यों के मत में अपत्यार्थ में फिञ् प्रत्यय तथा कुक् का आगम होता है)।

कुक् – IV. ii. 90

(नडादि शब्दों को चातुरर्थिक छ प्रत्यय तथा) कुक् का आगम होता है।

कुक् – V. ii. 129

(वात तथा अतीसार प्रातिपदिकों से 'मत्वर्थ' में इनि प्रत्यय होता है, तथा इन शब्दों को) कुक् आगम भी होता है।

कुक्... – VIII. iii. 28

देखें – कुक्टुक् VIII. iii. 28

...कुक्कुट्यौ – IV. iv. 46

देखें – ललाटकुक्कुट्यौ IV. iv. 46

कुक्टुक् – VIII. iii. 26

(पदान्त ङकार तथा णकार को यथासङ्ख्य करके विकल्प से) कुक् तथा टुक् आगम होते हैं, (शर् प्रत्याहार परे रहते)।

...कुक्षि... – IV. ii. 95

देखें – कुलकुक्षि० IV. ii. 95

...कुक्षि... – IV. iii. 56

देखें – दृतिकुक्षिकलशि० IV. iii. 56

...कुक्षि... – VI. ii. 187

देखें – स्फिगपूत० VI. ii. 187

कुगतिप्रादयः – II. ii. 18

कु = निन्दार्थक अव्यय, गतिसञ्ज्ञक और प्रादि शब्द (समर्थ सुबन्त के साथ नित्य ही समास को प्राप्त होते है और वह तत्पुरुष समास होता है)।

...कुञ्जरैः – II. i. 61

देखें – वृन्दारकनाग० II. i. 61

कुञ्जादिभ्यः – IV. i. 98

(गोत्रापत्य में) षष्ठीसमर्थ कुञ्जादि प्रातिपदिकों से (च्फञ् प्रत्यय होता है)।

...कुटादिभ्यः – I. ii. 1

देखें – गाङ्कुटादिभ्यः I. ii. 1

कुटारच् – V. ii. 30

(अव उपसर्ग प्रातिपदिक से) कुटारच् (तथा कटच्) प्रत्यय (होते हैं)।

कुटिलिकायाः – IV. iv. 18

(तृतीयासमर्थ) कुटिलिका प्रातिपदिक से ('हरति' अर्थ में अण् प्रत्यय होता है)।

कुटिलिका = टेढ़ी गति, लौहकारों का उपकरण

कुटी... – V. iii. 88

देखें – कुटीशमी० V. iii. 88

कुटीशमीशुण्डाभ्यः – V. iii. 88

('छोटा' अर्थ गम्यमान हो तो) कुटी, शमी और शुण्डा प्रातिपदिकों से (र प्रत्यय होता है)।

शमी = वृक्षविशेष, शुण्डा = सूंड

...कुट्ट... – III. ii. 155

देखें – जल्पभिक्ष० III. ii. 155

कुणप्... – V. ii. 24

देखें – कुणब्जाहचौ V. ii. 24

कुणब्जाहचौ — V. ii. 24

(षष्ठीसमर्थ पील्वादि तथा कर्णादि प्रातिपदिकों से यथासङ्ख्य करके 'पाक' तथा 'मूल' अर्थ अभिधेय हों तो) कुणप् तथा जाहच् प्रत्यय होते हैं।

...कुण्ड... — IV. i. 42

देखें — **जानपदकुण्ड० IV. i. 42**

कुण्डम् — VI. ii. 136

(वनवाची उत्तरपद) कुण्ड शब्द को (तत्पुरुष समास में आद्युदात्त होता है)।

कुण्डपाय्य... — III. i. 130

देखें — **कुण्डपाय्यसंचाय्यौ III. i. 130**

कुण्डपाय्यसंचाय्यौ — III. i. 130

(क्रतु अभिधेय हो तो) कुण्डपाय्य तथा संचाय्य शब्द निपातन किये जाते हैं।

...कुण्डिनच् — II. iv. 70

देखें — **अगस्तिकुण्डिनच् II. iv. 70**

कुत्वा — V. iii. 89

('छोटा' अर्थ गम्यमान हो तो) कुतू प्रातिपदिक से (डुपच् प्रत्यय होता है)।

कुतू = तेल रखने की चमड़े की बोतल या कुप्पी

...कुत्स... — II. iv. 65

देखें — **अत्रिभृगुकुत्स० II. iv. 65**

कुत्सन... — IV. ii. 127

देखें — **कुत्सनप्रावीण्ययोः IV. ii. 127**

...कुत्सन... — VIII. i. 8

देखें — **असूयासम्मति० VIII. i. 8**

कुत्सन... — VIII. i. 27

देखें — **कुत्सनाभीक्ष्ण्ययोः VIII. i. 27**

कुत्सनप्रावीण्ययोः — IV. ii. 127

निन्दा तथा नैपुण्य अभिधेय हो तो (नगर प्रातिपदिक से शैषिक वुञ् प्रत्यय होता है)।

कुत्सनाभीक्ष्ण्ययोः — VIII. i. 27

(तिङन्त पद से उत्तर) निन्दा तथा पौनःपुन्य अर्थ में वर्तमान (गोत्रादिगण-पठित पदों को अनुदात्त होता है)।

कुत्सने — IV. i. 147

(गोत्र में वर्तमान जो स्त्री, तद्वाची प्रातिपदिक से) निन्दा गम्यमान होने पर (अपत्य अर्थ में ण प्रत्यय होता है, और ठक् भी)।

कुत्सने — VIII. i. 69

(गोत्रादिगण-पठित शब्दों को छोड़कर) निन्दावाची सुबन्त के परे रहते (भी सगतिक एवं अगतिक दोनों तिङन्तों को अनुदात्त होता है)।

...कुत्सनेषु — VIII. ii. 103

देखें — **असूयासम्मति० VIII. ii. 103**

कुत्सनैः — II. i. 52

कुत्सन = निन्दावाची (समानाधिकरण सुबन्त) शब्दों के साथ (कुत्सित = निन्दितवाची सुबन्त शब्द विकल्प से समास को प्राप्त होते हैं, और वह तत्पुरुष समास होता है)।

कुत्सितानि — II. i. 52

कुत्सितवाची = निन्द्यवाची (सुबन्त) शब्द (कुत्सन-वाची = निन्दावाची समानाधिकरण सुबन्तों के साथ विकल्प करके समास को प्राप्त होते हैं, और वह समास तत्पुरुषसंज्ञक होता है)।

कुत्सिते — V. iii. 74

'निन्दित' अर्थ में वर्तमान (प्रातिपदिक तथा तिङन्त से यथाविहित प्रत्यय होते हैं)।

कुत्सितैः — II. i. 53

(कुत्सनवाची पाप और अणक शब्द) कुत्सित = निन्दितवाची (सुबन्तों) के साथ (विकल्प से समास को प्राप्त होते हैं, और वह तत्पुरुष समास होता है)।

अणक = घृणित।

कुधपरे — VI. i. 116

(यजुर्वेद-विषय में) कवर्ग तथा धकारपरक (अनुदात्त अकार) के परे रहते (भी एङ् को प्रकृतिभाव होता है)।

...कुन्ति... — IV. i. 174

देखें — **अवन्तिकुन्ति० IV. i. 174**

...कुप्य... — III. i. 114

देखें — **राजसूयसूर्य० III. i. 114**

कुप्वोः — VIII. iii. 37

कवर्ग तथा पवर्ग परे रहते (विसर्जनीय को यथासङ्ख्य करके ≍क अर्थात् जिह्वामूलीय तथा ≍प अर्थात् उपध्मानीय आदेश होते हैं, तथा चकार से विसर्जनीय भी होता है)।

कुमति — VIII. iv. 13

(पूर्वपद में स्थित निमित्त से उत्तर) कवर्गवान् शब्द उत्तरपद रहते (भी प्रातिपदिकान्त, नुम् तथा विभक्ति के नकार को णकारादेश होता है)।

कुमहद्भ्याम् — V. iv. 105

कु तथा महत् शब्द से परे (जो ब्रह्म शब्द, तदन्त तत्पुरुष से विकल्प से समासान्त टच् प्रत्यय होता है)।

कुमार... — III. ii. 51

देखें — **कुमारशीर्षयोः III. ii. 51**

कुमारः — II. i. 69

कुमार शब्द (समानाधिकरण श्रमण आदि समर्थ सुबन्त शब्दों के साथ विकल्प से समास को प्राप्त होता है, और वह समास तत्पुरुषसंज्ञक होता है)।

कुमारः — VI. ii. 26

(पूर्वपद स्थित) कुमार शब्द को (भी कर्मधारय समास में प्रकृतिस्वर होता है)।

...कुमारयोः — VI. ii. 57

देखें — **ब्राह्मणकुमारयोः VI. ii. 57**

कुमारशीर्षयोः — III. ii. 51

कुमार तथा शीर्ष (कर्म) के उपपद रहते (हन् धातु से णिनि प्रत्यय होता है)।

कुमार्याम् — VI. ii. 95

(अवस्था गम्यमान हो तो) कुमारी शब्द उपपद रहते (पूर्वपद को अन्तोदात्त होता है)।

... कुमुद ... — IV. ii. 79

देखें — **अरीहणकृशाश्व० IV. ii. 79**

कुमुद... — IV. ii. 86

देखें — **कुमुदनडवेतसेभ्यः IV. ii. 86**

कुमुदनडवेतसेभ्यः — IV. ii. 86

कुमुद, नड और वेतस प्रातिपदिकों से (चातुरर्थिक ड्मतुप् प्रत्यय होता है)।

...कुमुदादिभ्यः — IV. ii. 79

देखें — **अरीहणकृशाश्व० IV. ii. 79**

...कुम्बि... — III. iii. 105

देखें — **चिन्तिपूजि० III. iii. 105**

...कुम्भ... — VI. ii. 102

देखें — **कुसूलकूप० VI. ii. 102**

...कुम्भ... — VIII. iii. 46

देखें — **कृकमि० VIII. iii. 46**

कुम्भपदीषु — V. iv. 139

कुम्भपदी आदि शब्द (भी) कृतसमासान्तलोप साधु समझने चाहिये।

कुम्भपदी = हाथी के सिर के समान पैर वाला।

...कुर्... — VIII. ii. 79

देखें — **भकुर्छुराम् VIII. ii. 79**

कुरच् — III. ii. 162

(विद्, भिदिर्, छिदिर् – इन धातुओं से तच्छीलादि कर्त्ता हो तो वर्तमान काल में) कुरच् प्रत्यय होता है।

कुरु... — IV. i. 170

देखें — **कुरुनादिभ्यः IV. i. 170**

कुरु... — IV. ii. 129

देखें — **कुरुयुगन्धराभ्याम् IV. ii. 129**

कुरुगार्हपत — VI. ii. 42

'कुरुगार्हपत' इस समास किये हुये शब्द के पूर्वपद को (प्रकृतिस्वर होता है)।

कुरुनादिभ्यः — IV. i. 170

(क्षत्रियाभिधायी जनपदवाची) कुरु तथा नकार आदि वाले प्रातिपदिकों से (अपत्य अर्थ में ण्य प्रत्यय होता है)।

...कुरुभ्यः — IV. i. 114

देखें — **ऋष्यन्धकवृष्णि० IV. i. 114**

कुरुभ्यः — IV. i. 174

देखें — **अवन्तिकुन्तिकुरुभ्यः IV. i. 174**

कुरुयुगन्धराभ्याम् — IV. ii. 129

कुरु तथा युगन्धर जनपदवाची शब्दों से (विकल्प से शैषिक वुञ् प्रत्यय होता है)।

कुर्वादिभ्यः — IV. i. 151

कुरु आदि प्रातिपदिकों से (अपत्यार्थ में ण्य प्रत्यय होता है)।

कुल... — IV. ii. 95

देखें — कुलकुक्षि० IV. ii. 95

कुलकुक्षिग्रीवाभ्यः — IV. ii. 95

कुल, कुक्षि तथा ग्रीवा शब्दों से (यथासङ्ख्य श्वा, असि = खड्ग तथा अलंकरण अभिधेय होने पर जात अर्थात् उत्पन्न आदि अर्थों में ढकञ् प्रत्यय होता है)।

कुलटायाः — IV. i. 127

कुलटा शब्द से (अपत्य अर्थ में ढक् प्रत्यय होता है) तथा उस कुलटा को (विकल्प से इनङ् आदेश भी होता है)।

कुलत्थ... — IV. iv. 4

देखें — कुलत्थकोपधात् IV. iv. 4

कुलत्थकोपधात् — IV. iv. 4

(तृतीयासमर्थ) कुलत्थ तथा ककार उपधावाले प्रातिपदिकों से ('संस्कृतम्' अर्थ में अण् प्रत्यय होता है)।

कुलात् — IV. i. 139

कुल शब्द तथा कुलशब्दान्त प्रातिपदिक से (भी अपत्य अर्थ में ख प्रत्यय होता है)।

कुलालादिभ्यः — IV. iii. 117

(तृतीयासमर्थ) कुलालादि प्रातिपदिकों से (संज्ञा गम्यमान होने पर कृत अर्थ में वुञ् प्रत्यय होता है)।

कुलिजात् — V. i. 54

(द्वितीयासमर्थ द्विगुसञ्ज्ञक) कुलिजशब्दान्त प्रातिपदिक से ('सम्भव है','ले आता है' तथा 'पकाता है' अर्थों में प्रत्यय का लुक्, ख प्रत्यय तथा ष्ठन् प्रत्यय होते हैं)।

कुल्माषात् — V. ii. 83

(प्रथमासमर्थ) कुल्माष प्रातिपदिक से (सप्तम्यर्थ में अञ् प्रत्यय होता है, यदि उक्त प्रथमासमर्थ बहुल करके सञ्ज्ञाविषय में अन्नविषयक हो तो)।

...कुवित्... — VIII. i. 30

देखें — यद्यदि० VIII. i. 30

...कुश... — IV. i. 42

देखें — जानपदकुण्ड० IV. i. 42

...कुशल... — II. iii. 73

देखें — आयुष्यमद्रभद्र० II. iii. 73

...कुशल... — VII. iii. 30

देखें — शुचीश्वर० VII. iii. 30

कुशलः — V. ii. 63

(सप्तमीसमर्थ पथिन् प्रातिपदिक से) 'कुशल' अर्थ में (वुन् प्रत्यय होता है)।

...कुशलाः — IV. iii. 38

देखें — कृतलब्धक्रीत० IV. iii. 38

...कुशलाभ्याम् — II. iii. 40

देखें — आयुक्तकुशलाभ्याम् II. iii. 40

...कुशा... — VIII. iii. 46

देखें — कृकमि० VIII. iii. 46

कुशाग्रात् — V. iii. 103

कुशाग्र प्रातिपदिक से (इवार्थ में छ प्रत्यय होता है)।

...कुष... — I. ii. 7

देखें — मृडमृदगुधकुषक्लिशवदवसः I. ii. 7

कुषः — VII. ii. 46

(निर्पूर्वक) कुष् अङ्ग से उत्तर (वलादि आर्धधातुक को विकल्प से इट् आगम होता है)।

कुषि... — III. i. 90

देखें — कुषिरजोः III. i. 90

कुषिरजोः — III. i. 90

कुष् और रज् धातु से (कर्मवद्भाव में श्यन् प्रत्यय और परस्मैपद होता है, प्राचीन आचार्यों के मत में)।

...कुषीतकात् — IV. i. 124

देखें — विकर्णकुषीतकात् IV. i. 124

...कुसित... — IV. i. 37

देखें — वृषाकप्यग्नि० IV. i. 37

कुसीद... — IV. iv. 31

देखें — कुसीददशैकादशात् IV. iv. 31

कुसीददशैकादशात् — IV. iv. 31

(द्वितीयासमर्थ) कुसीद तथा दशैकादश प्रातिपदिकों से ('निन्दित वस्तु को देता है' — अर्थ में यथासङ्ख्य करके ष्ठन् और ष्ठच् प्रत्यय होते हैं)।

कुसीद = ब्याज

...कुसीदानाम् — IV. i. 37

देखें — वृषाकप्यग्नि० IV. i. 37

कुसूल... — VI. ii. 102

देखें — कुसूलकूप० VI. ii. 102

कुसूलकूपकुम्भशालम् — VI. ii. 102

बिल शब्द उत्तरपद रहते कुसूल, कूप, कुम्भ, शाला — इन पूर्वपदस्थित शब्दों को (अन्तोदात्त होता है)।

कुसूल = अन्न रखने का पात्र, कुठला।

कुस्तुम्बुरूणि — VI. i. 138

कुस्तुम्बुरु शब्द में (तकार से पूर्व सुट् आगम निपातन किया जाता है, यदि वह जाति अर्थ वाला हो तो)।

कुस्तुम्बुरु = ओषधि विशेष

...कुह... — VI. i. 210

देखें — त्यागराग० VI. i. 210

कुहोः — VII. iv. 62

(अभ्यास के) कवर्ग तथा हकार को (चवर्ग आदेश होता है)।

...कूचवारात् — IV. iii. 94

देखें — तूदीशलातुर० IV. iii. 94

...कूप... — VI. ii. 102

देखे — कुसूलकूप० VI. ii. 102

कूपेषु — IV. ii. 72

(बहुत अच् वाले प्रातिपदिकों से) कुएँ को कहना हो (तो चातुरर्थिक अञ् प्रत्यय होता है)।

...कूल... — III. ii. 42

देखें — सर्वकूलाभ्र० III. ii. 42

कूल... — VI. ii. 121

देखें — कूलतीर० VI. ii. 121

कूल... — VI. ii. 129

देखें — कूलसूद० VI. ii. 129

कूलतीरतूलमूलशालाक्षसमम् — VI. ii. 121

कूल, तीर, तूल, मूल, शाला, अक्ष, सम — इन उत्तरपद शब्दों को (अव्ययीभाव समास में आद्युदात्त होता है)।

...कूलम् — IV. iv. 28

देखें — ईपलोमकूलम् IV. iv. 28

कूलसूदस्थलकर्षाः — VI. ii. 129

(सञ्ज्ञाविषय में) कूल, सूद, स्थल, कर्ष — इन उत्तरपद शब्दों को (तत्पुरुष समास में आद्युदात्त होता है)।

कूले — III. ii. 31

'कूल' कर्म उपपद रहते (उत् पूर्वक रुज् और वह् धातु से 'खश्' प्रत्यय होता है)।

...कृ... — II. iv. 80

देखें — घसह्वरणश० II. iv. 80

कृ... — III. i. 59

देखें — कृमृदृ० III. i. 59

कृ... — III. i. 120

देखें — कृवृषोः III. i. 120

कृ... — III. iv. 61

देखें — कृभ्वोः III. iv. 61

कृ... — V. iv. 50

देखे — कृभ्वस्ति० V. iv. 50

...कृ... — VI. iv. 102

देखें — श्रुशृणु० VI. iv. 102

कृ... — VII. ii. 13

देखें — कृसृभृ० VII. ii. 13

कृ... — VIII. iii. 46

देखें — कृकमि० VIII. iii. 46

कृकर्ण... — IV. ii. 144

देखें — कृकर्णपर्णात् IV. ii. 144

कृकर्णपर्णात् — IV. ii. 144

(भारद्वाज देश में वर्तमान) जो कृकर्ण तथा पर्ण प्रातिपदिक, उनसे (शैषिक छ प्रत्यय होता है)।

कृकमिकंसकुम्भपात्रकुशाकर्णीषु — VIII. iii. 46

(अकार से उत्तर समास में जो अनुत्तरपदस्थ अनव्यय का विसर्जनीय उसको नित्य ही सकारादेश होता है); कृ, कमि, कंस, कुम्भ, पात्र, कुशा, कर्णी — इन शब्दों के परे रहते।

...कृच्छ्र... — II. iii. 33

देखें — स्तोकाल्पकृच्छ्र० II. iii. 33

कृच्छ्र... — III. iii. 126
देखें — कृच्छ्राकृच्छ्रार्थेषु III. iii. 126
कृच्छ्र... — VII. ii. 22
देखें — कृच्छ्रगहनयोः VII. ii. 22
कृच्छ्रगहनयोः — VII. ii. 22
दुःख तथा गम्भीर अर्थ में ('कष् हिंसायाम्' धातु को निष्ठा परे रहते इट् आगम नहीं होता)।
...कृच्छ्रयोः — VI. ii. 6
देखें — चिरकृच्छ्रयोः VI. ii. 6
कृच्छ्राकृच्छ्रार्थेषु — III. iii. 126
कृच्छ्र=कष्ट तथा अकृच्छ्र=सुख अर्थवाले (ईषद्, दुस् तथा सु) उपपद हों तो (धातु से खल् प्रत्यय होता है)।
...कृच्छ्राणि — II. i. 38
देखें — स्तोकान्तिकदूरार्थ० II. i. 38
कृञ् — III. i. 40
(आम्प्रत्यय के पश्चात्) कृञ् प्रत्याहार=कृ, भू, अस् का (भी अनुप्रयोग होता है, लिट् परे रहते)।
...कृञ्... — III. iv. 16
देखे — स्थेण्कृञ्० III. iv. 16
...कृञ्... — III. iv. 36
देखें — हन्कृञ्यहः III. iv. 36
कृञः — I. iii. 32
(गन्धन, अवक्षेपण, सेवन, साहसिक्य, प्रतियत्न, प्रकथन तथा उपयोग अर्थ में वर्तमान) कृञ् धातु से (आत्मनेपद होता है)।
कृञः — I. iii. 63
(जिस धातु से आम् प्रत्यय किया गया है, उसके समान ही पश्चात् प्रयोग की गई) कृ धातु से (आत्मनेपद हो जाता है)।
कृञः — I. iii. 71
(मिथ्या शब्द उपपद वाले ण्यन्त) 'कृञ्' धातु से (आत्मनेपद होता है, अभ्यास अर्थ में)।
कृञः — I. iii. 79
(अनु और परा उपसर्ग से उत्तर) 'कृञ्' धातु से (परस्मैपद होता है)।
कृञः — II. iii. 53
'कृ' धातु के (कर्म कारक में शेषत्व से विवक्षित प्रतियत्न गम्यमान होने पर षष्ठी विभक्ति होती है)।
कृञः — III. ii. 20
(कर्म उपपद रहते) कृञ् धातु से (हेतु, ताच्छील्य अथवा आनुलोम्य गम्यमान हो तो ट प्रत्यय होता है)।
कृञः — III. ii. 43
(मेघ, ऋति और भय कर्म उपपद रहते) कृञ् धातु से (खच् प्रत्यय होता है)।
कृञः — III. ii. 56
(च्व्यर्थ में वर्तमान अच्विप्रत्ययान्त आढ्य, सुभग, स्थूल, पलित, नग्न, अन्ध, प्रिय कर्म उपपद रहते) कृञ् धातु से (करण कारक में ख्युन् प्रत्यय होता है)।
कृञः — III. ii. 89
'कृ' धातु से (सु, कर्म, पाप, मन्त्र और पुण्य कर्म उपपद रहते क्विप् प्रत्यय होता है, भूतकाल में)।
...कृञः — III. ii. 96
देखे — युधिकृञः III. ii. 96
कृञः — III. iii. 100
कृञ् धातु से (स्त्रीलिंग में कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में श तथा क्यप् प्रत्यय भी होता है)।
कृञः — III. iv. 25
(कर्म उपपद रहते आक्रोश गम्यमान हो तो समानकर्तृक) कृञ् धातु से (खमुञ् प्रत्यय होता है)।
कृञः — III. iv. 59
(इष्ट का कथन जैसा होना चाहिये वैसा न होना गम्यमान हो तो अव्यय शब्द उपपद रहते) कृञ् धातु से (क्त्वा और णमुल् प्रत्यय होते हैं)।
कृञः — V. iv. 58
(द्वितीय, तृतीय, शम्ब तथा बीज प्रातिपदिकों से 'कृषि' अभिधेय हो तो) कृञ् धातु के योग में (डाच् प्रत्यय होता है)।
...कृञोः — III. iii. 127
देखें — भूकृञोः III. iii. 127

...कृञ्भ्यः — III. i. 79

देखें — तनादिकृञ्भ्यः III. i. 79

...कृण्व्योः — III. i. 80

देखें — धिन्विकृण्व्योः III. i. 80

कृत् — I. i. 38

कृत्, (जो मकारान्त तथा एजन्त, तदन्त शब्दरूप की अव्यय संज्ञा होती है)।

कृत्... — I. ii. 46

देखें — कृत्तद्धितसमासाः I. ii. 46

कृत् — III. i. 93

('धातोः' सूत्र के अधिकार में कहे तिङ् से भिन्न प्रत्ययों की) कृत् संज्ञा होती है।

कृत् — III. iv. 67

(इस धातु के अधिकार में सामांन्य विहित) कृत्संज्ञक प्रत्यय (कर्तृ कारक में होते हैं)।

कृत् — VI. ii. 139

(गति, कारक तथा उपपद से उत्तर) कृदन्त उत्तरपद को (तत्पुरुष समास में प्रकृतिस्वर होता है)।

...कृत... — III. i. 21

देखें — मुण्डमिश्र० III. i. 21

कृत... — IV. iii. 38

देखें — कृतलब्धक्रीत० IV. iii. 38

कृत... — VII. ii. 57

देखें — कृतचृत० VII. ii. 57

कृतः — V. ii. 5

(तृतीयासमर्थ सर्वचर्मन् प्रातिपदिक से) 'किया हुआ' अर्थ में (ख तथा खञ् प्रत्यय होते हैं)।

कृतचृतच्छृदतृदनृतः — VII. ii. 57

कृती, चृती, उच्छृदिर्, उतृदिर्, नृती – इन धातुओं से उत्तर (सिज्भिन्न सकारादि आर्धधातुक को विकल्प से इट् का आगम होता है)।

कृतम् — IV. iv. 133

(तृतीयासमर्थ पूर्व प्रातिपदिक से) 'किया हुआ' अर्थ में (इन और य प्रत्यय होते हैं)।

कृतम् — VI. ii. 149

(इस प्रकार को प्राप्त हुये के द्वारा) 'किया गया' – इस अर्थ में (जो समास, वहाँ भी क्तान्त उत्तरपद को कारक से परे अन्तोदात्त होता है)।

कृतलब्धक्रीतकुशलाः — IV. iii. 38

(सप्तमीसमर्थ प्रातिपदिक से) किया हुआ, पाया हुआ, खरीदा हुआ तथा कुशल अर्थों में (यथाविहित प्रत्यय होते हैं)।

कृता — II. i. 31

(समर्थ) कृदन्त (सुबन्त) के साथ (कर्त्ता और करणवाची तृतीयान्तों का बहुल करके तत्पुरुष समास होता है)।

कृतादिभिः — II. i. 58

(श्रेणि आदि सुबन्त शब्द) कृत आदि (समानाधिकरण सुबन्त) शब्दों के साथ (विकल्प से समास को प्राप्त होते हैं और वह समास तत्पुरुषसंज्ञक होता है)।

कृति — II. iii. 65

कृत् प्रत्यय का प्रयोग होने पर (अनभिहित कर्त्ता और कर्म कारक में षष्ठी विभक्ति होती है)।

कृति — VI. i. 69

(ह्रस्वान्त धातु को पित् तथा) कृत् प्रत्यय के परे रहते (तुक् का आगम होता है)।

कृति — VI. ii. 50

(तु शब्द को छोड़कर तकारादि एवं नकार इत्सञ्ज्ञक) कृत् प्रत्यय के परे रहते (भी अव्यवहित पूर्वपद गति को प्रकृतिस्वर होता है)।

कृति — VI. iii. 13

(तत्पुरुष समास में) कृदन्त शब्द उत्तरपद रहते (बहुल करके सप्तमी का अलुक् होता है)।

कृति — VI. iii. 71

कृदन्त उत्तरपद रहते (रात्रि शब्द को विकल्प करके मुम् आगम होता है)।

कृति — VII. ii. 8

(वशादि) कृत् प्रत्यय के परे रहते (इट् का आगम नहीं होता)।

कृति — VIII. ii. 2

(सुब्विधि, स्वरविधि, संज्ञाविधि तथा) कृत् विषयक (तुक् की विधि करने में नकार का लोप असिद्ध होता है)।

कृति — VIII. iv. 28

(अच् से उत्तर) कृत् में स्थित (जो नकार, उसको उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर णकारादेश होता है)।

कृते — IV. iii. 87

(द्वितीयासमर्थ प्रातिपदिक से 'उसको अधिकृत विषय बनाकर) किया गया' अर्थ में (यथाविहित प्रत्यय होता है, लक्ष्य करके बनाया गया यदि ग्रन्थ हो तो)।

कृते — IV. iii. 116

(तृतीयासमर्थ प्रातिपदिक से ग्रन्थ) बनाने अर्थ में (यथा-विहित प्रत्यय होता है)।

...कृतेषु — VIII. iii. 50

देखें — कःकरत्० VIII. iii. 50

...कृतोः — VII. iii. 33

देखें — चिण्कृतोः VII. iii. 33

कृत्य... — II. i. 67

देखें — कृत्यतुल्याख्या II. i. 67

कृत्य... — III. iii. 113

देखें— कृत्यल्युटः III. iii. 113

कृत्य... — III. iii. 169

देखें — कृत्यतृचः III. iii. 169

कृत्य... — III. iv. 70

देखें — कृत्यक्तखलर्थाः III. iv. 70

कृत्य... — VI. ii. 160

देखें — कृत्योकेष्णु० VI. ii. 160

कृत्यक्तखलर्थाः — III. iv. 70

कृत्यसंज्ञक प्रत्यय, क्त और खल् अर्थ वाले प्रत्यय (भाव और कर्म में ही होते हैं)।

कृत्यतुल्याख्या — II. i. 67

कृत्य तथा तुल्य के पर्यायवाची (सुबन्त) शब्द (अजातिवाची समानाधिकरण समर्थ सुबन्तों के साथ विकल्प से समास को प्राप्त होते हैं, और वह तत्पुरुष समास होता है)।

कृत्यतृचः — III. iii. 169

(योग्य कर्त्ता वाच्य अथवा गम्यमान हो तो धातु से) कृत्यसंज्ञक तथा तृच् प्रत्यय हो जाते हैं, (तथा चकार से लिङ् भी होता है)।

कृत्यल्युटः — III. iii. 113

कृत्यसंज्ञक प्रत्यय तथा ल्युट् प्रत्यय (बहुल अर्थों में होते हैं)।

कृत्याः — III. i. 95

अधिकार सूत्र होने से इसके अधिकार में विहित प्रत्यय 'कृत्य' संज्ञक होते हैं।

कृत्याः — III. iii. 163

(प्रेषण करना, कामचारपूर्वक आज्ञा देना, अवसरप्राप्ति अर्थों में धातु से) कृत्यसंज्ञक प्रत्यय होते हैं, (तथा लोट् भी होता है)।

कृत्याः — III. iii. 171

(आवश्यक और आधमर्ण्यविशिष्ट अर्थ हो तो धातु से) कृत्यसंज्ञक प्रत्यय (भी) हो जाते हैं।

...कृत्याः — VI. ii. 2

देखें — तुल्यार्थ० VI. ii. 2

कृत्यानाम् — II. iii. 71

कृत्य-प्रत्ययान्तों के प्रयोग होने पर (कर्तृ कारक में विकल्प से षष्ठी विभक्ति होती है, न कि कर्म में)

कृत्यार्थे — III. iv. 14

कृत्यार्थ = भाव, कर्म गम्यमान होने पर (वेदविषय में धातु से तवै, केन्, केन्य तथा त्वन् प्रत्यय होते हैं)।

कृत्यैः — II. i. 32

(समर्थ) कृत्यप्रत्ययान्त (सुबन्तों) के साथ (कर्त्ता और करणवाची तृतीयान्तों का विकल्प से तत्पुरुष समास होता है, अधिकार्थवचन गम्यमान होने पर)।

कृत्यैः — II. i. 42

कृत्यप्रत्ययान्त के साथ (सप्तम्यन्त सुबन्त का तत्पुरुष समास होता है, ऋण गम्यमान होने पर)।

कृत्योकेष्णुच्चार्वादयः — VI. ii. 160

(नञ् से उत्तर) कृत्यसंज्ञक, उक, इष्णुच् प्रत्ययान्त तथा चार्वादिगणपठित उत्तरपद शब्दों को (भी अन्तोदात्त होता है)।

कृत्वसुच् — V. IV. 17

(क्रिया के बार-बार गणन अर्थ में वर्त्तमान सङ्ख्यावाची प्रातिपदिकों से) कृत्वसुच् प्रत्यय होता है।

कृत्वोऽर्थप्रयोगे — II. iii. 64

कृत्वसुच् प्रत्यय अथवा इसके अर्थ वाले प्रत्ययों के प्रयोग में (काल अधिकरण होने पर षष्ठी विभक्ति होती है; शेषत्व की विवक्षा में)।

कृत्वोऽर्थे — VIII. iii. 43

कृत्वसुच् के अर्थ में वर्तमान (द्विस्, त्रिस् तथा चतुर् के विसर्जनीय को विकल्प से वकारादेश होता है; कवर्ग अथवा पवर्ग परे रहते)।

...कृद्भ्यः — VI. i. 176

देखें — गोश्वन्० VI. i. 176

...कृधि... — VIII. iii. 50

देखें — कःकरत्० VIII. iii. 50

कृपः — VIII. ii. 18

कृप् धातु के (रेफ को लकारादेश होता है)।

कृभ्वस्तियोगे — V. iv. 50

कृ, भू तथा असु धातु के योग में (सम् पूर्वक पद् धातु के कर्त्ता में वर्तमान प्रातिपदिक से च्वि प्रत्यय होता है)।

कृभ्वोः — III. iv. 61

(तस्प्रत्ययान्त स्वाङ्गवाची शब्द उपपद हो तो) कृ, भू धातुओं से (क्त्वा तथा णमुल् प्रत्यय होते हैं)।

कृमृदृरुहिभ्यः — III. i. 59

कृ मृ. दृ तथा रुह धातु से उत्तर (च्लि को छन्द-विषय में अङ् आदेश होता है, कर्तृवाची लुङ् परे रहते)।

कृवृषोः — III. i. 120

कृ तथा वृष् धातुओं से (विकल्प से क्यप् प्रत्यय होता है)।

...कृश... — VIII. ii. 55

देखें — फुल्लक्षीब० VIII. ii. 55

...कृशाश्व... — IV. ii. 80

देखें — अरीहणकृशाश्व० IV. ii. 80

...कृशाश्वात् — IV. iii. 111

देखें — कर्मन्दकृशाश्वात् IV. iii. 111

...कृषि... — V. ii. 112

देखें — रजःकृष्या० V. ii. 112

कृषेः — VII. iv. 64

कृष् अङ्ग के (अभ्यास को वेद-विषय में यङ् परे रहते चवर्गादेश नहीं होता)।

कृषौ — V. iv. 58

(द्वितीय, तृतीय, शम्ब तथा बीज प्रातिपदिकों से) कृषि अभिधेय होने पर (कृञ् धातु के योग में डाच् प्रत्यय होता है)।

...कृष्टपच्य... — III. i. 114

देखें — राजसूयसूर्य० III. i. 114

कृसृभृवृस्तुद्रुस्रुश्रुवः — VII. ii. 13

कृ, सृ, भृ, वृ, स्तु, द्रु, स्रु, श्रु — इन अङ्गों को (लिट् प्रत्यय परे रहते इट् आगम नहीं होता)।

कॄ — III. iii. 30

(उद् तथा नि पूर्वक) कॄ धातु से (धान्यविषय में घञ् प्रत्यय होता है, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में)।

क्लृपः — I. iii. 93

क्लृप् (=कृप्) धातु से (लुट् लकार में तथा चकार से स्य, सन् होने पर भी विकल्प से परस्मैपद होता है)।

क्लृपः — VII. ii. 60

'कृपू सामर्थ्ये' धातु से उत्तर (तास् तथा सकारादि आर्धधातुक को इट् आगम नहीं होता, परस्मैपद परे रहते)।

के — VII. iii. 64

('उच समवाये' धातु से) क प्रत्यय परे रहते (ओक शब्द निपातन किया जाता है)।

के — VII. iv. 13

क प्रत्यय परे रहते (अण् = अ, इ, उ को ह्रस्व होता है)।

केकय... — VII. iii. 2

देखें — केकयमित्रयु० VII. iii. 2

केकयमित्रयुप्रलयानाम् — VII. iii. 2

केकय, मित्रयु तथा प्रलय अङ्गों के (यकार आदि वाले भाग को इय आदेश होता है; ञित्, णित् अथवा कित् तद्धित परे रहते)।

केदारात् — IV. ii. 39

(षष्ठीसमर्थ) केदार शब्द से (यञ् प्रत्यय होता है, तथा वुञ् भी)।

....केन्... — III. iv. 14

देखें — तवैकेन्केन्यत्वनः III. iv. 14

...केन्य... — III. iv. 14

देखें — तवैकेन्केन्यत्वनः III. iv. 14

केवल... — IV. i. 30

देखें — केवलमामक० IV. i. 30

केवलमामकभागधेयपापापरसमानार्यकृतसुमङ्गलभेषजात् — IV. i. 30

केवल, मामक, भागधेय, पाप, अपर, समान, आर्यकृत, सुमङ्गल तथा भेषज शब्दों से (संज्ञा तथा छन्द-विषय में स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय होता है); (अन्यत्र लौकिक प्रयोग-विषय में इन शब्दों से टाप् ही होगा)।

केवलस्य — VII. iii. 5

केवल (न्यग्रोध शब्द) के (अचों में आदि अच् को वृद्धि नहीं होती, किन्तु उसके य् से पूर्व को ऐकार आगम तो होता है)।

...केवलाः — II. i. 48

देखें — पूर्वकालैकसर्वजरत्० II. i. 48

केवलात् — V. iv. 124

केवल पूर्वपद से परे (जो धर्म शब्द, तदन्त बहुव्रीहि से अनिच् प्रत्यय होता है)।

केवलाभ्याम् — VII. i. 68

केवल (सु तथा दुर् उपसर्गों) से उत्तर (लभ् धातु को खल् तथा घञ् प्रत्यय परे रहते नुम् आगम नहीं होता है)।

केश... — IV. ii. 47

देखें — केशाश्वाभ्याम् IV. ii. 47

...केशवेशेषु — IV. i. 42

देखें — वृत्यमत्रावपना० IV. i. 42

केशात् — V. ii. 109

केश प्रातिपदिक से (मत्वर्थ में विकल्प से व प्रत्यय होता है)।

केशाश्वाभ्याम् — IV. ii. 47

(षष्ठीसमर्थ) केश तथा अश्व प्रातिपदिकों से (समूहार्थ में यथासङ्ख्य यञ् तथा छ प्रत्यय होते हैं; विकल्प से; पक्ष में ठक्)।

...केशि... — VI. iv. 165

देखें — गाथिविदथि० VI. iv. 165

कोः — VI. iii. 100

कु को (तत्पुरुष समास में अजादि शब्द उत्तरपद हो तो कत् आदेश होता है)।

...कोः — VIII. ii. 29

देखें - स्कोः VIII. ii. 29

...कोः — VIII. iii. 57

देखें — इण्कोः VIII. iii. 57

कोटर... — VI. iii. 116

देखें — कोटरकिंशुलकादीनाम् VI. iii. 116

कोटरकिंशुलकादीनाम् — VI. iii. 116

(वन तथा गिरि शब्द उत्तरपद रहते यथासंख्य करके) कोटरादि एवं किंशुलकादि शब्दों को (सञ्ज्ञाविषय में दीर्घ होता है)।

...कोटरा... — VIII. iv. 4

देखें — पुरगामिश्रका० VIII. iv. 4

...कोप... — VIII. i. 8

देखें — असूयासम्मति० VIII. i. 8

...कोप... — VIII. ii. 103

देखें — असूयासम्मति० VIII. ii. 103

कोपः — I. iv. 37

(क्रुध्, द्रुह, ईर्ष्य तथा असूय अर्थों वाली धातुओं के प्रयोग में जिसके ऊपर) क्रोध व्यक्त किया जाये, (उस कारक की सम्प्रदान संज्ञा होती है)।

कोपधात् — IV. ii. 64

(द्वितीयासमर्थ) ककार उपधावाले (सूत्रवाची) प्रातिपदिकों से (भी 'तदधीते तद्वेद' अर्थ में उत्पन्न प्रत्यय का लुक् होता है)।

कोपधात् — IV. ii. 78

ककार उपधावाले प्रातिपदिक से (भी चातुरर्थिक अण् प्रत्यय होता है)।

...कोपधात् — IV. ii. 106

देखें — प्रस्थोत्तरपदपलद्या० IV. ii. 106

कोपधात् — IV. ii. 131

(देशवाची) ककार उपधावाले प्रातिपदिक से (शैषिक अण् प्रत्यय होता है)।

कोपधात् — IV. iii. 134

(षष्ठीसमर्थ) ककार उपधावाले प्रातिपदिक से (भी विकार और अवयव अर्थों में अण् प्रत्यय होता है)।

...कोपधात् — IV. iv. 4

देखें — कुलत्थकोपधात् IV. iv. 4

कोपधायाः — IV. iii. 36

ककार उपधावाले (स्त्रीशब्द) को (पुंवद्भाव नहीं होता)।

कोशात् — IV. iii. 42

(सप्तमीसमर्थ) कोश प्रातिपदिक से (सम्भव अर्थ में ढञ् प्रत्यय होता है)।

... कोण्णिके — V. ii. 71

देखें— ब्राह्मणकोण्णिके V. ii. 71

... कोसल... — IV. i. 169

देखें— वृद्धेत्कोसला० IV. i. 169

...कौ — VI. ii. 157

देखें—अच्कौ VI. ii. 157

...कौटाभ्याम् — V. iv. 95

देखें — ग्रामकौटाभ्याम् V. iv. 95

कौटिल्ये — III. i. 23

(गत्यर्थक धातुओं से नित्य) कुटिलता-युक्त (गति) गम्यमान होने पर (ही यङ् प्रत्यय होता है)।

...कौण्डिन्ययोः — II. iv. 70

देखें— आगस्त्यकौण्डिन्ययोः II. iv. 70

...कौपीने — V. ii. 20

देखें— शालीनकौपीने V. ii. 20

कौमार — IV. ii. 12

कौमार शब्द (अपूर्ववचन द्योतित हो रहा हो तो) अण्-प्रत्ययान्त निपातन किया जाता है।

कौरव्य... — IV. i. 19

देखें—कौरव्यमाण्डूकाभ्याम् IV. i. 19

कौरव्यमाण्डूकाभ्याम् — IV. i. 19

(अनुपसर्जन) कौरव्य तथा माण्डूक प्रतिपदिकों से (भी स्त्रीलिङ्ग में ष्फ प्रत्यय होता है, और वह तद्धितसंज्ञक होता है)।

कौशले — VIII. iii. 89

(नि तथा नदी शब्द से उत्तर 'ष्णा शौचे' धातु के सकार को) कुशलता गम्यमान हो तो (मूर्धन्य आदेश होता है)।

...कौशिकयोः — IV. i. 106

देखें— ब्राह्मणकौशिकयोः IV. i. 106

...कौशिकाभ्याम् — IV. iii. 103

देखें—काश्यपकौशिकाभ्याम् IV. iii. 103

कौसल्य... — IV. i. 155

देखें—कौसल्यकार्मार्याभ्याम् IV. i. 155

कौसल्यकार्मार्याभ्याम् — IV. i. 155

कौसल्य तथा कार्मार्य शब्दों से (भी अपत्य अर्थ में फिञ् प्रत्यय होता है)।

क्ङिति — I. i. 5

कित्, गित्, ङित् को निमित्त मानकर (भी इक् के स्थान में जो गुण और वृद्धि प्राप्त होते हैं, वे न हों)।

क्ङिति — VI. iv. 15

(अनुनासिकान्त अङ्ग की उपधा को दीर्घ होता है, क्वि तथा झलादि) कित् ङित् प्रत्यय परे रहते।

क्ङिति — VI. iv. 24

(इकार जिनका इत्सञ्ज्ञक नहीं हैं, ऐसे हलन्त अङ्ग की उपधा के नकार का लोप होता है), कित् ङित् प्रत्ययों के परे रहते।

क्ङिति — VI. iv. 37

(अनुदात्तोपदेश और जो अनुनासिकान्त- उनका तथा वन् एवं तनोति आदि अङ्गों के अनुनासिक का लोप होता है, झलादि) कित् ङित् प्रत्ययों के परे रहते।

क्ङिति — VI. iv. 63

(अजादि) कित् ङित् प्रत्ययों के परे रहते (दीङ् धातु से उत्तर युट् का आगम होता है)।

क्ङिति — VI. iv. 98

(गम, हन, जन्, खन, घस्- इन अङ्गों की उपधा का लोप हो जाता है, अङ्वर्जित अजादि) कित्, ङित् प्रत्यय परे हो तो।

क्ङिति — VII. iv. 22

(यकारादि) कित् ङित् प्रत्यय परे रहते (शीङ् अङ्ग को अयङ् आदेश होता है)।

क्त... — I. i. 25

देखें— **क्तक्तवतू I. i. 25**

...क्त... — III. iv. 70

देखें— **कृत्यक्तखलर्थाः III. iv. 70**

...क्त ... VI. ii. 144

देखें— **थाथघञ्० VI. ii. 144**

क्तः — III. ii. 186

(ञि जिसका इत्संज्ञक है, ऐसी धातु से वर्त्तमानकाल में) क्त प्रत्यय होता है।

क्तः — III. iii. 114

(नपुंसकलिङ्ग भाव में धातुमात्र से) क्त प्रत्यय होता है।

क्तः — III. iv. 71

(क्रिया के आरम्भ के आदि क्षण में विहित जो) क्त प्रत्यय, (वह कर्त्ता तथा चकार से भावकर्म में भी होता है)।

क्तः — III. iv. 76

(स्थित्यर्थक अकर्मक, गत्यर्थक तथा प्रत्यवसानार्थक धातुओं से विहित) जो क्त प्रत्यय, वह (अधिकरण कारक में होता है; तथा चकार से भाव, कर्म और कर्त्ता में भी होता है)।

क्तः — VI. ii. 145

(सु तथा उपमानवाची से उत्तर) क्तान्त उत्तरपद को (अन्तोदात्त होता है)।

क्तः — VI. ii. 170

(आच्छादनवाची शब्द को छोड़कर जो जातिवाची कालवाची एवं सुखादि शब्द, उनसे उत्तर उत्तरपद) क्तान्त शब्द को (कृत, मिंत तथा प्रतिपन्न शब्दों को छोड़कर अन्तोदात्त होता है, बहुव्रीहि समास में)।

...क्तवतू — I. i. 25

देखें— **क्तक्तवतू I. i. 25**

क्तक्तवतू — I. i. 25

क्त और क्तवतु प्रत्यय (निष्ठासंज्ञक होते हैं)।

क्तस्य — II. iii. 67

'क्त' प्रत्यय के (योग में भी षष्ठी विभक्ति होती है, उसके वर्त्तमानकाल में विहित होने पर)।

क्तात् — IV. i. 51

(करणपूर्व अनुपसर्जन) क्तान्त प्रातिपदिक से (थोड़े की आख्या गम्यमान हो तो स्त्रीलिङ्ग में ङीष् प्रत्यय होता है)।

क्तात् — V. iv. 4

क्तप्रत्यय अन्त वाले प्रातिपदिकों से (निरन्तर सम्बन्ध गम्यमान न हो तो कन् प्रत्यय होता है)।

क्तिच्... — III. iii. 174

देखें— **क्तिच्क्तौ III. iii. 174**

क्तिचि — VI. iv. 39

क्तिच् परे रहते (अनुदात्तोपदेश, वनति तथा तनोति आदि अङ्गों के अनुनासिक का लोप तथा दीर्घ नहीं होता है)।

क्तिचि — VI. iv. 45

क्तिच् प्रत्यय परे रहते (सन् अङ्ग को आकारादेश होता है तथा विकल्प से इसका लोप भी होता है)।

क्तिच्क्तौ — III. iii. 174

(आशीर्वाद विषय में धातु से) क्तिच् और क्त प्रत्यय (भी) होते हैं, (यदि समुदाय से संज्ञा प्रतीत हो तो)।

क्तिन् — III. iii. 94

(धातुमात्र से स्त्रीलिङ्ग में कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में) क्तिन् प्रत्यय होता है।

...क्तिन्... — VI. ii. 151

देखें— **मन्क्तिन्० VI. ii. 151**

क्ते — VI. ii. 45

क्तान्त शब्द उत्तरपद रहते (भी चतुर्थ्यन्त पूर्वपद को प्रकृतिस्वर हो जाता है)

क्ते — VI. ii. 61

क्तान्त उत्तरपद रहते (नित्य अर्थ है जिसका, ऐसे समास में विकल्प से पूर्वपद को प्रकृतिस्वर होता है)।

क्तेन — II. i. 24

(स्वयम्- इस अवयव का) क्तप्रत्ययान्त (समर्थ सुबन्त) के साथ (विकल्प से समास होता है, और वह समास तत्पुरुषसंज्ञक होता है)।

क्तेन — II. i. 38

(स्तोक, अन्तिक और दूर अर्थ वाले पञ्चम्यन्त सुबन्त, तथा पञ्चम्यन्त कृच्छ्र शब्द जो सुबन्त, उनका समर्थ) क्तान्त (सुबन्त) के साथ (विकल्प से समास होता है, और वह तत्पुरुषसंज्ञक होता है)।

क्तेन — II. i. 44

(दिन के अवयववाची और रात्रि के अवयववाची सप्तम्यन्त सुबन्तों का) क्तान्त (समर्थ सुबन्त) के साथ (विकल्प से तत्पुरुष समास होता है)।

क्तेन — II. i. 59

(अनञ् क्तान्त सुबन्त शब्द नञ्-विशिष्ट = जिस शब्द में नञ् ही विशेष हो अन्य सब प्रकृति प्रत्यय आदि द्वितीयपद के तुल्य हों) समानाधिकरण क्तान्त (सुबन्त) के साथ (विकल्प से तत्पुरुष समास को प्राप्त होता है)।

क्तेन — II. ii. 12

(पूजा अर्थ में विहित) जो क्त प्रत्यय, तदन्त शब्द के साथ (भी षष्ठ्यन्त सुबन्त समास को प्राप्त नहीं होता)।

...क्तौ — III. iii. 174

देखें—क्तिच्क्तौ III. iii. 174

क्त्वः — VII. i. 37

(नञ् से भिन्न पूर्व अवयव है जिसमें, ऐसे समास में) क्त्वा के स्थान में (ल्यप् आदेश होता है)।

क्त्वः — VII. i. 47

(वेद-विषय में) क्त्वा को (यक् आगम होता है)।

क्त्वा... — I. i. 39

देखें — क्त्वातोसुन्कसुनः I. i. 39

क्त्वा — I. ii. 7

(मृड, मृद, गुध, कुष, क्लिश, वद, वस्-इन धातुओं से परे) क्त्वा प्रत्यय (किद्वत् होता है)।

क्त्वा — I. ii. 18

(सेट्) क्त्वा प्रत्यय (कित् नहीं होता है)।

क्त्वा — I. ii. 22

(पूङ् धातु से परे सेट् निष्ठा तथा सेट्) क्त्वा प्रत्यय (भी कित् नहीं होता है)।

क्त्वा — II. ii. 22

क्त्वा-प्रत्ययान्त के साथ (भी तृतीयाप्रभृति उपपद विकल्प से समास को प्राप्त होते हैं, और वह तत्पुरुष समास होता है)।

क्त्वा — III. iv. 18

(प्रतिषेधवाची अलं तथा खलु शब्द उपपद रहते प्राचीन आचार्यों के मत में धातु से) क्त्वा प्रत्यय होता है।

क्त्वा... — III. iv. 59

देखें— क्त्वाणमुलौ III. iv. 59

क्त्वा — VII. i. 38

(अनञ्पूर्व वाले समास में क्त्वा के स्थान में) क्त्वा आदेश होता है, (तथा ल्यप् आदेश भी वेद-विषय में होता है)।

क्त्वा... — VII. ii. 50

देखें— क्त्वानिष्ठयोः VII. ii. 50

क्त्वाणमुलौ — III. iv. 59

(इष्ट का कथन जैसा होना चाहिये वैसा न होना गम्यमान हो तो अव्यय शब्द उपपद रहते कृञ् धातु से) क्त्वा और णमुल् प्रत्यय होते हैं।

क्त्वातोसुन्कसुनः — I. i. 39

क्त्वान्त, तोसुन्नन्त और कसुन्नन्त शब्द (अव्ययसंज्ञक होते हैं)।

क्त्वानिष्ठयोः — VII. ii. 50

(क्लिश् धातु से उत्तर) क्त्वा तथा निष्ठा को (इट् आगम विकल्प से होता है)।

क्त्वि — VI. iv. 18

(क्रम् अङ्ग की उपधा को भी झलादि) क्त्वा प्रत्यय परे रहते (विकल्प से दीर्घ होता है)।

क्त्वि — VI. iv. 31

(स्कन्द तथा स्यन्द के नकार का लोप) क्त्वा प्रत्यय परे रहते (नहीं होता)।

क्त्व — VII. ii. 55

('जॄ वयोहानौ' तथा 'ओव्रश्चू छेदने' धातु के) क्त्वा प्रत्यय को (इट् आगम होता है)।

क्त्व — VII. iv. 43

('ओहाक् त्यागे' अङ्ग को भी) क्त्वा प्रत्यय परे रहते (हि आदेश होता है)।

क्त्रिः — III. iii. 88

(डु इत्संज्ञक है जिन धातुओं का, उनसे कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में) क्त्रि प्रत्यय होता है।

क्त्रेः — IV. iv. 20

(तृतीयासमर्थ) क्त्रि प्रत्ययान्त प्रातिपदिक से (निर्वृत्त अर्थ में नित्य ही मप् प्रत्यय होता है)।

क्नुः — III. ii. 139

(त्रसि, गृधि, धृषि तथा क्षिप् धातुओं से तच्छीलादि कर्त्ता हो, तो वर्त्तमानकाल में) क्नु प्रत्यय होता है।

...क्नूयी... VII. iii. 36

देखें — अर्त्तिह्री० VII. iii. 36

क्नोपेः — III. iv. 33

(चेलवाची कर्म उपपद हो तो वर्षा का प्रमाण गम्यमान होने पर) ण्यन्त क्नूयी धातु से (णमुल् प्रत्यय होता है)।

क्मरच् — III. ii. 160

(सृ, घसि, अद्– इन धातुओं से तच्छीलादि कर्त्ता हो, तो वर्त्तमानकाल में) क्मरच् प्रत्यय होता है।

क्यङ् — III. i. 11

(उपमानवाची सुबन्त कर्त्ता से आचार अर्थ में विकल्प से) क्यङ् प्रत्यय होता है, (तथा विकल्प से सकार का लोप भी हो जाता है)।

क्यङ्... — VI. iii. 35

देखें — क्यङ्मानिनोः VI. iii. 35

क्यङ्मानिनोः — VI. iii. 35

क्यङ् तथा मानिन् परे रहते (भी अङ्वर्जित भाषितपुंस्क स्त्रीशब्द को पुंवद्भाव हो जाता है)।

क्य... — VI. iv. 152

देखें— क्यच्व्योः VI. iv. 152

क्यच् — III. i. 8

(इच्छा क्रिया का कर्म जो कर्त्ता का आत्मसम्बन्धी सुबन्त, उससे इच्छा अर्थ में विकल्प से) क्यच् प्रत्यय होता है)।

क्यच् — III. i. 19

(करोति के अर्थ में नमस्, वरिवस् और चित्रङ् कर्मों से) क्यच् प्रत्यय होता है।

क्यचि — VII. i. 51

(अश्व, क्षीर, वृष, लवण— इन अङ्गों को) क्यच् परे रहते (आत्मा की प्रीति विषय में असुक् आगम होता है)।

क्यचि — VII. iv. 33

क्यच् परे रहते (भी अवर्णान्त अङ्ग को ईकारादेश होता है)।

क्यच्व्योः — VI. iv. 152

(हल् से उत्तर अङ्ग के अपत्य-सम्बन्धी यकार का) क्य तथा च्वि परे रहते (भी लोप होता है)।

क्यप् — III. i. 106

(उपसर्गरहित वद् धातु से सुबन्त उपपद रहते) क्यप् प्रत्यय होता है, (चकार से यत् प्रत्यय भी होता है)।

क्यप् — III. i. 109

(इण्, ष्टुञ्, शासु, वृञ्, दृङ् और जुषी धातुओं से) क्यप् प्रत्यय होता है।

क्यप् — III. iii. 98

(व्रज तथा यज् धातुओं से स्त्रीलिङ्गभाव में) क्यप् प्रत्यय होता है, (और वह उदात्त होता है)।

क्यष् — III. i. 13

(अच्व्यन्त लोहितादि तथा डाच् प्रत्ययान्त शब्दों से 'भवति' अर्थ में) क्यष् प्रत्यय होता है ।

क्यषः — I. iii. 90

क्यष्-प्रत्ययान्त धातु से (परस्मैपद होता है, विकल्प करके)।

क्यस्य — VI. iv. 50

(हल् से उत्तर) 'क्य' का (विकल्प से लोप होता है, आर्धधातुक परे रहते)।

क्यात् — III. ii. 170

क्यप्रत्ययान्त धातुओं से (तच्छीलादि कर्त्ता हो, तो वर्तमानकाल में वेदविषय में उ प्रत्यय होता है)।

क्ये — I. iv. 15

क्यच्, क्यङ् और क्यष् परे रहते (नकारान्त शब्दरूप की पद संज्ञा होती है)।

क्रतु... — IV. ii. 59

देखें — **क्रतूक्थादिसूत्रान्तात् IV. ii. 59**

क्रतु ... IV. iii. 68

देखें — **क्रतुयज्ञेभ्यः IV. iii. 68**

क्रतूक्थादिसूत्रान्तात् — IV. ii. 59

(द्वितीयासमर्थ) क्रतु विशेषवाची, उक्थादि तथा सूत्रान्त प्रातिपदिकों से (अध्ययन तथा जानने का कर्त्ता अभिधेय हो तो ठक् प्रत्यय होता है)।

क्रतु = यज्ञ।

उक्थ = साम का लक्षण ग्रन्थ

क्रतुयज्ञेभ्यः — IV. iii. 68

क्रतुवाची और यज्ञवाची (व्याख्यातव्यनाम षष्ठी तथा सप्तमीसमर्थ) प्रातिपदिकों से (भी व्याख्यान और भव अर्थों में ठञ् प्रत्यय होता है)।

क्रतौ — III. i. 130

क्रतु = यज्ञविशेष की संज्ञा अभिधेय हो तो (कुण्डपाय्य और संचाय्य शब्द निपातन किये जाते हैं)।

क्रतौ — VI. ii. 97

क्रतुवाची समास में (द्विगु उत्तरपद रहते पूर्वपद को अन्तोदात्त होता है)।

क्रत्वादयः — VI. ii. 118

(सु से उत्तर) क्रत्वादि शब्दों को (भी आद्युदात्त होता है)।

... क्रथानाम् — VI. i. 210

देखें — **त्यागराग० VI. i. 210**

...क्रम ... III. ii. 67

देखें — **जनसन... III. ii. 67**

क्रमः — I. iii. 38

(वृत्ति, सर्ग और तायन अर्थों में वर्तमान) क्रम् धातु से (आत्मनेपद होता है)।

क्रमः — VI. iv. 18

क्रम् अङ्ग की (उपधा को भी झलादि क्त्वा परे रहते विकल्प से दीर्घ होता है)।

क्रमः — VII. iii. 76

क्रमु अङ्ग को (परस्मैपदपरक शित् के परे रहते दीर्घ होता है)।

क्रमणे — III. i. 14

कुटिलता अर्थ में (चतुर्थी-समर्थ कष्ट शब्द से 'क्यङ्' प्रत्यय होता है)।

क्रमादिभ्यः — IV. ii. 60

(द्वितीयासमर्थ) क्रमादि प्रातिपदिकों से (अध्ययन तथा जानने का कर्त्ता अभिधेय होने पर वुन् प्रत्यय होता है)।

...क्रमु... — III. i. 70

देखें — **भ्राशभ्लाश० III. i. 70**

...क्रमोः — VII. ii. 36

देखें— **स्नुक्रमोः VII. ii. 36**

...क्रयविक्रयात् — IV. iv. 13

देखें—**वस्नक्रयविक्रयात् IV. iv. 13**

क्रय्यः — VI. i. 79

क्रय्य शब्द का निपातन किया जाता है, (उसी अर्थ में अर्थात् क्रयार्थ अभिधेय होने पर)।

क्रव्ये — III. ii. 69

क्रव्य (सुबन्त) उपपद रहते (भी अद् धातु से विट् प्रत्यय होता है)।

...क्राथ ... II. iii. 56

देखें—**जासिनिप्रहण० II. iii. 56**

क्रियः — I. iii. 18

(परि, वि तथा अव उपसर्ग पूर्वक) 'डुक्रीञ्' धातु से (आत्मनेपद होता है)।

क्रिया — IV. ii. 57

(प्रथमासमर्थ) क्रियावाची (घञन्त प्रातिपदिक से सप्तम्यर्थ में ञ प्रत्यय होता है)।

क्रिया — V. i. 114

(तृतीयासमर्थ प्रातिपदिकों से 'समान' अर्थ में वति प्रत्यय होता है, यदि वह समानता) क्रिया की हो तो।

क्रियागणने — VI. ii. 162

(बहुव्रीहि समास में इदम्, एतत्, तद् से उत्तर) क्रिया के गणन में वर्तमान (प्रथम तथा पूरण प्रत्ययान्त शब्दों को अन्तोदात्त होता है)।

क्रियातिपत्तौ — III. iii. 139

(भविष्यत्काल में लिङ् का निमित्त होने पर) क्रिया का उल्लंघन अथवा सिद्ध न होना गम्यमान हो तो (धातु से लृङ् प्रत्यय होता है)।

क्रियान्तरे — III. iv. 57

क्रिया के व्यवधान में वर्तमान (असु तथा तृष् धातुओं से कालवाची द्वितीयान्त शब्द उपपद रहते णमुल् प्रत्यय होता है)।

क्रियाप्रबन्ध ... III. iii. 135

देखें— **क्रियाप्रबन्धसामीप्ययोः III. iii. 135**

क्रियाप्रबन्धसामीप्ययोः — III. iii. 125

क्रियाप्रबन्ध तथा सामीप्य गम्यमान हो तो (धातु से अनद्यतन के समान प्रत्ययविधि नहीं होती है)।

क्रियाप्रश्ने — VIII. i. 44

क्रिया के प्रश्न में वर्तमान (किम् शब्द से युक्त उपसर्ग-रहित तथा प्रतिषेधरहित तिङन्त को अनुदात्त नहीं होता।

क्रियाफले — I. iii. 72

(स्वरितेत् तथा ञित् धातुओं से आत्मनेपद होता है, यदि) क्रिया का फल (कर्त्ता को मिलता हो तो)।

क्रियाभ्यावृत्तिगणने — V. iv. 17

'क्रिया के बार-बार गणन' अर्थ में वर्तमान (सङ्ख्यावाची प्रातिपदिकों से स्वार्थ में कृत्वसुच् प्रत्यय होता है)।

क्रियायाः — III. ii. 126

क्रिया के (लक्षण तथा हेतु अर्थ में वर्तमान धातु से लट् के स्थान में शतृ, शानच् आदेश होते हैं)।

क्रियायाम् — III. iii. 11

(क्रिया के निमित्त यदि) क्रिया उपपद में हो (तो धातु से भविष्यत् काल में तुमुन् तथा ण्वुल् प्रत्यय होते हैं)।

क्रियायोगे — I. iv. 58

(प्रादिगणपठित शब्द निपात-सञ्ज्ञक होते है, तथा) क्रिया के साथ प्रयुक्त होने पर (वे उपसर्गसञ्ज्ञक होते हैं)।

क्रियार्थायाम् — III. iii. 10

एक क्रिया के लिये (यदि दूसरी क्रिया उपपद में हो तो धातु से भविष्यत् काल में तुमुन् तथा ण्वुल् प्रत्यय होते हैं)।

क्रियार्थोपपदस्य — II. iii. 14

क्रिया के लिये क्रिया उपपद में जिसके, ऐसी (अप्रयुज्यमान) धातु के (अनभिहित कर्मकारक में भी चतुर्थी विभक्ति होती है)।

क्रियासमभिहारे — III. i. 22

क्रिया के बार-बार होने या अतिशयता अर्थ में (एकाच्, हलादि धातु से 'यङ्' प्रत्यय होता है)।

क्रियासमभिहारे — III. iv. 2

क्रिया का पौनःपुन्य गम्यमान हो तो (धातु से धात्वर्थ सम्बन्ध होने पर सब कालों में लोट् प्रत्यय हो जाता है, और उस लोट् के स्थान में सब पुरुषों तथा वचनों में हि और स्व आदेश नित्य होते हैं, तथा त ध्वम् भावी लोट् के स्थान में विकल्प से हि, स्व आदेश होते हैं)।

क्रियासातत्ये — VI. i. 138

क्रिया का निरन्तर होना गम्यमान हो तो (अपरस्पराः शब्द में सुट् आगम निपातन किया जाता है)।

क्री... VI. i. 47

देखें— **क्रीङ्जीनाम् VI. i. 47**

क्रीङ्जीनाम् — VI. i. 47

'डुक्रीञ् करणे', 'इङ् अध्ययने' तथा 'जि जये' धातुओं के (एच् के स्थान में णिच् प्रत्यय के परे रहते आकारादेश हो जाता है)।

क्रीडः — I. iii. 21

(अनु, सम्, परि और आङ्पूर्वक) क्रीड् धातु से (आत्मनेपद होता है)।

क्रीडा...— II. ii. 17

देखें — क्रीडाजीविकयोः II. ii. 17

क्रीडाजीविकयोः — II. ii. 17

क्रीडा और जीविका अर्थ में (षष्ठ्यन्त सुबन्त अक् अन्त वाले सुबन्त के साथ नित्य ही समास को प्राप्त होता है, और वह तत्पुरुष समास होता है)।

क्रीडायाम् — IV. ii. 56

(प्रथमासमर्थ प्रहरण समानाधिकरण वाले प्रातिपदिकों से सप्तम्यर्थ में ण प्रत्यय होता है, यदि 'अस्यां' से) निर्दिष्ट क्रीडा हो।

क्रीडायाम् — VI. ii. 74

(प्राग्देश-निवासियों की) जो क्रीडा, तद्वाची समास में (अकप्रत्ययान्त शब्द के उत्तरपद रहते पूर्वपद को आद्युदात्त होता है)।

...क्रीत...— IV. iii. 38

देखें— कृतलब्धक्रीत० IV. iii. 38

क्रीतम् — V. i. 36

(तृतीयासमर्थ प्रातिपदिक से) 'खरीदा गया' अर्थ में (यथाविहित प्रत्यय होते हैं)।

क्रीतवत् — IV. iii. 153

(षष्ठीसमर्थ परिमाणवाची प्रातिपदिकों से) क्रीतार्थ में कहे गये प्रत्यय (विकार तथा अवयव अर्थों में भी होते हैं)।

क्रीतात् — IV. i. 50

(करणकारक पूर्व वाले) क्रीत-शब्दान्त अनुपसर्जन प्रातिपदिक से (स्त्रीलिङ्ग में ङीष् प्रत्यय होता है)।

क्रीतात् — V. i. 1

(यहाँ से आगे) 'तेन क्रीतम्' इस सूत्र से पहले पहले के कहे हुये अर्थों में ('छ' प्रत्यय अधिकृत होता है)।

...क्रीताः — VI. ii. 151

देखें — मन्क्तिन्० VI. ii. 151

क्रु...— III. ii. 174

देखें — क्रुक्लुकनौ III. ii. 174

क्रुक्लुकनौ — III. ii. 174

(भी धातु से तच्छीलादि कर्त्ता हो, तो वर्तमानकाल में) क्रु तथा क्लुकन् प्रत्यय हो जाते हैं।

...क्रुङ्... — VI. i. 176

देखें — गोश्वन्० VI. i. 176

...क्रुञ्चाम् — III. ii. 59

देखें — ऋत्विग्० III. ii. 59

क्रुध...— I. iv. 37

देखें—क्रुधद्रुहेर्ष्यासूयार्थानाम् I. iv. 37

क्रुध...— I. iv. 38

देखें — क्रुधद्रुहोः I. iv. 38

क्रुध... — III. ii. 151

देखें — क्रुधमण्डार्थेभ्यः III. ii. 151

क्रुधद्रुहेर्ष्यासूयार्थानाम् — I. iv. 37

क्रुध, द्रुह, ईर्ष्या, असूया— इन अर्थों वाली धातुओं के (प्रयोग में जिसके ऊपर कोप किया जाये, उस कारक की सम्प्रदान संज्ञा होती है)।

क्रुधद्रुहोः — I. iv. 38

(उपसर्ग से युक्त) क्रुध तथा द्रुह् धातु के प्रयोग में (जिसके प्रति कोप किया जाय, उस कारक की कर्म संज्ञा होती है)।

क्रुधमण्डार्थेभ्यः — III. ii. 151

क्रोधार्थक और मण्डार्थक धातुओं से (भी तच्छीलादि कर्त्ता हो, तो वर्तमान काल में युच् प्रत्यय होता है)।

... क्रुशोः — III. ii. 147

देखें— देविक्रुशोः III. ii. 147

... क्रोः — I. iv. 53

देखें — हृक्रोः I. iv. 53

क्रोडादि...— IV. i. 56

देखें — क्रोडादिबह्वचः IV. i. 56

क्रोडादिबह्वचः— IV. i. 56

क्रोडादि (स्वाङ्गवाची उपसर्जन तथा) अनेक अच् वाले (अदन्त स्वाङ्गवाची उपसर्जन जिनके अन्त में हैं, उन) प्रातिपदिकों से (स्त्रीलिङ्ग में ङीष् प्रत्यय नहीं होता है)।

क्रोड = गोद।

क्रोष्टुः — VII. i. 95

(सम्बुद्धिभिन्न सर्वनामस्थान परे रहते तुन् प्रत्ययान्त) क्रोष्टु शब्द (तृज्वत् हो जाता है)।

क्रौड्यादिभ्यः— IV. i. 80

(गोत्र में वर्त्तमान) क्रौड्यादि प्रातिपदिकों से (भी स्त्रीलिङ्ग में ष्यङ् प्रत्यय होता है)।

क्रौड्या = क्रुड की पुत्री

क्र्यादिभ्यः — III. i. 81

डुक्रीञ् आदि धातुओं से ('श्ना' प्रत्यय होता है; कर्तृ-वाचक सार्वधातुक परे रहने पर)।

...क्लमु...— III. i. 70

देखें — **भ्राशभ्लाश० III. i. 70**

...क्लमु...— VII. iii. 75

देखें — **ष्ठिवुक्लमुचमाम् VII. iii. 75**

...क्लिश...— I. ii. 7

देखें — **मृडमृदगुधकुषक्लिशवदवसः I. ii. 7**

...क्लिश... — III. ii. 146

देखें— **निन्दहिंस० III. ii. 146**

क्लिशः — VII. ii. 50

क्लिश् धातु से उत्तर (क्त्वा तथा निष्ठा को विकल्प से इट् आगम होता है)।

...क्लुकनौ — III. ii. 174

देखें — **क्रुक्लुकनौ III. ii. 174**

क्लेश...— III. ii. 50

देखें — **क्लेशतमसोः III. ii. 50**

क्लेशतमसोः — III. ii. 50

क्लेश तथा तमस् (कर्म) के उपपद रहते (अपपूर्वक हन् धातु से ड प्रत्यय होता है)।

क्व — VII. ii. 105

(अत् विभक्ति के परे रहते किम् अङ्ग को) क्व आदेश होता है।

क्वणः — III. iii. 65

(निपूर्वक, अनुपसर्ग तथा वीणा विषय होने पर भी) क्वण् धातु से (कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में विकल्प से अप् प्रत्यय होता है, पक्ष में घञ्)।

... क्वनिप्... — III. ii. 74

देखें — **मनिन्क्वनिप्० III. ii. 74**

क्वनिप् — III. ii. 94

(दृश् धातु से कर्म उपपद रहते) भूतकाल में क्वनिप् प्रत्यय होता है।

क्वरप्— III. ii. 163

(इण्, णश्, जि, सृ — इन धातुओं से तच्छीलादि कर्त्ता हो तो वर्तमानकाल में) क्वरप् प्रत्यय होता है।

...क्वरपः — IV. i. 15

देखें — **टिड्ढाणञ्० IV. i. 15**

क्वसुः — III. ii. 106

(वेदविषय में लिट् के स्थान में) क्वसु आदेश (भी) होता है, (विकल्प से)।

क्वादेः — VII. iii. 59

कवर्ग आदि वाले धातु के (चकार तथा जकार के स्थान में कवर्गादेश नहीं होता)।

क्वि... — VI. iv. 15

देखें — **क्विझलोः VI. iv. 15**

क्विन् — III. ii. 58

(उदकभिन्न सुबन्त उपपद रहते 'स्पृश्' धातु से) क्विन् प्रत्यय होता है।

क्विन्प्रत्ययस्य — VIII. ii. 66

क्विन् प्रत्यय हुआ है जिस धातु से, उस पद को (कव-र्गादेश होता है)।

क्विझलोः — VI. iv. 15

(अनुनासिकान्त अङ्ग की उपधा को दीर्घ होता है); क्वि तथा झलादि (कित्, ङित्) प्रत्यय परे रहते।

क्विप् — III. ii. 61

(सद्, सू, द्विष, द्रुह, दुह, युज, विद, भिद, छिद, जि, नी, राजृ — इन धातुओं से, सोपसर्ग हों तो भी तथा निरुपसर्ग हों तो भी, सुबन्त उपपद रहते) क्विप् प्रत्यय होता है।

क्विप् — III. ii. 76

(सब धातुओं से सोपपद हो चाहें निरुपपद) क्विप् प्रत्यय (भी) होता है।

क्विप् – III. ii. 87

(ब्रह्म, भ्रूण और वृत्र – ये ही कर्म उपपद रहते 'हन्' धातु से भूतकाल में) क्विप् प्रत्यय होता है।

क्विप् – III. ii. 166

(भ्राजृ, भासृ, धुर्वी, ऊर्ज्, पृ, जु, ग्रावपूर्वक ष्टुञ्–इन धातुओं से तच्छीलादि कर्त्ता हो तो वर्तमानकाल में) क्विप् प्रत्यय होता है।

...क्विपु– VI. iv. 97

देखें– इस्मन्० VI. iv. 97

क्वेः– III. ii. 138

(भ्राजभास० III. ii. 166 इस सूत्र से विहित) क्विप् प्रत्यय (पर्यन्त जितने प्रत्यय कहे हैं; वे सब तच्छील, तद्धर्म तथा तत्साधुकारी कर्ता अर्थों में जानने चाहिए)।

क्वौ– VI. iii. 115

(नहि, वृति, वृषि, व्यधि, रुचि, सहि, तनि – इन) क्विष्प्रत्ययान्त शब्दों के उत्तरपद रहते (पूर्व अण् को दीर्घ हो जाता है)।

क्वौ– VI. iv. 40

क्वि के परे रहते (गम् के अनुनासिक का लोप होता है)।

क्वौ– VIII. iii. 25

सम् के मकार को मकारादेश होता है, क्विप् प्रत्ययान्त राज् धातु के परे रहते।

... क्षण... – II. ii. 5

देखें – हम्यन्तक्षण० VII. ii. 5

...क्षतृ...– VI. iv. 11

देखें – अप्तृन्तृच्० VI. iv. 11

क्षत्रात् – IV. i. 138

क्षत्र शब्द से (अपत्य अर्थ में घ प्रत्यय होता है)।

...क्षत्रिय... – II. iv. 58

देखें – ण्यक्षत्रियार्षञितः II. iv. 58

...क्षत्रियाख्येभ्यः– IV. iii. 99

देखें – गोत्रक्षत्रियाख्येभ्यः IV. iii. 99

क्षत्रियात् – IV. i. 166

(जनपद को कहने वाले) क्षत्रिय अभिधायक प्रातिपदिक से (अपत्य अर्थ में अञ् प्रत्यय होता है)।

क्षमिति – VII. ii. 34

क्षमिति शब्द (वेदविषय में) इडागमयुक्त निपातित है।

क्षयः – VI. i. 195

क्षय शब्द (आद्युदात्त होता है, निवास अभिधेय होने पर)।

क्षय्य ... – VI. i. 78

देखें – क्षय्यजय्यौ VI. i. 78

क्षय्यजय्यौ – VI. i. 78

क्षय्य और जय्य शब्द निपातन किये जाते हैं, (शक्य अर्थ में)।

...क्षर...– VI. iii. 15

देखें – वर्षक्षरशरवरात् VI. iii. 15

क्षरिति – VII. ii. 34

क्षरिति शब्द वेदविषय में इडागमयुक्त निपातित है।

क्षायः – VIII. ii. 53

क्षै धातु से उत्तर (निष्ठा के तकार को मकारादेश होता है)।

...क्षि...– III. ii. 157

देखें – जिदृक्षि० III. ii. 157

क्षिपः – I. iii. 80

(अभि, प्रति तथा अति पूर्वक) 'क्षिप्' धातु से (परस्मैपद होता है)।

...क्षिपेः – III. ii. 140

देखें – त्रसिगृधि० III. ii. 140

...क्षिप्र...– VI. iv. 156

देखें – स्थूलदूर० VI. iv. 156

क्षिप्रवचने – III. iii. 133

शीघ्रवाची शब्द उपपद हो तो (आशंसा गम्यमान होने पर धातु से लृट् प्रत्यय होता है)।

क्षियः – VI. iv. 59

'क्षि क्षये' अथवा 'क्षि निवासगत्योः' धातु को (दीर्घ होता है, ल्यप् परे रहते)।

क्षियः — VIII. ii. 46

(दीर्घ) क्षि धातु से उत्तर (निष्ठा के तकार को नकारादेश होता है)।

क्षिया...— VIII. ii. 104

देखें — क्षियाशीः VIII. ii. 104

क्षियायाम् — VIII. i. 60

(ह इससे युक्त प्रथम तिङन्त विभक्ति को) धर्मोल्लंघन गम्यमान होने पर (अनुदात्त नहीं होता)।

क्षियाशीःप्रैषेषु — VIII. ii. 104

क्षिया = आचारोल्लंघन, आशीः तथा प्रैष = शाब्दप्रेरणा गम्यमान हो तो (साकाङ्क्ष तिङन्त की टि को स्वरित प्लुत होता है)।

... क्षीब... — VIII. ii. 55

देखें — फुल्लक्षीब० VIII. ii. 55

... क्षीर... — VII. i. 51

देखें — अश्वक्षीर० VII. i. 51

क्षीरात् — IV. ii. 19

(सप्तमीसमर्थ) क्षीर प्रातिपदिक से ('संस्कृतं भक्षाः' अर्थ में ठञ् प्रत्यय होता है)।

क्षु... — III. iii. 25

देखें — क्षुश्रुवः III. iii. 25

क्षुद्रजन्तवः — II. iv. 8

क्षुद्रजन्तु = नेवले से लेकर सूक्ष्म जीव, तद्वाची शब्दों का (द्वन्द्व एकवद् होता है)।

क्षुद्रा...— IV. iii. 118

देखें — क्षुद्राभ्रमरवटर० IV. iii. 118

क्षुद्राभ्रमरवटरपादपात् — IV. iii. 118

(तृतीयासमर्थ) क्षुद्रा, भ्रमर, वटर, पादप प्रातिपदिकों से ('कृते' अर्थ में संज्ञाविषय गम्यमान होने पर अञ् प्रत्यय होता है)।

क्षुद्रा = छोटी मक्खी

वटर = पामार, शठ

...क्षुद्राणाम् — VI. iv. 156

देखें — स्थूलदूर० VI. iv. 156

क्षुद्राभ्यः — IV. i. 131

क्षुद्रावाची प्रकृतियों से (अपत्य अर्थ में विकल्प से ढ्रक् प्रत्यय होता है)।

...क्षुधोः — VII. ii. 52

देखें — वसतिक्षुधोः VII. ii. 52

क्षुब्ध...— VII. ii. 18

देखें — क्षुब्धस्वान्त० VII. ii. 18

क्षुभ्नादिषु — VII. iv. 38

क्षुभ्नादिगण में पठित शब्दों के (नकार को भी णकारादेश नहीं होता)।

क्षुब्धस्वान्तध्वान्तलग्नम्लिष्टविरिब्धफाण्टबाढानि — VII. ii. 18

क्षुब्ध, स्वान्त, ध्वान्त, लग्न, म्लिष्ट, विरिब्ध, फाण्ट, बाढ — ये शब्द (निष्ठा परे रहते यथासङ्ख्य करके मन्थ, मनस्, तमस्, शक्त, अविस्पष्ट, स्वर, अनायास, भृश— इन अर्थों में निपातन किये जाते हैं)।

क्षुल्लकः — VI. ii. 31

(वैश्वदेव शब्द उत्तरपद रहते पूर्वपदस्थित) क्षुल्लक शब्द (तथा महान् शब्द को प्रकृतिस्वर होता है)।

क्षुल्लक = छोटा, क्षुद्र

क्षुश्रुवः — III. iii. 25

(विपूर्वक) क्षु तथा श्रु धातुओं से (कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

...क्षेत्र...— III. ii. 21

देखें — दिवाविभा० III. ii. 21

...क्षेत्रज्ञ...— VII. iii. 30

देखें — शुचीश्वर० VII. iii. 30

क्षेत्रियच् — V. ii. 92

'क्षेत्रियच्' शब्द को निपातन किया जाता है, ('दूसरे शरीर में चिकित्सा किये जाने योग्य' अर्थ में)।

क्षेत्रे — IV. i. 23

(काण्डशब्दान्त अनुपसर्जन द्विगुसंज्ञक प्रातिपदिक से तद्धित का लुक् हो जाने पर स्त्रीलिङ्ग में) क्षेत्र वाच्य होने पर (ङीप् प्रत्यय नहीं होता है)।

क्षेत्रे — V. ii. 1

(षष्ठीसमर्थ धान्यविशेषवाची प्रातिपदिकों से 'उत्पत्ति-स्थान' अभिधेय हो तो खञ् प्रत्यय होता है), यदि वह (उत्पत्तिस्थान) खेत हो तो।

क्षेपे — II. i. 25

निन्दा गम्यमान होने पर (क्तान्त समर्थ सुबन्त के साथ द्वितीयान्त खट्वा सुबन्त का समास होता है, और वह समास तत्पुरुषसंज्ञक होता है)।

क्षेपे — II. i. 41

(समस्त पद से) निन्दा गम्यमान होने पर (ध्वाङ्क्ष = काकवाची समर्थ सुबन्त के साथ सप्तम्यन्त सुबन्त का विकल्प से समास होता है, और वह तत्पुरुष समास होता है)।

क्षेपे— II. i. 46

निन्दा गम्यमान होने पर (सप्तम्यन्त सुबन्त का क्तान्त समर्थ सुबन्त के साथ तत्पुरुष समास होता है)।

क्षेपे— II. i. 63

निन्दा गम्यमान होने पर ('किम्' शब्द का समानाधिकरण समर्थ के साथ विकल्प से समास होता है, और वह समास तत्पुरुषसंज्ञक होता है)।

क्षेपे— V. iv. 70

'निन्दा' अर्थ में वर्त्तमान (किम् प्रातिपदिक से समासान्त प्रत्यय नहीं होते)।

क्षेपे — VI. ii. 69

निन्दावाची समास में (गोत्रवाची, अन्तेवासिवाची तथा माणव एवं ब्राह्मण शब्दों के उत्तरपद रहते पूर्वपद को आद्युदात्त होता है)।

क्षेपे — VI. ii. 108

निन्दा गम्यमान होने पर (उदर, अश्व, इषु उत्तरपद रहते बहुव्रीहि समास में सञ्ज्ञाविषय में पूर्वपद को अन्तोदात्त होता है)।

... क्षेपेषु — V. iv. 46

देखें — अतिग्रहाव्यथन० V. iv. 46

क्षेम...— III. ii. 44

देखें — क्षेमप्रियमद्रे III. ii. 44

क्षेमप्रियमद्रे — III. ii. 44

क्षेम, प्रिय, मद्र – इन (कर्मों) के उपपद रहते (कृञ् धातु से अण् प्रत्यय होता है, तथा चकार से खच् भी होता है)।

क्ष्णुवः...— I. iii. 65

(सम् उपसर्ग से उत्तर) 'क्ष्णु तेजने' धातु से (आत्मनेपद होता है)।

... क्ष्मायी... — VII. iii. 36

देखें — अर्त्तिह्री० VII. iii. 36

...क्ष्विदि...— I. ii. 19

देखें — शीङ्स्विदिमिदिक्ष्विदिधृषः I. ii. 19

क्सः — III. i. 45

(शलन्त और इगुपध जो अनिट् धातु, उससे लुङ् परे रहते च्लि के स्थान में) क्स आदेश होता है।

क्सस्य — VII. iii. 71

क्स का (अजादि प्रत्यय परे रहते लोप होता है)।

...क्से ... — III. iv. 9

देखें — सेसेनसे० III. iv. 9

क्स्नुः — III. ii. 139

(ग्ला, जि, स्था तथा चकार से भू धातु से भी) क्स्नु प्रत्यय (वर्त्तमानकाल में होता है, तच्छीलादि कर्त्ता हो तो)। क्स्नु में गकार चर्त्वभूत निर्दिष्ट है।

ख

ख— प्रत्याहारसूत्र XI

भगवान् पाणिनि द्वारा अपने ग्यारहवें प्रत्याहारसूत्र में पठित प्रथम वर्ण।

पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का तीसवाँ वर्ण।

ख— IV. iv. 132

(वेशस्, यशस् आदि वाले भगान्त प्रातिपदिक से मत्वर्थ में) ख प्रत्यय (भी) होता है, (वेद-विषय में)।

ख— V. i. 91

(द्वितीयासमर्थ सम् तथा परि पूर्व वाले वत्सर शब्दान्त

प्रातिपदिक से 'सत्कारपूर्वक व्यापार', 'खरीदा हुआ', 'हो चुका' तथा 'होने वाला'– इन अर्थों में) ख प्रत्यय (तथा छ प्रत्यय) होता है।

ख... – V. ii. 5
देखें – **खखञौ V. ii. 5**

...ख... – VII. i. 2
देखें – **फढख० VII. i. 2**

खः – IV. i. 139
(कुल शब्द अन्त वाले तथा केवल कुल प्रातिपदिक से भी अपत्य अर्थ में) ख प्रत्यय होता है।

खः – IV. iv. 78
(द्वितीयासमर्थ सर्वधुर प्रातिपदिक से 'ढोता है' अर्थ में) ख प्रत्यय होता है।

खः – V. i. 9
(चतुर्थीसमर्थ आत्मन्, विश्वजन तथा भोगशब्द उत्तर-पदवाले प्रातिपदिकों से 'हित' अर्थ में) ख प्रत्यय होता है।

खः – V. i. 32
(अध्यर्द्ध शब्द पूर्ववाले तथा द्विगुसञ्ज्ञक विंशतिक शब्दान्त प्रातिपदिक से 'तदर्हति'पर्यन्त कथित अर्थों में) ख प्रत्यय होता है।

खः – V. i. 52
(द्वितीयासमर्थ आढक, आचित तथा पात्र प्रातिपदिक से 'संभव है', 'अवहरण करता है' तथा 'पकाता है' अर्थों में विकल्प से) ख प्रत्यय होता है।

खः – V. i. 84
(द्वितीयासमर्थ समा प्रातिपदिक से 'सत्कारपूर्वक व्यापार', 'खरीदा हुआ', 'हो चुका' तथा 'होने वाला' इन अर्थों में) ख प्रत्यय होता है।

खः – V. ii. 6
(षष्ठीसमर्थ यथामुख तथा सम्मुख प्रातिपदिकों से 'दर्शन' = शीशा अर्थ में) ख प्रत्यय होता है।

खः – V. iv. 7
(अषडक्ष, आशितंगु, अलंकर्म, अलंपुरुष शब्दों से तथा अधि शब्द उत्तरपद वाले प्रातिपदिकों से स्वार्थ में) ख प्रत्यय होता है।

खखञौ – V. ii. 5
(तृतीयासमर्थ सर्वचर्मन् प्रातिपदिक से 'किया हुआ' अर्थ में) ख तथा खञ् प्रत्यय होते हैं।

खच् – III. ii. 32
(प्रिय और वश कर्म उपपद रहते वद् धातु से) खच् प्रत्यय होता है।

खचि – VI. iv. 94
खच्परक (णि परे रहते अङ्ग की उपधा को ह्रस्व होता है)।

खञ् – IV. iii. 1
(युष्मद् तथा अस्मद् शब्दों से) खञ् (तथा चकार से छ) प्रत्यय (विकल्प से होते हैं, पक्ष में औत्सर्गिक अण् होता है)।

खञ् – IV. iv. 99
(सप्तमीसमर्थ प्रतिजनादि प्रातिपदिकों से साधु अर्थ में) खञ् प्रत्यय होता है।

खञ् – V. i. 11
(चतुर्थीसमर्थ माणव तथा चरक प्रातिपदिकों से 'हित' अर्थ में) खञ् प्रत्यय होता है।

खञ् – V. ii. 2
(षष्ठीसमर्थ धान्यविशेषवाची प्रातिपदिकों से 'उत्पत्ति-स्थान' अभिधेय हो तो) खञ् प्रत्यय होता है, (यदि वह उत्पत्तिस्थान खेत हो तो)।

खञ् – V. ii. 18
('भूतपर्व' अर्थ में वर्त्तमान गोष्ठ प्रातिपदिक से) खञ् प्रत्यय होता है।

...खञौ – IV. i. 141
देखें – **अञ्खञौ IV. i. 141**

...खञौ – IV. ii. 93
देखें – **यत्खञौ IV. ii. 93**

...खञौ – V. i. 70
देखें – **घखञौ V. i. 70**

...खञौ – V. i. 80
देखें – **यत्खञौ V. i. 80**

...खञौ — V. ii. 5

देखें — खखञौ V. ii. 5

खट्वा — II. i. 25

(द्वितीयान्त) खट्वा शब्द (क्तान्त समर्थ सुबन्त के साथ तत्पुरुष समास को प्राप्त होता है, निन्दा गम्यमान होने पर)।

...खण्डिका... — IV. iii. 102

देखें — तित्तिरिवरतन्तु० IV. iii. 102

खण्डिकादिभ्यः — IV. ii. 44

(षष्ठीसमर्थ) खण्डिकादि प्रातिपदिकों से (भी समूहार्थ को कहने में अञ् प्रत्यय होता है)।

...खदिर...— VIII. iv. 5

देखें — प्रनिरन्तः... VIII. iv. 5

...खन... — III. ii. 67

देखें — जनसन० III. ii. 67

...खन...— III. ii. 184

देखें — अर्त्तिलूधू० III. ii. 184

...खन...— VI. iv. 98

देखें — गमहन० VI. iv. 98

खनः — III. i. 111

खन् धातु से ('क्यप्' प्रत्यय होता है, और अन्त्य अल् के स्थान में ईकार आदेश भी होता है)।

खनः — III. iii. 125

खन् धातु से (पुँल्लिङ्ग करणाधिकरण कारक संज्ञा में घ प्रत्यय होता है, तथा चकार से घञ् भी होता है)।

खनति — IV. iv. 2

(तृतीयासमर्थ प्रातिपदिक से 'खेलता है'), 'खोदता है', ('जीतता है', 'जीता हुआ'– अर्थों में ठक् प्रत्यय होता है)।

...खनाम् — VI. iv. 42

देखें — जनसनखनाम् VI. iv. 42

...खन्य... — III. i. 123

देखें — निष्टक्यदेवहूय III. i. 123

खमुञ् — III. iv. 25

(कर्म उपपद रहते आक्रोश गम्यमान हो तो समानकर्तृक पूर्वकालिक कृञ् धातु से) खमुञ् प्रत्यय होता है।

खयः — VII. iv. 61

(शर् प्रत्याहार का कोई वर्ण पूर्व में है जिस खय् प्रत्याहार के, ऐसे अभ्यास का) खय् शेष रहता है।

खयि — VIII. iii. 7

(अम् परे है जिससे, ऐसे) खय् के परे रहते (पुम् को रु होता है, संहिता में)।

खरः — VIII. iii. 15

देखें — खरवसानयोः VIII. iii. 15

खरवसानयोः — VIII. iii. 15

(रेफान्त पद को) खर् परे रहते तथा अवसान में (विसर्जनीय आदेश होता है, संहिता में)।

...खरशालात् — IV. iii. 35

देखें — स्थानान्तगोशाल० IV. iii. 35

खरि — VIII. iv. 54

खर् परे रहते (भी झलों को चर् आदेश होता है)।

खल् — III. iii. 126

(कृच्छ्र अर्थवाले तथा अकृच्छ्र अर्थवाले ईषद्, दुस् तथा सु उपपद हों तो धातु से) खल् प्रत्यय होता है।

खल्... — VII. i. 67

देखें — खल्घञोः VII. i. 67

खल... — IV. ii. 49

देखें — खलगोरथात् IV. ii. 49

खल... — V. i. 7

देखें — खलयवमाषतिल० V. i. 7

खलगोरथात् — IV. ii. 49

(षष्ठीसमर्थ) खल, गो तथा रथ प्रातिपदिकों से (समूह अर्थ को कहने में य प्रत्यय होता है)।

खलति... — II. i. 66

देखें — खलतिपलितवलिन० II. i. 66

खलतिपलितवलिनजरतीभिः — II. i. 66

(युवन् शब्द) खलति, पलित, वलिन, जरती– इन (समानाधिकरण सुबन्त) शब्दों के साथ (विकल्प से समास को प्राप्त होता है, और वह तत्पुरुष समास होता है)।

खलति = गंजा पुरुष।

पलित = सफेद बालों वाला।

वलिन = झुर्री वाला।

जरती = वृद्धा।

खलयवमाषतिलवृषब्रह्मणः — V. i. 7

(चतुर्थीसमर्थ) खल, यव, माष, तिल, वृष, ब्रह्मन् प्रातिपदिकों से (भी 'हित' अर्थ में यत् प्रत्यय होता है)।

...खलर्थ... — II. iii. 69

देखें — **लोकाव्ययनिष्ठा० II. iii. 69**

...खलर्थाः — III.iv. 70

देखें — **कृत्यक्तखलर्थाः III. iv. 70**

खल्घञोः — VII. i. 67

खल् तथा घञ् प्रत्ययों के परे रहते (उपसर्ग से उत्तर लभ् अङ्ग को नुम् आगम होता है)।

...खल्वोः — III. iv. 18

देखें — **अलङ्खल्वोः III. iv. 18**

खश् — III. ii. 28

(णिजन्त एजृ धातु से कर्म उपपद रहते) खश् प्रत्यय होता है।

खश् — III. ii. 83

(आत्ममान अर्थ में विद्यमान 'मन्' धातु से सुबन्त उपपद रहते) खश् प्रत्यय होता है, चकार से णिनि भी होता है।

...खाद... — III. ii. 146

देखें — **निन्दहिंस० III. ii. 146**

....खादौ — VIII. iv. 18

देखें — **अकखादौ VIII. iv. 18**

...खान्य... — III. i. 123

देखें — **निष्टक्यंदेवहूय० III. i. 123**

खार्याः — V. i. 33

(अध्यर्द्धशब्द पूर्ववाले तथा द्विगुसञ्ज्ञक) खारीशब्दान्त प्रातिपदिक से ('तदर्हति'पर्यन्त) कथित अर्थों में ईकन् प्रत्यय होता है)।

खार्याः — V. iv. 101

खारी शब्दान्त (द्विगु सञ्ज्ञक तत्पुरुष) से (तथा अर्धशब्द से उत्तर जो खारी शब्द, तदन्त से समासान्त टच् प्रत्यय होता है, प्राचीन आचार्यों के मत में)।

खिति — VI. iii. 65

ख् इत्सञ्ज्ञक है जिसका, ऐसे शब्द के उत्तरपद रहते (अव्ययभिन्न शब्द को ह्रस्व हो जाता है)।

खिदेः — VI. i. 51

'खिद् दैन्ये' धातु के (एच् के स्थान में वेदविषय में विकल्प से आत्व हो जाता है)।

खिष्णुच्...— III. ii. 57

देखें — **खिष्णुच्खुकञौ III. ii. 57**

खिष्णुच्खुकञौ — III. ii. 57

(च्व्यर्थ में वर्तमान अच्व्यन्त आढ्य, सुभग, स्थूल, पलित, नग्न, अन्ध, प्रिय–ये सुबन्त उपपद रहते कर्तृ कारक में भूधातु से) खिष्णुच् तथा खुकञ् प्रत्यय होते हैं।

...खुकञौ— III. ii. 57

देखें—**खिष्णुच्खुकञौ III. ii. 57**

खे — VI. iv. 169

(भसञ्ज्ञक आत्मन् और अध्वन् अङ्गों को) ख प्रत्यय परे रहते (प्रकृतिभाव होता है)।

...खेट... — VI. ii. 126

देखें — **चेलखेट० VI. ii. 126**

...खोः — VI. iv. 145

देखें — **टखोः VI. iv. 145**

...खोपधात् — IV. ii. 140

देखें — **अकेकान्त० IV. ii. 140**

...खौ — IV. ii. 92

देखें — **घखौ IV. ii. 92**

...खौ — IV. iii. 64

देखें—**यत्खौ IV. iii. 64**

...खौ — IV. iv. 130

देखें — **यत्खौ IV. iv.130**

...खौ – V. i. 54

देखें – लुक्खौ V. i. 54

...खौ– V. ii. 16

देखें–यत्खौ V. ii. 16

ख्य... – VI. i. 108

देखें – ख्यत्यात् VI. i. 108

ख्यः – III. ii. 7

(सम् उपसर्ग पूर्वक) ख्या धातु से (कर्म उपपद रहते 'क' प्रत्यय होता है)।

ख्यत्यात् – VI. i. 108

ख्य् और त्य् से (परे ङसि तथा ङस् अकार के स्थान में उकार आदेश होता है, संहिता के विषय में)।

...ख्या... – VIII. ii. 57

देखें – ध्याख्या० VIII. ii. 57

ख्याञ् – II. iv. 54

(चक्षिङ् के स्थान में, आर्धधातुक के विषय में) ख्याञ् आदेश होता है।

...ख्यातिभ्यः – III. i. 52

देखें – अस्यतिवक्ति० III. i. 52

ख्युन् – III. ii. 56

(च्व्यर्थ में वर्तमान अच्विप्रत्ययान्त आढ्य, सुभग, स्थूल, पलित, नग्न, अन्ध तथा प्रिय कर्म उपपद रहते कृञ् धातु से करण कारक में) ख्युन् प्रत्यय होता है।

ग

ग् – I. i. 5

देखें – क्क्ङिति I. i. 5

ग – प्रत्याहारसूत्र X

भगवान् पाणिनि द्वारा अपने दशम प्रत्याहारसूत्र में पठित तृतीय वर्ण।

पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का सत्ताइसवां वर्ण।

... ग... – VI. iii. 51

देखें – आज्यातिगो० VI. iii. 51

गः – III. i. 146

गै धातु से ('थकन्' प्रत्यय होता है, शिल्पी कर्त्ता वाच्य हो तो)।

गच्छति – IV. iii. 85

(द्वितीयासमर्थ प्रातिपदिक से) गच्छति क्रिया के (पथ तथा दूत कर्त्ता अभिधेय होने पर यथाविहित प्रत्यय होता है)।

गच्छति – V. i. 73

(द्वितीयासमर्थ योजन प्रातिपदिक से) 'जाता है' अर्थ में (यथाविहित ठञ् प्रत्यय होता है)।

...गण... – I. i. 22

देखें – बहुगणवतुडति I. i. 22

गण... – III. iii. 86

देखें – गणप्रशंसयोः III. iii. 86

...गण... – V. ii. 52

देखें – बहुपूग० V. ii. 52

गणः – VII. iv. 97

गण् धातु के (अभ्यास को ईकारादेश तथा चकार से अकारादेश भी होता है, चङ्परक णि परे रहते)।

...गणम् – IV. iv. 84

देखें–धनगणम् IV. iv. 84

...गणात् – V. iv. 73

देखें – अबहुगणात् V. iv. 73

...गणि... – VI. iv. 165

देखें – गाथिविदथि० VI. iv. 165

गणप्रशंसयोः – III. iii. 86

(संघ और उद्घ शब्द यथासंख्य करके) गण = समूह तथा प्रशंसा = स्तुति गम्यमान होने पर (निपातन किये जाते हैं, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में)।

...गत... – II. i. 23

देखें – श्रितातीतपतित० II. i. 23

गतः – IV. iv. 86

(द्वितीयासमर्थ वश प्रातिपदिक से) प्राप्त हुआ अर्थ में (यत् प्रत्यय होता है)।

गति... — I. iii. 15

देखें — **गतिहिंसार्थेभ्यः I. iii. 15**

गति... — I. iv. 52

देखें — **गतिबुद्धिप्रत्यवसाना० I. iv. 52**

...गति... — II. ii. 18

देखें — **कुगतिप्रादयः II. ii. 18**

...गति... — III. iv. 76

देखें — **ध्रौव्यगति० III. iv. 76**

गति... — VI. II. 139

देखें — **गतिकारको० VI. ii. 139**

गतिः — I. iv. 59

(प्रादियों की क्रिया के योग में) गति संज्ञा (और उपसर्ग संज्ञा भी) होती है।

गतिः — VI. ii. 49

(कर्मवाची क्तान्त उत्तरपद रहते पूर्वपदस्थ अव्यवहित) गति को (प्रकृतिस्वर होता है)।

गतिः — VIII. i. 70

(गतिसंज्ञक के परे रहते) गतिसंज्ञक को (अनुदात्त होता है)।

गतिकारकोपपदात् — VI. ii. 139

गति, कारक तथा उपपद से उत्तर (कृदन्त उत्तरपद को तत्पुरुष समास में प्रकृतिस्वर होता है)।

गतिबुद्धिप्रत्यवसानार्थशब्दकर्माकर्मकाणाम् —I. iv. 52

गत्यर्थक, बुद्ध्यर्थक, भोजनार्थक, शब्दकर्म और अकर्मक धातुओं का (जो अण्यन्तावस्था का कर्त्ता, वह ण्यन्तावस्था में कर्मसंज्ञक होता है)।

गतिहिंसार्थेभ्यः — I. iii. 15

गत्यर्थक तथा हिंसार्थक धातुओं से (कर्मव्यतिहार अर्थ में आत्मनेपद नहीं होता है)।

गतौ — III. i. 23

गत्यर्थक धातुओं से (कुटिलता गत्यमान होने पर नित्य यङ् प्रत्यय होता है, क्रिया-समभिहार में नहीं होता)।

गतौ — VII. iii. 63

गति अर्थ में वर्तमान (वञ्चु अङ्ग को कवर्गादेश नहीं होता)।

गतौ — VIII. i. 70

गतिसंज्ञक के परे रहते (गतिसंज्ञक को अनुदात्त होता है)।

गतौ — VIII. iii. 113

गति अर्थ में वर्तमान ('षिधु गत्याम्' धातु के सकार को मूर्धन्य आदेश नहीं होता)।

गत्यर्थ... — I. iv. 68

देखें — **गत्यर्थवदेषु I. iv. 68**

गत्यर्थ... — III. iv. 72

देखें — **गत्यर्थाकर्मक० III. iv. 72**

गत्यर्थकर्मणि — II. iii. 12

(चेष्टा क्रिया वाली) गत्यर्थक धातुओं के (मार्गवर्जित कर्म में द्वितीया और चतुर्थी विभक्ति होती है।

गत्यर्थलोटा — VIII. i. 51

गति अर्थवाले धातुओं के लोट् लकार से युक्त (लृडन्त तिङन्त को अनुदात्त नहीं होता, यदि कारक सारा अन्य न हो तो)।

गत्यर्थवदेषु — I. iv. 98

गत्यर्थक और वद् धातु के प्रयोग में (अव्यय अच्छ शब्द गति और निपात संज्ञक होता है)।

गत्यर्थाकर्मकश्लिषशीङ्स्थासवसजनरुहजीर्यतिभ्यः — III. iv. 72

गत्यर्थक, अकर्मक, श्लिष, शीङ्, स्था, आस, वस, जन, रुह तथा जॄ धातुओं से विहित (जो क्त प्रत्यय, वह कर्त्ता में होता है; चकार से भाव, कर्म में भी होता है)।

गत्यर्थेभ्यः — III iii. 129

(वेदविषय में) गत्यर्थक धातुओं से (कृच्छ्र, अकृच्छ्र अर्थों में ईषदादि उपपद हों तो युच् प्रत्यय होता है)।

गत्योः — VIII. iii. 40

(नमस् तथा पुरस्) गतिसंज्ञक शब्दों के (विसर्जनीय को सकारादेश होता है; कवर्ग, पवर्ग परे रहते)।

गत्वरः — III. ii. 164

गत्वर यह शब्द (भी) क्वरप् प्रत्ययान्त निपातन किया जाता है।

गत्वर = घुमक्कड़, अनित्य

गद... — III. i. 100

देखें — गदमद० III. i. 100

गद... — III. iii. 64

देखें — गदनद० III. iii. 64

गद... — VIII. iv. 17

देखें — गदनद० VIII. iv. 17

गदनदपठस्वनः — III. iii. 64

(नि पूर्वक) गद, नद, पठ तथा स्वन् धातुओं से (विकल्प से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में अच् प्रत्यय होता है, पक्ष में घञ् होता है)।

गदनदपतपदघुमास्यतिहन्तियातिवातिद्रातिप्सातिवपतिवहति - शाम्यतिचिनोतिदेग्धिषु — VIII. iv. 17

(उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर नि के नकार को णकार आदेश होता है); गद, नद, पत, पद, घुसंज्ञक, मा, षो, हन्, या, वा, द्रा, प्सा, वप, वह, शम, चि एवं दिह धातुओं के परे रहते (भी)।

गदमदचरयमः — III. i. 100

(उपसर्गरहित) गद, मद, चर, यम् धातुओं से (भी यत् प्रत्यय होता है)।

गन्तव्य... — VI. ii. 13

देखें — गन्तव्यपण्यम् VI. ii. 13

गन्तव्यपण्यम् — VI. ii. 13

(वाणिज शब्द उत्तरपद रहते तत्पुरुष समास में) गन्तव्य-वाची = जाने योग्य स्थानवाची तथा पण्यवाची = क्रयविक्रययोग्य वस्तुवाची पूर्वपद को (प्रकृतिस्वर हो जाता है)।

गन्धन... — I. iii. 32

देखें — गन्धनावक्षेपणसेवनसाह० I. iii. 32

गन्धनावक्षेपणसेवनसाहसिक्यप्रतियत्नप्रकथनोपयोगेषु— I. iii. 32

गन्धन = चुगली करना, अवक्षेपण = धमकाना, सेवन = सेवा करना, साहसिक्य = जबरदस्ती करना, प्रतियत्न = किसी गुण को भिन्न गुण में बदलना, प्रकथन = बढ़ा चढ़ाकर कहना तथा उपयोग = चर्मादि कार्य में लगाना— इन अर्थों में वर्तमान (कृञ् धातु से आत्मनेपद होता है)।

गन्धने — I. ii. 15

गन्धन = चुगली करने अर्थ में वर्तमान (यम् धातु से परे सिच् कित्वत् होता है, आत्मनेपदविषय में)।

गन्धस्य — V. iv. 135

(उत्, पूति, सु तथा सुरभि शब्दों से उत्तर) गन्ध शब्द को (बहुव्रीहि समास में समासान्त इकारादेश होता है)।

...गम... — III. ii. 154

देखें — लषपत० III. ii. 154

...गम... — III. ii. 171

देखें — आदृगम III. ii. 171

गम... — VI. iv. 98

देखें — गमहनजन० VI. iv. 98

गम... VII. ii. 68

देखें — गमहन० VII. ii. 68

गमः — I. ii. 13

'गम्लृ गतौ' धातु से परे (झलादि लिङ्, सिच् आत्मनेपद विषय में विकल्प से कित्वत् होते हैं)।

गमः — III. ii. 46

(संज्ञा गम्यमान होने पर कर्म उपपद रहते) गम् धातु से (भी खच् प्रत्यय होता है)।

...गमः — III. ii. 67

देखें — जनसन० III. ii. 67

...गमः — III. iii. 58

देखें — ग्रहवृदृ० III. iii. 58

गमः — VI. iv. 40

(क्वि परे रहते) गम् के (अनुनासिक का लोप होता है)।

गमहनजनखनघसाम् — VI. iv. 98

गम्, हन, जन, खन, घस्- इन अङ्गों की (उपधा का लोप हो जाता है; अङ्भिन्न अजादि कित्, ङित् प्रत्यय परे हो तो)।

गमहनविदविशाम् — VII. ii. 68

गम्लृ, हन्, विद्लृ, विश् - इन अङ्गों से उत्तर (वसु को विकल्प से इट् का आगम होता है)।

...गमाम् — VI. iv. 16

देखें — अज्झनगमाम् VI. iv. 16

गमि... — I. iii. 29

देखें — गम्यृच्छिभ्याम् I. iii. 29

...गमि... — II. iv. 80

देखें — घसह्वरणश॰ II. iv. 80

...गमि... — VII. iii. 77

देखें — इषुगमियमाम् VII. iii. 77

...गमि... — VII. iv. 33

देखें — घाभूपू॰ VII. iv. 33

गमिः — II. iv. 46

(अबोधनार्थक इण् के स्थान में, णिच् परे रहते) गम् आदेश होता है।

गमेः — VII. ii. 58

गम्लृ धातु से उत्तर (सकारादि आर्धधातुक को परस्मैपद परे रहते इट् का आगम होता है)।

गम्भीरात् — IV. iii. 58

(सप्तमीसमर्थ) गम्भीर प्रातिपदिक से (भव अर्थ में ञ्य प्रत्यय होता है)।

गम्यादयः — III. iii. 3

(उणादिप्रत्ययान्त) गमी आदि शब्द (भविष्यत् काल के अर्थ में, साधु होते हैं)।

गम्यृच्छिभ्याम् — I. iii. 29

(सम् उपसर्ग से उत्तर अकर्मक) धातुओं से (आत्मनेपद होता है)।

...गर... — VI. iv. 157

देखें — प्रस्थस्फ॰ VI. iv. 157

गर्गादिभ्यः — IV. i. 105

गर्गादि षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिकों से (गोत्रापत्य में यञ् प्रत्यय होता है)।

...गर्त्तोत्तरपदात् — IV. ii. 125

देखें — कच्छाग्नि॰ IV. ii. 125

गर्त्तोत्तरपदात् — IV. ii. 136

गर्त्त शब्द उत्तरपदवाले (देशवाची) प्रातिपदिकों से (शैषिक छ प्रत्यय होता है)।

...गर्धेषु — VII. iv. 34

देखें — बुभुक्षापिपासा॰ VII. iv. 34

गर्ध = लालच।

गर्भिण्या — II. i. 70

(चतुष्पाद = चार पैर वाले पशु आदि के वाचक सुबन्त शब्द समानाधिकरण) गर्भिणी (सुबन्त) शब्द के साथ (विकल्प से समास को प्राप्त होते हैं, और वह तत्पुरुष संज्ञक समास होता है)।

...गर्हा... — I. iv. 95

देखें — पदार्थसम्भावनान्ववसर्ग॰ I. iv. 95

गर्हायाम् — III. iii. 142

निन्दा गम्यमान हो तो (अपि तथा जातु उपपद रहते धातु से लट् प्रत्यय होता है)।

गर्हायाम् — III. iii. 149

गर्हा = निन्दा गम्यमान हो तो (भी यच्च, यत्र उपपद रहते धातु से लिङ् प्रत्यय होता है)।

गर्हायाम् — VI. ii. 127

(चेल, खेट, कटुक, काण्ड– इन उत्तरपद शब्दों को तत्पुरुष समास में) निन्दा गम्यमान होने पर (आद्युदात्त होता है)।

गर्ह्य... — III. i. 101

देखें — गर्ह्यपणितव्य॰ III. i. 101

गर्ह्यपणितव्यानिरोधेषु — III. i. 101

(अवद्य, पण्य, वर्य– ये शब्द यथासंख्य करके) गर्ह्य = निन्दनीय, पणितव्य = खरीदने योग्य और अनिरोध = सेवन करने योग्य अर्थों में (यत्प्रत्ययान्त निपातन किये जाते हैं)।

गर्ह्यम् — IV. iv. 30

(द्वितीयासमर्थ प्रातिपदिक से 'देता है' अर्थ में ठक् प्रत्यय होता है), यदि देय पदार्थ निन्दित हो।

...गर्ह्यात् — V. ii. 128

देखें — द्वन्द्वोपताप॰ V. ii. 128

...गवादिभ्यः — V. i. 3

देखें — उगवादिभ्यः V. i. 3

गवाश्वप्रभृतीनि — II. iv. 11

गवाश्व इत्यादि शब्द (यथापठित = कृतैकवद्भाव द्वन्द्वरूप ही साधु होते हैं)।

गवि... — VIII. iii. 95

देखें — **गवियुधिभ्याम् VIII. iii. 95**

गवियुधिभ्याम् — VIII. iii. 95

गवि तथा युधि से उत्तर (स्थिर शब्द के सकार को मूर्धन्य आदेश होता है)।

... गहनयोः — VII. ii. 22

देखें — **कृच्छ्रगहनयोः VII. ii. 22**

गहादिभ्यः — IV. ii. 137

गहादि प्रातिपदिकों से (भी शैषिक छ प्रत्यय होता है)।

गा — II. iv. 45

(इण् के स्थान में लुङ् आर्धधातुक रहते) गा आदेश होता है।

गा... — III. ii. 8

देखें — **गापोः III. ii. 8**

... गा... — III. iii. 95

देखें — **स्थागापापचः III. iii. 95**

...गा... — VI. iv. 66

देखें — **घुमास्था० VI. iv. 66**

गाङ्... — I. ii. 1

देखें — **गाङ्कुटादिभ्यः I. ii. 1**

गाङ् — II. iv. 49

(इङ् को आर्धधातुक लिट् परे रहते) गाङ् आदेश होता है)।

गाङ्कुटादिभ्यः — I. ii. 1

इङादेश गाङ् तथा कुटादिगणपठित = 'कुट कौटिल्ये' से लेकर 'कुङ् शब्दे' पर्यन्त धातुओं से परे (ञित्, णित् भिन्न प्रत्यय ङित्वत् होते हैं)।

गाण्डी... — V. ii. 110

देखें — **गाण्ड्यजगात् V. ii. 110**

गाण्ड्यजगात् — V. ii. 110

गाण्डी तथा अजग प्रातिपदिकों से (मत्वर्थ में व प्रत्यय होता है, संज्ञाविषय में)।

गाति... — II. iv. 77

देखें — **गातिस्थाघुपा० II. iv. 77**

गातिस्थाघुपाभूभ्यः — II. iv. 77

गा, स्था, घुसंज्ञक धातु, पा और भू – इन धातुओं से उत्तर (सिच् का लुक् हो जाता है, परस्मैपद परे रहते)।

...गाथा... — III. ii. 23

देखें — **शब्दश्लोक० III. ii. 23**

गाथि... — VI. iv. 165

देखें — **गाथिविदथि० VI. iv. 165**

गाथिविदथिकेशिगणिपणिनः — VI. iv. 165

गाथिन्, विदथिन्, केशिन्, गणिन्, पणिन्– इन अङ्गों को (भी अण् परे रहते प्रकृतिभाव हो जाता है)।

गाध... — VI. ii. 4

देखें — **गाधलवणयोः VI. ii. 4**

गाधलवणयोः — VI. ii. 4

(प्रमाणवाची तत्पुरुष समास में) गाध तथा लवण शब्दों के उत्तरपद रहते (पूर्वपद को प्रकृतिस्वर होता है)।

गाध = तल, लिप्सा

...गान्धारिभ्याम् — IV. i. 137

देखें — **साल्वेयगान्धारिभ्याम् IV. i. 137**

गापोः — III. ii. 8

गा तथा पा धातु से ('टक्' प्रत्यय होता है, कर्म उपपद रहने पर)।

गामी — V. ii. 11

(द्वितीयासमर्थ अवारपार, अत्यन्त तथा अनुकाम प्रातिपदिकों से) 'भविष्य में जाने वाला' अर्थ में (ख प्रत्यय होता है)।

गार्ग्य... — VII. iii. 99

देखें — **गार्ग्यगालवयोः VII. iii. 99**

गार्ग्यगालवयोः — VII. iii. 99

(रुदादि पांच अङ्गों से उत्तर हलादि अपृक्त सार्वधातुक को अट् का आगम होता है) गार्ग्य तथा गालव आचार्यों के मत में।

गार्ग्यस्य — VIII. iii. 20

(ओकार से उत्तर यकार का लोप होता है), गार्ग्य आचार्य के मत में)।

...गार्हपत... — VI. ii. 42

देखें — कुरुगार्हपत० VI. ii. 42

...गालवयोः — VII. iii. 99

देखें — गार्ग्यगालवयोः VII. iii. 99

गालवस्य — VI. iii. 60

(ङीष् अन्त में नहीं है जिसके, ऐसा जो इक् अन्त वाला शब्द, उसको) गालव आचार्य के मत में (विकल्प से ह्रस्व होता है, उत्तरपद परे रहते)।

गालवस्य — VII. i. 74

(तृतीया विभक्ति से लेकर आगे की अजादि विभक्तियों के परे रहते भाषितपुंस्क नपुंसकलिङ्ग वाले इगन्त अङ्ग को) गालव आचार्य के मत में (पुंवद्भाव हो जाता है)।

...गालवानाम् — VIII. iv. 66

देखें — अगार्ग्यकाश्यप० VIII. iv. 66

...गाहेषु — VI. iii. 59

देखें — मन्थौदन० VI. iii. 59

गिरि... — VI. ii. 94

देखें — गिरिनिकाययोः० VI. ii. 94

गिरिनिकाययोः — VI. ii. 94

गिरि तथा निकाय शब्दों के परे रहते (संज्ञाविषय में पूर्वपद को अन्तोदात्त होता है)।

गिरेः — V. iv. 112

(अव्ययीभाव समास में वर्तमान) गिरि शब्दान्त प्रातिपदिक से (भी समासान्त टच् प्रत्यय विकल्प से होता है, सेनक आचार्य के मत में)।

...गिर्योः — VI. iii. 116

देखें — वनगिर्योः VI. iii. 116

गुडादिभ्यः — IV. iv. 102

(सप्तमीसमर्थ) गुडादि प्रातिपदिकों से (साधु अर्थ में ठञ् प्रत्यय होता है)।

गुण... — I. i. 3

देखें — गुणवृद्धी I. i. 3

...गुण... — II. ii. 11

देखें — पूरणगुणसुहितार्थ० II. ii. 11

गुणः — I. i. 2

(अ, ए, ओ की) गुणसंज्ञा होती है।

गुणः — VI. i. 84

(अवर्ण से उत्तर जो अच् तथा अच् परे रहते जो अवर्ण, इन दोनों पूर्व पर के स्थान में) गुण (एकादेश) होता है।

गुणः — VI. iv. 146

(भसंज्ञक उवर्णान्त अङ्ग को) गुण होता है, (तद्धित परे रहते)।

गुणः — VI. iv. 156

(स्थूल, दूर, युव, ह्रस्व, क्षिप्र, क्षुद्र – इन अङ्गों का पर जो यणादि भाग, उसका लोप होता है इष्ठन्, इमनिच् तथा ईयसुन् परे रहते तथा उस यणादि से पूर्व को) गुण होता है।

गुणः — VII. iii. 82

(मिद् अङ्ग के इक् को शित् प्रत्यय परे रहते) गुण हो जाता है।

गुणः — VII. iii. 91

(ऊर्णुञ् अङ्ग को अपृक्त हल् पित् सार्वधातुक परे रहते) गुण होता है।

गुणः — VII. iii. 108

(ह्रस्वान्त अङ्ग को सम्बुद्धि परे रहते) गुण होता है।

गुणः — VII. iv. 10

(संयोग आदि में है जिसके, ऐसे ऋकारान्त अङ्ग को भी) गुण होता है; (लिट् परे रहते)।

गुणः — VII. iv. 16

(ऋवर्णान्त तथा दृशिर् अङ्ग को अङ् परे रहते) गुण होता है।

गुणः — VII. iv. 21

(शीङ् अङ्ग को सार्वधातुक परे रहते) गुण होता है)।

गुणः — VII. iv. 29

(ऋ तथा संयोग आदि में है जिसके, ऐसे ऋकारान्त धातु को यक् तथा यकारादि आर्धधातुक लिङ् परे रहते) गुण होता है।

गुणः — VII. iv. 57

(अकर्मक मुच्लृ धातु को विकल्प से) गुण होता है, (सकारादि सन् प्रत्यय परे रहते)।

गुणः — VII. iv. 75

(णिजिर् आदि तीन धातुओं के अभ्यास को श्लु होने पर) गुण होता है।

गुणः — VII. iv. 82

(यङ् तथा यङ्लुक् के परे रहते इगन्त अभ्यास को) गुण होता है।

गुणकार्त्स्न्ये — VI. ii. 93

गुण की सम्पूर्ति अर्थ में वर्तमान (पूर्वपद सर्व शब्द को अन्तोदात्त होता है)।

गुणप्रतिषेधे — VI. ii. 155

गुण के प्रतिषेध अर्थ में वर्तमान (नञ् से उत्तर संपादि, अर्ह, हित, अलम् अर्थ वाले तद्धितप्रत्ययान्त उत्तरपद को अन्तोदात्त होता है)।

गुणवचन... — V. i. 123

देखें — **गुणवचनब्राह्मणा० V. i. 123**

गुणवचनब्राह्मणादिभ्यः — V. i. 123

गुण को जिसने कहा, ऐसे तथा ब्राह्मणादि (षष्ठीसमर्थ) प्रातिपदिकों से (कर्म के अभिधेय होने पर तथा भाव में ष्यञ् प्रत्यय होता है)।

गुणवचनस्य — VIII. i. 12

(प्रकार अर्थ में वर्तमान) गुणवचन शब्दों को (द्वित्व होता है, और इसे कर्मधारयवत् कार्य भी होता है)।

गुणवचनात् — IV. i. 44

(उकारान्त) गुणवचन अर्थात् गुण को कहने वाले प्रातिपदिक से (स्त्रीलिङ्ग में विकल्प से ङीष् प्रत्यय होता है)।

गुणवचनात् — V. iii. 58

(इस प्रकरण में कहे गये अजादि प्रत्यय अर्थात् इष्ठन्, ईयसुन्) गुणवाची प्रातिपदिक से (ही) होते हैं।

गुणवचनेन — II. i. 29

(तृतीयान्त सुबन्त तृतीयान्तार्थकृत) गुणवाची शब्द के साथ (तथा अर्थ शब्द के साथ समास को प्राप्त होता है, और वह तत्पुरुष समास होता है)।

गुणवचनेषु — VI. ii. 24

गुण को कहने वाले शब्दों के उत्तरपद रहते (विस्पष्टादि पूर्वपद को तत्पुरुष समास में प्रकृतिस्वर होता है)।

गुणवृद्धी — I. i. 3

(गुण हो जाये, वृद्धि हो जाये, ऐसा नाम लेकर जहाँ) गुण, वृद्धि का विधान किया जाये, (वहाँ वे इक् = इ, उ, ऋ, लृ के स्थान में ही हों)।

गुणस्य — V. ii. 47

(प्रथमासमर्थ सङ्ख्यावाची प्रातिपदिकों से) 'इस भाग का (यह मूल्य है' अर्थ में मयट् प्रत्यय होता है)।

गुणादयः — VI. ii. 176

(बहु से उत्तर बहुव्रीहि समास में) गुणादिगणपठित शब्दों को (अन्तोदात्त नहीं होता)।

...गुणानाम् — VI. iv. 126

देखें — **शसदद० VI. iv. 126**

गुणान्तायाः — V. iv. 59

गुण शब्द अन्त वाले (सङ्ख्यावाची) प्रातिपदिक से (भी कृञ् के योग में कृषि अभिधेय हो तो डाच् प्रत्यय होता है)।

गुणे — II. iii. 25

(स्त्रीलिङ्ग को छोड़कर हेतुवाची) गुणवाचक शब्द में (विकल्प से पञ्चमी विभक्ति होती है)।

गुणे — VI. i. 94

(अपदान्त अकार से उत्तर) गुणसंज्ञक अ, ए, ओ के परे रहते (पूर्व, पर के स्थान में पररूप एकादेश होता है; संहिता के विषय में)।

...गुध... — I. ii. 7

देखें — **मृडमृदगुधकुशक्लिशवदवसः I. ii. 7**

गुप्... — III. i. 5

देखें — **गुप्तिज्किद्भ्यः III. i. 5**

गुपू... — III. i. 28

देखें — **गुपूधूपविच्छि० III. i. 28**

गुपूधूपविच्छिपणिपनिभ्यः — III. i. 28

गुपू, धूप, विच्छि, पणि, पनि– इन धातुओं से (आय प्रत्यय होता है)।

गुपेः — III. i. 50

गुप् धातु से उत्तर (छन्दविषय में च्लि के स्थान में विकल्प से चङ् आदेश होता है, कर्तृवाची लुङ् परे रहने पर)।

गुप्तिज्किद्भ्यः — III. i. 5

गुप्, तिज्, कित्– इन धातुओं से (स्वार्थ में सन् प्रत्यय होता है)।

... गुरु... — VI. iv. 157

देखें — प्रियस्थिर० VI. iv. 157

गुरुः — I. iv. 11

(संयोग के परे रहते ह्रस्व अक्षर की) गुरु संज्ञा होती है)।

गुरुमतः — III. i. 36

(इजादि) गुरु अक्षर आदिवाली धातु से ('आम्' प्रत्यय होता है; लौकिक विषय में, लिट् परे रहते, ऋच्छ् धातु को छोड़कर)।

गुरूपोत्तमयोः — IV. i. 78

(गोत्र में विहित ऋष्यपत्य से भिन्न अण् और इञ् प्रत्यय अन्त वाले) उपोत्तम गुरुवाले प्रातिपदिकों को (स्त्रीलिङ्ग में ष्यङ् आदेश होता है)।

उपोत्तम = तीन और तीन से अधिक वर्णों वाले शब्द के अन्तिम वर्ण से समीप का वर्ण।

गुरूपोत्तमात् — V. i. 131

(षष्ठीसमर्थ, यकार उपधा वाले) गुरु है उपोत्तम जिसका, ऐसे प्रातिपदिक से (भाव और कर्म अर्थों में वुञ् प्रत्यय होता है)।

गुरोः — III. iii. 103

(हलन्त) जो गुरुमान् धातु, उनसे (भी स्त्रीलिङ्ग कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में अ प्रत्यय होता है)।

गुरोः — VIII. ii. 86

(ऋकार को छोड़कर वाक्य के अनन्त्य) गुरुसंज्ञक वर्ण को (एक-एक करके तथा अन्त्य के टि को भी प्राचीन आचार्यों के मत में प्लुत उदात्त होता है)।

गुरौ — VI. iii. 10

(मध्य शब्द से उत्तर) गुरु शब्द के उत्तरपद रहते (सप्तमी विभक्ति का अलुक् होता है)।

...गुहाम् — VIII. ii. 73

देखें — दुहदिह० VIII. ii. 73

...गुहोः — VII. ii. 12

देखें — ग्रहगुहोः VII. ii. 12

...गूर्तानि — VIII. ii. 61

देखें — नसत्तनिषत्ता० VIII. ii. 61

...गृणः — I. iv. 41

देखें — अनुप्रतिगृणः I. iv. 41

गृधि... — I. iii. 69

देखें — गृधिवञ्च्योः I. iii. 69

...गृधि... — III. ii. 140

देखें — त्रसिगृधि० III. ii. 140

...गृधि... — III. ii. 150

देखें — जुचङ्क्रम्य० III. ii. 150

गृधिवञ्च्योः — I. iii. 69

(ण्यन्त) गृधु और वञ्चु धातुओं से (आत्मनेपद होता है, ठगने अर्थ में)।

...गृष्टि... — II. i. 64

देखें — पोटायुवतिस्तोक० II. i. 64

...गृष्टि... — VI. ii. 38

देखें — व्रीह्यपराहण० VI. ii. 38

गृष्ट्यादिभ्यः — IV. i. 136

गृष्ट्यादि प्रातिपदिकों से (भी अपत्य अर्थ में ठञ् प्रत्यय होता है)।

गृहपतिना — IV. iv. 90

(तृतीयासमर्थ) गृहपति शब्द से (संयुक्त अर्थ में ञ्य प्रत्यय होता है, संज्ञाविषय में)।

...गृहमेधात् — IV. ii. 31

देखें — द्यावापृथिवीशुना० IV. ii. 31

...गृहि... — III. ii. 158

देखें — स्पृहिगृहि० III. ii. 158

गृहणाति — IV. iv. 39

(पद शब्द उत्तरपद वाले द्वितीयासमर्थ प्रातिपदिक से) 'ग्रहण करता है' अर्थ में (ठक् प्रत्यय होता है)।

...गृभ्य: ... — III. i. 24

देखें — लुपसदचर० III. i. 24

...गेय... — III. iv. 68

देखें — भव्यगेय० III. iv. 68

गेहे — III. i. 144

गेह = घर वाच्य होने पर (ग्रह् धातु से 'क' प्रत्यय होता है)।

गो...: — I. ii. 48

देखें — गोस्त्रियो: I. ii. 48

...गो... — IV. ii. 49

देखें — खलगोरथात् IV. ii. 49

गो... — IV. ii. 135

देखें — गोयवाग्वो: IV. ii. 135

गो... — IV. iii. 157

देखें — गोपयसो: IV. iii. 157

गो... — V. i. 38

देखें — गोद्व्यच: V. i. 38

गो... — VI. i. 176

देखें — गोश्वन्० VI. i. 176

गो... — VI. ii. 72

देखें — गोबिडाल० VI. ii. 72

गो... — VI. ii. 78

देखें — गोतन्तियवम् VI. ii. 78

...गो... — VI. ii. 168

देखें— अव्ययदिक्शब्द० VI. ii. 168

...गो... — VIII. iii. 97

देखें — अम्बाम्ब० VIII. iii. 97

गो: — IV. iii. 142

(षष्ठीसमर्थ) गो प्रातिपदिक से (भी पुरीष = मल अभिधेय होने पर मयट् प्रत्यय होता है)।

गो: — V. iv. 92

गो शब्द अन्तवाले (तत्पुरुष समास से समासान्त टच् प्रत्यय होता है, यदि वह तत्पुरुष तद्धितलुक्-विषयक न हो)।

गो: — VI. i. 118

सर्वत्र = छन्द तथा भाषा विषय में गो शब्द के (पदान्त में एङ् को विकल्प से अकार परे रहते प्रकृतिभाव होता है)।

गो: — VII. i. 57

(वेद-विषय में ऋचा के पाद के अन्त में वर्तमान) गो शब्द से उत्तर (आम् को नुट् का आगम होता है)।

...गोघ्नौ — III. iv. 73

देखें — दाशगोघ्नौ III. iv. 73

गोचर... — III. iii. 119

देखें — गोचरसञ्चर० III. iii. 119

गोचरसञ्चरवहव्रजव्यजापणनिगमा: — III. iii. 119

गोचर, सञ्चर, वह, व्रज, आपण तथा निगम शब्द (भी घप्रत्ययान्त पुँल्लिङ्ग करण या अधिकरण कारक में निपातन किये जाते हैं)।

... गोण... — IV. i. 42

देखें — जानपदकुण्ड० IV. i. 42

...गोणीभ्याम् — V. iii. 90

देखें — कासूगोणीभ्याम् V. iii. 90

गोण्या: — I. ii. 50

गोणी शब्द को इकारादेश होता है, (तद्धितलुक् होने पर)।

गोणी = बोरी, आवपन।

गोत: — VII. i. 90

गो शब्द से उत्तर (सर्वनामस्थानविभक्ति णित्वत् होती है)।

गोतन्तियवम् — VI. ii. 78

पूर्वपद गो, तन्ति, यव इन शब्दों को (पाल शब्द उत्तरपद रहते आद्युदात्त होता है)।

तन्ति = राज्य की गायों का बड़ा झुण्ड।

...गोतम... — II. iv. 65

देखें — अत्रिभृगुकुत्स० II. iv. 65

गोत्र... — IV. ii. 38

देखें — गोत्रोक्षोष्ट्रो० IV. ii. 38

गोत्र... — IV. iii. 99

देखें — गोत्रक्षत्रियाख्येभ्यः IV. iii. 99

गोत्र... — IV. iii. 125

देखें — गोत्रचरणात् IV. iii. 125

गोत्र... — V. i. 133

देखें — गोत्रचरणात् V. i. 133

गोत्र... — VI. ii. 69

देखें — गोत्रान्तेवासी VI. ii. 69

...गोत्र... — VI. iii. 42

देखें — घरूपकल्प० VI. iii. 42

...गोत्र... — VI. iii. 84

देखें — ज्योतिर्जनपद० VI. iii. 84

गोत्रक्षत्रियाख्येभ्यः — IV. iii. 99

(प्रथमासमर्थ भक्तिसमानाधिकरणवाची) गोत्र आख्या-वाले तथा क्षत्रिय आख्या वाले प्रातिपदिकों से (बहुल करके वुञ् प्रत्यय होता है)।

गोत्रचरणाद् — IV. iii. 125

(षष्ठीसमर्थ) गोत्रवाची तथा चरणवाची प्रातिपदिकों से ('इदम्' अर्थ में वुञ् प्रत्यय होता है)।

गोत्रचरणात् — V. i. 133

(षष्ठीसमर्थ) गोत्रवाची तथा चरणवाची प्रातिपदिकों से ('श्लाघा' = प्रशंसा करना, 'अत्याकार' = अपमान करना तथा 'तदवेत' = उससे युक्त होना– इन विषयों में भाव तथा कर्म अर्थों में वुञ् प्रत्यय होता है)।

गोत्रम् — IV. i. 162

(पौत्र से लेकर जो सन्तान उसकी) गोत्रसंज्ञा होती है।

गोत्रस्त्रियाः — IV. i. 147

गोत्र में वर्तमान जो स्त्री, तद्वाची प्रातिपदिक से (कुत्सन गम्यमान होने पर अपत्य अर्थ में ण प्रत्यय होता है, और ठक् भी)।

गोत्रात् — IV. i. 94

(युवापत्य की विवक्षा होने पर) गोत्र से ही प्रत्यय हो; (अनन्तरापत्य अथवा प्रथम प्रकृति से नहीं, स्त्री अपत्य को छोड़कर)।

गोत्रात् — IV. iii. 80

(पञ्चमीसमर्थ) गोत्रवाची प्रातिपदिकों से ('आगत' अर्थ में अङ्कवत् प्रत्ययविधि होती है)।

...गोत्रादि... — VIII. i. 57

देखें — चनचिदिव० VIII. i. 57

गोत्रादीनि — VIII. i. 27

(तिङन्त पद से उत्तर निन्दा तथा पौनःपुन्य अर्थ में वर्त-मान) गोत्रादिगणपठित पदों को (अनुदात्त होता है)।

गोत्रान्तेवासिमाणवब्राह्मणेषु — VI. ii. 69

(निन्दावाची समास में) गोत्रवाची, अन्तेवासिवाची तथा माणव तथा ब्राह्मण शब्दों के उत्तरपद रहते (पूर्वपद को आद्युदात्त होता है)।

गोत्रावयवात् — IV. i. 79

गोत्ररूप से लोक में स्वीकृत कुलसंज्ञा रूप से प्रख्यात जो प्रातिपदिक, उनसे (गोत्र में विहित जो अनार्ष अण् और इञ् प्रत्यय उनको स्त्रीलिङ्ग में ष्यङ् आदेश होता है)।

गोत्रे — II. iv. 63

(यस्कादिगणपठित शब्दों से उत्तर) गोत्र में विहित (स्त्रीभिन्न प्रत्यय का लुक् होता है, बहुत्व की विवक्षा में; यदि वह बहुत्व गोत्र–प्रत्यय-द्वारा निष्पादित हो तो)।

गोत्रे — IV. i. 78

गोत्र में विहित (ऋष्यपत्य से भिन्न अण् और इञ् प्रत्यय अन्त वाले उपोत्तम गुरुवाले प्रातिपदिकों को स्त्रीलिङ्ग में ष्यङ् आदेश होता है)।

गोत्रे — IV. i. 89

(प्राग्दीव्यतीय अजादि प्रत्यय की विवक्षा हो तो) गोत्र में उत्पन्न प्रत्यय का (लुक् नहीं होता)।

गोत्रे — IV. i. 93

गोत्र में (एक ही प्रत्यय होता है)।

गोत्रे — IV. i. 98

गोत्रापत्य में (कुञ्जादि षष्ठी समर्थ प्रातिपदिकों से च्फञ् प्रत्यय होता है)।

गोत्रे — IV. ii. 110

(कण्वादि प्रातिपदिकों से) गोत्र में विहित जो प्रत्यय, (तदन्त प्रातिपदिक से शैषिक अण् प्रत्यय होता है)।

गोत्रे — VIII. iii. 91

('कपिष्ठल' में मूर्धन्य निपातन है), गोत्र विषय को कहने में।

गोत्रोक्षोष्ट्रोरभ्रराजराजन्यराजपुत्रवत्समनुष्याजात् — IV. ii. 38

(षष्ठीसमर्थ) गोत्रवाची शब्दों से तथा उक्षन्, उष्ट्र, उरभ्र, राजन्, राजन्य, राजपुत्र, वत्स, मनुष्य तथा अज शब्दों से (समूह अर्थ में वुञ् प्रत्यय होता है)।

उक्षन् = बैल।

उरभ्र = मेष, भेड़।

गोद्व्यचः — V. i. 38

(सङ्ख्यावाची, परिमाणवाची तथा अश्वादि प्रातिपदिकों को छोड़कर षष्ठीसमर्थ) गो तथा दो अच् वाले प्रातिपदिकों से ('कारण' अर्थ में यत् प्रत्यय होता है, यदि वह कारण संयोग वा उत्पात हो तो)।

गोधायाः — IV. i. 129

गोधा शब्द से (अपत्य अर्थ में ढ्रक् प्रत्यय होता है)।

गोधा = गोह।

गोपयसोः — IV. iii. 157

(षष्ठीसमर्थ) गो तथा पयस् शब्दों से (विकार तथा अवयव अर्थों में यत् प्रत्यय होता है)।

गोपवनादिभ्यः — II. iv. 67

गोपवन आदि शब्दों से उत्तर (गोत्र में विहित प्रत्ययों का तत्कृत बहुवचन में लुक् नहीं होता)।

गोपुच्छात् — IV. iv. 6

(तृतीयासमर्थ) गोपुच्छ प्रातिपदिक से ('तरति' अर्थ में ठञ् प्रत्यय होता है)।

...गोपूर्वात् — V. ii. 118

देखें — एकगोपूर्वात् V. ii. 118

गोबिडालसिंहसैन्धवेषु — VI. ii. 72

गो, बिडाल, सिंह, सैन्धव — इन (उपमानवाची) शब्दों के उत्तरपद रहते (पूर्वपद को आद्युदात्त होता है)।

... गोमिन्... — V. ii. 114

देखें — ज्योत्स्नातमिस्रा० V. ii. 114

गोयवाग्वोः — IV. ii. 135

गो तथा यवागू अभिधेय हो तो (भी देशवाची साल्व शब्द से शैषिक वुञ् प्रत्यय होता है)।

...गोशाल... — IV. iii. 35

देखें — स्थानान्तगोशाल० IV. iii. 35

गोश्वन्साववर्णराडङ्क्रुङ्कृद्भ्यः — VI. i. 176

गो, श्वन्, सु प्रथमा के एकवचन के परे रहते जो अवर्णान्त शब्द, राट्, अङ्, क्रुङ् तथा कृत् से (जो कुछ भी स्वरविधान कह आये हैं, वह नहीं होते)।

गोषदादिभ्यः — V. ii. 62

गोषदादि प्रातिपदिकों से (मत्वर्थ में 'अध्याय' और 'अनुवाक' अभिधेय हो तो वुन् प्रत्यय होता है)।

गोष्ठात् — V. ii. 18

('भूतपूर्व' अर्थ में वर्तमान) गोष्ठ प्रातिपदिक से (खञ् प्रत्यय होता है)।

...गोष्ठश्वाः — V. iv. 77

देखें — अचतुर० V. iv. 77

गोष्पदम् — VI. i. 140

गोष्पद शब्द में सुट् आगम तथा उसको षत्व का निपातन किया जाता है; (सेवित, असेवित तथा प्रमाण विषय में)।

गोष्पद = गायों के चरने की जगह

गोस्त्रियोः — I. ii. 49

(उपसर्जन) गो शब्दान्त प्रातिपदिक तथा (उपसर्जन) स्त्रीप्रत्ययान्त प्रातिपदिक को (ह्रस्व हो जाता है)।

गोहः — VI. iv. 89

गोह अङ्ग की (उपधा को ऊकारादेश होता है, अजादि प्रत्यय परे रहते)।

गौः — VI. ii. 41

(साद, सादि तथा सारथि शब्दों के उत्तरपद रहते पूर्वपद) गो शब्द को (प्रकृतिस्वर हो जाता है)।

...गौडपूर्वे — VI. ii. 100

देखें — अरिष्टगौडपूर्वे VI. ii. 100

...गौरादिभ्यः — IV. i. 40

देखें — षिद्गौरादिभ्यः IV. i. 40

ग्मिनिः — V. ii. 124

(वाच् प्रातिपदिक से 'मत्वर्थ' में) ग्मिनि प्रत्यय होता है।

ग्रः — I. iii. 51

(आ उपसर्ग से उत्तर) 'गृ निगरणे' धातु से (आत्मनेपद होता है)।

ग्रः — III. iii. 29

(उद्, नि उपपद रहते हुए) गृ धातु से (कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

ग्रः — VIII. ii. 19

गॄ धातु के (रेफ को यङ् परे रहते लत्व होता है)।

ग्रन्थान्त... — VI. iii. 78

देखें — ग्रन्थान्ताधिके VI. iii. 78

ग्रन्थान्ताधिके — VI. iii. 78

ग्रन्थ के अन्त एवं अधिक अर्थ में वर्तमान (सह शब्द को भी उत्तरपद परे रहते स आदेश होता है)।

ग्रन्थे — IV. iii. 87

(द्वितीयासमर्थ प्रातिपदिक से उसको विषय बनाकर बनाया गया अर्थ में यथाविहित प्रत्यय होता है), लक्ष्य करके बनाया गया यदि ग्रन्थ हो तो।

ग्रन्थे — IV. iii. 116

(तृतीयासमर्थ प्रातिपदिक से) ग्रन्थ (बनाने) अर्थ में (यथाविहित प्रत्यय होता है)।

ग्रसित... — VII. ii. 34

देखें — ग्रसितस्कभित० VII. ii. 34

ग्रसितस्कभितस्तभितोत्तभितचत्तविकस्ताः —VII. ii. 34

ग्रसित, स्कभित, स्तभित, उत्तभित, चत्त, विकस्त — ये शब्द (भी वेदविषय में निपातित हैं)।

ग्रह... — III. iii. 58

देखें — ग्रहवृद्० III. iii. 58

...ग्रह... — VI. iv. 62

देखें — अज्झन० VI. iv. 62

ग्रह... — VII. ii. 12

देखें — ग्रहगुहोः VII. ii. 12

ग्रहः — III. i. 143

ग्रह् धातु से (विकल्प से 'ण' प्रत्यय होता है)।

ग्रहः — III. iii. 35

(उत् पूर्वक) ग्रह् धातु से (कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

ग्रहः — III. iii. 45

(आक्रोश गम्यमान हो तो अव तथा नि पूर्वक) ग्रह् धातु से (कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

ग्रहः — III. iii. 51

(वर्षप्रतिबन्ध अभिधेय होने पर अव पूर्वक) ग्रह् धातु से (कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में विकल्प से घञ् प्रत्यय होता है)।

...ग्रहः — III. iv. 36

देखें — हन्कृञ्ग्रहः III. iv. 36

ग्रहः — VII. ii. 37

ग्रह् धातु से (लिट्भिन्न वलादि आर्धधातुक परे रहते इट् को दीर्घ होता है)।

ग्रहगुहोः — VII. ii. 12

ग्रह्, गुह् अङ्गों को (तथा उगन्त अङ्गों को सन् प्रत्यय परे रहते इट् आगम नहीं होता)।

ग्रहणम्— V. ii. 77

ग्रहण क्रिया के समानाधिकरणवाची (पूरणप्रत्ययान्त प्रातिपदिक से स्वार्थ में कन् प्रत्यय होता है, तथा पूरण प्रत्यय का विकल्प से लुक् भी हो जाता है)।

ग्रहवृद्निश्चिगमः — III. iii. 58

ग्रह, वृ, दृ तथा निर् पूर्वक चि तथा गम् धातुओं से भी (कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में अच् प्रत्यय होता है)।

...ग्रहि... — I. ii. 8

देखें— रुदविदमुषग्रहिस्वपिप्रच्छः I. ii. 8

...ग्रहि... — III. i. 134

देखें — नन्दिग्रहि० III. i. 134

ग्रहि... — VI. i. 16

देखें — ग्रहिज्या० VI. i. 16

ग्रहिज्यावयिव्यधिवष्टिविचतिवृश्चतिपृच्छतिभृज्जतीनाम् — VI. i. 16

ग्रह, ज्या, वय, व्यध्, वश्, व्यच्, ओव्रश्च्, प्रच्छ्, भ्रस्ज्– इन धातुओं को (सम्प्रसारण हो जाता है, ङित् तथा कित् प्रत्यय के परे रहते)।

ग्रहेः — III. i. 118

प्रति और अपि उपसर्ग पूर्वक ग्रह धातु से (क्यप् प्रत्यय होता है)।

...ग्रहोः — III. iv. 39

देखें — वर्तिग्रहोः III. iv. 39

...ग्रहोः — III. iv. 58

देखें— आदिशिग्रहोः III. iv. 58

ग्राम... — IV. ii. 43

देखें — ग्रामजनबन्धु० IV. ii. 43

...ग्राम... — IV. ii. 141

देखें — कन्थापलद० IV. ii. 141

ग्राम... — IV. iii. 7

देखें— ग्रामजनपदैकदेशात् IV. iii. 7

ग्राम... — V. iv. 95

देखें — ग्रामकौटाभ्याम् V. iv. 95

ग्राम... — VI. ii. 103

देखें — ग्रामजनपदा० VI. ii. 103

ग्राम — VII. iii. 14

देखें — ग्रामनगराणाम् VII. iii. 14

ग्रामः — VI. ii. 62

(शिल्पीवाची शब्द उत्तरपद रहते) ग्राम पूर्वपद को (विकल्प से प्रकृतिस्वर होता है)।

ग्रामकौटाभ्याम् — V. iv. 95

ग्राम तथा कौट शब्दों से उत्तर (तक्षन् शब्दान्त तत्पुरुष से भी समासान्त टच् प्रत्यय होता है)।

कौट = कुटी अथवा पर्वत में होने वाला।

ग्रामजनपदाख्यानचानराटेषु — VI. ii. 103

ग्राम, जनपद तथा आख्यानवाची शब्दों के उपपद रहते तथा चानराट शब्द के उपपद रहते (दिशावाची पूर्वपद शब्दों को अन्तोदात्त होता है)।

ग्रामजनपदैकदेशात् — IV. iii. 7

ग्राम के अवयव-वाची तथा जनपद के अवयववाची (दिशापूर्वपद वाले अर्धान्त) प्रातिपदिक से (शैषिक अञ् तथा ठञ् प्रत्यय होते हैं)।

ग्रामजनबन्धुभ्यः — IV. ii. 42

(षष्ठीसमर्थ) ग्राम, जन, बन्धु प्रातिपदिकों से (समूह अर्थ में तल् प्रत्यय होता है)।

ग्रामणीः — V. ii. 78

(प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में कन् प्रत्यय होता है); यदि वह प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक ग्राम का मुखिया हो तो।

...ग्रामण्योः — VII. i. 56

देखें — श्रीग्रामण्योः VII. i. 56

ग्रामनगराणाम् — VII. iii. 14

(दिशावाची शब्दों से उत्तर प्राच्य देश में वर्तमान) ग्राम तथा नगरवाची शब्दों के (अच् में आदि अच् को तद्धित ञित्, णित् तथा कित् प्रत्यय परे रहते वृद्धि होती है)।

ग्रामात् — IV. ii. 93

ग्राम शब्द से (य और खञ् प्रत्यय होते हैं)।

ग्रामात् — IV. iii. 61

(परि, अनुपूर्वक अव्ययीभावसंज्ञक) ग्रामशब्दान्त (सप्तमीसमर्थ) प्रातिपदिक से (भव अर्थ में ठञ् प्रत्यय होता है)।

ग्रामे — VI. ii. 84

ग्राम शब्द उत्तरपद रहते (पूर्वपद को आद्युदात्त होता है, यदि पूर्वपद निवास करने वाले को न कहता हो तो)।

ग्राम्यपशुसङ्घेषु — I. ii. 73

(तरुणों से रहित) ग्रामीण पशुओं के समूह में (स्त्री पशु शेष रह जाता है, पुमान् हट जाते हैं)।

...ग्रावस्तुवः — III. ii. 177

देखें — भ्राजभास० **III. ii. 177**

...ग्रीवा... — VI. ii. 114

देखें — **कण्ठपृष्ठ० VI. ii. 114**

...ग्रीवाभ्यः — IV. ii. 95

देखें — **कुलकुक्षि० IV. ii. 95**

ग्रीवाभ्यः — IV. iii. 57

(सप्तमीसमर्थ) ग्रीवा प्रातिपदिक से (भव अर्थ में अण् और ठञ् प्रत्यय होता है)।

ग्रीष्म... — IV. iii. 46

देखें — **ग्रीष्मवसन्तात् IV. iii. 46**

ग्रीष्म... — IV. iii. 49

देखें — **ग्रीष्मावरसमात् IV. iii. 49**

ग्रीष्मवसन्तात् — IV. iii. 46

(सप्तमीसमर्थ) ग्रीष्म तथा वसन्त (कालवाची) प्रातिपदिकों से (बोया हुआ अर्थ में विकल्प से वुञ् प्रत्यय होता है)।

ग्रीष्मावरसमात् — IV. iii. 49

(सप्तमीसमर्थ कालवाची) ग्रीष्म और अवरसम प्रातिपदिकों से ('देयमृणे' अर्थ में वुञ् प्रत्यय होता है)।

...मुचु... — III. i. 58

देखें — **जॄस्तम्भु० III. i. 58**

ग्लहः — III. iii. 70

ग्लह शब्द (में अथवा विषय हो तो ग्रह् धातु से अप् प्रत्यय तथा लत्व निपातन से होता है, कर्तृभिन्न कारक तथा भाव में)।

ग्ला... — III. ii. 139

देखें — **ग्लाजिस्थः III. ii. 139**

...ग्ला... — III. iv. 65

देखें — **शकधृषज्ञाग्ला० III. iv. 65**

ग्लाजिस्थः — III. ii. 139

ग्ला, जि, स्था (तथा चकार से भू) धातु से (भी वर्तमान काल में क्स्नु प्रत्यय होता है, तच्छीलादि कर्त्ता हो तो)।

...ग्लुचु... — III. i. 58

देखें — **जॄस्तम्भु० III. i. 58**

घ

घ — प्रत्याहारसूत्र — IX

भगवान् पाणिनि द्वारा अपने नवम प्रत्याहार सूत्र में पठित प्रथम वर्ण।

पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का बाईसवां वर्ण।

घ — III. iii. 125

(खन् धातु से पुँल्लिङ्ग करणाधिकरण कारक संज्ञा में) घ प्रत्यय होता है, (तथा चकार से घञ् भी होता है)।

घ... — IV. ii. 28

देखें — **घाणौ IV. ii. 28**

घ...— IV. ii. 92

देखें — **घखौ IV. ii. 92**

घ... — V. i. 70

देखें — **घखञौ V. i. 70**

घ... — VI. iii. 16

देखें — **घकालतनेषु VI. iii. 16**

घ... — VI. iii. 42

देखें — **घरूप० VI. iii. 42**

घ... — VI. iii. 132

देखें — **तुनुघमक्षु० VI. iii. 132**

घ... — VIII. ii. 22

देखें — **घाङ्कयोः VIII. ii. 22**

घः — I. i. 21

(तरप् और तमप् की) घ संज्ञा होती है।

घः — III. ii. 70

(सुबन्त उपपद रहते 'दुह' धातु से कप् प्रत्यय होता है, तथा अन्त्य हकार को) घकारादेश होता है।

घः — III. iii. 84

(परिपूर्वक हन् धातु से करणकारक में अप् प्रत्यय होता है, तथा हन् के स्थान में) घ आदेश (भी होता है)।

घः — III. iii. 118

(धातु से करण और अधिकरण कारक में पुँल्लिङ्ग में प्रायः करके) घ प्रत्यय होता है, (यदि समुदाय से संज्ञा प्रतीत होती है)।

घः — IV. i. 138

(क्षत्र शब्द से अपत्य अर्थ में) घ प्रत्यय होता है।

घः — IV. ii. 26

(अपोनपात्, अपांनपात् देवतावाची शब्दों से षष्ठ्यर्थ में) घ प्रत्यय होता है, (और घ प्रत्यय के सन्नियोग से इन शब्दों को अपोनप्तृ और अपांनप्तृ आदेश भी होता है)।

घः — IV. iv. 118

(सप्तमीसमर्थ समुद्र और अभ्र प्रातिपदिकों से वेदविषयक भवार्थ में) घ प्रत्यय होता है)।

घः — IV. iv. 135

(तृतीयासमर्थ सहस्र प्रातिपदिक से तुल्य अभिधेय हो तो) घ प्रत्यय होता है।

घः — IV. iv. 141

(नक्षत्र प्रातिपदिक से वेद-विषय में) घ प्रत्यय होता है।

घः — V. ii. 40

(प्रथमासमर्थ परिमाण समानाधिकरणवाची किम् तथा इदम् प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में वतुप् प्रत्यय होता है, तथा उस वतु के वकार के स्थान में) घकार आदेश होता है।

घः — VIII. ii. 32

(दकार आदि वाले धातु के हकार के स्थान में) घकार आदेश होता है, (झल् परे रहते या पदान्त में)।

घकालतनेषु — VI. iii. 16

(काल के नामवाची शब्दों से उत्तर सप्तमी का) घसञ्ज्ञक प्रत्यय, काल शब्द तथा तन प्रत्यय के उत्तरपद रहते (विकल्प करके अलुक् होता है)।

घखञौ — V. i. 70

(द्वितीयासमर्थ यज्ञ तथा ऋत्विग् प्रातिपदिकों से 'समर्थ है' अर्थ में) यथासङ्ख्य करके घ तथा खञ् प्रत्यय होते हैं।

घखौ — IV. ii. 92

(राष्ट्र तथा अवारपार शब्दों से शैषिक जातादि अर्थों में यथासङ्ख्य) घ और ख प्रत्यय होते हैं।

घच्... — IV. iv. 117

देखें — घच्छौ IV. iv. 117

घच्छौ — IV. iv. 117

(सप्तमीसमर्थ अग्र प्रातिपदिक से वेदविषयक भवार्थ में) घच् और छ प्रत्यय (भी) होते हैं।

घञ्... — II. iv. 38

देखें — घञपोः II. iv. 38

घञ् — III. iii. 16

(पद, रुज्, विश और स्पृश् धातुओं से) घञ् प्रत्यय होता है)।

घञ् — III. iii. 120

(अवपूर्वक तॄ, स्तॄञ् धातुओं से करण, अधिकरण कारक तथा संज्ञाविषय में प्रायः करके) घञ् प्रत्यय होता है।

...घञ्... — VI. ii. 144

देखें — थाथघञ्० VI. ii. 144

घञः — IV. ii. 57

(प्रथमासमर्थ क्रियावाची) घञन्त प्रातिपदिक से (सप्तम्यर्थ में ञ प्रत्यय होता है)।

घञः — VI. i. 153

('कृष् विलेखने' धातु तथा अकारवान्) घञन्त शब्द के (अन्त को उदात्त होता है)।

घञपोः — II. iv. 38

घञ् और अप् (आर्धधातुक) परे रहते (भी अद् को घस्लृ आदेश होता है)।

घञि — VI. i. 46

(स्फुर तथा स्फुल धातुओं के एच् के स्थान में) घञ् प्रत्यय के परे रहते (आकारादेश हो जाता है)।

घत्रि — VI. iii. 121

घञन्त उत्तरपद रहते (अमनुष्य अभिधेय होने पर उपसर्ग के अण् को बहुल करके दीर्घ होता है)।

घत्रि — VI. iv. 27

(भाववाची तथा करणवाची) घञ् के परे रहते (भी रञ्ज् धातु की उपधा के नकार का लोप होता है)।

... घञोः — VII. i. 67

देखें — खल्घञोः VII. i. 67

...घट... — III. iv. 65

देखें — शकधृषज्ञाग्ला० III. iv. 65

घटः — V. ii. 35

(सप्तमीसमर्थ कर्मन् प्रातिपदिक से) 'चेष्टा करने वाला' अर्थ में (अठच् प्रत्यय होता है)।

घन् — IV. ii. 25

(प्रथमासमर्थ शुक्र शब्द से षष्ठ्यर्थ में) घन् प्रत्यय होता है, ('सास्य देवता' अर्थ में)।

घन् — IV. iv. 115

(सप्तमीसमर्थ तुग्र शब्द से वेद-विषयक भवार्थ में) घन् प्रत्यय होता है।

घन् — V. i. 67

(द्वितीयासमर्थ पात्र प्रातिपदिक से 'समर्थ है' अर्थ में) घन् (और यत्) प्रत्यय (होते हैं)।

घन्... — V. iii. 79

देखें — घनिलचौ V. iii. 79

घनः — III. iii. 77

काठिन्य अभिधेय हो तो हन् धातु से अप् प्रत्यय होता है, तथा हन को घन आदेश भी हो जाता है।

घनिलचौ — V. iii. 79

(बहुत अच् वाले मनुष्यनामधेय प्रातिपदिकों से 'अनुकम्पा से सम्बद्ध नीति' गम्यमान हो तो) घन् और इलच् प्रत्यय होते हैं, (तथा विकल्प से ठच् प्रत्यय होता है)।

घरूपकल्पचेलड्ब्रुवगोत्रमतहतेषु — VI. iii. 42

(भाषितपुंस्क शब्द से उत्तर ङ्यन्त अनेकाच् शब्द को ह्रस्व हो जाता है); घ, रूप, कल्प, चेलट्, ब्रुव, गोत्र, मत तथा हत शब्दों के परे रहते।

घस् — V. i. 105

(वेदविषय में समर्थ ऋतु प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में) घस् प्रत्यय होता है, (यदि वह प्रथमासमर्थ ऋतु प्रातिपदिक प्राप्त समानाधिकरण वाला हो तो)।

घस... — II. iv. 80

देखें — घसह्वरणश० II. iv. 80

घसह्वरणशवृदहाद्वृच्कृगमिजनिभ्यः — II. iv. 80

(मन्त्र विषय में) घस, ह्व, णश, वृ, दह, आकारान्त, वृज्, कृ, गमि, जनि — इन धातुओं से (विहित च्लि का लुक् हो जाता है)।

... घसाम् — VI. iv. 98

देखें — गमहनजनखन० VI. iv. 98

...घसाम् — VII. ii. 69

देखें — एकाजादघसाम् VII. ii. 69

...घसि... — III. ii. 160

देखें — सृघस्यदः III. ii. 160

घसि... — VI. iv. 100

देखें — घसिभसोः VI. iv. 100

घसिभसोः — VI. iv. 100

घस् तथा भस् अङ्ग की (उपधा का वेदविषय में लोप होता है; हलादि तथा अजादि कित्, ङित् प्रत्यय परे रहते)।

...घसीनाम् — VIII. iii. 60

देखें — शासिवसि० VIII. iii. 60

घस्लृ — II. iv. 37

(अद् को) घस्लृ आदेश होता है, लुङ् और सन् आर्धधातुक परे रहते)।

घस्य — VIII. ii. 17

(नकारान्त शब्द से उत्तर) घसञ्ज्ञक को (वेद-विषय में नुट् आगम होता है)।

घाङ्कयोः — VIII. ii. 22

(परि के रेफ को भी) घ तथा अङ्क शब्द परे रहते (विकल्प से लत्व होता है)।

घाणौ — IV. ii. 28

(प्रथमासमर्थ देवतावाची महेन्द्र प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में) घ, अण् (तथा छ प्रत्यय भी) होते हैं।

...घाम् — VII. i. 2

देखें — **फढखछघाम् VII. i. 2**

घि — I. iv. 7

(नदी संज्ञा से अवशिष्ट ह्रस्व इकारान्त,उकारान्त शब्दों की) घि सञ्ज्ञा होती है,(सखि शब्द को छोड़कर)।

घि — II. ii. 32

घिसंज्ञक का (पूर्व प्रयोग होवे, द्वन्द्व समास में)।

घित... — VII. iii. 52

देखें — **घिण्ण्यतोः VII. iii. 52**

घिण्ण्यतोः — VII. iii. 52

(चकार तथा जकार के स्थान में कवर्ग आदेश होता है) घित् तथा ण्यत् प्रत्यय परे रहते।

घिनुण् — III. ii. 141

(शमादि आठ धातुओं से तच्छीलादि कर्त्ता हो तो वर्तमान काल में) घिनुण् प्रत्यय होता है।

घु — I. i. 18

(दाप् लवने और दैप् शोधने को छोड़कर दा रूप वाली चार और धा रूप वाली दो धातुओं की) घु संज्ञा (होती है)।

...घु... — II. iv. 77

देखें — **गातिस्थाघुपा० II. iv. 77**

घु... — VI. iv. 66

देखें — **घुमास्था० VI. iv. 66**

घु... — VI. iv. 119

देखें — **घ्वसोः VI. iv. 119**

...घु... — VII. iv. 54

देखें — **मीमाघु० VII. iv. 54**

...घु... — VIII. iv. 17

देखें — **गदनद० VIII. iv. 17**

घुमास्थागापाजहातिसाम् — VI. iv. 66

घुसंज्ञक, मा, स्था, गा, पा, ओहाक् त्यागे तथा षो अन्तकर्मणि — इन अङ्गों को (हलादि कित्, ङित् आर्धधातुक के परे रहते ईकारादेश होता है)।

घुरच् — III. ii. 161

(भञ्ज, भास, मिद् — इन धातुओं से तच्छीलादि कर्त्ता हो तो वर्तमानकाल में) घुरच् प्रत्यय होता है।

घुषिः — VII. ii. 23

(निष्ठा परे रहते) घुषिर् धातु (अविशब्दन अर्थ में अनिट् होती है)।

विशब्दन = शब्दों द्वारा भावों का प्रकाशन।

घे — VI. iv. 96

(जो दो उपसर्गों से युक्त नहीं हैं, ऐसे छादि अङ्ग की उपधा को) घ प्रत्यय परे रहने पर (ह्रस्व होता है)।

घेः — VII. iii. 111

घिसंज्ञक अङ्ग को (ङित् सुप् प्रत्यय परे रहते गुण होता है)।

घेः — VII. iii. 118

(इकारान्त,उकारान्त अङ्ग से उत्तर ङि को औकारादेश होता है, तथा) घिसंज्ञक को (अकारादेश भी होता है)।

घोः — III. iii. 92

(उपसर्ग उपपद रहने पर) घुसंज्ञक धातुओं से कि प्रत्यय होता है)।

घोः — VII. iii. 70

घुसंज्ञक अङ्ग का (लेट् परे रहते विकल्प से लोप होता है)।

घोः — VII. iv. 46

घुसंज्ञक (दा धातु) के स्थान में (दद् आदेश होता है; तकारादि कित् प्रत्यय परे रहते)।

घोष... — VI. iii. 55

देखें — **घोषमिश्रशब्देषु VI. iii. 55**

घोषमिश्रशब्देषु — VI. iii. 55

घोष, मिश्र तथा शब्द के उत्तरपद रहते (पाद शब्द को विकल्प करके पद् आदेश होता है)।

घोषादिषु — VI. ii. 85

घोषादि शब्दों के उत्तरपद रहते (भी पूर्वपद को आद्युदात्त होता है)।

घ्रा... — II. iv. 78

देखें — घ्राधेट्शाच्छासः II. iv. 78

...घ्रा... — III. i. 135

देखें — पाघ्राध्मा० III. i. 135

...घ्रा... — VII. iii. 78

देखें — पाघ्राध्मा० VII. iii. 78

घ्रा... — VII. iv. 31

देखें — घ्राध्मोः VII. iv. 31

...घ्रा... — VIII. ii. 56

देखें — नुदविदोन्द० VIII. ii. 56

...घ्राधेट्शाच्छासः — II. iv. 78

घ्रा, धेट्, शा, छा, सा−इन धातुओं से उत्तर (परस्मैपद परे रहते विकल्प करके सिच् का लुक् हो जाता है)।

घ्राध्मोः — VII. iv. 31

घ्रा तथा ध्मा अङ्ग को (यङ् परे रहते ईकारादेश होता है)।

घ्वसोः — VI. iv. 119

घुसंज्ञक अङ्ग एवं अस् को (एकारादेश तथा अभ्यास का लोप होता है; हि, क्ङित् परे रहते)।

...घ्वोः — I. ii. 17

देखें — स्थाघ्वोः I. ii. 17

ङ

ङ् — प्रत्याहारसूत्र III

आचार्य पाणिनि द्वारा अपने तृतीय प्रत्याहारसूत्र में इत्संज्ञार्थ पठित वर्ण।

ङ्... — VIII. iii. 28

देखें — ङ्णोः VIII. iii. 28

ङ — प्रत्याहारसूत्र VII

भगवान् पाणिनि द्वारा अपने सप्तम प्रत्याहारसूत्र में पठित तृतीय वर्ण।

पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का सत्रहवां वर्ण।

ङमः — VIII. iii. 32

(ह्रस्व पद से उत्तर वर्तमान) ङमन्त पद से उत्तर (अच् को नित्य ही ङमुट् आगम होता है)।

ङमुट् — VIII. iii. 32

(ह्रस्व पद से उत्तर जो ङम्, तदन्त पद से उत्तर अच् को नित्य ही) ङमुट् आगम होता है।

ङयि — VI. i. 206

ङे विभक्ति परे रहते (भी युष्मद्, अस्मद् को आद्युदात्त होता है)।

ङयि — VII. ii. 95

(युष्मद्, अस्मद् अङ्ग के मपर्यन्त भाग को क्रमशः तुभ्य, मह्य आदेश होते हैं); विभक्ति के परे रहते।

...ङस्... — IV. i. 2

देखें — स्वौजसमौट् IV. i. 2

ङसः — VII. i. 27

(युष्मत् तथा अस्मत् शब्द से उत्तर) ङस् के स्थान में (अश् आदेश होता है)।

...ङसाम् — VII. i. 12

देखें — टाङसिङसाम् VII. i. 12

...ङसि... — IV. i. 2

देखें — स्वौजसमौट्० IV. i. 2

ङसि... — VI. i. 106

देखें — ङसिङसोः VI. i. 106

ङसि — VI. i. 205

(युष्मद् तथा अस्मद् शब्दों के आदि को) ङस् परे रहते (उदात्त होता है)।

...ङसि... — VII. i. 12

देखें — टाङसिङसाम् VII. i. 12

ङसि... — VII. i. 15

देखें — ङसिङ्योः VII. i. 15

ङसि — VII. ii. 96

(युष्मद्, अस्मद् अङ्ग के मपर्यन्त भाग को क्रमशः तव तथा मम आदेश होते हैं), ङस् विभक्ति के परे रहते।

ङसिङसोः — VI. i. 106

(एङ् से उत्तर) ङसि तथा ङस् का (अकार हो तो भी पूर्व पर के स्थान में पूर्वरूप एकादेश होता है, संहिता के विषय में)।

ङसिङसोः — VII. i. 15

(अकारान्त सर्वनाम अङ्ग से उत्तर) ङसि तथा ङस् के स्थान में (क्रमशः स्मात् तथा स्मिन् आदेश होते हैं)।

...ङसोः — VI. i. 106

देखें — **ङसिङसोः VI. i. 106**

...ङिः... — IV. i. 2

देखें — **स्वौजसमौट्० IV. i. 2**

ङिः... — VI. iv. 136

देखें — **ङिश्योः VI. iv. 136**

ङि — VII. iii. 110

देखें — **ङिसर्वनामस्थानयोः VII. iii. 110**

ङिः... — VIII. ii. 8

देखें — **ङिसम्बुद्ध्योः VIII. ii. 8**

ङित् — I. i. 52

(षष्ठीनिर्दिष्ट का) ङकार इत्संज्ञक आदेश (भी अन्त्य अल् के स्थान में होता है)।

ङित् — I. ii. 1

(गाङ् एवं कुटादिगणपठित धातुओं से परे ञित्, णित् भिन्न प्रत्यय) ङित्वत्=ङित् के समान माने जाते हैं।

ङित्— III. iv. 103

(परस्मैपदविषयक लिङ्लकार को यासुट् का आगम होता है, और वह उदात्त तथा) ङिद्वत् भी होता है।

...ङित् — VI. i. 180

देखें — **तास्यनुदात्ते० VI. i. 180**

...ङितः — I. iii. 12

देखें — **अनुदात्तङितः I. iii. 12**

ङितः — III. iv. 99

ङित्-लकारसम्बन्धी उत्तम पुरुष के सकार का नित्य लोप हो जाता है)।

ङितः— VII. ii. 81

अकारान्त अङ्ग से उत्तर ङित् सार्वधातुक के अवयव आकार के स्थान में इय् आदेश होता है।

...ङिति — I. i. 5

देखें — **क्ङिति I. i. 5**

ङिति — I. iv. 6

(स्त्रीलिङ्ग के वाचक ह्रस्व इकारान्त, उकारान्त शब्द तथा इयङ्-उवङ्-स्थानी ईकारान्त, ऊकारान्त स्त्र्याख्य शब्द भी) ङित् प्रत्यय के परे रहते (विकल्प से नदीसंज्ञक होते हैं)।

ङिति— VI. i. 16

(ग्रह्, ज्या, वय्, व्यध्, वश्, व्यच्, ओव्रश्च्, प्रच्छ, भ्रस्ज्– इन धातुओं को सम्प्रसारण हो जाता है); ङित् (तथा कित्) प्रत्यय के परे रहते।

...ङिति — VI. iv. 15

देखें — **क्ङिति VI. iv. 15**

...ङिति — VI. iv. 24

देखें — **क्ङिति VI. iv. 24**

...ङिति — VI. iv. 63

देखें — **क्ङिति VI. iv. 63**

...ङिति — VI. iv. 98

देखें — **क्ङिति VI. iv. 98**

ङिति — VII. iii. 111

(घिसंज्ञक अङ्ग को) ङित् सुप् प्रत्यय परे रहते (गुण होता है)।

...ङिति — VII. iv. 22

देखें — **क्ङिति VII. iv. 22**

...ङित्सु — VII. iii. 85

देखें — **अविचिण्० VII. iii. 85**

ङिश्योः — VI. iv. 136

ङि तथा शी विभक्ति के परे रहते (अन् के अकार का लोप विकल्प से होता है)।

ङिसम्बुद्ध्योः— VIII. ii. 8

(प्रातिपदिक पद के अन्त का जो नकार, उसका) ङि तथा सम्बुद्धि परे रहते (लोप नहीं होता)।

ङिसर्वनामस्थानयोः — VII. iii. 110

(ऋकारान्त अङ्ग को) ङि तथा सार्वधातुक विभक्ति परे रहते (गुण होता है)।

ङि... — IV. i. 1

देखें — ङ्याप्प्रातिपदिकात् IV. i. 1

...ङी... — VI. i. 66

देखें — हल्ङ्याब्भ्यः VI. i. 66

ङी... — VI. iii. 22

देखें — ङ्यापः VI. iii. 22

ङीन्— IV. i. 73

(अनुपसर्जन जातिवाची शार्ङ्गरवादि तथा अञन्त प्रातिपदिकों से स्त्रीलिङ्ग में) ङीन् प्रत्यय होता है।

ङीप्— IV. i. 5

(ऋकारान्त तथा नकारान्त प्रातिपदिकों से स्त्रीलिङ्ग में) ङीप् प्रत्यय होता है।

ङीप्— IV. i. 26

(संख्या आदि वाले तथा अव्यय आदि वाले ऊधस्-शब्दान्त बहुव्रीहि समास वाले प्रातिपदिक से) ङीप् प्रत्यय होता है।

ङीप्— IV. i. 60

(दिशा पूर्वपद है जिसमें, ऐसे प्रातिपदिक से स्त्रीलिङ्ग में) ङीप् प्रत्यय होता है।

ङीष्— IV. i. 25

(बहुव्रीहि समास में वर्तमान ऊधस्-शब्दान्त प्रातिपदिक से स्त्रीलिङ्ग में) ङीष् प्रत्यय होता है।

ङीष्— IV. i. 40

(तोपध वर्णवाची प्रातिपदिकों से अन्य जो वर्णवाची अदन्त अनुदात्तान्त प्रातिपदिक, उनसे स्त्रीलिङ्ग में) ङीष् प्रत्यय होता है।

...ङे... — IV. i. 2

देखें — स्वौजसमौट्० IV. i. 2

ङे — VII. i. 28

(युष्मद् तथा अस्मद् अङ्ग से उत्तर) ङे विभक्ति के स्थान में अम् आदेश होता है)।

ङेः — VII. i. 13

(अकारान्त अङ्ग से उत्तर) 'ङे' के स्थान में (य आदेश हो जाता है)।

ङेः — VII. iii. 116

(नदीसंज्ञक, आबन्त तथा नी से उत्तर) ङि विभक्ति के स्थान में (आम् आदेश होता है)।

ङौ— VI. iii. 109

(संख्या, वि तथा साय पूर्व वाले अह्न शब्द को विकल्प करके अहन् आदेश होता है), ङि परे रहते।

ङ्णोः — VIII. iii. 28

(पदान्त) ङकार तथा णकार को (यथासंख्य करके विकल्प से कुक् तथा टुक् आगम होते हैं, शर् प्रत्याहार परे रहते)।

ङ्यः — VI. iii. 42

(भाषितपुंस्क शब्द से उत्तर) ङ्यन्त (अनेकाच्) शब्द का (ह्रस्व हो जाता है; घ, रूप, कल्प, चेलट्, ब्रुव, गोत्र, मत तथा हत शब्दों के परे रहते)।

ङ्याः — VI. i. 172

(वेदविषय में) ङ्यन्त शब्द से उत्तर (बहुल करके नाम् विभक्ति को उदात्त होता है)।

ङ्यापः — VI. iii. 62

ङ्यन्त तथा आबन्त शब्दों को (संज्ञा तथा छन्द-विषय में उत्तरपद परे रहते बहुल करके ह्रस्व होता है)।

ङ्याप्प्रातिपदिकात् — IV. i. 1

(यहाँ से आगे कहे हुए सु आदि प्रत्यय) ङ्यन्त, आबन्त तथा प्रातिपदिक से ही हुआ करेंगे।

...ङ्योः — VII. i. 15

देखें — ङसिङ्योः VII. i. 15

ङ्वनिप् — III. ii. 103

(षुञ् तथा यज् धातु से भूतकाल में) ङ्वनिप् प्रत्यय होता है।

च

च् — प्रत्याहारसूत्र IV

आचार्य पाणिनि द्वारा अपने चतुर्थ प्रत्याहारसूत्र में इत्सञ्ज्ञार्थ पठित वर्ण।

च — प्रत्याहारसूत्र XI

आचार्य पाणिनि द्वारा अपने ग्यारहवें प्रत्याहारसूत्र में पठित छठा वर्ण।

— पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का पैतीसवाँ वर्ण।

च — I. i. 5

(कित्, गित्, ङित् को निमित्त मानकर) भी (इक् के स्थान में जो गुण और वृद्धि प्राप्त होते हैं, वे न हों)।

च — I. i. 18

(सप्तमी के अर्थ में वर्तमान ईकारान्त, ऊकारान्त शब्दों की) भी (प्रगृह्य संज्ञा होती है)।

च — I. i. 24

(डति प्रत्ययान्त संख्यावाची शब्द की) भी (षट्संज्ञा होती है)।

च — I. i. 30

(द्वन्द्वसमास में) भी (सर्वादियों की सर्वनाम संज्ञा नहीं होती)।

च — I. i. 32

(प्रथम, चरम, तयप् प्रत्ययान्त शब्द, अल्प, अर्ध, कतिपय तथा नेम शब्दों की) भी (जस्-सम्बन्धी कार्य में विकल्प से सर्वनाम संज्ञा होती है)।

च — I. i. 37

(जिससे सारी विभक्ति उत्पन्न न हो, ऐसे तद्धित-प्रत्ययान्त शब्द की) भी (अव्ययसंज्ञा होती है)।

च — I. i. 40

अव्ययीभाव समास की) भी (अव्ययसंज्ञा होती है)।

च — I. i. 52

(ङिदादेश) भी (अन्त्य अल् के स्थान में होता है)।

च — I. i. 63

(त्यदादिगणपठित शब्द) भी (वृद्धसंज्ञक होते हैं)।

च — I. i. 68

(अण् और उदित् अपने स्वरूप का) भी (ग्रहण कराते है, प्रत्यय को छोड़कर)।

च — I. ii. 6

(इन्धि तथा भू धातु से परे) भी (लिट् प्रत्यय कित्वत् होता है)।

च — I. ii. 8

(रुद, विद, मुष, ग्रह, स्वप तथा प्रच्छ इन धातुओं से परे सन्) और (क्त्वा प्रत्यय कित्वत् होते हैं)।

च — I. ii. 10

(इक् के समाप जो हल्, उससे परे) भी (झलादि सन् कित्वत् होता है)।

च — I. ii. 12

(ऋवर्णान्त धातु से परे) भी (झलादि लिङ् तथा सिप् कित्वत् होते हैं, आत्मनेपदविषय में)।

च — I. ii. 16

(स्था तथा घुसञ्ज्ञक धातुओं से परे सिच् कित्वत् होता है और इकारादेश) भी (हो जाता है)।

च — I. ii. 22

(पूङ् धातु से परे सेट् निष्ठा तथा सेट् क्त्वा प्रत्यय) भी (कित् नहीं होता है)।

च — I. ii. 24

(वञ्चु, लुञ्च, ऋत् इन धातुओं से परे) भी (सेट् क्त्वा विकल्पकरके कित् नहीं होता है)।

च — I. ii. 26

(इकार तथा उकार उपधा वाली रलन्त हलादि धातुओं से परे सेट् सन्) और (सेट् क्त्वा प्रत्यय विकल्प से कित् नहीं होते हैं)।

च — I. ii. 28

(ह्रस्व हो जाये, दीर्घ हो जाये प्लुत हो जाये, ऐसा नाम लेकर जब कहा जाये तो) वह पूर्वोक्त ह्रस्व दीर्घ प्लुत (अच् के स्थान में ही हो)।

च – I. ii. 44

(समास विधीयमान होने पर नियत विभक्ति वाला पद) भी (उपसर्जनसंज्ञक होता है, पूर्वनिपात उपसर्जन कार्य को छोड़कर)।

च – I. ii. 46

(कृत्प्रत्ययान्त, तद्धितप्रत्ययान्त और समास) भी (प्रातिपदिक संज्ञक होते हैं)।

च – I. ii. 52

(प्रत्यय के लुप् होने पर उस लुबर्थ के जो विशेषण, उनमें) भी (लिङ्ग और संख्या प्रकृत्यर्थ के समान हो जाते हैं, जाति के प्रयोग से पूर्व ही)।

च – I. ii. 55

(सम्बन्ध को वाचक मानकर यदि संज्ञा हो तो) भी (उस सम्बन्ध के जाने पर इस संज्ञा का अदर्शन होता है, पर वह होता नहीं है)।

च – I. ii. 56

(काल तथा उपसर्जन = गौण) भी (अशिष्य होते हैं, तुल्य हेतु होने से अर्थात् पूर्वसूत्रोक्त लोकाधीनत्व हेतु होने से)।

च – I. ii. 59

(अस्मदर्थ के एकत्त्व और द्वित्व अर्थ में भी (बहुवचन विकल्प करके होता है)।

च – I. ii. 60

(फल्गुनी और प्रोष्ठपद नक्षत्रविषयक द्वित्व अर्थ में) भी (बहुत्व अर्थ विकल्प करके होता है)।

च – I. ii. 62

(वेद-विषय में विशाखा नक्षत्र के द्वित्व अर्थ में) भी (विकल्प करके एकत्व होता है)।

च – I. ii. 66

(गोत्रप्रत्ययान्त जो स्त्रीलिङ्ग शब्द, वह युवप्रत्ययान्त शब्द के साथ शेष रह जाता है और उस स्त्रीलिङ्ग गोत्रप्रत्ययान्त शब्द को पुंवत् कार्य) भी (हो जाता है, यदि उन दोनों शब्दों में वृद्धयुवप्रत्ययनिमित्तक ही वैरूप्य हो और सब समान हों)।

च – I. ii. 69

(नपुंसकलिङ्ग शब्द उससे भिन्न शब्द अर्थात् स्त्रीलिलिङ्ग पुंल्लिङ्ग शब्दों के साथ शेष रह जाता है, तथा स्त्रीलिङ्ग पुंल्लिङ्ग शब्द हट जाते हैं, एवं उस नपुंसकलिङ्ग शब्द को एकवत् कार्य) भी (विकल्प करके हो जाता है, यदि उन शब्दों में नपुंसकगुण एवं अनपुंसक गुण का ही वैशिष्ट्य हो, शेष प्रकृति आदि समान ही हो)।

च – I. iii. 16

(इतरेतर तथा अन्योन्य शब्द उपपदवाची धातु से) भी (काम की अदलाबदली अर्थ में आत्मनेपद नहीं होता)।

च – I. iii. 21

(अनु, सम्, परि) और (आङ्पूर्वक क्रीड् धातु से आत्मनेपद होता है)।

च – I. iii. 23

(अपने भाव के कथन तथा विवाद के निर्णायक को कहने अर्थ में) भी (स्था धातु से आत्मनेपद होता है)।

च – I. iii. 26

(उपपूर्वक अकर्मक स्था धातु से) भी (आत्मनेपद होता है)।

च – I. iii. 35

(विपूर्वक अकर्मक कृञ् धातु से उत्तर) भी (आत्मनेपद होता है)।

च – I. iii. 37

(कर्ता में स्थित शरीरभिन्न कर्म के होने पर) भी (णीञ् धातु से आत्मनेपद होता है)।

च – I. iii. 45

(अकर्मक ज्ञा धातु से) भी (आत्मनेपद होता है)।

च – I. iii. 55

(तृतीया विभक्ति से युक्त सम् पूर्वक् दाण् धातु से) भी (आत्मनेपद होता है, यदि वह तृतीया चतुर्थी के अर्थ में हो तो)।

च – I. iii. 60

(सम्मानन, शालीनीकरण) तथा (प्रलम्भन अर्थ में ण्यन्त ली धातु से आत्मनेपद होता है)।

च – I. iii. 61

(लुङ्, लिङ् लकार में) तथा (शित् विषय में जो 'मृङ् प्राणत्यागे' धातु ,उससे आत्मनेपद होता है)।

च – I. iii. 74

(णिजन्त धातु से) भी (क्रिया का फल कर्ता को मिलता हो तो आत्मनेपद होता है)।

च – I. iii. 84

(उपपूर्वक रम् धातु से) भी (परस्मैपद होता है)।

च – I. iii. 87

(निगरणार्थक तथा चलनार्थक ण्यन्त धातुओं से) भी (परस्मैपद होता है)।

च – I. iii. 93

(लुट् लकार) एवं (स्य और सन् प्रत्ययों के होने पर भी कृपू धातु से विकल्प करके परस्मैपद होता है)।

च – I. iv. 6

(ह्रस्व इकारान्त, उकारान्त स्त्र्याख्य शब्द तथा इयङ्-उवङ् स्थानी ईकारान्त,ऊकारान्त स्त्र्याख्य शब्द) भी (ङित् प्रत्यय के परे रहते विकल्प से नदीसञ्ज्ञक होते हैं)।

च – I. iv. 12

(दीर्घ अक्षर की) भी (गुरुसंज्ञा होती है)।

च – I. iv. 16

(सित् प्रत्यय के परे रहते भी (पूर्व की पदसंज्ञा होती है)।

च – I. iv. 41

(अनु एवं प्रतिपूर्वक गृ धातु के प्रयोग में पूर्व का जो कर्ता, ऐसे कारक की) भी (सम्प्रदान संज्ञा होती है)।

च – I. iv. 43

(दिव् धातु का जो साधकतम कारक, उसकी कर्म) और (करण संज्ञा होती है)।

च – I. iv. 47

(अभि, नि पूर्वक विश् का जो आधार, उस कारक की) भी (कर्म संज्ञा होती है)।

च – I. iv. 50

(जिस प्रकार कर्त्ता का अत्यन्त ईप्सित कारक क्रिया के साथ युक्त होता है, इस प्रकार) ही (कर्ता का न चाहा हुआ कारक क्रिया के साथ युक्त हो तो उसकी कर्म संज्ञा होती है)।

च – I. iv. 51

(अपादानादि कारकों से अनुक्त कारक की) भी (कर्म संज्ञा होती है)।

च – I. iv. 55

(उस स्वतन्त्र के प्रयोजक कारक की हेतुसंज्ञा) और (कर्तृसंज्ञा होती है)।

च – I. iv. 59

(प्रादियों की क्रिया के योग में गतिसंज्ञा) और (उपसर्ग संज्ञा भी होती है)।

च – I. iv. 60

(ऊर्यादि शब्द तथा च्व्यन्त और डाजन्त शब्द) भी (क्रियायोग में गति और निपातसंज्ञक भी होते हैं)।

च – I. iv. 61

(इति शब्द जिससे परे नहीं है, ऐसा जो अनुकरणवाची शब्द, उसकी) भी (क्रियायोग में गति और निपात संज्ञा होती है)।

च – I. iv. 67

(अस्तं शब्द जो अव्यय, उसकी) भी (क्रिया के योग में गति और निपातसंज्ञा होती है)।

च – I. iv. 73

(साक्षात् इत्यादि शब्दों की) भी (कृञ् धातु के योग में विकल्प से गति और निपात संज्ञक होते हैं)।

च – I. iv. 75

(मध्ये, पदे तथा निवचने शब्द) भी (कृञ् के योग में विकल्प से गति और निपात संज्ञा होती है)।

च – I. iv. 81

(वे गति और उपसर्गसंज्ञक शब्द वेद-विषय में व्यवधान से) भी (होते हैं)।

च — I. iv. 86

(उप शब्द अधिक) तथा (हीन अर्थ द्योतित होने पर कर्मप्रवचनीय और निपातसंज्ञक होता है)।

च — I. iv. 94

(अति शब्द की उल्लङ्घन) और (पूजा अर्थ में कर्मप्रवचनीय तथा निपात संज्ञा होती है)।

च — I. iv. 103

(सुपों और तिङों के तीन-तीन की विभक्ति संज्ञा) भी (हो जाती है)।

च — I. iv. 105

(परिहास गम्यमान हो रहा हो तो भी मन्य है उपपद जिसका,ऐसी धातु से युष्मद् उपपद रहते,समान अभिधेय होने पर युष्मद् शब्द का प्रयोग हो या न हो तो भी मध्यम पुरुष हो जाता है,तथा उस मन् धातु से उत्तम पुरुष हो जाता है और उस उत्तम पुरुष को एकत्व) भी (हो जाता है)।

च — I. iv. 105

(परिहास गम्यमान हो रहा हो तो) भी (मन्य है उपपद जिसका,ऐसी धातु से युष्मद् उपपद रहते समान अभिधेय होने पर युष्मद् शब्द का प्रयोग हो या न हो तो भी मध्यम पुरुष हो जाता है तथा उस मन् धातु से उत्तम पुरुष हो जाता है और उस उत्तम पुरुष को एकत्व भी हो जाता है)।

च — II. i. 15

(अनु जिसका आयामवाची = दीर्घतावाची है,ऐसे लक्षणवाची समर्थ सुबन्त के साथ) भी (अनु का विकल्प से समास होता है और वह अव्ययीभाव समास होता है)।

च — II. i. 16

(तिष्ठद्गु इत्यादि समुदायरूप शब्दों की) भी (अव्ययीभावसंज्ञा निपातन से होती है)।

च — II. i. 19

(सङ्ख्यावाची सुबन्तों का नदीवाची समर्थ सुबन्तों के साथ) भी (विकल्प से अव्ययीभाव समास होता है)।

च — II. i. 20

(अन्यपदार्थ गम्यमान होने पर) भी (संज्ञाविषय में सुबन्त का नदीवाची समर्थ सुबन्त के साथ अव्ययीभाव समास होता है)।

च — II. i. 22

(द्विगु समास) भी (तत्पुरुष संज्ञक होता है)।

च — II. i. 28

(अत्यन्तसंयोग गम्यमान होने पर) भी (कालवाची द्वितीयान्त शब्दों का समर्थ सुबन्तों के साथ विकल्प से समास होता है, और वह तत्पुरुष समास होता है)।

च — II. i. 40

(सिद्ध, शुष्क, पक्व, बन्ध—इन समर्थ सुबन्तों के साथ) भी (सप्तम्यन्त सुबन्त का विकल्प से समास होता है और वह तत्पुरुष समास होता है)।

च — II. i. 47

(पात्रेसम्मित आदि शब्द) भी (निन्दा गम्यमान होने पर समुदायरूप तत्पुरुष समासान्त निपातन किये जाते हैं)।

च — II. i. 50

(तद्धितार्थ का विषय उपस्थित रहने पर,उत्तरपद परे रहते तथा समाहार वाच्य होने पर) भी (दिशावाची तथा सङ्ख्यावाची सुबन्तों का समर्थ समानाधिकरणवाची सुबन्तों के साथ विकल्प से समास होता है और वह तत्पुरुष होता है)।

च — II. i. 57

(पूर्व, अपर, प्रथम, चरम, जघन्य, समान, मध्य, मध्यम, वीर—इनका विशेषणवाची सुबन्तों के साथ विकल्प से तत्पुरुष समास होता है)।

च — II. i. 65

(जातिवाची सुबन्त प्रशंसावाची समानाधिकरण समर्थ सुबन्तों के साथ) भी (विकल्प से समास को प्राप्त होता है, और वह तत्पुरुष समास होता है)।

च — II. i. 71

(मयूरव्यंसकादिगणपठित समुदाय रूप शब्द) भी (समानाधिकरण तत्पुरुषसंज्ञक निपातित हैं)।

च — II. ii. 4

(प्राप्त, आपन्न सुबन्त) भी (द्वितीयान्त सुबन्त के साथ विकल्प से समास को प्राप्त होते हैं और वह तत्पुरुष समास होता है)।

च — II. ii. 9

(याजकादि सुबन्तों के साथ) भी (षष्ठ्यन्त सुबन्त का समास होता है और वह तत्पुरुष समास होता है)।

च – II. ii. 12

(पूजा अर्थ में विहित जो क्त प्रत्यय, तदन्त शब्द के साथ) भी (षष्ठ्यन्त सुबन्त समास को प्राप्त नहीं होता)।

च – II. ii. 13

(अधिकरणवाची क्तप्रत्ययान्त सुबन्त के साथ) भी (षष्ठ्यन्त सुबन्त समास को प्राप्त नहीं होता)।

च – II. ii. 14

(कर्म में जो षष्ठी विहित है, वह) भी (समर्थ सुबन्त के साथ समास को प्राप्त नहीं होती)।

च – II. ii. 16

(कर्ता में जो षष्ठी, वह) भी (अक प्रत्ययान्त सुबन्त के साथ समास को प्राप्त नहीं होती)।

च – II. ii. 22

(तृतीयाप्रभृति जो उपपद, वे क्त्वा-प्रत्ययान्त शब्दों के साथ) भी (विकल्प से समास को प्राप्त होते हैं, और वह तत्पुरुष समास होता है)।

च – II. iii. 3

(वेद-विषय में हु धातु के अनभिहित कर्म में तृतीया) और (द्वितीया विभक्ति होती है)।

च – II. iii. 9

(जिससे अधिक हो) और (जिसका सामर्थ्य हो, उसमें कर्मप्रवचनीय के योग में सप्तमी विभक्ति होती है)।

च – II. iii. 11

(जिससे प्रतिनिधित्व और जिससे प्रतिदान हो, उससे) भी (कर्म-प्रवचनीय के योग में पञ्चमी विभक्ति होती है)।

च – II. iii. 14

(क्रिया के लिये क्रिया उपपद हो जिसकी, ऐसी अप्रयुज्यमान धातु के अनभिहित कर्म कारक में) भी (चतुर्थी विभक्ति होती है)।

च – II. iii. 15

(तुमन् के समानार्थक भाववचन-प्रत्ययान्त से) भी (चतुर्थी विभक्ति होती है)।

च – II. iii. 16

(नमः, स्वस्ति, स्वाहा, स्वधा, अलम्, वषट् — इन शब्दों के योग में) भी (चतुर्थी विभक्ति होती है)।

च – II. iii. 27

(हेतु शब्द के प्रयोग में तथा हेतु के विशेषणवाची सर्वनामसंज्ञक शब्द के प्रयोग में हेतु द्योतित होने पर तृतीया) और (षष्ठी विभक्ति होती है)।

च – II. iii. 33

(स्तोक, अल्प, कृच्छ्र कतिपय—इन असत्ववाची शब्दों से करण कारक में तृतीया) और पञ्चमी विभक्ति होती है)।

च – II. iii. 35

(दूरार्थक तथा अन्तिकार्थक शब्दों से द्वितीया विभक्ति होती है) और चकार से (षष्ठी व पञ्चमी भी)।

च – II. iii. 36

(अनभिहित अधिकरण कारक में) तथा (दूरान्तिकार्थक शब्दों से (भी) सप्तमी विभक्ति होती है)।

च – II. iii. 37

(जिसकी क्रिया से क्रियान्तर लक्षित होवे, उसमें) भी (सप्तमी विभक्ति होती है)।

च – II. iii. 38

(जिसकी क्रिया से क्रियान्तर लक्षित हो, उसमें अनादर गम्यमान होने पर षष्ठी) तथा (सप्तमी विभक्ति होती है)।

च – II. iii. 39

(स्वामी, ईश्वर, अधिपति, दायाद, साक्षी, प्रतिभू, प्रसूत — इन शब्दों के योग में) भी (षष्ठी और सप्तमी विभक्ति होती है)।

च – II. iii. 40

(आयुक्त और कुशल शब्दों के योग में) भी (आसेवा गम्यमान हो तो षष्ठी और सप्तमी विभक्ति होती है)।

आसेवा = तत्परता।

च – II. iii. 41

(जिससे निर्धारण हो उसमें) भी (षष्ठी और सप्तमी विभक्ति होती है)।

च – II. iii. 44

(प्रसित और उत्सुक शब्दों के योग में तृतीया) और (सप्तमी विभक्ति होती है)।

प्रसित = संलग्न, फंसा।

च – II. iii. 45

(लुबन्त नक्षत्रवाची शब्द में भी तृतीया) और (सप्तमी विभक्ति होती है)।

च – II. iii. 47

(सम्बोधन में) भी (प्रथमा विभक्ति होती है)।

च – II. iii. 63

(यज् धातु के करण कारक में) भी (वेद-विषय में बहुल करके षष्ठी विभक्ति होती है)।

च – II. iii. 67

(वर्तमान काल में विहित क्त प्रत्यय के प्रयोग में) भी (षष्ठी विभक्ति होती है)।

च – II. iii. 68

(अधिकरण में विहित क्त-प्रत्ययान्त के योग में) भी (षष्ठी विभक्ति होती है)।

च – II. iii. 73

(आशीर्वचन गम्यमान हो तो आयुष्य, मद्र, भद्र, कुशल, सुख, अर्थ, हित — इन शब्दों के योग में शेष विवक्षित होने पर विकल्प से चतुर्थी विभक्ति होती है)। चकार से पक्ष में षष्ठी भी होती है।

च – II. iv. 2

(प्राणी-अङ्गवाची, तूर्य=वाद्य अङ्गवाची तथा सेनाङ्गवाची शब्दों के द्वन्द्व को) भी (एकवद्भाव हो जाता है)।

च – II. iv. 9

(जिन जीवों का सनातन विरोध है, तद्वाची शब्दों का द्वन्द्व) भी (एकवत् होता है)।

च – II. iv. 11

(गवाश्व इत्यादि शब्द यथापठित=कृतैकवद्भाव द्वन्द्वरूप) ही (साधु होते हैं)।

च – II. iv. 13

(परस्पर विरुद्धार्थक अद्रव्यवाची शब्दों का द्वन्द्व) भी (विकल्प से एकवद् होता है)।

च – II. iv. 15

(अधिकरण का परिमाण कहने में जो द्वन्द्व, वह) भी (एकवत् नहीं होता है)।

च – II. iv. 18

(अव्ययीभाव समास) भी (नपुंसकलिङ्ग होता है)।

च – II. iv. 24

(शाला अर्थ से भिन्न जो सभा, तदन्त नञ्कर्मधारयभिन्न तत्पुरुष) भी (नपुंसकलिङ्ग में होता है)।

च – II. iv. 28

(हेमन्त और शिशिर शब्द) तथा (अहन् और रात्रि शब्दों का द्वन्द्व समास में छन्द-विषय में पूर्ववत् लिङ्ग होता है)।

च – II. iv. 31

(अर्धर्चादि शब्द पुंल्लिङ्ग) और नपुंसकलिङ्ग में होते हैं)।

च – II. iv. 33

(अन्वादेश में वर्तमान एतद् के स्थान में अनुदात्त अश् आदेश होता है) और (वे त्र, तस् प्रत्यय भी अनुदात्त होते हैं)।

च – II. iv. 38

(घञ् और अप् आर्धधातुक के परे रहते) भी (अद् धातु को घस्लृ आदेश होता है)।

च – II. iv. 43

(आर्धधातुक लुङ् परे रहते) भी (हन् को वध आदेश हो जाता है)।

च – II. iv. 47

(आर्धधातुक सन् प्रत्यय के परे रहते) भी (अबोधनार्थक इण् धातु को गमि आदेश हो जाता है)।

च – II. iv. 48

(इङ् धातु को) भी (गम् आदेश होता है, आर्धधातुक सन् परे रहते)।

च – II. iv. 51

(सन्परक, चङ्परक णिच् के परे रहते) भी (इङ् को विकल्प से गाङ् आदेश होता है)।

च – II. iv. 59

(गोत्रवाची पैलादि शब्दों से) भी (युवापत्य में विहित प्रत्यय का लुक् होता है)।

च – II. iv. 64

(गोत्र में विहित यञ् और अञ् प्रत्ययों का) भी (तत्कृत बहुत्व में लुक् होता है, स्त्रीलिङ्ग को छोड़कर)।

च – II. iv. 65

(अत्रि, भृगु, कुत्स, वसिष्ठ, गोतम, अङ्गिरस् — इन शब्दों से तत्कृतबहुत्व गोत्रापत्य में विहित जो प्रत्यय, उसका) भी (लुक् हो जाता है)।

च – II. iv. 74

(अच् प्रत्यय के परे रहते यङ् का लुक् हो जाता है;) चकार से बहुल करके अच् परे न हो तो भी लुक् हो जाता है।

च – III. i. 2

(जिसकी प्रत्ययसंज्ञा नहीं है) वह, जिस (धातु का प्रातिपदिक) से (विधान किया जाये, उससे परे होता है, यह अधिकार भी पञ्चमाध्याय की समाप्तिपर्यन्त जानना चाहिये)।

च – III. i. 3

(जिसकी प्रत्ययसंज्ञा कही है, वह आद्युदात्त) भी (होता है)।

च – III. i. 6

(मान्, वध, दान् और शान् धातुओं से सन् प्रत्यय होता है) तथा (अभ्यास के विकार को अर्थात् सन्यतः VII. iv. 79 से इत्त्व करने के पश्चात् दीर्घ आदेश हो जाता है)।

च – III. i. 9

(आत्मसम्बन्धी सुबन्त कर्म से इच्छा अर्थ में विकल्प से काम्यच् प्रत्यय) भी (होता है)।

च – III. i. 11

उपमानवाची (सुबन्त कर्त्ता से आचार अर्थ में क्यङ् प्रत्यय विकल्प से होता है, तथा सकारान्त शब्दों के सकार का लोप) भी (विकल्प से होता है)।

च – III. i. 12

(अच्प्रत्ययान्त भृशादि शब्दों से भू धातु के अर्थ में क्यङ् प्रत्यय होता है, और उन भृशादि में विद्यमान हलन्त शब्दों के हल् का लोप) भी (होता है)।

भृश = अधिक।

च – III. i. 26

(हेतुमान् के अभिधेय होने पर) भी (धातु से णिच् प्रत्यय होता है)।

च – III. i. 36

(इजादि तथ गुरुमान् धातु से आम् प्रत्यय होता है, लौकिक विषय में लिट् परे रहते, ऋच्छ् धातु को छोड़-कर)।

च – III. i. 37

(दय, अय तथा आस् धातुओं से) भी (अमन्त्रविषयक लिट् लकार परे रहते आम् प्रत्यय हो जाता है)।

च – III. i. 39

(भी, ह्री, भृ एवं हु धातुओं से अमन्त्रविषयक लिट् परे रहते विकल्प से आम् प्रत्यय होता है) और (इनको श्लुवत् कार्य भी हो जाता है)।

च – III. i. 40

(आम्प्रत्यय के पश्चात् कृञ् प्रत्याहार का) भी (अनुप्रयोग होता है, लिट् परे रहने पर)।

च – III. i. 53

(लिप, सिच तथा ह्वेञ् धातुओं से) भी (कर्तृवाची लुङ् परे रहने पर च्लि के स्थान में अङ् आदेश होता है)।

च – III. i. 56

(सृ, शासु तथा ऋ धातुओं से उत्तर) भी (च्लि के स्थान में अङ् आदेश होता है, कर्तृवाची लुङ् परस्मैपद परे रहते)।

च – III. i. 58

(जृष्, स्तम्भु, म्रुचु, म्लुचु, ग्रुचु, ग्लुचु, ग्लुञ्चु तथा श्वि धातुओं से उत्तर च्लि के स्थान में) भी (विकल्प से अङ् होता है, कर्तृवाची लुङ् परे रहने पर)।

च – III. i. 63

(दुह् धातु से उत्तर) भी (च्लि के स्थान में चिण् आदेश विकल्प से होता है, कर्मकर्त्ता में त के परे रहते)।

च – III. i. 65

(तप् धातु से उत्तर च्लि के स्थान में चिण् आदेश नहीं होता, कर्मकर्त्ता में) तथा (पश्चात्ताप अर्थ में त के परे रहने पर)।

च – III. i. 72

(सम् पूर्वक यस् धातु से) भी (कर्तृवाची सार्वधातुक परे रहते विकल्प से श्यन् प्रत्यय होता है)।

च — III. i. 74

(श्रु धातु से श्नु प्रत्यय होता है, कर्तृवाची सार्वधातुक परे रहने पर,साथ ही श्रु धातु को श्रृ आदेश) भी होता है।

च — III. i. 80

(धिवि, कृवि धातुओं से उ प्रत्यय) तथा (उनको अकार अन्तादेश (भी) हो जाता है, कर्तृवाची सार्वधातुक परे रहने पर)।

च — III. i. 82

(स्तम्भु, स्तुम्भु, स्कम्भु, स्कुम्भु तथा स्कुञ् धातुओं से श्नु) तथा (श्ना प्रत्यय होते हैं, कर्तृवाची सार्वधातुक परे रहने पर)।

च — III. i. 90

(कुष और रञ्ज् धातु को कर्मवद्भाव में श्यन् प्रत्यय) और (परस्मैपद होता है, प्राचीन आचार्यों के मत में)।

च — III. i. 99

(शक्लृ शक्तौ और षह मर्षणे धातुओं से) भी (यत् प्रत्यय होता है)।

च — III. i. 100

(गद, मद, चर, यम् — इन उपसर्गरहित धातुओं से) भी (यत् प्रत्यय होता है)।

च — III. i. 106

(उपसर्गरहित वद् धातु से सुबन्त उपपद रहते हुए क्यप् प्रत्यय होता है, तथा) चकार से (यत् भी होता है)।

च — III. i. 108

(अनुपसर्ग हन् धातु से सुबन्त उपपद रहते भाव में क्यप् होता है, तथा तकार अन्तादेश) भी (होता है)।

च — III. i. 110

(ऋकार उपधावाली धातुओं से) भी (क्यप् प्रत्यय होता है, क्लृपि और चृति धातुओं को छोड़कर)।

च — III. i. 111

(खन् धातु से क्यप् प्रत्यय होता है तथा अन्त्य अल् को ईकारादेश) भी (होता है)।

च — III. i. 119

(पद, अस्वैरी, बाह्या, पक्ष्य — अर्थों में) भी (ग्रह् धातु से क्यप् प्रत्यय होता है)।

च — III. i. 121

(वाहन अभिधेय हो तो युज् धातु से भी क्यप् प्रत्यय) तथा (जकार को कुत्व युग्य शब्द में निपातन किया जाता है)।

च — III. i. 126

(आङ्पूर्वक षु, यु, वप्, रप्, लप्, त्रप् और चम् — इन धातुओं से) भी (ण्यत् प्रत्यय होता है)।

च — III. i. 132

(अग्नि अभिधेय हो तो चित्य तथा अग्निचित्या शब्द) भी (निपातन किये जाते हैं)।

च — III. i. 136

(आकारान्त धातुओं से) भी (उपसर्ग उपपद रहते क प्रत्यय होता है)।

च — III. i. 138

(उपसर्गरहित लिम्प, विद, धारि, पारि, वेदि, उदेजि, चेति, साति, और साहि धातुओं से) भी (श प्रत्यय होता है)।

च — III. i. 141

(श्यैङ् आ, आकारान्त, व्यध, आङ् और सम्पूर्वक स्नु, अतिपूर्वक इण्, अवपूर्वक सा, अवपूर्वक हृ, लिह, श्लिष, श्वस् — धातुओं से) भी (ण प्रत्यय होता है)।

च — III. i. 147

(शिल्पी कर्त्ता वाच्य हो तो गा धातु से युट् प्रत्यय) भी (होता है)।

च — III. i. 148

(व्रीहि और काल अभिधेय हो, तो हा धातु से) ण्युट् प्रत्यय होता है)।

च — III. i. 150

(आशीर्वाद अर्थ गम्यमान होने पर) भी (धातुमात्र से वुन् प्रत्यय होता है)।

च — III. ii. 2

(ह्वेञ्, वेञ् माङ् — इन धातुओं से) भी (कर्म उपपद रहते अण् प्रत्यय होता है)।

च – III. ii. 10

(आयु गम्यमान हो तो) भी (कर्म उपपद रहते हृञ् धातु से अच् प्रत्यय होता है)।

च – III. ii. 17

(भिक्षा, सेना, आदाय शब्द उपपद रहते) भी (चर् धातु से ट प्रत्यय होता है)।

च – III. ii. 26

(फलेग्रहि) और (आत्मम्भरि शब्द इन् प्रत्ययान्त निपातन किये जाते है)।

च – III. ii. 30

(नाडी और मुष्टि कर्म उपपद रहते) भी (ध्मा तथा धेट् धातुओं से खश् प्रत्यय होता है)।

च – III. ii. 34

(मित और नख कर्म उपपद हो तो) भी (पच् धातु से खश् प्रत्यय होता है)।

च – III. ii. 37

(उग्रम्पश्य, इरम्मद तथा पाणिन्धम ये शब्द) भी (खश् प्रत्ययान्त निपात न किये जाते हैं)।

च – III. ii. 44

(क्षेम, प्रिय, मद्र — इन कर्मों के उपपद रहते कृञ् धातु से अण् प्रत्यय होता है) तथा चकार से खच् प्रत्यय भी होता है।

च – III. ii. 48

(संज्ञा गम्यमान होने पर कर्म उपपद रहते गम् धातु से) भी (खच् प्रत्यय होता है)।

च – III. ii. 53

(मनुष्यभिन्न कर्त्ता अर्थ में वर्तमान हन् धातु से) भी (कर्म उपपद रहने पर टक् प्रत्यय होता है)।

च – III. ii. 59

(ऋत्विक्, दधृक्, स्रक्, दिक्, उष्णिक्—ये पाँच शब्द क्विन् प्रत्ययान्त निपातन किये जाते हैं। अञ्चु, युज् तथा क्रुञ्च् धातुओं से) भी (क्विन् प्रत्यय होता है)।

च – III. ii. 60

(त्यदादि शब्द उपपद रहते आलोचन = देखना से भिन्न अर्थ में वर्तमान दृश् धातु से कञ् और (क्विन् प्रत्यय होते है)।

च – III. ii. 64

(वह् धातु से) भी (वेदविषय में सुबन्त उपपद रहते ण्वि प्रत्यय होता है)।

च – III. ii. 69

(क्रव्य सुबन्त उपपद रहते) भी (अद् धातु से विट् प्रत्यय होता है)।

च – III. ii. 70

(दुह् धातु से सुबन्त उपपद रहते कप् प्रत्यय होता है) तथा (अन्त्य हकार को घकारादेश होता है)।

च – III. ii. 74

(आकारान्त धातुओं से सुबन्त उपपद रहते मनिन्, क्वनिप्, वनिप्) तथा (विच् प्रत्यय होते हैं)।

च – III. ii. 76

(सोपपद हों चाहे निरुपपद, लोक तथा वेद में सब धातुओं से क्विप् प्रत्यय) भी (होता है)।

च – III. ii. 77

(सुबन्त उपपद रहते सोपसर्ग या निरुपसर्ग स्था धातु से क) तथा (क्विप् प्रत्यय होता है)।

च – III. ii. 83

(आत्ममान अर्थात् अपने आप को मानना अर्थ में वर्तमान मन् धातु से खश् प्रत्यय होता है), चकार से णिनि भी होता है ।

च – III. ii. 96

(सह शब्द उपपद रहते) भी (युध् तथा कृञ् धातुओं से भूतकाल में क्वनिप् प्रत्यय होता है)।

च – III. ii. 98

(उपसर्ग उपपद रहते) भी (संज्ञा विषय में जन् धातु से भूतकाल में ड प्रत्यय होता है)।

च – III. ii. 107

(वेद-विषय में लिट् के स्थान में क्वसु आदेश) भी (विकल्प से होता है)।

च – III. ii. 109

(क्वसु-प्रत्ययान्त उपेयिवान्, अनाश्वान्, अनूचान शब्द) भी (निपातन किये जाते हैं)।

च – III. ii. 116

(ह तथा शश्वत् शब्द उपपद हों तो धातु से अनद्यतन परोक्ष भूतकाल में लङ् प्रत्यय होता है), और चकार से लिट् भी होता है।

च – III. ii. 117

(समीपकालिक प्रष्टव्य अनद्यतन परोक्ष भूतकाल में वर्तमान धातु से) भी (लङ् तथा लिट् प्रत्यय होते हैं)।

च – III. ii. 119

(अपरोक्ष अनद्यतन भूतकाल में) भी (वर्तमान धातु से स्म उपपद रहते लट् प्रत्यय होता है)।

च – III. ii. 122

(स्म-शब्द-रहित पुरा शब्द उपपद हो तो अनद्यतन भूतकाल में धातु से लुङ् प्रत्यय विकल्प से होता है), और चकार से लट् भी होता है।

च – III. ii. 125

(सम्बोधन विषय में) भी (धातु से लट् के स्थान में शतृ, शानच् आदेश होते हैं)।

च – III. ii. 138

(भू धातु से) भी (वेद-विषय में तच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमान काल में इष्णुच् प्रत्यय होता है)।

च – III. ii. 139

(ग्ला, जि, स्था) तथा चकार से भू धातु से भी (वर्तमानकाल में क्स्नु प्रत्यय होता है, तच्छीलादि कर्ता हो तो)।

च – III. ii. 142

(सम्पूर्वक पृची, अनुपूर्वक रुधिर्, आङ्पूर्वक यम्, आङ्पूर्वक यसु, परिपूर्वक सृ, सम्पूर्वक सृज्, परिपूर्वक देवृ, सम्पूर्वक ज्वर्, परिपूर्वक क्षिप्, परिपूर्वक रट, परिपूर्वक वद, परिपूर्वक दह, परिपूर्वक मुह, दुष, द्विष, द्रुह, दुह, युज्, आङ्पूर्वक क्रीड्, विपूर्वक विचिर्, त्यज, रञ्ज, भज, अतिपूर्वक चर, अपपूर्वक चर, आङ्पूर्वक मुष, अभि आङ्पूर्वक हन् – इन धातुओं से) भी (तच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमानकाल में घिनुण् प्रत्यय होता है)।

च – III. ii. 144

(अपपूर्वक तथा) चकार से विपूर्वक लष् धातु से भी (घिनुण् प्रत्यय होता है)।

च – III. ii. 148

(सोपसर्ग दिव् तथा क्रुश् धातुओं से) भी (तच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमानकाल में वुञ् प्रत्यय होता है)।

च – III. ii. 149

(अनुदात्तेत्, हलादि धातुओं से) भी (तच्छीलादि कर्ता हो, तो वर्तमानकाल में युच् प्रत्यय होता है)।

च III. ii. 151

(क्रोधार्थक और मण्डनार्थक धातुओं से) भी (तच्छीलादि कर्ता हो, तो वर्तमानकाल में युच् प्रत्यय होता है)।

च – III. ii. 153

(षूद, दीपी, दीक्ष् – इन धातुओं से) भी (तच्छीलादि कर्ता हो, तो वर्तमानकाल में युच् प्रत्यय नहीं होता)।

च – III. ii. 157

(जि, दृङ्, क्षि, विपूर्वक श्रिञ्, इण्, वम, नञ्पूर्वक व्यथ, अभिपूर्वक अम, परिपूर्वक भू, प्रपूर्वक षू – इन धातुओं से) भी (तच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमानकाल में इनि प्रत्यय हो जाता है)।

च – III. ii. 164

(गत्वर शब्द) भी (क्वरप् प्रत्ययान्त निपातन किया जाता है)।

च – III. ii. 171

(आत् = आकारान्त, ऋ = ऋकारान्त तथा गम्, हन्, जन् धातुओं से तच्छीलादि कर्ता हों तो वेद-विषय में वर्तमानकाल में कि तथा किन् प्रत्यय होते हैं) और (उन कि, किन् प्रत्ययों को लिट् के समान कार्य होता है)।

च – III. ii. 176

(यङन्त 'या प्रापणे' धातु से) भी (तच्छीलादि कर्ता हो, तो वर्तमानकाल में वरच् प्रत्यय होता है)।

च – III. ii. 186

(पूञ् धातु से ऋषिवाची करण में) तथा (देवतावाची कर्ता में इत्र प्रत्यय होता है, वर्तमानकाल में)।

च – III. ii. 188

(मत्यर्थक, बुद्ध्यर्थक तथा पूजार्थक धातुओं से) भी (वर्तमानकाल में क्त प्रत्यय होता है)।

च — III. iii. 7

(चाहे जाते हुये अभीष्ट पदार्थ से सिद्धि गम्यमान हो तो) भी (भविष्यत् काल में धातु से विकल्प से लट् प्रत्यय होता है)।

च — III. iii. 8

(लोडर्थ लक्षण में वर्तमान धातु से) भी (भविष्यत् काल में विकल्प से लट् प्रत्यय होता है)।

च — III. iii. 9

(मुहूर्त्त से ऊपर भविष्यत्काल को कहना हो तो लोडर्थ-लक्षण में वर्तमान धातु से लिङ् प्रत्यय भी होता है, और लट्) भी।

च — III. iii. 11

(क्रियार्थ क्रिया उपपद हो तो भविष्यत्काल में धातु से भाववाचक प्रत्यय) भी (होते हैं)।

च — III. iii. 12

(क्रियार्थ क्रिया) तथा (कर्म उपपद रहते हुए धातु से भविष्यत् काल में अण् प्रत्यय होता है)।

च — III. iii. 13

(धातु से केवल भविष्यत् काल में) तथा चकार से क्रियार्थ क्रिया उपपद रहने पर भी (भविष्यत् काल में लृट् प्रत्यय होता है)।

च — III. iii. 19

(कर्तृभिन्न कारक में) भी (धातु से संज्ञाविषय में घञ् प्रत्यय होता है)।

च — III. iii. 21

(इङ् धातु से) भी (कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

च — III. iii. 34

(विपूर्वक स्तृञ् धातु से छन्द का नाम कहना हो तो) भी (कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

च — III. iii. 40

(चोरी से भिन्न, हाथ से ग्रहण करना गम्यमान हो तो) चिञ् धातु से (कर्तृभिन्न कारक और भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

च — III. iii. 41

(निवास, जो चुना जाये, शरीर तथा राशि अर्थों में चिञ् धातु से घञ् प्रत्यय होता है) तथा (चिञ् के आदि चकार को ककारादेश हो जाता है, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में)।

च — III. iii. 42

(ऊपर नीचे स्थित न होने वाला संघ वाच्य हो तो) भी (चिञ् धातु से घञ् प्रत्यय होता है, तथा आदि चकार को ककारादेश हो जाता है, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा एवं भाव में)।

च — III. iii. 53

(घोड़े की लगाम वाच्य हो तो) भी (प्रपूर्वक ग्रह् धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है, पक्ष में अप् होता है)।

च — III. iii. 58

(ग्रह, वृ, दृ तथा निर् पूर्वक चि एवं गम् धातुओं से) भी (कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में अप् प्रत्यय होता है)।

च — III. iii. 60

(निपूर्वक अद् धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में ण प्रत्यय भी होता है, अप्) भी।

च — III. iii. 63

(सम्, उप, नि, वि उपसर्ग पूर्वक तथा निरुपसर्ग) भी (यम् धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में विकल्प से अप् प्रत्यय होता है), पक्ष में घञ्।

च — III. iii. 65

(नि-पूर्वक, अनुपसर्ग तथा वीणा विषय होने पर) भी (क्वण् धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में विकल्प से अप् प्रत्यय होता है, पक्ष में घञ्)।

च — III. iii. 72

(नि, अभि, उप तथा वि पूर्वक ह्वेञ् धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में अप् प्रत्यय होता है, तथा ह्वेञ् को सम्प्रसारण) भी (होता है)।

च — III. iii. 76

(हन् धातु से भाव में अप् प्रत्यय होता है, तथा प्रत्यय के) साथ ही (हन् को वध आदेश भी हो जाता है)।

च — III. iii. 79

(गृह का एकदेश वाच्य हो तो प्रघण और प्रघाण शब्द में प्र-पूर्वक हन् धातु से अप् प्रत्यय) और (हन को घन आदेश कर्तृभिन्न कारक में निपातन किये जाते हैं)।

च — III. iii. 83

(स्तम्ब शब्द उपपद रहते करण कारक में हन् धातु से क तथा अप् प्रत्यय) भी (होता है, और अप् प्रत्यय परे रहने पर हन को घन आदेश भी हो जाता है)।

च — III. iii. 93

(कर्म उपपद रहने पर अधिकरण कारक में) भी (घु-संज्ञक धातुओं से कि प्रत्यय होता है)।

च — III. iii. 97

(ऊति, यूति, जूति, साति, हेति और कीर्ति शब्द) भी (अन्तोदात्त निपातन से सिद्ध होते हैं)।

च — III. iii. 100

(कृञ् धातु से स्त्रीलिङ्ग कर्तृभिन्न संज्ञा तथा भाव में श प्रत्यय होता है, तथा) चकार से क्यप् भी होता है।

च — III. iii. 103

(हलन्त, जो गुरुमान् धातु, उनसे) भी (स्त्रीलिङ्ग कर्तृ-भिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में अ प्रत्यय हो जाता है)।

च — III. iii. 105

(चिन्त, पूज, कथ, कुम्ब तथा चर्च् धातुओं से) भी (स्त्रीलिङ्ग कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में अङ् प्रत्यय होता है)।

च — III. iii. 106

(उपसर्ग उपपद रहते आकारान्त धातुओं से) भी (स्त्रीलिङ्ग कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में अङ् प्रत्यय होता है)।

च — III. iii. 110

(उत्तर तथा परिप्रश्न गम्यमान होने पर धातु से स्त्रीलिङ्ग कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में विकल्प से इञ् प्रत्यय होता है, तथा) चकार से ण्वुल् भी होता है।

च — III. iii. 115

(नपुंसकलिङ्ग भाव में धातु से ल्युट् प्रत्यय) भी (होता है)।

च — III. iii. 116

(जिस कर्म के संस्पर्श से कर्ता के शरीर में सुख उत्पन्न हो, ऐसे कर्म के उपपद रहते) भी (धातु से ल्युट् प्रत्यय होता है)।

च — III. iii. 117

(धातु से करण और अधिकरण कारक में) भी (ल्युट् प्रत्यय होता है)।

च — III. iii. 119

(गोचर, सञ्चर, वह, व्रज, व्यज, आपण और निगम शब्द) भी (घ-प्रत्ययान्त पुंल्लिङ्ग करण या अधिकरण कारक में संज्ञा विषय में निपातन किये जाते हैं)।

च — III. iii. 121

(हलन्त धातुओं से) भी (संज्ञाविषय होने पर करण तथा अधिकरण कारक में प्रायः करके घञ् प्रत्यय होता है, पुंल्लिङ्ग में)।

च — III. iii. 122

(अध्याय, न्याय, उद्याव तथा संहार – ये घञन्त शब्द) भी (पुंल्लिङ्ग करण तथा अधिकरण कारक संज्ञा में निपातन किये जाते हैं)।

उद्याव = सबके एकत्र होने का स्थान।

च — III. iii. 125

(खन् धातु से पुंल्लिङ्ग करणाधिकरण कारक संज्ञा में घ प्रत्यय होता है, तथा) चकार से घञ् भी होता है।

च — III. iii. 127

(भू तथा कृञ् धातु से यथासङ्ख्य करके कर्ता एवं कर्म उपपद रहते चकार से दुःख अथवा सुख अर्थ में वर्तमान ईषद्, दुस् तथा सु उपपद हों तो) भी (खल् प्रत्यय होता है)।

च — III. iii. 132

(आशंसा गम्यमान होने पर धातु से भूतकाल के समान तथा वर्तमानकाल के समान) भी (विकल्प से प्रत्यय हो जाते हैं)।

च — III. iii. 137

(कालकृत मर्यादा में अवर भाग को कहना हो तो) भी (भविष्यत् काल में धातु से अनद्यतनवत् प्रत्ययविधि नहीं होती, यदि वह काल का मर्यादा-विभाग दिनरातसम्बन्धी न हो)।

च – III. iii. 140

(लिङ् का निमित्त हेतुहेतुमत् आदि हो तो क्रियातिपत्ति होने पर भूतकाल में) भी (धातु से लृङ् प्रत्यय होता है)।

च – III. iii. 143

(गर्हा गम्यमान हो तो कथम् शब्द उपपद रहते विकल्प से लिङ् प्रत्यय होता है), तथा चकार से लट् प्रत्यय भी होता है।

च – III. iii. 149

(गर्हा गम्यमान हो तो) भी (यच्च और यत्र उपपद रहते धातु से लिङ् प्रत्यय होता है)।

च – III. iii. 150

(आश्चर्य गम्यमान हो तो) भी (यच्च और यत्र उपपद रहने पर धातु से लिङ् प्रत्यय होता है)।

च – III. iii. 159

(समानकर्तृक इच्छार्थक धातुओं के उपपद रहते धातु से लिङ् प्रत्यय) भी (होता है)।

च – III. iii. 162

(विधि, निमन्त्रण, आमन्त्रण, सम्प्रश्न, प्रार्थना अर्थों में लोट् प्रत्यय) भी होता है।

च – III. iii. 163

(प्रेषण करना, कामचार पूर्वक आज्ञा देना, समय आ जाना – इन अर्थों में धातु से कृत्य संज्ञक प्रत्यय होते हैं, तथा) चकार से लोट् भी होता है।

च – III. iii. 164

(प्रैष, अतिसर्ग, तथा प्राप्तकाल अर्थ गम्यमान हों तो मुहूर्त से ऊपर के काल को कहने में धातु से लिङ् प्रत्यय होता है, तथा) चकार से यथाप्राप्त कृत्यसंज्ञक एवं लोट् प्रत्यय होते हैं।

च – III. iii. 166

(सत्कार गम्यमान हो तो) भी (स्म शब्द उपपद रहते धातु से लोट् प्रत्यय होता है)।

च – III. iii. 169

(योग्य कर्ता वाच्य हो या गम्यमान हो तो धातु से कृत्यसंज्ञक तथा तृच् प्रत्यय हो जाते हैं) तथा चकार से लिङ् भी होता है।

च – III. iii. 171

(आवश्यक और आधमर्ण्य विशिष्ट अर्थ हों तो धातु से कृत्यसंज्ञक प्रत्यय) भी (हो जाते हैं)।

च – III. iii. 172

(शक्यार्थ गम्यमान हो तो धातु से लिङ् प्रत्यय होता है, तथा) चकार से कृत्यसंज्ञक प्रत्यय भी होते हैं।

च – III. iii. 174

(आशीर्वाद विषय में धातु से क्तिच् और क्त प्रत्यय) भी (होते हैं, यदि समुदाय से संज्ञा प्रतीत हो)।

च – III. iii. 176

(माङ् शब्द के साथ स्म शब्द भी उपपद रहते धातु से लङ् तथा) चकार से लुङ् प्रत्यय होता है।

च – III. iv. 2

(क्रिया का पौनःपुन्य गम्यमान हो तो धातु से धात्वर्थ-सम्बन्ध होने पर सब कालों में लोट् प्रत्यय हो जाता है, और उस लोट् के स्थान में नित्य हि और स्व आदेश होते हैं), तथा (त, ध्वम् भावी लोट् के स्थान में विकल्प से हि, स्व आदेश होते हैं)।

च – III. iv. 8

(उपसंवाद तथा आशंका गम्यमान हो तो) भी (धातु से वेद-विषय में लेट् प्रत्यय होता है)।

च – III. iv. 11

(दृशे तथा विख्ये शब्द) भी (वेदविषय में तुमुन् के अर्थ में के प्रत्ययान्त निपातन किये जाते हैं)।

च – III. iv. 15

(कृत्यार्थ अभिधेय हो, तो वेद-विषय में अव-पूर्वक चक्षिङ् धातु से शेन् प्रत्ययान्त अवचक्षे शब्द) भी (निपातन किया जाता है)।

च – III. iv. 20

(जब पर का अवर के साथ या पूर्व का पर के साथ योग गम्यमान हो, तो) भी (धातु से क्त्वा प्रत्यय होता है)।

च – III. iv. 22

(पौनःपुन्य अर्थ में समानकर्तृक दो धातुओं में जो पूर्वकालिक धातु, उससे णमुल् प्रत्यय होता है), चकार से क्त्वा भी होता है।

च — III. iv. 32

(वर्षा का प्रमाण गम्यमान हो तो कर्म उपपद रहते ण्यन्त पूरी धातु से णमुल् प्रत्यय होता है), तथा (इस पूरी धातु के ऊकार का लोप विकल्प से होता है)।

च — III. iv. 45

(उपमानवाची कर्म) और कर्ता भी उपपद रहते (धातु-मात्र से णमुल् प्रत्यय होता है)।

च — III. iv. 48

(अनुप्रयुक्त धातु के साथ समान कर्मवाली हिंसार्थक धातुओं से) भी (तृतीयान्त उपपद रहते णमुल् प्रत्यय होता है)।

च — III. iv. 49

(तृतीयान्त तथा सप्तम्यन्त उपपद हो तो उपपूर्वक पीड, रुध तथा कर्ष् धातुओं से) भी (णमुल् प्रत्यय होता है)।

च — III. iv. 51

(आयाम = लम्बाई गम्यमान हो तो) भी (सप्तम्यन्त तथा तृतीयान्त उपपद रहते धातु से णमुल् प्रत्यय होता है)।

च — III. iv. 53

(द्वितीयान्त उपपद रहते) भी (शीघ्रता गम्यमान हो तो धातु से णमुल् प्रत्यय होता है)।

च — III. iv. 55

(चारों ओर से क्लेश को प्राप्त स्वाङ्गवाची द्वितीयान्त शब्द उपपद हो तो) भी (धातु से णमुल् प्रत्यय होता है)।

च — III. iv. 69

(सकर्मक धातुओं से लकार कर्मकारक में होते हैं, चकार से कर्ता में भी होते हैं, और अकर्मक धातुओं से भाव में होते हैं, तथा) चकार से कर्ता में भी होते हैं।

च — III. iv. 69

(सकर्मक धातुओं से लकार कर्मकारक में होते हैं, चकार से कर्ता में भी होते हैं, और अकर्मक धातुओं से भाव में होते हैं, तथा) चकार से कर्ता में भी होते हैं।

च — III. iv. 71

(क्रिया के आरम्भ के आदि क्षण में विहित जो क्त प्रत्यय, वह कर्ता में होता है, तथा) चकार से भावकर्म में भी होता है।

च — III. iv. 72

(गत्यर्थक, अकर्मक, श्लिष, शीङ्, स्था, आस, वस, जन, रुह तथा जॄ धातुओं से विहित जो क्त प्रत्यय, वह कर्ता में होता है); चकार से भाव, कर्म में भी होता है।

च — III. iv. 76

(स्थित्यर्थक = अकर्मक, गत्यर्थक तथा प्रत्यवसानार्थक धातुओं से विहित जो क्त प्रत्यय, वह अधिकरण कारक में होता है, तथा) चकार से यथाप्राप्त कर्म, कर्ता में भी होता है।

च — III. iv. 87

(लोडादेश, जो सिप्, उसके स्थान में हि आदेश होता है, और वह अपित्) भी (होता है)।

च — III. iv. 92

(लोट्-सम्बन्धी उत्तमपुरुष को आट् का आगम हो जाता है, और वह उत्तम पुरुष पित्) भी (माना जाता है)।

च — III. iv. 97

(परस्मैपदविषय में लेट्-लकार-सम्बन्धी इकार का) भी (विकल्प से लोप हो जाता है)।

च — III. iv. 100

(ङित्-लकार-सम्बन्धी इकार का) भी (नित्य ही लोप हो जाता है)।

च — III. iv. 103

(परस्मैपद के लिङ् लकार को यासुट् का आगम होता है, और वह उदात्त तथा ङित् के समान) भी (होता है)।

च — III. iv. 109

(सिच् से उत्तर, अभ्यस्त-संज्ञक से उत्तर तथा विद् धातु से उत्तर) भी (झि को जुस् आदेश होता है)।

च — III. iv. 112

(द्विष् धातु से परे) भी (लङादेश झि के स्थान में जुस् आदेश होता है, शाकटायन आचार्य के ही मत में)।

च — III. iv. 115

(लिडादेश जो तिबादि, उनकी) भी (आर्धधातुक-संज्ञा होती है)।

च — IV. i. 6

(उगिदन्त प्रातिपदिक से) भी (स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय होता है)।

च – IV. i. 7

(वन्नन्त प्रातिपदिकों से स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय होता है तथा उस वन्नन्त प्रातिपदिक को रेफ अन्तादेश) भी (हो जाता है)।

च – IV. i. 16

(अनुपसर्जन यञन्त प्रातिपदिक से) भी (स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय होता है)।

च – IV. i. 19

(कौरव्य तथा माण्डूक अनुपसर्जन प्रातिपदिकों से) भी (स्त्रीलिङ्ग में ष्फ प्रत्यय होता है, और वह तद्धित-संज्ञक होता है)।

च – IV. i. 27

(संख्या आदि वाले दाम और हायन शब्दान्त बहुव्रीहि प्रातिपदिक से) भी (स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय होता है)।

च – IV. i. 30

(केवल, मामक आदि शब्दों से) भी (संज्ञा तथा छन्द विषय में स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय होता है)।

च – IV. i. 31

(रात्रि शब्द से) भी (स्त्रीलिङ्ग विवक्षित होने पर जस् विषय से अन्यत्र, संज्ञा तथा छन्द-विषय में ङीप् प्रत्यय होता है)।

च – IV. i. 36

(अनुपसर्जन पूतक्रतु प्रातिपदिक से स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय होता है, तथा ऐकार अन्तादेश) भी हो जाता है।

च – IV. i. 41

(षित् प्रातिपदिकों तथा गौरादि प्रातिपदिकों से) भी (स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय होता है)।

च – IV. i. 45

(बहु आदि प्रातिपदिकों से) भी (स्त्रीलिङ्ग में विकल्प से ङीष् प्रत्यय होता है)।

च – IV. i. 47

(वेद-विषय में अनुपसर्जन भू-शब्दान्त प्रातिपदिकों से) भी (स्त्रीलिङ्ग में नित्य ही ङीष् प्रत्यय होता है)।

च – IV. i. 52

(बहुव्रीहि समास में) भी (जो क्तान्त अन्तोदात्त प्रातिपदिक, उनसे स्त्रीलिङ्ग में ङीष् प्रत्यय होता है)।

च – IV. i. 54

(स्वाङ्गवाची जो उपसर्जन, असंयोग उपधावाले अदन्त प्रातिपदिक, उनसे) भी (स्त्रीलिङ्ग में विकल्प से ङीष् प्रत्यय होता है)।

च – IV. i. 55

(नासिका, उदर इत्यादि जो स्वाङ्गवाची उपसर्जन, तदन्त प्रातिपदिकों से) भी (स्त्रीलिङ्ग में विकल्प से ङीष् प्रत्यय होता है, पक्ष में टाप् भी होता है)।

च – IV. i. 57

(सह, नञ्, विद्यमान – ये शब्द पूर्व में हों और स्वाङ्गवाची उपसर्जन अन्त में हो जिनके, उन प्रातिपदिकों से) भी (स्त्रीलिङ्ग में ङीष् प्रत्यय नहीं होता)।

च – IV. i. 59

(वेद-विषय में ङीष्-प्रत्ययान्त दीर्घजिह्वी शब्द) भी (निपातन होता है)।

च – IV. i. 64

(पाक, कर्ण, पर्ण, पुष्प, फल, मूल, वाल – शब्द उत्तरपद में हो तो) भी (जातिवाची प्रातिपदिक से स्त्रीलिङ्ग में ङीष् प्रत्यय होता है)।

च – IV. i. 68

(पङ्गु शब्द से) भी (स्त्रीलिङ्ग में ऊङ् प्रत्यय होता है)।

च – IV. i. 70

(संहित, शफ, लक्षण, वाम आदि वाले ऊरूत्तरपद प्रातिपदिकों से) भी (स्त्रीलिङ्ग में ऊङ् प्रत्यय होता है)।

च – IV. i. 75

(अनुपसर्जन आवट्य शब्द से) भी (स्त्रीलिङ्ग में चाप् प्रत्यय होता है)।

च – IV. i. 80

(गोत्र में वर्तमान क्रौड्यादि प्रातिपदिकों से) भी (स्त्रीलिङ्ग में ष्यङ् प्रत्यय होता है)।

च – IV. i. 84

(अश्वपति आदि समर्थ प्रातिपदिकों से) भी (प्राग्दीव्यतीय अर्थों में अण् प्रत्यय होता है)।

च – IV. i. 96

(बाहु आदि प्रातिपदिकों से) भी ('तस्यापत्यम्' अर्थ में इञ् प्रत्यय होता है)।

च – IV. i. 97

(सुधातृ शब्द से 'तस्यापत्यम्' अर्थ में इञ् प्रत्यय होता है, तथा सुधातृ शब्द को अकङ् आदेश) भी (होता है)।

च – IV. i. 101

(गोत्र में विहित जो यञ् और इञ् प्रत्यय, तदन्त से) भी ('तस्यापत्यम्' अर्थ में फक् प्रत्यय होता है)।

च – IV. i. 108

(वतण्ड शब्द से) भी (आङ्गिरस गोत्र को कहना हो तो यञ् प्रत्यय होता है)।

च – IV. i. 114

(ऋषिवाची तथा अन्धक वृष्णि और कुरु वंश वाले समर्थ प्रातिपदिकों से) भी (अपत्य अर्थ में अण् प्रत्यय होता है)।

च – IV. i. 116

(कन्या शब्द से अपत्य अर्थ में अण् प्रत्यय होता है, तथा अण् परे रहने पर कन्या शब्द को कनीन आदेश) भी (हो जाता है)।

च – IV. i. 119

(मण्डूक प्रातिपदिक से ढक् प्रत्यय होता है तथा विकल्प से अण्) भी (होता है)।

च – IV. i. 122

(इकारान्त अनिञन्त द्व्यच् प्रातिपदिकों से) भी (अपत्य में ढक् प्रत्यय होता है)।

च – IV. i. 123

(शुभ्रादि प्रातिपदिकों से) भी (अपत्य अर्थ में ढक् प्रत्यय होता है)।

च – IV. i. 125

(भ्रू प्रातिपदिक से अपत्य अर्थ में ढक् प्रत्यय होता है, तथा भ्रू को वुक् का आगम) भी (होता है)।

च – IV. i. 134

(पितृष्वसृ प्रातिपदिक को जो कुछ कहा है, वह मातृष्वसृ शब्द को) भी (होता है)।

च – IV. i. 136

(गृष्ट्यादि प्रातिपदिकों से) भी (अपत्य अर्थ में ढञ् प्रत्यय होता है)।

च – IV. i. 144

(भ्रातृ शब्द से अपत्य अर्थ में व्यत्) तथा चकार से छ प्रत्यय होता है।

च – IV. i. 147

(गोत्र में वर्तमान जो स्त्री, तद्वाची प्रातिपदिक से कुत्सन गम्यमान होने पर अपत्य अर्थ में ण प्रत्यय होता है), और (ठक् भी होता है)।

च – IV. i. 149

(फिञन्त वृद्ध-संज्ञक सौवीर गोत्रापत्य प्रातिपदिक से कुत्सित युवापत्य के कहने में छ) तथा चकार से ठक् प्रत्यय (बहुल करके होता है)।

च – IV. i. 152

(सेना अन्त वाले प्रातिपदिकों से, लक्षण शब्द से तथा शिल्पीवाची प्रातिपदिकों से) भी (अपत्यार्थ में ण्य प्रत्यय होता है)।

च – IV. i. 155

(कौसल्य तथा कार्मार्य शब्दों से) भी (अपत्य अर्थ में फिञ् प्रत्यय होता है)।

च – IV. i. 158

(गोत्रभिन्न वृद्ध-संज्ञक वाकिनादि प्रातिपदिकों से उदीच्य आचार्यों के मत में अपत्यार्थ में फिञ् प्रत्यय) तथा (कुक् का आगम होता है)।

च – IV. i. 161

(मनु शब्द से जाति को कहना हो तो अञ् तथा यत् प्रत्यय होते हैं, तथा मनु शब्द को षुक् आगम) भी (हो जाता है)।

च – IV. i. 164

(बड़े भाई के जीवित रहते पौत्रप्रभृति का जो अपत्य छोटा भाई, उसकी) भी (युवा संज्ञा हो जाती है)।

च – IV. i. 167

(जनपदवाची क्षत्रियाभिधायी साल्वेय तथा गान्धारि शब्दों से) भी (अपत्य अर्थ में अञ् प्रत्यय होता है)।

च – IV. i. 174

(क्षत्रियाभिधायी, जनपदवाची जो अवन्ति, कुन्ति तथा कुरु शब्द, उनसे) भी (उत्पन्न जो तद्राज-संज्ञक प्रत्यय, उनका स्त्रीलिङ्ग अभिधेय हो तो लुक् हो जाता है)।

च — IV. i. 175

(स्त्रीलिङ्ग अभिधेय हो, तो तद्राज-संज्ञक अकार प्रत्यय का) भी (लुक् हो जाता है)।

च — IV. ii. 27

(प्रथमासमर्थ देवतावाची अपोनप्तृ तथा अपांनप्तृ शब्दों से छ प्रत्यय) भी (होता है)।

च — IV. ii. 28

(प्रथमासमर्थ देवतावाची महेन्द्र प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में घ, अण्) तथा (छ प्रत्यय भी होते हैं)।

च — IV. ii. 31

(प्रथमासमर्थ देवतावाची द्यावापृथिवी, शुनासीर, मरुत्वत्, अग्नीषोम, वास्तोष्पति तथा गृहमेध प्रातिपदिकों से छ) तथा (यत् प्रत्ययं होता है)।

च — IV. ii. 39

(षष्ठीसमर्थ केदार शब्द से यञ्) तथा (चकार-से वुञ् प्रत्यय होता है)।

च — IV. ii. 40

(षष्ठीसमर्थ कवचिन् शब्द से समूह अर्थ में ठञ् प्रत्यय) भी (होता है)।

च — IV. ii. 44

(षष्ठीसमर्थ खण्डिकादि प्रादिपदिकों से) भी (समूहार्थ को कहने में अञ् प्रत्यय होता है)।

च — IV. ii. 50

(षष्ठीसमर्थ खल, गो, रथ प्रातिपदिकों से समूह अर्थ में यथासङ्ख्य इनि, त्र तथा कट्यच् प्रत्यय) भी (होते है)।

च — IV. ii. 64

(द्वितीयासमर्थ ककार उपधावाले सूत्रवाची प्रातिपदिकों से) भी ('तदधीते तद्वेद' अर्थ में उत्पन्न प्रत्यय का लुक् हो जाता है)।

च — IV. ii. 65

(प्रोक्तप्रत्ययान्त छन्द और ब्राह्मणवाची शब्द) भी (अध्येतृ, वेदितृ-प्रत्यय-विषयक होते हैं, अन्य प्रोक्तप्रत्ययान्त शब्दों का केवल प्रोक्त अर्थमात्र में ही प्रयोग होता है)।

च — IV. ii. 69

(षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिक से निकट होने के अर्थ में) भी (यथाविहित प्रत्यय होते हैं)।

च — IV. ii. 71

(जिस मतुप् के परे रहते बहुत अच् वाला अङ्ग हो, उस मत्वन्त प्रातिपदिक से) भी (अञ् प्रत्यय होता है)।

च — IV. ii. 73

(विपाट् नदी के किनारे पर जो कुएँ हैं, उनके अभिधेय होने पर) भी (अञ् प्रत्यय होता है)।

च — IV. ii. 74

(सङ्कलादि प्रातिपदिकों से) भी (चातुरर्थिक अञ् प्रत्यय होता है)।

च — IV. ii. 78

(ककार उपधा वाले प्रतिपदिक से) भी (चातुरर्थिक अण् प्रत्यय होता है)।

च — IV. ii. 81

(वरणादि प्रातिपदिकों से विहित जो चातुरर्थिक प्रत्यय, उसका) भी (लुप् होता है)।

च — IV. ii. 83

(शर्करा शब्द से चातुरर्थिक ठक् तथा छ प्रत्यय) भी (होते हैं)।

च — IV. ii. 85

(मधु आदि प्रातिपदिकों से) भी (चातुरर्थिक मतुप् प्रत्यय होता है)।

च — IV. ii. 90

(नडादि शब्दों को चातुरर्थिक छ प्रत्यय) तथा (कुक् का आगम होता है)।

च — IV. ii. 99

(रङ्कु शब्द से मनुष्य अभिधेय न हो तो अण्) और (ष्फक् प्रत्यय होते हैं)।

च — IV. ii. 108

(अन्तोदात्त बहुत अच् वाले उत्तर दिशा में होने वाले ग्रामवाची प्रातिपदिकों से) भी (अञ् प्रत्यय होता है)।

च — IV. ii. 111

(गोत्रप्रत्ययान्त इञन्त प्रातिपदिकों से) भी (अण् प्रत्यय होता है)।

च — IV. ii. 116

(वाहीक देश के जो ग्राम, तद्वाची वृद्ध-संज्ञक प्रातिपदिक से) भी (शैषिक ठञ् तथा ञिठ् प्रत्यय होते हैं)।

च — IV. ii. 121

(प्रस्थ, पुर, वह अन्त वाले जो देशवाची वृद्ध-संज्ञक प्रातिपदिक, उनसे) भी (शैषिक वुञ् प्रत्यय होता है)।

च — IV. ii. 123

(जनपद तथा जनपद अवधि को कहने वाले वृद्ध-संज्ञक प्रातिपदिकों से) भी (शैषिक वुञ् प्रत्यय होता है)।

च — IV. ii. 126

(देशविशेषवाची धूमादिगणपठित प्रातिपदिकों से) भी (शैषिक वुञ् प्रत्यय होता है)।

च — IV. ii. 132

(देशविशेषवाची कच्छादि प्रातिपदिकों से) भी (शैषिक अण् प्रत्यय होता है)।

च — IV. ii. 135

(गो तथा यवागू अभिधेय हों तो) भी (देशवाची साल्व शब्द से शैषिक वुञ् प्रत्यय होता है)।

च — IV. ii. 137

(गहादि प्रातिपदिकों से) भी (शैषिक छ प्रत्यय होता है)।

च — IV. ii. 139

(राजन् शब्द से शैषिक छ प्रत्यय होता है, तथा उसको क अन्तादेश) भी (होता है)।

च — IV. ii. 142

(पर्वत शब्द से) भी (शैषिक छ प्रत्यय होता है)।

च — IV. iii. 1

(युष्मद् तथा अस्मद् शब्दों से खञ् तथा) चकार से छ प्रत्यय (विकल्प से होते हैं, पक्ष में औत्सर्गिक अण् होता है)।

च — IV. iii. 2

(उस अण्) तथा (खञ् प्रत्यय के परे रहते युष्मद्, अस्मद् के स्थान में क्रमशः युष्माक, अस्माक आदेश होते हैं)।

च — IV. iii. 5

(पर, अवर, अधम, उत्तम – ये शब्द पूर्व में है जिनके, ऐसे अर्ध शब्द से) भी (शैषिक यत् प्रत्यय होता है)।

च — IV. iii. 6

(दिशावाची पूर्वपद वाले अर्ध प्रातिपदिक से शैषिक ठञ्) और (यत् प्रत्यय होते हैं)।

च — IV. iii. 14

(निशा, प्रदोष कालविशेषवाची शब्दों से) भी (विकल्प से ठञ् प्रत्यय होता है)।

च — IV. iii. 15

(कालविशेषवाची श्वस् प्रातिपदिक से विकल्प से ठञ् प्रत्यय होता है, तथा उस प्रत्यय को तुट् का आगम) भी (होता है)।

च — IV. iii. 20

(कालवाची वसन्त प्रातिपदिक से) भी (वेदविषय में ठञ् प्रत्यय होता है)।

च — IV. iii. 21

(कालवाची हेमन्त शब्द से) भी (वेद-विषय में ठञ् प्रत्यय होता है)।

च — IV. iii. 22

(हेमन्त प्रातिपदिक से वैदिक तथा लौकिक प्रयोग में अण्) तथा (ठञ् प्रत्यय होते हैं, तथा उस अण् के परे रहते हेमन्त शब्द के तकार का लोप भी होता है)।

च — IV. iii. 23

(कालवाची सायं, चिरं, प्राह्णे, प्रगे तथा अव्यय प्रातिपदिकों से ट्यु तथा ट्युल् प्रत्यय होते हैं, और इन प्रत्ययों को तुट् आगम) भी (होता है)।

च — IV. iii. 29

(सप्तमीसमर्थ पथिन् प्रातिपदिक से 'जात' अर्थ में वुन् प्रत्यय होता है, तथा प्रत्यय के साथ-साथ पथिन् को पन्थ आदेश) भी (होता है)।

च — IV. iii. 31

(अमावास्या प्रातिपदिक से 'जात' अर्थ में अ प्रत्यय) भी (होता है)।

च — IV. iii. 33

(सिन्धु और अपकर शब्दों से यथाक्रम अण् और अञ् प्रत्यय) भी (होते हैं)।

च — IV. iii. 35

(स्थान शब्द अन्त वाले, गोशाल तथा खरशाल प्रातिपदिकों से) भी (जातार्थ में उत्पन्न प्रत्यय का लुक् होता है)।

च — IV. iii. 44

(सप्तमीसमर्थ कालवाची प्रातिपदिकों से 'बोया हुआ' अर्थ में) भी (यथाविहित प्रत्यय होता है)।

च — IV. iii. 50

(सप्तमीसमर्थ कालवाची संवत्सर तथा आग्रहायणी प्रातिपदिकों से ठञ्) तथा (वुञ् प्रत्यय होता है)।

च — IV. iii. 55

(सप्तमीसमर्थ शरीर के अवयववाची प्रातिपदिकों से) भी ('भव' अर्थ में यत् प्रत्यय होता है)।

च — IV. iii. 57

(सप्तमीसमर्थ ग्रीवा प्रातिपदिक से भव अर्थ में अण्) और (ढञ् प्रत्यय होता है)।

च — IV. iii. 59

(सप्तमीसमर्थ अव्ययीभाव-संज्ञक प्रातिपदिक से) भी ('भव' अर्थ में ञ्य प्रत्यय होता है)।

च — IV. iii. 63

(सप्तमीसमर्थ वर्ग अन्त वाले प्रातिपदिक से) भी ('भव' अर्थ में छ प्रत्यय होता है)।

च — IV. iii. 66

(षष्ठीसमर्थ व्याख्यान किये जाने योग्य जो प्रातिपदिक, उनसे व्याख्यान अभिधेय होने पर यथाविहित प्रत्यय होता है), तथा (सप्तमीसमर्थ व्याख्यातव्यनामवाची शब्दों से 'भव' अर्थ में भी यथाविहित प्रत्यय होता है)।

च — IV. iii. 68

(क्रतुवाची और यज्ञवाची व्याख्यातव्यनाम षष्ठी तथा सप्तमीसमर्थ प्रातिपदिकों से) भी ('व्याख्यान' और 'भव' अर्थों में ठञ् प्रत्यय होता है)।

च — IV. iii. 79

(पञ्चमीसमर्थ पितृ प्रातिपदिक से 'आगत' अर्थ में यत् प्रत्यय होता है) तथा (चकार से ठञ् प्रत्यय होता है)।

च — IV. iii. 82

(पञ्चमीसमर्थ हेतु तथा मनुष्यवाची प्रातिपदिकों से 'आगत' अर्थ में मयट् प्रत्यय) भी (होता है)।

च — IV. iii. 90

(प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से 'इसका अभिजन है' अर्थ में) भी (यथाविहित प्रत्यय होते हैं)।

च — IV. iii. 104

(तृतीयासमर्थ कलापी के अन्तेवासी तथा वैशम्पायन के अन्तेवासी-वाचक प्रातिपदिकों से) भी (प्रोक्तार्थ में णिनि प्रत्यय होता है, छन्दविषय में)

च — IV. iii. 113

(तृतीयासमर्थ प्रातिपदिक से 'एकदिक्' विषय में तसि प्रत्यय) भी (होता है)।

च — IV. iii. 114

(तृतीयासमर्थ उरस् शब्द से 'एकदिक्' अर्थ में यत् प्रत्यय) तथा (चकार से तसि प्रत्यय भी होता है)।

च — IV. iii. 122

(षष्ठीसमर्थ पत्र, अध्वर्यु तथा परिषद् प्रातिपदिकों से) भी ('इदम्' अर्थ में अञ् प्रत्यय होता है)।

च — IV. iii. 132

(षष्ठीसमर्थ प्राणिवाचि, ओषधिवाची तथा वृक्षवाची प्रातिपदिकों से अवयव) तथा विकार अर्थों में (यथाविहित प्रत्यय होता है)।

च — IV. iii. 134

(षष्ठीसमर्थ ककार उपधा वाले प्रातिपदिक से) भी (विकार और अवयव अर्थों में अण् प्रत्यय होता है)।

च — IV. iii. 137

(षष्ठीसमर्थ अनुदात्तादि प्रातिपदिकों से) भी (विकार और अवयव अर्थों में अञ् प्रत्यय होता है)।

च — IV. iii. 142

(षष्ठीसमर्थ गो प्रातिपदिक से) भी (मल अभिधेय होने पर मयट् प्रत्यय होता है)।

च — IV. iii. 143

(षष्ठीसमर्थ पिष्ट प्रातिपदिक से) भी (विकार अर्थ में मयट् प्रत्यय होता है)।

च — IV. iii. 152

विकार और अवयव अर्थों में विहित जो ञित् प्रत्यय, तदन्त षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिकों से) भी (विकार और अवयव अर्थों में ही अञ् प्रत्यय होता है)।

च — IV. iii. 158

(षष्ठीसमर्थ द्रु प्रातिपदिक से) भी (विकार और अवयव अर्थों में यत् प्रत्यय होता है)।

च — IV. iii. 163

(षष्ठीसमर्थ जम्बू प्रातिपदिक से फल अभिधेय होने पर विकारावयव अर्थों में विहित प्रत्यय का विकल्प से लुप्) भी (होता है)।

च — IV. iii. 164

(षष्ठीसमर्थ हरीतकी आदि प्रातिपदिकों से विकार अवयव अर्थों में विहित प्रत्यय का फल अभिधेय होने पर) भी (लुप् होता है)।

च — IV. iii. 165

(षष्ठीसमर्थ कंसीय, परशव्य प्रातिपदिकों से विकार अर्थ में यथासङ्ख्य करके यञ् और अञ् प्रत्यय होते हैं, तथा प्रत्यय के साथ-साथ कंसीय और परशव्य का लुक्) भी (होता है)।

च — IV. iv. 11

(तृतीयासमर्थ श्वगण प्रातिपदिक से ठञ्) तथा (ष्ठन् प्रत्यय होते हैं)।

च — IV. iv. 14

(तृतीयासमर्थ आयुध प्रातिपदिक से छ) तथा (ठन् प्रत्यय होते हैं)।

च — IV. iv. 17

(सप्तमीसमर्थ अग्र प्रातिपदिक से वेद-विषयक भवार्थ में घ और छ प्रत्यय) भी (होते हैं)।

च — IV. iv. 29

(द्वितीयासमर्थ परिमुख प्रातिपदिक से) भी ('वर्तते'-अर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

च — IV. iv. 36

(द्वितीयासमर्थ परिपन्थ प्रातिपदिक से 'बैठता है') तथा ('मारता है'अर्थों में ठक् प्रत्यय होता है)।

च — IV. iv. 38

(द्वितीयासमर्थ आक्रन्द प्रातिपदिक से 'दौड़ता है'– अर्थ में ठञ्) तथा (ठक् प्रत्यय होते हैं)।

च — IV. iv. 40

(द्वितीयासमर्थ प्रतिकण्ठ, अर्थ, ललाम प्रातिपदिकों से) भी (ग्रहण करता है– अर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

च — IV. iv. 42

द्वितीयासमर्थ प्रतिपथ प्रातिपदिक से 'जाता है'– अर्थ में ठन्) तथा (ठक् प्रत्यय होते हैं)।

च — IV. iv. 58

(प्रहरण समानाधिकरणवाची प्रथमासमर्थ परश्वध प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में ठञ् प्रत्यय होता है,) चकार से ठक् भी।

च — IV. iv. 79

(द्वितीयासमर्थ एकधुर प्रातिपदिक से 'ढोता है' अर्थ में ख प्रत्यय) तथा (उसका लोप होता है)।

च — IV. iv. 94

(तृतीयासमर्थ उरस् प्रातिपदिक से 'बनाया हुआ' अर्थ में अण्) और (यत् प्रत्यय होते हैं)।

च — IV. iv. 96

(षष्ठीसमर्थ हृदय शब्द से बन्धन अर्थ में) भी (वेद अभिधेय होने पर यत् प्रत्यय होता है)।

च — IV. iv. 108

(सप्तमीसमर्थ समानोदर प्रातिपदिक से 'शयन किया हुआ' अर्थ में यत् प्रत्यय होता है) तथा (समानोदर शब्द के ओकार को उदात्त होता है)।

च — IV. iv. 125

(उपधान मन्त्र समानाधिकरण प्रथमासमर्थ मतुबन्त प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में यत् प्रत्यय होता है, यदि षष्ठ्यर्थ में निर्दिष्ट ईंटें ही हों) तथा (मतुप् का लुक् भी हो जाता है, वेद-विषय में)।

च — IV. iv. 129

(प्रथमासमर्थ मधु प्रातिपदिक से मत्वर्थ में मास और तनू प्रत्ययार्थ विशेषण हों तो ञ) और (यत् प्रत्यय होते हैं)।

च — IV. iv. 132

(वेशस्, यशस् आदि वाले भगान्त प्रातिपदिक से मत्वर्थ में ख प्रत्यय) भी (होता है, वेद-विषय में)।

च — IV. iv. 133

(तृतीयासमर्थ पूर्व प्रातिपदिक से 'किया हुआ' अर्थ में इन और य प्रत्यय होते हैं, चकार से ख भी होता है।

च — IV. iv. 136

(प्रथमासमर्थ सहस्र प्रातिपदिक से मत्वर्थ में) भी (घ प्रत्यय होता है, वेद-विषय में)

च — IV. iv. 138

(सोम शब्द से मयट् के अर्थ में) भी (य प्रत्यय होता है)।

च — IV. iv. 140

(वसु प्रातिपदिक से समूह) तथा (मयट् के अर्थ में यत् प्रत्यय होता है)।

च — IV. iv. 144

(षष्ठीसमर्थ शिव, शम्, और अरिष्ट प्रातिपदिकों से करने वाला विषय में भाव अर्थ में) भी (तातिल् प्रत्यय होता है)।

च — V. i. 3

(कम्बल प्रातिपदिक से) भी ('क्रीत' अर्थ से पहले-पहले पठित अर्थों में यत् प्रत्यय होता है, सञ्ज्ञा- विषय के होने पर)।

च — V. i. 7

(चतुर्थीसमर्थ खल, यव, माष, तिल, वृष. ब्रह्मन् प्रातिपदिकों से) भी (हित अर्थ में यत् प्रत्यय होता है)।

च — V. i. 21

(शत प्रातिपदिक से) भी (अर्हीय अर्थों में ठन् और यत् प्रत्यय होते हैं, यदि सौ अभिधेय न हों तो)।

च — V. i. 31

(द्वि तथा त्रिशब्द पूर्व वाले बिस्त शब्दान्त द्विगुसञ्ज्ञक प्रातिपदिक से) भी ('तदर्हति'-पर्यन्त कथित अर्थों में उत्पन्न प्रत्यय का विकल्प से लुक् होता है)।

च — V. i. 39

(षष्ठीसमर्थ पुत्र शब्द से छ) और (यत् प्रत्यय होते हैं, संयोग अथवा उत्पातरूपी निमित्त अर्थ में)।

च — V. i. 42

(सप्तमीसमर्थ सर्वभूमि तथा पृथिवी प्रातिपदिकों से 'प्रसिद्ध' अर्थ में) भी (यथासङ्ख्य करके अण् और अञ् प्रत्यय होते हैं)।

च — V. i. 48

(प्रथमासमर्थ भाग प्रातिपदिक से सप्तम्यर्थ में यत्) तथा (ठन् प्रत्यय होते हैं, यदि 'वृद्धि' = व्याज के रूप में दिया जाने वाला द्रव्य, 'आय' = जमींदारों का भाग, 'लाभ' = मूल द्रव्य के अतिरिक्त प्राप्य द्रव्य, 'शुल्क' राजा का भाग तथा 'उपदा' = घूस — ये 'दिया जाता है' क्रिया के कर्म वाच्य हों तो)।

च — V. iv. 51

(सम्पद्यते के कर्त्ता में वर्तमान अरुस्, मनस्, चक्षुस्, चेतस्, रहस् तथा रजस् शब्दों के अन्त्य का लोप) भी (कृ, भू तथा अस्ति के योग में होता है, तथा च्विप्रत्यय भी होता है)।

च — V. i. 53

(द्विगु-सञ्ज्ञक द्वितीयासमर्थ आढक, आचित तथा पात्र प्रातिपदिक से 'सम्भव है', 'अवहरण करता है' तथा 'पकाता है' अर्थों में ष्ठन् प्रत्यय) भी (होता है)।

च — V. i. 54

(द्वितीयासमर्थ द्विगु-सञ्ज्ञक कुलिज शब्दान्त प्रातिपदिक से 'सम्भव है', 'अवहरण करता है' तथा 'पकाता है' अर्थों में प्रत्यय का लुक्, ख प्रत्यय) तथा (ष्ठन् प्रत्यय होते हैं)।

च — V. i. 64

(द्वितीयासमर्थ शीर्षच्छेद प्रातिपदिक से 'नित्य ही योग्य है' अर्थ में यत् प्रत्यय) भी (होता है, यथाविहित ठक् भी)।

च — V. i. 66

(द्वितायासमर्थ प्रातिपदिक मात्र से वेद-विषय में) भी ('समर्थ है' अर्थ में यत् प्रत्यय होता है)।

च — V. i. 67

(द्वितीयासमर्थ पात्र प्रातिपदिक से 'समर्थ है' अर्थ में घन्) और (यत् प्रत्यय होते हैं)।

च — V. i. 68

(द्वितीयासमर्थ कडङ्कर और दक्षिणा प्रातिपदिकों से छ) और (यत् प्रत्यय होते हैं, 'समर्थ है' अर्थ में)।

च — V. i. 76

(तृतीयासमर्थ उत्तरपथ प्रातिपदिक से 'लाया हुआ' अर्थ में) तथा ('जाता है' अर्थ में यथाविहित ठञ् प्रत्यय हो जाता है)।

च — V. i. 82

षण्मास प्रातिपदिक से अवस्था अभिधेय हो तो 'हो चुका' अर्थ में ण्यत् और यप् प्रत्यय होते हैं, तथा औत्सर्गिक ठञ् भी।

च — V. i. 83

(षण्मास प्रातिपदिक से अवस्था अभिधेय न हो तो ठञ्) तथा (ण्यत् प्रत्यय होता है 'हो चुका' अर्थ में)।

च — V. i .86

द्वितीयासमर्थ रात्रिशब्दान्त, अहः शब्दान्त तथा संवत्सर शब्दान्त द्विगु-सञ्ज्ञक प्रातिपदिकों से) भी ('सत्कारपूर्वक व्यापार', 'खरीदा हुआ', 'हो चुका' तथा 'होने वाला' अर्थों में विकल्प से ख प्रत्यय होता है)।

च — V. i. 87

(द्वितीयासमर्थ वर्ष-शब्दान्त द्विगु-सञ्ज्ञक प्रातिपदिकों से 'सत्कारपूर्वक व्यापार', 'खरीदा गया', 'हो चुका' तथा 'होने वाला' अर्थों में विकल्प करके ख प्रत्यय) तथा (विकल्प से प्रत्यय का लुक् होता है)।

च — V. i. 91

(द्वितीयासमर्थ सम् तथा परि पूर्ववाले वत्सरशब्दान्त प्रातिपदिक से 'सत्कारपूर्वक व्यापार', 'खरीदा हुआ', 'हो चुका' तथा 'होने वाला' अर्थों में ख प्रत्यय) तथा (छ प्रत्यय होते हैं)।

च — V. i. 94

(षष्ठीसमर्थ यज्ञ की आख्यावाले प्रातिपदिकों से) भी ('दक्षिणा' अर्थ में यथाविहित ठञ् प्रत्यय होता है)।

च — V. i. 95

(सप्तमीसमर्थ कालवाची प्रातिपदिकों से 'दिया जाता है') और ('कार्य' अर्थों में भव अर्थ के समान ही प्रत्यय हो जाते हैं)।

च — V. i. 101

(चतुर्थीसमर्थ योग प्रातिपदिक से 'शप्त है' अर्थ में यत्) तथा (ठञ् प्रत्यय होते हैं)।

च — V. i. 119

यहाँ से लेकर (ब्रह्मणस्त्वः V. i. 135 के त्वपर्यन्त त्व, तल् प्रत्यय होते हैं, ऐसा अधिकार जानना चाहिए)।

च — V. i. 122

(षष्ठीसमर्थ वर्णवाची तथा दृढादि प्रातिपदिकों से 'भाव' अर्थ में ष्यञ्) तथा (इमनिच् प्रत्यय होते हैं)।

च — V. i. 123

(गुण को जिसने कहा, ऐसे तथा ब्राह्मणादि षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिकों से कर्म के अभिधेय होने पर) तथा (भाव में ष्यञ् प्रत्यय होता है)।

च — V. i. 124

(षष्ठीसमर्थ स्तेन प्रातिपदिक से भाव और कर्म अर्थ में यत् प्रत्यय होता है, तथा स्तेन शब्द के न का लोप) भी (हो जाता है)।

च — V. i. 130

(षष्ठीसमर्थ लघु = ह्रस्व अक्षर पूर्व में जिसके, ऐसे इक् = इ, उ, ऋ, लृ अन्तवाले प्रातिपदिक से) भी (भाव और कर्म अर्थों में अण् प्रत्यय होता है)।

च — V. i. 132

(षष्ठीसमर्थ द्वन्द्व-सञ्ज्ञक तथा मनोज्ञादि प्रातिपदिकों से) भी (भाव और कर्म अर्थों में वुञ् प्रत्यय होता है)।

च — V. ii. 17

(द्वितीयासमर्थ अभ्यमित्र प्रातिपदिक से 'पर्याप्त जाता है' अर्थ में छ प्रत्यय) तथा (यत् और ख प्रत्यय होते हैं)।

च — V. ii. 30

(अव उपसर्ग प्रातिपदिक से कुटारच्) तथा (कटच् प्रत्यय होते हैं)।

च — V. ii. 33

(नासिका का झुकाव अभिधेय हो तो नि उपसर्ग प्रातिपदिक से इनच् तथा पिटच् प्रत्यय होते हैं, सञ्ज्ञाविषय में तथा नि शब्द को यथासङ्ख्य करके प्रत्यय के साथ-साथ चिक तथा चि आदेश) भी (होते हैं)।

च — V. ii. 38

(प्रथमासमर्थ प्रमाण समानाधिकरणवाची पुरुष तथा हस्तिन् प्रातिपदिकों से षष्ठ्यर्थ में अण्) तथा (द्वयसच्, दघ्नच् और मात्रच् प्रत्यय होते हैं)।

च — V. ii. 41

(सङ्ख्या के परिणाम अर्थ में वर्तमान किम् शब्द से षष्ठ्यर्थ में डति प्रत्यय) तथा (वतुप् प्रत्यय होते हैं, तथा उस वतुप् के वकार के स्थान में घकार आदेश हो जाता है)।

च — V. ii. 46

(अधिक समानाधिकरणवाची शत् शब्द अन्त में है जिसके, ऐसे तथा विंशति प्रातिपदिक से) भी (सप्तम्यर्थ में ड प्रत्यय होता है)।

च – V. ii. 50

(सङ्ख्या आदि में न हो जिसके ऐसे षष्ठीसमर्थ सङ्ख्यावाची नकारान्त प्रातिपदिक से पूरण अर्थ में विहित डट् प्रत्यय को थट्) तथा (मट् आगम होता है), वेद-विषय में।

च – V. ii. 55

(षष्ठीसमर्थ त्रि प्रातिपदिक से 'पूरण' अर्थ में तीय प्रत्यय होता है, तथा (प्रत्यय के साथ साथ त्रि को सम्प्रसारण भी हो जाता है)।

च – V. ii. 57

(षष्ठीसमर्थ शतादि प्रातिपदिकों से) तथा (मास, अर्द्धमास और संवत्सर प्रातिपदिकों से 'पूरण' अर्थ में विहित डट् प्रत्यय को तमट् का आगम नित्य ही हो जाता है)।

च – V. ii. 58

(षष्ठीसमर्थ सङ्ख्या आदि में न हो जिसके, ऐसे सङ्ख्यावाची षष्टि आदि प्रातिपदिकों से) भी ('पूरण' अर्थ में विहित डट् प्रत्यय को नित्य ही तमट् आगम होता है)।

च – V. ii. 87

(विद्यमान है पूर्व में कोई शब्द जिस प्रातिपदिक के, ऐसे प्रथमासमर्थ पूर्व शब्द से) भी ('इसके द्वारा' अर्थ में इनि प्रत्यय होता है)।

च – V. ii. 88

प्रथमासमर्थ इष्टादि प्रातिपदिकों से) भी ('इसके द्वारा' अर्थ में इनि प्रत्यय होता है)।

च – V. ii. 95

(प्रथमासमर्थ रसादि प्रातिपदिकों से) भी ('मत्वर्थ' में मतुप् प्रत्यय होता है)।

च – V. ii. 97

(सिध्मादि प्रातिपदिकों से) भी ('मत्वर्थ' में विकल्प से लच् प्रत्यय होता है)।

च – V. ii. 99

(फेन प्रातिपदिक से 'मत्वर्थ' में इलच्) तथा (लच् प्रत्यय होते हैं, विकल्प से)।

च – V. ii. 103

(तपस् तथा सहस्र प्रातिपदिकों से 'मत्वर्थ' में अण् प्रत्यय) भी (होता है)।

च – V. ii. 104

(सिकता तथा शर्करा प्रातिपदिकों से) भी ('मत्वर्थ' में अण् प्रत्यय होता है)।

च – V. ii. 105

(सिकता तथा शर्करा प्रातिपदिकों से 'देश' अभिधेय हो तो लुप् और इलच्) तथा (अण् प्रत्यय विकल्प से होते हैं 'मत्वर्थ' में)।

च – V. ii. 116

(व्रीह्यादि प्रातिपदिकों से) भी ('मत्वर्थ' में इनि तथा ठन् प्रत्यय होते हैं, विकल्प से)।

च – V. ii. 117

(तुन्दादि प्रातिपदिकों से 'मत्वर्थ' में इलच्) तथा (इनि और ठ प्रत्यय होते हैं)।

च – V. ii. 119

(शत शब्द अन्तवाले तथा सहस्र शब्द अन्तवाले निष्क प्रातिपदिक से) भी ('मत्वर्थ' में ठञ् प्रत्यय होता है)।

च – V. ii. 129

(वात और अतीसार प्रातिपदिकों से 'मत्वर्थ' में इनि प्रत्यय होता है, तथा इन शब्दों को कुक् आगम) भी (होता है)।

च – V. ii. 131

(सुखादि प्रातिपदिकों से) भी ('मत्वर्थ' में इनि प्रत्यय होता है)।

च – V. ii. 132

(धर्म शब्द अन्तवाले, शील शब्द अन्तवाले तथा वर्णशब्द अन्तवाले प्रातिपदिकों से) भी ('मत्वर्थ' में इनि प्रत्यय होता है)।

च – V. iii. 8

(किम्, सर्वनाम तथा बहु से उत्तर जो तसि, उस तसि के स्थान में) भी (तसिल् आदेश होता है)।

च – V. iii. 9

(परि तथा अभि शब्दों से) भी (तसिल् प्रत्यय होता है)।

च — V. iii. 13

(वेद-विषय में सप्तम्यन्त किम् शब्द से विकल्प से ह प्रत्यय) भी (होता है)।

च — V. iii. 18

(सप्तम्यन्त इदम् प्रातिपदिक से दानीम् प्रत्यय) भी (होता है)।

च — V. iii. 19

(काल अर्थ में वर्त्तमान सप्तम्यन्त तत् प्रातिपदिक से दा प्रत्यय) तथा (दानीम् प्रत्यय होते है)।

च — V. iii. 20

उन सप्तम्यन्त इदम् और तत् प्रातिपदिकों से वेदविषय में यथासङ्ख्य करके दा और र्हिल् प्रत्यय होते हैं) तथा (यथाप्राप्त दानीम् प्रत्यय भी होता है)।

च — V. iii. 25

(प्रकारवचन में वर्त्तमान किम् प्रातिपदिक से) भी (थमु प्रत्यय होता है)।

च — V. iii. 26

(हेतु अर्थ में वर्त्तमान) तथा (प्रकारवचन अर्थ में वर्त्तमान किम् प्रातिपदिक से था प्रत्यय होता है, वेदविषय में)।

च — V. iii. 33

(पश्च तथा पश्चा शब्द) भी (वेदविषय में निपातन किये जाते हैं, अस्ताति के अर्थ में)।

च — V. iii. 37

(दिशा, देश तथा काल अर्थों में वर्त्तमान पञ्चम्यन्तवर्जित सप्तमीप्रथमान्त दिशावाची दक्षिण प्रातिपदिक से आहि) तथा (आच् प्रत्यय होते हैं , 'दूरी' वाच्य हो तो)।

च — V. iii. 38

(दिशा, देश तथा काल अर्थों में वर्त्तमान पञ्चम्यन्तवर्जित सप्तमीप्रथमान्त दिशावाची उत्तरशब्द से) भी (आहि तथा आच् प्रत्यय होते है, दूरी वाच्य हो तो)।

च — V. iii. 39

(दिशा, देश तथा काल अर्थों में वर्त्तमान सप्तम्यन्त, पञ्चम्यन्त तथा प्रथमान्त दिशावाची पूर्व, अधर तथा अवर प्रातिपदिकों से असि प्रत्यय होता है), और (प्रत्यय के साथ-साथ इन शब्दों को यथासंख्य करके पुर्, अध् तथा अव् आदेश होते हैं)।

च — V. iii. 40

(सप्तमी, पञ्चमी, प्रथमान्त पूर्व, अधर तथा अवर शब्दों को अस्तात् प्रत्यय परे रहते) भी (यथासंख्य करके पुर्, अध् तथा अव् आदेश होते हैं।

च — V. iii. 43

('द्रव्य का अनेक सङ्ख्याओं में बदलना' अर्थ गम्यमान हो तो) भी (सङ्ख्यावाची प्रातिपदिकों से धा प्रत्यय होता है)।

च — V. iii. 45

(द्वि तथा त्रि सम्बन्धी धा प्रत्यय को) भी (विकल्प से धमुञ् आदेश होता है)।

च —V. iii. 46

(द्वि तथा त्रि शब्द सम्बन्धी धा प्रत्यय को विकल्प से एधाच् आदेश) भी (होता है)।

च — V. iii. 50

('भाग' अर्थ में वर्त्तमान षष्ठ और अष्टम शब्दों से ञ प्रत्यय) तथा (अन् प्रत्यय होते हैं, वेदविषय को छोड़कर)।

च — V. iii. 51

(मान तथा पशु का अङ्ग रूपी षष्ठ और अष्टम प्रातिपदिकों से यथासङ्ख्य करके कन् प्रत्यय तथा प्रत्ययलुक् होते हैं) तथा (यथाप्राप्त अन् और ञ प्रत्यय भी होते हैं)।

च — V. iii. 52

('अकेले' अर्थ में वर्त्तमान एक प्रातिपदिक से आकिनिच् प्रत्यय) तथा (कन् और लुक् होते हैं)।

च — V. iii. 54

('भूतपूर्व' अर्थ में षष्ठीविभक्त्यन्त प्रातिपदिक से रूप्य) और (चरट् प्रत्यय होते हैं)।

च — V. iii. 56

('अत्यन्त प्रकर्ष' अर्थ में तिङन्त से) भी (तमप् प्रत्यय होता है)।

च — V. iii. 61

(प्रशस्य शब्द के स्थान में अजादि अर्थात् इष्ठन्, ईयसुन् प्रत्यय परे रहते ज्य आदेश) भी (होता है)।

च — V. iii. 62

(वृद्ध शब्द के स्थान में) भी (अजादि अर्थात् इष्ठन्, ईयसुन् प्रत्यय परे रहते ज्य आदेश होता है)।

च — V. iii. 72

(ककारान्त अव्यय को अकच् प्रत्यय के साथ साथ दकारादेश) भी (होता है)।

च — V. iii. 77

('नीति' गम्यमान हो तो) भी (उस अनुकम्पा से सम्बद्ध प्रातिपदिक से तथा तिङन्त से यथाविहित प्रत्यय होते हैं)।

च — V. iii. 79

(बहुत अच् वाले मनुष्यनामधेय प्रातिपदिकों से 'अनुकम्पा से युक्त नीति' गम्यमान हो तो घन् और इलच् प्रत्यय होते हैं), तथा (विकल्प से ठच् प्रत्यय होता है)।

च — V. iii. 80

(उपशब्द आदि वाले बह्वच् मनुष्यनामधेय प्रातिपदिक से नीति और अनुकम्पा गम्यमान होने पर अडच्, वुच्) तथा (घन्, इलच् और ठच् प्रत्यय विकल्प से होते हैं, प्राग्देशीय आचार्यों के मत में)।

च — V. iii. 82

(अजिन शब्द अन्तवाले मनुष्यनामधेय प्रातिपदिक से 'अनुमान' गम्यमान होने पर कन् प्रत्यय होता है और उस अजिनान्त शब्द के उत्तरपद का लोप) भी (हो जाता है)।

च — V. iii. 94

(एक प्रातिपदिक से) भी (अपने अपने विषयों में डतरच् तथा डतमच् प्रत्यय होते हैं, प्राचीन आचार्यों के मत में)।

च — V. iii. 97

(इवार्थ गम्यमान हो तो संज्ञा विषय में) भी (कन् प्रत्यय होता है)।

च — V. iii. 99

(जीविकोपार्जन के लिये जो न बेचने योग्य मनुष्य की प्रतिकृति, उसके अभिधेय होने पर) भी (कन् प्रत्यय का लुप् होता है)।

च — V. iii. 100

(देवपथादि प्रातिपदिकों से) भी (इवार्थ प्रकृति अभिधेय होने पर उत्पन्न प्रत्यय का लुप् हो जाता है)।

च — V. iii. 104

(द्रु शब्द से) भी (पात्रत्व अभिधेय होने पर यत् प्रत्यय निपातन किया जाता है)।

च — V. iii. 106

(वह इवार्थ विषय है जिसका, ऐसे समास में वर्त्तमान प्रातिपदिक से) भी (छ प्रत्यय होता है)।

च — V. iv. 1

(सङ्ख्या आदि में है जिसके, ऐसे पाद और शत शब्द अन्तवाले प्रातिपदिकों से वीप्सा गम्यमान हो तो वुन् प्रत्यय होता है, तथा प्रत्यय के साथ साथ पाद और शत के अन्त का लोप) भी (हो जाता है)।

च — V. iv. 2

(दण्ड तथा दान गम्यमान हो तो, पाद तथा शत शब्दान्त सङ्ख्या आदि वाले प्रातिपदिकों से) भी (वुन् प्रत्यय होता है, तथा पाद और शत के अन्त का लोप भी हो जाता है)।

च — V. iv. 5

(अरुस्, मनस्, चक्षुस्, चेतस्, रहस् और रजस् शब्दों से च्वि प्रत्यय भी होता है, और इन प्रकृतियों का अन्तलोप) भी।

च — V. iv. 12

(किम्, एकारान्त, तिङन्त तथा अव्ययों से उत्पन्न जो तरप् प्रत्यय, तदन्त से वेदविषय में अमु) तथा (आमु प्रत्यय होते हैं, द्रव्य का प्रकर्ष न कहना हो तो)।

च — V. iv. 19

(एक शब्द के स्थान में सकृत् आदेश होता है), तथा (सुच् प्रत्यय होता है, 'क्रिया-गणन' अर्थ में)।

च — V. iv. 22

('बहुत' अर्थ को कहने में प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से 'तस्य समूहः' IV. iii.३६ के अधिकार में कहे हुए प्रत्ययों के समान प्रत्यय होते हैं), तथा (मयट् प्रत्यय भी होता है)।

च — V. iv. 25

(पाद और अर्घ प्रातिपदिकों से) भी ('उसके लिये यह' अर्थ में यत् प्रत्यय होता है)।

च — V. iv. 31

(नित्यधर्मरहित वर्ण अर्थ में वर्त्तमान लोहित प्रातिपदिक से) भी (स्वार्थ में कन् प्रत्यय होता है)।

च — V. iv. 33

(अनित्य वर्ण में तथा रङ्ग हुआ अर्थ में वर्त्तमान काल प्रातिपदिक से) भी (कन् प्रत्यय होता है)।

च — V. iv. 38

(प्रज्ञादि प्रातिपदिकों से) भी (स्वार्थ में अण् प्रत्यय होता है)।

च — V. iv. 41

('प्रशंसाविशिष्ट' अर्थ में वर्त्तमान वृक तथा ज्येष्ठ प्रातिपदिकों से यथासङ्ख्य करके तिल् तथा तातिल् प्रत्यय) भी (होते हैं, वेदविषय में)।

च — V. iv. 43

(सङ्ख्यावाची प्रातिपदिकों से तथा एक अर्थ को कहने वाले प्रातिपदिकों से) भी (विकल्प से शस् प्रत्यय होता है, वीप्सा द्योतित हो रही हो तो)।

च — V. iv. 45

(अपादान कारक में) भी (जो पञ्चमी, तदन्त से विकल्प से तसि प्रत्यय होता है, यदि वह अपादान कारक हीय और रुह् सम्बन्धी न हो तो)।

च — V. iv. 47

(हीयमान तथा पाप शब्द के साथ सम्बन्ध है जिन शब्दों का, तदन्त शब्दों से परे) भी (जो तृतीयाविभक्ति, तदन्त से विकल्प से तसि प्रत्यय होता है, यदि वह तृतीया कर्त्ता में न हुई हो तो)।

च — V. iv. 49

('चिकित्सा' गम्यमान हो तो रोगवाची शब्द से परे) भी (जो षष्ठी विभक्ति, तदन्त प्रातिपदिक से विकल्प से तसि प्रत्यय होता है)।

च — V. iv. 53

('अभिव्याप्ति' गम्यमान हो तो कृ, भू तथा अस् धातु के योग में तथा सम्-पूर्वक पद् धातु के योग में) भी (विकल्प से साति प्रत्यय होता है)।

च — V. iv. 55

(देने योग्य वस्तु तदधीनवचन वाच्य हो तो कृ, भू तथा अस् के योग में तथा सम्-पूर्वक पद् के योग में त्रा) तथा (साति प्रत्यय होते हैं)।

च — V. iv. 59

(गुण शब्द अन्त वाले सङ्ख्यावाची प्रातिपदिकों से) भी (कृञ् के योग में कृषि अभिधेय हो तो डाच् प्रत्यय होता है)।

च — V. iv. 60

('बिताना' अर्थ गम्यमान हो तो समय प्रातिपदिक से) भी (डाच् प्रत्यय होता है, कृञ् के योग में)।

च — V. iv. 87

(अहर्, सर्व, एकदेशवाचक शब्द, सङ्ख्यात तथा पुण्य शब्दों से उत्तर तथा सङ्ख्या और अव्यय से उत्तर) भी (जो रात्रिशब्द, तदन्त तत्पुरुष से समासान्त अच् प्रत्यय होता है)।

च — V. iv. 90

(उत्तम और एक शब्दों से परे) भी (तत्पुरुष समास में अहन् शब्द को अह्न आदेश नहीं होता)।

च — V. iv. 95

(ग्राम तथा कौट शब्दों से उत्तर तक्षन् शब्दान्त तत्पुरुष से) भी (समासान्त टच् प्रत्यय होता है)।

च — V. iv. 98

(उत्तर, मृग और पूर्व से उत्तर तथा उपमानवाची शब्दों से उत्तर) भी (जो सक्थि शब्द, तदन्त तत्पुरुष से समासान्त टच् प्रत्यय होता है)।

च — V. iv. 100

(अर्ध शब्द से उत्तर) भी (जो नौ शब्द, तदन्त तत्पुरुष से समासान्त टच् प्रत्यय होता है)।

च — V. iv. 108

(अव्ययीभाव समास में वर्त्तमान अन्न प्रातिपदिक से) भी (समासान्त टच् प्रत्यय होता है)।

च — V. iv. 112

(अव्ययीभाव समास में वर्त्तमान गिरि शब्दान्त प्रातिपदिक से) भी (समासान्त टच् प्रत्यय विकल्प से होता है, सेनक आचार्य के मत में)।

च — V. iv. 117

(अन्तर् तथा बहिस् शब्दों से उत्तर) भी (जो लोमन् शब्द, तदन्त बहुव्रीहि से समासान्त अप् प्रत्यय होता है)।

च — V. iv. 118

(नासिका-शब्दान्त बहुव्रीहि से समासान्त अच् प्रत्यय होता है, सञ्ज्ञाविषय में तथा नासिका शब्द के स्थान में नस आदेश) भी (हो जाता है, यदि वह नासिका शब्द स्थूल शब्द से उत्तर न हो तो)।

च — V. iv. 119

(उपसर्ग से उत्तर) भी (नासिका-शब्दान्त बहुव्रीहि से समासान्त अच् प्रत्यय होता है, तथा नासिका को नस आदेश भी हो जाता है)।

च — V. iv. 128

(द्विदण्डि आदि शब्द) भी (इच्प्रत्ययान्त गण में जैसे पठित हैं, वैसे ही साधु समझने चाहिये)।

च — V. iv. 132

(धनुष् शब्दान्त बहुव्रीहि को) भी (समासान्त अनङ् आदेश होता है)।

च — V. iv. 137

(उपमानवाची शब्दों से उत्तर) भी (गन्ध शब्द को समासान्त इकारादेश हो जाता है)।

च — V. iv. 139

(कुम्भपदी आदि शब्द) भी (कृतसमासान्त-लोप साधु समझने चाहिये)।

च — V. iv. 142

(वेदविषय में) भी (दन्तशब्द को दतृ आदेश समासान्त होता है, बहुव्रीहि समास में)।

च — V. iv. 145

(अग्रशब्दान्त तथा शुद्ध, शुभ्र, वृष और वराह शब्दों से उत्तर) भी (दन्त शब्द को विकल्प से समासान्त दतृ आदेश होता है, बहुव्रीहि समास में)।

च — V. iv. 153

(बहुव्रीहि समास में नदीसञ्ज्ञक तथा ऋकारान्त शब्दों से) भी (समासान्त कप् प्रत्यय होता है)।

च — V. iv. 156

(बहुव्रीहि समास में ईयसुन् अन्त वाले शब्दों से) भी (कप् प्रत्यय नहीं होता)।

च — V. iv. 160

(निष्प्रवाणि शब्द में) भी (कप् का अभाव निपातन किया जाता है)।

च — VI. i. 12

(दाश्वान्, साह्वान्) तथा (मीढ्वान् शब्दों का छन्द तथा भाषा में सामान्य करके निपातन किया जाता है)।

च — VI. i. 16

(ग्रह्, ज्या, वय्, व्यध्, वश्, व्यच, ओव्रश्चू, प्रच्छ्, भ्रस्ज् — इन धातुओं को सम्प्रसारण हो जाता है, ङित्) तथा (कित् प्रत्यय के परे रहते)।

च — VI. i. 25

(प्रति से उत्तर) भी (श्यैङ् धातु को सम्प्रसारण हो जाता है, निष्ठा के परे रहते)।

च — VI. i. 29

(लिट् तथा यङ् के परे रहते) भी (ओप्यायी धातु को पी आदेश होता है)।

च — VI. i. 31

(सन् परे हो या चङ् परे हो जिस णिच् के, ऐसे णि के परे रहते) भी (टुओश्वि धातु को विकल्प से सम्प्रसारण हो जाता है)।

च — VI. i. 32

(सन्परक, चङ्परक णि के परे रहते ह्वेञ् धातु को सम्प्रसारण हो जाता है, तथा अभ्यस्त का निमित्त जो ह्वेञ् धातु, उसको) भी (सम्प्रसारण हो जाता है)।

च — VI. i. 38

(इस वय् के यकार को कित् लिट् के परे रहते विकल्प करके वकारादेश) भी (हो जाता है)।

च — VI.i. 40

(ल्यप् के परे रहते) भी (वेञ् धातु को सम्प्रसारण नहीं होता है)।

च — VI.i. 41

(ल्यप् परे रहते ज्या धातु को) भी (सम्प्रसारण नहीं होता है।

च — VI. i. 42

(व्येञ् धातु को) भी (ल्यप् परे रहते सम्प्रसारण नहीं होता है)।

च — VI. i. 49

(मीञ्, डुमिञ् तथा दीङ् धातुओं को ल्यप् परे रहते) तथा (एच् के विषय में भी उपदेश अवस्था में ही आत्व हो जाता है)।

च — VI. i. 58

(उपदेश में जो अनुदात्त) तथा (ऋकार उपधावाली धातु, उसको अम् आगम विकल्प से होता है; झलादि प्रत्यय परे रहते)।

च — VI. i. 60

(यकारादि तद्धित के परे रहते) भी (शिरस् को शीर्षन् आदेश हो जाता है)।

च — VI. i. 71

(छकार परे रहते) भी (ह्रस्वान्त को तुक् का आगम होता है)।

च — VI. i. 72

(आङ् तथा माङ् को) भी (छकार परे रहते तुक् का आगम होता है, संहिता के विषय में)।

च — VI. i. 80

(भय्य तथा प्रवय्य शब्द) भी (निपातन किये जाते हैं, वेद-विषय में)।

च — VI. i. 82

('एकः पूर्वपरयोः' के अधिकार में जो पूर्वपर को एकादेश कहा है, वह एकादेश, पूर्व से कार्य पड़ने पर पूर्व के अन्त के समान माना जाये), तथा (पर से कार्य करने पर पर के आदि के समान माना जाये)।

च — VI. i. 87

(आट् से उत्तर) भी (जो अच् तथा अच् से पूर्व जो आट्, इन दोनों पूर्व पर के स्थान में वृद्धि एकादेश होता है, संहिता के विषय में)।

च — VI. i. 92

(अवर्ण से उत्तर ओम् तथा आङ् परे रहते) भी (पूर्व पर के स्थान में पररूप एकादेश होता है)।

च — VI. i. 101

(दीर्घ वर्ण से उत्तर जस्) तथा चकार से, इच् परे रहते (पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश नहीं होता है)।

च — VI. i. 104

(सम्प्रसारण वर्ण से उत्तर अच् परे हो तो) भी (पूर्व पर के स्थान में पूर्वरूप एकादेश होता है)।

च — VI. i. 106

(एङ् से उत्तर ङसि तथा ङस् का अकार हो तो) भी (पूर्व पर के स्थान में पूर्वरूप एकादेश होता है, संहिता के विषय में)।

च — VI. i. 110

(हश् प्रत्याहार परे रहते) भी (अकार से उत्तर रु के रेफ को उकार आदेश होता है, संहिता के विषय में)।

च — VI. i. 112

(अव्यात्, अवद्यात्, अवक्रमु, अव्रत, अयम्, अवन्तु, अवस्यु — इन शब्दों में जो अकार, उसके परे रहते पाद के मध्य में जो एङ्, उसको) भी (प्रकृतिभाव हो जाता है)।

च — VI. i. 115

(यजुर्वेदविषय में अङ्ग शब्द में जो एङ्, उसको अकार के परे रहते प्रकृतिभाव हो जाता है), तथा (उस अङ्ग शब्द के आदि में जो अकार, उसके परे रहते पूर्व एङ् को प्रकृतिभाव होता है)।

च — VI. i. 116

(यजुर्वेदविषय में कवर्ग, धकारपरक अनुदात्त अकार के परे रहते) भी (एङ् को प्रकृतिभाव होता है)।

च — VI. i. 117

(अवपथाः शब्द में) भी (जो अनुदात्त अकार, उसके परे रहते यजुर्वेदविषय में एङ् को प्रकृतिभाव होता है)।

च — VI. i. 120

(इन्द्र शब्द में स्थित अच् के परे रहते) भी (गो को अवङ् आदेश होता है)।

च — VI. i. 123

(असवर्ण अच् परे हो तो इक् को शाकल्य आचार्य के मत में प्रकृतिभाव हो जाता है) , तथा (उस इक् के स्थान में ह्रस्व भी हो जाता है)।

च — VI. i. 133

(समुदाय अर्थ में) भी (कृ धातु परे रहते सम् तथा परि से उत्तर ककार से पूर्व सुट् का आगम होता है, संहिता के विषय में)।

च — VI. i. 136

(उप) तथा (प्रति उपसर्ग से उत्तर 'कृ विक्षेपे' धातु के परे रहते हिंसा के विषय में ककार से पूर्व सुट् आगम होता है, संहिता के विषय में)।

च — VI. i. 147

(प्रतिष्कश शब्द में प्रतिपूर्वक कश् धातु को सुट् आगम) तथा (उसी सुट् के सकार को षत्व का निपातन किया जाता है)।

च — VI. i. 151

(पारस्कर इत्यादि शब्दों में) भी (सुट् आगम निपातन किया जाता है, सञ्ज्ञा के विषय में)।

च — VI. i. 154

(उञ्छादि शब्दों को) भी (अन्तोदात्त हो जाता है)।

च — VI. i. 155

(जिस अनुदात्त के परे रहते उदात्त का लोप होता है, उस अनुदात्त को) भी (आदि उदात्त हो जाता है)।

च — VI. i. 178

(नृ से परे) भी (झलादि विभक्ति विकल्प से उदात्त नहीं होती)।

च — VI. i. 184

(जिसमें उदात्त अविद्यमान है, ऐसे ल सार्वधातुक के परे रहते) भी (अभ्यस्त सञ्ज्ञकों के आदि को उदात्त होता है)।

च — VI. i. 190

(सेट् थल् परे रहते इट् को विकल्प से उदात्त होता है, एवं) चकार से (आदि को, अन्त को विकल्प से होता है।

च — VI. i. 192

(आमन्त्रित सञ्ज्ञक के) भी (आदि को उदात्त होता है।

च — VI. i. 194

('तवै'-प्रत्ययान्त शब्द का आद्य स्वर भी उदात्त हो जाता है, और अन्त्य स्वर) भी।

च — VI. i. 197

(वृषादि शब्दों के) भी (आदि को उदात्त होता है।

च — VI. i. 199

(दो अचों वाले निष्ठान्त शब्दों के) भी (आदि को उदात्त होता है, सञ्ज्ञा विषय में, आकार को छोड़कर)।

च — VI. i. 203

(जुष्ट तथा अर्पित शब्दों को) भी (वेद -विषय में विकल्प से आद्युदात्त होता है)।

च — VI. i. 206

(ङे विभक्ति परे रहते) भी (युष्मद्, अस्मद् को आद्युदात्त होता है)।

च — VI. ii. 16

(प्रीति गम्यमान हो रही हो, तो सुख तथा प्रिय शब्द उत्तरपद रहते) भी (तत्पुरुष समास में पूर्वपद को प्रकृतिस्वर हो जाता है)।

च — VI. ii. 26

(पूर्वपदस्थित कुमार शब्द को) भी (कर्मधारय समास में प्रकृतिस्वर होता है)।

च — VI. ii. 31

(द्विगु समास में दिष्टि तथा वितस्ति शब्दों के परे रहते) भी (विकल्प करके पूर्वपद को प्रकृतिस्वर होता है)।

च — VI. ii. 36

(आचार्य है अप्रधान जिसमें, ऐसे शिष्यवाची शब्दों का जो द्वन्द्व, उनके पूर्वपद को) भी (प्रकृतिस्वर होता है)।

च — VI. ii. 37

(कार्त्तकौजपादि जो द्वन्द्व समास वाले शब्द, उनके पूर्वपद को) भी (प्रकृतिस्वर हो जाता है)।

च — VI. ii. 39

(वैश्वदेव शब्द उत्तरपद रहते पूर्वपदस्थित क्षुल्लक शब्द) तथा (महान् शब्द को प्रकृतिस्वर होता है)।

च — VI. ii. 42

(कुरुगार्हपत, रिक्तगुरु, असूतजरती, अश्लीलदृढरूपा, पारेवडवा, तैतिलकद्रू, पण्यकम्बल — इन सात समास किये हुए शब्दों के) तथा (दासीभारादि शब्दों के पूर्वपद को प्रकृतिस्वर होता है)।

च — VI. ii. 45

(क्तान्त शब्द उत्तरपद रहते) भी (चतुर्थ्यन्त पूर्वपद को प्रकृतिस्वर हो जाता है)।

च — VI. ii. 50

(तु शब्द को छोड़कर तकारादि एवं नकार इत्सञ्ज्ञक कृत् के परे रहते) भी (अव्यवहित पूर्वपद गति को प्रकृतिस्वर होता है)।

च — VI. ii. 51

(तवै प्रत्यय को अन्त उदात्त) भी (होता है, तथा अव्यवहित पूर्वपद गति को भी प्रकृतिस्वर एक साथ होता है)।

च — VI. ii. 51

(तवै प्रत्यय को अन्त उदात्त भी होता है), तथा (अनन्तर पूर्वपद गति को भी प्रकृतिस्वर एक साथ होता है)।

च — VI. ii. 53

(वप्रत्ययान्त अञ्चु धातु के परे रहते नि तथा अधि को) भी (प्रकृतिस्वर होता है)।

च — VI. ii.59

(ब्राह्मण तथा कुमार शब्द उपपद रहते कर्मधारय समास में पूर्वपद राजन् शब्द को) भी (विकल्प से प्रकृतिस्वर होता है)।

च — VI. ii. 63

(प्रशंसा गम्यमान हो तो शिल्पिवाची शब्द उत्तरपद रहते राजन् पूर्वपद वाले शब्द को) भी (विकल्प से प्रकृतिस्वर होता है)।

च — VI. ii. 65

(युक्तवाची समास में) भी (पूर्वपद को आद्युदात्त होता है)।

च — VI. ii. 68

(शिल्पिवाची शब्द उत्तरपद रहते पाप शब्द को) भी (विकल्प से आद्युदात्त होता है)।

च — VI. ii. 76

(शिल्पिवाची समास में) भी (अणन्त उत्तरपद रहते पूर्वपद को आद्युदात्त होता है, यदि वह अण् कृञ् से परे न हो)।

च — VI. ii. 77

(सञ्ज्ञाविषय में) भी (अणन्त उत्तरपद रहते पूर्वपद को आद्युदात्त होता है, यदि वह अण् कृञ् से परे न हो तो)।

च — VI. ii. 81

(युक्तारोही आदि समस्त शब्दों को) भी (आद्युदात्त होता है)।

च — VI. ii. 85

(घोषादि शब्दों के उत्तरपद रहते) भी (पूर्वपद को आद्युदात्त होता है)।

च — VI. ii. 88

(प्रस्थ शब्द उत्तरपद रहते पूर्वपद मालादि शब्दों को) भी (आद्युदात्त होता है)।

च — VI. ii. 90

(अर्म शब्द उत्तरपद रहते) भी (अवर्णान्त जो दो अचों वाले तथा तीन अचों वाले महत्, नव से भिन्न पूर्वपद, उन्हें आद्युदात्त होता है)।

च — VI. ii. 100

(अरिष्ट तथा गौड शब्द पूर्व हैं जिस समास में, उसके पूर्वपद को) भी (पुर शब्द उत्तरपद रहते अन्तोदात्त होता है)।

च — VI. ii. 104

(आचार्य है अप्रधान जिसका, ऐसा जो अन्तेवासी, उसको कहने वाले शब्द के परे रहते) भी (दिशा अर्थ में प्रयुक्त होने वाले पूर्वपद शब्दों को अन्तोदात्त होता है)।

च — VI. ii. 105

('उत्तरपदस्य' VII. iii. 10 सूत्र के अधिकार में कही जो वृद्धि, उस वृद्धि किये हुये शब्द के परे रहते सर्व शब्द) तथा (दिग्वाची शब्द पूर्वपद को अन्तोदात्त होता है)।

च — VI. ii. 113

(सञ्ज्ञा तथा उपमा विषय में वर्त्तमान जो बहुव्रीहि, वहाँ) भी (उत्तरपद कर्ण शब्द को आद्युदात्त होता है)।

च — VI. ii. 114

(सञ्ज्ञा तथा औपम्य विषय में वर्त्तमान बहुव्रीहि समास में कण्ठ, पृष्ठ, ग्रीवा, जङ्घा इन उत्तरपद शब्दों को) भी (आद्युदात्त होता है)।

च — VI. ii. 115

(अवस्था गम्यमान होने पर) तथा (सञ्ज्ञा एवं उपमा विषय में बहुव्रीहि समास को आद्युदात्त होता है; शृङ्ग उत्तरपद रहते)।

च — VI. ii. 118

(सु से उत्तर क्रत्वादि शब्दों को) भी (आद्युदात्त होता है)।

च — VI. ii. 120

(बहुव्रीहि समास में सु से उत्तर वीर तथा वीर्य शब्दों को) भी (वेद-विषय में आद्युदात्त होता है)।

च — VI. ii. 124

(नपुंसकलिङ्ग कन्थान्त तत्पुरुष समास में) भी (उत्तरपद आद्युदात्त होता है)।

च – VI. ii. 131

(कर्मधारयवर्जित तत्पुरुष समास में उत्तरपद वर्ग्यादि शब्दों को) भी (आद्युदात्त होता है)।

च – VI. ii. 135

(अप्राणिवाची षष्ठ्यन्त शब्द से उत्तर पूर्वोक्त छः काण्डादि उत्तरपद शब्दों का) भी (आद्युदात्त होता है)।

च – VI. ii. 141

(देवतावाची शब्दों के द्वन्द्व समास में) भी (एक साथ दोनों अर्थात् पूर्व और उत्तरपद को प्रकृतिस्वर होता है)।

च – VI. ii. 147

(प्रवृद्धादियों के क्तान्त उत्तरपद को) भी (अन्तोदात्त होता है)।

च – VI. ii. 149

('इस प्रकार को प्राप्त हुये के द्वारा किया गया'— इस अर्थ में जो समास, वहाँ) भी (क्तान्त उत्तरपद को कारक से परे अन्तोदात्त होता है)।

च – VI. ii. 154

(तृतीयान्त से परे उपसर्गरहित मिश्र शब्द उत्तरपद को) भी (अन्तोदात्त होता है, असन्धि गम्यमान हो तो)।

च – VI. ii. 156

(गुणप्रतिषेध अर्थ में नञ् से उत्तर अतदर्थ में वर्त्तमान जो य तथा यत् तद्धित प्रत्यय, तदन्त उत्तरपद को) भी (अन्तोदात्त होता है)।

च – VI. ii. 158

(नञ् से उत्तर आक्रोश गम्यमान होने पर) भी (अच्प्रत्ययान्त तथा कप्रत्ययान्त उत्तरपद को अन्तोदात्त होता है)।

च – VI. ii. 160

(नञ् से उत्तर कृत्यसञ्ज्ञक उक, इष्णुच् प्रत्ययान्त तथा चार्वादिगणपठित उत्तरपद शब्दों को) भी (अन्तोदात्त होता है)।

च – VI. ii. 180

(उपसर्ग से उत्तर उत्तरपद अन्त शब्द को) भी (अन्तोदात्त होता है) ।

च – VI. ii. 184

(निरुदकादिगणपठित शब्दों को) भी (अन्तोदात्त होता है)।

च – VI. ii. 186

(अप उपसर्ग से उत्तर) भी (उत्तरपदस्थित मुख शब्द को अन्तोदात्त होता है)।

च – VI. ii. 187

(अप उपसर्ग से उत्तर स्फिग, पूत, वीणा, अञ्जस्, अध्वन्, कुक्षि, तथा हल के वाची शब्दों को एवं नाम शब्द को) भी (अन्तोदात्त होता है)।

च – VI. ii. 190

(अनु उपसर्ग से उत्तर अन्वादिष्टवाची पुरुष शब्द को) भी (अन्तोदात्त होता है)।

च – VI. ii. 198

(क्र अन्त में नहीं है, जिसके ऐसे अक्रान्त शब्द से उत्तर सक्थ शब्द को) भी (विकल्प से अन्तोदात्त होता है, बहुव्रीहि समास में)।

च – VI. iii. 5

(आज्ञायी शब्द के उत्तरपद रहते) भी (मनस् शब्द से उत्तर तृतीया का अलुक् होता है)।

च – VI. iii. 6

(आत्मन् शब्द से परे) भी (तृतीया का अलुक् होता है, उत्तरपद परे रहते)।

च – VI. iii. 7

(जिस सञ्ज्ञा से वैयाकरण व्यवहार करते हैं, उसको कहने में पर शब्द) तथा चकार से आत्मन् शब्द से उत्तर (भी चतुर्थी विभक्ति का अलुक् होता है)।

च – VI. iii. 9

(प्राच्यदेशों के जो करों के नाम वाले शब्द, उनमें) भी (हलादि शब्द के परे रहते हलन्त तथा अदन्त शब्दों से उत्तर सप्तमी विभक्ति का अलुक् होता है)।

च – VI. iii. 12

(बन्ध शब्द उत्तरपद रहते) भी (हलन्त तथा अदन्त शब्द से उत्तर सप्तमी का विकल्प करके अलुक् होता है)।

च – VI. iii. 18

(इन्नन्त, सिद्ध तथा बध्नाति उत्तरपद रहते) भी (सप्तमी का अलुक् नहीं होता है)।

च – VI. iii. 19

(स्थ शब्द के उत्तरपद रहते) भी (भाषा-विषय में सप्तमी का अलुक् नहीं होता है)।

च – VI. iii. 25

(देवतावाची शब्दों के द्वन्द्व समास में) भी (उत्तरपद परे रहते पूर्वपद को आनङ् आदेश होता है)।

च – VI. iii. 29

(पृथिवी शब्द उत्तरपद रहते देवताद्वन्द्व में दिव् शब्द को दिवस् आदेश होता है), तथा चकार से (द्यावा आदेश भी होता है)।

च – VI. iii. 32

(पितरामातरा यह शब्द) भी (वेदविषय में निपातन किया जाता है)।

च – VI. iii. 35

(क्यङ् तथा मानिन् परे रहते) भी (ऊङ्वर्जित भाषित-पुंस्क स्त्रीशब्द को पुंवद्भाव हो जाता है)।

च – VI. iii. 37

(सञ्ज्ञावाची तथा पूरणीप्रत्ययान्त भाषितपुंस्क स्त्रीशब्दों को) भी (पुंवद्भाव नहीं होता)।

च – VI. iii. 39

(स्वाङ्गवाची शब्द से उत्तर) भी (ईकारान्त स्त्री शब्द को पुंवद्भाव नहीं होता)।

च – VI. iii. 40

(जातिवाची स्त्रीलिङ्ग शब्द को) भी (पुंवद्भाव नहीं होता)।

च – VI. iii. 44

(उगित् शब्द से परे जो नदी, तदन्त शब्द को) भी (विकल्प करके ह्रस्व होता है; घ, रूप, कल्पप्, चेलट्, बुव, गोत्र, मत तथा हत शब्दों के परे रहते)।

च – VI. iii. 53

(हिम्, काषिन्, हति — इनके उत्तरपद रहते) भी (पाद शब्द को पद् आदेश होता है)।

च – VI. iii. 57

(पेषं, वास, वाहन तथा धि शब्द के उत्तरपद रहते) भी (उदक शब्द को उद आदेश होता है)।

च – VI. iii. 59

(मन्थ, ओदन, सक्तु, बिन्दु, वज्र, भार, हार, वीवध, गाह — इन शब्दों के उत्तरपद रहते) भी (उदक शब्द को उद आदेश विकल्प करके होता है)।

च – VI. iii. 61

(एक शब्द को तद्धित) तथा (उत्तरपद परे रहते ह्रस्व होता है)।

च – VI. iii. 63

(त्व प्रत्यय परे रहते) भी (ङ्यन्त तथा आबन्त शब्दों को बहुल करके ह्रस्व होता है)।

च – VI. iii. 67

(खिदन्त उत्तरपद रहते इजन्त एकाच् को अम् आगम होता है, और वह अम् प्रत्यय के समान) भी (माना जाता है)।

च – VI. iii. 68

(वाचंयम तथा पुरन्दर शब्दों में) भी (पूर्वपदों को अम् आगम निपातन किया जाता है)।

च – VI. iii. 75

(एक है आदि में जिसके, ऐसे नञ् को) भी (उत्तरपद परे रहते प्रकृतिभाव होता है, तथा एक शब्द को आदुक् का आगम होता है)।

च – VI. iii. 75

(एक है आदि में जिसके, ऐसे नञ् को भी उत्तरपद परे रहते प्रकृतिभाव होता है), तथा (एक शब्द को आदुक् का आगम होता है)।

च – VI. iii. 78

(ग्रन्थ के अन्त एवं अधिक अर्थ में वर्त्तमान सह शब्द को) भी (उत्तरपद परे रहते स आदेश होता है)।

च – VI. iii. 79

(अप्रधान अनुमेय के उत्तरपद रहते) भी (सह को स आदेश होता है)।

च – VI. iii. 80

(अव्ययीभाव समास में) भी (अकालवाची शब्दों के उत्तरपद रहते सह को स आदेश होता है)।

च — VI. iii. 91

(विष्वग् एवं देव शब्दों के) तथा (सर्वनाम शब्दों के टिभाग को अद्रि आदेश होता है, वप्रत्ययान्त अञ्चु धातु के परे रहते)।

च — VI. iii. 101

(रथ तथा वद शब्द उत्तरपद हो तो) भी (कु को कत् आदेश होता है)।

च — VI. iii. 102

(तृण शब्द उत्तरपद हो तो) भी (कु को कत् आदेश होता है, जाति अभिधेय होने पर)।

च — VI. iii. 106

(उष्ण शब्द उत्तरपद रहते कु शब्द को कव आदेश) भी (होता है, एवं विकल्प से का आदेश भी होता है)।

च — VI. iii. 107

(पथिन् शब्द उत्तरपद रहते) भी (वेद विषय में कु को 'कव' तथा 'का' आदेश विकल्प करके होते हैं)।

च — VI. iii. 119

(शरादि शब्दों को) भी (सञ्ज्ञा-विषय में मतुप् परे रहते दीर्घ होता है)।

च — VI. iii. 125

(वेद -विषय में) भी (अष्टन् शब्द को दीर्घ होता है, उत्तरपद परे रहते)।

च — VI. iii. 129

(मित्र शब्द उत्तरपद रहते) भी (ऋषि अभिधेय होने पर विश्व शब्द को दीर्घ हो जाता है)।

च — VI. iii. 131

(मन्त्र-विषय में प्रथमा से भिन्न विभक्ति के परे रहते ओषधि शब्द को) भी (दीर्घ हो जाता है)।

च — VI. iii. 135

(ऋचा-विषय में निपात को) भी (दीर्घ हो जाता है)।

च — VI. iv. 6

(नृ अङ्ग को) भी (नाम् परे रहते वेद-विषय में दोनों प्रकार से अर्थात् दीर्घ एवं अदीर्घ देखा जाता है)।

च — VI. iv. 8

(सम्बुद्धिभिन्न सर्वनामस्थान के परे रहते) भी (नकारान्त अङ्ग की उपधा को दीर्घ हो जाता है)।

च — VI. iv. 13

(सम्बुद्धिभिन्न सु विभक्ति के परे रहते) भी (इन्, हन्, पूषन् तथा अर्यमन् अङ्गों की उपधा को दीर्घ होता है)।

च — VI. iv. 14

(धातु-भिन्न अतु तथा अस् अन्तवाले अङ्ग की उपधा को) भी (दीर्घ होता है, सम्बुद्धिभिन्न सु विभक्ति परे रहते)।

च — VI. iv. 18

(क्रम् अङ्ग की उपधा को) भी (झलादि क्त्वा प्रत्यय परे रहते विकल्प से दीर्घ होता है)।

च — VI. iv. 19

(च्छ् और व् के स्थान में यथासङ्ख्य करके श् और ऊठ् आदेश होते हैं, अनुनासिकादि प्रत्यय परे रहते) तथा (क्वि और झलादि कित्, ङित् प्रत्ययों के परे रहते)।

च — VI. iv. 20

(ज्वर्, त्वर्, स्रिवि, अव्, मव् — इन अङ्गों के वकार) तथा (उपधा के स्थान में ऊठ् आदेश होता है; क्वि) तथा (झलादि एवं अनुनासिकादि प्रत्ययों के परे रहते)।

च — VI. iv. 26

(रञ्ज् अङ्ग की उपधा के नकार का) भी (लोप होता है, शप् परे रहते)।

च — VI. iv. 27

(भाववाची तथा करणवाची घञ् के परे रहते) भी (रञ्ज् धातु की उपधा के नकार का लोप होता है)।

च — VI. iv. 33

(भञ्ज् अंङ्ग के नकार का लोप) भी (विकल्प से होता है, चिण् प्रत्यय परे रहते)।

च — VI. iv. 39

(क्तिच् परे रहते अनुदात्तोपदेश, वनति तथा तनोति आदि अङ्गों के अनुनासिक का लोप) तथा (दीर्घ नहीं होता)।

च — VI. iv. 45

(क्तिच् प्रत्यय परे रहते सन् अङ्ग को आकारादेश हो जाता है) तथा (विकल्प से इसका लोप भी होता है)।

च — VI. iv. 62

(भाव तथा कर्मविषयक स्य, सिच्, सीयुट् और तास् के परे रहते उपदेश में अजन्त धातुओं तथा हन्, ग्रह् एवं दृश् धातुओं को चिण् के समान विकल्प से कार्य होता है), तथा (इट् आगम भी होता है)।

च — VI. iv. 64

(इडादि आर्धधातुक) तथा (अजादि प्रत्ययों के परे रहते आकारान्त अङ्ग का लोप होता है)।

च — VI. iv. 84

(वर्षाभू इस अङ्ग को) भी (अजादि सुप् परे रहते यणादेश होता है)।

च — VI. iv. 98

(इस्, मन्, त्रन् तथा क्वि प्रत्ययों के परे रहते) भी (छादि अङ्ग की उपधा को ह्रस्व होता है)।

च — VI. iv. 100

(घस् तथा भस् अङ्ग की उपधा का वेद-विषय में लोप होता है; हलादि) तथा (अजादि कित्, ङित् प्रत्यय परे रहते)।

च — VI. iv. 103

(अङित् हि को) भी (धि आदेश होता है, वेद-विषय में)।

च — VI. iv. 106

(संयोग पूर्व में नहीं है जिससे ऐसा जो उकार, तदन्त जो प्रत्यय, तदन्त अङ्ग से उत्तर) भी (हि का लुक् हो जाता है)।

च — VI. iv. 107

(असंयोगपूर्व जो उकार, तदन्त इस प्रत्यय का विकल्प से लोप) भी (होता है, मकारादि तथा वकारादि प्रत्ययों के परे रहते)।

च — VI. iv. 109

(यकारादि प्रत्यय परे रहते) भी (कु अङ्ग से उत्तर उकार प्रत्यय का नित्य ही लोप होता है)।

च — VI. iv. 116

('ओहाक् त्यागे' अङ्ग को) भी (इकारादेश विकल्प से होता है; हलादि कित्, ङित् सार्वधातुक परे रहते)।

च — VI. iv. 117

(ओहाक् अङ्ग को विकल्प से आकारादेश होता है) तथा (इकार आदेश भी, हि के परे रहते)।

च — VI. iv. 119

(घु-सञ्ज्ञक अङ्ग एवं अस् को एकारादेश) तथा (अभ्यास का लोप होता है; कित्, ङित् परे रहते)।

च — VI. iv. 121

(सेट् थल् परे रहते) भी (अनादेशादि अङ्ग के दो असहाय हलों के मध्य में वर्त्तमान जो अकार, उसके स्थान में यकारादेश तथा अभ्यास का लोप होता है)।

च — VI. iv. 122

(तॄ, फल, भज, त्रप — इन अङ्गों के अकार के स्थान में) भी (एकारादेश तथा अभ्यासलोप होता है; कित्, ङित्, लिट् तथा सेट् थल् परे रहते)।

च — VI. iv. 125

(फण् आदि सात धातुओं के अवर्ण के स्थान में) भी (विकल्प से एत्त्व तथा अभ्यासलोप होता है; कित्, ङित्, लिट् तथा सेट् थल् परे रहते)।

च — VI. iv. 148

(भसञ्ज्ञक इवर्णान्त तथा अवर्णान्त अङ्ग का लोप होता है; ईकार) तथा (तद्धित के परे रहते)।

च — VI. iv. 151

(हल् से उत्तर भसञ्ज्ञक अङ्ग के अपत्यसम्बन्धी यकार का) भी (अनाकारादि तद्धित परे रहते लोप होता है)।

च — VI. iv. 152

(हल् से उत्तर अङ्ग के अपत्य-सम्बन्धी यकार का क्य तथा च्वि परे रहते) भी (लोप होता है)।

च — VI. iv. 156

(स्थूल, दूर, युव, ह्रस्व, क्षिप्र, क्षुद्र — इन अङ्गों का पर जो यणादि भाग, उसका लोप होता है; इष्ठन्, इमनिच् और ईयसुन् परे रहते) तथा (उस यणादि से पूर्व को गुण होता है)।

च — VI. iv. 158

(बहु शब्द से उत्तर इष्ठन्, इमनिच् तथा ईयसुन् का लोप होता है, और उस बहु के स्थान में भू आदेश) भी (होता है)।

च — VI. iv. 159
(बहु शब्द से उत्तर इष्ठन् को यिट् आगम होता है) तथा (बहु शब्द को भू आदेश भी होता है)।

च — VI. iv. 165
(गाथिन्, विदथिन्, केशिन्, गणिन्, पणिन्— इन अङ्गों को) भी (अण् परे रहते प्रकृतिभाव हो जाता है)।

च — VI. iv. 166
(संयोग आदि में है, जिस 'इन्' के, उसको) भी (अण् परे रहते प्रकृतिभाव हो जाता है)।

च — VI. iv. 168
(भाव तथा कर्म से भिन्न अर्थ में वर्त्तमान यकारादि तद्धित के परे रहते) भी (अन् अन्त वाले भसञ्ज्ञक अङ्ग को प्रकृतिभाव हो जाता है)।

च — VII. i. 19
(नपुंसक अङ्ग से उत्तर) भी (औङ्= औ तथा औट् के स्थान में शी आदेश होता है)।

च — VII. i. 32
(युष्मद्, अस्मद् अङ्ग से उत्तर पञ्चमी विभक्ति के एक-वचन के स्थान में) भी (अत् आदेश होता है)।

च — VII. i. 43
(वेद-विषय में 'यजध्वैनम्' यह शब्द) भी (निपातन किया जाता है)।

च — VII. i. 45
(त के स्थान में तप्, तनप्, तन, थन आदेश) भी (होते हैं, वेद-विषय में)।

च — VII. i. 48
(वेद-विषय में 'इष्ट्वीनम्' यह शब्द) भी (निपातन किया जाता है)।

च — VII. i. 49
(स्नात्वी इत्यादि शब्द) भी (वेद-विषय में निपातन किये जाते हैं)।

च — VIII. i. 51
(पूङ -धातु से उत्तर) भी (त्क्वा तथा निण्ठा को इट् आगम विकल्प से होता है।

च — VII. i. 55
(षट्-सञ्ज्ञक तथा चतुर् शब्द से उत्तर) भी (आम् को नुट् का आगम होता है)।

च — VII. i. 64
(शप् तथा लिट्वर्जित अजादि प्रत्ययों के परे रहते 'डुल-भष् प्राप्तौ' अङ्ग को) भी (नुम् आगम होता है)।

च — VII. i. 77
(द्विवचन विभक्ति परे रहते वेद-विषय में अस्थि, दधि, सक्थि अङ्गों को ईकारादेश होता है), और (वह उदात्त होता है)।

च — VII. i. 94
(ऋकारान्त अङ्ग तथा उशनस्, पुरुदंसस्, अनेहस् अङ्गों को) भी (सम्बुद्धि-भिन्न सु परे रहते अनङ् आदेश होता है)।

च — VII. i. 96
(स्त्रीलिङ्ग में वर्त्तमान क्रोष्टु शब्द को) भी (तृजन्त शब्द के समान अतिदेश हो जाता है।

च — VII. i. 101
(धातु अङ्ग की उपधा ऋकार के स्थान में) भी (इकारादेश होता है)।

च — VII. ii. 9
(ति, तु, त्र, थ, सि, सु, सर, क, स – इन कृत्सञ्ज्ञक प्रत्ययों के परे रहते) भी (इट् आगम नहीं होता)।

च — VII. ii. 12
(ग्रह, गुह) तथा (उगन्त अङ्गों को सन् प्रत्यय परे रहते इट् का आगम नहीं होता)।

च — VII. ii. 16
(आकार-इत्सञ्ज्ञक धातुओं को) भी (निष्ठा परे रहते इट् आगम नहीं होता)।

च — VII. ii. 25
(अभि उपसर्ग से उत्तर) भी (सन्निकट अर्थ में अर्द् धातु से निष्ठा परे रहते इट् आगम नहीं होता)।

च — VII. ii. 30
(अपचित शब्द) भी (विकल्प से निपातन किया जाता है)।

च — VII. ii. 32
(वेद-विषय में अपरिह्वृताः शब्द) भी (बहुवचनान्त निपातन किया जाता है)।

च — VII. ii. 34
(ग्रसित, स्कभित, स्तभित, उत्तभित, चत्त, विकस्त, विशस्तृ, शंस्तृ, शास्तृ, तरुतृ, तरूतृ, वरुतृ, वरूतृ, वरूत्रीः, उज्ज्वलिति, क्षरिति, क्षमिति, वमिति, अमिति — ये शब्द) भी (वेदविषय में निपातित हैं)।

च — VII. ii. 40
(परस्मैपदपरक सिच् परे रहते) भी (वृ तथा ऋकारान्त धातुओं से उत्तर इट् को दीर्घ नहीं होता)।

च — VII. ii. 43
(संयोग है आदि में जिसके, ऐसे ऋकारान्त धातु से उत्तर) भी (आत्मनेपदपरक लिङ् सिच् को विकल्प से इट् आगम होता है)।

च — VII. ii. 45
(रधादि धातुओं से उत्तर) भी (वलादि आर्धधातुक को विकल्प से इट् आगम होता है)।

च — VII. ii. 51
(पूङ् धातु से उत्तर) भी (क्त्वा तथा निष्ठा को इट् आगम विकल्प से होता है)।

च — VII. ii. 60
('कृपू सामर्थ्ये' धातु से उत्तर तास्) तथा (सकारादि सार्वधातुक को इट् आगम नहीं होता, परस्मैपद परे रहते)।

च — VII. ii. 73
(यम, रमु, णम तथा आकारान्त अङ्ग को सक् आगम होता है,) तथा (सिच् को परस्मैपद परे रहते इट् आगम होता है)।

च — VII. ii. 75
(कृ इत्यादि पाँच धातुओं से उत्तर) भी (सन् को इट् आगम होता है)।

च — VII. ii. 78
(ईड तथा जन् धातु से उत्तर ध्व) तथा (से सार्वधातुक को इट् आगम होता है)।

च — VII. ii. 87
(द्वितीया विभक्ति के परे रहते) भी (युष्मद् तथा अस्मद् अङ्ग को आकारादेश हो जाता है)।

च — VII. ii. 88
(प्रथमा विभक्ति के द्विवचन के परे रहते) भी (भाषाविषय में युष्मद्, अस्मद् को आकारादेश होता है)।

च — VII. ii. 98
(प्रत्यय तथा उत्तरपद परे रहते) भी (एकत्व अर्थ में वर्त्तमान युष्मद्, अस्मद् अङ्ग के मपर्यन्त अंश को क्रमशः त्व, म आदेश होते हैं)।

च — VII. ii. 107
(अदस् अङ्ग को 'औ' आदेश) तथा (सु का लोप होता है)।

च — VII. ii. 109
(इदम् के दकार के स्थान में) भी (यकार आदेश होता है, विभक्ति परे रहते)।

च — VII. ii. 118
(कित् तद्धित परे रहते) भी (अङ्ग के अचों में आदि अच् को वृद्धि होती है)।

च — VII. iii. 4
(द्वार इत्यादि शब्दों के यकार वकार से उत्तर) भी (ञित्, णित्, कित् तद्धित परे रहते अङ्ग के अचों में आदि अच् को वृद्धि नहीं होती, किन्तु यकार वकार से पूर्व को ऐच् आगम तो हो जाता है)।

च — VII. iii. 5
(केवल न्यग्रोध शब्द के अचों में आदि अच् को) भी (वृद्धि नहीं होती, किन्तु उसके य् से पूर्व को ऐकार आगम तो होता है)।

च — VII. iii. 7
(स्वागत इत्यादि शब्दों को) भी (वृद्धि-निषेध एवं ऐजागम नहीं होता)।

च — VII. iii. 15
(सङ्ख्यावाची शब्द से उत्तर संवत्सर शब्द के तथा सङ्ख्यावाची शब्द के अचों में आदि अच् को) भी (ञित्, णित् तथा कित् तद्धित परे रहते वृद्धि होती है)।

च — VII. iii. 19
(हृद्, भग, सिन्धु – ये अन्त में है जिन अङ्गों के, उनके पूर्वपद को) तथा (उत्तरपद के अचों में आदि अच् को भी ञित्, णित् तथा कित् तद्धित परे रहते वृद्धि होती है)।

च — VII. iii. 20
(अनुशतिक इत्यादि अङ्गों के पूर्वपद तथा उत्तरपद दोनों के अचों में आदि अच् को) भी (ञित्, णित् तथा कित् तद्धित परे रहते वृद्धि होती है)।

च – VII. iii. 21

(देवतावाची द्वन्द्व समास में) भी (पूर्वपद तथा उत्तरपद के अचों में आदि अच् को ञित्, णित् तथा कित् तद्धित परे रहते वृद्धि होती है)।

च – VII. iii. 23

(दीर्घ से उत्तर) भी (वरुण शब्द के अचों में आदि अच् को वृद्धि नहीं होती)।

च – VII. iii. 29

(तत् = ढक् प्रत्ययान्त प्रवाहण अङ्ग के उत्तरपद के अचों में आदि अच् को) भी (वृद्धि होती है, पूर्वपद को तो विकल्प से होती है; ञित्, णित्, कित्, तद्धित परे रहते)।

च – VII. iii. 35

(जन तथा वध अङ्ग को) भी (चिण् तथा ञित्, णित् कृत् परे रहते उपधा को वृद्धि नहीं होती)।

च – VII. iii. 48

(अभाषितपुंस्क शब्द से विहित प्रत्ययस्थ ककार से पूर्व अकार, उसको नञ्पूर्व होने पर) और (अनञ्पूर्व होने पर भी उदीच्य आचार्यों के मत में इकारादेश नहीं होता है)।

च – VII. iii. 52

देखें – चजोः – VII. iii. 52

च – VII. iii. 53

(न्यङ्कु-आदि-गणपठित शब्दों के चकार, जकार को) भी (कवर्ग आदेश होता है)।

च – VII. iii. 55

(अभ्यास से उत्तर) भी (हन् धातु के हकार को कवर्गादेश होता है)।

च – VII. iii. 58

(अभ्यास से उत्तर) चि अङ्ग को (विकल्प से कवर्गादेश होता है, सन् तथा लिट् परे रहते)।

च – VII. iii. 60

(अज तथा व्रज धातुओं के जकार को) भी (कवर्गादेश नहीं होता)।

च – VII. iii. 66

(यज, टुयाचृ, रुच, प्रपूर्वक वच, ऋच— इन अङ्गों के चकार, जकार को) भी (ण्य प्रत्यय परे रहते कवर्गादेश नहीं होता)।

च – VII. iii. 83

(जुस् प्रत्यय परे रहते) भी (इगन्त अङ्ग को गुण होता है)।

च – VII. iii. 86

(पुक् परे रहने पर तत्समीपस्थ अङ्ग के इक् को तथा लघुसञ्ज्ञक इक् उपधा को) भी (सार्वधातुक तथा आर्धधातुक परे रहते गुण हो जाता है)।

च – VII. iii. 98

(रुदिर् इत्यादि पाँच धातुओं से उत्तर) भी (हलादि अपृक्त सार्वधातुक को ईट् आगम होता है)।

च – VII. iii. 102

(अकारान्त अङ्ग को यञादि सुप् परे रहते) भी (दीर्घ होता है)।

च – VII. iii. 104

(ओस् परे रहते) भी (अकारान्त अङ्ग को एकारादेश होता है)।

च – VII. iii. 105

(आबन्त अङ्ग को आङ् = टा परे रहते) तथा (ओस् परे रहते एकारादेश होता है)।

च – VII. iii. 106

(सम्बुद्धि परे रहते) भी (आबन्त अङ्ग को एकारादेश होता है)।

च – VII. iii. 109

(जस् परे रहते) भी (ह्रस्वान्त अङ्ग को गुण होता है)।

च – VII. iii. 114

(आबन्त सर्वनाम अङ्ग से उत्तर ङित् प्रत्यय को स्याट् आगम होता है) तथा (उस आबन्त सर्वनाम को ह्रस्व भी हो जाता है)।

च – VII. iii. 119

(इकारान्त, उकारान्त अङ्ग से उत्तर ङि को औकारादेश होता है,) तथा (घिसञ्ज्ञक को अकारादेश होता है)।

च – VII. iv. 4

('पा पाने' अङ्ग की उपधा का चङ्परक णि परे रहते लोप होता है) तथा (अभ्यास को ईकारादेश होता है)।

च – VII. iv. 10

(संयोग आदि में है जिसके – ऐसे ऋकारान्त अङ्ग को) भी (गुण होता है, लिट् परे रहते)।

च – VII. iv. 26

(च्वि प्रत्यय परे रहते) भी (अजन्त अङ्ग को दीर्घ होता है)।

च – VII. iv. 30

(ऋ तथा संयोग आदि वाले ऋकारान्त अङ्ग को यङ् परे रहते) भी (गुण होता है)।

च – VII. iv. 33

(क्यच् परे रहते) भी (अवर्णान्त अङ्ग को ईकारादेश होता है)।

च – VII. iv. 43

('ओहाक् त्यागे' अङ्ग को) भी (क्त्वा प्रत्यय परे रहते हि आदेश होता है)।

च – VII. iv. 44

(सुधित, वसुधित, नेमधित, धिष्व, धिषीय – ये शब्द) भी (वेद-विषय में निपातित हैं)।

च – VII. iv. 51

(रेफादि प्रत्यय के परे रहते) भी (तास् और अस् के सकार का लोप होता है)।

च – VII. iv. 56

(दम्भ अङ्ग के अच् के स्थान में इकारादेश होता है) तथा (चकार से ईकारादेश भी होता है)।

च – VII. iv. 65

(दाधर्त्ति, दर्धर्षि, बोभूतु, तेतिक्ते, अलर्षि, आपनीफणत्, संसनिष्यदत्, करिक्रत्, कनिक्रदत्, भरिभृत्, दविध्वतः, दविद्युतत्, तरित्रतः, सरीसृपतम्, वरीजत्, मर्मृज्य, आगनीगन्ति– ये शब्द) भी (वेदविषय में निपातन किये जाते हैं)।

च – VII. iv. 72

('अशू व्याप्तौ' अङ्ग के दीर्घ किये हुये अभ्यास से उत्तर) भी (नुट् आगम होता है)।

च – VII. iv. 77

(ऋ तथा पृ धातुओं के अभ्यास को) भी (श्लु होने पर इकारादेश होता है)।

च – VII. iv. 86

(जप, जभी, दह, दंश, भञ्ज, पश– इन अङ्गों के अभ्यास को) भी (नुक् आगम होता है, यङ् तथा यङ्लुक् परे रहते)।

च – VII. iv. 87

('चर गतौ' तथा 'ञिफला विशरणे' अङ्ग के अभ्यास को) भी (यङ् तथा यङ्लुक् परे रहते नुक् आगम होता है)।

च – VII. iv. 89

(तकारादि प्रत्यय परे रहते) भी (चर् तथा फल् अङ्ग के अकार के स्थान में उकारादेश होता है)।

च – VII. iv. 90

(ऋकार उपधा वाले अङ्ग के अभ्यास को) भी (यङ् तथा यङ्लुक् में रीक् आगम होता है)।

च – VII. iv. 91

(ऋकार उपधा वाले अङ्ग के अभ्यास को रुक्, रिक्) तथा चकार से (रीक् आगम होते हैं, यङ्लुक् में)।

च – VII. iv. 92

(ऋकारान्त अङ्ग के अभ्यास को) भी (रुक्, रिक् तथा रीक् आगम होते हैं, यङ्लुक् होने पर)।

च – VII. iv. 97

(गण् धातु के अभ्यास को ईकारादेश) तथा चकार से (अकारादेश भी होता है, चङ्परक णि परे रहते)।

च – VIII. i. 3

(जिसकी आम्रेडित-सञ्ज्ञा होती है, वह अनुदात्त) भी (होता है)।

च – VIII. i. 10

(पीडा अर्थ में वर्त्तमान शब्द को) भी (द्वित्व होता है, तथा उस शब्द को बहुव्रीहि के समान कार्य भी होता है)।

च – VIII. i. 19

(पद से उत्तर आमन्त्रित सञ्ज्ञक सम्पूर्ण पद को) भी (पाद के आदि में वर्त्तमान न हो तो अनुदात्त होता है)।

च – VIII. i. 24

देखें – **चवाहाहैव० VIII. i. 24**

च – VIII. i. 25

('न देखना' अर्थ में वर्त्तमान ज्ञान अर्थ वाले धातुओं के योग में) भी (युष्मद्, अस्मद् शब्दों को पूर्व सूत्रों से प्राप्त वाम्, नौ आदि आदेश नहीं होते)।

च – VIII. i. 34

(हि शब्द से युक्त तिङन्त) भी (अनुकूलता गम्यमान होने पर अनुदात्त नहीं होता)।

च – VIII. i. 38

(यावत् और यथा से युक्त एवं उपसर्ग से व्यवहित तिङ् को) भी (पूजा-विषय में अननुदात्त नहीं होता, अर्थात् अनुदात्त होता है)।

च – VIII. i. 40

(अहो शब्द से युक्त तिङन्त को) भी (पूजा विषय में अनुदात्त नहीं होता)।

च – VIII. i. 42

(पुरा शब्द से युक्त तिङन्त को) भी (शीघ्रता अर्थ गम्यमान होने पर अनुदात्त नहीं होता)।

च – VIII. i. 48

(जिससे उत्तर चित् है तथा जिससे पूर्व कोई शब्द नहीं है, ऐसे किंवृत्त शब्द से युक्त तिङन्त को) भी (अनुदात्त नहीं होता)।

च – VIII. i. 49

(अविद्यमान पूर्ववाले आहो, उताहो से युक्त व्यवधानरहित तिङ् को) भी (अनुदात्त नहीं होता है)।

च – VIII. i. 52

(गत्यर्थक धातुओं के लोडन्त से युक्त लोडन्त को) भी (अनुदात्त नहीं होता, यदि कारक सारे अन्य न हों तो)।

च – VIII. i. 53

(हन्त से युक्त सोपसर्ग उत्तमपुरुषवर्जित लोडन्त तिङन्त को) भी (विकल्प से अनुदात्त नहीं होता)।

च – VIII. i. 58

(चादियों के परे रहते) भी (गतिभिन्न पद से उत्तर तिङन्त को अनुदात्त नहीं होता)।

च... – VIII. i. 59

देखें – **चवायोगे VIII. i. 59**

च... – VIII. i. 61

('अह' से युक्त प्रथम तिङन्त को विनियोग) तथा (क्षिया अर्थात् अनौचित्य गम्यमान होने पर अनुदात्त नहीं होता)।

च – VIII. i. 62

देखें – **चाहलोपे च VIII. i. 62**

च – VIII. i. 64

(वै तथा वाव से युक्त प्रथम तिङन्त को) भी (विकल्प से वेद-विषय में अनुदात्त नहीं होता)।

च – VIII. i. 69

(गोत्रादिगण-पठित शब्दों को छोड़कर निन्दावाची सुबन्त शब्दों के परे रहते) भी (सगतिक एवं अगतिक दोनों तिङन्तों को अनुदात्त होता है)।

च – VIII. i. 70

(उदात्तवान् तिङन्त के परे रहते) भी (गतिसञ्ज्ञक को निघात होता है)।

च – VIII. ii. 9

(मकारान्त एवं अवर्णान्त तथा मकार एवं अवर्ण उपधा वाले प्रातिपदिक से उत्तर मतुप् को वकारादेश होता है, किन्तु यवादि शब्दों से उत्तर मतुप् को व नहीं होता)।

च – VII. ii. 13

(उदन्वान् शब्द उदधि) तथा (सञ्ज्ञा-विषय में निपातन है)।

च – VIII. ii. 22

(परि के रेफ को) भी (घ तथा अङ्क शब्द परे रहते विकल्प से लत्व होता है)।

च – VIII. ii. 25

(धकारादि प्रत्यय के परे रहते) भी (सकार का लोप होता है)।

च – VIII. ii. 29

(पद के अन्त में) तथा (झल् परे रहते संयोग के आदि के सकार तथा ककार का लोप होता है)।

च – VIII. ii. 38

(झषन्त दध् धातु के बश् के स्थान में भष् आदेश होता है; तकार तथा थकार परे रहते) तथा (झलादि सकार एवं ध्व परे रहते भी)।

च – VIII. ii. 42

(रेफ तथा दकार से उत्तर निष्ठा के तकार को नकारादेश होता है) तथा (निष्ठा के तकार से पूर्व के दकार को भी नकारादेश होता है)।

च – VIII. ii. 45

(ओकार इत् वाले धातुओं से उत्तर) भी (निष्ठा के त को नकारादेश होता है) ।

च – VIII. ii. 65

(मकार तथा वकार परे रहते) भी (मकारान्त धातु को नकारादेश होता है)।

च – VIII. ii. 67

(अवयाः, श्वेतवाः) तथा (पुरोडाः — ये शब्द दीर्घ किये हुये सम्बुद्धि में निपातन हैं)।

च – VIII. ii. 71

(महाव्याहृति भुवस् शब्द को) भी (वेद-विषय में दोनों प्रकार से अर्थात् रु एवं रेफ दोनों ही होते हैं)।

च – VIII. ii. 75

(दकारान्त जो पद् धातु, उसको) भी (सिप् परे रहते विकल्प से रु आदेश होता है)।

च – VIII. ii. 77

(हल् परे रहते) भी (रेफान्त एवं वकारान्त धातु की उपधाभूत इक् को दीर्घ होता है)।

च – VIII. ii. 78

(हल् परे रहते धातु के उपधाभूत रेफ एवं वकार के परे रहते उपधा इक् को) भी (दीर्घ होता है)।

च – VIII. ii. 84

(दूर से बुलाने में जो प्रयुक्त वाक्य, उसकी टि को) भी (प्लुत उदात्त होता है)।

च – VIII. ii. 93

(अग्नीत् के प्रेषण में पद के आदि को प्लुत उदात्त होता है), तथा (उससे परे को भी होता है, यज्ञकर्म में)।

च – VIII. ii. 94

(निग्रह करने के पश्चात् अनुयोग में वर्त्तमान जो वाक्य उसकी टि को) भी (विकल्प से प्लुत उदात्त होता है) ।

च – VIII. ii. 99

(प्रतिश्रवण में वर्त्तमान वाक्य की टि को) भी (प्लुत उदात्त होता है)।

च – VIII. ii. 101

(चित् यह निपात) भी (जब उपमा के अर्थ में प्रयुक्त हो, तो वाक्य की टि को अनुदात्त प्लुत होता है)।

च – VIII. ii. 102

('उपरि स्विदासीत्' इसकी टि को) भी (प्लुत अनुदात्त होता है)।

च – VIII. iii. 21

(अवर्ण पूर्ववाले पदान्त य्, व् का उञ् पद के परे रहते) भी (लोप होता है) ।

च – VIII. iii. 24

(अपदान्त नकार को तथा चकार से मकार को) भी (झल् परे रहते अनुस्वार आदेश होता है) ।

च – VIII. iii. 30

(नकारान्त पद से उत्तर) भी (सकारादि पद को विकल्प से धुट् का आगम होता है) ।

च – VIII. iii. 37

(कवर्ग तथा पवर्ग परे रहते विसर्जनीय को यथासङ्ख्य करके = क अर्थात् जिह्वामूलीय तथा = प अर्थात् उपध्मानीय आदेश होते हैं) , तथा चकार से (विसर्जनीय भी होता है)।

च – VIII. iii. 41

(इकार और उकार उपधा वाले प्रत्ययभिन्न समुदाय के विसर्जनीय को) भी (षकार आदेश होता है; कवर्ग, पवर्ग परे रहते)।

च – VIII. iii. 48

(कस्कादि-गणपठित शब्दों के विसर्जनीय को) भी (सकार अथवा षकार आदेश यथायोग से होता है; कवर्ग, पवर्ग परे रहते)।

च – VIII. iii. 52

(पा धातु के प्रयोग परे हों तो) भी (पञ्चमी के विसर्जनीय को बहुल करके सकार आदेश होता है, वेद-विषय में)।

च – VIII. iii. 60

(इण् तथा कवर्ग से उत्तर शासु, वस् तथा घस् के सकार को) भी (मूर्धन्य आदेश होता है)।

च – VIII. iii. 62

(अभ्यास के इण् से उत्तर ण्यन्त ञिष्विदा, ष्वद तथा षह धातुओं के सकार को सकारादेश होता है, षत्वभूत सन् के परे रहते) भी।

च – VIII. iii. 64

(सित से पहले-पहले स्था इत्यादियों में अभ्यास का व्यवधान होने पर भी मूर्धन्य आदेश होता है,) तथा (अभ्यास के सकार को भी मूर्धन्य होता है)।

च – VIII. iii. 68

(अव उपसर्ग से उत्तर) भी (स्तन्भु के सकार को आश्रयण तथा समीपता अर्थ में मूर्धन्य आदेश होता है)।

च – VIII. iii. 69

(वि उपसर्ग से उत्तर) तथा चकार से, अव उपसर्ग से उत्तर (भोजन अर्थ में स्वन धातु के सकार को मूर्धन्य आदेश होता है, अड्व्यवाय एवं अभ्यास-व्यवाय में भी)।

च – VIII. iii. 74

(परि उपसर्ग से उत्तर) भी (स्कन्द् के सकार को विकल्प से मूर्धन्यादेश होता है)।

च – VIII. iii. 94

(छन्द का नाम कहना हो तो) भी (विष्टार शब्द में षत्व निपातन किया गया है)।

च – VIII. iii. 98

(सुषामादि शब्दों के सकार को) भी (मूर्धन्य आदेश होता है)।

च – VIII. iii. 109

(पृतना तथा ऋत शब्द से उत्तर) भी (सह् धातु के सकार को वेद-विषय में मूर्धन्य आदेश होता है)।

च – VIII. iii. 114

(प्रतिस्तब्ध, निस्तब्ध शब्दों में) भी (मूर्धन्याभाव निपातन है)।

च – VIII. iv. 11

(पूर्वपद में स्थित निमित्त से उत्तर प्रातिपदिक के अन्त में जो नकार तथा नुम् एवं विभक्ति में जो नकार उसको) भी (विकल्प से णकारादेश होता है) ।

च – VIII. iv. 13

(पूर्वपद में स्थित निमित्त से उत्तर कवर्गवान् शब्द उत्तरपद रहते) भी (प्रातिपदिकान्त, नुम् तथा विभक्ति के नकार को णकार आदेश होता है)।

च – VIII. iv. 17

(उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर नि के नकार को णकार आदेश होता है; गद, नद, पत, पद, घुसञ्ज्ञक, मा, षो, हन्, या, वा, द्रा, प्सा, वप, वह, शम्, चि एवं दिह् धातुओं के परे रहते) भी ।

च – VIII. iv. 24

(अन्तर् शब्द से उत्तर अयन शब्द के नकार को) भी (णकारादेश होता है, देश का अभिधान न हो तो)।

च – VIII. iv. 26

(धातु में स्थित निमित्त से उत्तर तथा उरु एवं षु शब्द से उत्तर नस् के नकार को) भी (वेद-विषय में णकार आदेश होता है) ।

च – VIII. iv. 30

(इच् उपधावाले हलादि धातु से विहित जो कृत् प्रत्यय, तत्स्थ जो अच् से उत्तर नकार, उसको) भी (उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर विकल्प से णकारादेश होता है)।

च – VIII. iv. 38

(क्षुभ्नादिगणपठित शब्दों के नकार को) भी (णकारादेश नहीं होता)।

च – VIII. iv. 46

(अच् से उत्तर यर् को विकल्प करके अच् परे न हो तो) भी (द्वित्व हो जाता है)।

च – VIII. iv. 53

(अभ्यास में वर्त्तमान झलों को चर् आदेश होता है, तथा चकार से जश्) भी (होता है) ।

च – VIII. iv. 54

(खर् परे रहते) भी (झलों को चर् आदेश होता है)।

चक्रीवत् –VIII. ii. 12

चक्रीवत् शब्द का निपातन किया जाता है ।

चक्षिङः – II. iv. 54

चक्षिङ् के स्थान में (ख्या आदेश होता है, आर्धधातुक के विषय में)।

...चक्षुस्... – V. iv. 51

देखें – अरुर्मनस्० V. iv. 51

चङ् – III. i. 48

ण्यन्त धातु, श्रि, द्रु, और स्रु धातुओं से उत्तर कर्तृवाची लुङ् परे रहते च्लि के स्थान में चङ् आदेश होता है)।

चङि — VI. i. 11

चङ् के परे रहते (धातु के अनभ्यास अवयव प्रथम एकाच् तथा अजादि के द्वितीय एकाच् को द्वित्व होता है)।

चङि — VI. i. 18

(णिजन्त स्वप् धातु को) चङ् प्रत्यय के परे रहते (सम्प्रसारण हो जाता है)।

चङि — VI. i. 212

चङन्त शब्द के (उपोत्तम को विकल्प करके उदात्त होता है)।

चङि — VII. iv. 1

चङ्परक (णि के परे रहते अङ्ग की उपधा को ह्रस्व होता है)।

चङि — VIII. iii. 116

(स्तम्भु, षिवु तथा षह् धातु के सकार को) चङ् परे रहते (मूर्धन्य आदेश नहीं होता)।

...चङोः — II. iv. 51

देखें — संश्चङोः II. iv. 51

...चङोः — VI. i. 31

देखें — संश्चङोः VI. i. 31

...चङ्क्रम्य... — III. ii. 150

देखें — जुचङ्क्रम्य... III. ii. 150

चङ्परे — VII. iv. 93

चङ्परक (णि) परे रहते (अङ्ग के अभ्यास को लघु धात्वक्षर परे रहते सन् के समान कार्य होता है, यदि अङ्ग के अक् का लोप न हुआ हो तो)।

चजोः — VII. iii. 52

चकार तथा जकार के स्थान में (कवर्ग आदेश होता है; घित् तथा ण्यत् प्रत्यय परे रहते)।

चटकायाः — IV. i. 128

चटका शब्द से (अपत्य अर्थ में ऐरक् प्रत्यय होता है)।

चटका = चिड़िया।

...चण्... — VIII. i. 30

देखें— यद्यदि० VIII. i. 30

... चणपौ... V. ii. 26

देखें — चुञ्चुप्चणपौ V. ii. 26

... चतसृ — VI. iv. 4

देखें — तिसृचतसृ VI. iv. 4

...चतसृ — VII. ii. 101

देखें — तिसृचतसृ VII. ii. 101

चतुर्... — VII. i. 98

देखें — चतुरनडुहोः VII. i. 98

...चतुर् — VIII. iii. 43

देखें — द्विस्त्रिश्चतुः VIII. iii. 43

चतुरः — VI. i. 161

चतुर् शब्द को (अन्तोदात्त होता है, शस् परे रहते)।

चतुरनडुहोः — VII. i. 98

चतुर् तथा अनडुह् अङ्गों को (सर्वनामस्थान विभक्ति परे रहते आम् आगम होता है, और वह उदात्त होता है)।

...चतुरश्र... — V. iv. 120

देखें — सुप्रातसुश्व० V. iv. 120

...चतुराम्— V. ii. 51

देखें — षट्कति० V. ii. 51

...चतुर्थ... — II. ii. 3

देखें — द्वितीयतृतीयचतुर्थ० II. ii. 3

चतुर्थी — II. i. 35

चतुर्थ्यन्त सुबन्त (तदर्थ, अर्थ, बलि, हित, सुख तथा रक्षित— इन समर्थ सुबन्तों के साथ विकल्प से समास को प्राप्त होता है, और वह तत्पुरुष समास होता है)।

चतुर्थी — II. iii. 13

(अनभिहित सम्प्रदान कारक में) चतुर्थी विभक्ति होती है)।

चतुर्थी — II. iii. 73

(आशीर्वाद गम्यमान होने पर आयुष्य, मद्र, भद्र, कुशल, सुख अर्थ, हित— इन शब्दों के योग में शेष विवक्षित होने पर विकल्प से) चतुर्थी विभक्ति होती है, (चकार से पक्ष में षष्ठी भी होती है)।

चतुर्थी... — VI. ii. 43

चतुर्थी पूर्वपद को (चतुर्थ्यन्तार्थ के उत्तरपद रहते प्रकृतिस्वर होता है)।

...चतुर्थी... — VIII. i. 20
देखें — षष्ठीचतुर्थी० VIII. i. 20

चतुर्थ्यर्थे — I. iii. 55

(तृतीया विभक्ति से युक्त सम्-पूर्वक दाण् धातु से भी आत्मनेपद होता है, यदि वह तृतीया) चतुर्थी के अर्थ में हो तो)।

चतुर्थ्यर्थे — II. iii. 62

चतुर्थी के अर्थ में (बहुल करके षष्ठी विभक्ति होती है, वेद में)।

चतुर्थ्याः — VI. iii. 7

(जिस सञ्ज्ञा से वैयाकरण ही व्यवहार करते हैं, उसको कहने में पर शब्द से उत्तर भी) चतुर्थी विभक्ति का (अलुक् होता है)।

...चतुर्थ्यौ — II. iii. 13
देखें — द्वितीयाचतुर्थ्यौ II. iii. 13

...चतुर्थ्यः — V. iv. 18
देखें — द्वित्रिचतुर्थ्यः V. iv. 18

... चतुर्थ्यः — VI. i. 173
देखें — षट्त्रिचतुर्थ्यः VI. i. 173

... चतुर्थ्यः — VII. i. 56

चतुर्थ्यः — VII. ii. 59

(वृतु इत्यादि) चार धातुओं से उत्तर (सकारादि आर्धधातुक को परस्मैपद परे रहते इट् का आगम नहीं होता)।

चतुष्पाच्छकुनिषु — VI. i. 137

(अप उपसर्ग से उत्तर) चार पैर वाले बैल आदि तथा पक्षी मोर आदि में) जो 'कुरेदना' हो तो उस विषय में संहिता में ककार से पूर्व सुट् का आगम होता है)।

चतुष्पात्...— VI. i. 137
देखें — चतुष्पाच्छकुनिषु VI. i. 137

चतुष्पादः — II. i. 70

चतुष्पाद् = चार पैर वाले पशु आदि वाचक (सुबन्त) शब्द (समानाधिकरण गर्भिणी सुबन्त के साथ विकल्प से समास को प्राप्त होते हैं और वह तत्पुरुष समास होता है)।

चतुष्पाद्भ्यः — IV. i. 135

चतुष्पाद् अभिधायी प्रातिपदिकों से (अपत्य अर्थ में ढञ् प्रत्यय होता है)।

...चत्त... — VII. ii. 34
देखें — ग्रसितस्कभित० VII. ii. 34

...चत्वारिंशत्... — V. i. 58
देखें — पंक्तिविंशति० V. i. 58

... चत्वारिंशतोः... V. i. 61
देखें — त्रिंशच्चत्वारिंशतोः V. i. 61

चत्वारिंशत्प्रभृतौ — VI. iii. 48

(सबको अर्थात् द्वि, अष्टन् तथा त्रि को जो कुछ भी कह आये हैं, वह) चत्वारिंशत् आदि सङ्ख्या उत्तरपद रहते (बहुव्रीहि समास तथा अशीति को छोड़कर विकल्प करके हो)।

चन... — VIII. i. 57
देखें — चनचिदिव० VIII. i. 57

चनचिदिवगोत्रादितद्धिताम्रेडितेषु — VIII. i. 57

चन, चित्, इव, गोत्रादिगण पठित शब्द, तद्धित प्रत्यय एवं आम्रेडित सञ्ज्ञक शब्दों के परे रहते (गतिसञ्ज्ञक से भिन्न किसी पद से उत्तर तिङन्त को अनुदात्त नहीं होता)।

चन्द्रोत्तरपदे — VI. i. 146

(ह्रस्व से उत्तर) चन्द्र शब्द उत्तरपद हो तो (सुट् का आगम होता है, मन्त्रविषय में)।

...चमः — III. i. 126
देखें — आसुयुवपि० III. i. 126

...चमाम् — VII. iii. 75
देखें — ष्ठिवुक्लमुचमाम् VII. iii. 75

चर् — VIII. iv. 53

(अभ्यास में वर्तमान झलों को) चर् आदेश होता है, (तथा चकार से जश् भी होता है)।

...चर... - III. i. 24
देखें — लुपसदचर० III. i. 24

...चर... — III. i. 100
देखें — गदमदचर० III. i. 100

चर... — VII. iv. 87
देखें — चरफलोः VII. iv. 87

चरः — I. iii. 53

(उत् उपसर्ग से उत्तर सकर्मक) चर् धातु से (आत्मनेपद होता है)।

...चरः — III. ii. 136

देखें — अलंकृञ्० III. ii. 136

...चरः — III. ii. 184

देखें — अर्तिलूधू० III. ii. 184

...चरकात्— IV. iii. 107

देखें — कठचरकात् IV. iii. 107

...चरकाभ्याम् — V. i. 10

देखें — माणवचरकाभ्याम् V. i. 10

चरट् — V. iii. 53

(भूतपूर्व अर्थ में वर्त्तमान प्रातिपदिक से) चरट् प्रत्यय होता है)।

...चरणात् — IV. iii. 125

देखें — गोत्रचरणात् IV. iii. 125

...चरणात् V. i. 133

देखें — गोत्रचरणात् V. i. 133

चरणानाम् — II. iv. 3

(अनुवाद गम्यमान होने पर) चरणवाचियों का (द्वन्द्व एकवद् होता है)।

चरणे — VI. iii. 85

चरण गम्यमान हो तो (ब्रह्मचारी शब्द के उत्तरपद रहते समान शब्द को स आदेश हो जाता है)।

चरणेभ्यः — IV. ii. 45

(षष्ठीसमर्थ) चरणवाची प्रातिपदिकों से (समूह अर्थ में किये जाने वाले अर्थ में प्रत्यय होते हैं)।

चरति — IV. iv. 8

(तृतीयासमर्थ प्रातिपदिकों से) आचरण करता है, चलता है अर्थ में (ठक् प्रत्यय होता है)।

चरति — IV. iv. 41

(द्वितीयासमर्थ धर्म प्रातिपदिक से) 'आचरण करता है'- अर्थ में (ठक् प्रत्यय होता है)।

चरफलोः — VII. iv. 87

'चर गतौ' तथा 'ञिफला विशरणे' अङ्ग के (अभ्यास को भी यङ् तथा यङ्लुक् परे रहते नुक् आगम होता है)।

...चरम... — I. i. 32

देखें — प्रथमचरमतयाल्पार्धकतिपयनेमाः I. i. 32

...चरम...— II. i. 57

देखें — पूर्वापरप्रथम० II. i. 57

...चरि — III. iv. 16

देखें — स्थेण्कृञ्० III. iv. 16

चरेः — III. ii. 16

'चर्' धातु से (अधिकरण सुबन्त उपपद रहते 'ट' प्रत्यय होता है)।

...चरोः — III. i. 15

देखें — वर्तिचरोः III. i. 15

...चर्चः — III. iii. 105

देखें — चिन्तिपूजि० III. iii. 105

चर्म... — III. iv. 31

देखें — चर्मोदरयोः III. iv. 31

चर्मणः — V. i. 15

(चतुर्थीसमर्थ) चर्म के (विकृतिवाची) प्रातिपदिक से ('विकृति के लिए प्रकृति' अभिधेय होने पर 'हित' अर्थ में अञ् प्रत्यय होता है)।

चर्मण्वती— VIII. ii. 12

चर्मण्वती शब्द का निपातन किया जाता है।

चर्मोदरयोः — III. iv. 31

चर्म तथा उदर कर्म उपपद रहते (ण्यन्त पूर धातु से णमुल् प्रत्यय होता है)।

...चर्विधिषु — I. i. 57

देखें — पदान्तद्विर्वचनवरे० I. i. 57

चलन... — III. ii. 148

देखें — चलनशब्दार्थात् III. ii. 148

चलनशब्दार्थात् — III. ii. 148

(अकर्मक) चलनार्थक और शब्दार्थक धातुओं से (तच्छीलादि कर्त्ता हो, तो वर्तमानकाल में युच् प्रत्यय होता है)।

...चलनार्थेभ्यः — I. iii. 87

देखें — निगरणचलनार्थेभ्यः I. iii. 87

चवायोगे — VIII. i. 59

च तथा वा के योग में (प्रथमोच्चरित दो तिङन्तों में प्रथम तिङन्त को अनुदात्त नहीं होता)।

चवाहाहैवयुक्ते — VIII. i. 24
च, वा, ह, अह, एव– इनके योग में (षष्ठ्यन्त, चतुर्थ्यन्त, द्वितीयान्त युष्मद्, अस्मद् शब्दों को पूर्व सूत्रों से प्राप्त वाम्, नौ आदि आदेश नहीं होते)।

चाक्रवर्मणस्य — VI. i. 126
(प्लुत 'ई ३' अच् परे रहते) चाक्रवर्मण आचार्य के मत में (अप्लुत के समान हो जाता है)।

...चाटु... — III. ii. 23
देखें — **शब्दश्लोक० III. ii. 23**

चादयः — I. iv. 57
चादिगणपठित शब्द (निपातसंज्ञक होते हैं, यदि वे द्रव्यवाची न हों तो)।

चादिलोपे — VIII. i. 63
चादियों के लोप होने पर (प्रथम तिङन्त को विकल्प करके अनुदात्त नहीं होता)।

चादिषु— VIII. i. 58
चादियों के परे रहते (भी गतिभिन्न पद से उत्तर तिङन्त को अनुदात्त नहीं होता)।

...चानराटेषु — VI. ii. 103
देखें — **ग्रामजनपदा० VI. ii. 103**

चानश् — III. ii. 129
(ताच्छील्य, वयोवचन, शक्ति अर्थों में द्योतित होने पर धातु से वर्त्तमान काल में) चानश् प्रत्यय होता है।

...चान्द्रायणम् — V. i. 72
देखें — **पारायणतुरायण० V. i. 72**

चाप् — IV. i. 74
(यङन्त प्रातिपदिकों से स्त्रीलिङ्ग में) चाप् प्रत्यय होता है।

चायः — VI. i. 21
चायृ धातु को (यङ् प्रत्यय के परे रहते की आदेश होता है)।

चायः — VI. i. 34
चायृ धातु को (वेदविषय में बहुल करके की आदेश हो जाता है)।

चार्थे — II. ii. 29
'च' के अर्थ समाहार और इतरेतर योग में (वर्त्तमान अनेक सुबन्त समास को प्राप्त होते हैं, और वह द्वन्द्व समास होता है)।

...चार्वादयः — VI. ii. 160
देखें — **कृत्योकेष्णुच्० VI. ii. 160**

चाहलोपे — VIII. i. 62
च तथा अह शब्द का लोप होने पर (प्रथम तिङन्त को अनुदात्त नहीं होता, यदि 'एव' शब्द वाक्य में अवधारण अर्थ में प्रयुक्त किया गया हो तो)।

...चि — V. ii. 33
देखें — **इनच्पिटच्० V. ii. 33**

चि... — VI. i. 53
देखें — **चिस्फुरोः VI. i. 53**

...चिक... — V. ii. 33
देखें — **इनच्पिटच्० V. ii. 33**

चिकचि — V. ii. 33
('नासिका का झुकाव' अभिधेय हो तो नि उपसर्ग प्रातिपदिक से इनच् तथा पिटच् प्रत्यय होते हैं, सञ्ज्ञाविषय में तथा नि शब्द को यथासङ्ख्य करके प्रत्यय के साथ-साथ) चिक तथा चि आदेश भी हो जाते हैं।

चिकयामकः — III. i. 42
चिकयामकः शब्द (चिञ् धातु से णिच् प्रत्यय द्वित्व आम् और कुत्व करके) वेद में विकल्प से निपातित है। (साथ ही अभ्युत्सादयामकः, प्रजनयामकः, रमयामकः, पावयांक्रियात्, विदामक्रन् शब्द भी वेदविषय में विकल्प से निपातित किये जाते हैं)।

चिकित्स्यः — V. ii. 92
(क्षेत्रियच् शब्द का निपातन किया जाता है, दूसरे क्षेत्र = शरीर में) चिकित्सा किये जाने योग्य अर्थ में।

चिच्युषे — VI. i. 35
(वेदविषय में) चिच्युषे का निपातन किया जाता है।

चिण् — III. i. 60
(गत्यर्थक 'पद्' धातु से उत्तर कर्तृवाची लुङ् 'त' शब्द परे रहते च्लि के स्थान में) चिण् आदेश होता है)।

चिण् — III. i. 66
(च्लि के स्थान में धातुमात्र से उत्तर भाव अथवा कर्मवाची लुङ् का 'त' शब्द परे रहते) चिण् आदेश होता है।

चिण्... — VI. iv. 93
देखें — **चिण्णमुलोः VI. iv. 93**

चिण्... — VII. i. 69
देखें — चिण्णमुलोः VII i. 69
चिण्...— VII. iii. 33
देखें — चिण्कृतोः VII. iii. 33
...चिण्... — VII. iii. 85
देखें — अविचिण्० VII. iii. 85
चिणः — VI. iv. 104
चिण् से उत्तर (प्रत्यय का लुक् हो जाता है)।
चिणि — VI. iv. 33
(भञ्ज् अङ्ग के नकार का लोप भी विकल्प से होता है) चिण् प्रत्यय परे रहते।
...चिणौ — III. i. 89
देखें — यक्चिणौ III. i. 89
चिण्कृतोः — VII. iii. 33
(आकारान्त अङ्ग को) चिण् तथा (ञित्, णित्) कृत् प्रत्यय परे रहते (युक् आगम होता है)।
चिण्णमुलोः — VI. iv. 93
(मित् अङ्ग की उपधा को) चिण्परक तथा णमुल्परक (णि परे रहते विकल्प से दीर्घ होता है)।
चिण्णमुलोः — VII. i. 69
(लभ् अङ्ग को) चिण् तथा णमुल् प्रत्यय परे रहते (विकल्प से नुम् आगम होता है)।
चिण्वत् — VI. iv. 62
(भाव तथा कर्मविषयक स्य, सिच्, सीयुट् और तास् के परे रहते उपदेश में अजन्त धातुओं तथा हन्, ग्रह् एवं दृश् धातुओं को) चिण् के समान (विकल्प से कार्य होता है, तथा इट् आगम भी होता है)।
...चित्... — VI. ii. 19
देखें — भूवाक्० VI. ii. 19
...चित्... — VIII. i. 57
देखें — चनचिदिव० VIII. i. 57
चित् — VIII. ii. 101
चित् (यह निपात भी जब उपमा के अर्थ में प्रयुक्त हो तो वाक्य के टि को अनुदात्त प्लुत होता है)।
चित... — VI. iii. 64
देखें — चिततूलभारिषु VI. iii. 64
चितः — VI. i. 157
चकार इत् वाले समुदित शब्द को (अन्तोदात्त होता है)।
चिततूलभारिषु — VI. iii. 64
(इष्टका, इषीका, माला— इन शब्दों को) चित, तूल तथा भारिन् शब्दों के उत्तरपद रहते (यथासङ्ख्य करके ह्रस्व हो जाता है)।
...चिति... — III. iii. 41
देखें — निवासचिति० III. iii. 41
चितेः — VI. iii. 126
(कप् परे रहते) चिति शब्द को (दीर्घ हो जाता है, संहिता-विषय में)।
चित्तवति — V. i. 88
चित्तवान् = चेतन प्रत्ययार्थ के अभिधेय होने पर (द्वितीयासमर्थ वर्षशब्दान्त द्विगुसञ्ज्ञक प्रातिपदिकों से 'सत्कारपूर्वक व्यापार', 'खरीदा हुआ', ' हो चुका' तथा 'होने वाला'– इन अर्थों में उत्पन्न प्रत्यय का नित्य ही लुक् होता है)।
चित्तवत्कर्तृकात्— I. iii. 88
(अण्यन्तावस्था में अकर्मक तथा) चेतन कर्ता वाले धातु से (ण्यन्तावस्था में परस्मैपद होता है)।
चित्तविरागे — VI. iv. 91
चित्त के विकार अर्थ में (दोष् अङ्ग की उपधा को णि परे रहते विकल्प से ऊकारादेश होता है)।
चित्य... — III. i. 132
देखें — चित्याग्निचित्ये III. i. 132
चित्याग्निचित्ये — III. i. 132
(अग्नि अभिधेय है तो) चित्य तथा अग्निचित्या शब्द भी निपातन किये जाते हैं।
...चित्र... — III. ii. 21
देखें — दिवाविभा० III. ii. 21
...चित्रङः — III. i. 19
देखें — नमोवरिवश्चित्रङः III. i. 19
चित्रीकरणे— III. iii. 150
आश्चर्य गम्यमान हो तो (भी यच्च, यत्र उपपद रहते धातु से लिङ् प्रत्यय होता है)।
...चिद्... — VIII. i. 57
देखें — चनचिदिवगोत्रादि० VIII. i. 57

चिद्— VIII. ii. 101

चित् = (इति) यह निपात (भी जब उपमा के अर्थ में प्रयुक्त हो तो वाक्य के टि को अनुदात्त प्लुत होता है)।

चिदुत्तरम् —VIII. i. 48

जिससे उत्तर चित् है (तथा जिससे पूर्व कोई शब्द नहीं है, ऐसे किंवृत्त शब्द से युक्त तिङन्त को अनुदात्त नहीं होता)।

...चिनोति... VIII. iv. 17

देखें — गदनद० VIII. iv. 17

चिन्ति... III. iii. 105

देखें — चिन्तिपूजि० III. iii. 105

चिन्तिपूजिकथिकुम्बिचर्चः — III. iii. 105

चिति, पूज्, कथ, कुम्ब तथा चर्च् धातुओं से (भी स्त्रीलिङ्ग कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में अङ् प्रत्यय होता है)।

चिर... — VI. ii. 6

देखें — चिरकृच्छ्रयोः VI. ii. 6

चिरकृच्छ्रयोः — VI. ii. 6

चिर तथा कृच्छ्र शब्द उत्तरपद रहते (तत्पुरुष समास में प्रतिबन्धिवाची पूर्वपद को प्रकृतिस्वर होता है)।

चिरम् — VI. ii. 127

(तत्पुरुष समास में उपमानवाची) चीर उत्तरपद शब्द को (आद्युदात्त होता है)।

...चिरम्... IV. iii. 23

देखें — सायंचिरंप्राह्णे० IV. iii. 23

चिस्फुरोः — VI. i. 53

चि तथा स्फुर् धातुओं के (एच् के स्थान में णिच् प्रत्यय के परे रहते विकल्प से आत्व हो जाता है)।

चिहणादीनाम् — VI. ii. 125

(नपुंसकलिङ्ग कन्थान्त तत्पुरुष समास में) चिहणादि-गणपठित शब्दों के (आदि को उदात्त होता है)।

चीरम् — VI. ii. 127

(तत्पुरुष समास में उपमानवाची) चीर उत्तरपद शब्द को (आद्युदात्त होता है)।

चीरम् = लम्बा, कम चौड़ा वस्त्र।

...चीवरात् — III. i. 20

देखें — पुच्छभाण्डचीवरात् III. i. 20

चु... — I. iii. 7

देखें — चुटू I. iii. 7

चु... — V. iv. 106

देखें — चुदषहान्तात् V. iv. 106

चुः — VII. iv. 62

(अभ्यास के कवर्ग तथा हकार को) चवर्ग आदेश होता है)।

....चुः — VIII. iv. 39

देखें — श्चुः VIII. iv. 39

चुञ्चुप्... — V. ii. 26

देखें — चुञ्चुप्चणपौ V. ii. 26

चुञ्चुप्चणपौ — V. ii. 26

(तृतीयासमर्थ प्रातिपदिक से 'ज्ञात' अर्थ में) चुञ्चुप् और चणप् प्रत्यय होते हैं।

चुटू — I. iii. 7

(उपदेश में प्रत्यय के आदि में वर्तमान) चवर्ग और टवर्ग (इत्सञ्ज्ञक होते हैं)।

चुदषहान्तात् — V. iv. 107

(समाहार द्वन्द्व में वर्त्तमान) चवर्गान्त, दकारान्त, षकारान्त तथा हकारान्त शब्दों से (समासान्त टच् प्रत्यय होता है)।

...चुना — VIII. iv. 39

देखें — श्चुना VIII. iv. 39

...चुरादिभ्यः — III. i. 25

देखें — सत्यापपाश० III. i. 25

...चूर्ण... — III. i. 25

देखें —सत्यापपाश० III. i. 25

...चूर्ण... — III. iv. 35

देखें — शुष्कचूर्णरूक्षेषु III. iv. 35

चूर्णात् — IV. iv. 23

(तृतीयासमर्थ) चूर्ण प्रातिपदिक से (मिला हुआ अर्थ में इनि प्रत्यय होता है)।

चूर्णादीनि — VI. ii. 134

(प्राणिभिन्न षष्ठ्यन्त शब्द से उत्तर तत्पुरुष समास में चूर्णादि उत्तरपद शब्दों को (आद्युदात्त होता है)।

...चृत... — VII. ii. 57

देखें — कृतचृत० VII. ii. 57

...चृतेः — III. i. 110
देखें —अक्लृपिचृतेः III. i. 110

चेः — III. ii. 71
'चिञ्' धातु से (अग्नि कर्म उपपद रहते 'क्विप्' प्रत्यय होता है,) भूतकाल में।

चेत् — I. ii. 65
(वृद्ध= गोत्र प्रत्ययान्त शब्द युवा प्रत्ययान्त के साथ शेष रह जाता है,) यदि (वृद्ध युव प्रत्ययनिमित्त ही भेद हो तो)।

चेत् — I. iii. 55
(तृतीया विभक्ति से युक्त सम्-पूर्वक दाण् धातु से भी आत्मनेपद होता है) यदि (वह तृतीया चतुर्थी के अर्थ में हो तो)।

चेत् — I. iii. 67
(अण्यन्तावस्था में जो कर्म, वही) यदि (ण्यन्तावस्था में कर्त्ता बन रहा हो, तो ण्यन्त धातु से आत्मनेपद होता है, आध्यान= अर्थात् उत्कण्ठापूर्वक स्मरण अर्थ को छोड़कर।

चेत् — III. iii. 154
(पर्याप्तिविशिष्ट सम्भावन अर्थ में वर्त्तमान धातु से लिङ् प्रत्यय होता है,) यदि (अलम् शब्द का अप्रयोग सिद्ध हो रहा हो)।

चेत् — III. iv. 27
(अन्यथा, एवं, कथं, इत्थम् शब्दों के उपपद रहते कृञ् धातु से णमुल् प्रत्यय होता है), यदि (कृञ् का अप्रयोग सिद्ध हो)।

चेत्— V. i. 114
(तृतीयासमर्थ प्रातिपदिकों से 'समान' अर्थ में वति प्रत्यय होता है), यदि (वह समानता क्रिया की हो तो)।

चेत् — V. iv. 10
(स्थान-शब्दान्त प्रातिपदिक से विकल्प से छ प्रत्यय होता है), यदि (समान स्थान वाले व्यक्ति द्वारा स्थानान्तपदप्रतिपा द्य तत्त्व अर्थवान् हो तो)।

चेत् — VI. i. 130
('सः' के सु का लोप होता है, अच् परे रहते) यदि (लोप होने पर पाद की पूर्त्ति रही हो तो)।

...चेत्... — VIII. i. 30
देखें — यद्यदि० VIII. i. 30

चेत् — VIII. i. 51
(गत्यर्थक धातुओं के लोट् लकार से युक्त लृडन्त तिङन्त को अनुदात्त नहीं होता), यदि (कारक सारा अन्य न हो तो)।

...चेतस्... — V. iv. 51
देखें — अरुर्मनस्० V. iv. 51

...चेति... — III .i. 138
देखें — लिम्पविन्द० III. i. 138

चेल... — VI. ii. 126
देखें — चेलखेट० VI. ii. 126

चेलखेटकटुककाण्डम् — VI. ii. 126
चेल, खेट, कटुक, काण्ड— इन उत्तरपद शब्दों को (निन्दा गम्यमान होने पर आद्युदात्त होता है)।

...चेलड्... — VI. iii. 42
देखें — घरूप० VI. iii. 42

चेले — III. iv. 33
चेलवाची= वस्त्रवाची कर्म उपपद हों तो (वर्षा का प्रमाण गम्यमान होने पर ण्यन्त क्नूय् धातु से णमुल् प्रत्यय होता है)।

चेष्टायाम् — II. iii. 12
चेष्टा जिनकी क्रिया हो, ऐसे (गत्यर्थक धातुओं के मार्ग-रहित कर्म में द्वितीया और चतुर्थी विभक्ति होती है)।

...चेष्ट्योः ... — VII. iv. 96
देखें — वेष्टिचेष्ट्योः VII. iv. 96

...चैत्रीभ्यः... — IV. ii. 23
देखें — फाल्गुनीश्रवणा० IV. ii. 23

चोः — VIII. ii. 30
चवर्ग के स्थान में (कवर्ग आदेश होता है, झल् परे रहते या पदान्त में)।

चौ — VI. i. 216
चु परे रहते (पूर्व को अन्त उदात्त होता है)।

चौ — VI. iii. 137
चु परे रहते (पूर्व अण् को दीर्घ होता है)।

चौरे — V. i. 112

(प्रयोजन समानाधिक़रणवाची प्रथमासमर्थ एकागार प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में 'ऐकागारिकट्' शब्द का निपातन किया जाता है), चोर अभिधेय होने पर।

च्छ्... — VI. iv. 19

देखें — **च्छ्वो: VI. iv. 19**

च्छ्वो: — VI . iv. 19

च्छ् तथा व् के स्थान में (यथासङ्ख्य करके श् और ऊठ् आदेश होते हैं; अनुनासिक प्रत्यय, क्वि तथा झलादि कित् ङित् प्रत्ययों के परे रहते)।

च्फञ् — IV. i. 98

(गोत्रापत्य में षष्ठीसमर्थ कुञ्जादि प्रातिपदिकों से) च्फञ् प्रत्यय होता है।

...च्फञो: — V. iii. 113

देखें — **व्रातच्फञो: —V. iii. 113**

...च्यवतीनाम् — VII. iv. 81

देखें — **स्रवतिशृणोति० VII. iv. 81**

च्लि: — III. i. 43

(धातुमात्र से) च्लि प्रत्यय होता है,(लुङ् परे रहते)।

च्ले: — III. i. 44

च्लि के स्थान में (सिच् आदेश होता है)।

...च्वि... — I. iv. 60

देखें — **ऊर्यादिच्विडाच: I. iv. 60**

च्वि: — V. iv. 50

(कृ, भू तथा अस् धातु के योग में सम्-पूर्वक पद् धातु के कर्त्ता में वर्त्तमान प्रातिपदिक से) च्वि प्रत्यय होता है)।

च्वौ—VII. iv. 16

च्वि प्रत्यय परे रहते (भी अजन्त अङ्ग को दीर्घ होता है)।

च्वौ — VII. iv. 32

(अवर्णान्त अङ्ग को) च्वि परे रहते (ईकारादेश होता है)।

च्व्यर्थे — III. iv. 62

च्व्यर्थ में वर्तमान (नाधार्थ प्रत्ययान्त शब्द उपपद हों तो कृ, भू धातुओं से क्त्वा और णमुल् प्रत्यय होते हैं)।

च्व्यर्थेषु — III. ii. 56

च्व्यर्थ में वर्तमान (अच्व्यन्त 'कृ' धातु से करण कारक में 'ख्युन्' प्रत्यय होता है); आढ्य, सुभग, स्थूल, पलित, नग्न, अन्ध तथा प्रिय कर्म के उपपद रहते)।

...च्व्यो: — IV. iv. 152

देखें — **क्यच्व्यो: VI. iv. 152**

छ

...छ्... — VI. iv. 19

देखें — **च्छ्वो: VI. iv. 19**

छ — प्रत्याहारसूत्र XI

आचार्य पाणिनि द्वारा अपने ग्यारहवें प्रत्याहार सूत्र में पठित तृतीय वर्ण।

पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का बत्तीसवां वर्ण।

छ — IV. i. 149

(फिञन्त वृद्धसंज्ञक प्रातिपदिक सौवीर गोत्रापत्य से कुत्सित युवापत्य को कहने में) छ (तथा ठक्) प्रत्यय (बहुल करके) होता है।

छ — IV. ii. 27

(प्रथमासमर्थ देवतावाची अपोनप्तृ तथा अपांनप्तृ शब्दों से) छ प्रत्यय (भी) होता है।

छ — IV. ii. 31

(प्रथमासमर्थ देवतावाची द्यावापृथिवी, शुनासीर, मरुत्वत्, अग्नीषोम, वास्तोष्पति, गृहमेध प्रातिपदिकों से) छ (तथा यत्) प्रत्यय (होते हैं)।

छ — IV. iv. 14

(तृतीयासमर्थ आयुध प्रातिपदिक से) छ (तथा ठन्) प्रत्यय (होते हैं)।

छ — V. i. 39

(षष्ठीसमर्थ पुत्र प्रातिपदिक से 'कारण' अर्थ में) छ प्रत्यय (तथा यत् प्रत्यय होते हैं, यदि वह कारण संयोग अथवा उत्पात हो तो)।

छ — V. i. 68

(द्वितीयासमर्थ कडङ्कर और दक्षिणा प्रातिपदिकों से 'समर्थ है' अर्थ में) छ (और यत्) प्रत्यय (होते हैं)।

छ —V. i. 110
(प्रयोजन समानाधिकरणवाची प्रथमासमर्थ अनुप्रवचनादि प्रातिपदिकों से षष्ठ्यर्थ में) छ प्रत्यय होता है।

छ —V. i. 134
(षष्ठीसमर्थ ऋत्विग् विशेषवाची प्रातिपदिकों से भाव और कर्म अर्थों में) छ प्रत्यय होता है।

छ — V. ii. 17
(द्वितीयासमर्थ अभ्यमित्र प्रातिपदिक से 'पर्याप्त जाता है' अर्थ में) छ,(यत् और ख) प्रत्यय (होते हैं)।

छ — V. iv. 9
(जाति शब्द अन्त वाले प्रातिपदिक से द्रव्य गम्यमान हो तो स्वार्थ में) छ प्रत्यय होता है।

...छ... — VII. i. 2
देखें — **फढखछ० VII. i. 2**

...छ... — VIII. ii. 36
देखें — **व्रश्चभ्रस्ज० VIII. ii. 36**

छः — IV. i. 143
(स्वसृ प्रातिपदिक से अपत्यार्थ में) छ प्रत्यय होता है।

छः — IV. ii. 6
(तृतीयासमर्थ नक्षत्र के द्वन्द्ववाची शब्दों से 'युक्त काल' अर्थ में) छ प्रत्यय होता है।

छः — IV. ii. 89
(उत्करादि प्रातिपदिकों से चातुरर्थिक) छ प्रत्यय होता है।

छः — IV. ii. 113
(वृद्धसंज्ञक प्रातिपदिक से शैषिक) छ प्रत्यय होता है।

छः — IV. ii. 136
(गर्त्त शब्द उत्तरपदवाले देशवाची प्रातिपदिकों से शैषिक) छ प्रत्यय होता है।

छः — IV. iii. 62
(सप्तमीसमर्थ जिह्वामूल तथा अङ्गुलि प्रातिपदिकों से भव अर्थ में) छ प्रत्यय होता है।

छः — IV. iii. 88
(शिशुक्रन्द, यमसभ, द्वन्द्ववाची तथा इन्द्रजननादिगणपठित शब्दों से 'अधिकृत्य कृते ग्रन्थे' अर्थ में) छ प्रत्यय होता है।

छः — IV. iii. 91
(प्रथमासमर्थ पर्वतवाची प्रातिपदिकों से 'वह इनका अभिजन' अर्थ में) छ प्रत्यय होता है,(आयुधजीवियों को कहने के लिये)।

छः — IV. iii. 130
(षष्ठीसमर्थ रैवतिकादि प्रातिपदिकों से 'इदम्' अर्थ में) छ प्रत्यय होता है।

छः — V. i. 1
('तेन क्रीतम्' इस सूत्र से पहले पहले कहे गए अर्थों में) छ प्रत्यय अधिकृत होता है।

छः — V. i. 90
(द्वितीयासमर्थ वत्सर-शब्दान्त प्रातिपदिकों से 'सत्कारपूर्वक व्यापार', 'खरीदा हुआ', 'हो चुका' तथा 'होने वाला'— इन अर्थों में) छ प्रत्यय होता है,(वेदविषय में)।

छः — V. ii. 59
(प्रातिपदिक मात्र से मत्वर्थ में) छ प्रत्यय होता है,(सूक्त और साम वाच्य हो तो)।

छः — V. iii. 105
(कुशाग्र प्रातिपदिक से इवार्थ में) छ प्रत्यय होता है।

छः — V. iii. 116
(शस्त्रों से जीविका कमाने वाले पुरुषों के समूहवाची दामन्यादिगणपठित तथा त्रिगर्त्तषष्ठ प्रातिपदिक से स्वार्थ में) छ प्रत्यय होता है।

छः — VII. iii. 77
(इषु, गम्लृ तथा यम् अङ्गों को शित् प्रत्यय परे रहते) छकारादेश होता है।

छः — VIII. iv. 61
(झय् प्रत्याहार से उत्तर शकार के स्थान में अट् परे रहते विकल्प से) छकार आदेश होता है।

...छगलात्... — IV. i. 117
देखें — **विकर्णशुङ्ग० IV. i. 117**

छगलिनः — IV. iii. 109
(तृतीयासमर्थ) छगलिन् प्रातिपदिक से (वेदविषय में प्रोक्त अर्थ को कहने में ढिनुक् प्रत्यय होता है)।
छगलिन् = कलापि का शिष्य।

छण् — IV. i. 132

(पितृष्वसृ शब्द से अपत्य अर्थ में) छण् प्रत्यय होता है।

...छण्... — IV. ii. 79

देखें — **वुञ्छण्कठ० IV. ii. 79**

...छण्... — IV. iii. 94

देखें — **ढक्छण्ढ्ञ्यकः IV. iii. 94**

छण् — IV. iii. 102

(तित्तिरि, वरतन्तु, खण्डिका, उख प्रातिपदिकों से छन्दोविषयक प्रोक्त अर्थ में) छण् प्रत्यय होता है।

छत्रादिभ्यः — IV. iv. 62

(शील समानाधिकरणवाची प्रथमासमर्थ) छत्रादि प्रातिपदिकों से (षष्ठ्यर्थ में ण प्रत्यय होता है)।

छदिः ... — V. i. 13

देखें — **छदिरुपधिबलेः V. i. 13**

छदिरुपधिबलेः V. i. 13

(चतुर्थीसमर्थ विकृतिवाची) छदिस्, उपधि और बलि प्रातिपदिकों से ('उसकी विकृति के लिए प्रकृति' अभिधेय होने पर 'हित' अर्थ में ढञ् प्रत्यय होता है)।

छन्दः... — IV. ii. 65

देखें — **छन्दोब्राह्मणानि IV. ii. 65**

छन्दः — V. ii. 84

'वेद को (पढ़ता है' अर्थ में श्रोत्रियन् शब्द का निपातन किया जाता है)।

छन्दसि — I. ii. 36

वेद-विषय में (तीनों स्वरों को विकल्प से एकश्रुति हो जाती है)।

छन्दसि — I. ii. 61

वेदविषय में (पुनर्वसु नक्षत्र के द्वित्व अर्थ में विकल्प से एकत्व होता है)।

छन्दसि — I. iv. 9

वेदविषय में (षष्ठ्यन्त से युक्त पति शब्द विकल्प से घिसंज्ञक होता है)।

छन्दसि — I. iv. 20

वेदविषय में (अयस्मय आदि शब्द साधु समझे जायें)।

छन्दसि — I. iv. 80

वेदविषय में (गति-उपसर्गसंज्ञक शब्द धातु से पर तथा पूर्व में भी आते हैं)।

छन्दसि — II. iii. 3

वेद-विषय में (हु धातु के अनभिहित कर्म में तृतीया और द्वितीया विभक्ति होती है)।

छन्दसि — II. iii. 62

वेद में (चतुर्थी के अर्थ में षष्ठी विभक्ति बहुल करके होती है)।

छन्दसि —II. iv. 28

वेद में (हेमन्तशिशिर और अहोरात्र पूर्वपद के समान लिङ्गवाले होते हैं)।

छन्दसि — II. iv. 39

वेद में (बहुल करके अद् को घस्लृ आदेश होता है, घञ् और अच् प्रत्यय के परे रहते)।

छन्दसि — II. iv. 73

वेद में (शप् का लुक् बहुल करके होता है)।

छन्दसि — II. iv. 76

(जुहोत्यादि धातुओं से परे) वेद में (शप् के स्थान में बहुल करके श्लु होता है)।

छन्दसि — III. i. 42

(अभ्युत्सादयामकः, प्रजनयामकः, चिकयामकः, रमयामकः, पावयांक्रियात् तथा विदामक्रन् पद) वेदविषय में (विकल्प से निपातित होते हैं)।

छन्दसि — III. 1. 50

वेद-विषय में (गुप् धातु से परे च्लि के स्थान में विकल्प से चङ् आदेश होता है, कर्तृवाची लुङ् परे रहने पर)।

छन्दसि — III. i. 59

वेद-विषय में (कर्तृवाची लुङ् परे रहने पर कृ, मृ, दृ तथा रुह् धातुओं से उत्तर च्लि के स्थान में अङ् आदेश होता है)।

छन्दसि — III. i. 84

वेदविषय में (श्ना के स्थान में शायच् आदेश होता है, तथा शानच् भी होता है)।

छन्दसि — III. i. 123

वेदविषय में (निष्टर्क्य, देवहूय, प्रणीय, उन्नीय, उच्छिष्य, मर्य, स्तर्या, ध्वर्य, खन्य, खान्य, देवयज्या, आपृच्छ्य, प्रतिषीव्य, ब्रह्मवाद्य, भाव्य, स्ताव्य, उपचाय्यपृड — इन शब्दों का निपातन किया जाता है)।

छन्दसि— III. ii. 27
वेदविषय में (वन, षण, रक्ष, मथ धातुओं से कर्म उपपद रहते इन् प्रत्यय होता है)।

छन्दसि — III. ii. 63
वेद विषय में ('सह्' धातु से सुबन्त उपपद रहते 'ण्वि' प्रत्यय होता है)।

छन्दसि — III. ii. 73
वेदविषय में (उप उपपद रहते 'यज्' धातु से 'णिच्' प्रत्यय होता है)।

छन्दसि — III. ii. 88
वेदविषय में (कर्म उपपद रहते भूतकाल में हन् धातु से बहुल करके क्विप् प्रत्यय होता है)।

छन्दसि — III. ii. 105
वेद-विषय में (धातुमात्र से सामान्य भूतकाल में लिट् प्रत्यय होता है)।

छन्दसि — III. ii. 137
(ण्यन्त धातुओं से) वेदविषय में (तच्छीलादि कर्त्ता हो, तो वर्त्तमानकाल में इष्णुच् प्रत्यय होता है)।

छन्दसि — III. ii. 170
(क्य प्रत्ययान्त धातुओं से तच्छीलादि कर्त्ता हों तो वर्त्तमानकाल में) वेदविषय में (उ प्रत्यय होता है)।

छन्दसि — III. iii. 129
वेदविषय में (गत्यर्थक धातुओं से कृच्छ्र, अकृच्छ्र अर्थों में ईषद्, दुर्, सु उपपद हों तो युच् प्रत्यय होता है)।

छन्दसि — III. iv. 6
वेदविषय में (धात्वर्थ- सम्बन्ध होने पर विकल्प से लुङ् लङ्, लिट् प्रत्यय होते हैं)।

छन्दसि — III. iv. 88
(पूर्वसूत्र से जो लोट् को हि विधान किया है, उसको) वेदविषय में (विकल्प से अपित् होता है)।

छन्दसि — III. iv. 117
वेदविषय में (दोनों सार्वधातुक, आर्धधातुक संज्ञायें होती हैं)।

छन्दसि — IV. i. 46
(बह्वादि अनुपसर्जन प्रातिपदिकों से) वेद-विषय में (नित्य ही स्त्रीलिङ्ग में ङीष् प्रत्यय होता है)।

छन्दसि — IV. i. 59
वेदविषय में (दीर्घजिह्वी शब्द भी ङीष्-प्रत्ययान्त निपातन किया जाता है)।

छन्दसि — IV. i. 71
(कद्रु और कमण्डलु शब्दों से) वेदविषय में (स्त्रीलिङ्ग में ऊङ् प्रत्यय होता है)।

छन्दसि — IV. iii. 19
(वर्षा प्रातिपदिक से) वेदविषय में (ठञ् प्रत्यय होता है)।

छन्दसि — IV. iii. 106
(तृतीयासमर्थ शौनकादि प्रातिपदिकों से प्रोक्त विषय में) छन्द अभिधेय होने पर (णिनि प्रत्यय होता है)।

छन्दसि — IV. iii. 147
(षष्ठीसमर्थ दो अच् वाले प्रातिपदिक से) वेदविषय में (विकार अवयव अर्थ अभिधेय होने पर मयट् प्रत्यय होता है)।

छन्दसि — IV. iv. 106
(सप्तमीसमर्थ सभा शब्द से साधु अर्थ में) वैदिक प्रयोग विषय में (ढ प्रत्यय होता है)।

छन्दसि — IV. iv. 110
(सप्तमीसमर्थ प्रातिपदिक से भव अर्थ में) वेद-विषय में (यत् प्रत्यय होता है)।

छन्दसि — V. i. 60
(परिमाण समानाधिकरण वाले प्रथमासमर्थ सप्त प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में अञ् प्रत्यय होता है) वेद विषय में, (वर्ग अभिधेय होने पर)।

छन्दसि — V. i. 66
(द्वितीयासमर्थ प्रातिपदिक मात्र से) वेदविषय में (भी 'समर्थ है' अर्थ में यत् प्रत्यय होता है)।

छन्दसि — V. i. 90
(द्वितीयासमर्थ वत्सरशब्दान्त प्रातिपदिकों से 'सत्कारपूर्वक व्यापार', 'खरीदा हुआ', 'हो चुका' तथा 'होने वाला' अर्थों में छ प्रत्यय होता है), वेदविषय में।

छन्दसि — V. i. 105
वेदविषय में (प्रथमासमर्थ ऋतु प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में घस् प्रत्यय होता है, यदि वह प्रथमासमर्थ ऋतु प्रातिपदिक प्राप्त समानाधिकरण वाला हो तो।

छन्दसि — V. i. 116

(धातु के अर्थ में वर्त्तमान उपसर्ग से स्वार्थ में वति प्रत्यय होता है), वेद-विषय में।

छन्दसि — V. ii. 50

(सङ्ख्या आदि में न हो जिसके, ऐसे षष्ठीसमर्थ सङ्ख्यावाची नकारान्त प्रातिपदिक से 'पूरण' अर्थ में विहित डट् प्रत्यय को थट् तथा मट् आगम होना है) वेदविषय में।

छन्दसि — V. ii. 89

वेद-विषय में (परिपन्थिन् और परिपरिन् शब्दों का निपातन किया जाता है, 'पर्यवस्थाता' = मार्ग का अवरोधक वाच्य हो तो)।

छन्दसि — V. ii. 122

(प्रातिपदिकों से) वैदिक प्रयोग-विषय में (बहुल करके 'मत्वर्थ' में विनि प्रत्यय होता है)।

छन्दसि — V. iii. 13

वेदविषय में (सप्तम्यन्त किम् शब्द से विकल्प से ह प्रत्यय भी होता है)।

छन्दसि — V. iii. 20

(उन सप्तम्यन्त इदम् तथा तत् प्रातिपदिकों से) वेदविषय में (यथासङ्ख्य करके दा और र्हिल् प्रत्यय होते हैं, तथा यथाप्राप्त दानीम् प्रत्यय भी होता है)।

छन्दसि — V. iii. 26

('हेतु' तथा 'प्रकारवचन' अर्थ में वर्त्तमान किम् प्रातिपदिक से था प्रत्यय होता है), वेदविषय में।

छन्दसि — V. iii. 59

वेदविषय में (तृन्, तृच् अन्तवाले प्रातिपदिकों से अजादि अर्थात् इष्ठन्, ईयसुन् प्रत्यय होते हैं।

छन्दसि — V. iii. 111

(प्रत्न, पूर्व, विश्व, इम – इन प्रातिपदिकों से इवार्थ में थाल् प्रत्यय होता है), वेद विषय में।

छन्दसि — V. iv. 12

(किम्, एकारान्त, तिङन्त तथा अव्ययों से विहित जो तरप्, तमप् प्रत्यय; तदन्त से) वेदविषय में (अमु तथा आमु प्रत्यय होते हैं, द्रव्य का प्रकर्ष न कहना हो तो)।

छन्दसि — V. iv. 41

('प्रशंसाविशिष्ट' अर्थ में वर्त्तमान वृक तथा ज्येष्ठ प्रातिपदिकों से यथासङ्ख्य करके तिल् तथा तातिल् प्रत्यय भी होते हैं); वेदविषय में।

छन्दसि — V. iv. 103

(नपुंसकलिङ्ग में वर्त्तमान अनन्त तथा असन्त तत्पुरुष से समासान्त टच् प्रत्यय होता है), वेदविषय में।

छन्दसि — V. iv. 123

वेदविषय में (बहुप्रजास् शब्द सिच्- प्रत्ययान्त निपातन किया जाता है, बहुव्रीहि समास में)।

छन्दसि — V. iv. 142

वेदविषय में (भी दन्त शब्द को समासान्त दतृ आदेश होता है, बहुव्रीहि समास में)।

छन्दसि — V. iv. 158

(बहुव्रीहि समास में ऋवर्णान्त शब्दों से) वेदविषय में (समासान्त कप् प्रत्यय नहीं होता है)।

छन्दसि — VI. i. 33

वेदविषय में (ह्वेञ् धातु को बहुल करके सम्प्रसारण हो जाता है)।

छन्दसि — VI. i. 51

('खिद् दैन्ये' धातु के एच् के स्थान में) वेदविषय में (विकल्प से आत्त्व हो जाता है)।

छन्दसि — VI. i. 59

वेदविषय में (शीर्षन् शब्द का निपातन किया जाता है)।

छन्दसि — V. i. 68

(शि का बहुल करके लोप हो जाता है), वेदविषय में।

छन्दसि — VI. i. 80

(भय्य तथा प्रवय्य शब्द भी निपातन किये जाते हैं) वेदविषय में।

छन्दसि — VI. i. 102

(दीर्घ से उत्तर जस् तथा इच् परे रहते) वेदविषय में (पूर्व पर के स्थान में पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश विकल्प से होता है)।

छन्दसि — VI. i. 122

(आङ् को अच् परे रहते संहिता के विषय में) और वेद-विषय में (बहुल करके अनुनासिक आदेश होता है, तथा उस अनुनासिक को प्रकृतिभाव भी हो जाता है)।

छन्दसि — VI. i. 129

(स्यः शब्द के सु को) वेदविषय में (हल् परे रहते बहुल करके लोप हो जाता है)।

छन्दसि — VI. i. 164

(अञ्चु धातु से उत्तर) वेदविषय में (सर्वनामस्थानभिन्न विभक्ति उदात्त होती है)।

छन्दसि — VI. i. 172

वेदविषय में (ङ्यन्त शब्द से उत्तर बहुल करके नाम् विभक्ति उदात्त होती है)।

छन्दसि — VI. i. 203

(जुष्ट तथा अर्पित शब्दों को भी) वेदविषय में (विकल्प से आद्युदात्त होता है)।

छन्दसि — VI. ii. 119

(बहुव्रीहि समास में सु से उत्तर दो अच् वाले आद्युदात्त शब्द को) वेदविषय में (आद्युदात्त ही होता है)।

छन्दसि — VI. ii. 164

वेदविषय में (सख्या शब्द से परे स्तन शब्द को बहुव्रीहि समास में विकल्प से अन्तोदात्त होता है)।

छन्दसि — VI. ii. 199

वेदविषय में उत्तरपद (पर=सक्थ शब्द के आदि को बहुल करके अन्तोदात्त होता है)।

छन्दसि — VI. iii. 32

(पितरामातरा यह शब्द भी) वेदविषय में (निपातन किया जाता है)।

छन्दसि — VI. iii. 83

वेदविषय में (समान शब्द को स आदेश हो जाता है; मूर्धन्, प्रभृति, उदर्क उत्तरपद न हो तो)।

छन्दसि — VI. iii. 95

(माद तथा स्थ उत्तरपद रहते) वेदविषय में (सह शब्द को सध आदेश होता है)।

छन्दसि — VI. iii. 107

(पथिन् शब्द उत्तरपद रहते भी) वेदविषय में (कु को 'कव' तथा 'का' आदेश विकल्प करके होते हैं)।

छन्दसि — VI. iii. 125

वेदविषय में (भी अष्टन् शब्द को दीर्घ हो जाता है, उत्तरपद परे रहते)।

छन्दसि — VI. iv. 5

वेदविषय में (तिसृ, चतसृ अङ्ग को दोनों प्रकार से अर्थात् दीर्घ एवं अदीर्घ देखा जाता है)।

छन्दसि — VI. iv. 58

वेद-विषय में ('यु मिश्रणे' तथा 'प्लुङ् गतौ' धातु को दीर्घ होता है, ल्यप् परे रहते)।

छन्दसि — VI. iv. 73

वेद-विषय में (भी आट् आगम देखा जाता है)।

छन्दसि — VI. iv. 75

(लुङ्, लङ्, लृङ् परे रहने पर) वेद-विषय में (माङ् का योग होने पर अट् आट् आगम बहुल करके होते हैं; और माङ् का योग न होने पर भी नहीं होते)।

छन्दसि — VI. iv. 86

(भू तथा सुधी अङ्गों को) वेद-विषय में (दोनों प्रकार से देखा जाता है)।

छन्दसि — VI. iv. 98

(तन् तथा पत् अङ्ग की उपधा का लोप होता है;) वेद-विषय में (अजादि कित्, ङित् प्रत्यय परे रहते)।

छन्दसि — VI. iv. 102

(श्रु, श्रृणु, पृ, कृ तथा वृ से उत्तर) वेद-विषय में (हि को धि आदेश होता है)।

छन्दसि — VI. iv. 162

(ऋजु अङ्ग के ऋकार के स्थान में विकल्प से र आदेश होता है) वेद-विषय में; (इष्ठन्, इमनिच्, ईयसुन् परे रहते)।

छन्दसि — VI. iv. 175

(ऋत्व्य, वास्त्व्य, वास्त्व, माध्वी, हिरण्यय — ये शब्द-रूप निपातन किये जाते हैं) वेद-विषय में।

छन्दसि — VII. i. 8

वेद-विषय में (झादेश अत् को बहुल करके रुट् आगम होता है)।

छन्दसि — VII. i. 10

वेद-विषय में (अकारान्त अङ्ग से उत्तर बहुल करके भिस् को ऐस् आदेश होता है।

छन्दसि — VII. i. 27

(इतर शब्द से उत्तर सु तथा अम् के स्थान में) वेद-विषय में (अद्ड् आदेश नहीं होता)।

छन्दसि — VII. i. 38

(अनञ्पूर्व समास में क्त्वा के स्थान में क्त्वा तथा ल्यप् आदेश भी) वेद-विषय में (होता है)।

छन्दसि — VII. i. 56

(श्री तथा ग्रामणी अङ्ग के आम् को) वेद-विषय में (नुट् का आगम होता है)।

छन्दसि — VII. i. 76

(अस्थि, दधि, सक्थि अङ्गों को) वेद-विषय में (भी अनङ् देखा जाता है)।

छन्दसि — VII. i. 83

(दृक्, स्ववस्, स्वतवस् अङ्गों को) वेद-विषय में (सु परे रहते नुम् आगम होता है)।

छन्दसि — VII. i. 103

वेद- विषय में (ऋकारान्त धातु अङ्ग को बहुल करके इकारादेश होता है)।

छन्दसि — VII. ii. 31

('ह्रु कौटिल्ये' धातु को निष्ठा परे रहते) वेद- विषय में (हु आदेश होता है)।

छन्दसि — VII. iii. 97

(अस् तथा सिच् से उत्तर हलादि अपृक्त सार्वधातुक को बहुल करके) वेद-विषय में (ईट् आगम होता है)।

छन्दसि — VII. iv. 8

वेद-विषय में (चङ्परक णि परे रहते उपधा ऋवर्ण के स्थान में नित्य ही ऋकारादेश होता है)।

छन्दसि — VII. iv. 35

(पुत्र शब्द को छोड़कर अवर्णान्त अङ्ग को) वेद-विषय में (क्यच् परे रहते जो कुछ कहा है, वह नहीं होता)।

छन्दसि — VII. iv. 44

(ओहाक् अङ्ग को विकल्प से) वेद-विषय में (क्त्वा प्रत्यय परे रहते 'हि' आदेश होता है)।

छन्दसि — VII. iv. 64

(कृष् अङ्ग के अभ्यास को) वेद-विषय में (यङ् परे रहते चवर्गादेश नहीं होता)।

छन्दसि — VII. iv. 78

वेद-विषय में (अभ्यास को बहुल करके श्लु होने पर इकारादेश होता है)।

छन्दसि — VIII. i. 35

(हि से युक्त साकाङ्क्ष अनेक तिङन्त को भी तथा अपि ग्रहण से एक को भी कहीं कहीं अनुदात्त नहीं होता), वेदविषय में।

छन्दसि — VIII. i. 56

(यत्परक, हिपरक तथा तुपरक तिङ् को) वेद-विषय में (अनुदात्त नहीं होता)।

छन्दसि — VIII. i. 64

(वै तथा वाव — इनसे युक्त प्रथम तिङन्त को भी विकल्प से) वेद-विषय में (अनुदात्त नहीं होता)।

छन्दसि — VIII. ii. 15

(इवर्णान्त तथा रेफान्त शब्दों से उत्तर) वेद-विषय में (मतुप् को नकारादेश होता है)।

छन्दसि — VIII. ii. 61

(नसत्त, निषत्त, अनुत्त, प्रतूर्त्त, सूर्त्त, गूर्त्त — ये शब्द) वेद-विषय में (निपातन किये जाते हैं)।

छन्दसि — VIII. ii. 70

(अम्नस्, ऊधस्, अवस् — इन पदों को) वेद-विषय में (दोनों प्रकार से अर्थात् रु एवं रेफ दोनों ही होते हैं)।

छन्दसि — VIII. iii. 1

(मत्वन्त तथा वस्वन्त पद को संहिता में सम्बुद्धि परे रहते) वेद-विषय में (रु आदेश होता है)।

छन्दसि — VIII. iii. 49

(प्र तथा आम्रेडित को छोड़कर जो कवर्ग तथा पवर्ग परे हों तो) वेद-विषय में (विसर्जनीय को विकल्प से सकारादेश होता है)।

छन्दसि — VIII. iii. 105

(इण् तथा कवर्ग से उत्तर स्तुत तथा स्तोम के सकार को) वेद- विषय में (कई आचार्यों के मत में मूर्धन्य आदेश होता है)।

छन्दसि — VIII. iii. 119

(नि, वि तथा अभि उपसर्गों से उत्तर सकार को अट् का व्यवधान होने पर) वेद- विषय में (विकल्प से मूर्धन्य आदेश नहीं होता)।

छन्दसि — VIII. iv. 25

वेद-विषय में (ऋकारान्त अवगृह्यमाण पूर्वपद से उत्तर नकार को णकारादेश होता है)।

...छन्दसोः... — IV. i. 29

देखें — संज्ञाछन्दसोः IV. i. 29

...छन्दसोः... — VI. iii. 62

देखें — संज्ञाछन्दसोः VI. iii. 62

छन्दसः — IV. iv. 93

(तृतीयासमर्थ) छन्दस् प्रातिपदिक से ('बनाया हुआ' अर्थ में यत् प्रत्यय होता है)।

छन्दसः — IV. ii. 54

(प्रथमासमर्थ) छन्दोवाची प्रातिपदिकों से (षष्ठ्यर्थ में यथाविहित- अण् प्रत्यय होता है, प्रगाथों के अभिधेय होने पर, यदि वह प्रथमासमर्थ छन्दस् आदि आरम्भ में हो)।

छन्दसः — IV. iii. 71

(षष्ठी-सप्तमीसमर्थ व्याख्यातव्यनाम) छन्दस् प्रातिपदिक से (भव और व्याख्यान अर्थों में यत् और यण् प्रत्यय होते हैं)।

छन्दोग... — IV. iii. 128

देखें — छन्दोगौक्थिक० IV. iii. 128

छन्दोगौक्थिकयाज्ञिकबह्वृचनटात् — IV. iii. 128

(षष्ठीसमर्थ) छन्दोग, औक्थिक, याज्ञिक, बह्वृच और नट प्रातिपदिकों से ('इदम्' अर्थ में ञ्य प्रत्यय होता है)।

औक्थिक = उक्थ मन्त्रों को बोलनेवाला ब्राह्मण।

छान्दोनाम्नि — III. iii. 34

(वि पूर्वक स्तॄञ् धातु से) छन्द का नाम (विष्टारपङ्क्ति आदि की कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव) में (घञ् प्रत्यय होता है)।

छन्दोनाम्नि — VIII. iii. 94

छन्द का नाम कहना हो तो (भी विष्टार शब्द में षत्व निपातन किया जाता है)।

छन्दोब्राह्मणानि— IV. ii. 65

(प्रोक्त-प्रत्ययान्त) छन्द और ब्राह्मणवाची शब्द (अध्येतृ, वेदितृ प्रत्ययविषयक होते हैं, अन्य प्रोक्त-प्रत्ययान्त शब्दों का केवल प्रोक्त अर्थ मात्र में भी प्रयोग होता है)।

...छन्न... — VII. ii. 27

देखें — दान्तशान्त० VII. ii. 27

छवि — VIII. iii. 7

(प्रशान् को छोड़कर नकारान्त पद को अम्परक) छव् प्रत्याहार परे रहते (रु होता है, संहिता में)।

...छसौ... — IV. ii. 114

देखें — ठक्छसौ IV. ii. 114

छस्य — VI. iv. 153

(बिल्वकादि शब्दों से उत्तर भसञ्ज्ञक) छ का (लुक् होता है)।

...छा... — II. iv. 78

देखें — घ्राधेट्शाच्छासः II. iv. 78

...छा... — VII. iii. 37

देखें — शाच्छासा० VII. iii. 37

छात्र्यादयः —VI. ii. 86

(शाला शब्द उत्तरपद रहते) छात्रि आदि शब्दों को (आद्युदात्त होता है)।

छादेः —VI. iv. 96

(जो दो उपसर्गों से युक्त नहीं है, ऐसे) छादि अङ्ग की (उपधा को घ प्रत्यय परे रहने पर ह्रस्व होता है)।

छाया — II. iv. 22

(नञ्कर्मधारयवर्जित) छायान्त (तत्पुरुष नपुंसकलिंग में होता है, बाहुल्य गम्यमान होने पर)।

...छाया... — II. iv. 25

देखें — सेनासुराच्छाया० II. iv. 25

...छाये — VI. ii. 14

देखें — मात्रोपज्ञोप० VI. ii. 14

...छिद... — III. ii. 61

देखें — सत्सू० III. ii. 61

...छिदेः... — III. ii. 162

देखें — विदिभिदिच्छिदेः III. ii. 162

...छिद्र... — VI. iii. 114

देखें — अविष्टाष्ट० VI. iii. 114

...छिन्न... — VI. iii. 114

देखें — अविष्टाष्ट० VI. iii. 114

...छुराम्... — VIII. ii. 79

देखें — भकुर्छुराम् VIII. ii. 79

...छृद... — VII. ii. 57
देखें — कृतचृत० VII. ii. 57
छे — VI. i. 71
छकार परे रहते (भी ह्रस्वान्त को तुक् का आगम होता है, संहिता के विषय में)।
...छेदात्... — V. i. 64
देखें — शीर्षच्छेदात् V. i. 64
छेदादिभ्यः — V. i. 63
(द्वितीयासमर्थ) छेदादि प्रातिपदिकों से ('नित्य ही समर्थ है' अर्थ में यथाविहित ठक् प्रत्यय होता है)।
...छेषु... — VI. iii. 98
देखें — आशीरास्था० VI. iii. 98
...छौ — IV. ii. 47
देखें— यच्छौ IV.l ii. 47
...छौ — IV. ii. 83
देखें — ठक्छौ IV. ii. 83
...छौ... — IV. iv. 117
देखें — घच्छौ IV. iv. 117

ज

ज — प्रत्याहारसूत्र X
भगवान् पाणिनि द्वारा अपने दशम प्रत्याहार सूत्र में पठित प्रथम वर्ण।
पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का पच्चीसवां वर्ण।
जः — VI. iv. 36
(हन् अङ्ग के स्थान में हि परे रहते) ज आदेश होता है।
जक्ष् — VI. i. 7
'जक्ष्' इस धातु की (तथा वह आरम्भ में है जिन छः धातुओं के, उनकी अभ्यस्त सञ्ज्ञा होती है)।
...जगती — IV. iv. 122
देखें — रेवतीजगतीहवि० IV. iv. 122
जगती = मानवजाति।
जगृभ्म — VII. ii. 64
'जगृभ्म' यह शब्द थल् परे रहते इडभावयुक्त निपातन किया जाता है, (वेदविषय में)।
जग्धिः — II. iv. 36
(अद् के स्थान में ल्यप् और तकारादि कित् आर्धधातुक परे रहते) जग्ध् (आदेश होता है)।
... जघन्य... — II. i. 57
देखें — पूर्वापरप्रथम० II. i. 57
जङ्गल — VII. iii. 25
देखें — जङ्गलधेनु० VII. iii. 25
जङ्गलधेनुवलजान्तस्य — VII. iii. 25
जङ्गल, धेनु तथा वलज अन्तवाले अङ्ग के (पूर्वपद के अचों में आदि अच् को वृद्धि होती है, तथा इन अङ्गों का उत्तरपद विकल्प से वृद्धिवाला होता है; ञित्, णित् तथा कित् तद्धित परे रहते)।
वलज = धान्यराशि।
...जङ्घम् — VI. ii. 114
देखें — कण्ठपृष्ठ० VI. ii. 114
...जङ्घा... — III. ii. 21
देखें — दिवाविभा० III. ii. 21
...जङ्घा... — IV. i. 55
देखें — नासिकोदरौष्ठ० IV. i. 55
...जतुनोः — IV. iii. 135
देखें — त्रपुजतुनोः IV. iii. 135
...जन... — I. iii. 86
देखें — बुधयुधनशजनेङ्० I. iii. 86
...जन... — III. i. 61
देखें — दीपजन० III. i. 61
जन... — III. ii. 67
देखें — जनसन० III. ii. 67
...जन... — III. iv. 72
देखें — गत्यर्थाकर्मक० III. iv. 72
...जन... — IV. ii. 43
देखें — ग्रामजनबन्धु० IV. ii. 43
...जन... — IV. iv. 97
देखें—मतजनहलात् — IV. iv. 97
...जन... — VI. i. 186
देखें— भीह्रीभृ० VI. i. 186
जन... — VI. iv. 42
देखें— जनसनखनाम् VI. iv. 42

...जन... — VI. iv. 98
देखें — गमहन० VI. iv. 98
...जनः — III. ii. 171
देखें— आदृगम० III. ii. 171
जनपद... — IV. ii. 124
देखें— जनपदतदवध्योश्च IV. ii. 124
...जनपद... — VI. iii. 84
देखें— ज्योतिर्जनपद० VI. iii. 84
जनपदतदवध्योः — IV. ii. 123

जनपद तथा जनपद अवधि के कहने वाले (वृद्धसंज्ञक प्रातिपदिकों से भी शैषिक वुञ् प्रत्यय होता है)।

जनपदवत् — IV. iii. 100

(बहुवचन-विषय में वर्त्तमान जो जनपद के समान ही क्षत्रियवाची प्रातिपदिक, उनको) जनपद की भांति (ही सारे कार्य हो जाते हैं)।

जनपदशब्दात् — IV. i. 166

जनपद को कहने वाले (क्षत्रिय अभिधायक) प्रातिपदिक से (अपत्य अर्थ में अञ् प्रत्यय होता है)।

जनपदस्य — VII. iii. 12

(सु, सर्व तथा अर्द्ध शब्द से उत्तर) जनपदवाची उत्तरपद शब्द के (अचों में आदि अच् को तद्धित ञित् णित् तथा कित् प्रत्यय परे रहते वृद्धि होती है)।

...जनपदाख्यान... — VI. ii. 103
देखें — ग्रामजनपदा० VI. ii. 103
जनपदिनाम् — IV. iii. 100

(बहुवचन—विषय में वर्तमान जो जनपद के समान ही) क्षत्रियवाची प्रातिपदिक, उनको (जनपद की भांति ही सारे कार्य हो जाते हैं)।

जनपदेन — IV. iii. 100

(बहुवचन-विषय में वर्त्तमान जो) जनपद के समान (ही क्षत्रियवाची प्रातिपदिक, उनको जनपद की भांति ही सारे कार्य हो जाते हैं)।

जनपदे — IV. ii. 80

(ङ्यन्त, आबन्त प्रातिपदिक से देश-सामान्य में जो चातुरर्थिक प्रत्यय उसका) प्रान्तविशेष को कहना हो तो (लुप् हो जाता है)।

...जनपदैकदेशात् — IV. iii. 7
देखें — ग्रामजनपदैकदेशात् IV. iii. 7
जनसनखनक्रमगमः — III. ii. 67

जन, सन, खन, क्रम, गम् — इन धातुओं से (सुबन्त उपपद रहते वेदविषय में विट् प्रत्यय होता है)।

जनसनखनाम् — VI. iv. 42

जन, सन, खन् — इन अङ्गों को (आकारादेश हो जाता है, झलादि सन् तथा झलादि कित्, ङित् परे रहते)।

...जनिभ्यः — II. iv. 80
देखें — घसह्वरणश० II. iv. 80
जनि... — VII. iii. 35
देखें — जनिवध्योः VII. iii. 35
जनिकर्त्तुः — I. iv. 30

जन्यर्थ = जन्म का जो कर्त्ता = उत्पन्न होने वाला, उसकी (जो प्रकृति = उपादानकारण, उस कारक की अपादान संज्ञा होती है)।

जनिता — VI. iv. 53

(मन्त्र-विषय में) इडादि तृच् परे रहते 'जनिता' शब्द निपातित होता है।

...जनिभ्यः — II. iv. 80
देखें — घसह्वरणश० II. iv. 80
...जनिभ्यः — III. iv. 16
देखें — स्थेण्कृञ्० III. iv. 16
जनिवध्योः — VII. iii. 35

(जन तथा वध अङ्ग को भी चिण् तथा ञित्, णित् कृत् परे रहते जो कहा गया, वह नहीं होता)।

जनेः — III. ii. 97

'जन्' धातु से (सप्तम्यन्त उपपद रहते 'ड' प्रत्यय होता है), भूतकाल में।

...जनोः — VII. ii. 78
देखें— ईडजनोः VII. ii. 78
...जनोः — VII. iii. 79
देखें — ज्ञाजनोः VII. iii. 79
...जन्य... — III. iv. 68
देखें— भव्यगेय० III. iv. 68

जन्याः — IV. iv. 82

(द्वितीयासमर्थ) जनी (वधू) प्रातिपदिक से (संज्ञा गम्यमान होने पर 'ढोता है' अर्थ में यत् प्रत्यय होता है)।

...जप... — III. i. 24

देखें — **लुपसदचर०** III. i. 24

...जप... — III. ii. 166

देखें—**यजजपदशाम्** III. ii. 166

जप... — VII. iv. 86

देखें — **जपजभ०** VII. iv. 86

जपजभदहदशभञ्जपशाम् — VII. iv. 86

जप, जभी, दह, दश, भञ्ज पश—इन अङ्गों के (अभ्यास को भी नुक् आगम होता है)।

...जपोः — III. ii. 13

देखें — **रमिजपोः** III. ii. 13

...जपोः — III. iii. 61

देखें — **व्यधजपोः** III. iii. 61

...जभ... — III. i. 24

देखें— **लुपसदचर०** III. i. 24

...जभ... — VII. iv. 86

देखें— **जपजभ०** VII. iv. 86

... जभोः — VII. i. 61

देखें— **रधिजभोः** VII. i. 61

जम्ब्वाः — IV. iii. 162

(षष्ठीसमर्थ) जम्बू प्रातिपदिक से (विकार अर्थ में फल अभिधेय हो तो विकल्प से अण् प्रत्यय होता है)।

जम्भा — V. iv. 125

(बहुव्रीहि समास में सु, हरित, तृण तथा सोम शब्दों से उत्तर) जम्भा शब्द अनिच्प्रत्ययान्त निपातन किया जाता है।

जम्भा = जबड़ा।

जयः — VI. i. 196

(करणवाची) जय शब्द (आद्युदात्त होता है)।

जयति — IV. iv. 2

(तृतीयासमर्थ प्रातिपदिक से 'खेलता है', 'खोदता है'), 'जीतता है', (जीता हुआ- अर्थों में ठक् प्रत्यय होता है)।

...जय्यौ — VI. i. 78

देखें — **क्षय्यजय्यौ** VI. i. 78

जर... — VI. ii. 116

देखें — **जरमरमित्र०** VI. ii. 116

...जरत् — II. i. 48

देखें— **पूर्वकालैकसर्वजरत्०** II. i. 48

...जरतीभिः — II. i. 66

देखें— **खलतिपलितवलिन०** II. i. 66

जरमरमित्रमृताः — VI. ii. 116

(नञ् से उत्तर) जर, मर, मित्र, मृत — इन उत्तरपद शब्दों को (बहुव्रीहि समास में आद्युदात्त होता है)।

जरस् — VII. ii. 101

(जरा शब्द को अजादि विभक्तियों के परे रहते विकल्प से) जरस् आदेश होता है।

जरायाः — VII. ii. 101

जरा शब्द को (अजादि विभक्तियों के परे रहते विकल्प से जरस् आदेश होता है)।

जल्प... — III. ii. 155

देखें — **जल्पभिक्ष०** III. ii. 155

जल्पभिक्षकुट्टलुण्टवृङः — III. ii. 155

जल्प, भिक्ष, कुट्ट, लुण्ट, वृङ् — इन धातुओं से (तच्छीलादि कर्त्ता हो तो वर्त्तमानकाल में षाकन् प्रत्यय होता है)।

...जल्प... — IV. iv. 97

देखें — **करणजल्पकर्षेषु** IV. iv. 97

जवे — VI. iv. 28

वेग अभिधेय होने पर (घञ् परे रहते 'स्यद' शब्द निपातन किया जाता है)।

...जश्... — I. i. 57

देखें — **पदान्तद्विर्वचनवरे०** I. i. 57

जश्... — VII. i. 20

देखें — **जश्शसोः** VII. i. 20

जश् — VIII. iv. 52

(झलों के स्थान में झश् परे रहते) जश् आदेश होता है।

जशः — VIII. ii. 39

(पद के अन्त में वर्त्तमान झलों को) जश् आदेश होता हैं।

जशशसोः — VII. i. 20

(नपुंसकलिङ्ग में वर्तमान अङ्ग से उत्तर) जश् और शस् के स्थान में (शि आदेश होता है)।

...जस्... — IV. i. 2

देखें — **स्वौजसमौट्० IV. i. 2**

जसः — VI. i. 160

(तिसृ शब्द से उत्तर) जस् को (अन्तोदात्त होता है)।

जसः — VII. i. 17

(अकारान्त सर्वनाम अङ्ग से उत्तर) जस् के स्थान में (शी आदेश होता है)।

जसि — I. i. 31

(द्वन्द्व समास में सर्वादियों की सर्वनामसंज्ञा) जस् सम्बन्धी कार्य में (विकल्प से नहीं होती)।

जसि — VI. i. 101

(दीर्घ वर्ण से उत्तर) जस् (तथा चकार से इच्) परे रहते (पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश नहीं होता है)।

जसि — VII. ii. 93

जस् विभक्ति परे हो तो (युष्मद्, अस्मद् अङ्ग के मपर्यन्त अंश को क्रमशः यूय, वय आदेश होते हैं)।

जसि — VII. iii. 109

जस् परे रहते (भी ह्रस्वान्त अङ्ग को गुण होता है)।

जसेः — VII. i. 50

(वेद-विषय में अवर्णान्त अङ्ग से उत्तर) जस् को (असुक् आगम होता है)।

...जहातिसाम् — VI. iv. 66

देखें — **घुमास्था० VI. iv. 66**

जहातेः — VI. iv. 116

'ओहाक् त्यागे' अङ्ग को (भी इकारादेश विकल्प से होता है; हलादि कित्, ङित् सार्वधातुक परे रहते)।

जहातेः — VII. iv. 43

'ओहाक् त्यागे' अङ्ग को (भी क्त्वा प्रत्यय परे रहते हि आदेश होता है)।

जा — VII. iii. 79

(ज्ञा तथा जनी अङ्ग को शित् प्रत्यय परे रहते) जा आदेश होता है)।

...जागराम् — VI. i. 186

देखें... — **भीह्रीभृ० VI. i. 186**

जागुः — III. ii. 165.

जागृ धातु से (वर्त्तमान काल में ऊक प्रत्यय होता है, तच्छीलादि कर्त्ता हो तो)।

...जागृ... — VII. ii. 5

देखें — **ह्म्यन्तक्षण० VII. ii. 5**

जागृभ्यः — III. i. 38

देखें — **उषविदजागृभ्यः III. i. 38**

जाग्रः — VII. iii. 85

जागृ अङ्ग को (गुण होता है; वि, चिण्, णल् तथा ङ् इत् वाले प्रत्ययों को छोड़कर अन्य सार्वधातुक प्रत्ययों के परे रहते)।

जातः — IV. iii. 25

(सप्तमीसमर्थ प्रातिपदिकों से) 'उत्पन्न हुआ' अर्थ में (यथाविहित प्रत्यय होता है)।

जातरूपेभ्यः — IV. iii. 150

(षष्ठीसमर्थ) सुवर्णवाची प्रातिपदिकों से (परिमाण जाना जाये तो विकार अभिधेय होने पर अण् प्रत्यय होता है)।

जाति... — V. iv. 94

देखें — **जातिसंज्ञयोः V. iv. 94**

जाति... — VI. ii. 170

देखें — **जातिकाल० VI. ii. 170**

जातिः — II. i. 64

जातिवाची (सुबन्त) शब्द (पोटा, युवति, स्तोक, कतिपय, गृष्टि, धेनु, वशा, वेहद्, वष्कयणी, प्रवक्तृ, श्रोत्रिय, अध्यापक, धूर्त— इन समानाधिकरण समर्थ सुबन्तों के साथ समास को प्राप्त होता है, और वह तत्पुरुष समास होता है)।

जातिः — II. iv. 6

जातिवाचकों का (द्वन्द्व एकवद् होता है, प्राणीवाचियों को छोड़कर)।

जातिः — VI. i. 138

(कुस्तुम्बरु शब्द में तकार से पूर्व सुट् का निपातन किया जाता है, यदि वह) जाति अर्थ वाला हो तो।

जातिकालसुखादिभ्यः — VI. ii. 170

(आच्छादनवाची शब्द को छोड़कर जो) जातिवाची, कालवाची एवं सुखादि शब्द, — उनसे उत्तर (क्तान्त

शब्द को कृत, मित तथा प्रतिपन्न शब्द को छोड़कर अन्तोदात्त होता है, बहुव्रीहि समास में)।

जातिनाम्नः — V. iii. 81

(मनुष्यनामधेय) जातिवाची प्रातिपदिक से (कन् प्रत्यय होता है, नीति तथा अनुकम्पा गम्यमान हो तो)।

जातिपरिप्रश्ने — II. i. 62

जातिपरिप्रश्न= जाति के विषय में विविध प्रश्न में वर्त्तमान (कतर, कतम शब्द समानाधिकरण समर्थ सुबन्त के साथ समास को प्राप्त होते हैं, और वह तत्पुरुष समास होता है)।

जातिपरिप्रश्ने — V. iii. 93

'जाति को पूछने के विषय में'(किम्, यत् तथा तत् प्रातिपदिकों से बहुतों में से एक का निर्धारण गम्यमान हो तो विकल्प से डतमच् प्रत्यय होता है।

जातिसञ्ज्ञयोः — V. iv. 94

(अनस्, अश्मन्, अयस् तथा सरस् शब्दान्त तत्पुरुषों से समासान्त टच् प्रत्यय होता है; जाति तथा सञ्ज्ञा- विषय में)।

...जातीय... — VI. iii. 41

देखें — कर्मधारयजातीय० VI. iii. 41

...जातीययोः ... — VI. iii. 45

देखें — समानाधिकरणजातीययोः VI. iii. 45

जातीयर् — V. iii. 69

('प्रकार-विशिष्ट' अर्थ में वर्त्तमान प्रातिपदिक से) जातीयर् प्रत्यय होता है।

जातु... — III. iii. 147

देखें — जातुयदोः III. iii. 147

जातु — VIII. i. 47

(जिससे पूर्व कोई शब्द विद्यमान नहीं है, ऐसे) जातु शब्द से युक्त (तिङन्त को अनुदात्त नहीं होता)।

जातुयदोः — III. iii. 147

(असम्भावना या अक्षमा अभिधेय हो तो) जातु अथवा यत् उपपद रहते (धातु से लिङ् प्रत्यय होता है)।

जाते — VI. ii. 171

(जातिवाची, कालवाची तथा सुखादियों से उत्तर) जात शब्द उत्तर पद को (अन्तोदात्त होता है, बहुव्रीहि समास में)।

जातेः — IV. i. 63

(जो नित्य ही स्त्रीविषय में न हो तथा यकार उपधा वाला न हो, ऐसे) जातिवाची प्रातिपदिक से (स्त्रीलिङ्ग में ङीष् प्रत्यय होता है)।

जातेः — VI. iii. 40

जातिवाची (स्त्रीलिङ्ग) शब्द को (भी पुंवद्भाव नहीं होता)।

... जातोक्ष... — V. iv. 77

देखें — अचतुर० V. iv. 77

जातोक्ष= युवा बैल।

जातौ — IV. i. 161

(मनु शब्द से) जाति को कहना हो (तो अञ् तथा यत् प्रत्यय होते हैं, तथा मनु शब्द को षुक् आगम भी हो जाता है)।

जातौ — V. ii. 133

(हस्त शब्द से 'मत्वर्थ' में इनि प्रत्यय होता है), जातिवाच्य हो तो।

जातौ — VI. ii. 10

(अध्वर्यु तथा कषाय शब्द उत्तरपद रहते) जातिवाची तत्पुरुष समास में (पूर्वपद को प्रकृतिस्वर हो जाता है)।

जातौ — VI. iii. 102

(तृण शब्द उत्तरपद हो तो भी कु को कत् आदेश होता है), जाति अभिधेय होने पर।

जात्यन्तात् — V. iv. 9

जाति शब्द अन्तवाले प्रातिपदिक से (द्रव्य गम्यमान हो तो स्वार्थ में छ प्रत्यय होता है)।

जात्याख्यायाम् — I. ii. 58

जाति को कहने में (एकत्व अर्थ में बहुत्व विकल्प करके हो जाता है)।

...जात्वोः — III. iii. 142

देखें— अपिजात्वोः III. iii. 142

जानपद... — IV. i. 42

देखें — जानपदकुण्ड० IV. i. 42

जानपदकुण्डगोणस्थलभाजनागकालनीलकुशकामुककबरात् — IV. i. 42

जानपद आदि ११ प्रातिपदिकों से (यथासंख्य करके वृत्ति अमत्रादि ११ अर्थों में स्त्रीलिङ्ग में ङीष् प्रत्यय होता है)।

जानपदाख्यायाम् — V. iv. 104

(ब्रह्मन्शब्दान्त तत्पुरुष समास से समासान्त टच् प्रत्यय होता है, यदि समास के द्वारा ब्रह्मन् शब्द) जनपद में होने वाले की आख्या वाला हो तो।

जानुनः — V. iv. 129

(बहुव्रीहि समास में प्र तथा सम् से उत्तर) जो जानु शब्द, उसके स्थान में (समासान्त ज्ञु आदेश होता है)।

जान्त... — VI. iv. 32

देखें — **जान्तनशाम् VI. iv. 32**

जान्तनशाम् — VI. iv. 32

जकारान्त अङ्ग के तथा नश् के (नकार का लोप विकल्प करके नहीं होता)।

...जाबाल... — VI. ii. 38

देखें — **व्रीह्यपराहण० VI. ii. 38**

जाया... — III. ii. 52

देखें — **जायापत्योः III. ii. 52**

जायापत्योः — III. ii. 52

(लक्षणवान् कर्ता अभिधेय होने पर) जाया और पति (कर्म) के उपपद रहते (हन् धातु से टक् प्रत्यय होता है)।

जायायाः — V. iv. 134

जाया शब्दान्त (बहुव्रीहि) को (समासान्त निङ् आदेश होता है)।

जालम् — III. iii. 124

जाल अभिधेय हो तो (आङ् पूर्वक नी धातु से करण कारक तथा संज्ञा में आनाय शब्द घञ् प्रत्ययान्त किया जाता है)।

जासि... — II. iii. 56

देखें — **जासिनिप्रहण० II. iii. 56**

जासिनिप्रहणनाटक्राथपिषाम् — II. iii. 56

(हिंसा क्रिया वाले) चौरादिक जसु ताडने, नि प्र पूर्वक हन्, ण्यन्त नट एवं क्रथ, पिष्— इन धातुओं के (कर्म में शेष विवक्षित होने पर षष्ठी विभक्ति होती है)।

...जाहचौ — V. ii. 24

देखें — **कुणब्जाहचौ V. ii. 24**

...जि... — III. ii. 46

देखें — **भृतृवृ० III. ii. 46**

...जि... — III. ii. 61

देखें — **सत्सू० III. ii. 61**

...जि... — III. ii. 139

देखें — **ग्लाजिस्थः III. ii. 139**

जि... — III. ii. 157

देखें — **जिदृक्षि० III. ii. 157**

...जि... — III. ii. 163

देखें — **इण्नश० III. ii. 163**

...जि... — VII. iv. 80

देखें — **पुयण्जि० VII. iv. 80**

... जिघ्र... — VII. iii. 78

देखें — **पिबजिघ्र० VII. iii. 78**

जिघ्रतेः — VII. iv. 6

'घ्रा गन्धोपादाने' अङ्ग की (उपधा को चङ्परक णि परे रहते विकल्प से इकारादेश होता है)।

जितम् — IV. iv. 2

(तृतीयासमर्थ प्रातिपदिक से 'खेलता है', 'खोदता है', 'जीतता है'), तथा 'जीता हुआ'- अर्थ में (ठक् प्रत्यय होता है)।

...जित्याः — III. i. 117

देखें — **विपूयविनीयजित्याः III. i. 117**

जिदृक्षिविश्रीण्वमाव्यथाभ्यमपरिभूप्रसूभ्यः — III. ii. 157

जि, दृङ्, क्षि, विपूर्वक श्रिञ्, इण्, वम, नञ्पूर्वक व्यथ, अभिपूर्वक अम, परिपूर्वक भू, प्रपूर्वक सू— इन धातुओं से भी (तच्छीलादि कर्त्ता हो तो वर्त्तमानकाल में इनि प्रत्यय होता है)।

जिह्वामूल... — IV. iii. 62

देखें — **जिह्वामूलाङ्गुलेः IV. iii. 62**

जिह्वामूलाङ्गुलेः — IV. iii. 62

(सप्तमीसमर्थ) जिह्वामूल तथा अङ्गुलि प्रातिपदिकों से (भव अर्थ में छ प्रत्यय होता है)।

...जीनाम् — VI. i. 47
देखें — क्रीड्जीनाम् VI. i. 47
...जीर्यतिभ्यः... — III. iv. 72
देखें — गत्यर्थाकर्मक० III. iv. 72
जीर्यतः — III. ii. 104
'जृष् वयोहानौ' धातु से (भूतकाल में अतृन् प्रत्यय होता है)।
ज़ीव... — III. iv. 43
देखें — जीवपुरुषयोः III. iv. 43
...जीव... — VII. iv. 3
देखें — भ्राजभास० VII. iv. 3
जीवति — IV. i. 163
(पौत्रप्रभृति का जो अपत्य, उसकी पितामह के) जीवित रहते (युवा संज्ञा ही होती है)।
जीवति — IV. i. 165
(भाई से अन्य सात पीढ़ियों में से कोई पद तथा आयु दोनों से बूढ़ा व्यक्ति) जीवित हो (तो पौत्रप्रभृति का जो अपत्य, उसके जीते ही विकल्प से युवा संज्ञा होती है, पक्ष में गोत्रसंज्ञा)।
जीवति — IV. iv. 12
(तृतीयासमर्थ वेतनादि प्रातिपदिकों से) 'जीता है' अर्थ में (ठक् प्रत्यय होता है)।
जीवति — V. ii. 21
(तृतीयासमर्थ व्रात प्रातिपदिक से) 'जीता है' अर्थ में (खञ् प्रत्यय होता है)।
...जीवन्तात्... — IV. i. 103
देखें — द्रोणपर्वत० IV. i. 103
जीवपुरुषयोः — III. iv. 43
(कर्त्तावाची) जीव तथा पुरुष शब्द उपपद हों तो (यथासङ्ख्य करके नश तथा वह धातुओं से णमुल् प्रत्यय होता है)।
...जीविकयोः — II. ii. 17
देखें — क्रीडाजीविकयोः II. ii. 17
...जीविका... — I. iv. 78
देखें — जीविकोपनिषदौ I. iv. 78
जीविकार्थे— V. iii. 99
जीविकोपार्जन के लिये (जो न बेचने योग्य मनुष्य की प्रतिकृति, उसके अभिधेय होने पर भी कन् प्रत्यय का लुप् होता है)।
जीविकार्थे— VI. ii. 73
जीविकार्थवाची समास में (अकप्रत्ययान्त शब्द के उत्तरपद रहते पूर्वपद को आद्युदात्त होता है)।
जीविकोपनिषदौ— I. iv. 78
जीविका और उपनिषद् शब्द (कृञ् के योग में गति और निपात संज्ञक होते हैं, उपमा के विषय में)।
...जीवेषु — III. iv. 36
देखें — समूलाकृतजीवेषु III. iv. 36
...जीवोः — III. iv. 20
देखें — विन्दजीवोः III. iv. 20
जु... — III. ii. 150
देखें — जुचङ्क्रम्य० III. ii. 150
... जु... — III. ii. 177
देखें — भ्राजभासधुर्विद्युतोर्जि० III. ii. 177
जुक् — VII. iii. 38
(कंपाना अर्थ में वर्त्तमान वा धातु को णिच् परे रहते) जुक् आगम होता है ।
जुचङ्क्रम्यदन्द्रम्यसृगृधिज्वलशुचलषपतपदः — III. ii. 150
जु, चङ्क्रम्य, दन्द्रम्य, सृ, गृधु, ज्वल, शुच, लष, पत, पद्— इन धातुओं से (तच्छीलादि कर्त्ता हो तो वर्त्तमान काल में युच् प्रत्यय होता है)।
...जुषः — III. i. 109
देखें — एतिस्तुशास्वृ० III. i. 109
...जुषाणो... — VI. i. 114
देखें — आपोजुषाणो० VI. i. 114
जुष्ट... — VI. i. 203
देखें — जुष्टार्पिते VI. i. 203
जुष्टार्पिते — VI. i. 203
जुष्ट और अर्पित शब्दों को (भी वेद विषय में विकल्प से आद्युदात्त होता है ।)

जुस् — III. iv. 108

(लिङादेश झि को) जुस् आदेश हो जाता है।

जुसि — VII. iii. 83

जुस् परे रहते (भी इगन्त अङ्ग को गुण होता है)।

जुहोत्यादिभ्यः — II. iv. 75

जुहोत्यादिगण की धातुओं से उत्तर (शप् के स्थान में श्लु आदेश होता है)।

...जूति...— III. iii. 97

देखें — ऊतियूति० III. iii. 97

जॄ... — III. i. 58

देखें — जॄस्तम्भु० III. i. 58

जॄ... — VI. iv. 124

देखें — जॄभ्रमु० VI. iv. 124

जॄ... — VII. ii. 55

देखें — जॄव्रश्च्योः VII. ii. 55

जॄभ्रमुत्रसाम् — VI. iv. 124

जॄ, भ्रमु, तथा त्रस् अङ्गों के (अकार के स्थान में एत्व तथा अभ्यास लोप विकल्प से होता है; कित्, ङित् लिट् तथा सेट् थल् परे रहते)।

जॄव्रश्च्योः — VII. ii. 55

'जॄ वयोहानौ' तथा 'ओव्रश्चू छेदने' धातु के (क्त्वा प्रत्यय को इट् आगम होता है)।

जॄस्तम्भुम्रुचुम्लुचुग्रुचुग्लुचुग्लुञ्चुश्विभ्यः — III. i. 52

जॄष, स्तम्भु, म्रुचु, म्लुचु, ग्रुचु, ग्लुचु, ग्लुञ्चु, श्वि — इन धातुओं से उत्तर (भी च्लि के स्थान में अङ् आदेश विकल्प से होता है, कर्तृवाची लुङ् परे रहते)।

जे — VI. ii. 14

(प्रावृट्, शरत्, काल, दिव् — इन शब्दों की सप्तमी का) 'ज' उत्तरपद रहते (अलुक् होता है)।

जे — VI. ii. 82

(दीर्घान्त पूर्वपद को तथा काश, तुष, भ्राष्ट्र, वट— इन पूर्वपद शब्दों को) 'ज' उत्तरपद रहते (आद्युदात्त होता है)।

जे— VII. iii. 18

जात अर्थ में विहित (ञित्, णित् तथा कित् तद्धित परे रहते प्रोष्ठपद अङ्ग के उत्तरपद के अचों में आदि को वृद्धि होती है)।

जेः — I. iii. 19

(वि तथा परा उपसर्ग से उत्तर) 'जि' धातु से (आत्मनेपद होता है)।

जेः— VII. iii. 57

(अभ्यास से उत्तर) जि अङ्ग को (सन् तथा लिट् परे रहते कवर्गादेश होता है)।

... जैह्माशिनेय... — VI. iv. 174

देखें — दाण्डिनायनहास्ति० VI. iv. 174

...जोः — VII. iii. 52

देखें — चजोः VII. iii. 52

ज्ञः — I. iii. 44

(अपह्नव अर्थ में वर्त्तमान) ज्ञा धातु से (आत्मनेपद होता है)।

ज्ञः — I. iii. 58

(अनु पूर्वक सन्नन्त) ज्ञा धातु से (आत्मनेपद नहीं होता)।

ज्ञः — I. iii. 76

(उपसर्ग रहित) 'ज्ञा' धातु से (आत्मनेपद होता है, (क्रिया का फल कर्त्ता को मिलने पर)।

ज्ञः — II. iii. 51

(जानने से भिन्न अर्थ वाले शेष विभक्ति होने पर) ज्ञा धातु के (करण कारक में षष्ठी विभक्ति होती है)।

...ज्ञः — III. ii. 6

देखें — दाज्ञः III. ii. 6

... ज्ञपि... — VII. ii. 49

देखें — इवन्तर्ध० VII. ii. 49

...ज्ञपि... — VII. iv. 55

देखें — आप्ज्ञप्यृधाम् VII. iv. 55

...ज्ञप्ताः — VII. ii. 27

देखें — दान्तशान्त० VII. ii. 27

ज्ञा... — I. iii. 57

देखें — ज्ञाश्रुस्मृदृशाम् I. iii. 57

...ज्ञा... — III. i. 135

देखें — इगुपधज्ञा० III. i. 135

...ज्ञा... — VII. iii. 47

देखें — भस्त्रैषा० VII. iii. 47 .

ज्ञा... — VII. iii. 79

देखें — ज्ञाजनोः VII. iii. 79

ज्ञाजनोः — VII. iii. 79

ज्ञा तथा जनी अङ्ग को (शित् प्रत्यय परे रहते जा आदेश होता है)।

...ज्ञात्याख्येभ्यः — VI. ii. 133

देखें — आचार्यराज० VI. ii. 133

... ज्ञात्योः — V. i. 126

देखें — कपिज्ञात्योः V. i. 126

ज्ञाश्रुस्मृदृशाम् — I. iii. 57

ज्ञा, श्रु, स्मृ, दृश् – इन धातुओं के (सन्नन्त से परे आत्मनेपद होता है)।

...ज्ञान... — I. iii. 37

देखें — सम्माननोत्सञ्जन० I. iii. 37

...ज्ञान... — I. iii. 47

देखें — भासनोपसम्भाषा० I. iii. 47

ज्ञीप्स्यमानः — I. iv. 34

(श्लाघ, ह्नुङ्, स्था, शप्—इन धातुओं के प्रयोग में) जो जनाये जाने की इच्छा वाला है, वह (कारक सम्प्रदान संज्ञक होता है।)

ज्ञुः — V. iv. 129

(बहुव्रीहि समास में प्र तथा सम् से उत्तर जो जानु शब्द, उसके स्थान में समासान्त) ज्ञु आदेश होता है।

ज्य — V. iii. 61

(प्रशस्य शब्द के स्थान अजादि में अर्थात् इष्ठन्, ईयसुन् प्रत्यय परे रहते) ज्य आदेश (भी) होता है।

...ज्य... — VI. ii. 25

देखें — श्रज्या० VI. ii. 25

ज्यः — VI. i. 41

(ल्यप् परे रहते) ज्या धातु को (भी सम्प्रसारण नहीं होता है)।

...ज्या...— VI. i. 16

देखें — ग्रहिज्या० VI. i. 16

ज्यात् — VI. iv. 160

ज्य अङ्ग से उत्तर (ईयस् को आकार आदेश होता है)।

ज्यायसि — IV. i. 164

बडे (भाई के जीवित रहते पौत्रप्रभृति का जो अपत्य छोटा भाई, उसकी भी युवा संज्ञा हो जाती है)।

...ज्येष्ठाभ्याम् — V. iv. 41

देखें — वृकज्येष्ठाभ्याम् V. iv. 41

ज्योतिरायुषः — VIII. iii. 83

ज्योतिस् तथा आयुस् शब्द से उत्तर (स्तोम शब्द के सकार को समास में मूर्धन्य आदेश होता है)।

ज्योतिस्... — VI. iii. 84

देखें — ज्योतिर्जनपद० VI. iii. 84

ज्योतिर्जनपदरात्रिनाभिनामगोत्ररूपस्थानवर्णवयोवचनबन्धुषु —VI. iii. 84

ज्योतिस्, जनपद, रात्रि, नाभि, नाम, गोत्र, रूप, स्थान, वर्ण, वयस्, वचन, बन्धु—इन शब्दों के उतरपद रहते (समान को स आदेश हो जाता है)

ज्योतिस्:... — VIII. iii. 83

देखें — ज्योतिरायुषः VIII. iii. 83

ज्योत्स्ना... — V. ii. 114

देखें — ज्योत्स्नातमिस्रा० V. ii. 114

ज्योत्स्नातमिस्राशृङ्गिणोर्जस्विन्नूर्जस्वलगोमिन्मलिनमलीमसाः — V. ii. 114

ज्योत्स्ना, तमिस्रा, शृङ्गिण, ऊर्जस्विन्, ऊर्जस्वल, गोमिन्, मलिन तथा मलीमस शब्दों का निपातन किया जाता है ('मत्वर्थ' में)।

ज्वर... — VI. iv. 20

देखें — ज्वरत्वर० VI. iv. 20

ज्वरत्वरस्रिव्यविमवाम् — VI. iv. 20

ज्वर, त्वर, स्रिवि, अव्, मव् इन अङ्गों के (वकार तथा उपधा के स्थान में ऊठ् आदेश होता है, क्वि तथा झलादि एवं अनुनासिकादि प्रत्ययों के परे रहते)।

...ज्वल... — III. ii. 150

देखें — जुचङ्क्रम्य० III. ii. 150

ज्वलितिकसन्तेभ्यः — III. i. 140

'ज्वल्' दीप्त्यर्थक धातु से लेकर 'कस्' गत्यर्थक धातु पर्यन्त धातुओं से (विकल्प से 'ण' प्रत्यय होता है)।

झ

झ — प्रत्याहार सूत्र VIII

आचार्य पाणिनि द्वारा अपने अष्टम प्रत्याहार सूत्र में पठित प्रथम वर्ण।

पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का वींसवा वर्ण।

...झ... — III. iv. 78

देखें—तिप्तिस्झि० **III. iv. 78**

झः — VII. i. 3

(प्रत्यय के अवयव) झ् के स्थान में (अन्त् आदेश होता है)।

झयः — V. iv. III

(अव्ययीभाव समास में वर्त्तमान) झयन्त प्रातिपदिकों से (समासान्त टच् प्रत्यय होता है)।

झयः — VIII. ii. 10

झयन्त से उत्तर (मतुप् को वकारादेश हो जाता है)।

झयः — VIII. iv. 61

झय् प्रत्याहार से उत्तर (हकार को विकल्प से पूर्वसवर्ण आदेश होता है)।

...झयोः — III. iv. 81

देखें — तझयोः **III. iv. 81**

झरः — VIII. iv. 64

(हल् से उत्तर) झर् का (विकल्प से लोप होता है, सवर्ण झर् परे रहते)।

झरि — VIII. iv. 64

(हल् से उत्तर झर् का विकल्प से लोप होता है, सवर्ण) झर् परे रहते।

...झर्झरात् — IV. iv. 56

देखें — मड्डुकझर्झरात् **IV. iv. 56**

झल् — I. ii. 9

(इगन्त धातु से परे) झलादि (सन् कित्वत् होता है)।

झल् — VI. i. 177

(दिव् शब्द से परे) झलादि विभक्ति (उदात्त नहीं होती)।

झल् ... — VII. i. 72

देखें—झलचः **VII. i. 72**

झलः — VIII. ii. 26

झल् से उत्तर (सकार का लोप होता है, झल् परे रहते)।

झलचः — VII. i. 72

झलन्त तथा अजन्त (नपुंसकलिङ्ग वाले) अङ्ग को (सर्वनामस्थान परे रहते नुम् आगम होता है)।

झलाम् — VIII. ii. 39

(पद के अन्त में वर्त्तमान) झलों को (जश् आदेश होता है)।

झलाम् — VIII. iv. 52

झलों के स्थान में (झश् परे रहते जश् आदेश होता है)।

झलि — VI. i. 57

(सृज् तथा दृशिर् धातु को कित् भिन्न) झलादि प्रत्यय परे हो तो (अम् आगम होता है)।

झलि — VI. i. 174

(षट्सञ्ज्ञक, त्रि तथा चतुर् शब्द से उत्पन्न) झलादि (विभक्त्यन्त) शब्द में (उपोत्तम को उदात्त होता है)।

झलि — VI. iv. 37

(अनुदात्तोपदेश और जो अनुनासिकान्त उनके तथा वन एवं तनोति आदि अङ्गों के अनुनासिक का लोप होता है) झलादि (कित् ङित्) प्रत्ययों के परे रहते।

झलि — VII. i. 60

('टुमस्जो शुद्धौ' तथा 'णश् अदर्शने' धातुओं को) झलादि प्रत्यय परे रहते (नुम् आगम होता है)।

झलि — VII. iii. 103

(अकारान्त अङ्ग को बहुवचन) झलादि (सुप्) परे रहते (एकारादेश होता है)।

झलि — VIII. ii. 26

(झल् से उत्तर सकार का लोप होता है) झल् परे रहते।

झलि — VIII. iii. 24

(अपदान्त नकार को तथा चकार से मकार को भी) झल् परे रहते (अनुस्वार आदेश होता है)।

...झलोः — VI. iv. 15

देखें— **क्विझलोः VI. iv. 15**

...झलोः — VI. iv. 42

देखें—**सञ्झलोः VI. iv. 42**

...झल्भ्यः — VI. iv. 101

देखें— **हुझल्भ्यः VI. iv. 101**

झशि — VIII. iv. 51

(झलों के स्थान में) झश् परे रहते (जश् आदेश होता है)।

झस्य — III. iv. 105

(लिङादेश) झ के स्थान में रन् आदेश होता है)।

झषः — VIII. ii. 40

झष् से उत्तर (तकार तथा थकार को धकारादेश होता है किन्तु डुधाञ् धातु से उत्तर धकारादेश नहीं होता)।

झषन्तस्य — VIII. ii. 37

(धातु का अवयव) जो (एक अच् वाला तथा) झषन्त, उसके (अवयव वश् के स्थान में भष् आदेश होता है, झलादि सकार तथा झलादि ध्व शब्द के परे रहते एवं पदान्त में)।

...झि... — III. iv. 78

देखें— **तिप्तस्झि० III. iv. 78**

झेः — III. iv. 108

(लिङादेश) झि को (जुस् आदेश हो जाता है)।

ञ

ञ् — प्रत्याहारसूत्र VIII

आचार्य पाणिनि द्वारा अपने अष्टम प्रत्याहारसूत्र में इत्सञ्ज्ञार्थ पठित वर्ण।

ञ्... — VI. i. 191

देखें—**ञ्निति VI. i. 191**

ञ्... — VII. ii. 115

देखें— **ञ्णिति VII. ii. 115**

ञ्... — VII. ii. 54

देखें — **ञ्णिन्नेषु VII. iii. 54**

ञ — प्रत्याहारसूत्र VII

भगवान् पाणिनि द्वारा अपने सप्तम प्रत्याहारसूत्र में पठित प्रथम वर्ण।

पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का पन्द्रहवां वर्ण।

ञ — IV. iv. 129

(प्रथमासमर्थ मधु प्रातिपदिक से मत्वर्थ में मास और तनू प्रत्ययार्थ विशेषण हों तो) ञ (और यत्) प्रत्यय (होते है)।

ञ — V. iii. 50

(भाग अर्थ में वर्त्तमान षष्ठ और अष्टम शब्दों से) ञ प्रत्यय (तथा अन् प्रत्यय होते हैं, वेदविषय को छोड़कर)।

ञः — IV. ii. 57

(प्रथमासमर्थ क्रियावाची घञन्त प्रातिपदिक से सप्तम्यर्थ में) ञ प्रत्यय होता है।

ञः — IV. ii. 106

(असंज्ञा में वर्त्तमान दिशावाची शब्द पूर्वपद में है जिस प्रातिपदिक के, ऐसे दिक्पूर्वपद प्रातिपदिक से शैषिक) ञ प्रत्यय होता है।

ञि.... — I. iii. 5

देखें—**ञिटुडवः I. iii. 5**

ञिटुडवः — I. iii. 5

(उपदेश के आदि में वर्त्तमान) ञि, टु और डु (इत्सञ्ज्ञक होते हैं)।

...ञिठौ — IV. ii. 115

देखें — **ठञ्ञिठौ IV. ii. 115**

...ञितः — I. iii. 72

देखें — **स्वरितञितः I. iii. 72**

...ञितः — II. iv. 58

देखें — **ण्यक्षत्रियार्ष० II. iv. 58**

ञितः — IV. iii. 152

(विकार और अवयव अर्थों में विहित) जो ञित् प्रत्यय, तदन्त (षष्ठीसमर्थ) प्रातिपदिकों से (भी विकार और अवयव अर्थों में ही अञ् प्रत्यय होता है)।

ञीतः — III. ii.156

ञि जिसका इत्संज्ञक हो, ऐसी धातु से (वर्त्तमानकाल में क्त प्रत्यय होता है)।

ञे — VI. iii. 70

(श्येन तथा तिल शब्द को पात शब्द के उत्तरपद रहते तथा) ञ प्रत्यय के परे रहते (मुम् आगम होता है)।

... ञौ — IV. ii. 105

देखें — अञ्ञौ IV. ii. 105

ञ्णिति — VII. ii. 115

(अजन्त अङ्गों को) ञित्, णित् प्रत्यय परे रहते (वृद्धि होती है)।

ञ्निति — VI. i. 191

ञकार इत्सञ्ज्ञक तथा नकार् इत्सञ्ज्ञक प्रत्ययों के परे रहते (नित्य ही आदि को उदात्त होता है)।

ञ्णिन्नेषु — VII. iii. 54

(हन् धातु के हकार के स्थान में कवर्गादेश होता है) ञित्, णित् प्रत्यय तथा नकार परे रहते।

...ञ्य ....— IV. ii. 79

देखें— वुञ्छण्कठ० IV. ii. 79

ञ्यः — IV. iii. 58

(सप्तमीसमर्थ गम्भीर प्रातिपदिक से भव अर्थ में) ञ्य प्रत्यय होता है।

ञ्यः — IV. iii. 84

(पञ्चमीसमर्थ विदूर शब्द से 'प्रभवति' अर्थ में) ञ्य प्रत्यय होता है।

ञ्यः — IV. iii. 92

(प्रथमासमर्थ शुण्डिकादि प्रातिपदिकों से 'इसका अभिजन' इस अर्थ में) ञ्य प्रत्यय होता है।

ञ्यः — IV. iii. 128

(षष्ठीसमर्थ छन्दोग, औक्थिक याज्ञिक, बह्वृच तथा नट प्रातिपदिकों से 'इदम्' अर्थ में) ञ्य प्रत्यय होता है।

ञ्यः — IV. iv. 90

(तृतीयासमर्थ गृहपति शब्द से संयुक्त अर्थ में) ञ्य प्रत्यय होता है, (सञ्ज्ञा विषय में)।

ञ्यः — V. i. 14

(चतुर्थीसमर्थ विकृतिवाची ऋषभ और उपानह् प्रातिपदिकों से 'उसकी विकृति के लिए प्रकृति' अभिधेय होने परे 'हित' अर्थ में) ञ्य प्रत्यय होता है।

ञ्यः — V. iii. 112

(ग्रामणी यदि पूर्व अवयव न हो जिसके ऐसे पूगवाची प्रातिपदिकों से) ञ्य प्रत्यय होता है, (स्वार्थ में)।

ञ्यः — V. iv. 23

(अनन्त, आवसथ, इतिह तथा भेषज् प्रातिपदिकों से स्वार्थ में) ञ्य प्रत्यय होता है।

ञ्यः — V. iv. 26

(अतिथि प्रातिपदिक से 'उसके लिये यह' अर्थ में) ञ्य प्रत्यय होता है।

ञ्यङ् — IV. i. 169

(क्षत्रियाभिधायी, जनपदवाची, वृद्धसंज्ञक, इकारान्त तथा कोसल और अजाद प्रातिपदिकों से अपत्य अर्थ में) ञ्यङ् प्रत्यय होता है।

ञ्यट् — V. iii. 114

(वाहीक देशविशेष में शस्त्र से जीविका कमाने वाले पुरुषों के समूहवाची प्रातिपदिकों से स्वार्थ में) ञ्युट् प्रत्यय होता है, (ब्राह्मण और राजन्य शब्द को छोड़कर)।

ञ्यादयः — V. iii. 119

ञ्यादि प्रत्ययों की (तद्राजसंज्ञा होती है)।

ञ्युट् — III. ii. 65

('वह' धातु से कव्य, पुरीष और पुरीष्य (सुबन्त उपपद रहते वेदविषय में) ञ्युट् प्रत्यय होता है।

ट

ट् — प्रत्याहारसूत्र V

आचार्य पाणिनि द्वारा अपने पञ्चम प्रत्याहारसूत्र में इत्सञ्ज्ञार्थ पठित वर्ण।

ट... — I. i. 45

देखें — **टकितौ I. i. 45**

ट — प्रत्याहारसूत्र XI

आचार्य पाणिनि द्वारा अपने ग्यारहवें प्रत्याहार सूत्र में पठित सप्तम वर्ण।

पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का छत्तीसवां वर्ण।

ट... — VI. iv. 145

देखें — **टखोः VI. iv. 145**

टः — III. ii. 16

(चर् धातु से अधिकरण सुबन्त उपपद रहते) ट प्रत्यय होता है।

टक् — III. ii. 8

(गा और पा धातु से कर्म उपपद रहते) टक् प्रत्यय होता है।

टक् — III. ii. 52

(जाया और पति कर्म उपपद रहते लक्षणवान् कर्त्ता अभिधेय होने पर 'हन्' धातु से) टक् प्रत्यय होता है।

टकितौ — I. i. 45

(षष्ठीनिर्दिष्ट) टिदागम और किदागम (क्रमशः आद्यवयव और अन्तावयव होते हैं)।

टखोः — VI. iv. 145

(अहन् अङ्ग के टि भाग का) ट तथा ख तद्धित प्रत्यय परे रहते (ही लोप होता है)।

टच् — V. iv. 91

(राजन्, अहन् तथा सखि-शब्दान्त प्रातिपदिकों से समासान्त) टच् प्रत्यय होता है ; (तत्पुरुष समास में)।

...टा... — II. iv. 34

देखें — **द्वितीयाटौस्सु II. iv. 34**

...टा... — IV. i. 2

देखें — **स्वौजसमौट्० IV. i. 2**

टा... — VII. i. 12

देखें — **टाङसिङसाम् VII. i. 12**

टाङसिङसाम् — VII. i. 12

(अदन्त अङ्ग से उत्तर) टा, ङसि तथा ङस् के स्थान में (क्रमशः इन्, आत् व स्य आदेश होते हैं)।

टाप् — IV. i. 4

(अजादिगण-पठित तथा अदन्त प्रातिपदिकों से स्त्रीलिङ्ग में) टाप् प्रत्यय होता है।

टाप् — IV. i. 9

(पादन्त प्रातिपदिक से स्त्रीलिङ्ग में ऋचा वाच्य हो तो) टाप् प्रत्यय होता है।

टि — I. i. 63

(अचों के मध्य में जो अन्त्य अच्, वह अन्त्य अच् आदि है जिस समुदाय का, उस समुदाय की) टिसंज्ञा होती है।

टिठन् — IV. iv. 67

(प्रथमासमर्थ श्राणा तथा मांसौदन प्रातिपदिकों से 'इसको नियतरूप से दिया जाता है' - अर्थ में) टिठन् प्रत्यय होता है।

श्राणा = कांजी, यवागू।

टिठन् — V. i. 25

(कंस प्रातिपदिक से 'तदर्हति' - पर्यन्त कथित अर्थों में) टिठन् प्रत्यय होता है।

टित्... — IV. i. 15

देखें — **टिड्ढाणञ्द्वयसज्० IV. i. 15**

टिड्ढाणञ्द्वयसज्दघ्नञ्मात्रच्तयप्ठक्ठञ्कञ्क्वरपः — IV. i. 15

टित्, ढ, अण्, अञ्, द्वयसच्, दघ्नच्, मात्रच्, तयप्, ठक्, ठञ्, कञ् तथा क्वरप्-प्रत्ययान्त (अनुपसर्जन) प्रातिपदिकों से (स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय होता है)।

टितः — III. iv. 79

टित् अर्थात् लट्, लिट्, लुट्, लृट्, लेट्, लोट् लकारों के (जो त, आताम्, झ आदि आत्मनेपद आदेश, उनके टि भाग को एकार आदेश हो जाता है)।

टीटच्... — V. ii. 31

देखे — टीटञ्नाटच्० V. ii. 31

टीटञ्नाटज्भ्रटचः — V. ii. 31

(आ उपसर्ग प्रातिपदिक से 'नासिकासम्बन्धी झुकाव' को कहना हो तो सञ्ज्ञाविषय में) टीटच्, नाटच् तथा भ्रटच् प्रत्यय होते हैं।

...टु... — I. iii. 5

देखें — ञिटुडवः I. iii. 5

...टुः — VIII. iv. 40

देखें — ष्टुः VIII. iv. 40

...टुक् — VIII. iii. 28

देखें — कुक्टुक् VIII. iii. 28

... टू — I. iii. 7

देखें — चुटू I. iii. 7

टेः — III. iv. 79

(टित् अर्थात् लट्, लिट्, लुट्, लृट्, लेट्, लोट् लकारों के जो आत्मनेपद त, आताम्, झ आदि आदेश, उनके) टि भाग को (एकार आदेश हो जाता है)।

टेः — V. iii. 71

(अव्यय तथा सर्वनामवाची प्रातिपदिकों से एवं तिङन्तों से इवार्थ से पहले पहले अकच् प्रत्यय होता है और वह) टि भाग से (पूर्व होता है)।

टेः — VI. iii. 91

(विष्वग् तथा देव शब्दों के तथा सर्वनाम शब्दों के) टिभाग को (अद्रि आदेश होता है, वप्रत्ययान्त अञ्चु धातु के परे रहते)।

टेः — VI. iv. 143

(भसञ्ज्ञक अङ्ग के) टि भाग का (लोप होता है, डित् प्रत्यय के परे रहते)।

टेः — VI. iv. 155

(इष्ठन्, इमनिच् तथा ईयसुन् परे रहते भसञ्ज्ञक अङ्ग के) टि भाग का (लोप होता है)।

टेः — VII. i. 88

(पथिन्, मथिन् तथा ऋभुक्षिन् भसञ्ज्ञक अङ्गों के) टिभाग का (लोप होता है)।

टेः — VIII. ii. 82

(यह अधिकारसूत्र है। पाद की समाप्तिपर्यन्त सर्वत्र 'वाक्य के) टिभाग को (प्लुत उदात्त होता है' ऐसा अर्थ होता जायेगा)।

टेः — VIII. ii. 89

(यज्ञकर्म में अन्तिम पद की) टिभाग को (प्रणव अर्थात् ओम् आदेश होता है और वह प्लुत उदात्त होता है)।

टेण्यण् — V. iii. 115

(शस्त्रों से जीविका कमाने वाले पुरुषों के समूहवाची वृक प्रातिपदिक से स्वार्थ में) टेण्यण् प्रत्यय होता है।

टोः — VIII. iv. 41

(पदान्त) टवर्ग से उत्तर (सकार और तवर्ग को षकार और टवर्ग नहीं होता, नाम् को छोड़कर)।

ट्यण् — IV. ii. 29

(प्रथमासमर्थ देवतावाची सोम शब्द से षष्ठ्यर्थ में) ट्यण् प्रत्यय होता है।

ट्यु... — IV. iii. 23

देखें — ट्युट्युलौ० IV. iii. 23

ट्युट्युलौ — IV. iii. 23

(कालवाची सायं, चिरं, प्राह्णे, प्रगे तथा अव्यय प्रातिपदिकों से) ट्यु तथा ट्युल् प्रत्यय होते हैं (तथा इन प्रत्ययों को तुट् आगम भी होता है)।

...ट्युलौ — IV. iii. 23

देखें — ट्युट्युलौ IV. iii. 23

ट्लञ् — IV. iii. 139

(षष्ठीसमर्थ शमी प्रातिपदिक से विकार और अवयव अर्थों में) ट्लञ् प्रत्यय होता है।

ट्वितः — III. iii. 89

टु इत्संज्ञक है जिन धातुओं का, उनसे (कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में अथुच् प्रत्यय होता है)।

ठ

ठ – प्रत्याहारसूत्र XI

आचार्य पाणिनि द्वारा अपने ग्यारहवें प्रत्याहार सूत्र में पठित चतुर्थ वर्ण ।

पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का तेतीसवां वर्ण ।

ठ... – V. iii. 83

देखें – ठाजादौ V. iii. 83

...ठक्... – IV. i. 15

देखें – टिड्ढाणञ्० IV. i. 15

ठक् – IV. i. 146

(रेवती आदि शब्दों से अपत्य अर्थ में) ठक् प्रत्यय होता है ।

ठक् – IV. i. 148

(सौवीर गोत्र में वर्तमान वृद्धसंज्ञक प्रातिपदिकों से अपत्य अर्थ में बहुल करके) ठक् प्रत्यय होता है,(दुर्वचन या घृणा गम्यमान होने पर)।

ठक् – IV. ii. 2

(तृतीयासमर्थ रागविशेषवाची लाक्षा तथा रोचना प्रातिपदिकों से 'रंगा गया' अर्थ में) ठक् प्रत्यय होता है ।

ठक् – IV. ii. 17

(सप्तमीसमर्थ दधि प्रातिपदिक से 'संस्कृतं भक्षाः' अर्थ में) ठक् प्रत्यय होता है ।

ठक् – IV. ii. 21

(प्रथमासमर्थ पौर्णमासी शब्द के साथ समानाधिकरण वाले आग्रहायणी तथा अश्वत्थ शब्दों से सप्तम्यर्थ में) ठक् प्रत्यय होता है ।

ठक् – IV. ii. 46

(षष्ठीसमर्थ अचेतनवाची तथा हस्तिन् और धेनु शब्दों से समूहार्थ में) ठक् प्रत्यय होता है ।

ठक् – IV. ii. 59

(द्वितीयासमर्थ क्रतु विशेषवाची, उक्थादि तथा सूत्रान्त प्रातिपदिकों से अध्ययन तथा जानने का कर्त्ता अभिधेय हो तो) ठक् प्रत्यय होता है ।

ठक् – IV. ii. 62

(वसन्तादि प्रातिपदिकों से 'तदधीते तद्वेद' अर्थों में) ठक् प्रत्यय होता है ।

...ठकः – IV. ii. 79

देखें – वुञ्छण्कठ० IV. ii. 79

ठक्... – IV. ii. 83

देखें – ठक्छौ IV. ii. 83

ठक् – IV. ii. 101

(कन्था प्रातिपदिक से शैषिक) ठक् प्रत्यय होता है ।

ठक्... – IV. ii. 114

देखें – ठक्छसौ IV. ii. 114

ठक् – IV. iii. 18

(वर्षा प्रातिपदिक से शैषिक) ठक् प्रत्यय होता है ।

ठक् – IV. iii. 40

(सप्तमीसमर्थ उपजानु, उपकर्ण, उपनीवि शब्दों से 'प्रायभवः' अर्थ में) ठक् प्रत्यय होता है ।

ठक् – IV. iii. 72

(षष्ठी तथा सप्तमीसमर्थ व्याख्यातव्यनाम जो दो अच् वाले प्रातिपदिक, ऋकारान्त, ब्राह्मण, ऋक्, प्रथम, अध्वर, पुरश्चरण, नाम तथा आख्यात प्रातिपदिक – इनसे भव, व्याख्यान अर्थों में) ठक् प्रत्यय होता है ।

ठक् – IV. iii. 75

(पञ्चमीसमर्थ आयस्थानवाची प्रातिपदिकों से आगत अर्थ में) ठक् प्रत्यय होता है ।

ठक् – IV. iii. 96

(प्रथमासमर्थ भक्तिसमानाधिकरणवाची जो देश, काल को छोड़कर अचेतनवाची प्रातिपदिक, उनसे षष्ठ्यर्थ में) ठक् प्रत्यय होता है ।

ठक् – V. iii. 108

(अङ्गुल्यादि प्रातिपदिकों से इवार्थ में) ठक् प्रत्यय होता है ।

ठक् — IV. iii. 123

(षष्ठीसमर्थ हल और सीर शब्दों से 'इदम्' अर्थ में) ठक् प्रत्यय होता है।

ठक् — IV. iv. 1

(यहां से लेकर 'तद्वहति रथयुगप्रासङ्गम्' से पहले-पहले जो अर्थ निर्दिष्ट किये गये हैं, वहां तक) ठक् प्रत्यय (का अधिकार समझना चाहिये)।

ठक् — IV. iv. 81

(द्वितीयासमर्थ हल और सीर प्रातिपदिकों से 'ढोता है' अर्थ में ठक् प्रत्यय होता है।

ठक् — IV. iv. 102

(सप्तमीसमर्थ कथादि प्रातिपदिकों से साधु अर्थ में) ठक् प्रत्यय होता है।

ठक् — V. iv. 13

(अनुगादिन् प्रातिपदिक से स्वार्थ में) ठक् प्रत्यय होता है।

ठक् — V. iv. 34

(विनयादि प्रातिपदिकों से स्वार्थ में) ठक् प्रत्यय होता है।

ठक् — V. ii. 67

(सप्तमीसमर्थ उदर प्रातिपदिक से 'पेटू' वाच्य हो तो 'तत्पर' अर्थ में) ठक् प्रत्यय होता है।

ठक्... — V. ii. 76

देखें — ठक्ठञौ V. ii. 76

...ठकः — IV. ii. 79

देखें — वुञ्छण्कठ० IV. ii. 79

ठक्छसौ — IV. ii. 114

(वृद्धसंज्ञक भवत् शब्द से शैषिक) ठक् और छस् प्रत्यय होते हैं।

ठक्छौ — IV. ii. 83

(शर्करा शब्द से चातुरर्थिक) ठक् तथा छ प्रत्यय (भी) होते हैं।

ठक्ठञौ— V. ii. 76

(तृतीयासमर्थ अयःशूल तथा दण्डाजिन प्रातिपदिकों से 'चाहता है' अर्थ में यथासङ्ख्य करके) ठक् और ठञ् प्रत्यय होते हैं।

अयःशूल = तीक्ष्ण उपाय।

दण्डाजिन = दम्भ।

...ठच्... — IV. ii. 79

देखें — वुञ्छण्कठ० IV. ii. 79

ठच् — IV. iv. 64

(अध्ययन-विषय में वृत्तकार्यसमानाधिकरणवाची प्रथमासमर्थ बह्वच् पूर्वपदवाले प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में) ठच् प्रत्यय होता है।

ठच् — V. iii. 78

(बहुत अच् वाले मनुष्यनामधेय प्रातिपदिक से अनुकम्पा अथवा गम्यमान होने पर, अनुकम्पा से युक्त नीति गम्यमान होने पर विकल्प से) ठच् प्रत्यय होता है।

ठच् — V. iii. 109

(एकशाला प्रातिपदिक से इवार्थ में विकल्प से) ठच् प्रत्यय होता है)।

...ठञ्... — IV. i. 15

देखें — टिड्ढाणञ्० IV. i. 15

ठञ् — IV. ii. 34

(प्रथमासमर्थ देवतावाची महाराज तथा प्रोष्ठपद प्रातिपदिकों से षष्ठ्यर्थ में) ठञ् प्रत्यय होता है।

ठञ् — IV. ii. 40

(षष्ठीसमर्थ कवचिन् शब्द से समूह अर्थ में) ठञ् प्रत्यय (भी) होता है।

ठञ्... — IV. ii. 113

देखें — ठञ्ञिठौ IV. ii. 113

ठञ् — IV. ii. 118

(उवर्णान्त देशवाची प्रातिपदिकों से शैषिक) ठञ् प्रत्यय होता है।

ठञ् — IV. iii. 6

(दिशावाची पूर्वपदवाले अर्ध प्रातिपदिक से) शैषिक ठञ् (और यत्) प्रत्यय (होते हैं)।

ठञ् – IV. iii. 11

(कालविशेषवाची प्रातिपदिकों से) शैषिक ठञ् प्रत्यय होता है।

ठञ् – IV. iii. 19

(वर्षा प्रातिपदिक से वेदविषय में) ठञ् प्रत्यय होता है।

ठञ् – IV. iii. 50

(सप्तमीसमर्थ कालवाची संवत्सर तथा आग्रहायणी प्रातिपदिकों से) ठञ् (तथा वुञ्) प्रत्यय (होते हैं)।

ठञ् – IV. iii. 60

(अ = तः शब्द पूर्वपद में है जिसके, ऐसे सप्तमीसमर्थ अव्ययीभावसंज्ञक प्रातिपदिक से भवार्थ में) ठञ् प्रत्यय होता है।

ठञ् – IV. iii. 67

(व्याख्यान और भव अर्थ में षष्ठी और सप्तमीसमर्थ बहुत अच् वाले अन्तोदात्त व्याख्यातव्यनाम प्रातिपदिकों से) ठञ् प्रत्यय होता है।

ठञ् – IV. iii. 78

(पञ्चमीसमर्थ विद्यायोनि-सम्बन्धवाची ऋकारान्त प्रातिपदिकों से आगत अर्थ में) ठञ् प्रत्यय होता है।

ठञ् – IV. iv. 6

(तृतीयासमर्थ गोपुच्छ प्रातिपदिक से 'तरति' अर्थ में) ठञ् प्रत्यय होता है।

ठञ् – IV. iv. 11

(तृतीयासमर्थ श्वगण प्रातिपदिक से) ठञ् (तथा ठन्) प्रत्यय (होते हैं)।

श्वगण = कुत्तो का झुण्ड।

ठञ् – IV. iv. 38

(द्वितीयासमर्थ आक्रन्द प्रातिपदिक से 'दौड़ता है' अर्थ में) ठञ् (तथा ठक्) प्रत्यय (होते हैं)।

आक्रन्द = रोने का स्थान, शरणस्थान।

ठञ् – IV. iv. 52

(प्रथमासमर्थ लवण प्रातिपदिक से 'इसका बेचना' अर्थ में) ठञ् प्रत्यय होता है।

ठञ् – IV. iv. 58

(प्रहरण समानाधिकरणवाची प्रथमासमर्थ परश्वध प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में) ठञ् प्रत्यय होता है (और चकार से ठक् भी)।

परश्वध = कुल्हाड़ी, कुठार, फरसा।

ठञ् – IV. iv. 103

(सप्तमीसमर्थ गुडादि प्रातिपदिकों से साधु अर्थ में) ठञ् प्रत्यय होता है।

ठञ् – V. i. 18

(यहां से आगे वतेः= 'तेन तुल्यं क्रिया चेद्वतिः' सूत्र से पहले पहले तक) ठञ् प्रत्यय अधिकृत होता है।

ठञ् – V. i. 43

(सप्तमीसमर्थ लोक तथा सर्वलोक प्रातिपदिक से 'प्रसिद्ध' अर्थ में) ठञ् प्रत्यय होता है।

ठञ् – V. i. 107

(प्रकर्ष में वर्तमान जो प्रथमासमर्थ काल शब्द, उससे षष्ठ्यर्थ में) ठञ् प्रत्यय होता है।

ठञ् – V. ii. 118

(एक शब्द जिसके पूर्व में हो तथा गो शब्द जिसके पूर्व में हो, ऐसे प्रातिपदिक से 'मत्वर्थ' में नित्य ही) ठञ् प्रत्यय होता है।

...ठञौ – IV. iii. 7

देखें – अञ्ठञौ IV. iii. 7

...ठञौ – V. ii. 76

देखें – ठक्ठञौ V. ii. 76

ठञ्ञिठौ – IV. ii. 115

(काशी आदि प्रातिपदिकों से शैषिक) ठञ् और ञिठ् प्रत्यय होते हैं।

ठन् – IV. iv. 7

(तृतीयासमर्थ नौ तथा दो अच् वाले प्रातिपदिकों से 'तरति' अर्थ में) ठन् प्रत्यय होता है।

ठन् – IV. iv. 13

(तृतीयासमर्थ वस्न और क्रयविक्रय प्रातिपदिकों से) ठन् प्रत्यय होता है।

ठन् — IV. iv. 42

(द्वितीयासमर्थ प्रतिपथ प्रातिपदिक से 'जाता है' अर्थ में) ठन् (तथा ठक्) प्रत्यय (होते हैं)।

ठन् — IV. iv. 70

(सप्तमीसमर्थ अगार अन्त वाले प्रातिपदिकों से 'नियुक्त' अर्थ में) ठन् प्रत्यय होता है।

ठन्... — V. i. 21

देखें — **ठन्यतौ V. i. 21**

ठन् — V. i. 47

(प्रथमासमर्थ पूरणवाची प्रातिपदिकों से तथा अर्ध प्रातिपदिक से) सप्तम्यर्थ में ठन् प्रत्यय होता है, (यदि 'वृद्धि' = के रूप में दिया जाने वाला द्रव्य, 'आय' = जमींदारों का भाग, 'लाभ' = मूल द्रव्य के अतिरिक्त प्राप्य द्रव्य, 'शुल्क' = राजा का भाग तथा 'उपदा' = घूस 'दिया जाता है' क्रिया के कर्मवाच्य हों तो)।

ठन्... — V. i. 50

देखें — **ठन्कनौ V. i. 50**

ठन् — V. i. 83

(षण्मास प्रातिपदिक से अवस्था अभिधेय न हो तो) ठन् प्रत्यय (तथा ण्यत् प्रत्यय होते हैं, 'हो चुका' अर्थ में)।

...ठनौ — V. ii. 85

देखें — **इनिठनौ V. ii. 85**

...ठनौ — V. ii. 115

देखें — **इनिठनौ V. ii. 115**

ठन्कनौ— V. i. 50

(द्वितीयासमर्थ वस्न और द्रव्य प्रातिपदिकों से 'हरण करता है', 'वहन करता है' और 'उत्पन्न करता है' अर्थों में यथासङ्ख्य) ठन् और कन् प्रत्यय होते हैं।

ठन्यतौ — V. i. 21

(शत प्रातिपदिक से भी आर्हीय अर्थों में) ठन् और यत् प्रत्यय होते हैं, (यदि सौ अभिधेय न हो तो)।

ठप् — IV. iii. 26

(सप्तमीसमर्थ प्रावृष् प्रातिपदिक से 'उत्पन्न हुआ' अर्थ में) ठप् प्रत्यय होता है।

ठस्य — VII. iii. 50

(अङ्ग के निमित्त) ठ को (इक आदेश होता है)।

ठाजादौ — V. iii. 83

(इस प्रकरण में कथित) ठ तथा अजादि प्रत्ययों के परे रहते (द्वितीय अच् से बाद के शब्दरूप का लोप हो जाता है)।

ड

ड — प्रत्याहारसूत्र X

भगवान् पाणिनि द्वारा अपने दशम प्रत्याहार सूत्र में पठित चतुर्थ वर्ण।

पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का अट्ठाइसवां वर्ण।

डः — III. ii. 48

(अन्त, अत्यन्त, अध्व, दूर, पार, सर्व, अनन्त कर्मों के उपपद रहते गम् धातु से) ड प्रत्यय होता है।

डः — III. ii. 97

(जन् धातु से सप्तम्यन्त उपपद रहते) भूतकाल में ड प्रत्यय होता है।

डः — V. ii. 45

(प्रथमासमर्थ दशन् शब्द अन्तवाले प्रातिपदिक से सप्तम्यर्थ में) ड प्रत्यय होता है, (यदि वह प्रथमासमर्थ अधिक समानाधिकरण वाला हो तो)।

डः — VIII. iii. 29

डकारान्त पद से उत्तर (सकारादि पद को विकल्प से धुट् का आगम होता है)।

डः — III. ii. 97

(सप्तम्यन्त उपपद हो तो जन् धातु से) ड प्रत्यय होता है।

डच् — V. iv. 73

(बहु तथा गण शब्द अन्त में नहीं है जिसके, ऐसे सङ्ख्येय अर्थ में वर्तमान बहुव्रीहिसमासयुक्त प्रातिपदिक से) डच् प्रत्यय होता है।

डट् — V. ii. 48

(षष्ठीसमर्थ सङ्ख्यावाची प्रातिपदिकों से 'पूरण' अर्थ में) डट् प्रत्यय होता है।

डण् — V. i. 61

(त्रिंशत् तथा चत्वारिंशत् प्रातिपदिकों से संज्ञा-विषय में 'तदस्य परिमाणम्' अर्थ को कहने में) डण् प्रत्यय होता है, (ब्राह्मणग्रन्थ अभिधेय हों तो)।

डतमच् — V. iii. 93

(जाति को पूछने के विषय में किम्, यत् तथा तत् प्रातिपदिकों से 'बहुतों में से एक का निर्धारण' गम्यमान हो तो विकल्प से) डतमच् प्रत्यय होता है।

डतरच् — V. iii. 92

(किम्, यत् तथा तत् प्रातिपदिकों से 'दो में से एक का पृथक्करण' अर्थ में) डतरच् प्रत्यय होता है।

डतरादिभ्यः — VII. i. 25

डतर आदि में है जिसके, ऐसे (सर्वादिगणपठित पांच) शब्दों से उत्तर (सु तथा अम् को अदड् आदेश होता है)।

डति — I. i. 24

डतिप्रत्ययान्त (संख्यावाची) शब्द (की भी षट् संज्ञा होती है)।

...डति — I. i. 25

देखें — **बहुगणवतुडति I. i. 25**

डति — V. ii. 41

(सङ्ख्या के परिमाण अर्थ में वर्त्तमान प्रथमासमर्थ किम् प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में) डति प्रत्यय (तथा वतुप् प्रत्यय होते हैं तथा उस वतुप् के वकार के स्थान में घकार आदेश हो जाता है)।

डवः — I. iii. 5

देखें — **ञिटुडवः I. iii. 5**

डा... — II. iv. 85

देखें — डारौरसः II. iv. 85

...डा... — VII. i. 39

देखें — **सुलुक्० VII. i. 39**

डाच् — V. iv. 57

(अव्यक्त शब्द के अनुकरण से जिसमें अर्धभाग दो अच् वाला हो; उससे कृ, भू तथा अस् के योग में) डाच् प्रत्यय होता है, (यदि इति शब्द परे न हो तो)।

...डाचः — I. iv. 60

देखें — **ऊर्यादिच्विडाचः I. iv. 60**

...डाज्भ्यः — III. i. 13

देखें — **लोहतादिडाज्भ्यः III. i. 13**

डाप् — IV. i. 13

(दोनों से अर्थात् ऊपर कहे गये मन्नन्त प्रातिपदिकों से तथा बहुव्रीहि समास में जो अन्नन्त प्रातिपदिक — उनसे स्त्रीलिङ्ग में विकल्प से) डाप् प्रत्यय होता है।

डारौरसः — II. iv. 85

(लुट् लकार के प्रथम पुरुष के स्थान में क्रमशः) डा, रौ और रस् आदेश होते हैं।

डिति — VI. iv. 142

(भसञ्ज्ञक विंशति अङ्ग के ति का) डित् प्रत्यय परे रहते (लोप होता है)।

डु — III. ii. 180

(संज्ञा गम्यमान न हो तो वि, प्र तथा सम्पूर्वक भू धातु से) डु प्रत्यय होता है, (वर्तमानकाल में)।

डुपच् — V. iii. 89

('छोटा' अर्थ गम्यमान हो तो कुतू प्रातिपदिक से) डुपच् प्रत्यय होता है।

कुतू = तेल डालने के लिये चमड़े की बनी कुप्प।

ड्मतुप् — IV. ii. 86

(कुमुद, नड और वेतस प्रातिपदिकों से चातुरर्थिक) ड्मतुप् प्रत्यय होता है।

कुमुद = सफेद कुमुदिनी, लाल कमल।

नड = नरकुल।

वेतस = नरकुल, बेंत।

ड्यड्ड्यौ — IV. ii. 8

(तृतीयासमर्थ वामदेव प्रातिपदिक से 'देखा गया साम' अर्थ में) ड्यत् और ड्य प्रत्यय होते हैं।

ड्यड्ड्यौ — IV. iv. 113

(सप्तमीसमर्थ स्रोतस् प्रातिपदिक से वेद-विषय में भवार्थ में विकल्प से) ड्यत्, ड्य दोनों प्रत्यय होते हैं।

ड्यण् — IV. iv. 111

(सप्तमीसमर्थ पाथस् और नदी प्रातिपदिकों से वेद-विषय में भव अर्थ में) ड्यण् प्रत्यय होता है।

ड्यत्... — IV. ii. 9

देखें — ड्यड्ड्यौ IV. ii. 9

ड्यत्... — IV. iv. 113

देखें — ड्यड्ड्यौ IV. iv. 113

...ड्या... — VII. i. 39

देखें — सुलुक्० VII. i. 39

...ड्यौ — IV. ii. 9

देखें — ड्यड्ड्यौ IV. ii. 9

...ड्यौ — IV. iv. 113

देखें — ड्यड्ड्यौ IV. iv. 113

ड्वलच् — IV. ii. 87

(नड, शाद शब्दों से चातुरर्थिक) ड्वलच् प्रत्यय होता है। नड = नरकुल।

शाद = छोटी घास, कीचड़।

ड्वितः — III. iii. 88

डु इत्संज्ञक है जिन धातुओं का, उनसे (कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में क्त्रि प्रत्यय होता है)।

ड्वुन् — V. i. 24

(विंशति तथा त्रिंशद् प्रातिपदिकों से 'तदर्हति'पर्यन्त कथित अर्थों में) ड्वुन् प्रत्यय होता है; (संज्ञाभिन्न विषय में)।

ढ

ढ्... — VI. iii. 110

देखें — ढ्रलोपे VI. iii. 110

ढ — प्रत्याहार सूत्र IX

भगवान् पाणिनि द्वारा अपने नवम प्रत्याहार सूत्र में पठित द्वितीय वर्ण।

पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का तेइसवाँ वर्ण।

...ढ... — IV. i. 15

देखें — टिड्ढाणञ्० IV. i. 15

...ढ... — VII. i. 2

देखें — फढख० VII. i. 2

ढः — IV. iv. 106

(सप्तमीसमर्थ सभा शब्द से साधु अर्थ में वैदिक प्रयोग विषय में) ढ प्रत्यय होता है।

ढः — V. iii. 102

(शिला शब्द से इवार्थ में) ढ प्रत्यय होता है।

ढः — VIII. ii. 31

(हकार के स्थान में) ढकार आदेश होता है, (झल् परे रहते या पदान्त में)।

ढः — VIII. iii. 13

(ढकार परे रहते) ढकार का (लोप होता है, संहिता में)।

ढक् — IV. i. 119

(मण्डूक प्रातिपदिक से) ढक् प्रत्यय होता है, (चकार से विकल्प करके अण् भी होता है)।

मण्डूक = मेंढक।

ढक् — IV. i. 120

(स्त्री-प्रत्ययान्त प्रातिपदिकों से अपत्य अर्थ में) ढक् प्रत्यय होता है।

ढक् — IV. i. 142

(दुष्कुल प्रातिपदिक से अपत्य अर्थ में विकल्प से) ढक् प्रत्यय होता है, (पक्ष में ख)।

ढक् — IV. ii. 32

(प्रथमासमर्थ देवतावाची अग्नि प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में) ढक् प्रत्यय होता है।

ढक् — IV. ii. 96

(नदी आदि प्रातिपदिकों से शैषिक) ढक् प्रत्यय होता है।

ढक्... — IV. iii. 94
देखें — ढक्छण्ढञ्यकः IV. iii. 94

ढक् — V. i. 126
(षष्ठीसमर्थ कपि तथा ज्ञाति प्रातिपदिकों से भाव तथा कर्म अर्थ में) ढक् प्रत्यय होता है।

ढक् — V. ii. 2
(षष्ठीसमर्थ धान्यविशेषवाची व्रीहि तथा शालि प्रातिपदिकों से 'उत्पत्तिस्थान' अभिधेय हो तो) ढक् प्रत्यय होता है,(यदि वह उत्पत्तिस्थान खेत हो तो)।

ढकञ् — IV. ii. 94
(कत्र्यादि प्रातिपदिकों से शैषिक अर्थों में) ढकञ् प्रत्यय होता है।

...ढकञौ — IV. i. 140
देखें — यड्ढकञौ IV. i. 140

ढकि — IV. i. 133
(अपत्यार्थ में आये हुए) ढक् प्रत्यय के परे रहते (पितृष्वसृ शब्द का लोप हो जाता है)।

...ढकौ — IV. iv. 77
देखें — यड्ढकौ IV. iv. 77

ढक्छण्ढञ्यकः — IV. iii. 94
(तूदी, शलातुर, वर्मती, कूचवार प्रातिपदिकों से यथासङ्ख्य करके) ढक्, छण्, ढञ् तथा यक् प्रत्यय होते हैं, ('इसका देश' विषय में)।

ढञ् — IV. i. 135
(चतुष्पाद् के वाचक प्रातिपदिकों से अपत्य अर्थ में) ढञ् प्रत्यय होता है।

ढञ् — IV. ii. 19
(सप्तमीसमर्थ क्षीर प्रातिपदिक से 'संस्कृतं भक्षाः' अर्थ में) ढञ् प्रत्यय होता है।

...ढञ् ... — IV. ii. 79
देखें — वुञ्छण्कठ० IV. ii. 79

ढञ् — IV. iii. 42
(सप्तमीसमर्थ कोश प्रातिपदिक से 'सम्भूत' अर्थ में) ढञ् प्रत्यय होता है।

ढञ् — IV. iii. 56
(सप्तमीसमर्थ दृति, कुक्षि, कलशि, वस्ति, अस्ति तथा अहि शब्दों से 'भव' अर्थ में) ढञ् प्रत्यय होता है।

...ढञ्... — IV. iii. 94
देखें — ढक्छण्ढञ्यकः IV. iii. 94

ढञ् — IV. iii. 156
(षष्ठीसमर्थ एणी प्रातिपदिक से विकार और अवयव अर्थों में) ढञ् प्रत्यय होता है।
एणी = काली हरिणी

ढञ् — IV. iv. 104
(सप्तमीसमर्थ पथिन्, अतिथि, वसति, स्वपति प्रातिपदिकों से साधु अर्थ में) ढञ् प्रत्यय होता है।

ढञ् — V. i. 13
(चतुर्थीसमर्थ विकृतिवाची छदिस्, उपधि और बलि प्रातिपदिकों से 'उसकी विकृति के लिए प्रकृति' अभिधेय होने पर 'हित' अर्थ में) ढञ् प्रत्यय होता है।

ढञ् — V. i. 17
(प्रथमासमर्थ परिखा प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ एवं सप्तम्यर्थ में) ढञ् प्रत्यय होता है,(यदि वह प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक स्यात् = 'सम्भव हो' क्रिया के साथ समानाधिकरण वाला हो तो।

ढञ् — V. iii. 101
(वस्ति प्रातिपदिक से 'इव' का अर्थ द्योतित हो रहा हो तो) ढञ् प्रत्यय होता है।

...ढञौ — V. i. 10
देखें — णढञौ V. i. 10

ढिनुक् — IV. iii. 109
(तृतीयासमर्थ छगलिन् प्रातिपदिक से वेदविषय में 'प्रोक्त' अर्थ में) ढिनुक् प्रत्यय होता है।

ढे — VI. iv. 147
(कद्रू को छोड़कर जो उवर्णान्त भसञ्ज्ञक अङ्ग, उसका) ढ तद्धित प्रत्यय परे रहते (लोप होता है)।

ढे — VII. iii. 28
(प्रवाहण अङ्ग के उत्तरपद के अचों में आदि अच् को नित्य वृद्धि होती है, पूर्वपद को तो विकल्प से होती है); ढ तद्धित प्रत्यय परे रहते।

ढे — VIII. iii. 13

ढकार परे रहते (ढकार का लोप होता है, संहिता में)।

...ढोः— VIII. ii. 41

देखें — षढो : VIII. ii. 41

ढ्रक् — IV. i. 129

(गोधा शब्द से अपत्य अर्थ में) ढ्रक् प्रत्यय होता है।

ढ्रलोपे — VI. iii. 110

ढकार एवं रेफ का लोप हुआ है जिसके कारण, उसके परे रहते (पूर्व के अण् को दीर्घ होता है)।

ण

ण् — प्रत्याहारसूत्र I

आचार्य पाणिनि द्वारा अपने प्रथम प्रत्याहार सूत्र में इत्सञ्ज्ञार्थ पठित वर्ण।

ण् — प्रत्याहारसूत्र VI

आचार्य पाणिनि द्वारा अपने छठे प्रत्याहारसूत्र में इत्सञ्ज्ञार्थ पठित वर्ण।

ण — प्रत्याहारसूत्र VII

भगवान् पाणिनि द्वारा अपने सप्तम प्रत्याहारसूत्र में पठित चतुर्थ वर्ण।

पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी में पठित वर्णमाला का अठारहवां वर्ण।

ण — III. iii. 60

(नि पूर्वक अद् धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में) ण प्रत्यय (भी होता है, अप् भी)।

ण — IV. i. 147

(गोत्र में वर्तमान जो स्त्री, तद्वाची प्रातिपदिक से कुत्सन गम्यमान होने पर अपत्य अर्थ में) ण प्रत्यय होता है (और ठक् भी)।

ण... — IV. i. 150

देखें — णफिञौ IV. i. 150

ण... — V. i. 10

देखें — णढञौ V. i. 10

ण... — V. i. 97

देखें — णयतौ V. i. 97

णः — III. i. 140

(ज्वल् से लेकर कस् पर्यन्त धातुओं से विकल्प से) ण प्रत्यय होता है।

णः — IV. ii. 56

(प्रथमासमर्थ प्रहरण समानाधिकरण वाले प्रातिपदिकों से सप्तम्यर्थ में) ण प्रत्यय होता है, (यदि 'अस्यां' से क्रीडा निर्दिष्ट हो)।

णः — IV. iv. 62

(शील समानाधिकरणवाची प्रथमासमर्थ छत्रादि प्रातिपदिकों से षष्ठ्यर्थ में) ण प्रत्यय होता है।

णः — IV. iv. 85

(द्वितीयासमर्थ अन्न प्रातिपदिक से 'प्राप्त करने वाला' कहना हो तो) ण प्रत्यय होता है।

णः — IV. iv. 100

(सप्तमीसमर्थ भक्त प्रातिपदिक से साधु अर्थ में) ण प्रत्यय होता है।

णः — V. i. 75

(द्वितीयासमर्थ पथिन् प्रातिपदिक से 'नित्य ही जाता है' अर्थ में) ण प्रत्यय होता है (तथा उस प्रत्यय के सन्नियोग से पथिन् को पन्थ आदेश भी होता है)।

णः — V. ii. 101

(प्रज्ञा, श्रद्धा तथा अर्चा प्रातिपदिकों से 'मत्वर्थ' में विकल्प करके) ण प्रत्यय होता है।

णः — VI. i. 63

(धातु के आदि के) णकार के स्थान में (उपदेश में नकार आदेश होता है)।

णः — VIII. iv. 1

(रेफ तथा षकार से उत्तर नकार को) णकारादेश होता है, (एक ही पद में)।

णः — VIII. iv. 12

(एक अच् है उत्तरपद में जिस समास के, वहाँ पूर्वपद में स्थित निमित्त से उत्तर प्रातिपदिकान्त, नुम् तथा विभक्ति के नकार को) णकार आदेश होता है।

णच् — III. iii. 43

(क्रिया का अदल-बदल गम्यमान हो तो स्त्रीलिङ्ग में धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में) णच् प्रत्यय होता है।

णचः — V. iv. 14

णच्प्रत्ययान्त प्रातिपदिक से (स्वार्थ में अञ् प्रत्यय होता है; स्त्रीलिङ्ग में)।

णढञौ — V. i. 10

(चतुर्थीसमर्थ सर्व तथा पुरुष प्रातिपदिकों से 'हित' अर्थ में यथासङ्ख्य) ण तथा ढञ् प्रत्यय होते हैं।

णफिञौ — IV. i. 150

(सौवीर गोत्रवाचक फाण्टाहृति तथा मिमत शब्दों से) ण तथा फिञ् प्रत्यय होते हैं।

णमुल्... — III. iv. 12

देखें — **णमुल्कमुलौ III. iv. 12**

णमुल् — III. iv. 22

(पौनःपुन्य अर्थ में समानकर्तृक दो धातुओं में जो पूर्व-कालिक, उससे) णमुल् प्रत्यय होता है, (चकार से क्त्वा भी होता है)।

णमुल् — III. iv. 26

(स्वादुवाची शब्दों के उपपद रहते समानकर्तृक पूर्व-कालिक कृञ् धातु से) णमुल् प्रत्यय होता है।

णमुलि — VI. i. 52

(अपपूर्वक 'गुरी उद्यमने' धातु के एच् के स्थान में) णमुल् प्रत्यय के परे रहते (विकल्प से आत्व हो जाता है)।

णमुलि — VI. i. 188

णमुल् प्रत्यय के परे रहते (पूर्व धातु को विकल्प से आद्युदात्त होता है)।

... णमुलो : — VI. iv. 93

देखें — **चिण्णमुलोः VI. iv. 93**

...णमुलोः — VII. i. 69

देखें — **चिण्णमुलोः VII. i. 69**

...णमुलौ — III. iv. 59

देखें — **क्त्वाणमुलौ III. iv. 59**

णमुल्कमुलौ — III. iv. 12

('शक्नोति' धातु उपपद हो तो वेद-विषय में धातु से) णमुल् तथा कमुल् प्रत्यय होते हैं।

णयतौ — V. i. 97

(तृतीयासमर्थ यथाकथाच तथा हस्त प्रातिपदिकों से 'दिया जाता है' और 'कार्य' अर्थों में यथासङ्ख्य करके ण और यत् प्रत्यय होते हैं।

णल्... — III. iv. 82

देखें — **णलतुसुस्० III. iv. 82**

णल् — VII. i. 91

(उत्तमपुरुष-सम्बन्धी) णल् प्रत्यय (विकल्प से णित्वत् होता है)।

...णल्... — VII. iii. 85

देखें — **अविचिण्णल्० VII. iii. 85**

णलः — VII. i. 34

(आकारान्त अङ्ग से उत्तर) णल् के स्थान में (औकारादेश हो जाता है)।

णलतुसुस्थलथुसणल्वमाः — III. ii. 82

(लिट् लकार के परस्मैपदसंज्ञक जो 9 तिबादि आदेश, उनके स्थान में यथासङ्ख्य करके) णल्, अतुस्, उस्, थल्, अथुस्, अ, णल्, व, म—ये आदेश हो जाते हैं।

...णलोः — VII. iii. 32

देखें — **अचिण्णलोः VII. iii. 32**

...णश... — II. iv. 80

देखें — **घसह्वरणश० II. iv. 80**

...णान्ता — I. i. 24

देखें — **ष्णान्ता I. i. 24**

णि... — III. i. 48

देखें — **णिश्रिद्रु० III. i. 48**

णि... — III. iii. 107

देखें — **ण्यासश्रन्थः III. iii. 107**

...णि... — VII. ii. 5

देखें — **हम्यन्तक्षण० VII. ii. 5**

णिङ् — III. i. 20

(पुच्छ, भाण्ड और चीवर कर्मों से क्रियाविशेष गम्यमान होने पर) णिङ् प्रत्यय होता है।

णिङ् — III. i. 30

(कम् धातु से) णिङ् प्रत्यय होता है।

णिच् — III. i. 21

(मुण्ड, मिश्र, श्लक्ष्ण, लवण, व्रत, वस्त्र, हल, कल, कृत, तूस्त — इन कर्मों से 'करोति' अर्थ में) णिच् प्रत्यय होता है।

णिच् — III. i. 25

(सत्याप, पाश, रूप, वीणा, तूल, श्लोक, सेना, लोम, त्वच, वर्म, वर्ण, चूर्ण — इन शब्दों तथा चुरादि धातुओं से) णिच् प्रत्यय होता है।

णिचः — I. iii. 74

णिजन्त धातु से (भी आत्मनेपद होता है, क्रियाफल कर्त्ता को मिले तो)।

...णित् — I. ii. 1

देखें — **ञ्णित् I. ii. 1**

णित् — VII. i. 90

(गो शब्द से उत्तर सर्वनामस्थानविभक्ति) णित्वत् होती है।

...णित्... — VII. iii. 54

देखें — **ञ्णिन्नेषु VII. iii. 54**

...णिति — VII. ii. 115

देखें — **ञ्णिति VII. ii. 115**

...णिनि... — III. i. 134

देखें — **ल्युणिन्यचः III. i. 134**

णिनि — VI. ii. 79

णिन्नन्त शब्द उत्तरपद रहते (पूर्वपद को आद्युदात्त होता है)।

णिनिः — III. ii. 51

(कुमार तथा शीर्ष कर्म के उपपद रहते हन् धातु से) णिनि प्रत्यय होता है।

णिनिः — III. ii. 78

(धातुओं से अजातिवाची सुबन्त उपपद रहते ताच्छील्य = तत्स्वभावता गम्यमान होने पर) णिनि प्रत्यय होता है।

णिनिः — III. iii. 170

(आवश्यक और आधमर्ण्य वाच्य हो तो धातु से) णिनि प्रत्यय होता है।

णिनिः — IV. iii. 103

(तृतीयासमर्थ ऋषिवाची काश्यप और कौशिक प्रातिपदिकों से प्रोक्त अर्थ में) णिनि प्रत्यय होता है।

णिश्रिद्रुस्रुभ्यः — III. i. 48

ण्यन्त तथा श्रि, द्रु, स्रु धातुओं से (च्लि के स्थान में चङ् आदेश होता है, कर्तृवाची लुङ् परे रहते)।

...णी... — III. iii. 24

देखें — **श्रिणीभुवः III. iii. 24**

णेः — I. iii. 67

(अण्यन्त अवस्था में जो कर्म, वही यदि ण्यन्त अवस्था में कर्ता बन रहा हो तो ऐसी) ण्यन्त धातु से (आत्मनेपद होता है; आध्यान = उत्कण्ठापूर्वक स्मरण अर्थ को छोड़कर)।

णेः — I. iii. 86

(बुध, युध, नश, जन, इङ्, प्रु, द्रु, स्रु — इन) ण्यन्त धातुओं से (परस्मैपद होता है)।

णेः — III. ii. 137

ण्यन्त धातुओं से (वेद-विषय में तच्छीलादि कर्ता हो, तो वर्तमानकाल में इष्णुच् प्रत्यय होता है)।

णेः — VI. iv. 51

(अनिडादि आर्धधातुक के परे रहते) 'णि' का (लोप होता है)।

णेः — VII. ii. 27

(अध्ययन को कहने में निष्ठा के विषय में) ण्यन्त (वृति) धातु से (वृत्त शब्द निपातन किया जाता है)।

णेः — VII. iv. 29

ण्यन्त धातु से (विहित जो कृत् प्रत्यय, उसमें स्थित जो अच् से उत्तर नकार, उसको उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर विकल्प से णकार आदेश होता है)।

...णोः — VIII. iii. 28

देखें — ड्णोः VIII. iii. 28

णोपदेशस्य — VIII. iv. 14

(उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर) णकार उपदेश में है जिसके, ऐसे धातु के (नकार को असमास में तथा अपि-ग्रहण से समास में भी णकार आदेश होता है)।

णौ — I. iii. 67

(अण्यन्तावस्था में जो कर्म, वही यदि) ण्यन्तावस्था में (कर्ता बन रहा हो तो ऐसी ण्यन्त धातु से आत्मनेपद होता है, आध्यान=उत्कण्ठापूर्वक स्मरण अर्थ को छोड़कर)।

णौ — I. iv. 52

(गत्यर्थक, बुद्ध्यर्थक, भोजनार्थक तथा शब्दकर्मवाली और अकर्मक धातुओं का जो अण्यन्तावस्था में कर्त्ता, वह) ण्यन्तावस्था में (कर्मसंज्ञक हो जाता है)।

णौ — II. iv. 46

(आर्धधातुक) णिच् परे रहते (अबोधनार्थक इण् को गम् आदेश होता है)।

णौ — II.iv. 51

(सन्परक चङ्परक) णिच् परे रहते (भी इङ् को गाङ् आदेश विकल्प से होता है)।

णौ — VI. i. 31

(सन् हो या चङ् परे हो जिस णिच् के, ऐसे) णि के परे रहते (भी टुओश्वि धातु को विकल्प से सम्प्रसारण हो जाता है)।

णौ — VI. i. 47

(डुक्रीञ्, इङ् तथा जि धातुओं के एच् के स्थान में) णिच् प्रत्यय के परे रहते (आकारादेश हो जाता है)।

णौ — VI. i. 53

(चि तथा स्फुर् धातुओं के एच् के स्थान में) णिच् प्रत्यय के परे रहते (विकल्प से आत्व हो जाता है)।

णौ — VI. iv. 90

(दोष् अङ्ग की उपधा को ऊकार आदेश होता है); णि परे रहते।

णौ — VII. iii. 36

(ऋ, ह्री, ब्ली, री, क्नूयी, क्ष्मायी तथा आकारान्त अङ्ग को) णिच् परे रहते (पुक् आगम होता है)।

णौ— VII. iv. 1

(चङ्परक) णि के परे रहते (अङ्ग की उपधा को ह्रस्व होता है)।

ण्य...— II. iv. 58

देखें— ण्यक्षत्रियार्षञितः II. iv. 58

...ण्य...— IV. ii. 79

देखें— वुञ्छण्कठ० IV. ii. 79

ण्यः— IV. i. 85

(दिति, अदिति, आदित्य तथा पति उत्तरपद वाले समर्थ प्रातिपदिकों से प्राग्दीव्यतीय अर्थों में) ण्य प्रत्यय होता है।

ण्यः — IV. i. 151

(कुरु आदि प्रातिपदिकों से अपत्य अर्थ में) ण्य प्रत्यय होता है।

ण्यः — IV. i. 170

(क्षत्रियाभिधायी जनपदवाची कुरु तथा नकार आदि वाले प्रातिपदिकों से अपत्य अर्थ में) ण्य प्रत्यय होता है।

ण्यः — IV. iv. 44

(द्वितीयासमर्थ परिषद् प्रातिपदिक से 'समवेत होता है' अर्थ में) ण्य प्रत्यय होता है।

ण्यः — IV. iv. 101

(सप्तमीसमर्थ परिषद् प्रातिपदिक से साधु अर्थ में) ण्य प्रत्यय होता है।

ण्यक्षत्रियार्षञितः — II. iv. 58

ण्यन्त गोत्रप्रत्ययान्त, क्षत्रियवाची गोत्रप्रत्ययान्त, ऋषि-वाची गोत्रप्रत्ययान्त तथा ञ् जिनका इत्सञ्ज्ञक हो ऐसे जो गोत्रप्रत्ययान्त शब्द — उनसे (युवापत्य में विहित अण् और इञ् प्रत्ययों का लुक् होता है)।

ण्यत् — III. i. 125

(ऋवर्णान्त और हलन्त धातुओं से) ण्यत् प्रत्यय होता है।

ण्यत् — V. i. 82

(षण्मास प्रातिपदिक से अवस्था अभिधेय हो तो 'हो चुका' अर्थ में) ण्यत् प्रत्यय (और यप् प्रत्यय होते हैं तथा औत्सर्गिक ठञ् प्रत्यय भी)।

ण्यतः — VI. i. 208

(ईड, वन्द, वृ, शंस, दुह्—इन धातुओं का) जो ण्यत्, तदन्त शब्द को (आद्युदात्त होता है)।

...ण्यतोः — VIII. iii. 52

देखें — **घिण्ण्यतोः VIII. iii. 52**

ण्यासश्रन्थः — III. iii. 107

ण्यन्त धातुओं एवं 'आस उपवेशने' तथा 'श्रन्थ् विमोचनप्रतिहर्षयोः' धातुओं से (स्त्रीलिङ्ग कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में युच् प्रत्यय होता है।

ण्युट् — III. i. 147

(गा धातु से शिंल्पी कर्त्ता वाच्य होने पर) ण्युट् प्रत्यय होता है।

ण्ये — VII. iii. 65

ण्य परे रहते (आवश्यक अर्थ में अङ्ग के चकार, जकार को कवर्गादेश नहीं होता।

...ण्योः — VIII. iii. 61

देखें — **स्तौतिण्योः VIII. iii. 61**

ण्विः — III. ii. 62

(भज् धातु से सुबन्त उपपद रहते सोपसर्ग हो या निरुपसर्ग तो भी) ण्वि प्रत्यय होता है।

ण्विन् — III. ii. 69

(वैदिक प्रयोग विषय में श्वेतवह, उक्थशस्, पुरोडाश— ये शब्द) ण्विन्-प्रत्ययान्त (निपातन किये जाते हैं)।

ण्वुच् — III. iii. 111

(पर्याय, अर्ह, ऋण तथा उत्पत्ति अर्थों में धातु से स्त्रीलिङ्ग भाव में विकल्प से) ण्वुच् प्रत्यय होता है।

ण्वुल्... — III. i. 133

देखें — **ण्वुल्तृचौ III. i. 133**

ण्वुल् — III. iii. 108

(रोगविशेष की संज्ञा में धातु से स्त्रीलिङ्ग में) ण्वुल् प्रत्यय (बहुल करके) होता है।

...ण्वुलौ — III. iii. 10

देखें — **तुमुन्ण्वुलौ III. iii. 10**

ण्वुल्तृचौ — III. i. 133

(धातुमात्र से) ण्वुल्, तृच् प्रत्यय होते हैं।

त

त — प्रत्याहारसूत्र XI

— आचार्य पाणिनि द्वारा अपने ग्यारहवें प्रत्याहार सूत्र में पठित आठवां वर्ण।

— पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का सेंतीसवां वर्ण।

त... — I. IV. 19

देखें — **तसौ I. IV. 19**

त... — II. iv. 79

देखें — **तथासोः II. iv. 79**

त — III. i. 108

(अनुपसर्ग हन् धातु से सुबन्त उपपद रहते भाव में क्यप् प्रत्यय होता है तथा) तकार अन्तादेश (भी) होता है।

त... — III. iv. 2

देखें — **तध्वमोः III. iv. 2**

...त... — III. iv. 78

देखें — **तिप्तस्झि० III. iv. 78**

त... — III. iv. 81

देखें — **तझयोः III. iv. 81**

...त... — III. iv. 101

देखें — **तान्तन्तामः III. iv. 101**

...त... — V. ii. 138

देखें — **बभयुस्० V. ii. 138**

...त... — VII. ii. 9

देखें — **तितुत्र० VII. ii. 9**

त... — VII. ii. 106

देखें — **तदोः VII. ii. 106**

त... — VIII. ii. 38

देखें — **तथोः VIII. ii. 38**

त... — VIII. ii. 40

देखें — तथोः VIII. ii. 40

तः — IV. i. 39

(वर्णवाची अदन्त अनुपसर्जन अनुदात्तान्त तकार उपधावाले प्रातिपदिकों से विकल्प से स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय तथा) तकार को (नकारादेश हो जाता है)।

तः — VII. i. 41

(वेद-विषय में आत्मनेपद में वर्तमान) तकार का (लोप हो जाता है)।

तः — VII. iii. 32

(हन् अङ्ग को) तकारादेश होता है, (चिण् तथा ण्यत् प्रत्ययों को छोड़कर ञित्, णित् प्रत्यय परे रहते)।

तः — VII. iii. 42

(अगति अर्थ में वर्तमान 'शद्लृ शातने' अङ्ग को) तकारादेश होता है।

तः — VII. iv. 47

(अजन्त उपसर्ग से उत्तर घुसंज्ञक दा अङ्ग को तकारादि कित् प्रत्यय परे रहते) तकारादेश होता है।

तक्षः — III. i. 76

तक्षू धातु से (तनूकरण = छीलने अर्थ में विकल्प से श्नु प्रत्यय होता है, कर्तृवाची सार्वधातुक परे रहने पर)।

...तक्षशिलादिभ्यः — IV. iii. 93

देखे — सिन्धुतक्षशिलादिभ्यः — IV. iii. 93

तक्ष्णः — V. iv. 95

(ग्राम तथा कौट शब्दों से उत्तर) तक्षन्-शब्दान्त (तत्पुरुष) से (भी समासान्त टच् प्रत्यय होता है)।

तङ् — I. iv. 99

देखें — तङानौ I. iv. 99

...तङ् — VI. iii. 132

देखें — तुनुघम० VI. iii. 132

तङानौ— I. iv. 99

तङ् और आन (आत्मनेपद संज्ञक होते हैं)।

तङ् = त से लेकर महिङ् तक प्रत्यय।

आन = शानच्, कानच्।

तच्छील... — III. ii. 134

देखे — तच्छीलतद्धर्म० III. ii. 134

तच्छीलतद्धर्मतत्साधुकारिषु — III. ii. 134

('भ्राजभास'० III. ii. 177. इस सूत्र से विहित क्विप्–पर्यन्त जितने प्रत्यय कहे हैं, वे सब) तच्छील = फल की आकांक्षा बिना किये स्वभाव से ही उस क्रिया में प्रवृत्त होने वाला, तद्धर्म = स्वभाव के बिना भी अपना धर्म समझकर उस क्रिया में प्रवृत्त होने वाला तथा तत्साधुकारी = उस क्रिया को कुशलता से करने वाला कर्ता अर्थों में जानने चाहिए।

तझयोः — III. iv. 81

(लिट् के स्थान में जो) त और झ आदेश, उनको (यथासङ्ख्य करके एश् और इरेच् आदेश होते हैं)।

तत् — I. i. 62

(जिस समुदाय के अचों में आदि अच् वृद्धिसंज्ञक हो) वह (समुदाय वृद्धसंज्ञक होता है)।

तत् — I. ii. 53

वह उपर्युक्त युक्तवद्भाव (= पूरा-पूरा शासन विहित नहीं किया जा सकता, उसके लौकिक व्यवहार के अधीन होने से)।

...तत्... — III. ii. 21

देखें— दिवाविभा० III. ii. 21

तत् — IV. ii. 56

प्रथमासमर्थ (प्रहरण समानाधिकरणवाले प्रातिपदिकों से सप्तम्यर्थ में ण प्रत्यय होता है, यदि 'अस्यां' से क्रीडा निर्दिष्ट हो)।

तत् — IV. ii. 58

द्वितीयासमर्थ प्रातिपदिक से ('अध्ययन करता है' अर्थ में यथाविहित अण् प्रत्यय होता है, इसी प्रकार द्वितीया-समर्थ प्रातिपदिक से 'जानता है' अर्थ में यथाविहित अण् प्रत्यय होता है)।

तत् — IV. ii. 58

(द्वितीयासमर्थ प्रातिपदिक से 'अध्ययन करता है' अर्थ में यथाविहित अण् प्रत्यय होता है, इसी प्रकार) द्वितीया-समर्थ प्रातिपदिक से ('जानता है' अर्थ में यथाविहित अण् प्रत्यय होता है)।

तत् — IV. iii. 52

प्रथमासमर्थ (कालवाची 'सहन किया' समानाधिकरण प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में यथाविहित प्रत्यय होता है)।

तत् — IV. iii. 85

द्वितीयासमर्थ प्रातिपदिक से (गच्छति क्रिया के पथ तथा कर्त्ता अभिधेय होने पर यथाविहित प्रत्यय होता है)।

तत् — IV. iv. 28

द्वितीयासमर्थ (प्रति, अनुपूर्वक जो ईप, लोम और कूल) प्रातिपदिक, उनसे ('वर्तते = है' अर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

तत् — IV. iv. 51

प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से (षष्ठ्यर्थ में ठक् प्रत्यय होता है, यदि वह प्रथमासमर्थ 'खरीदने योग्य' हो)।

तत् — IV. iv. 66

प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से ('इसके लिये नियमपूर्वक दिया जाता है' विषय में ठक् प्रत्यय होता है)।

तत् — IV. iv. 76

द्वितीयासमर्थ (रथ, युग, प्रासङ्ग प्रातिपदिकों से 'ढोता है' अर्थ में यत् प्रत्यय होता है)।

तत् — V. i. 16

(प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में तथा) प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से (सप्तम्यर्थ में यथाविहित प्रत्यय होते हैं, यदि वह प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक 'स्यात्' = 'सम्भव हो' क्रिया के साथ समानाधिकरण वाला हो तो)।

तत् — V. i. 16

प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से (षष्ठ्यर्थ में तथा प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से सप्तम्यर्थ में यथाविहित प्रत्यय होता है, यदि वह प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक 'स्यात्' = 'सम्भव हो' क्रिया के साथ समानाधिकरण वाला हो तो)।

तत् — V. i. 46

प्रथमासमर्थ प्रातिपदिकों से (सप्तम्यर्थ में यथाविहित प्रत्यय होते हैं, यदि 'वृद्धि' = व्याज के रूप में दिया जाने वाला द्रव्य, 'आय' = जमींदारों का भाग, 'लाभ' = मूलद्रव्य के अतिरिक्त प्राप्य द्रव्य, 'शुल्क' = राजा का भाग तथा 'उपदा' = घूस—ये 'दिया जाता है' क्रिया के कर्म वाच्य हों तो)।

तत् — V. i. 49

(वंशादिगणपठित प्रातिपदिकों से उत्तर जो भार शब्द, तदन्त) द्वितीयासमर्थ प्रातिपदिक से ('हरण करता है' 'वहन करता है' और 'उत्पन्न करता है' अर्थों में यथाविहित प्रत्यय होते हैं)।

तत् — V. i. 56

प्रथमासमर्थ (परिमाणवाची) प्रातिपदिकों से (षष्ठ्यर्थ में यथाविहित प्रत्यय होते हैं)।

तत् — V. i. 62

द्वितीयासमर्थ प्रातिपदिकों से ('समर्थ है' अर्थ में यथाविहित प्रत्यय होते हैं)।

तत् — V. i. 93

प्रथमासमर्थ (कालवाची) प्रातिपदिक से (षष्ठ्यर्थ में यथाविहित ठञ् प्रत्यय होता है, ब्रह्मचर्य गम्यमान होने पर)।

तत् — V. i. 103

प्रथमासमर्थ (समय) प्रातिपदिक से (षष्ठ्यर्थ में यथाविहित ठञ् प्रत्यय होता है, यदि वह प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक प्राप्त समानाधिकरण वाला हो तो)।

तत् — V. i. 116

द्वितीयासमर्थ प्रातिपदिक से (योग्यता) विशिष्ट क्रिया वाच्य हो तो वति प्रत्यय होता है)।

तत् — V. ii. 7

द्वितीयासमर्थ (सर्व शब्द आदि में है जिनके, ऐसे) (पथिन्, अङ्ग, कर्म, पत्र तथा पात्र) प्रातिपदिकों से ('व्याप्त होता है' अर्थ में ख प्रत्यय होता है)।

तत् — V. ii. 36

प्रथमासमर्थ (संजात समानाधिकरण वाले तारकादि) प्रातिपदिकों से (षष्ठ्यर्थ में इतच् प्रत्यय होता है)।

... तत्... — V. ii. 39

देखें— यत्तदेतेभ्यः V. ii. 39

तत् — V. ii. 45

प्रथमासमर्थ (दशन् शब्द अन्तवाले) प्रातिपदिक से (सप्तम्यर्थ में ड प्रत्यय होता है, यदि वह प्रथमासमर्थ अधिक समानाधिकरण वाला हो तो)।

तत् — IV. ii. 66

(अस्ति समानाधिकरण वाले) प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से (सप्तम्यर्थ में यथाविहित प्रत्यय होता है, यदि सप्तम्यर्थ से निर्दिष्ट उस नामवाला देश हो, इतिकरण विवक्षार्थ है)।

तत् — V. ii. 82

प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से (सप्तम्यर्थ में कन् प्रत्यय होता है, यदि वह प्रथमासमर्थ बहुल करके सञ्ज्ञाविषय में अन्नविषयक हो तो)।

तत् — V. iv. 21

प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से ('प्रभूत' अर्थ में मयट् प्रत्यय होता है)।

...तत्... —VIII. iii. 103

देखें — युष्मत्तत्ततक्षुःषु० VIII. iii. 103

ततः — IV. iii. 74

पञ्चमीसमर्थ प्रातिपदिक से ('आया हुआ' अर्थ में यथाविहित प्रत्यय होता है)।

...ततक्षुःषु — VIII. iii. 103

देखें — युष्मत्तत्ततक्षुःषु VIII. iii. 103

तत्कालस्य — I. i. 69

(त् परे वाला तथा त् से परे वाला वर्ण) स्वकालसवर्ण एवं स्वरूप के ग्राहक होते हैं, (भिन्नकाल वाले सवर्ण का नहीं)।

तत्कृत — II. i. 29

(तृतीयान्त सुबन्त) तत्कृत = तृतीयान्तार्थकृत (गुणवाची शब्द के साथ समास को प्राप्त होता है और वह तत्पुरुष समास होता है)।

तत्पुरुषः — I. ii. 42

(समान है अधिकरण जिनका, ऐसे पदों वाला) तत्पुरुष (कर्मधारयसंज्ञक होता है)।

तत्पुरुषः — II. i. 21

तत्पुरुष = पूर्वाचार्यों द्वारा विहित उत्तरपदार्थप्रधान समास की संज्ञा – यह अधिकार सूत्र है।

तत्पुरुषः — II. iv. 19

तत्पुरुष समास (नञ् और कर्मधारय को छोड़कर नपुंसकलिङ्ग होता है)।

...तत्पुरुषयोः — II. iv. 26

देखें — द्वन्द्वतत्पुरुषयोः II. iv. 26

तत्पुरुषस्य — V. iv. 86

(सङ्ख्या तथा अव्यय आदि में है जिस अङ्गुलि – शब्दान्त) तत्पुरुष समास के, (तदन्त प्रातिपदिक से समासान्त अच् प्रत्यय होता है)।

तत्पुरुषात् — V. i. 120

(यहां से आगे जो भावार्थक प्रत्यय कहे जायेंगे, वे नञ्पूर्व) तत्पुरुष समास युक्त प्रातिपदिकों से (नहीं; होंगे चतुर, संगत, लवण, वट, युध, कत, रस तथा लस शब्दों को छोड़कर)।

तत्पुरुषात्— V. iv. 71

(नञ् से परे जो शब्द, तदन्त) तत्पुरुष से (समासान्त प्रत्यय नहीं होता)।

तत्पुरुषे— VI. i. 13

(ष्यङ् को सम्प्रसारण होता है, यदि पुत्र तथा पति शब्द उत्तरपद हो तो), तत्पुरुष समास में।

तत्पुरुषे— VI. ii. 2

तत्पुरुष समास में (पूर्वपदस्थानीय तुल्यार्थक, तृतीयान्त, सप्तम्यन्त उपमानभूतार्थवाचक, अव्ययसंज्ञक, द्वितीयान्त तथा कृत्यप्रत्ययान्त शब्दों का स्वर प्रकृतिवत् रहता है)।

तत्पुरुषे — VII. ii. 122

(नपुंसकलिङ्ग वाले शालाशब्दान्त) तत्पुरुष समास में (उत्तरपद को आद्युदात्त होता है)।

तत्पुरुषे — VI. ii. 193

(प्रति उपसर्ग से उत्तर) तत्पुरुष समास में (अश्वादिगणपठित शब्दों को अन्तोदात्त होता है)।

तत्पुरुषे — VI. iii. 13

तत्पुरुष समास में (कृदन्त शब्द उत्तरपद रहते बहुल करके सप्तमी का अलुक् होता है)।

तत्पुरुषे — VI. iii. 100

(कु को) तत्पुरुष समास में (अजादि शब्द उत्तरपद हो तो कत् आदेश होता है)।

तत्प्रत्ययस्य — VII. iii. 29

तत् = ढक्प्रत्ययान्त (प्रवाहण = वाहन अङ्ग) के (उत्तरपद के अचों में आदि अच् को भी वृद्धि होती है,

पूर्वपद को तो विकल्प से होती है; ञित्, णित्, कित् तद्धित प्रत्यय परे रहते)।

तत्प्रत्ययात् — IV. iii. 152

विकार और अवयव अर्थों में विहित (जो ञित् प्रत्यय, तदन्त षष्ठीसमर्थ) प्रातिपदिक से (भी विकार और अवयव अर्थों में ही अञ् प्रत्यय होता है)।

तत्प्रयोजकः — I. iv. 55

उस स्वतन्त्र कर्ता का प्रेरक (कारक हेतुसंज्ञक और कर्तृ-संज्ञक भी होता है)।

तत्र — II. i. 45

(सप्तम्यन्त) 'तत्र' यह अव्यय शब्द (क्तप्रत्ययान्त समर्थ सुबन्त के साथ विकल्प से समास को प्राप्त होता है और वह समास तत्पुरुषसंज्ञक होता है)।

तत्र — II. ii. 27

सप्तम्यन्त (तथा तृतीयान्त समान रूप वाले दो सुबन्त परस्पर इदम्=इस अर्थ में विकल्प से समास को प्राप्त होते हैं और वह बहुव्रीहि समास होता है)।

तत्र — II. iii. 9

(जिससे अधिक हो और जिसका सामर्थ्य हो) उस (कर्म-प्रवचनीय के योग) में (सप्तमी विभक्ति होती है)।

तत्र — III. i. 92

इस धातु के अधिकार में (जो सप्तमी विभक्ति से निर्दिष्ट पद हैं, उनकी उपपद संज्ञा होती है)।

तत्र — IV. ii. 13

सप्तमीसमर्थ (पात्रवाची) प्रातिपदिकों से [भोजन के पश्चात् अवशिष्ट (शुद्ध अन्न) अर्थ में यथाविहित (अण्) प्रत्यय होता है]।

तत्र — IV. iii. 25

सप्तमीसमर्थ प्रातिपदिकों से (उत्पन्न हुआ अर्थ में यथाविहित प्रत्यय होता है)।

तत्र — IV. iii. 53

सप्तमीसमर्थ प्रातिपदिक से ('होने वाला' अर्थ में यथा-विहित प्रत्यय होता है)।

तत्र — IV. iv. 69

सप्तमीसमर्थ प्रातिपदिक से (नियुक्त अर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

तत्र — IV. iv. 98

सप्तमीसमर्थ प्रातिपदिक से (साधुं=कुशल अर्थ को कहने में यत् प्रत्यय होता है)।

तत्र — V. i. 42

सप्तमीसमर्थ (सर्वभूमि और पृथिवी प्रातिपदिकों से 'प्रसिद्ध' अर्थ में भी यथासङ्ख्य करके अण् तथा अञ् प्रत्यय होते हैं)।

तत्र — V. i. 95

सप्तमीसमर्थ (कालवाची) प्रातिपदिकों से ('दिया जाता है' और 'कार्य' अर्थों में 'भव' अर्थ के समान ही प्रत्यय हो जाते हैं)।

तत्र — V. i. 115

सप्तमीसमर्थ प्रातिपदिकों (तथा षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिकों से 'समान' अर्थ में वति प्रत्यय होता है)।

तत्र — V. ii. 63

सप्तमीसमर्थ पथिन् प्रातिपदिक से (कुशल अर्थ में वुन् प्रत्यय होता है)।

... तत्साधुकारिषु — III. ii. 134

देखें — **तच्छीलतद्धर्म० III. ii. 134**

...तत्स्थयोः — IV. ii. 133

देखें — **मनुष्यतत्स्थयोः IV. ii. 133**

... तथयोः — III. iv. 28

देखें — **यथातथयोः III. iv, 28**

तथा — I. iv. 50

(जिस प्रकार कर्ता का अत्यन्त ईप्सित कारक क्रिया के साथ युक्त होता है) उस प्रकार (ही कर्त्ता का न चाहा हुआ कारक क्रिया से युक्त हो तो उसकी कर्म संज्ञा होती है)।

तथासोः — II. iv. 79

त और थास् परे रहते (तनादि धातुओं से उत्तरवर्ती सिच् का विकल्प से लुक् होता है)।

तथोः — VIII. ii. 38

(झषन्त दध् धातु के बश् के स्थान में भष् आदेश होता है) तकार तथा थकार परे रहते (तथा झलादि सकार एवं ध्व परे रहते भी)।

तथोः — VIII. ii. 40

(झष् से उत्तर) तकार तथा थकार को (धकार आदेश होता है, किन्तु डुधाञ् धातु से उत्तर धकारादेश नहीं होता)।

...तदः — V. iii. 15

देखें — **सर्वैकान्य० V. iii. 15**

तदः — V. iii. 19

(काल अर्थ में वर्तमान सप्तम्यन्त) तत् प्रातिपदिक से (दा तथा दानीम् प्रत्यय होते हैं)।

...तदः — V. iii. 92

देखें — **किंयत्तदः V. iii. 92**

तदधीनवचने — V. iv. 54

(स्वामिविशेषवाची प्रातिपदिक से) 'ईशितव्य' अभिधेय होने पर (कृ. भू तथा अस् के योग में तथा सम्पूर्वक पद् के योग में साति प्रत्यय होता है)।

तदन्तस्य — I. i. 71

(जिस विशेषण से विधि की जाये, वह विशेषण) विशेषणान्त (एवं स्वरूप) का ग्राहक होता है।

तदभावे — I. ii. 55

(सम्बन्ध को वाचक मानकर यदि संज्ञा हो तो भी) उस सम्बन्ध के हट जाने पर (उस संज्ञा का अदर्शन होना चाहिये, पर वह होता नहीं है)।

तदर्थ... — II. i. 35

देखें — **तदर्थार्थबलिहित० II. i. 35**

तदर्थम् — V. i. 12

(चतुर्थीसमर्थ विकृतिवाची प्रातिपदिक से उपादानकारण अभिधेय हो तो 'हित' अर्थ में यथाविहित प्रत्यय होता है) यदि वह उपादानकारण अपने उत्तरावस्थान्तर विकृति = विकार के लिये हो तो।

तदर्थस्य — II. iii. 58

वि और अव उपसर्ग से युक्त ह्व और पण् के अर्थ वाली (दिव् धातु) के (कर्म कारक में षष्ठी विभक्ति होती है)।

तदर्थार्थबलिहितसुखरक्षितैः — II. i. 35

(चतुर्थ्यन्त सुबन्त) तदर्थ तथा अर्थ, बलि, हित, सुख, रक्षित – इन (समर्थ सुबन्तों) के साथ (विकल्प से समास को प्राप्त होता है और वह तत्पुरुष समास होता है)।

तदर्थे — IV. i. 79

(क्रय्य शब्द का निपातन किया जाता है) उस अर्थ में अर्थात् क्रयार्थ अभिधेय होने पर।

तदर्थे — VI. ii. 43

(चतुर्थन्त पूर्वपद को) चतुर्थ्यन्तार्थ के उत्तरपद रहते (प्रकृतिस्वर होता है)।

तदर्थेषु — VI. ii. 71

(अन्न की आख्यावाले शब्दों को) उस अन्न के लिये पात्रादि, तद्वाची शब्द के उत्तरपद रहते (आद्युदात्त होता है)।

...तदवध्योः — IV. ii. 124

देखें — **जनपदतदवध्योः IV. ii. 124**

...तदवेतेषु — V. i. 133

देखें — **श्लाघात्याकार० V. i. 133**

तदादि — I. iv. 13

(जिस धातु या प्रातिपदिक से प्रत्यय का विधान किया जाये, उस प्रत्यय के परे रहते) उस (धातु या प्रातिपदिक) का आदि वर्ण है आदि जिसका, वह समुदाय (अङ्गसंज्ञक होता है)।

तदाद्याचिख्यासायाम् — II. iv. 21

उपज्ञा और उपक्रम के नञ्कर्मधारयवर्जित आदि = प्रथमकर्ता के कथन की इच्छा होने पर (उपज्ञान्त और उपक्रमान्त तत्पुरुष नपुंसकलिङ्ग में होते हैं)।

...तदोः — VI. i. 128

देखें — **एतत्तदोः VI. i. 128**

तदोः — VII. ii. 106

(त्यदादि अङ्गों के अनन्त्य) तकार तथा दकार के स्थान में (सु विभक्ति परे रहते सकारादेश होता है)।

...तद्धर्म... — III. ii. 134

देखें — **तच्छीलतद्धर्म० III. ii. 134**

...तद्धित... — I. ii. 46

देखें — **कृत्तद्धितसमासाः I. ii. 46**

..तद्धित... — VIII. i. 57

देखें — **चनचिदिव० VIII. i. 57**

तद्धितः — I. i. 37

(जिससे सारी विभक्ति उत्पन्न न हो, ऐसे) तद्धित-प्रत्ययान्त शब्द (की भी अव्ययसंज्ञा होती है)।

तद्धितः — IV. i. 17

(अनुपसर्जन यञन्त प्रातिपदिकों से स्त्रीलिङ्ग में प्राचीन आचार्यों के मत में एक प्रत्यय होता है और वह) तद्धित संज्ञक होता है।

तद्धितलुकि — I. ii. 49

तद्धितप्रत्यय के लुक् होने पर (उपसर्जन स्त्रीप्रत्यय का लुक् होता है)।

तद्धितलुकि — IV. i. 22

(अकारान्त अपरिमाण, बिस्ता, आचित और कम्बल्य अन्त वाले द्विगुसंज्ञक प्रातिपदिकों से) तद्धित के लुक् हो जाने पर (स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय नहीं होता)।

तद्धितस्य — VI. i. 158

तद्धित जो (चित् प्रत्यय, उसको (अन्तोदात्त हो जाता है)।

तद्धितस्य — VI. iii. 38

(वृद्धि का कारण हो जिस तद्धित में, ऐसा) तद्धित (यदि रक्त तथा विकार अर्थ में विहित न हो तो) तदन्त (स्त्री शब्द) को (भी पुंवद्भाव नहीं होता)।

तद्धितस्य — VI. iv. 150

(हल् से उत्तर भसञ्ज्ञक अङ्ग के उपधाभूत) तद्धित के (यकार का भी ईकार परे रहते लोप होता है)।

तद्धिताः — IV. i. 76

(यहां से आगे पञ्चमाध्याय की समाप्ति तक जो भी प्रत्यय कहेंगे, उनकी) तद्धित संज्ञा होती है। (यह अधिकार सूत्र है)।

तद्धिताः — VI. ii. 155

(गुण के प्रतिषेध अर्थ में वर्तमान नञ् से उत्तर संपादि, अर्ह, हित, अलम् अर्थवाले) तद्धित प्रत्ययान्त (उत्तरपद को अन्तोदात्त होता है)।

तद्धितार्थ... — II. i. 50

देखें — तद्धितार्थोत्तरपदसमाहारे II. i. 50

तद्धितार्थोत्तरपदसमाहारे — II. i. 50

तद्धितार्थ का विषय उपस्थित होने पर, उत्तरपद परे रहते तथा समाहार वाच्य होने पर (भी दिशावाची तथा सङ्ख्यावाची सुबन्तों का समानाधिकरणवाची सुबन्तों के साथ विकल्प से समास होता है और वह तत्पुरुष समास होता है)।

तद्धिते — VI. i. 60

(यकारादि) तद्धित के परे रहते (भी शिरस् शब्द को शीर्षन् आदेश हो जाता है)।

तद्धिते — VI. iii. 61

(एक शब्द को) तद्धित परे रहते (तथा उत्तरपद परे रहते ह्रस्व होता है)।

तद्धिते — VI. iv. 144

(भसञ्ज्ञक नकारान्त अङ्ग के टि भाग का लोप होता है); तद्धित प्रत्यय परे रहते।

तद्धिते — VI. iv. 151

(हल् से उत्तर भसञ्ज्ञक अङ्ग के अपत्य-सम्बन्धी यकार का भी लोप होता है, अनाकारादि) तद्धित परे रहते।

तद्धिते — VIII. iii. 101

(ह्रस्व इण् से उत्तर सकार को तकारादि) तद्धित परे रहते (मूर्धन्य आदेश होता है)।

तद्धितेषु — VII. ii. 117

(ञित्, णित्) तद्धित परे रहते (अङ्ग के अचों के आदि अच् को वृद्धि होती है)।

...तद्ध्यः — VI. ii. 162

देखें — इदमेतत्० VI. ii. 162

तद्युक्तात् — V. iii. 77

('नीति' गम्यमान हो तो भी) उस अनुकम्पा से सम्बद्ध प्रातिपदिक तथा तिङन्त से (यथाविहित प्रत्यय होते हैं)।

तद्युक्तात् — V. iv. 36

उस प्रकाशित वाणी से युक्त (कर्म) प्रातिपदिक से (स्वार्थ में अण् प्रत्यय होता है)।

तद्राजस्य — II. iv. 62

तद्राजसंज्ञक प्रत्ययों का (बहुत्व में वर्तमान होने पर लुक् होता है, यदि तद्राजकृत बहुत्व हो तो, स्त्रीलिङ्ग को छोड़कर)।

तद्राजाः — IV. i. 172

(उन अजादि प्रत्ययों की) तद्राज संज्ञा होती है।

तद्राजः — V. iii. 119

(ञ्यादि प्रत्ययों की) तद्राज संज्ञा होती है।

तद्वान् — IV. iv. 125

(उपधान मन्त्र समानाधिकरण प्रथमासमर्थ) मतुबन्त प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में यत् प्रत्यय होता है, यदि (षष्ठ्यर्थ में निर्दिष्ट ईटें ही हों तथा मतुप् का लुक् भी हो जाता है; वेद-विषय में)।

तद्विषयाणि — IV ii. 65

(प्रोक्तप्रत्ययान्त छन्द और ब्राह्मणवाची शब्द) अध्येतृ वेदितृ – प्रत्यय-विषयक होते हैं, (अन्य प्रोक्तप्रत्ययान्त शब्दों का केवल प्रोक्त अर्थ में प्रयोग होता है)।

तद्विषयात् — V. iii. 106

वह अर्थात् इवार्थ विषय है जिसका, ऐसे (समास में वर्तमान) प्रातिपदिक से (भी इवार्थ में छ प्रत्यय होता है)।

तध्वमोः — III. iv. 2

(क्रिया का पौनःपुन्य गम्यमान हो तो धातु से धात्वर्थ–सम्बन्ध होने पर सब कालों में लोट् प्रत्यय हो जाता है तथा उस लोट् के स्थान में नित्य हि और स्व आदेश होते हैं तथा) त, ध्वम् भावी लोट् के स्थान में (विकल्प से हि, स्व आदेश होते हैं)।

...तन... — VII. i. 45

देखें — **तप्तनप्० VII. i. 45**

...तनप्... — VII. i. 45

देखें — **तप्तनप्० VII. i. 45**

तनादि ... — III. i. 79

देखें — **तनादिकृञ्भ्यः III. i. 79**

तनादिकृञ्भ्यः — III. i. 79

तनादिगण की धातुओं तथा डुकृञ् धातु से उत्तर ('उ' प्रत्यय होता है, कर्तृवाची सार्वधातुक परे रहने पर)।

तनादिभ्यः — II. iv. 79

तनादि धातुओं से उत्तर (सिच् का लुक् विकल्प से होता है, 'त' और थास् परे रहते)।

तनिपत्योः — VI. iv. 99

तन् तथा पत् अङ्ग की (उपधा का लोप होता है, वेद-विषय में; अजादि कित्, ङित् प्रत्यय परे रहते)।

...तनिषु — VI. iii. 115

देखें — **नहिवृति० VI. iii. 115**

तनुत्वे — V. iii. 91

(वत्स, उक्षन्, अश्व, ऋषभ—इन प्रातिपदिकों से) 'अल्पता' द्योतित हो रही हो तो (ष्टरच् प्रत्यय होता) है।

तनूकरणे — III. i. 76

तनूकरण अर्थात् छीलने अर्थ में वर्तमान (तक्षू धातु से श्नु प्रत्यय विकल्प से होता है, कर्तृवाची सार्वधातुक परे रहने पर)।

...तनेषु — VI. iii. 16

देखें — **घकालतनेषु VI. iii. 16**

तनोतेः — VI. iv. 17

तन् अङ्ग की (उपधा को झलादि सन् परे रहते विकल्प से दीर्घ होता है)।

तनोतेः — VI. iv. 44

तनु अङ्ग को (विकल्प से यक् परे रहते आकारादेश होता है)।

...तनोत्यादीनाम् — VI. iv. 37

देखें — **अनुदात्तोपदेश० VI. iv. 37**

...तन्ति... — VI. ii. 78

देखें — **गोतन्तियवम् VI. ii. 78**

तन्त्रात् — V. ii. 70

पञ्चमीसमर्थ तन्त्र प्रातिपदिक से ('अचिरापहृत'= थोड़ा काल खड्डी से बाहर निकलने को बीता है अर्थात् तत्काल बुना हुआ अर्थ में कन् प्रत्यय होता है)।

...तन्त्र्योः — V. iv. 159

देखें — **नाडीतन्त्र्योः V. iv. 159**

...तन्द्रा... — III. ii. 158

देखें — **स्पृहिगृहि० III. ii. 158**

तन्नाम्नि — IV. ii. 66

(अस्ति समानाधिकरण वाले प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से सप्तम्यर्थ में यथाविहित प्रत्यय होता है, यदि सप्तम्यर्थ से निर्दिष्ट) उस नाम वाला (देश हो, इतिकरण विवक्षार्थ है)।

तन्नामिकाभ्यः — IV. i. 113

(जिनकी वृद्धसंज्ञा न हो ऐसे नदी तथा मानुषी अर्थवाले) तथा नदी, मानुषी नाम वाले प्रातिपदिकों से (अपत्य अर्थ में अण् प्रत्यय होता है)।

तन्निमित्तस्य — VI. i. 77

यकारादि प्रत्ययनिमित्तक (ही जो धातु का एच्) उसको (यकारादि प्रत्यय के परे रहते वकारान्त अर्थात् अव्, आव् आदेश होते हैं, संहिता के विषय में)।

...तन्वोः — IV. iv. 128

देखें — **मासतन्वोः IV. iv. 128**

तप्... — VII. i. 45

देखें — **तप्तनप्तन० VII. i. 45**

तपः — II. i. 26

(उत् एवं वि उपसर्ग से उत्तर अकर्मक) तप् धातु से (आत्मनेपद होता है)।

तपः — III. i. 65

सन्तापार्थक तप् धातु से उत्तर (च्लि को चिण् आदेश नहीं होता; कर्मकर्त्ता में और अनुताप अर्थ में, त शब्द परे रहते)।

तपः — III. i. 88

(तपकर्मक) 'तप् संतापे' धातु का (ही कर्त्ता कर्मवत् होता है)।

तपःकर्मकस्य — III. i. 88

तपकर्मक (तप् धातु) का (ही कर्त्ता कर्मवत् होता है)।

तपतौ — VIII. iii. 102

(निस् के सकार को) तपति परे रहते (अनासेवन अर्थ में मूर्धन्य आदेश होता है)।

अनासेवन = बार-बार न करना।

तपरः — I. i. 68

त् परे वाला एवं त् से परे वाला (वर्ण अपने कालवाले सवर्णों का तथा अपना भी ग्रहण कराता है, भिन्नकाल वाले सवर्ण का नहीं)।

तपस्... — V. ii. 102

देखें — **तपःसहस्राभ्याम् V. ii. 102**

तपःसहस्राभ्याम् — V. ii. 102

तपस् और सहस्र प्रातिपदिकों से (यथासङ्ख्य करके 'मत्वर्थ' में विनि तथा इनि प्रत्यय होते हैं)।

...तपि... — III. ii. 46

देखें— **भृतवृ० III. ii. 46**

... तपोः — III. ii. 36

देखें — **दृशितपोः III. ii. 36**

...तपोभ्याम् — III. i. 15

देखें — **रोमन्थतपोभ्याम् III. i. 15**

तप्तनप्तनथनाः — VII. i. 45

(त के स्थान में) तप्, तनप्, तन, थन आदेश भी होते हैं, (वेद-विषय में)।

...तप्तात् — V. iv. 81

देखें— **अन्ववतप्तात् V. iv. 81**

...तम्... — III. iv. 101

देखें — **तान्तन्तामः III. iv. 101**

तम् — V. i. 79

द्वितीयासमर्थ (कालवाची प्रातिपदिकों से 'सत्कारपूर्वक व्यापार', 'खरीदा हुआ', 'हो चुका' और 'होने वाला' अर्थों में यथाविहित ठञ् प्रत्यय होता है)।

तमट् — V. ii. 56

(षष्ठीसमर्थ सङ्ख्यावाची विंशति आदि प्रातिपदिकों से पूरण अर्थ में विहित डट् प्रत्यय को विकल्प करके) तमट् आगम होता है।

तमप्... — V. iii. 55

देखें — **तमबिष्ठनौ V. iii. 55**

...तमपौ — I. i. 21

देखें — **तरप्तमपौ I. i. 21**

तमबिष्ठनौ — V. iii. 55

(अत्यन्त प्रकर्ष अर्थ में प्रातिपदिक से) तमप् और इष्ठन् प्रत्यय होते हैं।

...तमस्... — VII. ii. 18

देखें — मन्थमनस्० VII. ii. 18

तमसः — V. iv. 79

(अव, सम् तथा अन्ध शब्दों से उत्तर) तमस्-शब्दान्त प्रातिपदिक से (समासान्त अच् प्रत्यय होता है)।

...तमसः — VI. iii. 3

देखें — ओजःसहोम्भस्० VI. iii. 3

...तमसोः — III. ii. 50

देखें — क्लेशतमसोः III. ii. 50

...तमि... — III. iv. 16

देखें — स्थेण्कृञ्० III. iv. 16

...तमिस्रा... — V. ii. 114

देखें — ज्योत्स्नातमिस्रा० V. ii. 114

...तय... — I. i. 32

देखें — प्रथमचरमतयाल्पार्धकतिपयनेमाः I. i. 32

...तयप्... — IV. i. 15

देखें — टिड्ढाणञ्० IV. i. 15

तयप् — V. ii. 42

(अवयव अर्थ में वर्तमान प्रथमासमर्थ सङ्ख्यावाची प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में) तयप् प्रत्यय होता है।

तयस्य — V. ii. 43

(प्रथमासमर्थ द्वि तथा त्रि प्रातिपदिकों से उत्तर षष्ठ्यर्थ में विहित) तयप् प्रत्यय के स्थान में (विकल्प से अयच् आदेश होता है)।

तयोः — III. iv. 70

(कृत्यसंज्ञक प्रत्यय, क्त और खल् अर्थ वाले प्रत्यय) भाव और कर्म में (ही होते हैं)।

तयोः — V. iii. 20

उन सप्तम्यन्त इदम् और तत् प्रातिपदिकों से (यथासङ्ख्य करके वेदविषय में दा और र्हिल् प्रत्यय होते हैं तथा यथाप्राप्त दानीम् प्रत्यय भी होता है)।

तयोः — VIII. ii. 108

उनके अर्थात् प्लुत के प्रसङ्ग में एच् के उत्तरार्ध को जो इकार, उकार पूर्व सूत्र से विधान कर आये हैं, उन इकार उकार के स्थान में (क्रमशः य् व् आदेश हो जाते हैं; अच् परे रहते, सन्धि के विषय में)।

तरति — IV. iv. 5

(तृतीयासमर्थ प्रातिपदिक से) 'तैरता है' अर्थ में (ठक् प्रत्यय होता है)।

तरप्... — I. i. 21

देखें — तरप्तमपौ I. i. 21

तरप्... — V. iii. 57

देखें — तरबीयसुनौ V. iii. 57

तरप्तमपौ — I. i. 21

तरप् और तमप् प्रत्यय (घसंज्ञक होते हैं)।

तरबीयसुनौ — V. iii. 57

(द्व्यर्थ तथा विभाग करने योग्य शब्द उपपद हों तो प्रातिपदिक से तथा तिङन्त से) तरप् तथा ईयसुन् प्रत्यय होते हैं।

तरित्रतः — VII. iv. 65

तरित्रतः शब्द (वेद-विषय में) निपातन किया जाता है।

तरुतृ — VII. ii. 34

तरुतृ शब्द (वेद-विषय में) इडभावयुक्त निपातित है।

तरूतृ — VII. ii. 34

तरूतृ शब्द (वेदविषय में) इडभावयुक्त निपातित है।

तल् — IV. ii. 42

(षष्ठीसमर्थ ग्राम, जन, बन्धु प्रातिपदिकों से समूह अर्थ में) तल् प्रत्यय होता है।

तल् — V. iv. 27

(देव प्रातिपदिक से स्वार्थ में) तल् प्रत्यय होता है।

तलोपः — IV. iii. 22

(हेमन्त प्रातिपदिक से वैदिक तथा लौकिक प्रयोग में अण् तथा ठञ् प्रत्यय होते हैं तथा उस अण् के परे रहने पर हेमन्त शब्द के) तकार का लोप (भी) होता है।

...तलौ— V. i. 118

देखें — त्वतलौ V. i. 118

तल्लक्षणः — I. ii. 65

(यदि) वृद्धयुवप्रत्ययनिमित्तक (ही भेद हो तो वृद्ध = गोत्र प्रत्ययान्त शब्द युव प्रत्ययान्त के साथ शेष रह जाता है, युवप्रत्ययान्त का लोप हो जाता है)।

तव... — VII. ii. 96

देखें — तवममौ VII. ii. 96

तवक... — IV. iii. 3

देखें — तवकममकौ IV. iii. 3

तवकममकौ — IV. iii. 3

(एक अर्थ को कहने वाले युष्मद्, अस्मद् शब्दों के स्थान में यथासङ्ख्य) तवक, ममक आदेश होते हैं, (उस खञ् तथा अण् प्रत्यय के परे रहते)।

तवममौ — VII. ii. 96

(युष्मद्, अस्मद् अङ्ग के मपर्यन्त भाग को क्रमशः) तव तथा मम आदेश होते हैं, (ङस् विभक्ति परे रहते)।

...तवेङ्... — III. iv. 9

देखें — सेसेनसे० III. iv. 9

...तवेनः — III. iv. 9

देखें — सेसेनसे० III. iv. 9

तवै... — III. iv. 14

देखें — तवैकेन्केन्यत्वनः III. iv. 14

तवै — VI. ii. 51

तवै प्रत्यय को (अन्त उदात्त भी होता है तथा अव्यवहित पूर्वपद गति को भी प्रकृतिस्वर एक साथ होता है)।

तवैकेन्केन्यत्वनः — III. iv. 14

(कृत्यार्थ में भाव कर्म में वेदविषय में धातु से) तवै, केन्, केन्य, त्वन्— ये चार प्रत्यय होते हैं।

...तव्य... — II. ii. 11

देखें — पूरणगुणसुहितार्थ० II. ii. 11

...तव्य... — III. i. 96

देखें — तव्यत्तव्यानीयरः III. i. 96

तव्यत्... — III. i. 96

देखें — तव्यत्तव्यानीयरः III. i. 96

तव्यत्तव्यानीयरः — III. i. 96

(धातु से) तव्यत्, तव्य और अनीयर् प्रत्यय होते हैं।

त... — III.iv. 101

देखें — तस्थस्थमिपाम् III. iv. 101

...तस्... — III. iv. 78

देखें — तिप्तस्झि० III. iv. 78

तसिः — IV. iii. 113

(तृतीयासमर्थ प्रातिपदिक से एकदिक् विषय में) तसिल् प्रत्यय (भी) होता है।

तसिः— V. iv. 44

(प्रति शब्द के योग में विहित पञ्चमी विभक्ति अन्त वाले प्रातिपदिक से विकल्प से) तसि प्रत्यय होता है।

तसिल् — V. iii. 7

(पञ्चम्यन्त किम्, सर्वनाम तथा बहु शब्दों से) तसिल् प्रत्यय होता है।

तसिलादिषु — VI. iii. 34

तसिलादि प्रत्ययों (से लेकर कृत्वसुच्-पर्यन्त कहे गये जो प्रत्यय), उनके परे रहते (ऊङ्वर्जित भाषितपुंस्क स्त्रीशब्द को पुंवत् हो जाता है)।

तसेः — V. iii. 8

(किम्, सर्वनाम तथा बहु से उत्तर) तसि के स्थान में (भी तसिल् आदेश होता है)।

... तसोः — II. iv. 33

देखें— त्रतसोः II. iv. 33

तसौ — I. iv. 19

तकारान्त तथा सकारान्त शब्द (भसंज्ञक होते हैं, मतुबर्थक प्रत्ययों के परे रहते)।

...तसौ — II. iv. 33

देखें — त्रतसौ II. iv. 33

तस्थस्थमिपाम् — III. iv. 101

(ङित्-लकार-सम्बन्धी) तस्, थस्, थ और मिप् के स्थान में (यथासंख्य ताम्, तम्, त और अम् आदेश होते हैं)।

तस्प्रत्यये — III. iv. 61

तस्प्रत्ययान्त (स्वाङ्गवाची) शब्द उपपद हो तो (कृ, भू धातुओं से क्त्वा, णमुल् प्रत्यय होते हैं)।

तस्मात् — I. i. 66

पञ्चमी विभक्ति से (निर्दिष्ट जो शब्द, उससे उत्तर को कार्य होता है)।

तस्मात् — VI. i. 99

उस 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' सूत्र से दीर्घ किये हुये पूर्वसवर्ण दीर्घ से उत्तर (शस् के अवयव सकार को नकार आदेश होता है, पुँल्लिङ्ग में)।

तस्मात् — VI. iii. 73

उस लुप्त (नञ्) वाले नकार से उत्तर (नुट् का आगम होता है, अजादि शब्द के उत्तरपद रहते)।

तस्मात् — VII. iv. 71

अभ्यास के दीर्घ हुये आकार से उत्तर (दो हल् वाले अङ्ग को नुट् आगम होता है)।

तस्मिन् — I. i. 65

सप्तमी विभक्ति (से निर्देश किया हुआ जो शब्द, उससे अव्यवहित पूर्व को ही कार्य होता है)।

तस्मिन् — IV. iii. 2

उस खञ् (तथा अण् प्रत्यय) के परे रहते (युष्मद्, अस्मद् के स्थान में यथासङ्ख्य करके युष्माक, अस्माक आदेश होते हैं)।

तस्मै — V. i. 5

चतुर्थीसमर्थ प्रातिपदिक से ('हित' अर्थ में यथाविहित प्रत्यय होता है)।

तस्मै — V. i. 100

चतुर्थीसमर्थ (सन्तापादि) प्रातिपादिकों से ('शक्त है' अर्थ में यथाविहित ठञ् प्रत्यय होता है)।

तस्य — I. ii. 32

उस स्वरित अच् के (आदि की आधी मात्रा उदात्त और शेष अनुदात्त होती है)।

तस्य — I. iii. 9

उस इत्सञ्ज्ञक वर्ण का (लोप होता है)।

तस्य — IV. i. 92

षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिकों से (अपत्य अर्थ को कहना हो तो यथाविहित प्रत्यय होता है)।

तस्य — IV. ii. 36

(समर्थों में) जो (प्रथम) षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिक, उससे (समूह अर्थ को कहना हो तो यथाविहित प्रत्यय होता है)।

तस्य — IV. ii. 68

षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिकों से (निवास अर्थ में देश का नाम गम्यमान होने पर यथाविहित प्रत्यय होता है)।

तस्य — IV. iii. 66

षष्ठीसमर्थ (व्याख्यान किये जाने योग्य) जो प्रातिपदिक, उनसे (व्याख्यान अभिधेय होने पर तथा सप्तमीसमर्थ व्याख्यातव्यनामवाची शब्दों से भी भवार्थ में यथाविहित प्रत्यय होते हैं)।

तस्य— IV. iii. 119

षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिक से ('यह' अर्थ में यथाविहित प्रत्यय होता है)।

तस्य — IV. iii. 131

षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिक से (विकार अर्थ में यथाविहित प्रत्यय होता है)।

तस्य — IV. iv. 47

षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिक से (धर्म्य अर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

तस्य — V. i. 37

षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिकों से (कारण अर्थ में यथाविहित प्रत्यय होते हैं, यदि वह कारण संयोग वा उत्पात हो तो)।

तस्य — V. i. 41

षष्ठीसमर्थ (सर्वभूमि तथा पृथिवी प्रातिपदिकों से 'स्वामी' अर्थ में यथासङ्ख्य अण् तथा अञ् प्रत्यय होते हैं)।

तस्य — V. i. 44

षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिकों से ('खेत' अर्थ वाच्य होने पर यथाविहित प्रत्यय होते हैं)।

तस्य — V. i. 94

षष्ठीसमर्थ (यज्ञ की आख्या वाले) प्रातिपदिकों से (भी 'दक्षिणा' अर्थ में यथाविहित ठञ् प्रत्यय होता है)।

तस्य — V. i. 115

(सप्तमीसमर्थ प्रातिपदिक से तथा) षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिक से ('समान' अर्थ में वति प्रत्यय होता है)।

तस्य — V. i. 118

षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिक से ('भाव' अर्थ में त्व और तल् प्रत्यय होते हैं)।

तस्य — V. ii. 24

षष्ठीसमर्थ (पील्वादि तथा कर्णादि) प्रातिपदिकों से (यथासङ्ख्य करके 'पाक' तथा 'मूल' अर्थ अभिधेय हो तो कुणप् तथा जाहच् प्रत्यय होते हैं)।

तस्य — V. ii. 48

षष्ठीसमर्थ (सङ्ख्यावाची प्रातिपदिकों से 'पूरण' अर्थ में डट् प्रत्यय होता है)।

तस्य — VII. i. 44

(लोट् मध्यम पुरुष बहुवचन) त के स्थान में (तात् आदेश हो जाता है, वेदविषय में)।

तस्य — VIII. i. 2

उस द्वित्व किये हुये शब्द के (पर वाले शब्द की आम्रेडित सञ्ज्ञा होती है)।

...ताच्छील्य... — III. ii. 20

देखें — हेतुताच्छील्य० III. ii. 20

ताच्छील्यवयोवचनशक्तिषु — III. ii. 129

ताच्छील्य = फल की आकांक्षा किये विना स्वभाव से ही उस क्रिया में प्रवृत्त होना, वयोवचन = अवस्था को कहना तथा शक्ति = सामर्थ्य—इन अर्थों के द्योतित होने पर (धातु से वर्तमान काल में चानश् प्रत्यय होता है)।

ताच्छील्ये — III. ii. 11

तत्स्वभावता गम्यमान होने पर (आङ्पूर्वक हृ धातु से कर्म उपपद रहते अच् प्रत्यय होता है)।

ताच्छील्ये — III. ii. 78

तत्स्वभावता गम्यमान होने पर (अजातिवाची सुबन्त उपपद रहते सब धातुओं से 'णिनि' प्रत्यय होता है)।

ताच्छील्ये — VI. iv. 177

('कार्म' इस शब्द में) ताच्छील्यार्थक = तत्स्वभावार्थक (ण) परे रहते (टिलोप निपातन किया जाता है)।

...ताड्यौ — III. ii. 55

देखें — पाणिघताड्यौ III. ii. 55

तात् — VII. i. 44

(लोट् मध्यम पुरुष बहुवचन 'त' के स्थान में) तात् आदेश होता है, (वेद-विषय में)।

तातङ् — VII. i. 35

(आशीर्वाद-विषय में तु और हि के स्थान में) तातङ् आदेश होता है, (विकल्प करके)।

तातिल् — IV. iv. 141

(सर्व और देव प्रातिपदिकों से वेद-विषय में स्वार्थ में) तातिल् प्रत्यय होता है।

...तातिलौ — V. iv. 41

देखें — तिल्तातिलौ V. iv. 41

तादर्थ्ये — V. iv. 24

(देवता शब्द अन्तवाले प्रातिपदिक से) 'उसके लिये यह' अर्थ में (यत् प्रत्यय होता है)।

तादौ — VI. ii. 50

(तु शब्द को छोड़कर) तकारादि (एवं न इत्सञ्ज्ञक कृत्) के परे रहते (भी अव्यवहित पूर्वपद गति को प्रकृतिस्वर होता है)।

तादौ — VIII. iii. 101

(ह्रस्व इण् से उत्तर सकार को) तकारादि तद्धित (परे रहते (मूर्धन्य आदेश होता है)।

तानि — I. iv. 100

वे तिङों के तीन तीन (एक-एक करके क्रम से एकवचन, द्विवचन और बहुवचनसंज्ञक होते हैं)।

तान्तन्तामः — III. iv. 101

(ङित्-लकार-सम्बन्धी तस्, थस्, थ और मिप् के स्थान में क्रमशः) ताम्, तम्, त और अम् आदेश होते हैं।

...तान्तात् — VII. iii. 51

देखें — इसुसुक्तान्तात् VII. iii. 51

तापेः — III. ii. 39

णिजन्त तप् धातु से (द्विषत् और पर कर्म उपपद रहते खच् प्रत्यय होता है)।

ताभ्याम् — III. iv. 75

(उणादि प्रत्यय) सम्प्रदान तथा अपादान कारकों से (अन्यत्र कर्मादि कारकों से भी होते हैं)।

ताभ्याम् — VII. iii. 3

(पदान्त यकार तथा वकार से उत्तर ञित्, णित्, कित् तद्धित परे रहते अङ्ग के अचों में आदि अच् को वृद्धि नहीं होती, किन्तु) उन यकार वकार से (पूर्व तो क्रमशः ऐच् = ऐ, औ आगम होता है)।

ताम्... — III. iv. 101

देखें — तान्तन्ताम: III. iv. 101

... तायनेषु — I. iii. 38

देखें— वृत्तिसर्गतायनेषु I. iii. 38

...तायि...— III. i. 61

देखें — दीपजन० III. i. 61

तारकादिभ्यः — V. ii. 36

(प्रथमासमर्थ संजात समानाधिकरण वाले) तारकादि प्रातिपदिकों से (षष्ठ्यर्थ में इतच् प्रत्यय होता है)।

तार्य... — IV. iv. 91

देखें — तार्यतुल्य० IV. iv. 91

तार्यतुल्यप्राप्यवध्यानाम्यसमसमितसम्मितेषु— IV. iv. 91

(तृतीयासमर्थ नौ, वयस्, धर्म, विष, मूल, मूल-सीता, तुला—इन आठ प्रातिपदिकों से यथासंख्य करके) तार्य, तुल्य, प्राप्य, वध्य, आनाम्य, सम, समित, सम्मित—इन आठ अर्थों में (यत् प्रत्यय होता है)।

तालादिभ्यः — IV. iii. 149

(षष्ठीसमर्थ) तालादि प्रातिपदिकों से (विकार और अवयव अर्थों में अण् प्रत्यय होता है)।

तावतिथम् — V. ii. 77

(ग्रहण क्रिया के समानाधिकरणवाची) पूरणप्रत्ययान्त प्रातिपदिक से (स्वार्थ में कन् प्रत्यय होता है तथा पूरण प्रत्यय का विकल्प से लुक् भी होता है)।

तास्... — VII. iv. 50

देखें — तासस्त्योः VII. iv. 50

तासस्त्योः — VII. iv. 50

तासु तथा अस् धातु के (सकार का सकारादि आर्धधातुक परे रहते लोप होता है)।

तासि... — VI. i. 180

देखें — तास्यनुदात्तेत्० VI. i. 180

तासि — VII. ii. 66

('कृपू सामर्थ्ये' धातु से उत्तर) तास् (तथा सकारादि आर्धधातुक को इट् आगम नहीं होता, परस्मैपद परे रहते)।

...तासिषु — VI. iv. 62

देखें — स्यसिच्० VI. iv. 62

...तासी— III. i. 33

देखें — स्यतासी III. i. 33

तास्यनुदात्तेन्ङिदुपदेशात् — VI. i. 180

तासि प्रत्यय, अनुदात्तेत् धातु, ङित् धातु तथा उपदेश में जो अवर्णान्त—इनसे उत्तर (लकार के स्थान में जो सार्वधातुक प्रत्यय, वे अनुदात्त होते हैं, ह्नुङ् तथा इङ् धातु को छोड़कर)।

तास्वत् — VII. ii. 61

(उपदेश में जो अजन्त धातु, तास् के परे रहते नित्य अनिट्, उससे उत्तर) तास् के समान ही (थल् को इट् आगम नहीं होता)।

ति — II. iv. 36

(ल्यप् तथा) तकारादि (कित् आर्धधातुक) परे रहते (अद् को जग्ध् आदेश होता है)।

ति... — III. iv. 107

देखें — तिथोः III. iv. 107

...ति... — V. ii. 138

देखें — बभयुस्० V. ii. 138

...ति... — VI. i. 66

देखें — सुतिसि VI. i. 66

ति — VI. iii. 123

(दा के स्थान में हुआ) जो तकारादि आदेश, उसके परे रहते (इगन्त उपसर्ग को दीर्घ होता है)।

ति — VI. iv. 142

(भसञ्ज्ञक विंशति अङ्ग के) ति को (डित् प्रत्यय परे रहते लोप होता है)।

ति... — VII. ii. 9

देखें — तितुत्र० VII. ii. 9

ति — VII. ii. 48

(इषु, षह, लुभ, रुष, रिष्—इन धातुओं से उत्तर) तकारादि (आर्धधातुक) को (विकल्प से इट् आगम होता है)।

ति... — VII. ii. 104

देखें — तिहोः VII. ii. 104

ति — VII. iv. 40

(दो, षो, मा तथा स्था अङ्गों को) तकारादि (कित्) प्रत्यय के परे रहते (इकारादेश होता है)।

ति — VII. iv. 89

तकारादि प्रत्यय परे रहते (भी चर तथा फल के अभ्यासोत्तरवर्त्ती अकार के स्थान में उकारादेश होता है)।

तिः — IV. i. 77

(युवन् प्रातिपदिक से स्त्रीलिङ्ग में) ति प्रत्यय होता है (और वह तद्धितसंज्ञक होता है)।

तिः — V. ii. 25

(षष्ठीसमर्थ पक्ष प्रातिपदिक से 'मूल' वाच्य हो तो) ति प्रत्यय होता है।

तिककितवादिभ्यः — II. iv. 68

तिकादियों से तथा कितवादियों से उत्तर (द्वन्द्व-समास में गोत्र प्रत्यय का लुक् होता है, बहुत्व की विवक्षा होने पर)।

तिकन् — V. iv. 39

(मृद् प्रातिपदिक से स्वार्थ में) तिकन् प्रत्यय होता है।

तिकादिभ्यः — IV. i. 154

तिकादि प्रातिपदिकों से (अपत्य अर्थ में फिञ् प्रत्यय होता है)।

तिङ्... — III. iv. 113

देखें — तिङ्शित् III. iv. 113

...तिङ्... — V. iv. 11

देखें — किमेत्तिङ० V. iv. 11

तिङ् — VIII. i. 28

(अतिङ् पद से उत्तर) तिङ् पद को (अनुदात्त होता है)।

तिङ् — VIII. i. 68

(पूजनवाचियों से उत्तर गतिसहित तिङन्त को तथा गति-भिन्न) तिङन्त को (भी अनुदात्त होता है)।

तिङ् — VIII. ii. 96

(अङ्ग शब्द से युक्त आकांक्षा वाले) तिङन्त को (प्लुत होता है)।

तिङ् — VIII. ii. 104

(क्षिया, आशीः तथा प्रैष गम्यमान हो तो साकाङ्क्षा) तिङन्त (की टि को स्वरित प्लुत होता है)।

तिङः — I. iv. 100

तिङ् प्रत्ययों के (तीन-तीन के समूह क्रम से प्रथम, मध्यम और उत्तमसंज्ञक होते हैं)।

तिङः — V. iii. 56

('अत्यन्त प्रकर्ष' अर्थ में) तिङन्त से (भी तमप् प्रत्यय होता है)।

तिङः — VI. iii. 134

(दो अच् वाले) तिङन्त के (आकार के स्थान में ऋचा-विषय में दीर्घ होता है, संहिता में)।

तिङः — VIII. i. 27

तिङन्त पद से उत्तर (निन्दा तथा पौनःपुन्य अर्थ में वर्त-मान गोत्रादिगण-पठित पदों को अनुदात्त होता है)।

...तिङन्तम् — I. iv. 14

देखें — सुप्तिङन्तम् I. iv. 14

तिङि — VII. iii. 88

(भू तथा षूङ् अङ्ग को) तिङ् (पित् सार्वधातुक) परे रहते (गुण नहीं होता)।

तिङि — VIII. i. 71

(उदात्तवान्) तिङन्त के परे रहते (भी गतिसञ्ज्ञक को अनुदात्त होता है)।

तिङ्शित् — III. iv. 113

(धातु से विहित) तिङ् तथा शित् प्रत्ययों की (सार्वधा-तुक संज्ञा होती है)।

...तिज्... — III. i. 5

देखें — **गुप्तिज्किद्भ्यः III. i. 5**

तित् — VI. i. 179

तकार इत्सञ्ज्ञक है जिसका, उसको (स्वरित होता है)।

तितिक्षायाम् — I. ii. 20

तितिक्षा = क्षमा करने अर्थ में वर्तमान (मृष् धातु से परे निष्ठा प्रत्यय कित् नहीं होता है)।

तितुत्रतथसिसुसरकसेषु — VII. ii. 9

(कृत्सञ्ज्ञक) ति, तु, त्र, त, थ, सि, सु, सर, क, स—इन प्रत्ययों के परे रहते (भी इट् आगम नहीं होता)।

तित्तिरि... — IV. iii. 102

देखें — **तित्तिरिवरतन्तु० IV. iii. 102**

तित्तिरिवरतन्तुखण्डिकोखात् — IV. iii. 102

तित्तिरि, वरतन्तु, खण्डिका, उखा प्रातिपदिकों से (छन्दो-विषयक प्रोक्त अर्थ में छण् प्रत्यय होता है)।

तित्याज — VI. i. 35

(वेदविषय में) तित्याज शब्द का निपातन किया जाता है।

तिथुक् — V. ii. 52

(षष्ठीसमर्थ बहु, पूग, गण, सङ्घ —इनको 'पूरण' अर्थ में विहित डट् प्रत्यय के परे रहते) तिथुक् आगम होता है।

तिथोः — III. iv. 107

(लिङ् - सम्बन्धी) तकार और थकार को (सुट् का आगम होता है)।

तिप्... — III. iv. 78

देखें — **तिप्तस्झि० III. iv. 78**

तिपि — VIII. ii. 73

(अस् को छोड़कर जो सकारान्त पद, उसको) तिप् परे रहते (दकारादेश होता है)।

तिप्तस्झिसिप्थस्थमिब्वस्मस्तातांझथासाथाम्ध्वमिड्वहि-महिङ् — III. iv. 78

(लकार = लट्, लिट् आदि के स्थान में) तिप्, तस्, झि, सिप्, थस्, थ, मिप्, वस्, मस्, त, आताम्, झ, थास्, आथाम्, ध्वम्, इड्, वहि, महिङ् - (ये १८ प्रत्यय होते हैं)।

तिरः — I. iv. 70

(व्यवधान अर्थ में) तिरः शब्द (क्रिया के योग में गति और निपातसंज्ञक होता है।)

तिरसः — VI. iii. 93

तिरस् को (तिरि आदेश होता है, व-प्रत्ययान्त अञ्चु धातु के उत्तरपद रहते, यदि अञ्चु का लोप न हुआ हो तो)।

तिरसः — VIII. iii. 42

तिरस् के (विसर्जनीय को विकल्प करके सकारादेश होता है; कवर्ग, पवर्ग परे रहते)।

तिरि — VI. iii. 93

(तिरस् को) तिरि आदेश होता है (व-प्रत्यययान्त अञ्चु धातु के उत्तरपद रहते, यदि अञ्चु का लोप न हुआ हो तो)।

तिर्यचि — III. iv. 60

तिर्यक् शब्द उपपद रहते (अपवर्ग गम्यमान होने पर कृञ् धातु से क्त्वा और णमुल् प्रत्यय होते हैं)।

तिल्... — V. iv. 41

देखें — **तिल्तातिलौ V. iv. 41**

तिल... — IV. iii. 146

देखें — **तिलयवाभ्याम् IV. iii. 146**

...तिल... — V. i. 7

देखें — **खलयवमाष० V. i. 7**

तिल... — V. ii. 4

देखें — **तिलमाषो० V. ii. 4**

तिलमाषोमाभङ्गाणुभ्यः — V. ii. 4

(षष्ठीसमर्थ धान्यविशेषवाची) तिल, माष, उमा, भङ्गा और अणु प्रातिपदिकों से ('उत्पत्तिस्थान' अभिधेय हो तो विकल्प करके यत् प्रत्यय होता है, यदि वह उत्पत्तिस्थान खेत हो तो)।

तिलयवाभ्याम् — IV. iii. 146

(षष्ठीसमर्थ) तिल, यव प्रातिपदिकों से (संज्ञा गम्यमान न हो तो विकार और अवयव अर्थों में मयट् प्रत्यय होता है)।

...तिलस्य — VI. iii. 70

देखें — **श्येनतिलस्य VI. iii. 70**

तिल्तातिलौ — V. iv. 41

('प्रशंसाविशिष्ट' अर्थ में वर्त्तमान वृक तथा ज्येष्ठ प्रातिपदिकों से यथासङ्ख्य करके) तिल् तथा तातिल् प्रत्यय (भी) होते हैं, (वेदविषय में)।

...तिष्ठ... — VII. iii. 78

देखें — **पिबजिघ्र० VII. iii. 78**

तिष्ठति — IV. iv. 36

(द्वितीयासमर्थ परिपन्थ प्रातिपदिक से) 'बैठता है' (तथा 'मारता है' अर्थों में ठक् प्रत्यय होता है)।

तिष्ठतेः — VII. iv. 5

'ष्ठा' अङ्ग की (उपधा को चङ्परक णि परे रहते इकारादेश होता है)।

तिष्ठद्गुप्रभृतीनि II. i. 16

तिष्ठद्गु इत्यादि समुदाय रूप शब्द (भी निपातन से अव्ययीभावसञ्ज्ञक होते हैं)।

तिष्य... — I. ii. 73

देखें — **तिष्यपुनर्वस्वोः I. ii. 73**

...तिष्य... — IV. iii. 34

देखें — **श्रविष्ठाफल्गुन्यनु० IV. iii. 34.**

...तिष्य... — VI. iv. 149

देखें — **सूर्यतिष्या० VI. iv. 149**

तिष्यपुनर्वस्वोः — I. ii. 63

तिष्य और पुनर्वसु शब्दों के (नक्षत्रविषयक द्वन्द्वसमास में बहुवचन के स्थान में नित्य ही द्विवचन हो जाता है)।

तिसृ... — VI. iv. 4

देखें — **तिसृचतसृ VI. iv. 4**

तिसृ... — VII. ii. 99

देखें — **तिसृचतसृ VII. ii. 99**

तिसृचतसृ — VI. iv. 4

तिसृ, चतसृ अङ्ग को (नाम् परे रहते दीर्घ नहीं होता है)।

तिसृचतसृ — VII. ii. 99

(त्रि तथा चतुर् अङ्गों को स्त्रीलिङ्ग में क्रमशः) तिसृ, चतसृ आदेश होते हैं, (विभक्ति परे रहते)।

तिसृभ्यः — VI. i. 160

तिसृ शब्द से उत्तर (जस् को अन्तोदात्त होता है)।

तिहोः — VII. ii. 104

तकारादि तथा हकारादि विभक्तियों के परे रहते (किम् को कु आदेश होता है)।

... तीक्ष्ण... — VI. ii. 161

देखें— **तृन्नन० VI. ii. 161**

तीयः— V. ii. 54

(षष्ठीसमर्थ द्वि प्रातिपदिक से 'पूरण' अर्थ में) तीय प्रत्यय होता है।

तीयात्— V. iii. 48

('भाग' अर्थ में वर्त्तमान पूरणार्थ) तीयप्रत्ययान्त प्रातिपदिकों से (स्वार्थ में अन् प्रत्यय होता है)।

तीर... — IV. ii. 105

देखें — **तीररूप्योत्तर० IV. ii. 105**

...तीर... — VI. ii. 121

देखें — **कूलतीर० VI. ii. 121**

तीररूप्योत्तरपदात् — IV. ii. 105

तीर तथा रूप्य उत्तरपदवाले प्रातिपदिकों से (यथासङ्ख्य करके शैषिक अञ् तथा ञ प्रत्यय होते हैं)।

तीर्थे — VI. iii. 86

तीर्थ शब्द उत्तरपद हो तो (य प्रत्यय परे रहते समान शब्द को स आदेश होता है)।

तु— I. ii. 37

(सुब्रह्मण्या नाम वाले निगद में एकश्रुति नहीं होती, किन्तु उस निगद में जो स्वरित, उसको उदात्त) तो (हो जाता है)।

तु... — I. iii. 4

देखें — **तुस्माः I. iii. 4**

तु — IV. i. 163

(पौत्र से परवर्त्ती जो अपत्य, उसकी पिता इत्यादि के जीवित रहते युवा संज्ञा) ही (होती है)।

...तु... — V. ii. 138

देखें — **बभयुस्० V. ii. 138**

तु — V. iii. 68

('किञ्चित् न्यून' अर्थ में वर्त्तमान सुबन्त से विकल्प से बहुच् प्रत्यय होता है और वह सुबन्त से पूर्व में) ही (होता है)।

तु — VI. i. 96

(आम्रेडितसञ्ज्ञक जो अव्यक्तानुकरण का अत् शब्द, उसे इति परे रहते पररूप एकादेश नहीं होता) किन्तु (जो उस आम्रेडित का अन्त्य तकार, उसको विकल्प से पररूप एकादेश होता है, संहिता के विषय में)।

तु... — VI. iii. 132

देखें — **तुनुघम० VI. iii. 132**

तु... — VII. i. 35

देखें — **तुह्योः VII. i. 35**

...तु... — VII. ii. 9

देखें — **तितुत्र० VII. ii. 9**

तु — VII. iii. 3

(पदान्त यकार तथा वकार से उत्तर ञित्, णित्, कित्, तद्धित परे रहते अङ्ग के अचों में आदि अच् को वृद्धि नहीं होती, किन्तु उन यकार, वकार से पूर्व) तो (क्रमशः ऐच्–ऐ, औ आगम होता है)।

तु — VII. iii. 26

(अर्ध शब्द से उत्तर परिमाणवाची उत्तरपद को अचों में आदि अच् को वृद्धि होती है, पूर्वपद को) तो (विकल्प से होती है; ञित्, णित् तथा कित् तद्धित के परे रहते)।

तु... — VII. iii. 95

देखें — **तुरुस्तु० VII. iii. 95**

तु... — VIII. i. 39

देखें — **तुपश्यपश्यताहैः VIII. i. 39**

तु — VIII. iii. 2

(यहाँ से आगे जिसको रु विधान करेंगे, उससे पूर्व के वर्ण को) तो (विकल्प से अनुनासिक आदेश होता है, ऐसा अधिकार इस रुत्व-विधान के प्रकरण में समझना चाहिये)।

तुः — V. iii. 59

(वेदविषय में) तृन्, तृच् अन्तवाले प्रातिपदिकों से (अजादि अर्थात् इष्ठन्, इमनिच् तथा ईयसुन् प्रत्यय होते हैं)।

तुः — VI. iv. 154

तृ का (लोप होता है; इष्ठन्, इमनिच् तथा ईयसुन् परे रहते)।

तुक् — VI. i. 69

(ह्रस्वान्त धातु को णित् तथा कृत् प्रत्यय के परे रहते) तुक् का आगम होता है।

तुक् — VIII. iii. 31

(पदान्त नकार को शकार परे रहते विकल्प से) तुक् आगम होता है।

...तुकोः — VI. i. 83

देखें — **षत्वतुकोः VI. i. 83**

तुग्रात् — IV. iv. 115

(सप्तमीसमर्थ) तुग्र शब्द से (वेद-विषयक भवार्थ में घन् प्रत्यय होता है)।

...तुग्विधिषु — VIII. ii. 2

देखें — **सुप्स्वर० VIII. ii. 2**

तुजादीनाम् — VI. i. 7

तुज् के प्रकार वाली धातुओं के (अभ्यास को दीर्घ होता है)।

तुट् — IV. iii. 15

(कालविशेषवाची श्वस् प्रातिपदिक से विकल्प से ठञ् प्रत्यय होता है, तथा उस प्रत्यय को) तुट् का आगम भी होता है।

तुट् — IV. iii. 23

(कालवाची सायं, चिरं, प्राह्ने, प्रगे तथा अव्यय प्रातिपदिकों से ट्यु तथा ट्युल् प्रत्यय होते हैं तथा इन प्रत्ययों को) तुट् आगम (भी) होता है।

...तुद... — III. ii. 182

देखें — **दाम्नी० III. ii. 182**

तुदः — III. ii. 35

'तुद' धातु से (विधु और अरुस् कर्म उपपद रहते 'खश' प्रत्यय होता है)।

तुदादिभ्यः — III. i. 77

तुदादि धातुओं से ('श' प्रत्यय होता है, कर्तृवाची सार्व-धातुक परे रहने पर)।

तुनुघमक्षुतङ्कुत्रोरुष्याणाम् — VI. iii. 132

तु, नु, घ, मक्षु, तङ्, कु, त्र, उरुष्य — इन शब्दों को (ऋचा-विषय में दीर्घ हो जाता है)।

तुन्द... — III. ii. 5

देखें — **तुन्दशोकयोः III. ii. 5**

तुन्दशोकयोः — III. ii. 5

तुन्द तथा शोक (कर्म) के उपपद रहते (यथासंङ्ख्य करके परिपूर्वक मृज तथा अपपूर्वक नुद् धातु से क प्रत्यय होता है)।

तुन्दादिभ्यः — V. ii. 117

तुन्दादि प्रातिपदिकों से (मत्वर्थ में इलच् तथा इनि और ठन् प्रत्यय होते हैं)।

तुन्दि...— V. ii. 139

देखें — **तुन्दिबलि० V. ii. 139**

तुन्दिबलिवटेः — V. ii. 139

तुन्दि, बलि तथा वटि प्रातिपदिकों से (मत्वर्थ में भ प्रत्यय होता है)।

...तुपरम् — VIII. i. 56

देखें — **यद्धितुपरम् VIII. i. 56**

तुपश्यपश्यताहैः — VIII. i. 39

तु, पश्य, पश्यत, अह — इनसे युक्त (तिङन्त को पूजा-विषय में अनुदात्त नहीं होता)।

तुभ्य... — VII. ii. 95

देखें — **तुभ्यमह्यौ VII. ii. 95**

तुभ्यमह्यौ — VII. ii. 95

(युष्मद्, अस्मद् अङ्ग के मपर्यन्त भाग को क्रमशः) तुभ्य, मह्य आदेश होते हैं (ङे विभक्ति के परे रहते)।

तुमर्थात् — II. iii. 15

तुमुन् के समानार्थक (भाववाचक प्रत्ययान्त से भी चतुर्थी विभक्ति होती है)।

तुमर्थे — III. iv. 9

(वेदविषय में) तुमर्थ में (धातुसे से, सेन्, असे, असेन्, कसे, कसेन्, अध्यै, अध्यैन्, कध्यै, कध्यैन्, शध्यै, शध्यैन्, तवै, तवेङ्, तथा तवेन् प्रत्यय होते हैं)।

तुमुन्... — III. iii. 10

देखें — **तुमुन्ण्वुलौ III. iii. 10**

तुमुन् — III. iii. 158

(समान है कर्ता जिसका, ऐसी इच्छार्थक धातुओं के उपपद रहते धातु से) तुमुन् प्रत्यय होता है।

तुमुन् — III. iii. 167

(काल, समय, वेला शब्द उपपद रहते धातु से) तुमुन् प्रत्यय होता है।

तुमुन्ण्वुलौ — III. iii. 10

(क्रियार्थ क्रिया उपपद में हो तो धातु से भविष्यत्काल में) तुमुन् तथा ण्वुल् प्रत्यय होते हैं।

...तुरायण... — V. i. 72

देखें — **पारायणतुरायण० V. i. 72**

तुरुस्तुशम्यमः — VII. iii. 95

तु, रु, ष्टुञ्, शम् तथा अम् धातुओं से उत्तर (हलादि सार्वधातुक को विकल्प से ईट् का आगम होता है)।

...तुर्याणि — II. ii. 3

देखें — **द्वितीयतृतीयचतुर्थ० II. ii. 3**

...तुलाभ्यः — IV. iv. 91

देखें — **नौवयोधर्म० IV. iv. 91**

...तुल्य... — IV. iv. 91

देखें — **तार्यतुल्य० IV. iv. 91**

तुल्यक्रियः — III. i. 87

(कर्म के साथ अर्थात् कर्मस्थक्रिया के साथ) समान-क्रिया वाला (कर्त्ता कर्मवत् होता है)।

तुल्यम् — I. ii. 56

(काल तथा उपसर्जन = गौण भी अशिष्य होते हैं;) तुल्य हेतु होने से अर्थात् पूर्वसूत्रोक्त लोकाधीनत्व हेतु होने से।

तुल्यम् — V. i. 114
(तृतीयासमर्थ प्रातिपदिकों से) 'समान' अर्थ में (वति प्रत्यय होता है, यदि वह समानता क्रिया की हो तो)।

तुल्ययोगे — II. ii. 28
तुल्ययोग में वर्तमान (सह अव्यय तृतीयान्त सुबन्त के साथ समास को प्राप्त होता है) और वह समास बहुव्रीहि-सञ्ज्ञक होता है)।

...तुल्याख्या — II. i. 67
देखें — कृत्यतुल्याख्या II. i. 67

तुल्यार्थ... — VI. ii. 2
देखें — तुल्यार्थतृतीया० VI. ii. 2

तुल्यार्थतृतीयासप्तम्युपमानाव्ययद्वितीयाकृत्याः — VI. ii. 2
(तत्पुरुष समास में) तुल्य अर्थवाले तृतीयान्त, सप्तम्यन्त उपमानवाची अव्यय, द्वितीयान्त तथा कृत्यप्रत्ययान्त पूर्व-पद में स्थित शब्दों को (प्रकृतिस्वर होता है)।

तुल्यार्थैः — II. iii. 72
तुल्यार्थक शब्दों के योग में (शेष विवक्षित होने पर तृतीया विभक्ति विकल्प से होती है; पक्ष में षष्ठी भी, तुला और उपमा को छोड़कर)।

तुल्यास्यप्रयत्नम् — I. i. 9
मुख में होने वाले स्थान और प्रयत्न तुल्य हों जिनके, ऐसे वर्णों की (परस्पर सवर्ण संज्ञा होती है)।

...तुष... — VI. ii. 82
देखें — दीर्घकाश० VI. ii. 82

तुस्माः — I. iii. 4
(विभक्ति में वर्तमान) तवर्ग, सकार और मकार (अन्तिम हल् होते हुये भी इत्संज्ञक नहीं होते)।

तुह्योः — VII. i. 35
(आशीर्वाद-विषय में) तु और हि के स्थान में (तातङ् आदेश होता है, विकल्प करके)।

तूदी... — IV. iii. 94
देखें — तूदीशलातुर० IV. iii. 94

तूदीशलातुरवर्म्मतीकूचवारात् — IV. iii. 94
तूदी, शलातुर, वर्मती तथा कूचवार प्रातिपदिकों से (यथासङ्ख्य करके ढक्, छण्, ढञ् तथा यक् प्रत्यय होते हैं, 'इसका अभिजन' विषय में)।

...तूर्य... — II. iv. 2
देखें — प्राणितूर्यसेनाङ्गानाम् II. iv. 2

...तूल... — III. i. 25
देखें — सत्यापपाश० III. i. 25

...तूल... — VI. ii. 121
देखें — कूलतीर० VI. ii. 121

...तूल... — VI. iii. 64
देखें — चिततूलभारिषु VI. iii. 64

तूष्णीमि — III. iv. 63
तूष्णीम् शब्द उपपद हो (तो भू धातु से क्त्वा, णमुल् प्रत्यय होते हैं)।

...तूस्तेभ्यः — III. i. 21
देखें — मुण्डमिश्र० III. i 21

तृ — VI. iv. 127
(अर्वन् अङ्ग को) तृ आदेश होता है, (यदि अर्वन् शब्द से परे सु न हो तथा वह अर्वन् शब्द नञ् से उत्तर भी न हो)।

तृच्... — II. ii. 15
देखें — तृजकाभ्याम् II. ii. 15

...तृच्... — VI. iv. 11
देखें — अतृन्तृच्० VI. iv. 11

...तृचः — III. iii. 169
देखें — कृत्यतृचः III. iii. 169

...तृचौ — III. i. 133
देखें — ण्वुल्तृचौ III. i. 133

तृजकाभ्याम् — II. ii. 15
(कर्ता में विहित) तृच् और अकप्रत्ययान्त (सुबन्त) के साथ (कर्म में जो षष्ठी, वह समास को प्राप्त नहीं होती)।

तृज्वत् — VII. i. 95
(सम्बुद्धि-भिन्न सर्वनामस्थान परे रहते तुन्प्रत्ययान्त क्रोष्टु शब्द) तृच् के समान अर्थात् तृच्प्रत्ययान्त की तरह हो जाता है।

...तृण... — II. iv. 12
देखें — वृक्षमृगतृणधान्य० II. iv. 12

...तृण... — IV. ii. 79

देखें — **अरीहणकृशाश्व० IV. ii. 79**

...तृण... — V. iv. 125

देखें — **सुहरित० V. iv. 125**

तृणहः — VII. iii. 92

'तृह् हिंसायाम्' अङ्ग को (हलादि पित् सार्वधातुक परे रहते इम् आगम होता है)।

तृणे — VI. iii. 102

तृण शब्द उत्तरपद हो तो (भी कु को कत् आदेश होता है, जाति अभिधेय होने पर)।

...तृतीय... — II. ii. 3

देखें — **द्वितीयतृतीयचतुर्थ० II. ii. 3**

...तृतीय... — V. iv. 58

देखें — **द्वितीयतृतीय० V. iv. 58**

तृतीया — II. i. 29

तृतीयान्त सुबन्त (तत्कृत गुणवाचक और अर्थ शब्द के साथ विकल्प से समान को प्राप्त होता है और वह तत्पुरुष समास होता है)।

तृतीया — II. iii. 3

(वेद-विषय में हु धातु के अनभिहित कर्म में) तृतीया-विभक्ति होती है, (चकार से द्वितीया विभक्ति भी होती है)।

तृतीया — II. iii. 6

(अपवर्ग गम्यमान होने पर काल और अध्ववाचियों के अत्यन्त संयोग में) तृतीया विभक्ति होती है।

तृतीया — II. iii. 18

(अनभिहित कर्ता और करण कारक में) तृतीया विभक्ति होती है।

तृतीया — II. iii. 27

(हेतु शब्द के प्रयोग में तथा हेतु के विशेषणवाची सर्वनामसञ्ज्ञक शब्द के प्रयोग में हेतु द्योतित होने पर) तृतीया विभक्ति होती है (और चकार से षष्ठी भी)।

तृतीया — II. iii. 32

(पृथक्, विना, नाना—इन शब्दों के योग में विकल्प से) तृतीया विभक्ति होती है, (पक्ष में पञ्चमी भी होती है)।

तृतीया — II. iii. 44

(प्रसित और उत्सुक शब्दों के योग में) तृतीया विभक्ति होती है (तथा चकार से सप्तमी भी)।

तृतीया — II. iii. 72

(तुल्यार्थक शब्दों के योग में, तुला और उपमा शब्दों को छोड़कर विकल्प से) तृतीया विभक्ति होती है, (पक्ष में षष्ठी भी)।

तृतीया... — II. iv. 85

देखें — **तृतीयासप्तम्योः II. iv. 85**

...तृतीया... — VI. ii. 2

देखें — **तुल्यार्थतृतीया० VI. ii. 2**

तृतीया — VI. ii. 48

(कर्मवाची क्तान्त उत्तरपद रहते) तृतीयान्त पूर्वपद को (प्रकृतिस्वर हो जाता है)।

तृतीयात् — V. iii. 84

(मनुष्यनामवाची शेवल, सुपरि, विशाल, वरुण तथा अर्यमा शब्द आदि में है जिनके, ऐसे शब्दों के) तीसरे (अच्) के बाद (की प्रकृति का लोप हो जाता है, ठ तथा अजादि प्रत्ययों के परे रहते)।

तृतीयादिः — VI. i 162

(सप्तमीबहुवचन सु के परे रहते एक अच् वाले शब्द से उत्तर) तृतीयाविभक्ति से लेकर आगे की (विभक्तियाँ को उदात्त होता है)।

तृतीयादिषु — VII. i. 74

तृतीया विभक्ति से लेकर आगे की (अजादि) विभक्तियों के परे रहते (भाषितपुंस्क नपुंसकलिङ्ग वाले अङ्ग को गालव आचार्य के मत में पुंवद्भाव हो जाता है)।

तृतीयादिषु — VII. i. 97

तृतीयादि (अजादि) विभक्तियों के परे रहते (क्रोष्टु शब्द को विकल्प से तृज्वत् अतिदेश होता है)।

तृतीयादौ — II. iv. 32

तृतीया आदि विभक्ति परे रहते (अन्वादेश में वर्तमान इदम् के स्थान में अनुदात्त अश् आदेश होता है)।

तृतीयाप्रभृतीनि — II. ii. 21

'उपदंशस्तृतीयायाम्' III. iv. 47 से लेकर 'अन्वच्यानुलोम्ये' तक III. iv. 64 जो भी उपपद हैं, वे (अमन्त

अव्यय के साथ ही विकल्प से तत्पुरुष समास को प्राप्त होते हैं)।

...तृतीयाभ्याम् — VII. iii. 115

देखें — द्वितीयातृतीयाभ्याम् VII. iii. 115

तृतीयायाः — V. iv. 46

(अतिग्रह, अव्यथन तथा क्षेप विषयों में वर्तमान) तृतीयाविभक्त्यन्त प्रातिपदिक से (विकल्प से तसि प्रत्यय होता है, यदि वह तृतीया कर्ता में न हो तो)।

अतिग्रह = दुर्बोध।

अव्यर्थक = पीड़ा का न होना, साँप।

क्षेप = निन्दा

तृतीयायाः — VI. ii. 153

तृतीयान्त से परे (उत्तरपद ऊनार्थवाची एवं कलह शब्द को अन्तोदात्त होता है)।

तृतीयायाः — VI. iii. 3

(ओजस्, सहस्, अम्भस् तथा तमस् शब्द से उत्तर) तृतीया विभक्ति का (उत्तरपद परे रहते अलुक् होता है)।

तृतीयायाम् — III. iv. 47

तृतीयान्त शब्द उपपद रहते (उपपूर्वक दंश् धातु से णमुल् प्रत्यय होता है)।

तृतीयायुक्तात् — I. iii. 54

तृतीयाविभक्ति से युक्त (सम् पूर्वक चर् धातु) से (आत्मनेपद होता है)।

तृतीयार्थे — I. iv. 84

तृतीयार्थ के द्योतित होने पर (अनु कर्मप्रवचनीय तथा निपातसंज्ञक होता है)।

तृतीयासप्तम्योः — II. iv. 84

तृतीया और सप्तमी विभक्ति के (सुप् के) स्थान में (अदन्त अव्ययीभाव से उत्तर अम् आदेश होता है, बहुल करके)।

तृतीयासमासे — I. i. 29

तृतीया तत्पुरुष समास में (सर्वादियों की सर्वनाम संज्ञा नहीं होती)।

...तृद... — VII. ii. 57

देखें — कृतचृत० VII. ii. 57

...तृदोः —III. iv. 17

देखें — सृपितृदोः III. iv. 17

तृन् — III. ii. 135

(तच्छीलादि कर्ता हों तो वर्तमानकाल में धातुमात्र से) तृन् प्रत्यय होता है।

तृन्... — VI. ii. 161

देखें — तृन्नन्न० VI. ii 161

...तृन्... — VI. iv. 11

देखें — अप्तृन्तृच्० VI. iv. 11

...तृनाम् — II. iii. 69

देखें — लोकाव्ययनिष्ठा० II. iii. 69

तृन्नन्नतीक्ष्णशुचिषु — VI. ii. 161

(नञ् से उत्तर) तृन्प्रत्ययान्त एवं अन्न, तीक्ष्ण तथा शुचि उत्तरपद शब्दों को (विकल्प से अन्तोदात्त होता है)।

...तृप्र... — VI. iv. 157

देखें — प्रियस्थिर० VI. iv. 157

तृषि... — I. ii. 25

देखें — तृषिमृषिकृशेः I. ii. 25

तृषिमृषिकृशेः — I. ii. 25

तृष्, मृष्, कृश् धातुओं से परे (सेट् क्त्वा प्रत्यय काश्यप आचार्य के मत में विकल्प कित् नहीं होता है)।

...तृषोः — III. ii. 172

देखें — स्वपितृषोः III. ii. 172

...तृषोः — III. iv. 57

देखें — अस्यतितृषोः III. iv. 57

...तॄ... — III. ii. 46

देखें — भृतॄवृ० III. ii. 46

तॄ... — III. iii. 120

देखें — तॄस्त्रोः III. iii. 120

तॄ... — VI. iv. 122

देखें — तॄफलभज० VI. iv. 122

तॄस्त्रोः — III. iii. 120

(अवपूर्वक) तॄ, स्तॄञ् धातुओं से (करण और अधिकरण कारक में संज्ञाविषय में प्रायः घञ् प्रत्यय होता है)।

तृफलभजत्रपः — VI. iv. 122

तॄ, फल, भज, त्रप् — इन अङ्गों के (अकार के स्थान में भी एकारादेश तथा अभ्यासलोप होता है; कित्, ङित् लिट् तथा सेट् थल् परे रहते)।

ते — I. iv. 79

वे (गति और उपसर्गसंज्ञक शब्द धातु से पहले होते हैं)।

ते — III. i. 60

(कर्तृवाची लुङ्) त शब्द परे रहते (पद् धातु से उत्तर च्लि को चिण्'आदेश होता है)।

ते — IV. i. 172

उन अजादि प्रत्ययों की (तद्राज संज्ञा होती है)।

ते — VIII. i. 22

देखें — तेमयौ VIII. i. 22

तेतिक्ते — VII. iv. 65

तेतिक्ते शब्द (वेद-विषय में) निपातन किया जाता है।

तेन — II. ii. 27

(सप्तम्यन्त तथा) तृतीयान्त (समान रूप वाले दो सुबन्त परस्पर इदम् = यह इस अर्थ में विकल्प से समास को प्राप्त होते हैं और वह बहुव्रीहि समास होता है)।

तेन — II. ii. 28

(तुल्ययोग में वर्तमान 'सह' अव्यय) तृतीयान्त (सुबन्त) के साथ (समास को प्राप्त होता है, और वह समास बहुव्रीहिसंज्ञक होता है)।

तेन — II. iv. 62

(बहुत्व अर्थ में वर्तमान तद्राजसंज्ञक प्रत्यय का लुक् होता है, स्त्रीलिङ्ग को छोड़कर; यदि वह बहुत्व) उसी तद्राजकृत हो तो।

तेन — IV. ii. 1

(समर्थों में) जो (प्रथम) तृतीयासमर्थ (रागविशेषवाची) प्रातिपदिक, उससे ('रंगा गया' अर्थ में यथाविहित प्रत्यय होता है)।

तेन — IV. ii. 67

तृतीयासमर्थ प्रातिपदिकों से ('बनाया गया' अर्थ में यथाविहित प्रत्यय होता है, यदि उस शब्द से देश का नाम गम्यमान हो)।

तेन — IV. iii. 101

तृतीयासमर्थ प्रातिपदिक से (प्रोक्त = प्रवचन किया हुआ अर्थ में यथाविहित प्रत्यय होता है)।

तेन — IV. iii. 112

तृतीयासमर्थ प्रातिपदिक से (समान दिशा अर्थ में यथाविहित प्रत्यय होता है)।

तेन — IV. iv. 2

तृतीयासमर्थ प्रातिपदिक से ('खेलता है, खोदता है, जीतता है, जीता हुआ' अर्थों में ठक् प्रत्यय होता है)।

तेन — V. i. 36

तृतीयासमर्थ प्रातिपदिक से ('खरीदा गया' अर्थ में यथाविहित प्रत्यय होते हैं)।

तेन — V. i. 77

तृतीयासमर्थ (कालवाची) प्रातिपदिक से ('बनाया हुआ' अर्थ में यथाविहित ठञ् प्रत्यय होता है)।

तेन — V. i. 92

तृतीयासमर्थ (कालवाची) प्रातिपदिक से ('जीता जा सकता है', 'प्राप्त करने योग्य', 'किया जा सके' तथा 'सुगमता से किया जा सके' अर्थों में यथाविहित ठञ् प्रत्यय होता है)।

तेन — V. i. 97

तृतीयासमर्थ (यथाकथाच तथा हस्त) प्रातिपदिक से ('दिया जाता है' और 'कार्य अर्थों में यथासङ्ख्य करके ण और यत् प्रत्यय होते हैं)।

तेन — V. i. 114

तृतीयासमर्थ प्रातिपदिकों से ('समान' अर्थ में वति प्रत्यय होता है, यदि वह समानता क्रिया की हो तो)।

तेन — V. ii. 26

तृतीयासमर्थ प्रातिपदिकों से ('ज्ञात' अर्थ में चुञ्चुप् और चणप् प्रत्यय होते हैं)।

तेमयौ — VIII. i. 22

(पद से उत्तर अपदादि में वर्तमान एकवचन वाले षष्ठ्यन्त, चतुर्थ्यन्त युष्मद्, अस्मद् पदों को क्रमशः) ते तथा मे आदेश होते हैं, (और वे आदेश अनुदात्त होते हैं)।

तैतिलकद्रूः — VI. ii. 42

'तैतिलकद्रू' इस समास किये हुये शब्द के (पूर्वपद को प्रकृति स्वर होता है)।

तैतिलकद्रू = देवता कश्यप की पत्नी, नागों की माता।

...तोः — VIII. iv. 39

देखें — स्तोः VIII. iv. 39

तोः — VIII. iv. 42

तवर्ग को (षकार परे रहते ष्टुत्व नहीं होता)।

तोः — VIII. iv. 59

तवर्ग के स्थान में (लकार परे रहते परसवर्ण आदेश होता है)।

तोपधात् — IV. i. 39

(वर्णवाची अदन्त अनुपसर्जन अनुदात्तान्त) तकार उपधावाले प्रातिपदिकों से (विकल्प से स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय तथा तकार को नकारादेश हो जाता है)।

...तोसुन्... — I. i. 39

देखें — क्त्वातोसुन्कसुनः I. i. 39

तोसुन्... III. iv. 13

देखें — तोसुन्कसुनौ III. iv. 13

तोसुन् — III. iv. 16

(क्रिया के लक्षण में वर्तमान स्था, इण्, कृञ्, वदि, चरि, हु, तमि तथा जनि धातुओं से वेदविषय में तुमर्थ में) तोसुन् प्रत्यय होता है।

तोसुन्कसुनौ — III. iv. 13

(ईश्वर शब्द उपपद रहते तुमर्थ में वेद-विषय में धातु से) तोसुन्, कसुन् प्रत्यय होते हैं।

तौ — III. ii. 126

वे — शतृ तथा शानच् प्रत्यय (सत् — संज्ञक होते हैं)।

तौल्वलिभ्यः — II. iv. 61

(गोत्रवाची) तौल्वलि आदि शब्दों से (विहित जो युवापत्य में प्रत्यय, उसका लुक् नहीं होता)।

त्यक् — IV. ii. 97

(दक्षिणा, पश्चात् तथा पुरस् प्रातिपदिकों से शैषिक) त्यक् प्रत्यय होता है।

त्यकन् — V. ii. 34

(उप और अधि उपसर्ग प्रातिपदिकों से यथासङ्ख्य यदि वे 'आसन्न' और 'आरूढ' अर्थों में वर्त्तमान हों तो सञ्ज्ञाविषय में) त्यकन् प्रत्यय होता है।

...त्यज... — III. ii. 142

देखें — सम्पृचानुरुध० III. ii. 142

त्यदादिषु — III. ii. 60

त्यदादि शब्द उपपद रहते (अनालोचन =देखना से भिन्न अर्थ में वर्तमान दृश् धातु से कञ् और क्विन् प्रत्यय होते हैं)।

त्यदादीनाम् — VII. ii. 102

त्यदादि अङ्गों को (विभक्ति परे रहते अकारादेश होता है)।

त्यदादीनि — I. i. 73

त्यदादिगणपठित शब्द (की भी वृद्धसंज्ञा होती है)।

त्यदादीनि — I. ii. 72

त्यदादि शब्दरूप (सबके साथ नित्य ही शेष रह जाते हैं, अन्य हट जाते हैं)।

त्यप् — IV. ii. 103

(अव्यय प्रातिपदिकों से शैषिक) त्यप् प्रत्यय होता है।

त्याग... — VI. i. 210

देखें — त्यागराग० VI. i. 210

त्यागरागहासकुहश्वठक्रथानाम् — VI. i. 21

त्याग, राग, हास, कुह, श्वठ, क्रथ — इन शब्दों के (आदि को विकल्प से उदात्त होता है)।

...त्यात् — VI. i. 108

देखें — ख्यत्यात् VI. i. 108

त्र... — II. iv. 33

देखें — त्रतसोः II. iv. 33

त्र... — II. iv. 33

देखें — त्रतसौ II. iv. 33

...त्र... — VI. ii. 50

देखें — इनित्रकट्य० IV. ii. 50

...त्र... — VI. iii. 132

देखें — तुनुघमक्षु० VI. iii. 132

...त्र... — VII. ii. 9

देखें — तितुत्र० VII. ii. 9

त्रतसोः — II. iv. 33

त्र और तस् प्रत्ययों के परे रहते (अन्वादेश में वर्तमान एतद् के स्थान में अनुदात्त अश् होता है तथा त्र और तस् भी अनुदात्त होते हैं)।

त्रतसौ — II. iv. 33

(त्र तथा तस् परे रहते अन्वादेश में वर्तमान एतद् के स्थान में अनुदात्त अश् आदेश होता है और वे) त्र, तस् प्रत्यय (भी अनुदात्त होते हैं)।

...मन्... — VI. iv. 97

देखें — इस्मन्० VI. iv. 97

...त्रप्... — VI. iv. 157

देखें — प्रस्थस्फ० VI. iv. 157

...त्रपः — VI. iv. 122

देखें — तृफल० VI. iv. 122

...त्रपि... — III. i. 126

देखें — आसुयुवपि० III. i. 126

त्रपु... — IV. iii. 135

देखें — त्रपुजतुनोः IV. iii. 135

त्रपुजतुनोः — IV. iii. 135

(षष्ठीसमर्थ) त्रपु और जतु प्रातिपदिकों से (अण् प्रत्यय होता है तथा इन दोनों को षुक् आगम भी होता है)।

त्रयः — VI. iii. 47

(त्रि शब्द को) त्रयस् आदेश होता है; (सङ्ख्या उत्तरपद रहते, बहुव्रीहि समास तथा अशीति को छोड़कर)।

त्रयः — VII. i. 53

(त्रि अङ्ग को) त्रय आदेश होता है, (आम् परे रहते)।

त्रयाणाम् — VII. iv. 78

(णिजिर् आदि) तीन धातुओं के (अभ्यास को श्लु होने पर गुण होता है)।

त्रल् — V. iii. 10

(सप्तम्यन्त किम्, सर्वनाम तथा बहु प्रातिपदिकों से) त्रल् प्रत्यय होता है।

...त्रसाम् — VI. iv. 124

देखें — जृभ्रमु० VI. iv. 124

...त्रसि... — III. i. 70

देखें — भ्राशभ्लाश० III. i. 70

त्रसि... — III. ii. 140

देखें — त्रसिगृधि० III. ii. 140

त्रसिगृधिधृषिक्षिपेः — III. ii. 139

त्रसि, गृधि, धृषि तथा क्षिप् धातुओं से (तच्छीलादि कर्त्ता हो तो वर्तमान काल में क्नु प्रत्यय होता है)।

त्रा — V. iv. 55

(देने योग्य वस्तु तदधीनवचन वाच्य हो तो कृ, भू तथा अस् के योग में तथा सम् पूर्वक पद् के योग में) त्रा प्रत्यय (तथा साति प्रत्यय होते हैं)।

...त्रा... — VIII. ii. 56

देखें — नुदविदोन्द० VIII. ii. 56

...त्रार्थानाम् — I. iv. 25

देखें — भीत्रार्थानाम् I. iv. 25

...त्रि... — V. iv. 18

देखें — द्वित्रिचतुर्भ्यः V. iv. 18

...त्रि... — VI. i. 173

देखें — षट्त्रिचतुर्भ्यः VI. i. 173

त्रि... — VII. ii. 99

देखें — त्रिचतुरोः VII. ii. 99

...त्रि... — VIII. iii. 97

देखें — अम्बाम्ब० VIII. iii. 97

त्रिककुत् — V. iv. 147

(पर्वत अभिधेय हो तो बहुव्रीहि समास में) त्रिककुत् शब्द निपातन किया जाता है।

...त्रिगर्त्तषष्ठात् — V. iii. 116

देखें — दामन्यादि० V. iii. 116

त्रिचतुरोः — VII. ii. 99

त्रि तथा चतुर् अङ्ग को (स्त्रीलिङ्ग में क्रमशः तिसृ, चतसृ आदेश होते हैं, विभक्ति परे रहते)।

...त्रिपूर्वात् — V. i. 30

देखें — **द्वित्रिपूर्वात् V. i. 30**

त्रिप्रभृतिषु — VIII. iv. 49

तीन मिले हुये संयुक्त वर्णों को (शाकटायन आचार्य के मत में द्वित्व नहीं होता)।

...त्रिभ्याम् — V. ii. 43

देखें — **द्वित्रिभ्याम् V. ii. 43**

...त्रिभ्याम् — V. iv. 102

देखें — **द्वित्रिभ्याम् V. iv. 102**

...त्रिभ्याम् — V. iv. 115

देखें — **द्वित्रिभ्याम् V. iv. 115**

...त्रिभ्याम् — VI. ii. 197

देखें — **द्वित्रिभ्याम् VI. ii. 197**

...त्रिस्... — VIII. iii. 43

देखें — **द्विस्त्रिश्चतुः VIII. iii. 43**

त्रिस्तावा — V. iv. 84

(द्विस्तावा तथा) त्रिस्तावा शब्द का निपातन किया जाता है, (यज्ञ की वेदि अभिधेय हो तो)।

त्रिंशच्चत्वारिंशतोः — V. i. 61

(परिमाणसमानाधिकरण वाले प्रथमासमर्थ) त्रिंशत् तथा चत्वारिंशत् प्रातिपदिकों से षष्ठ्यर्थ में (सञ्ज्ञाविषय में डण् प्रत्यय होता है, ब्राह्मण-ग्रन्थ अभिधेय हो तो)।

...त्रिंशत्... — V. i. 58

देखें — **पंक्तिविंशति० V. i. 58**

त्रिंशत्... — V. i. 61

देखें — **त्रिंशच्चत्वारिंशतोः V. i. 61**

...त्रिंशद्भ्याम् — V. i. 64

देखें — **विंशतित्रिंशद्भ्याम् V. i. 24**

त्रीणि — I. iv. 100

(तिङ् प्रत्ययों के तीन) तीन (का समूह क्रम से प्रथम, मध्यम और उत्तम संज्ञक होता है)।

...त्रुटि... — III. i. 70

देखें — **भ्राशभ्लाश० III. i. 70**

त्रेः — V. ii. 55

(षष्ठीसमर्थ) त्रि प्रातिपदिक से ('पूरण' अर्थ में तीय प्रत्यय होता है तथा प्रत्यय के साथ-साथ त्रि को सम्प्रसारण हो जाता है)।

त्रेः — VI. iii. 47

त्रि शब्द को (त्रयस् आदेश होता है; सङ्ख्या उत्तरपद रहते, बहुव्रीहि समास तथा अशीति उत्तरपद को छोड़कर)।

त्रेः — VII. i. 53

त्रि अङ्ग को (त्रय आदेश होता है, आम् परे रहते)।

त्रैगर्ते — IV. i. 111

(भर्ग शब्द से गोत्र में फञ् प्रत्यय होता है); त्रिगर्त देश में उत्पन्न अर्थ वाच्य हो तो।

त्र्यच् — VI. ii. 90

(अर्म शब्द उत्तरपद रहते भी अवर्णान्त जो दो अचों वाले तथा) तीन अचों वाले (महत् तथा नव से भिन्न पूर्वपद, उन्हें आद्युदात्त होता है)।

...त्र्यायुष... — V. iv. 77

देखें — **अचतुर० V. iv. 77**

...त्र्योः — V. iii. 45

देखें — **द्वित्र्योः V. iii. 45**

त्व... — V. i. 118

देखें — **त्वतलौ V. i. 118**

त्व... — VII. ii. 94

देखें — **त्वाहौ VII. ii. 94**

त्व... — VII. ii. 97

देखें — **त्वमौ VII. ii. 97**

त्वः — V. i. 135

(षष्ठीसमर्थ ऋत्विग् विशेषवाची ब्रह्मन् प्रातिपदिक से भाव और कर्म अर्थो में) त्व-प्रत्यय होता है।

...त्वच... — III. i. 25

देखें — **सत्यापपाश० III. i. 25**

त्वतलौ — V. i. 118

(षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिक से 'भाव' अर्थ में) त्व और तल् प्रत्यय होते हैं।

...त्वनः — III. iv. 14

देखें — तवैकेन्केन्यत्वनः III. iv. 14

त्वमौ — VII. ii. 97

(एक अर्थ का कथन करने वाले युष्मद्, अस्मद् अंग के मपर्यन्त भाग को क्रमशः) त्व, म आदेश होते हैं।

...त्वर... — VI. iv. 20

देखें — ज्वरत्वर० VI. iv. 20

...त्वर... — VII. ii. 28

देखें — रुष्यमत्वर० VII. ii. 28

...त्वर... — VII. iv. 95

देखें — स्मृदृत्वर० VII. iv. 95

...त्वष्ट... — VI. iv. 11

देखें — अप्तृन्तृच्० VI. iv. 11

त्वा... — VIII. i. 23

देखें — त्वामौ VIII. i. 23

त्वात् — V. i. 119

(यहाँ से लेकर) 'ब्राह्मणस्त्वः' V. i. 135 के त्वपर्यन्त (त्व, तल् प्रत्यय होते हैं, ऐसा अधिकार जानना चाहिये)।

त्वामौ — VIII. i. 23

(पद से उत्तर अपादादि में वर्तमान द्वितीया विभक्ति को जो एकवचन, तदन्त युष्मद्, अस्मद् पद को यथासङ्ख्य करके) त्वा, मा आदेश होते हैं (और वे अनुदात्त होते हैं)।

त्वाहौ — VII. ii. 94

(सु विभक्ति परे रहते युष्मद्, अस्मद् अंग के मपर्यन्त भाग को क्रमशः) त्व तथा अह आदेश होते हैं।

त्वे — VI. iii. 63

त्व प्रत्यय परे रहते (भी ङ्यन्त तथा आबन्त शब्द को बहुल करके ह्रस्व होता है)।

थ

थ — प्रत्याहारसूत्र XI

आचार्य पाणिनि द्वारा अपने ग्यारहवें प्रत्याहार सूत्र में पठित पञ्चम वर्ण।

पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का चौतीसवां वर्ण।

थ... — I. ii. 23

देखें — थफान्तात् I. ii. 23

...थ... — III. iv. 78

देखें — तिप्तस्झि० III. iv. 78

थ... — VI. ii. 144

देखें — थाथघञ्० VI. ii. 144

...थ... — VII. ii. 9

देखें — तितुत्र० VII. ii. 9

थः — VII. i. 87

(पथिन् तथा मथिन् अङ्ग के) थकार के स्थान में ('न्थ' आदेश होता है)।

थः — VIII. ii. 35

(आह् के हकार के स्थान में) थकारादेश होता है, (झल् परे रहते)।

थकन् — III. i. 146

(गै धातु से शिल्पी कर्त्ता वाच्य होने पर) थकन् प्रत्यय होता है।

थट् — V. ii. 50

(सङ्ख्या आदि में न हो जिसके, ऐसे षष्ठीसमर्थ सङ्ख्यावाची नकारान्त प्रातिपदिक से 'पूरण' अर्थ में (थट् तथा मट् आगम होता है)।

...थनाः — VII. i. 45

देखें — तप्तनप्० VII. i. 45

थफान्तात् — I. ii. 23

(नकार उपधा वाली) थकारान्त तथा फकारान्त धातुओं से परे (जो सेट् क्त्वा प्रत्यय, वह विकल्प करके कित् नहीं होता है)।

थमुः — V. iii. 24

(प्रकारवचन में वर्तमान इदम् प्रातिपदिक से स्वार्थ में) थमु प्रत्यय होता है।

...थल्... — III. iv. 82

देखें — णलतुसुस्० III. iv. 82

थलि – VI. i. 190

(सेट्) थल् परे रहते (इट् को विकल्प से उदात्त होता है; एवं चकार से प्रकृतिभूत शब्द के आदि अथवा अन्त को विकल्प से उदात्त होता है)।

थलि – VI. iv. 121

(सेट्) थल् परे रहते (भी अनादेशादि अङ्ग के दो असहाय हलों के मध्य में वर्तमान जो अकार, उसके स्थान में एकारादेश तथा अभ्यास का लोप हो जाता है)।

थलि – VII. ii. 61

(उपदेश में जो अजन्त धातु, तास् के परे रहते नित्य अनिट्, उससे उत्तर तास् के समान ही) थल् को (इट् आगम नहीं होता)।

...थस्... – III. iv. 78

देखें – **तिप्तस्झि० III. iv. 78**

...थस्... – III. iv. 101

देखें – **तस्-थस्-थ-मिपाम् III. iv. 101**

था – V. iii. 26

('हेतु' अर्थ में वर्तमान तथा प्रकारवचन अर्थ में वर्तमान किम् प्रातिपदिक से) था प्रत्यय होता है; (वेदविषय में)।

थाथघञ्क्ताजबित्रकाणाम् – VI. ii. 144

(गति, कारक और उत्तरपद से उत्तर) थ, अथ, घञ्, क्त, अच्, अप्, इत्र तथा क प्रत्ययान्त शब्दों को (अन्तोदात्त होता है)।

थाल् – V. iii. 23

(प्रकारवचन में वर्तमान किम्, सर्वनाम तथा बहु प्रातिपदिकों से) थाल् प्रत्यय होता है।

थाल् – V. iii. 111

(प्रत्न, पूर्व, विश्व, इम — इन प्रातिपदिकों से इवार्थ में) थाल् प्रत्यय होता है, (वेदविषय में)।

...थास्... – III. iv. 78

देखें – **तिप्तस्झि० III. iv. 78**

थासः – III. iv. 80

(टित् लकारों अर्थात् लट्, लिट्, लुट्, लृट्, लेट्, लोट् के स्थान में जो) थास् आदेश, उसके स्थान में (से आदेश होता है)।

थासोः – II. iv. 79

देखें – **तथासोः II. iv. 79**

थुक् – V. ii. 51

(षष्ठीसमर्थ षट्, कति, कतिपय तथा चतुर् प्रातिपदिकों से पूरण अर्थ में विहित डट् प्रत्यय के परे रहते) थुक् आगम होता है।

थुक् – VII. iv. 17

('असु क्षेपणे' अङ्ग को अङ् परे रहते) थुक् आगम होता है।

...थोः – III. iv. 107

देखें – **तिथोः III. iv. 107**

...थोः – V. iii. 4

देखें – **रथोः V. iii. 4**

...थोः – VIII. ii. 38

देखें – **तथोः VIII. ii. 38**

...थोः – VIII. ii. 40

देखें – **तथोः VIII. ii. 40**

थ्यन् – V. i. 8

(चतुर्थीसमर्थ अज एवं अवि प्रातिपदिकों से 'हित' अर्थ में) थ्यन् प्रत्यय होता है।

द

द – प्रत्याहारसूत्र X

भगवान् पाणिनि द्वारा अपने दशम प्रत्याहार सूत्र में पठित पञ्चम वर्ण।

पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का उनत्तीसवां वर्ण।

...द... – V. iv. 106

देखें – **चुदषहान्तात् V. iv. 106**

दः – I. iii. 20

(आङ् उपसर्ग से उत्तर) 'डुदाञ्' धातु से (आत्मनेपद होता है, यदि वह मुख के खोलने अर्थ में वर्तमान न हो तो)।

दः — V. iii. 72
(ककारान्त अव्यय को अकच् प्रत्यय के साथ-साथ) दकारादेश भी होता है।

दः — VI. iii. 123
दा के स्थान में (हुआ जो तकारादि आदेश, उसके परे रहते इगन्त को दीर्घ होता है)।

दः — VII. ii. 109
(इदम् के) दकार के स्थान में (भी मकारादेश होता है, विभक्ति परे रहते)।

दः — VII. iv. 46
(घुसञ्ज्ञक) दा धातु के स्थान में (दद् आदेश होता है, तकारादि कित् प्रत्यय परे रहते)।

दः — VIII. ii. 42
(रेफ तथा दकार से उत्तर निष्ठा के तकार को नकारादेश होता है तथा निष्ठा के तकार से पूर्व के) दकार को (भी नकारादेश होता है)।

दः — VII. ii. 72
(सकारान्त वस्वन्त पद को तथा स्रंसु, ध्वंसु एवं अनडुह् पदों को) दकारादेश होता है।

दः — VIII. ii. 75
दकारान्त (पद् धातु को भी सिप् परे रहते विकल्प से रु आदेश होता है)।

दः — VIII. ii. 80
(असकारान्त अदस् शब्द के दकार से उत्तर जो वर्ण उसके स्थान में उवर्ण आदेश होता है तथा) दकार को (मकारादेश भी होता है)।

...दक्षिण... — I. i. 33
देखें — **पूर्वपरावरदक्षिणोत्तरापराधराणि I. i. 33**

दक्षिण... — V. iii. 28
देखें — **दक्षिणोत्तराभ्याम् V. iii. 28**

दक्षिणा... — IV. ii. 98
देखें — **दक्षिणापश्चात्० IV. ii. 98**

दक्षिणा — V. i. 94
(षष्ठीसमर्थ यज्ञ की आख्यावाले प्रातिपदिकों 'दक्षिणा' = यज्ञ समाप्ति पर पुरोहित को दिया जाने वाला द्रव्य– अर्थ में (यथाविहित ठञ् प्रत्यय होता है)।

...दक्षिणात् — V. i. 68
देखें — **कडङ्करदक्षिणात् V. i. 68**

...दक्षिणात् — V. iii. 34
देखें — **उत्तराधर० V. iii. 34**

दक्षिणात् — V. iii. 36
(दिशा, देश तथा काल अर्थों में वर्तमान सप्तमी, प्रथमान्त दिशावाची) दक्षिण प्रातिपदिक से (आच् प्रत्यय होता है)।

दक्षिणापश्चात्पुरसः — IV. ii. 97
दक्षिणा, पश्चात् तथा पुरस् प्रातिपदिकों से (शैषिक त्यक् प्रत्यय होता है)।

दक्षिणेर्मा — V. iv. 126
(बहुव्रीहि समास में व्याध का सम्बन्ध होने पर) दक्षिणेर्मा शब्द अनिच्प्रत्ययान्त निपातन किया जाता है।

दक्षिणोत्तराभ्याम् — V. iii. 28
(दिशा, देश और काल अर्थों में वर्त्तमान सप्तम्यन्त, पञ्चम्यन्त तथा प्रथमान्त दिशावाची) दक्षिण तथा उत्तर प्रातिपदिकों से (स्वार्थ में अतसुच् प्रत्यय होता है)।

...दघ्नच्... — IV. i. 15
देखें — **टिड्ढाणञ्० IV. i. 15**

...दघ्नच्... — V. ii. 37
देखें — **द्वयसज्दघ्नच्० V. ii. 37**

दण्ड... — V. iv. 2
देखें — **दण्डव्यवसर्गयोः V. iv. 2**

दण्डमाणव... — IV. iii. 129
देखें — **दण्डमाणवान्तेवासिषु IV. iii. 129**

दण्डमाणवान्तेवासिषु — IV. iii. 129
(षष्ठीसमर्थ गोत्रवाची प्रातिपदिकों से 'इदम्' अर्थ में) दण्डमाणव तथा अन्तेवासी अभिधेय हों (तो वुञ् प्रत्यय नहीं होता)।

...दण्डयोः — V. i. 109
देखें — **मन्थदण्डयोः V. i. 109**

दण्डव्यवसर्गयोः — V. iv. 2
दण्ड तथा व्यवसर्ग = दान गम्यमान हो तो (पाद तथा शत-शब्दान्त सङ्ख्या आदि वाले प्रातिपदिकों से भी वुन् प्रत्यय होता है तथा पाद और शत के अन्त का लोप भी हो जाता है)।

...दण्डाजिनाभ्याम् — V. ii. 76

देखें — अयःशूलदण्डा० V. ii. 76

दण्डादिभ्यः — V. i. 65

(द्वितीयासमर्थ) दण्डादि प्रातिपदिक से ('समर्थ है' अर्थ में यत् प्रत्यय होता है)।

...दत्... — VI. i. 61

देखें — पद्दन्नोमास्० VI. i. 61

...दत्... — VI. ii. 197

देखें — पाद्दन्मूर्धसु VI. ii. 197

दतृ — V. iv. 141

(संख्यापूर्व वाले तथा सु पूर्व वाले दन्त शब्द को समासान्त) दतृ आदेश होता है; (अवस्था गम्यमान होने पर, बहुव्रीहि समास में)।

दत्त — VI. ii. 148

देखें — दत्तश्रुतयोः VI. ii. 148

दत्तम् — IV. iv. 119

(सप्तमीसमर्थ बर्हिस् प्रातिपदिक से) 'दिया हुआ' अर्थ में (यत् प्रत्यय होता है, वेद-विषय में)।

दत्तश्रुतयोः — VI. ii. 148

(सञ्ज्ञाविषय में आशीर्वाद गम्यमान हो तो कारक से उत्तर) दत्त तथा श्रुत क्तान्त शब्दों को (ही अन्त उदात्त होता है)।

दद् — VII. iv. 46

(घुसञ्ज्ञक दा धातु के स्थान में) दद् आदेश होता है, (तकारादि कित् प्रत्यय परे रहते)।

...दद... — VI. iv. 126

देखें — शसदद० VI. iv. 126

द्व्यज्दृद्ब्राह्मणर्क्प्रथमाध्वरपुरश्चरणनामाख्यातात् — IV. iii. 72

(षष्ठी तथा सप्तमीसमर्थ व्याख्यातव्यनाम जो) दो अचों वाले प्रातिपदिक, ऋकारान्त, ब्राह्मण, ऋक्, प्रथम, अध्वर, पुरश्चरण, नाम तथा आख्यात प्रातिपदिक उन से (भव, व्याख्यान अर्थों में ठक् प्रत्यय होता है)।

द्व्यञ्मगधकलिङ्गसूरमसात् — IV. i. 168

(क्षत्रियाभिधायी जनपदवाची) दो अचों वाले शब्दों से तथा मगध, कलिङ्ग और सूरमस प्रातिपदिकों से (अपत्य अर्थ में अण् प्रत्यय होता है)।

द्व्यन्तरुपसर्गेभ्यः — VI. iii. 96

द्वि, अन्तर् तथा उपसर्ग से उत्तर (आप् शब्द को ईकारादेश हो जाता है)।

द्व्यष्टनः — VI. iii. 46

द्वि तथा अष्टन् शब्दों को (आकारादेश होता है संख्या उत्तरपद हो तो, बहुव्रीहि समास तथा अशीति उत्तरपद को छोड़कर)।

....द्व्यायुष... — V. iv. 77

देखें — अचतुर० V. iv. 77

द्व्येकयोः — I. iv. 22

द्वित्व तथा एकत्व अर्थ की विवक्षा में (क्रमशः द्विवचन और एकवचन के प्रत्यय होते हैं)।

द्वयसज्दघ्नञ्मात्रचः — V. ii. 37

(प्रथमासमर्थ प्रमाण समानाधिकरणवाची प्रातिपदिकों से षष्ठ्यर्थ में) द्वयसच्, दघ्नच् और मात्रच् प्रत्यय होते हैं।

द्वयोः— I. ii. 59

(अस्मदर्थ के एकत्व और) द्वित्व अर्थ में (बहुवचन विकल्प करके होता है)।

ध

ध — प्रत्याहारसूत्र IX

भगवान् पाणिनि द्वारा अपने नवम प्रत्याहार सूत्र में पठित तृतीय वर्ण।

पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का चौबीसवां वर्ण।

धः — III. ii. 181

धा धातु से (कर्मकारक में ष्ट्रन् प्रत्यय होता है, वर्तमान-काल में)।

धः — V. iii. 44

(एक प्रातिपदिक से उत्तर जो) धा प्रत्यय, उसके स्थान में (विकल्प से ध्यमुञ् आदेश होता है)।

धः — VIII. ii. 34

('णह् बन्धने' धातु के हकार को) धकारादेश होता है, (झल् परे रहते या पदान्त में)।

धः — VIII. ii. 40

(झष् से उत्तर तकार तथा थकार को) धकार आदेश होता है (किन्तु, डुधाञ् धातु से उत्तर धकारादेश नहीं होता)।

धः — VIII. iii. 78

(इण् प्रत्याहार अन्तवाले अङ्ग से उत्तर षीध्वम्, लुङ् तथा लिट् के) धकार को (मूर्धन्य आदेश होता है)।

धन... — IV. iv. 84

देखें— **धनगणम् IV. iv. 84**

धन... — V. ii. 65

देखें — **धनहिरण्यात् V. ii. 65**

धन — VI. i. 186

देखें — **भीह्रीभृ० VI. i. 186**

धनगणम् — IV. iv. 84

(द्वितीयासमर्थ) धन और गण प्रातिपदिकों से (प्राप्त करने वाला अभिप्रेत हो तो यत् प्रत्यय होता है)।

धनहिरण्यात् — V. ii. 65

(सप्तमीसमर्थ) धन और हिरण्य प्रातिपदिकों से (इच्छा अर्थ में कन् प्रत्यय होता है)।

...धनाख्यायाम् — I. i. 34

देखें — **अज्ञातिधनाख्यायाम् I. i. 34**

....धनायाः — VII. iv. 34

देखें — **अशनायोदन्य० VII. iv. 34**

धनुषः— V. iv. 132

धनुष्-शब्दान्त (बहुव्रीहि) को (भी समासान्त अनङ् आदेश होता है)।

...धनुस् — III. ii. 21

देखें — **दिवाविभा० III. ii. 21**

धने — VI. ii. 55

(हिरण्य और परिमाण दोनों अर्थों को कहने वाले पूर्वपद को) धन शब्द उत्तरपद रहते (विकल्प से प्रकृतिस्वर होता है)।

धन्व... — IV. ii. 120

देखें — **धन्वयोपधात् IV. ii. 120**

धन्वयोपधात् — IV. ii. 120

(देश में वर्तमान) धन्ववाची तथा यकार उपधावाले (वृद्धसंज्ञक) प्रातिपदिकों से (शैषिक वुञ् प्रत्यय होता है)।

...धपरे — VI. i. 116

देखें — **कुधपरे VI. i. 116**

...धम... — VII. iii. 78

देखें — **पिबजिघ्र० VII. iii. 78**

धमुञ् — V. iii. 45

(द्वि तथा त्रि सम्बन्धी धा प्रत्यय को भी विकल्प से) धमुञ् आदेश होता है।

...धर्म... — IV. iv. 91

देखें — **नौवयोधर्म० IV. iv. 91**

धर्म... — IV. iv. 92

देखें — **धर्मपथ्यर्थ० IV. iv. 92**

धर्म... — V. ii. 132

देखें — **धर्मशील० V. ii. 132**

धर्मपथ्यर्थन्यायात् — IV. iv. 92

(पञ्चमीसमर्थ) धर्म, पथिन्, अर्थ, न्याय प्रातिपदिकों से (अनपेत अर्थ में यत् प्रत्यय होता है)।

अनपेत = जो दूर न गया हो, खोया न हो, अविरहित, [illegible]।

धर्मम् — IV. iv. 41

(द्वितीयासमर्थ) धर्म प्रातिपदिक से ('आचरण करता है' अर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

धर्मवत् — IV. ii. 46

(षष्ठीसमर्थ चरणवाची प्रातिपदिकों से समूह अर्थ में) धर्म अर्थ में कहे हुओं के समान (प्रत्यय होते हैं)।

धर्मशीलवर्णान्तात् — V. ii. 132

धर्म शब्द उपपदवाले, शील शब्द अन्त वाले तथा वर्ण शब्द अन्तवाले प्रातिपदिकों से भी 'मत्वर्थ' में इनि प्रत्यय होता है।

धर्मात् — V. iv. 124

(केवल पूर्वपद से परे जो) धर्म शब्द, तदन्त बहुव्रीहि से समासान्त अनिच् प्रत्यय होता है।

धर्म्याम् — IV. iv. 47

(षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिक से) न्याय्य व्यवहार अर्थ में (ढक् प्रत्यय होता है)।

धर्म्ये — VI. ii. 65

(हरण शब्द को छोड़कर) धर्म्यवाची शब्दों के परे रहते (सप्तम्यन्त तथा हारिवाची पूर्वपद को आद्युदात्त होता है)।

धा — V. iii. 42

(क्रिया के प्रकार अर्थ में वर्तमान सङ्ख्यावाची प्रातिपदिक से) धा प्रत्यय होता है।

धा — V. iv. 20

(आसन्नकालिक क्रिया की अभ्यावृत्ति के गणन अर्थ में वर्त्तमान बहु प्रातिपदिक से विकल्प से) धा प्रत्यय होता है।

...धाः — I. i. 19

देखें — दाधाः I. i. 19

धातवः — I. iii. 1

(भू जिनके आदि में है तथा वा धातु के समान जो क्रियावाची शब्द हैं, वे) धातुसंज्ञक होते हैं।

धातवः — III. i. 32

(सनाद्यन्त समुदाय) धातुसंज्ञक होते हैं।

...धातु... — VI. iv. 77

देखें — श्नुधातुभ्रुवाम् VI. iv. 77

धातुप्रातिपदिकयोः — II. iv. 71

धातु और प्रातिपदिक के अवयवभूत (सुप् का लुक् होता है)।

धातुलोपे — I. i. 4

(जिस आर्धधातुक को निमित्त मानकर) धातु के अवयव का लोप हुआ हो, उसी (आर्धधातुक) को निमित्त मानकर (इक् के स्थान में जो गुण, वृद्धि प्राप्त होते हैं, वे नहीं होते)।

धातुसम्बन्धे — III. iv. 1

दो धातुओं के अर्थ का सम्बन्ध होने पर (भिन्नकाल में विहित प्रत्यय भी कालान्तर में साधु होते हैं।

धातुस्थ... — VIII. iv. 26

देखें — धातुस्थोरुषुभ्यः VIII. iv. 26

धातुस्थोरुषुभ्यः — VIII. iv. 27

धातु में स्थित निमित्त से उत्तर तथा उरु एवं षु शब्द से उत्तर (नस् के नकार को भी वेद-विषय में णकार आदेश होता है)।

षु = प्रसूति, प्रजनन

धातोः — I. iv. 79

(वे गति और उपसर्ग-संज्ञक शब्द) धातु से (पहले होते हैं)।

धातोः — III. i. 7

(इच्छाक्रिया के कर्म का अवयव समानकर्तृक) धातु से (इच्छा अर्थ में विकल्प करके सन् प्रत्यय होता है)।

धातोः — III. i. 22

(एकाच् और हलादि) धातु से (क्रियासमभिहार अर्थात् पुनः-पुनः अथवा अतिशय अर्थ में विकल्प से यङ् प्रत्यय होता है)।

धातोः — III. i. 91

अधिकार सूत्र है, तृतीय अध्याय की समाप्ति तक इसका अधिकार जाएगा। अर्थात् तृतीयाध्याय की समाप्ति तक कहे जाने वाले प्रत्यय धातु से ही होंगे।

धातोः — III. ii. 14

धातुमात्र से (संज्ञा विषय में 'अच्' प्रत्यय होता है, 'शम्' उपपद रहने पर)।

धातोः — VI. i. 8

(लिट् लकार के परे रहते) धातु के (अवयव अनभ्यास प्रथम एकाच् एवं अजादि के द्वितीय एकाच् को द्वित्व होता है)।

धातोः — VI. i. 77

(यकारादि-प्रत्यय-निमित्तक ही जो) धातु का (एच्, उसको यकारादि प्रत्यय के परे रहते वकारान्त अर्थात् अव् आव् आदेश होते हैं, संहिता के विषय में)।

धातोः — VI. i. 156

धातु का (अन्त उदात्त होता है)।

धातोः — VI. iv. 140

(आकारान्त) जो धातु, तदन्त (भसञ्ज्ञक) आङ्ग के (आकार का लोप होता है)।

धातोः — VII. i. 58

(इकार इत्सञ्ज्ञक है जिसका,ऐसे) धातु को (नुम् आगम होता है)।

धातोः — VII. i. 100

(ऋकारान्त) धातु अङ्ग को (इकारादेश होता है)।

धातोः — VIII. ii. 32

(दकार आदि वाले) धातु के (हकार के स्थान में घकार आदेश होता है, झल् परे रहते या पदान्त में)।

धातोः — VIII. ii. 43

(संयोग आदि वाले आकारान्त एवं यण्वान्) धातु से उत्तर (निष्ठा के तकार को नकारादेश होता है)।

धातोः — VIII. ii. 64

(मकारान्त) धातु (पद) को (नकारादेश होता है)।

धातोः — VIII. ii. 74

(सकारान्त पद) धातु को (सिप् परे रहते विकल्प से रु आदेश होता है)।

धातौ — III. iii. 155

(संभाषण अर्थ के कहने वाला) धातु उपपद हो (तो यत् शब्द उपपद न होने पर सम्भावन अर्थ में वर्तमान धातु से विकल्प से लिङ् प्रत्यय होता है, यदि अलम् शब्द का अप्रयोग सिद्ध हो)।

धातौ — VI. i. 89

(अवर्णान्त उपसर्ग से उत्तर ऋकारादि) धातु के परे रहते (पूर्व, पर दोनों के स्थान में वृद्धि एकादेश होता है, संहिता के विषय में)।

धात्वर्थे — V. i. 116

धातु के अर्थ में वर्तमान (उपसर्ग से स्वार्थ में वति प्रत्यय होता है, वेदविषय में)।

धात्वादेः — VI. i. 62

धातु के आदि के (षकार के स्थान में उपदेश अवस्था में सकार आदेश होता है)।

...धात्वोः — VI. i. 169

देखें — ऊङ्धात्वोः VI. i. 169

...धान्य — II. iv. 12

देखें — वृक्षमृगतृण० II. iv. 12

धान्यानाम् — V. i. 1

षष्ठीसमर्थ धान्यविशेषवाची प्रातिपदिकों से ('उत्पत्ति-स्थान' अभिधेय हो तो खञ् प्रत्यय होता है, यदि वह उत्पत्तिस्थान खेत हो तो)।

धान्ये — III. iii. 30

(उद्, नि पूर्वक कृ धातु से) धान्यविषय में (घञ् प्रत्यय होता है, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में)।

धान्ये — III. iii. 48

(नि पूर्वक वृ धातु से) धान्यविशेष को कहना हो (तो कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

...धाय्याः — III. i. 129

देखें— पाय्यसान्नाय्य० — III. i. 129

...धारि — III. i. 138

देखें — लिम्पविन्द० III. i. 138

...धारि... — III. ii. 46

देखें — भृतृवृ० III. ii. 46

धारेः — I. iv. 35

णिजन्त धृञ् धातु के (प्रयोग में जो उत्तमर्ण है, वह कारक सम्प्रदान-संज्ञक होता है)।

...धार्थप्रत्यये — III. iv. 62

देखें— नाधार्थप्रत्यये— III. iv. 62

...धाय्योः — III. ii. 130

देखें — इङ्धाय्योः III. ii. 130

धावति — IV. iv. 37

(द्वितीयासमर्थ माथ शब्द उत्तरपदवाले प्रातिपदिक से तथा पदवी, अनुपद प्रातिपदिकों से) 'दौड़ता है'— अर्थ में (ढक् प्रत्यय होता है)।

धि — VIII. ii. 25

धकारादि प्रत्यय के परे रहते (भी सकार का लोप होता है)।

धि: — VI. iv. 101

(हु तथा झलन्त से उत्तर हलादि हि के स्थान में) धि आदेश होता है।

धिन्वि... — III. i. 80

देखें — धिन्विकृण्व्योः III. i. 80

धिन्विकृण्व्योः — III. i. 80

धिवि तथा कृवि धातु को ('उ' प्रत्यय और अकार अन्तादेश भी होता है, कर्तृवाची सार्वधातुक परे रहने पर)।

धिषीय — VII. iv. 45

धिषीय शब्द (वेदविषय में निपातन किया जाता है)।

...धिषु — VI. iii. 57

देखें — पेषंवास० VI. iii. 57

धिष्व — VII. iv. 45

धिष्व शब्द (वेदविषय में) निपातन किया जाता है।

धुट् — VIII. iii. 29

(डकारान्त पद से उत्तर सकारादि पद को विकल्प से) धुट् का आगम होता है।

...धुर्... — V. iv. 74

देखें — ऋक्पूरब्धू० V. iv. 74

धुरः — IV. iv. 77

(द्वितीयासमर्थ) धुर् प्रातिपदिक से ('ढोता है' अर्थ में यत् और ढक् प्रत्यय होते हैं)।

...धुर्वि... — III. ii. 177

देखें — भ्राजभास० III. ii. 177

...धू... — III. ii. 184

देखें — अर्तिलूधू० III. ii. 184

...धूञ्... — VII. ii. 44

देखें — स्वरतिसूति० VII. ii. 34

...धूञ्भ्यः — VII. ii. 72

देखें — स्तुसुधूञ्भ्यः VII. ii. 72

...धूप... — III. i. 28

देखें — गुपूधूपविच्छि० III. i. 28

धूमादिभ्यः — IV. ii. 126

(देशविशेषवाची) धूमादिगणपठित प्रातिपदिकों से (भी शैषिक वुञ् प्रत्यय होता है)।

...धूर्तैः — II. i. 64

देखें— पोटायुवतिस्तोक० II. i. 64

...धृतराज्ञाम् — VI. iv. 135

देखें — षपूर्वहन्० VI. iv. 135

...धृष... — III. iv. 65

देखें — शकधृष० III. iv. 65

...धृषः — I. ii. 19

देखें — शीङ्स्विदिमिदिक्ष्विदिधृषः I. ii. 19

...धृषि... — III. ii. 140

देखें — त्रसिगृधि० III. ii. 140

धृषिशसी — VII. ii. 19

'ञिधृषा प्रागल्भ्ये' तथा 'शसु हिंसायां' धातु (निष्ठा परे रहते अविनीतता गम्यमान होने पर अनिट् होते हैं)।

...धृष्टौ — VI. i. 200

देखें — शुष्कधृष्टौ VI. i. 200

...धेट्... — II. iv. 78

देखें — घ्राधेट्शाच्छासः II. iv. 78

धेट्... — III. i. 49

देखें — धेट्श्व्योः III. i. 49

...धेट्... — III. i. 137

देखें — पाघ्राध्मा० III. i. 137

...धेट्... — III. ii. 159

देखें — दाधेट्० III. ii. 159

...धेटोः — III. ii. 29

देखें — घ्माधेटोः III. ii. 29

धेट्श्व्योः — III. i. 49

धेट् तथा टुओश्वि धातु से उत्तर (च्लि को विकल्प से चङ् आदेश होता है, कर्तृवाची लुङ् परे रहने पर)।

...धेनु... — II. i. 64

देखें — पोटायुवतिस्तोक० II. i. 64

...धेनु... — VII. iii. 25
देखें — जङ्गलधेनु० VII. iii. 25

धेनुष्या — IV. iv. 89
(सञ्ज्ञाविषय में) धेनुष्या शब्द (स्त्रीलिङ्ग में निपातन किया जाता है)।

...धेनोः — IV. ii. 46
देखें — अचित्तहस्ति० IV. ii. 46

...धेन्वनडुह... — V. iv. 78
देखें — अचतुर० V. iv. 78

...धैवत्य... — VI. iv. 174
देखें— दाण्डिनायनहास्ति० VI. iv. 174

...धौ... — VII. iii. 78
देखें — पिबजिघ्र० VII. iii. 78

...ध्मा... — III. i. 137
देखें — पाघ्राध्मा० III. i. 137

ध्मा... — III. ii. 29
देखें — ध्माधेटोः III. ii. 29

...ध्मा... — VII. iii. 78
देखें — पाघ्राध्मा० VII. iii. 78

ध्माधेटोः — III. ii. 29
(नासिका तथा स्तन कर्म उपपद रहते) ध्मा तथा धेट् धातुओं से (खश् प्रत्यय होता है)।

...ध्मोः — VII. iv. 31
देखें — घ्राध्मोः VII. iv. 31

ध्यमुञ् — V. iii. 44
(एक प्रातिपदिक से उत्तर जो धा प्रत्यय, उसके स्थान में विकल्प से) ध्यमुञ् आदेश होता है।

ध्या... — VIII. ii. 57
देखें —ध्याख्यापॄ० VIII. ii. 57

ध्याख्यापॄमूर्च्छिमदाम् — VIII. ii. 57
ध्यै, ख्या, पॄ, मूर्च्छा मदी – इन धातुओं से परे (निष्ठा के तकार को नकारादेश नहीं होता)।

ध्रुवम् — I. iv. 24
अपाय अर्थात् अलग होने पर) अचल रहने वाला (कारक अपादान-संज्ञक होता है)।

ध्रुवम् — VI. ii. 177
(बहुव्रीहि समास में उपसर्ग से उत्तर पर्शुवर्जित) ध्रुव स्वाङ्ग को (अन्तोदात्त होता है)।

ध्रौव्य... — III. iv. 76
देखें — ध्रौव्यगति० III. iv. 76

ध्रौव्यगतिप्रत्यवसानार्थेभ्यः — III. iv. 76
स्थित्यर्थक (अकर्मक), गत्यर्थक तथा प्रत्यवसानार्थक = भक्षणार्थक धातुओं से विहित (जो क्त प्रत्यय, वह अधिकरण कारक में होता है तथा चकार से यथाप्राप्त भाव, कर्म, कर्त्ता में भी होता है)।

...ध्वनयति— III. i. 51
देखें — ऊनयतिध्वनयति० III. i. 51

...ध्वम् — III. iv. 78
देखें — तिप्तस्झि० III. iv. 78

ध्वमः — VII. i. 42
(वेद-विषय में) ध्वम् के स्थान में (ध्वात् आदेश होता है)।

...ध्वमोः — III. iv. 2
देखें — तध्वमोः III. i. 2

...ध्वर्य... — III. i. 123
देखें — निष्टक्र्यदेवहूय० III. i. 123

...ध्वंसु... — IV. iv. 84
देखें — वञ्चुस्रंसु VII. iv. 84

...ध्वंसु... — VIII. ii. 72
देखें — वसुस्रंसु VIII. ii. 72

ध्वाङ्क्षेण — II. i. 41
(सप्तम्यन्त सुबन्त) ध्वाङ्क्ष = कौआवाची (समर्थ सुबन्त) के साथ (क्षेप = निन्दा गम्यमान होने पर विकल्प से समास को प्राप्त होता है और वह तत्पुरुष समास होता है।

ध्वात्... — VII. i. 42
(वेद-विषय में ध्वम् के स्थान में) ध्वात् आदेश हो जाता है)।

...ध्वान्त – VII. ii. 18

देखें – क्षुब्धस्वान्त० VII. ii. 18

ध्वान्त = ढका हुआ, अन्धकार।

ध्वे – VII. ii. 78

(ईड तथा जन् धातु से उत्तर) ध्व (तथा से सार्वधातुक) को (इट् आगम होता है)।

...ध्वोः – VIII. ii. 37

देखें – स्ध्वोः VIII. ii. 37

न

न्... – VI.i. 3

देखें – न्द्राः VI. i. 3

न – प्रत्याहारसूत्र VII

भगवान् पाणिनि द्वारा अपने सप्तम प्रत्याहार सूत्र में पठित पञ्चम वर्ण।

पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का उन्नीसवां वर्ण।

न – I. i. 4

(जिस आर्धधातुक को निमित्त मानकर धातु के अवयव का लोप हुआ हो, उसी आर्धधातुक को निमित्त मानकर इक् के स्थान में जो गुण, वृद्धि प्राप्त होते हैं, वे) नहीं होते।

न – I. i. 10

(स्थान और प्रयत्न तुल्य होने पर भी अच् और हल् की परस्पर सवर्ण संज्ञा) नहीं होती।

न – I. i. 28

(बहुव्रीहि समास में सर्वादियों की सर्वनाम संज्ञा) नहीं होती।

न – I. i. 43

निषेध (और विकल्प की विभाषा संज्ञा होती है)।

न – I. i. 57

(पदान्त, द्विर्वचन, वरे, यलोप, स्वर, सवर्ण, अनुस्वार, दीर्घ, जश्, चर् – इनकी विधियों में परनिमित्तक अजादेश स्थानिवत्) नहीं होता।

न – I. i. 62

(लुक्, श्लु और लुप् शब्दों के द्वारा जहाँ प्रत्यय का अदर्शन किया गया हो, उसके परे रहते जो अङ्ग, उसको जो प्रत्ययलक्षण कार्य प्राप्त हों, वे) नहीं हों।

न – I. ii. 18

(सेट् क्त्वा प्रत्यय कित्) नहीं होता है।

न – I. ii. 37

(सुब्रह्मण्या नाम वाले निगद में एकश्रुति) नहीं होती (किन्तु उस निगद में वर्तमान स्वरित को उदात्त तो हो जाता है)।

न – I. iii. 4

(विभक्ति में वर्तमान अन्तिम तवर्ग, सकार और मकार इत्सञ्ज्ञक) नहीं होते।

न – I. iii. 15

(गत्यर्थक तथा हिंसार्थक धातुओं से क्रिया के अदल-बदल अर्थ में आत्मनेपद) नहीं होता।

न – I. iii. 58

(अनु उपसर्गपूर्वक सन्नन्त ज्ञा धातु से आत्मनेपद) नहीं होता है।

न – I. iii. 89

(पा, दमि, आङ्पूर्वक यम, आङ्पूर्वक यस, परिपूर्वक मुह, रुचि, नृति, वद, वस् – इन ण्यन्त धातुओं से परस्मैपद) नहीं होता)।

न – I. iv. 4

(इयङ् उवङ् आदेश होता है जिन ईकारान्त ऊकारान्त स्त्री की आख्यावाले शब्दों को, उनकी नदी-संज्ञा) नहीं होती, (स्त्री शब्द को छोड़कर)।

न – II. ii. 10

(निर्धारण में वर्तमान षष्ठ्यन्त सुबन्त का समर्थ सुबन्त के साथ समास) नहीं होता।

न – II. iii. 69

(ल, उ, उक, अव्यय, निष्ठा, खलर्थ, तृन् – इन के प्रयोग में षष्ठी विभक्ति) नहीं होती।

न – II. iv. 14

(दधिपय आदि द्वन्द्व शब्दरूप एकवद्) नहीं होते।

न — II. iv. 61

(गोत्रवाची तौल्वलि आदि शब्दों से विहित जो युवापत्यार्थक-प्रत्यय, उसका लुक्) नहीं होता।

न — II. iv. 67

(गोपवनादि शब्दों से परे गोत्रप्रत्यय का तत्कृत बहुवचन में लुक्) नहीं होता है।

न — II. iv. 83

(अदन्त अव्ययीभाव से उत्तर सुप् का लुक्) नहीं होता, (अपितु पञ्चमीभिन्न सुप् प्रत्यय के स्थान में अम् आदेश हो जाता है)।

न — III. i. 47

(दृश् धातु से च्लि के स्थान में क्स आदेश) नहीं होता (लुङ् परे रहने पर)।

न — III. i. 51

(ऊन, ध्वन, इल, अर्द—इन ण्यन्त धातुओं से उत्तर वेदविषय में च्लि के स्थान में चङ् आदेश नहीं होता।

न — III. i. 64

(रुधिर् धातु से उत्तर च्लि के स्थान में चिण् आदेश) नहीं होता, (कर्मकर्त्ता में, त शब्द परे रहते)।

न — III. i. 89

(दुह्, स्नु तथा नम् धातुओं को कर्मवद्भाव में कहे हुए कार्य यक् और चिण्) नहीं होते।

न — III. ii. 23

(शब्द, श्लोक, कलह, गाथा, वैर, चाटु, सूत्र, मन्त्र, पद—इन कर्मों के उपपद रहते कृञ् धातु से ट प्रत्यय) नहीं होता है।

न — III. ii. 113

(यत् शब्द सहित अभिज्ञावचन उपपद हो तो अनद्यतन भूतकाल में धातु से लृट् प्रत्यय) नहीं होता।

न — III. ii. 152

(यकारान्त धातुओं से तच्छीलादि कर्त्ता हों तो वर्तमानकाल में युच् प्रत्यय) नहीं होता।

न — III. iii. 135

(क्रियाप्रबन्ध तथा सामीप्य गम्यमान हो तो धातु से अनद्यतन के समान प्रत्ययविधि) नहीं होती।

न — III. iv. 23

(समानकर्त्तावाले धातुओं में से पूर्व एवं पर कालवाची अर्थ में वर्तमान धातु से यद् शब्द उपपद होने पर क्त्वा, णमुल् प्रत्यय) नहीं (होते, यदि अन्य वाक्य की आकाङ्क्षा न रखने वाला वाक्य अभिधेय हो)।

न — IV. i. 10

(षट्संज्ञक प्रातिपदिकों से तथा स्वस्रादि प्रातिपदिकों से स्त्रीलिङ्ग में विहित प्रत्यय) नहीं होते।

न — IV. i. 22

(अदन्त अपरिमाण, बिस्त, आचित और कम्बल्य अन्त वाले द्विगुसंज्ञक प्रातिपदिकों से तद्धित के लुक् हो जाने पर स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय) नहीं होता।

न — IV. i. 56

(क्रोडादि स्वाङ्गवाची उपसर्जन तथा बह्वच् अदन्त स्वाङ्गवाची उपसर्जन जिनके अन्त में हैं, उन प्रातिपदिकों से स्त्रीलिङ्ग में ङीप्) नहीं होता।

न — IV. i. 176

(क्षत्रियाभिधायी जनपदवाची प्राग्देशीय शब्द तथा भर्गादि, यौधेयादि शब्दों से उत्पन्न जो तद्राजसंज्ञक प्रत्यय, उनका स्त्रीत्व अभिधेय हो तो लुक्) नहीं होता।

न — IV. ii. 112

(प्राच्य भरत गोत्रवाची इञन्त द्व्यच् प्रातिपदिक से अण् प्रत्यय) नहीं होता।

न — IV. iii. 129

(षष्ठीसमर्थ गोत्रवाची प्रातिपदिकों से 'इदम्' अर्थ में दण्डमाणव तथा अन्तेवासी अभिधेय हों तो वुञ् प्रत्यय) नहीं होता।

न — IV. iii. 148

(उकारवान् द्व्च् या द्व्य षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिक से तथा वर्ध्र, बिल्व शब्दों से वेदविषय में मयट् प्रत्यय) नहीं होता।

न — V. i. 120

(यहां से आगे जो भाव प्रत्यय कहे जायेंगे, वे प्रत्यय नञ्पूर्ववाले तत्पुरुष से) नहीं होंगे; (चतुर, संगत, लवण, वट, युध, कत, रस तथा लस शब्दों को छोड़कर)।

...न... — V. ii. 100

देखें — शनेलचः V. ii. 100

न — V. iv. 5

(अर्धवाची शब्द उपपद हो तो क्तान्त प्रातिपदिक से कन् प्रत्यय) नहीं होता।

न — V. iv. 69

(पूजनवाची प्रातिपदिक से समासान्त प्रत्यय) नहीं होते।

न — V. iv. 89

(सङ्ख्या आदि वाले समाहार में वर्तमान तत्पुरुष समास में अहन् शब्द को अह्न आदेश) नहीं होता।

न — V. iv. 155

सञ्ज्ञाविषय में बहुव्रीहि समास में कप् प्रत्यय नहीं होता है।

न — VI. i. 3

(अजादि धातु के द्वितीय एकाच्–समुदाय के संयोग के आदि में स्थित न् द् तथा र् को द्वित्व) नहीं होता।

न — VI. i. 20

(वश् धातु को यङ् प्रत्यय के परे रहते सम्प्रसारण) नहीं होता।

न — VI. i. 37

(सम्प्रसारण के परे रहते सम्प्रसारण) नहीं होता।

न — VI. i. 45

(उपदेश में एजन्त व्येञ् धातु को लिट् लकार के परे रहते आकारादेश) नहीं होता।

न — VI. i. 96

(आम्रेडितसञ्ज्ञक जो अव्यक्तानुकरण का अत् शब्द, उसे इति परे रहते पररूप एकादेश) नहीं होता, (किन्तु आम्रेडित के अन्त्य तकार को विकल्प से पररूप एकादेश होता है, संहिता के विषय में)।

न — VI. i. 100

(अवर्ण से उत्तर इच् प्रत्याहार परे रहते पूर्व, पर के स्थान में पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश) नहीं होता।

न — VI. i. 169

(ऊङ् तथा धातु का जो उदात्त के स्थान में हुआ यण् हल् पूर्व वाला हो तो उससे उत्तर अजादि सर्वनामस्थान- भिन्न विभक्ति को उदात्त) नहीं होता।

न — VI. i. 176

(गो, श्वन्, सु = प्रथमा के एकवचन परे रहते जो अवर्णान्त शब्द, राट्, अङ्, क्रुङ् तथा कृत् से जो कुछ भी स्वरविधान कहा है वह) नहीं होता।

न — VI. ii. 19

(ऐश्वर्यवाची तत्पुरुष समास में पति शब्द उत्तरपद रहते पूर्वपद भू, वाक्, चित् तथा दिधिषू शब्दों को प्रकृतिस्वर) नहीं होता।

न — VI. ii. 91

(भूत, अधिक, संजीव, मद्र, अश्मन्, कज्जल इन पूर्वपदों को अर्म शब्द उत्तरपद रहते आद्युदात्त) नहीं होता।

न — VI. ii. 101

(हास्तिन, फलक तथा मार्देय – इन पूर्वपद शब्दों को पुर शब्द उत्तरपद रहते अन्तोदात्त) नहीं होता।

न — VI. ii. 133

(आचार्य, राजन्, ऋत्विक्, संयुक्त तथा ज्ञाति की आख्या वाले पुत्र उत्तरपद स्थानीय तत्पुरुष समास में आद्युदात्त) नहीं होता।

न — VI. ii. 142

(देवतावाची द्वन्द्व समास में अनुदात्तादि उत्तरपद रहते पृथिवी, रुद्र, पूषन्, मन्थी को छोड़कर एक साथ पूर्व तथा उत्तरपद को प्रकृतिस्वर) नहीं होता।

न — VI. ii. 168

(बहुव्रीहि समास में अव्यय, दिक्शब्द, गो, महत्, स्थूल, मुष्टि, पृथु, वत्स– इनसे उत्तर स्वाङ्गवाची मुख शब्द उत्तरपद को अन्तोदात्त) नहीं होता।

न — VI. ii. 176

(बहु से उत्तर, बहुव्रीहि समास में अवयववाची गुणादिगणपठित शब्दों को अन्तोदात्त) नहीं होता।

न — VI. ii. 181

नि तथा वि उपसर्ग से उत्तर (अन्तः शब्द को अन्तोदात्त) नहीं होता।

न — VI. iii. 18

(इन्नन्त, सिद्ध तथा बध्नाति उत्तरपद रहते भी सप्तमी का अलुक्) नहीं होता।

न– VI. iii. 36

(ककार उपधा वाले स्त्री शब्द को पुंवद्भाव) नहीं होता।

न — VI. iv. 4

(तिसृ, चतसृ अङ्ग को नाम् परे रहते दीर्घ) नहीं होता।

न — VI. iv. 7

नकारान्त अङ्ग की (उपधाको नाम् परे रहते दीर्घ होता है)।

न — VI. iv. 30

(पूजा अर्थ में अञ्चु अङ्ग की उपधा के नकार का लोप) नहीं होता।

न — VI. iv. 39

(क्तिच् प्रत्यय परे रहते अनुदात्तोपदेश, वनति तथा तनोति आदि अङ्गों के अनुनासिक का लोप तथा दीर्घ) नहीं होता है।

न — VI. iv. 69

(घु, मा, स्था, गा, पा, हा तथा सा अङ्गों को ल्यप् परे रहते जो कुछ कहा है, वह) नहीं होता।

न — VI. iv. 74

(लुङ्, लङ् तथा लृङ् परे रहते जो अट्, आट् आगम कहे हैं, वे माङ् के योग में) नहीं होते।

न — VI. iv. 85

(भू तथा सुधी अङ्ग को यणादेश नहीं होता, (अजादि सुप् परे रहते)।

न — VI. iv. 126

(शस्, दद तथा वकार आदि वाली धातुओं के गुणादेश द्वारा निष्पन्न जो अकार, उसके स्थान में एत्त्व तथा अभ्यास लोप) नहीं होता, (कित्, ङित् लिट् एवं थल् परे रहते)।

न — VI. iv. 137

(वकार तथा मकार अन्त में हैं जिसके, ऐसे संयोग से उत्तर, तदन्त भसञ्ज्ञक अन् के अकार का लोप नहीं होता।

न — VI. iv. 170

(अपत्यार्थक अण् के परे रहते वर्मन् शब्द के अन् को छोड़कर जो मकार पूर्ववाला अन्, उसको प्रकृतिभाव) नहीं होता।

न — VII. i. 11

(ककाररहित इदम् तथा अदस् के भिस् को ऐस्) नहीं होता।

न — VIII. i. 26

(इतर शब्द से उत्तर सु तथा अम् के स्थान में वेद-विषय में अद्ड् आदेश) नहीं होता।

न — VII. i. 62

(लिट्-भिन्न इडादि प्रत्यय परे रहते रध आङ्ग को नुम् आगम) नहीं होता।

न — VII. i. 68

(केवल सु तथा दुर् उपसर्गों से उत्तर लभ् धातु को खल् तथा घञ् प्रत्यय परे रहते नुम् आगम) नहीं होता।

न — VIII. i. 78

(अभ्यस्त अङ्ग से उत्तर शतृ को नुम् आगम) नहीं होता।

न — VII. ii. 4

(परस्मैपदपरक इडादि सिच् परे रहते हलन्त अङ्ग को वृद्धि नहीं होती।

न — VII. ii. 8

(वशादि कृत् प्रत्यय परे रहते इट् का आगम) नहीं होता।

न — VII. ii. 39

(वृ तथा ऋकारान्त धातुओं से उत्तर इट् को लिङ् परे रहते दीर्घ) नहीं होता।

न — VII. ii. 59

(वृतु इत्यादि चार धातुओं से उत्तर सकारादि आर्धधातुक को परस्मैपद परे रहते इट् आगम) नहीं होता।

न — VII. iii. 3

(पदान्त यकार तथा वकार से उत्तर ञित्, णित्, कित् तद्धित परे रहते अङ्ग के अचों में (आदि अच् को वृद्धि) नहीं होती, किन्तु उन यकार वकार से पूर्व तो ऐच् = ऐ और औ आगम क्रमशः होते हैं)।

न — VII. iii. 6

(क्रिया के अदल-बदल अर्थ में पूर्व सूत्र से जो कुछ कहा है अर्थात् वृद्धिनिषेध और ऐच् आगम, वह) नहीं होता।

न — VII. iii. 22

(देवता द्वन्द्व में उत्तर पद के रूप में प्रयुक्त इन्द्र शब्द के अचों में आदि अच् को वृद्धि) नहीं होती।

न — VII. iii. 27

(अर्ध शब्द से परे परिमाणवाची शब्द के अचों में आदि अकार को वृद्धि) नहीं होती, (पूर्वपद को तो विकल्प से होती है; ञित्, णित् तथा कित् तद्धित परे रहते)।

न — VII. iii. 34

(उपदेश में उदात्त तथा मकारान्त धातु को चिण् तथा ञित्, णित् कृत् परे रहते वृद्धि) नहीं होती (आङ्पूर्वक चम् धातु को छोड़कर)।

न — VII. iii. 45

(प्रत्यय में स्थित ककार से पूर्व या तथा सा के अकार के स्थान में इकारादेश) नहीं होता।

न — VII. iii. 59

(कवर्ग आदि वाले धातु के चकार तथा जकार के स्थान में कवर्गादेश) नहीं होता।

न — VII. iii. 87

(अभ्यस्तसञ्ज्ञक अङ्ग की लघु उपधा इक् को अजादि पित् सार्वधातुक परे रहते गुण) नहीं होता।

न — VII. iv. 2

(अक् प्रत्याहार के किसी अक्षर का लोप हुआ है जिस अङ्ग में, उसके तथा शासु अनुशिष्टौ एवं ऋदित् अङ्गों की उपधा को चङ्परक णि परे रहते ह्रस्व) नहीं होता।

न — VII. iv. 14

(कप् प्रत्यय परे रहते अण् = अ, इ, उ, ऋ को ह्रस्व) नहीं होता।

न — VII. iv. 35

(पुत्र शब्द को छोड़कर अवर्णान्त अङ्ग को वेद-विषय में क्यच् परे रहते जो कुछ कहा है, वह) नहीं होता।

न — VII. iv. 63

(कुङ् अङ्ग के अभ्यास को यङ् परे रहते चवर्गादेश) नहीं होता।

न — VIII. i. 24

(च, वा, ह, अह, एव – इनके योग में षष्ठ्यन्त, चतुर्थ्यन्त, द्वितीयान्त युष्मद्, अस्मद् शब्दों को पूर्व सूत्रों से प्राप्त वाम् नौ, आदि आदेश) नहीं होते।

न — VIII. i. 29

(पद से उत्तर लुडन्त तिङन्त को अनुदात्त) नहीं होता।

न — VIII. i. 37

(यावत् और यथा से युक्त अव्यवहित तिङन्त को पूजा-विषय में अनुदात्त) नहीं होता, (अर्थात् अनुदात्त ही होता है)।

न — VIII. i. 51

(गति अर्थवाले धातुओं के लोट् लकार से युक्त लृन्त तिङन्त को अननुदात्त नहीं होता, यदि कारक सारा अन्य) न हो तो।

न — VIII. i. 73

(समान अधिकरण वाला आमन्त्रित पद परे हो तो उससे पूर्ववाला आमन्त्रित पद अविद्यमान के समान) न हो।

न — VIII. ii. 3

(ना परे रहते मुभाव असिद्ध) नहीं होता।

न — VIII. ii. 8

(प्रातिपदिक के अन्त का जो नकार, उसका ङि तथा सम्बुद्धि परे रहते लोप) नहीं होता।

न — VIII. ii. 57

(ध्यै, ख्या, पृ, मूर्च्छा, मदी – इन धातुओं के निष्ठा के तकार को नकारादेश) नहीं होता।

न — VIII. ii. 79

(रेफ तथा वकारान्त भसञ्ज्ञक को एवं कुर्, छुर् धातु की उपधा को दीर्घ) नहीं होता।

न — VIII. iii. 110

(रेफ परे है जिससे उसके सकार को तथा सृप्लृ, सृज, स्पृश, स्पृह एवं सवनादिगणपठित शब्दों के सकार को इण् तथा कवर्ग से उत्तर मूर्धन्य आदेश) नहीं होता।

न — VIII. iv. 33

(उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर भा, भू, पूञ्, कमि, गमि, ओप्यायी तथा वेप् – इन धातुओं से विहित कृत्स्थ नकार को अच् से उत्तर णकार आदेश) नहीं होता।

न — VIII. iv. 41

(पदान्त टवर्ग से उत्तर सकार और तवर्ग को षकार और टवर्ग) नहीं होता, (नाम् को छोड़कर)।

न — VIII. iv. 47

(आक्रोश गम्यमान हो तो आदिनी शब्द परे रहते पुत्र शब्द को द्वित्व) नहीं होता।

न — VIII. iv. 66

(उदात्त उदय = परे है जिससे एवं स्वरित उदय = परे है जिससे, ऐसे अनुदात्त को स्वरित आदेश) नहीं होता, (गार्ग्य, काश्यप तथा गालव आचार्यों के मत को छोड़कर)।

नः — I. iv. 15

नकारान्त शब्दरूप (पदसंज्ञक होते हैं; क्यच्, क्यङ् तथा क्यष् परे रहते)।

नः — IV. i. 33

(पति शब्द से यज्ञसंयोग गम्यमान होने पर ङपि प्रत्यय और) नकार अन्तादेश भी हो जाता है।

नः — IV. i. 39

(वर्णवाची अदन्त अनुपसर्जन अनुदात्तान्त तकार उपधावाले प्रातिपदिकों से विकल्प से स्त्रीलिङ्ग में ङपि् प्रत्यय तथा तकार को) नकारादेश हो जाता है।

नः — VI. i. 63

(धातु के आदि में णकार के स्थान में उपदेश अवस्था में) नकार आदेश होता है।

न :— VI. i. 99

('प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' VI. i. 98 सूत्र से किये हुये पूर्वसवर्ण दीर्घ से उत्तर शस् के अवयव सकार को) नकार आदेश होता है, (पुल्लिङ्ग में)।

नः — VI. iv. 144

(भसञ्ज्ञक) नकारान्त अङ्ग के (टि भाग का लोप होता है, तद्धित प्रत्यय परे रहते)।

नः — VII. i. 29

(युष्मद् तथा अस्मद् अङ्ग से उत्तर शस् के स्थान में) नकारादेश होता है।

नः — VII. ii. 64

(मकारान्त धातु पद को) नकारादेश होता है।

नः — VIII. ii. 42

(रेफ तथा दकार से उत्तर निष्ठा के तकार को) नकारादेश होता है (तथा निष्ठा के तकार से पूर्व के दकार को भी नकारादेश होता है)।

नः — VIII. iv. 1

(रेफ तथा षकार से उत्तर) नकार को (णकारादेश होता है, एक ही पद में)।

नः — VIII. iii. 7

(प्रशान् को छोड़कर) नकारान्त पद को (अम्परक छव् प्रत्याहार परे रहते रु होता है, संहिता में)।

नः — VIII. iii. 24

(अपदान्त) नकार को (तथा चकार से मकार को भी झल् परे रहते अनुस्वार आदेश होता है)।

नः — VIII. iii. 27

(नकारपरक हकार परे रहते पदान्त मकार को विकल्प से) नकारादेश होता है।

नः — VIII. iii. 30

नकारान्त पद से उत्तर (भी सकारादि पद को विकल्प से धुट् का आगम होता है)।

नः — VIII. iv. 26

(धातु में स्थित निमित्त से उत्तर तथा उरु एवं षु शब्द से उत्तर) नस् शब्द के (नकार को भी वेद-विषय में णकारादेश होता है)।

...नकुल... — VI. iii. 74

देखें— नभ्राण्नपात्० VI. iii. 74

...नक्तंदिव... — V. iv. 77

देखें— अचतुर० V. iv. 77

...नक्र... — VI. iii. 74

देखें— नभ्राण्नपात्० VI. iii. 74

...नक्षत्र... — VI. iii. 74

देखें — नभ्राण्नपात्० VI. iii. 74

नक्षत्रद्वन्द्वे — I. ii. 63

(तिष्य तथा पुनर्वसु शब्दों के) नक्षत्रविषयक द्वन्द्व समास में (बहुवचन के स्थान में नित्य ही द्विवचन हो जाता है)

नक्षत्रात् — IV. iv. 141

नक्षत्र प्रातिपदिक से (वेद-विषय में घ प्रत्यय होता है)।

नक्षत्रात् — VIII. iii. 100

(गकारभिन्न से परे) नक्षत्रवाची शब्दो से उत्तर (सकार को एकार परे रहते सञ्ज्ञा-विषय में विकल्प से मूर्धन्य आदेश होता है)।

नक्षत्रे — I. ii. 60

(फल्गुनी और प्रोष्ठपद) नक्षत्रविषयक (द्वित्व) अर्थ में (भी बहुत्व विकल्प करके होता है)।

नक्षत्रे — II. iii. 45

नक्षत्रवाची (लुबन्त) शब्द से (तृतीया और सप्तमी विभक्ति होती है)।

नक्षत्रे — III. i. 116

नक्षत्र अभिधेय होने पर (पुष्य और सिद्ध्य शब्द क्रमशः पुष् और सिध् धातुओं से क्यप् प्रत्ययान्त निपातन हैं, अधिकरण कारक में)।

नक्षत्रेण — IV. ii. 3

नक्षत्रविशेषवाची तृतीयासमर्थ प्रातिपदिक से ['उन नक्षत्रों से युक्त काल' कहने में यथाविहित (अण्) प्रत्यय होता है]।

...नक्षत्रेभ्यः — IV. iii. 16

देखें— सन्धिवेलाद्यृतु० IV. iii. 16

नक्षत्रेभ्यः— IV. iii. 37

नक्षत्रवाची प्रातिपदिकों से (जातार्थ में उत्पन्न प्रत्यय का बहुल करके लुक् होता है)।

नख — IV. i. 58

देखें — नखमुखात् IV. i. 58

...नख... — VI. iii. 74

देखें — नभ्राण्नपात्० VI. iii. 74

नखमुखात् — IV. i. 58

नखशब्दान्त तथा मुखशब्दान्त प्रातिपदिकों से (संज्ञा-विषय में स्त्रीलिङ्ग में ङीष् प्रत्यय नहीं होता)

...नखे... — III. ii. 34

देखें — मितनखे III. ii. 34

नगः — VI. iii. 76

(प्राणि-भिन्न अर्थ में वर्तमान) नग शब्द के (नञ् को प्रकृतिभाव विकल्प करके होता है)।

...नगर... — IV. ii. 141

देखें— कन्थापलद० IV. ii. 141

...नगराणाम् — VII. iii. 14

देखें — ग्रामनगराणाम् VII. iii. 14

नगरात् — IV. ii. 127

(निन्दा और नैपुण्य अभिधेय हों तो) नगर प्रातिपदिक से (शैषिक वुञ् प्रत्यय होता है)।

नगरान्ते — VII. iii. 24

(प्राच्य देश में) नगर अन्तवाला अङ्ग, उसके (पूर्वपद तथा उत्तरपद के अचों में आदि अच् को ञित्, णित् तथा कित् तद्धित परे रहते वृद्धि होती है)।

नगरे — VI. i. 150

(कास्तीर तथा अजस्तुन्द शब्दों में सुट् आगम निपातन किया जाता है) नगर अभिधेय हो तो।

नगरे — VI. ii. 89

नगर शब्द उत्तरपद रहते (महत् तथा नव शब्द को छोड़कर पूर्वपद को आद्युदात्त होता है, यदि वह नगर उदीच्य प्रदेश का न हो तो)।

...नग्न... — III. ii. 56

देखें — आढ्यसुभग० III. ii. 56

नङ् — III. iii. 90

(यज, याच, यत, विच्छ, प्रच्छ, तथा रक्ष धातुओं से कर्तृ-भिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में) नङ् प्रत्यय होता है।

नजिङ् — III. ii. 172

स्वप् तथा तृष् धातुओं से तच्छीलादि कर्त्ता हों तो वर्तमानकाल में नजिङ् प्रत्यय होता है।

नञ् — II. ii. 6

'नञ्' इस अव्यय का (सुबन्त के साथ समास होता है और वह तत्पुरुष समास होता है)।

...नञ्... — IV. i. 57

देखें — **सहनञ्विद्यमान० IV. i. 57**

नञ्... — IV. i. 87

देखें — **नञ्स्नञौ IV. i. 87**

नञ्... — V. iv. 121

देखें — **नञ्दुःसुभ्यः V. iv. 121**

नञ्... — VI. ii. 172

देखें — **नञ्सुभ्याम् VI. ii. 172**

नञः — V. iv. 71

नञ् से परे (जो शब्द, तदन्त तत्पुरुष से समासान्त प्रत्यय नहीं होते)।

नञः — VI. ii. 116

नञ् से उत्तर (जर, मर, मित्र, मृत — इन उत्तरपद शब्दों को बहुव्रीहि समास में आद्युदात्त होता है)।

नञः — VI. ii. 154

(गुण के प्रतिषेध अर्थ में वर्त्तमान) नञ् से उत्तर (संपादि, अर्ह, हित, अलम् अर्थ वाले तद्धितप्रत्ययान्त उत्तरपद को अन्तोदात्त होता है)।

नञः — VI. iii. 72

नञ् के (नकार का लोप हो जाता है, उत्तरपद के परे रहते)।

नञः — VII. iii. 30

नञ् से उत्तर (शुचि, ईश्वर, क्षेत्रज्ञ, कुशल, निपुण — इन शब्दों के अचों में आदि अच् को वृद्धि होती है तथा पूर्वपद को विकल्प से होती है; ञित्, णित्, कित् तद्धित परे रहते)।

नञि — III. iii. 112

(क्रोधपूर्वक चिल्लाना गम्यमान हो तो) नञ् उपपद रहते (धातु से स्त्रीलिङ्ग कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में इनि प्रत्यय होता है)।

नञ्दुःसुभ्यः — V. iv. 121

नञ्, दुस् तथा सु शब्दों से उत्तर (जो हलि तथा सक्थि शब्द, तदन्त बहुव्रीहि से समासान्त अच् प्रत्यय विकल्प से होता है)।

नञ्पूर्वाणाम् — VII. iii. 47

(भस्त्रा, एषा, अजा, ज्ञा, द्वा, स्वा — ये शब्द) नञ् पूर्व वाले हों तो (भी, न हों तो भी इनके आकार के स्थान में जो अकार, उसको उदीच्य आचार्यों के मत में इत्त्व नहीं होता)।

नञ्पूर्वात् — V. i. 120

(यहां से आगे जो भाव प्रत्यय कहे जायेंगे, वे प्रत्यय) नञ् पूर्ववाले (तत्पुरुष समासयुक्त प्रातिपदिकों से नहीं होंगे; चतुर, संगत, लवण, वट, युध, कत, रस तथा लस शब्दों को छोड़कर)।

...नञ्भ्याम् — V. ii. 27

देखें — **विनञ्भ्याम् V. ii. 27**

नञ्वत् — VI. ii. 174

(उत्तरपदार्थ के बहुत्व को कहने में वर्तमान बहु शब्द से) नञ् के समान (स्वर होता है)!

नञ्विशिष्टेन — II. i. 59

(अनञ्क्तान्त सुबन्त) नञ्विशिष्ट = जिस शब्द में नञ् ही विशेष हो, अन्य सब प्रकृति प्रत्यय आदि द्वितीय पद के तुल्य हों, (समानाधिकरण क्तान्त सुबन्त) के साथ (विकल्प से समास को प्राप्त होता है और वह तत्पुरुष समास होता है)।

नञ्सुभ्याम् — VI. ii. 172

(बहुव्रीहि समास में) नञ् तथा सु से परे (उत्तरपद को अन्तोदात्त होता है)।

नञ्स्नञौ — IV. i. 87

('धान्यानां भवने०' V. ii. 1 तक जिन अर्थों में प्रत्यय कहे हैं, उन सब अर्थों में स्त्री तथा पुंस शब्दों से यथासङ्ख्य करके) नञ् तथा स्नञ् प्रत्यय होते हैं।

...नटसूत्रयोः — IV. iii. 110

देखें — **भिक्षुनटसूत्रयोः IV. iii. 110**

...नटात् — IV. iii. 128

देखें — **छन्दोगौक्थिक० IV. iii. 128**

... नड... — IV. ii. 86
देखें — कुमुदनड० IV. ii. 86

नड... — IV. ii. 87
देखें — नडशादात् IV. ii. 87

नडशादात् — IV. ii. 87
नड, शाद शब्दों से (चातुरर्थिक ड्वलच् प्रत्यय होता है)।
नड = एक प्रकार की लम्बी जलीय घास
शाद = छोटी घास, कीचड़।

नडादिभ्यः — IV. ii. 99
नडादि षष्ठ्यन्त प्रातिपदिकों से (गोत्रापत्य में फक् प्रत्यय होता हैं)।

नडादीनाम् — IV. ii. 90
नडादि शब्दों को (चातुरर्शिक छ प्रत्यय तथा कुक् का आगम होता है)।

नते — V. ii. 31
(अव उपसर्ग प्रातिपदिक से नासिका-सम्बन्धी) झुकाव को कहना हो तो (सञ्ज्ञाविषय में टीटच्, नाटच् तथा भ्रटच् प्रत्यय होते हैं)।

...नद... — III. iii. 64
देखें — गदनद० III. iii. 64

...नद... — VIII. iv. 17
देखें — गदनद० VIII. iv. 17

नदी — I. iv. 3
(ईकारान्त तथा ऊकारान्त स्त्रीलिङ्ग को कहने वाले शब्द) नदीसञ्ज्ञक होते हैं।

नदी — II. iv. 7
(भिन्न लिङ्ग वाले) नदीवाचकों का (ग्रामवर्जित देशवाची शब्दों का द्वन्द्व एकवद् होता है)।

नदी... — IV. i. 113
देखें — नदीमानुषीभ्यः IV. i. 113

नदी... — V. iv. 110
देखें — नदीपौर्णमास्या० V. iv. 110

नदी... — V. iv. 153
देखें — नद्यृतः V. iv. 153

नदी... — VI. i. 167
देखें — नद्यजादी VI. i. 167

नदी — VI. ii. 109
(बहुव्रीहि समास में बन्धु शब्द उत्तरपद रहते) नद्यन्त पूर्वपद को (अन्तोदात्त होता है)।

...नदी... — VII. i. 54
देखें — ह्रस्वनद्यापः VII. i. 54

नदी... — VII. iii. 116
देखें — नद्याम्नीभ्यः VII. iii. 116

नदीपौर्णमास्याग्रहायणीभ्यः — V. iv. 110
(अव्ययीभाव समास में वर्त्तमान) नदी, पौर्णमासी तथा आग्रहायणी शब्दान्त पदों से टच् प्रत्यय होता है)।

नदीभिः — II. i. 19
नदीसंज्ञक (समर्थ सुबन्तों) के साथ (भी संख्यावाची सुबन्तों का विकल्प से समास होता हैं और वह अव्ययीभाव समास होता हैं)।
प्रकृत सूत्र में 'यू स्त्र्याख्यौ नदी' से विहित शास्त्रीय नदी संज्ञा का ग्रहण नहीं है।

...नदीभ्याम् — IV. iv. 111
देखें — पाथोनदीभ्याम् IV. iv. 111

...नदीभ्याम् — VIII. iii. 89
देखें — निनदीभ्याम् VIII. iii. 89

नदीमानुषीभ्यः — IV. i. 113
(जिनकी वृद्धसंज्ञा न हो ऐसे) नदी तथा मानुषी अर्थ वाले (नदी, मानुषी नाम वाले) प्रातिपदिकों से (अपत्य अर्थ में अण् प्रत्यय होता है)।

नदे — III. i. 115
नद अभिधेय हो तो (कर्त्ता में भिद्य और उद्ध्य शब्द क्यप् प्रत्ययान्त निपातन किये जाते हैं)।

नद्यजादी — VI. i. 167
(नुम्-रहित अन्तोदात्त शतृ-प्रत्ययान्त शब्द से परे) नदीसञ्ज्ञक प्रत्यय तथा अजादि (सर्वनामस्थानभिन्न विभक्ति को उदात्त होता है)।

नद्याः — VI. iii. 43

नदीसञ्ज्ञक (पूर्वसूत्र से शेष) शब्दों को (विकल्प करके ह्रस्व हो जाता है घ, रूप, कल्प, चेलट्, ब्रुव, गोत्र, मत तथा हत शब्दों के परे रहते)।

नद्याः — VII. iii. 112

नदीसञ्ज्ञक अङ्ग से उत्तर (ङित् प्रत्यय को आट् आगम होता है)।

नद्यादिभ्यः — IV. ii. 96

नदी आदि प्रातिपदिकों से (शैषिक ठक् प्रत्यय होता है)।

नद्याम् — IV. ii. 84

(ङ्यन्त, आबन्त प्रातिपदिक से) नदी अभिधेय हो (तो चातुरर्थिक मतुप् प्रत्यय होता है)।

नद्याम्नीभ्यः — VII. iii. 116

नदीसञ्ज्ञक, आबन्त तथा नी से उत्तर (ङि विभक्ति के स्थान में आम् आदेश होता है)।

नद्यृतः — V. iv. 153

(बहुव्रीहि समास में) नदीसञ्ज्ञक तथा ऋकारान्त शब्दों से (भी समासान्त कप् प्रत्यय होता है)।

...नद्योः — VII. i. 79

देखें — शीनद्योः VII. i. 79

...नद्योः — VII. iii. 107

देखें — अम्बार्थनद्योः VII. iii. 107

नन् — III. iii. 91

('ञिष्वप् शये' धातु से भाव में) नन् प्रत्यय होता है।

ननु — VIII. i. 43

(अनुज्ञैषणा विषय में) ननु इस शब्द से युक्त (तिङन्त को अनुदात्त नहीं होता)।

अनुज्ञैषणा = अनुमति की कामना।

ननौ — III. ii. 120

(पृष्टप्रतिवचन अर्थात् पूछे जाने पर जो उत्तर दिया जाये, इस अर्थ में धातु से) ननु शब्द उपपद रहते (सामान्य भूतकाल में लट् प्रत्यय होता है)।

नन्दि–III. i. 134

देखें — नन्दिग्रहि० III. i. 134

नन्दिग्रहिपचादिभ्यः — III. i. 134

नन्द्यादि, ग्रह्यादि तथा पचादि धातुओं से (यथासंख्य करके ल्यु, णिनि तथा अच् प्रत्यय होते हैं)।

नन्वोः — III. ii. 121

(पृष्टप्रतिवचन अर्थ में धातु से) न तथा नु उपपद रहते (सामान्य भूतकाल में विकल्प से लट् प्रत्यय होता है)।

पृष्टप्रतिवचन = पूछेजाने पर प्रतिकथन = उत्तर देना।

नपरे — VIII. iii. 27

नकारपरक (ककार) के परे रहते (पदान्त मकार को विकल्प से नकारादेश होता है)।

...नपात्... — VI. iii. 74

देखें — नभ्राण्णपात्० VI. iii. 74

...नपुंसक... — VI. iii. 74

देखें — नभ्राण्णपात्० VI. iii. 74

नपुंसकम् — I. ii. 69

(समानप्रकृतिवाले नपुंसक तथा अनपुंसक शब्दों का सहप्रयोग होने पर) नपुंसक शब्द (ही अवशिष्ट रहता है और विकल्प से उसका प्रयोग भी एकवचन में होता है)।

नपुंसकम् — II. ii. 2

नपुंसकलिङ्ग में वर्तमान (अर्ध शब्द एकाधिकरणवाची एकदेशी सुबन्त के साथ विकल्प से समास को प्राप्त होता है और वह तत्पुरुष समास होता है)।

नपुंसकम् — II. iv. 17

(जिसको पूर्व में एकवद्भाव कहा है, वह) नपुंसकलिङ्ग वाला होता है।

नपुंसकम् — II. iv. 30

(अपथ शब्द) नपुंसकलिङ्ग वाला होता है।

नपुंसकस्य — VII. i. 72

(झलन्त तथा अजन्त) नपुंसकलिङ्ग वाले अङ्ग को (सर्वनामस्थान विभक्ति परे रहते नुम् आगम होता है)।

नपुंसकस्य — VII. i. 79

(अभ्यस्त अङ्ग से उत्तर जो शतृ प्रत्यय, तदन्त) नपुंसक शब्द को (विकल्प से नुम् आगम होता है)।

नपुंसकात् — V. iv. 103

नपुंसकलिङ्ग में वर्तमान (अन्नन्त तथा असन्त तत्पुरुष) से (समासान्त टच् प्रत्यय होता है, वेदविषय में)।

नपुंसकात् — V. iv. 109

नपुंसकलिङ्ग में वर्तमान (अन्नन्त अव्ययीभाव) से (समासान्त टच् प्रत्यय विकल्प से होता है)।

नपुंसकात् — VII. i. 19

नपुंसक अङ्ग से उत्तर (भी औङ् = औ तथा औट् के स्थान में शी आदेश होता है)।

नपुंसकात् — VII. i. 23

नपुंसकलिङ्ग वाले अङ्ग से उत्तर (सु और अम् का लुक् होता है)।

नपुंसके — I. ii. 46

नपुंसकलिङ्ग में वर्तमान (प्रातिपदिक को ह्रस्व हो जाता है)।

नपुंसके — III. iii. 114

नपुंसकलिङ्ग (भाव) में (धातुमात्र से क्त प्रत्यय होता है)।

नपुंसके — VI. ii. 98

नपुंसकलिङ्ग वाले समास में (सभा शब्द उत्तरपद रहते पूर्वपद को अन्तोदात्त होता है)।

नपुंसके — VI. ii. 123

नपुंसकलिङ्ग (शालाशब्दान्त तत्पुरुष समास) में (उत्तरपद को आद्युदात्त होता है)।

नपुंसके — VII. ii. 14

नपुंसकवाची (तत्पुरुष समास) में (मात्रा, उपज्ञा, उपक्रम तथा छाया शब्द उत्तरपद हों तो पूर्वपद को प्रकृतिस्वर होता है)।

...नप्तृ... — VI. iv. 11

देखें — **अप्तृन्तृच्०** VI. iv. 11

नभ्राट्... — VI. iii. 74

देखें — **नभ्राण्नपान्०** VI. iii. 74

नभ्राण्नपान्नवेदानासत्यानमुचिनकुलनखनपुंसकनक्षत्रनक्रनाकेषु — VI. iii. 74

नभ्राट्, नपात्, नवेदा, नासत्या, नमुचि, नकुल, नख, नपुंसक, नक्षत्र, नक्र, नाक– इन शब्दों में (जो नञ्, उसे प्रकृतिभाव हो जाता है।)

...नम... — VII. ii. 73

देखें — **यमरमनमाताम्०** VII. ii. 73

नमः... — II. iii. 16

देखें — **नमःस्वस्तिस्वाहा०** II. iii. 16

नमस्... — III. i. 19

देखें — **नमोवरिवश्चित्रङः** III. i. 19

नमस्... — VIII. iii. 40

देखें — **नमस्पुरसोः** VIII. iii. 40

नमस्पुरसोः — VIII. iii. 40

(गतिसञ्ज्ञक) नमस् तथा पुरस् शब्दों के (विसर्जनीय को सकारादेश होता है; कवर्ग, पवर्ग परे रहते)।

नमःस्वस्तिस्वाहास्वधालंवषड्योगात् — II. iii. 16

नमः, स्वस्ति, स्वाहा, स्वधा, अलम्, वषट्— इन शब्दों के योग में (भी चतुर्थी विभक्ति होती है)।

...नमाम् — III. i. 89

देखें — **दुहस्नुनमाम्** III. i. 89

नमि... — III. ii. 167

देखें — **नमिकम्पि०** III. ii. 167

नमिकम्पिस्म्यजसकमहिंसदीपः — III. ii. 167

णम, कपि, ष्मिङ्, नञ्पूर्वक जसु, कमु, हिंसि, दीपी — इन धातुओं से (वर्तमानकाल में तच्छीलादि कर्ता हो तो र प्रत्यय होता है)।

...नमुचि... — VI. iii. 74

देखें — **नभ्राण्नपान्०** VI. iii. 74

नमोवरिवश्चित्रङः — III. i. 19

नमस्, वरिवस्, चित्रङ्— इन (कर्मों) से ('करोति' अर्थ में क्यच् प्रत्यय होता है)।

नरे — VI. iii. 127

नर शब्द उत्तरपद रहते (सञ्ज्ञा-विषय में विश्व शब्द को दीर्घ होता है)।

नलोपः — V. i. 124

(षष्ठीसमर्थ स्तेन प्रातिपदिक से भाव तथा कर्म अर्थ में यत् प्रत्यय होता है तथा) स्तेन शब्द के न का लोप भी हो जाता है)।

नलोपः — VI. iii. 72

(नञ् के) नकार का लोप हो जाता है, (उत्तरपद के परे रहते)।

नलोपः — VI. iv. 23

(श्न से उत्तर) नकार का लोप हो जाता है)।

नलोपः — VIII. ii. 2

(सुब्विधि, स्वरविधि, सञ्ज्ञाविधि एवं कृत् विषयक तुक् की विधि करने में) नकार का लोप (असिद्ध होता है)।

नलोपः — VIII. ii. 7

(प्रातिपदिक पद के अन्त के) नकार का लोप होता है)।

...नव... — II. i. 48

देखें — **पूर्वकालैकसर्वजरत्०** **II. i. 48**

...नवति... — V. i. 58

देखें — **पंक्तिविंशति०** **V. i. 58**

नवभ्यः — VII. i. 16

(पूर्व है आदि में जिनके, ऐसे गणपठित) नौ (सर्वनामों) से उत्तर (ङसि तथा ङि के स्थान में क्रमशः स्मात् तथा स्मिन् आदेश विकल्प से होते हैं)।

...नवम् — VI. ii. 89

देखें — **अमहन्नवम्** **VI. ii. 89**

...नवेदा... — VI. iii. 74

देखें — **नभ्राण्नपात्०** **VI. iii. 74**

...नश... — I. iii. 86

देखें — **बुधयुधनशजनेङ्०** **I. iii. 86**

...नश... — III. ii. 163

देखें — **इण्नश०** **III. ii. 163**

...नशाम् — VI. iv. 32

देखें — **जान्तनशाम्** **VI. iv. 32**

नशि... — III. iv. 43

देखें — **नशिवहोः — III. iv. 43**

नशिवहोः — III. iv. 43

(कर्त्तावाची जीव तथा पुरुष शब्द उपपद हों तो यथासङ्ख्य करके) नश तथा वह धातुओं से (णमुल् प्रत्यय होता है)।

नशेः — VIII. ii. 63

नश् पद को (विकल्प से कवर्गादेश होता है)।

नशेः — VIII. iv. 35

(षकारान्त) नश् धातु के (नकार को णकारादेश नहीं होता)।

...नशोः — VII. i. 60

देखें — **मस्जिनशोः** **VII. i. 60**

नस् — VI. i. 61

वेदविषय में नासिका शब्द के स्थान में नस् आदेश हो जाता है, शस् प्रकार वाले प्रत्ययों के परे रहते)।

नसत्त... — VIII. ii. 61

देखें — **नसत्तनिषत्ता०** **VIII. ii. 61**

नसत्तनिषत्तानुत्तप्रतूर्त्तसूर्त्तगूर्तानि — VIII. ii. 61

नसत्त, निषत्त, अनुत्त, प्रतूर्त्त, सूर्त्त, गूर्त — ये शब्द (वेद-विषय) में निपातन किये जाते हैं)।

नसम् — V. iv. 118

(नासिकाशब्दान्त बहुव्रीहि से समासान्त अच् प्रत्यय होता है, सञ्ज्ञाविषय में तथा नासिका शब्द के स्थान में) नस देश (भी) हो जाता है, (यदि वह नासिका शब्द स्थूल शब्द से उत्तर न हो तो)।

नसह — V. ii. 27

(वि तथा नञ् प्रातिपदिकों से) "पृथग्भाव" अर्थ में (यथासङ्ख्य करके ना तथा नाञ् प्रत्यय होते हैं)।

..नसौ — VIII. i. 21

देखें — **वस्नसौ** **VIII. i. 21**

नह — VIII. i. 31

नह से युक्त (तिङन्त को प्रत्यारम्भ = पुनरारम्भ होने पर अनुदात्त नहीं होता)।

...नहः — III. ii. 182

देखें — **दाम्नी०** **III. ii. 182**

नहः — VIII. ii. 34

'णह बन्धने' धातु के (हकार को धकारादेश होता है, झल् परे रहते या पदान्त में)।

नहि... — VI. iii. 115

देखें — नहिवृति॰ VI. iii. 115

नहिवृतिवृषिव्यधिरुचिसहितनिषु — VI. iii. 115

नहि, वृति, वृषि, व्यधि, रुचि, सहि, तनि— इन (क्विप्-प्रत्ययान्त) शब्दों के उत्तरपद रहते (पूर्व अण् को दीर्घ हो जाता है)।

ना...— III. iv. 62

देखें — नाधार्थप्रत्यये III. iv. 62

ना...— V. ii. 27

देखें — नानाञौ V. ii. 27

ना — VII. iii. 119

(घिसञ्ज्ञक अङ्ग से उत्तर आङ् = टा के स्थान में) ना आदेश होता है, (स्त्रीलिङ्ग वाले शब्द को छोड़कर)।

...नाकेषु — VI. iii. 74

देखें — नभ्राणनपान्० VI. iii. 74

...नाग...— II. i. 61

देखें — वृन्दारकनाग॰ II. i. 61

...नाग... — IV. i. 42

देखें — जानपदकुण्ड॰ IV. i. 42

...नाञौ — V. ii. 27

देखें — नानाञौ V. ii. 27

...नाट... — II. iii. 56

देखें — जासिनिप्रह॰ II. iii. 56

...नाटच्... — V. ii. 31

देखें — टीटञ्नाटच्॰ V. ii. 31

नाडी... — III. ii. 30

देखें — नाडीमुष्ट्योः III. ii. 30

नाडी... — V. iv. 159

देखें — नाडीतन्त्र्योः V. iv. 159

नाडीतन्त्र्योः — V. iv. 159

('स्वाङ्ग' में वर्त्तमान) नाडी शब्दान्त तथा तन्त्री- शब्दान्त (बहुव्रीहि) से (समासान्त कप् प्रत्यय नहीं होता है)।

नाडीमुष्ट्योः — III. ii. 30

नाडी और मुष्टि (कर्म) उपपद रहते (भी ध्मा तथा धेट् धातुओं से खश् प्रत्यय होता है)।

नात् — VIII. ii. 17

नकारान्त शब्द से उत्तर (घसञ्ज्ञक को वेद-विषय में नुट् आगम होता है)।

नाथः — II. iii. 55

(आशीर्वादार्थक) 'नाथृ' धातु के (कर्म कारक में शेष की विवक्षा होने पर षष्ठी विभक्ति होती है)।

...नाथयोः — III. ii. 25

देखें — दृतिनाथयोः III. ii. 25

...नादिभ्यः — IV. i. 170

देखें — कुरुनादिभ्यः IV. i. 170

नाधार्थप्रत्यये — III. iv. 62

(च्व्यर्थ में वर्तमान) 'ना' प्रत्यय 'धा' प्रत्यय अथवा इसके समानार्थक प्रत्ययान्त शब्द उपपद हों तो (कृ, भू धातुओं से क्त्वा और णमुल् प्रत्यय होते हैं)।

नानाञौ — V. ii. 27

(वि तथा नञ् प्रातिपदिकों से 'पृथग् भाव' अर्थ में यथासङ्ख्य करके) ना तथा नाञ् प्रत्यय होते हैं।

...नानाभिः — II. iii. 32

देखें — पृथग्विनानानाभिः II. iii. 32

नान्तात् — V. ii. 49

(सङ्ख्या आदि में न हो जिसके, ऐसे सङ्ख्यावाची षष्ठीसमर्थ) नकारान्त प्रातिपदिक से ('पूरण' अर्थ में विहित डट् प्रत्यय को मट् का आगम होता है)।

...नान्दी... — III. ii. 21

देखें — दिवविभा॰ III. ii. 21

नान्दी = सन्तोष, प्रसन्नता, नाटक के आदि में मङ्गलाचरण।

...नाभि... — VI. iii. 84

देखें — ज्योतिर्जनपद॰ VI. iii. 84

नाम् — VI. i. 171

(मतुप् प्रत्यय के परे रहते ह्रस्वान्त अन्तोदात्त शब्द से उत्तर) नाम् (विकल्प से उदात्त होता है)।

नामि — VI. iv. 3

नाम् परे रहते (अङ्ग को दीर्घ हो जाता है)।

नाम्नि — III. iv. 58

(द्वितीयान्त) नाम शब्द उपपद रहते (आङ् पूर्वक दिश् तथा ग्रह् धातु से णमुल् प्रत्यय होता है)।

नावः — V. iv. 99

नौ शब्द अन्तवाले (द्विगुसञ्ज्ञक तत्पुरुष) से (समासान्त टच् प्रत्यय होता है)।

नासिकायाः — V. ii. 31

(अव प्रातिपदिक से) नासिकासम्बन्धी (झुकाव को कहना हो तो सञ्ज्ञाविषय में टीटच्, नाटच् तथा भ्रटच् प्रत्यय होते हैं)।

नासिकायाः — V. iv. 118

नासिकाशब्दान्त (बहुव्रीहि) से (समासान्त अच् प्रत्यय होता है, सञ्ज्ञाविषय में तथा नासिका शब्द के स्थान में नस आदेश भी हो जाता है, यदि वह नासिका शब्द स्थूल शब्द से उत्तर न हो तो)।

नासिकास्तनयोः — III. ii. 29

नासिका तथा स्तन (कर्म) उपपद रहते (ध्मा तथा धेट् धातुओं से खश् प्रत्यय होता है)।

नासिकोदरौष्ठजङ्घादन्तकर्णशृङ्गात्— IV. i. 55

नासिका, उदर इत्यादि (जो स्वाङ्गवाची उपसर्जन, तदन्त) प्रातिपदिकों से (भी स्त्रीलिङ्ग में विकल्प से ङीष् प्रत्यय होता है, पक्ष में टाप्)।

निः — III. iv. 89

(लोडादेश जो मिप्, उसके स्थान में) नि आदेश हो जाता है।

निकटे — IV. iv. 73

(सप्तमीसमर्थ) निकट प्रातिपदिक से ('बसता है' अर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

...निकाययोः — VI. ii. 94

देखें — गिरिनिकाययोः VI. ii. 94

...निकाय्य... — III. i. 129

देखें— पाय्यसान्नाय्य० III. i. 129

...निक्ष... — VIII. iv. 32

देखें — निंसनिक्षनिन्दाम् VIII. iv. 32

निक्ष = चुम्बन।

...निगमाः — III. iii. 119

देखें — गोचरसञ्चर० III. iii. 119

निगमे — VI. iii. 112

(साढ्यै, साढ्वा तथा साढा - ये शब्द) वेद में (निपातन किये जाते हैं)।

निगमे — VI. iv. 9

वेद-विषय में (नकारान्त अङ्ग के उपधाभूत षकार है पूर्व में जिससे, ऐसे अच् को सम्बुद्धि-भिन्न सर्वनामस्थान के परे रहते विकल्प से दीर्घ होता है)।

निगमे — III. ii. 64

(बभूथ, आततन्थ, जगृभ्म, ववर्थ - ये शब्द थल् परे रहते निपातन किये जाते हैं) वेद-विषय में।

निगमे — VII. iii. 81

('मीञ् हिंसायाम्' अङ्ग को शित् प्रत्यय परे रहते) वेद-विषय में (ह्रस्व होता है)।

निगमे — VII. iv. 74

(ससूव - यह शब्द) वेदविषय में (निपातन किया जाता है)।

निगरण... — I. iii. 87

देखें — निगरणचलनार्थेभ्यः I. iii. 87

निगरण = खाना, निगलना।

निगरणचलनार्थेभ्यः — I. iii. 86

निगलने अर्थ वाले एवं चलन अर्थ वाले (ण्यन्त) धातुओं से (भी परस्मैपद होता है)।

निगृह्य — VIII. ii. 94

निग्रह करने के पश्चात् (अनुयोग में वर्त्तमान जो वाक्य, उसकी टि को भी विकल्प से प्लुत होता है)।

निघः — III. iii. 87

(सब प्रकार से बराबर (निमित्त) अभिधेय हो तो) नि पूर्वक हन् धातु से अप् प्रत्यय टि भाग का लोप तथा घन आदेश निपातन करके निघ शब्द सिद्ध करते हैं।

निघ = समारोह, परिणाह।

निङ् — V. iv. 134

(जायाशब्दान्त बहुव्रीहि को समासान्त) निङ् आदेश होता है।

निजाम् — VII. iv. 75

णिजिर् इत्यादि (तीन) धातुओं के (अभ्यास को श्लु होने पर गुण होता है)।

निति — VI. ii. 50

(तुन् को छोड़कर तकारादि एवं) नकार इत्सञ्ज्ञक (कृत्) के परे रहते (भी अव्यवहित पूर्वपद गति संज्ञक को प्रकृतिस्वर होता है)।

नित्य... — VIII. i. 4

देखें — नित्यवीप्सयोः VIII. i. 4

नित्यम् — I. ii. 63

(तिष्य तथा पुनर्वसु शब्दों के नक्षत्रविषयक द्वन्द्वसमास में बहुवचन के स्थान में) नित्य ही (द्विवचन हो जाता है)।

नित्यम् — I. ii. 72

(त्यदादि शब्दरूप सबके साथ अर्थात् त्यदादियों के साथ या त्यदादि से अन्यों के साथ भी) नित्य ही (शेष रह जाते हैं, अन्य हट जाते हैं)।

नित्यम् — I. iv. 76

(हस्ते तथा पाणौ शब्द की विवाह-विषय में कृञ् के योग में) नित्य ही (गति और निपात संज्ञा होती है)।

नित्यम् — II. ii. 17

(क्रीडा और जीविका अर्थ में षष्ठ्यन्त सुबन्त अक् अन्तवाले सुबन्त के साथ) नित्य ही (समास को प्राप्त होता है और वह तत्पुरुष समास होता है)।

नित्यम् — III. i. 23

नित्य ही (गति अर्थ वाली धातुओं से कुटिलता गम्यमान होने पर 'यङ्' प्रत्यय होता है)।

'विशेषः 'नित्यम्' का ग्रहण विषय के नियम के लिये है कि गत्यर्थकों से नित्य ही कुटिल अर्थ में होवे, क्रिया के समभिहार में नहीं।

नित्यम् — III. iii. 66

(परिमाण गम्यमान होने पर पण् धातु से) नित्य ही (कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में विकल्प से अप् प्रत्यय होता है, पक्ष में घञ्)।

नित्यम् — III. iv. 99

(ङित् लकार-सम्बन्धी उत्तम पुरुष के सकार का) नित्य (लोप हो जाता है)।

नित्यम् — IV. i. 29

(अन्नन्त उपधालोपी बहुव्रीहि समास में संज्ञा तथा छन्द विषय में) नित्य ही (स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय होता है)।

नित्यम् — IV. i. 35

(सपत्न्यादियों में जो पति शब्द, उसको ङीप् प्रत्यय तथा नकारादेश स्त्रीलिङ्ग में) नित्य ही हो जाता है।

नित्यम् — IV. i. 46

(बह्वादि अनुपसर्जन प्रातिपदिकों से वेद-विषय में) नित्य ही (स्त्रीलिङ्ग में ङीष् प्रत्यय होता है)।

नित्यम् – IV iii. 142

(भक्ष्य और आच्छादनवर्जित विकार और अवयव अर्थों में षष्ठीसमर्थ वृद्धसंज्ञक तथा शरादि प्रातिपदिकों से लौकिक प्रयोगविषय में) नित्य ही (मयट् प्रत्यय होता है।

नित्यम् — IV. iv. 20

(तृतीयासमर्थ क्त्रिप्रत्ययान्त प्रातिपदिक से निर्वृत्त अर्थ में) नित्य ही (मप् प्रत्यय होता है)।

नित्यम् — V. i. 63

(द्वितीयासमर्थ छेदादि प्रातिपदिकों से) 'नित्य ही समर्थ है' (अर्थ में यथाविहित ठक् प्रत्यय होता है)।

नित्यम् — V. i. 75

(द्वितीयासमर्थ पथिन् प्रातिपदिक से) 'नित्य ही (जाता है') अर्थ में (ण प्रत्यय होता है तथा उस प्रत्यय के सन्नि-योग से पथिन् को पन्थ आदेश हो जाता है)।

नित्यम् — V. i. 88

(चित्तवान् = चेतन प्रत्ययार्थ अभिधेय होने पर द्विती-यासमर्थ वर्षशब्दान्त द्विगुसञ्ज्ञक प्रातिपदिकों से 'सत्का-रपूर्वक व्यापार' 'खरीदा हुआ' 'हो चुका' तथा 'होने वाला' – इन अर्थों में उत्पन्न प्रत्यय का) नित्य ही (लुक् होता है)।

नित्यम् — V. ii. 44

(प्रथमासमर्थ उभ प्रातिपदिक से उत्तर षष्ठ्यर्थ में) नित्य ही (तयप् के स्थान में अयच् आदेश होता है और वह अयच् आद्युदात्त होता है)।

नित्यम् — V. ii. 57

(षष्ठीसमर्थ शतादि प्रातिपदिकों से तथा मास, अर्द्धमास और संवत्सर प्रातिपदिकों से 'पूरण' अर्थ में विहित डट् प्रत्यय को तमट् का आगम) नित्य ही हो जाता है।

नित्यम् — V. ii. 118

(एक शब्द जिसके पूर्व में हो तथा गो शब्द जिसके पूर्व में हो, ऐसे प्रातिपदिक से 'मत्वर्थ' में) नित्य ही (ठञ् प्रत्यय होता है)।

नित्यम् — V. iv. 122

(नञ्, दुस् तथा सु शब्दों से उत्तर जो प्रजा और मेधा शब्द, तदन्त बहुव्रीहि से) नित्य ही (समासान्त असिच् प्रत्यय होता है)।

नित्यम् — VI. i. 56

(हेतु जहाँ भय का कारण हो, उस अर्थ में वर्त्तमान ञिभी धातु के एच् के स्थान में णिच् परे रहते) नित्य ही (आत्व हो जाता है)।

नित्यम् — VI. i. 121

(प्लुत तथा प्रगृह्य-सञ्ज्ञक शब्द अच् परे रहते) नित्य ही (प्रकृतिभाव से रहते है)।

नित्यम् — VI. i. 191

(ञकार इत्सञ्ज्ञक तथा नकार इत्संज्ञक प्रत्ययों के परे रहते) नित्य ही (आदि को उदात्त होता है)।

नित्यम् — VI. i. 204

(जुष्ट तथा अर्पित शब्दों को मन्त्रविषय में) नित्य ही (आद्युदात्त होता है)।

नित्यम् — VI. iv. 108

(वकारादि, मकारादि प्रत्यय परे रहते कृ अङ्ग से उत्तर उकार प्रत्यय का) नित्य ही (लोप हो जाता है)।

नित्यम् — VII. i. 81

(शप् तथा श्यन् का जो शतृ प्रत्यय, उसको) नित्य ही (नुम् का आगम होता है)।

नित्यम् — VII. ii. 61

(उपदेश में जो अजन्त धातु, तास् के परे रहते) नित्य (अनिट्,उससे उत्तर तास् के समान ही थल् को इट् आगम नहीं होता)।

नित्यम् — VII. iv. 8

(वेद-विषय में चङ्परक णि परे रहते उपधा ऋवर्ण के स्थान में) नित्य ही (ऋकारादेश होता है)।

नित्यम् — VIII. i. 66

(यत् शब्द से घटित पद से उत्तर तिङन्त को) नित्य ही (अनुदात्त नहीं होता।

नित्यम् — VIII. iii. 3

(अट् परे रहते रु से पूर्व आकार को) नित्य ही (अनुनासिक आदेश होता है)।

नित्यम् — VIII. iii. 32

(ह्रस्व पद से उत्तर जो ङम्, तदन्त पद से उत्तर अच् को) नित्य ही (ङमुट् आगम होता है)।

नित्यम् — VIII. iii. 45

(अनुत्तरपदस्थ इस्,उस् के विसर्जनीय को समासविषय में) नित्य ही (षत्व होता है,कवर्ग अथवा पवर्ग परे रहते)।

नित्यम् — VIII. iii. 77

(वि उपसर्ग से उत्तर स्कन्भु धातु के सकार को) नित्य ही (मूर्धन्यादेश होता है)।

नित्यवीप्सयोः — VIII. i. 4

नित्यता एवं वीप्सा अर्थ में (जो शब्द,उस सम्पूर्ण शब्द को द्वित्व होता है)।

वीप्सा = परिव्याप्ति, निरन्तरता प्रकट करने के लिये द्विरुक्ति।

नित्याबह्वच् — VI. ii. 138

(शिति शब्द से उत्तर) नित्य ही जो अबह्वच् उत्तरपद, उसको बहुव्रीहि समास में प्रकृतिस्वर होता है, भसत् शब्द को छोड़कर)।

नित्यार्थे — VI. ii. 61

(क्तान्त उएत्तरपद रहते) नित्य अर्थ है जिसका, ऐसे समास में (विकल्प से पूर्वपद को प्रकृतिस्वर होता है)।

...निद्रा... — III. ii. 158

देखें — **स्पृहिगृहि० III. ii. 158**

निन्द... — III. ii. 146

देखें — **निन्दहिंस० III. ii. 146**

...निति — VI. i. 191

देखें — **ञ्निति VI. i. 191**

निन्दहिंसक्लिशखादविनाशपरिक्षिपपरिरटपरिवादिव्याभषासूयः — III. ii. 146

णिदि कुत्सायाम्, हिसि हिंसायाम्, क्लिशू विबाधने, खाद् भक्षणे,विपूर्वक ण्यन्त णश अदर्शने,परिपूर्वक क्षिप, परिपूर्वक रट, परिपूर्वक ण्यन्त वद, वि आङ् पूर्वक भाष व्यक्तायां वाचि, असूय् — इन धातुओं से (तच्छीलादि कर्त्ता हों तो वर्तमानकाल में वुञ् प्रत्यय होता है)।

निनदीभ्याम् — VIII. iii. 89

नि तथा नदी शब्द से उत्तर ('ष्णा शौचे' धातु के सकार को कुशलता गम्यमान हो तो मूर्धन्य आदेश होता है)।

...निन्दाम् — VIII. iv. 32

देखें — **निंसनिक्षनिन्दाम् VIII. iv. 32**

...निपत... — III. iii. 99

देखें — **समज० III. iii. 99**

निपातस्य — VI. iii. 135

(ऋचा विषय में) निपात को (भी दीर्घ हो जाता है)।

निपातः — I. i. 14

(केवल जो एक ही अच्) निपात (है,उसकी प्रगृह्य संज्ञा होती है, आङ् को छोड़कर)।

...निपातम् — I. i. 36

देखें — **स्वरादिनिपातम् I. i. 36**

...निपातयोः — III. iii. 4

देखें — **यावत्पुरानिपातयोः III. iii. 4**

निपाताः — I. iv. 56

('अधिरीश्वरे' I. iv. 96 सूत्र से पहले-पहले निपात संज्ञा का अधिकार जाता है)।

निपातैः — VIII. i. 30

(यत्, यदि, हन्त, कुवित्, नेत्, चेत्, चण्, कच्चित्, यत्र-इन) निपातों से युक्त (तिङन्त को अनुदात्त नहीं होता)।

निपानम् — III. iii. 74

निपान (जलाधार) अभिधेय हो, (तो आङ् पूर्वक ह्वेञ् धातु से अप् प्रत्यय, सम्प्रसारण, वृद्धि भी निपातन से करके आहाव शब्द सिद्ध करते हैं, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा-विषय में)।

...निपुण... — II. i. 30

देखें — **पूर्वसदृशसमो० II. i. 30**

...निपुणानाम्— VII. iii. 30

देखें — **शुचीश्वर० VII. iii. 30**

... निपुणाभ्याम्— II. iii. 43

देखें — **साधुनिपुणाभ्याम् II. iii. 43**

...निप्रहण... — II. iii. 56

देखें — **जासिनिप्रहण:० II. iii. 56**

निप्रहण = चोट लगाना, नष्ट करना।

...निभ्यः — VIII. iii. 72

देखें — **अनुविपर्यभि० VIII. iii. 72**

...निमन्त्रण... — III. iii. 161

देखें — **विधिनिमन्त्रण० III. iii. 161**

निमाने — V. ii.47

(प्रथमासमर्थ सङ्ख्यावाची प्रातिपदिकों से 'इस भाग का यह) मूल्य अर्थ में (मयट् प्रत्यय होता है)।

निमितम् — III. iii. 87

सब ओर से बराबर (निमित) अभिधेय (हो तो नि पूर्वक हन् धातु से अप् प्रत्यय, टि भाग का लोप तथा घ आदेश निपातन करके निघ शब्द सिद्ध करते हैं)।

निमित्तम् — V. i. 37

(षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिकों से) निमित्त = 'कारण' अर्थ में (यथाविहित प्रत्यय होते हैं, यदि वह कारण संयोग वा उत्पात हो तो)।

निमूल... — III. iv. 34

देखें — **निमूलसमूलयोः III. iv. 34**

निमूलसमूलयोः — III. iv. 34

निमूल तथा समूल कर्म उपपद रहते (कष् धातु से णमुल् प्रत्यय होता है)।

नियः — I. iii. 36

(सम्मान, उत्सञ्जन, आचार्यकरण, ज्ञान, विगणन, व्यय इन अर्थों में वर्तमान) णीञ् धातु से (आत्मनेपद होता है)।

नियः — III. iii. 26

(अव तथा उद् पूर्वक) नी धातु से (कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

नियुक्तः — IV. iv . 69

(सप्तमीसमर्थ प्रातिपदिक से) 'नियुक्त' अर्थ में (ढक् प्रत्यय होता है)।

नियुक्तम् — IV. iv. 66

(प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से 'इसके लिये) नियमपूर्वक (दिया जाता है' विषय में ढक् प्रत्यय होता है)।

नियुक्ते — VI. ii. 79

(अणन्त शब्द के उत्तरपद रहते) नियुक्त = धारण करना, तद्वाची समास में (पूर्वपद को आद्युदात्त होता है)।

...नियोज्यौ — VII. iii. 68

देखें — **प्रयोज्यनियोज्यौ VII. iii. 68**

निर्... — III. iii. 28

देखें — **निरभ्योः III. iii. 28**

...निर् — VIII. iii. 88

देखें — **सुविनिर्दुर्भ्यः VIII. iii. 88**

...निर्... — VIII. iv. 5

देखें — **प्रनिरन्तः VIII. iv. 5**

निरः — VII. ii. 46

निर् पूर्वक (कुषः अङ्ग से उत्तर वलादि आर्धधातुक को विकल्प से इट् आगम होता है)।

निरभ्योः — III. iii. 28

निर्, अभि पूर्वक (क्रमशः पु एवं लू धातुओं से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

...निराकृञ्... — III. ii. 136

देखें — **अलंकृञ्निराकृञ्० III. ii. 136**

निराकृञ् = मना करना, प्रतिवाद करना, अस्वीकार करना।

निरुदकादीनि — VI. ii. 184

निरुदकादि गणपठित शब्दों को (भी अन्तोदात्त होता है)।

निर्दिष्टे — I. i. 65

(सप्तमीविभक्ति से) निर्दिष्ट शब्द से (अव्यवहित पूर्व को ही कार्य होता है)।

निर्धारणम् — II. iii. 41

निर्धारण अर्थात् जाति, गुण या क्रिया के द्वारा समुदाय से एक देश का पृथक्करण जिससे हो, (उसमें भी षष्ठी और सप्तमी विभक्ति होती है)।

निर्धारणे — II. ii. 10

जाति, गुण व क्रिया के द्वारा समुदाय से एकदेश के पृथक्करण अर्थ में (विद्यमान षष्ठ्यन्त सुबन्त का समर्थ सुबन्त के साथ समास नहीं होता)।

निर्धारणे — V. iii. 92

(किम्, यत् तथा तत् प्रातिपदिकों से 'दो में से एक का) पृथक्करण' अर्थ में (डतरच् प्रत्यय होता है)।

निर्निविभ्यः — VIII. iii. 76

निर्, नि, वि उपसर्ग से उत्तर (स्फुरति तथा स्फुलति के सकार को विकल्प से मूर्धन्य आदेश होता है)।

निर्मिते — IV. iv. 93

(तृतीयासमर्थ छन्दस् प्रातिपदिक से) 'बनाया हुआ' अर्थ में (यत् प्रत्यय होता है)।

निर्वाणः — VIII. ii. 50

(निस् पूर्वक वा धातु से उत्तर निष्ठा के तकार को नकार आदेश करके) निर्वाण शब्द (वायु अभिधेय न होने पर निपातित है)।

निर्वृत्तम् — IV. ii. 67

(तृतीयासमर्थ प्रातिपदिकों से) 'बनाया गया' अर्थ में (यथाविहित प्रत्यय होता है, यदि उस शब्द से देश का नाम गम्यमान हो)।

निर्वृत्तम् — V. i. 78

(तृतीयासमर्थ कालवाची प्रातिपदिक से) 'बनाया हुआ' अर्थ में (यथाविहित कञ् प्रत्यय होता है)।

निर्वृत्ते — IV. iv. 19

(तृतीयासमर्थ अक्षद्यूतादिगणपठित प्रातिपदिकों से) 'उत्पन्न किया गया' अर्थ में (ठक् प्रत्यय होता है)।

निवचने — I. iv. 75

(मध्य, पदे तथा) निवचने शब्द (भी कृञ् के योग में विकल्प से गति और निपातसंज्ञक होते हैं)।

निवाते—VI. ii. 8

(वातत्राणवाची तत्पुरुष समास में) निवात शब्द उत्तरपद रहते (पूर्वपद को प्रकृतिस्वर होता है) ।

निवात = वायु से सुरक्षित।

...निवास... — III. i. 129

देखें — मानहविः III. i. 129

निवास... — III. iii. 41

देखें — निवासचिति० III. iii. 41

निवासः — IV. ii. 68

(षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिकों से) निवास अर्थ में (देश का नाम गम्यमान होने पर यथाविहित प्रत्यय होता है)।

निवासः — IV. iii. 89

(प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में यथाविहित प्रत्यय होता है, यदि प्रथमासमर्थ) निवास हो तो।

निवासः — IV. iii. 89

(प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में यथाविहित प्रत्यय होता है, यदि प्रथमासमर्थ) निवास हो तो।

निवासचितिशरीरोपसमाधानेषु — III. iii. 41

निवास, चिति = जो चयन किया जाये, शरीर और राशि अर्थों में (चिञ् धातु से घञ् प्रत्यय होता है तथा चिञ् के आदि चकार को ककारादेश हो जाता है) कर्तृ-भिन्न कारकसंज्ञा तथा भाव में)।

निवासे — VI. i. 195

(क्षय शब्द आद्युदात्त होता है) निवास अभिधेय होने पर।

निविभ्याम् —VI. ii. 181

नि तथा वि उपसर्ग से उत्तर (अन्त शब्द को अन्तोदात्त नहीं होता)।

निव्यभिभ्यः –VIII. iii. 119

नि, वि तथा अभि उपसर्गों से उत्तर (सकार को अट् का व्यवधान होने पर वेद-विषय में विकल्प से मूर्धन्य आदेश नहीं होता)।

निश्–VI. i. 61

(वेदविषय में निशा शब्द के स्थान में) निश् आदेश हो जाता है, (शस् प्रकार वाले प्रत्ययों के परे रहते)।

...निशा – III. ii. 21

देखें – दिवाविभा III. ii. 21

निशा... – IV. iii. 14

देखें – निशाप्रदोषाभ्याम् IV. iii. 14

...निशानाम् – II. iv. 25

देखें – सेनासुराच्छाया० II. iv. 25

निशाप्रदोषाभ्याम् – IV. iii. 14

निशा, प्रदोष (कालविशेषवाची) शब्दों से (भी विकल्प से ठञ् प्रत्यय होता है)।

...निश्चि... – III. iii. 58

देखें – ग्रहवृह० III. iii. 58

...निश्रेयस... – V. iv. 77

देखें – अचतुर V. iv. 77

...निषत्त... – VIII. ii. 61

देखें – नसत्तनिषत्त० VIII. ii. 61

निषत्त = बैठा हुआ।

...निषद... – III. iii. 99

देखें – समजनिषद० III. iii. 99

निष्कात् – V. i. 30

(द्वि तथा त्रि शब्द पूर्ववाले) निष्कशब्दान्त द्विगुसञ्ज्ञक प्रातिपदिक से ('तदर्हति'– पर्यन्त कथित अर्थों में उत्पन्न प्रत्यय का विकल्प से लुक् होता है)।

निष्कात् – V. ii. 119

(शत शब्द अन्तवाले तथा सहस्र शब्द अन्त वाले) निष्क प्रातिपदिक से (भी 'मत्वर्थ' में ठञ् प्रत्यय होता है)।

निष्कादिभ्यः – V. i. 20

(समास में वर्त्तमान न होने पर) निष्कादिक प्रातिपदिक से ('तदर्हति' – पर्यन्त कथित अर्थों में ठक् प्रत्यय होता है)।

निष्कुलात् – V. iv. 62

('अन्दर स्थित अवयवों के बाहर निकालने' अर्थ में वर्तमान) निष्कुल प्रातिपदिक से (कृञ् के योग में डाच् प्रत्यय होता है)।

निष्कोषणे – V. iv. 62

अन्दर स्थित अवयवों के बाहर निकालने अर्थ में वर्तमान (निष्कुल प्रातिपदिक से कृञ् के योग में डाच् प्रत्यय होता है)।

निष्टर्क्य... – III. i. 123

देखें – निष्टर्क्यदेवहूय० III. i. 123

...निष्ठयोः – VII. ii. 50

देखें – क्त्वानिष्ठयोः VII. ii. 50

निष्ठा – I. i. 25

(क्त और क्तवतु प्रत्ययों की) निष्ठा सञ्ज्ञा होती है)।

निष्ठा – I. ii. 19

(शीङ्, स्विद्, मिद्, क्ष्विद् तथा धृष् धातुओं से परे सेट्) निष्ठा = क्त तथा क्तवतु प्रत्यय (कित् नहीं होता)।

निष्ठा – II. ii. 36

निष्ठान्त शब्दरूप (बहुव्रीहि समास में पूर्व में प्रयुक्त होता है)।

...निष्ठा... – II. iii. 69

देखें – लोकाव्ययनिष्ठा० II. iii. 69

निष्ठा – III. ii. 102

(धातुमात्र से भूतकाल में) निष्ठासंज्ञक प्रत्यय = क्त, क्तवतु होते हैं।

निष्ठा – VI. i. 199

(दो अचों वाले) निष्ठान्त शब्दों के (भी आदि को उदात्त होता है; सञ्ज्ञाविषय में, आकार को छोड़कर)।

निष्ठा – VI. ii. 110

(बहुव्रीहि-समास में उपसर्ग पूर्व वाले) निष्ठान्त पूर्वपद को (विकल्प से अन्तोदात्त होता है)।

निष्ठा... – VI. ii. 169

देखें – निष्ठोपमानात् VI. ii. 169

निष्ठातः — VIII. ii. 42

(रेफ तथा दकार से उत्तर) निष्ठा के तकार को (नकारादेश होता है तथा निष्ठा के तकार से पूर्व के दकार को भी नकारादेश होता है)।

निष्ठायाम् — VI. i. 12

(स्फायी धातु को) निष्ठा = क्त और क्तवतु प्रत्यय के परे रहते (स्फी आदेश हो जाता है)।

निष्ठायाम् — VI. iv. 52

(सेट्) निष्ठा परे रहते (णि का लोप हो जाता है)।

निष्ठायाम् — VI. iv. 60

(ण्यत् के अर्थ से भिन्न अर्थ में वर्तमान) निष्ठा के परे रहते ((क्षि अङ्ग को दीर्घ हो जाता है)।

निष्ठायाम् — VI. iv. 95

(हलादि अङ्ग की उपधा को) निष्ठा परे रहते (ह्रस्व हो जाता है)।

निष्ठायाम् — VII. ii. 14

(टुओश्वि तथा ईकार इत्सञ्ज्ञक धातुओं को) निष्ठा परे रहते (इट् आगम नहीं होता)।

निष्ठायाम् — VII. ii.. 47

(निर् पूर्वक कुष् से उत्तर) निष्ठा को (इट् आगम होता है)।

निष्ठोपमानात् — VI. ii. 169

(बहुव्रीहि समास में) निष्ठान्त तथा उपमानवाची से उत्तर (स्वाङ्ग मुख शब्द उत्तरपद को विकल्प से अन्तोदात्त होता है)।

...निष्पत्रात् — V. iv. 61

देखें — सपत्रनिष्पत्रात् V. iv. 61

निष्प्रवाणिः — V. iv. 60

निष्प्रवाणि शब्द को भी कप् का अभाव निपातन किया जाता है।

निष्प्रवाणि =खड्डी से तुरन्त निकाला हुआ नया कपड़ा।

निस्... — VIII. iii. 76

देखें — निर्निविध्यः VIII. iii. 76

निसः — VIII. ii. 102

निस् के (स को तपति परे रहते अनासेवन अर्थ में मूर्धन्य आदेश होता है)।

निसमुपविभ्यः — I. iii. 30

नि, सम्, उप एवं वि उपसर्ग से उत्तर (ह्वेञ् धातु से आत्मनेपद होता है)।

...निस्तब्धौ — VIII. iii. 114

देखें — प्रतिस्तब्धनिस्तब्धौ VIII. iii. 114

निस्तब्ध = सुन्न हुआ, रोका हुआ, अच्छी तरह जोड़ना।

निंस... — VIII. iv. 32

देखें — निंसनिक्षनिन्दाम् VIII. iv. 32

निंसनिक्षानिन्दाम् — VIII. iv. 32

(उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर) निंस, निक्ष तथा निन्द् धातु के (नकार को विकल्प से णकारादेश होता है, कृत् परे रहते)।

...नी... — III. ii. 61

देखें — सत्सू० III. ii. 61

...नी... — III. ii. 182

देखें — दाम्नी० III. ii. 182

नी... — III. iii. 37

देखें — परिन्योः III. iii. 37

नीक् — VII. iv. 84

(वञ्चु, स्रंसु, ध्वंसु, भ्रंशु, कस, पत्लृ, पद, स्कन्दिर् इन धातुओं के अभ्यास को यङ् तथा यङ्लुक् परे रहते) नीक् आगम होता है)।

नीचैः — I. ii. 30

नीचे भागों से उच्चरित (अच् की अनुदात्त संज्ञा होती है)।

नीणोः — III. iii. 37

(परि तथा नि उपपद रहते हुए यथासंख्य) नी तथा इण् धातुओं से (कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में द्यूत तथा उचित आचरण के विषय में घञ् प्रत्यय होता है)।

नीतौ — V. iii. 77

'नीति' गम्यमान हो तो (भी उस अनुकम्पा से सम्बद्ध प्रातिपदिक से तथा तिङन्त से यथाविहित प्रत्यय होते हैं)।

...नीभ्यः — VII. iii. 116
देखें — नद्याम्नीभ्यः VII. iii. 116

...नील... — IV. i. 42
देखें — जानपदकुण्ड० IV. i. 42
नील — गहरा नीला रङ्ग।

...नु... — VI. iii. 132
देखें— तुनुघमक्षु० VI. iii. 132
नु = तुरन्त।

नुक् — IV. i. 32
(अन्तर्वत्, पतिवत् शब्दों से स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय होता है तथा) ङीप् के साथ-साथ नुक् आगम भी हो जाता है।

नुक्... — VII. iii. 39
देखें— नुग्लुकौ VII. iii. 39

नुक् — VII. iv. 85
(अनुनासिकान्त अङ्ग के अकारान्त अभ्यास को) नुक् आगम होता है, (यङ् तथा यङ्लुक् परे रहते)।

नुग्लुकौ — VII. iii. 39
(ली तथा ला अङ्ग को स्नेह = घृतादि पदार्थ के पिघलना अर्थ में णि परे रहते विकल्प से क्रमशः) नुक् तथा लुक् आगम होते हैं।

नुट् — VI. iii. 73
(उस लुप्त नकार वाले नञ् से उत्तर) नुट् का आगम होता है, (अजादि शब्द के उत्तरपद रहते)।

नुट् — VII. i. 54
(ह्रस्वान्त, नद्यन्त तथा आप् अन्तवाले आङ्ग से उत्तर आम् को) नुट् का आगम होता है।

नुट् — VII. ii. 16
(वेद-विषय में अन् अन्तवाले शब्द से उत्तर मतुप् को) नुट् आगम होता है)।

नुट् — VII. iv. 71
(अभ्यास के दीर्घ किये हुये आकार से उत्तर हल् वाले अङ्ग को) नुट् आगम होता है।

...नुड्भ्याम् — VI. i. 170
देखें — ह्रस्वनुड्भ्याम् VI. i. 170

नुद... — VIII. ii. 56
देखें — नुदविदोन्द० VIII. ii. 56

नुदविदोन्दत्राघ्राह्रीभ्यः VIII. ii. 56
नुद, विद, उन्दी, त्रैङ्, घ्रा, ह्री — इन धातुओं से उत्तर निष्ठा के तकार को (विकल्प से नकारादेश होता है)।

नुम् — VII. i. 58
(इकार इत्सञ्ज्ञक है जिसका, ऐसे धातु को) नुम् का आगम होता है)।

नुम् — VII. i. 80
(अवर्णान्त अङ्ग से उत्तर शी तथा नदी परे रहते शतृ प्रत्यय को विकल्प से) नुम् आगम होता हैं।

नुम्... — VIII. iii. 58
देखें — नुम्विसर्जनीय० VIII. iii. 58

...नुम्... — VIII. iv. 2
देखें — प्रतिपदिकान्तनुम्० VIII. iv. 11

नुम्विसर्जनीयशर्व्यवाये — VIII. iii. 58
नुम्, विसर्जनीय तथा शर् प्रत्याहार का व्यवधान होने पर (भी इण् तथा कवर्ग से उत्तरसकार को मूर्धन्य आदेश होता है)।

...नुम्व्यवाये— VIII. iv. 2
देखें — अट्कुप्वाङ्० VIII. iv. 2

नृ VI. i. 178
नृ से परे (भी झलादि विभक्ति विकल्प से उदात्त नहीं होती)।

नृ — VI. iv. 6
नृ अङ्ग को (भी नाम् परे रहते वेदविषय में दोनों प्रकार से अर्थात् दीर्घ एवं अदीर्घ देखा जाता है)।

...नृतः — VII. ii. 57
देखें— कृतचृत० VII. ii. 57

...नृति... — I. iii. 89
देखें — पादम्याङ्यमाङ्यस० I. iii. 89

नृन् — VIII. iii. 10
नृन् शब्द के (नकार को प परे रहते रु होता है)।

ने — VIII. ii. 3

ना परे रहते (मुभाव असिद्ध नहीं होता)।

नेः — I. iii. 17

नि उपसर्ग से उत्तर (विभ् धातु से आत्मनेपद होता है)।

नेः — V. ii. 32

नि उपसर्ग प्रातिपदिक से (नासिकासम्बन्धी झुकाव को कहना हो तो सञ्ज्ञाविषय में बिडच् तथा बिरीसच् प्रत्यय होते हैं)।

नेः — VI. ii. 192

नि उपसर्ग से उत्तर (उत्तरपद को अन्तोदात्त होता है, अप्रधान अर्थ में)।

नेः — VIII. iv. 17

(उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर) नि के (नकार को णकार आदेश होता है; गद, नद, पत, पद, घुसञ्ज्ञक, मा, षो, हन्, या, वा, द्रा, प्सा, वप, वह, शम्, चि एवं दिह् धातुओं के परे रहते भी)।

...नेत्... — VIII. i. 30

देखें — **यद्यदि० VIII. i. 30**

नेद... — V. iii. 63

देखें — **नेदसाधौ V. iii. 63**

नेदसाधौ — V. iii. 63

(अन्तिक तथा बाढ शब्दों को यथासङ्ख्य करके) नेद तथा साध आदेश होते हैं, (अजादि अर्थात् इष्ठन्, ईयसुन् प्रत्यय परे रहते)।

...नेदीयस्सु — VI. ii. 21

देखें — **आकाङ्क्षाबाध० VI. ii. 21**

...नेभ्यः — IV. i. 5

देखें — **ऋन्नेभ्यः IV. i. 5**

नेमधित — VII. iv. 45

नेमधित शब्द वेदविषय में निपातन किया जाता है।

...नेमाः — I. i. 32

देखें — **प्रथमचरमतयाल्पार्धकतिपयनेमाः I. i. 32**

...नेयेषु — V. ii. 9

देखें — **बद्धाभक्षयति० V.ii. 9**

...नेषु — VII. iii. 54

देखें — **ञ्णिन्नेषु VII. iii. 54**

...नेष्ट... — VI. iv. 11

देखें — **अप्तृन्तृच्० VI. iv.11**

नोपधात् — I. ii. 23

(थकारान्त एवं फकारान्त) नकारोपध धातुओं से परे (जो सेट् क्त्वा प्रत्यय, वह विकल्प करके कित् नहीं होता है)।

नौ — III. iii. 48

नि पूर्वक (वृ धातु से धान्यविशेष को कहना हो तो कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

नौ — III. iii. 60

नि पूर्वक (अद् धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में ण प्रत्यय भी होता है तथा अप् भी)।

नौ — III. iii. 64

नि पूर्वक (गद, नद, पठ तथा स्वन् धातुओं से विकल्प से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में अप् प्रत्यय होता है, पक्ष में घञ् होता है)।

नौ... — IV. iv. 7

देखें— **नौद्व्यचः IV. iv. 7**

नौ... — IV. iv. 91

देखें — **नौवयोधर्म० IV. iv. 91**

नौद्व्यचः — IV. iv. 7

(तृतीयासमर्थ) नौ तथा दो अच् वाले प्रातिपदिकों से ('तरति' अर्थ में ठन् प्रत्यय होता है)।

नौवयोधर्मविषमूलमूलसीतातुलाभ्यः — IV. iv. 91

(तृतीयासमर्थ) नौ, वयस्, धर्म, विष, मूल, मूल, सीता तुला — इन आठ प्रातिपदिकों से (यथासङ्ख्य करके तार्य, तुल्य, प्राप्य, वध्य, आनाम्य, सम, समित, सम्मित — इन आठ अर्थों में यत् प्रत्यय होता है)।

न्थः — VII. i. 87

(पथिन् तथा मथिन् अङ्ग के थकार के स्थान में) 'न्थ' आदेश होता है)।

न्द्राः — VI. i. 3

(अजादि के द्वितीय एकाच् समुदाय के संयोग आदि में स्थित) न्, द् तथा र् को (द्वित्व नहीं होता)।

न्यग्रोधस्य — VII. iii. 5

(केवल) न्यग्रोध शब्द के (अचों में आदि अच् को भी वृद्धि नहीं होती किन्तु उसके य् से पूर्व को ऐकार आगम हो जाता है)।

न्यङ्क्वादीनाम् — VII. iii. 53

न्यङ्कु आदि गणपठित शब्दों के (चकार, जकार को भी कवर्ग आदेश होता है)।

न्यधी — VI. ii. 53

(वप्रत्ययान्त अञ्चु धातु के परे रहते) नि तथा अधि को (भी प्रकृतिस्वर होता है)।

न्यभ्युपविषु — III. iii. 72

नि, अभि, उप तथा वि पूर्वक (ह्वेञ् धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में अप् प्रत्यय होता है, तथा ह्वेञ् को सम्प्रसारण भी हो जाता है)।

...न्याय... — III. iii. 122

देखें — **अध्यायन्याय० III. iii. 122**

...न्यायात् — IV. iv. 92

देखें — **धर्मपथ्यर्थ० IV. iv. 92**

...न्युब्जौ — VII. iii. 61

देखें — **भुजन्युब्जौ VII. iii. 61**

...न्यूङ्ख... — I. ii. 34

देखें — **अजपन्यूङ्खसामसु I. ii. 34**

न्यूङ्ख = ऋचाओं के उच्चारण में सोलह 'ओ' ध्वनिओं का समावेश।

...न्योः — III. i. 141

देखें — **दुन्योः III. i. 141**

...न्योः — III. iii. 29

देखें — **उन्न्योः III. iii. 29**

...न्योः — III. iii. 37

देखें — **परिन्योः III. iii. 37**

...न्योः — III. iii. 45

देखें — **अवन्योः III. iii. 45**

प

प — प्रत्याहारसूत्र XII

आचार्य पाणिनि द्वारा अपने बारहवें प्रत्याहार सूत्र में पठित द्वितीय वर्ण।

पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का उन्तालीसवां वर्ण।

पः — VII. iii. 43

(रुह् अङ्ग को विकल्प से णि परे रहते पकारादेश होता है।

... पक्व... — II. i. 40

देखें — **सिद्धशुष्कपक्व० II. i. 40**

...पक्व... — VI. ii. 32

देखें — **सिद्धशुष्क० VI. ii. 32**

...पक्ष... — IV. ii. 79

देखें — **अरीहणकृशाश्वर्श्य० IV. ii. 79**

पक्षात् — V. ii. 25

(षष्ठीसमर्थ) पक्ष प्रातिपदिक से ('मूल' वाच्य हो तो ति प्रत्यय होता है)।

पक्षि... — IV. iv. 35

देखें — **पक्षिमत्स्यमृगान् IV. iv. 35**

पक्षिमत्स्यमृगान् — IV. iv. 35

(द्वितीयासमर्थ) पक्षि, मत्स्य तथा मृगवाची प्रातिपदिकों से ('मारता है'-अर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

पक्ष्येषु — III. i. 119

पक्ष्य अर्थात् पक्ष वाला— इस अर्थ में ('ग्रह् धातु से क्यप् प्रत्यय होता है)।

पंक्ति... — V. i. 58

देखें — **पंक्तिविंशति० V. i. 58**

पंक्तिविंशतित्रिंशच्चत्वारिंशत्पञ्चाशत्षष्टिसप्तत्यशीतिनवतिशतम् — V. i. 58

('तदस्य परिमाणम्' अर्थ में) पंक्ति, विंशति, त्रिंशत्, चत्वारिंशत्, पञ्चाशत्, षष्टि, सप्तति, अशीति, नवति तथा शतम् शब्द निपातन किये जाते हैं, (जो-जो कार्य सूत्रों से सिद्ध न हों, वे निपातन से जानने चाहिये)।

पङ्गोः — IV. i. 68
पङ्गु शब्द से (भी स्त्रीलिङ्ग में ऊङ् प्रत्यय होता है)।

...पच... — III. iii. 96
देखें — वृषेष० III. iii. 96

पचः — III. ii. 33
'पच्' धातु से (परिमाणवाचक कर्म उपपद रहने पर 'खश्' प्रत्यय होता है)।

...पचः — III. iii. 95
देखें — स्थागापापचः III. iii. 95

पचः — VIII. ii. 52
'डुपचष् पाके' धातु से उत्तर (निष्ठा के तकार को वकारादेश होता है)।

पचति — V. i. 51
(द्वितीयासमर्थ प्रातिपदिक से 'सम्भव है', 'आहरण करता है' और) 'पकाता है' अर्थों में (यथाविहित प्रत्यय होते हैं)।

...पचादिभ्यः — III. i. 134
देखें — नन्दिग्रहि० III. i. 134

पच्यन्ते — V. i. 89
(तृतीयासमर्थ षष्टिरात्र प्रातिपदिक से) 'पकाया जाता है' अर्थ में (षष्टिक शब्द का निपातन किया जाता है)।

...पच्यमानेषु — IV. iii. 43
देखें — साधुपुष्प्यत्० IV. iii. 43

...पञ्च... — VI. iii. 114
देखें — अविष्टाष्ट० VI. iii. 114

पञ्चद्... — V. i. 59
देखें — पञ्चद्दशतौ V. i. 59

पञ्चद्दशतौ — V. i. 59
पञ्चत् और दशत्— ये डति प्रत्ययान्त शब्द ('तदस्य परिमाणम्' विषय में वर्ग अभिधेय होने पर विकल्प से निपातन किये जाते हैं)।

पञ्चभ्यः — VII. i. 25
(डतर आदि में है जिसके ऐसे सर्वादिगणपठित) पांच शब्दों से उत्तर (सु और अम् को अद्ड् आदेश होता है)।

पञ्चभ्यः — VII. ii. 75
(कृ इत्यादि) पाँच = कृ, गृ, दृङ्, धृङ्, प्रच्छ् धातुओं से उत्तर (भी सन् को इट् आगम होता है)।

पञ्चभ्यः — VII. iii. 98
(रुदिर् इत्यादि) पाँच अङ्गों से उत्तर (भी हलादि अपृक्त सार्वधातुक को ईट् आगम होता है)।

पञ्चमी — II. i. 36
पञ्चमीविभक्त्यन्त (सुबन्त भय शब्द समर्थ सुबन्त के साथ विकल्प से समास को प्राप्त होता है, और वह तत्पुरुष समास होता है)।

पञ्चमी — II. iii. 10
(कर्मप्रवचनीयसंज्ञक अप, आङ् और परि के योग में) पञ्चमी विभक्ति होती है।

पञ्चमी — II. iii. 24
(कर्तृभिन्न हेतुवाची शब्द में ऋण वाच्य होने पर) पञ्चमी विभक्ति होती है।

पञ्चमी — II. iii. 28
(अनभिहित अपादान कारक में) पञ्चमी विभक्ति होती है।

पञ्चमी — II. iii. 42
(जिस निर्धारण में विभाग किया जाये, उसमें) पञ्चमी विभक्ति होती है।

...पञ्चमी...— V. iii. 27
देखें — सप्तमीपञ्चमी० V. iii. 27

पञ्चम्या — II. i. 11
(अप, परि, बहिस्, अञ्चु— ये सुबन्त शब्द) पञ्चम्यन्त (समर्थ सुबन्त) के साथ (विकल्प से समास को प्राप्त होते हैं, और वह अव्ययीभाव समास होता है)।

पञ्चम्याः — V. iii. 7
पञ्चम्यन्त (किम्, सर्वनाम तथा बहु शब्दों) से (तसिल् प्रत्यय होता है)।

पञ्चम्याः — V. iv. 44
(प्रति शब्द के योग में विहित) पञ्चमीविभक्त्यन्त प्रातिपदिक से (विकल्प से तसि प्रत्यय होता है)।

पञ्चम्याः — VI. iii. 2
(स्तोकादियों से उत्तर) पञ्चमी विभक्ति का (उत्तरपद परे रहते अलुक् होता है)।

पञ्चम्याः — VII. i. 31

(युष्मद्, अस्मद् अङ्ग से उत्तर) पञ्चमी विभक्ति के (भ्यस् के स्थान में अत् आदेश होता है)।

पञ्चम्याः — VIII. iii. 51

(अधि के अर्थ में वर्तमान परि शब्द के परे रहते) पञ्चमी के (विसर्जनीय को सकारादेश होता है, वेद-विषय में)।

पञ्चम्याम् — III. ii. 98

(अगतिवाची) पञ्चम्यन्त उपपद रहते ('जन्' धातु से भूतकाल में ड प्रत्यय होता है)।

...पञ्चम्यौ — II. iii. 7

देखें — **सप्तमीपञ्चम्यौ II. iii. 7**

...पञ्चानाम् — III. iv. 84

(ब्रू धातु से परे जो लट् लकार, उसके स्थान में जो परस्मैपदसंज्ञक आदि के) पाँच आदेश, उनके स्थान में (क्रमशः पाँच ही णल्, अतुस्, उस्, थल्, अथुस्, आदेश विकल्प से हो जाते हैं, साथ ही ब्रू धातु को आह आदेश भी हो जाता है)।

...पञ्चाशत्... — V. i. 58

देखें — **पंक्तिविंशति० V. i. 58**

...पठ... — III. iii. 64

देखें — **गदनद० III. iii. 64**

पण... — V. i. 34

देखें — **पणपादमाष० V. i. 34**

पण = विनिमय करना, खरीदना, प्रशंसा करना।

पणः — III. iii. 66

(परिमाण गम्यमान होने पर) पण् धातु से (नित्य ही कर्तृभिन्नकारक संज्ञा तथा भाव में अप् प्रत्यय होता है।

पणपादमाषशतात् — V. i. 34

(अध्यर्द्ध शब्द पूर्व वाले तथा द्विगुसञ्ज्ञक) पण, पाद, माष और शत शब्दान्त प्रातिपदिकों (से 'तदर्हति'- पर्यन्त कथित अर्थों में यत् प्रत्यय होता है)।

...पणि... — III. i. 28

देखें — **गुपूधूपविच्छि० III. i. 28**

...पणितव्य... — III. i. 101

देखें — **गर्ह्यपणितव्य० III. i. 101**

पणितव्य = बेचने योग्य।

...पणिनः — VI. iv. 165

देखें — **गाथिविदथि० VI. iv. 165**

...पणोः — II. iii. 57

देखें — **व्यवहृपणोः II. iii. 57**

...पण्य... — III. i. 101

देखें — **अवद्यपण्य० III. i. 101**

पण्यकम्बलः — VI. ii. 42

'पण्यकम्बल' इस समास किये हुये शब्द के (पूर्वपद को प्रकृतिस्वर होता है)।

पण्यकम्बल = बिकाऊ कम्बल।

पण्यम् — IV. iv. 51

(प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में ठक् प्रत्यय होता है, यदि वह प्रथमासमर्थ) खरीदने योग्य हो।

...पण्यम् — VI. ii. 13

देखें — **गन्तव्यपण्यम् VI. ii. 13**

पत् — VI. iv. 130

(भसञ्ज्ञक पाद शब्दान्त अङ्ग को) पत् आदेश हो जाता है।

...पत... — III. ii. 150

देखें — **जुचङ्क्रम्य० III. ii. 150**

...पत... — III. ii. 154

देखें — **लषपत० III. ii. 154**

...पत... — III. ii. 182

देखें — **दाम्नी० III. ii. 182**

...पत... — VII. iv. 54

देखें — **मीमाघु० VII. iv. 54**

...पत... — VII. iv. 84

देखें — **वञ्चुस्रंसु० VII. iv. 84**

...पत... — VIII. iv. 17

देखें — **गदनद० VIII. iv. 17**

पतः — VII. iv. 19

पत्लृ अङ्ग को (अङ् परे रहते पुम् आगम होता है)।

...पति... — III. ii. 158

देखें — स्पृहिगृहि० III. ii. 158

...पति...— III. iv. 56

देखें — विशिपतिपदि० III. iv. 56

पति...— VIII. iii. 53

देखें — पतिपुत्र० VIII. iii. 53

पतिः — I. iv. 8

पति शब्द (समास में ही घिसञ्ज्ञक होता है)।

..पतित...— II. i. 23

देखें — श्रितातीतपतित० II. i. 23

...पतित...— II. i. 37

देखें — अपेतापोढमुक्त० II. i. 37

पतिपुत्रपृष्ठपारपदपयस्पोषेषु — VIII. iii. 53

पति, पुत्र, पृष्ठ, पार, पद, पयस्, पोष— इन शब्दों के परे रहते (वेद-विषय में षष्ठी विभक्ति के विसर्जनीय को सकारादेश होता है)।

...पतिवतोः — IV. i. 32

देखें — अन्तर्वत्पतिवतोः IV. i. 32

पत्यन्त...— V. i. 127

देखें — पत्यन्तपुरोहि० V. i. 127

पत्यन्तपुरोहितादिभ्यः — V. i. 127

(षष्ठीसमर्थ) पति शब्द अन्त वाले तथा पुरोहितादि प्रातिपदिकों से (भाव और कर्म अर्थों में यक् प्रत्यय होता है)।

पत्युः — IV. i. 33

पति शब्द से (स्त्रीलिङ्ग में यज्ञसंयोग गम्यमान होने पर ङीप् प्रत्यय होता है और नकार अन्तादेश भी हो जाता है)।

...पत्युत्तरपदात् — IV. i. 85

देखें — दित्यदित्यादित्य० IV. i. 85

...पत्योः — III. ii. 52

देखें — जायापत्योः III. ii. 52

...पत्योः — VI. i. 13

देखें — पुत्रपत्योः VI. i. 13

...पत्योः — VI. iii. 23

देखें — स्वसृपत्योः VI. iii. 23

पत्यौ—VI. ii. 18

(ऐश्वर्यवाची तत्पुरुष समास में) पति शब्द उत्तरपद रहते (पूर्वपद को प्रकृतिस्वर हो जाता है)।

पत्र... — IV. iii. 122

देखें — पत्राध्वर्युपरिषदः IV. iii. 122

...पत्र...— V. ii. 7

देखें — पथ्यङ्ग० V. ii. 7

पत्र = रथ, कोई वाहन, घोड़ा, ऊँट।

पत्रपूर्वात् — IV. iii. 121

पत्रपूर्वात्—पत्रपूर्ववाले (षष्ठीसमर्थ रथ) शब्द से ('इदम्' अर्थ में अञ् प्रत्यय होता है)।

पत्राध्वर्युपरिषदः — IV. iii. 122

(षष्ठीसमर्थ) पत्र, अध्वर्यु, परिषद् प्रातिपदिकों से (भी 'इदम्' अर्थ में अञ् प्रत्यय होता है)।

पत्रे — III. i. 121

पत्र अर्थात् वाहन को कहना हो तो (युग्यम् शब्द में युज् धातु से क्यप् प्रत्यय और कुत्व निपातन से होता है)।

पथः— IV. iii. 29

(सप्तमीसमर्थ पथिन् प्रातिपदिक से 'जात' अर्थ में वुन् प्रत्यय होता है तथा प्रत्यय के साथ-साथ पथिन् को (पन्थ आदेश भी होता है)।

पथः — V. i. 74

(द्वितीयासमर्थ) पथिन् प्रातिपदिक से ('जाता है' अर्थ में ष्कन् प्रत्यय होता है)।

पथः — V. ii. 63

(सप्तमीसमर्थ) पथिन् प्रातिपदिक से ('कुशल' अर्थ में वुन् प्रत्यय होता है)।

पथः — V. iv. 72

(नञ् से परे जो) पथिन् शब्द, (तदन्त तत्पुरुष से समासान्त प्रत्यय विकल्प से नहीं होते)।

...पथाम् —V. iv. 74

देखें—**ऋक्पूरब्धूः० V. iv. 74**

पथि... — IV. iii. 85

देखें — **पथिदूतयोः IV. iii. 85**

...पथि...— IV. iv. 92

देखें — **धर्मपथ्यर्थ० IV. iv. 92**

पथि...— IV. iv. 104

देखें — **पथ्यतिथिवसति० IV. iv. 104**

पथि... — V. ii. 7

देखें — **पथ्यङ्ग० V. ii. 7**

पथि... — VI. iii. 103

देखें — **पथ्यक्षयोः VI. iii. 103**

पथि — VI. iii. 107

पथिन् शब्द उत्तरपद रहते (भी वेदविषय में कु को 'कव' तथा 'का' आदेश विकल्प करके होते हैं)।

पथि...— VII. i. 85

देखें — **पथिमथ्यृ० VII. i. 85**

पथिदूतयोः — IV. iii. 85

(द्वितीयासमर्थ प्रातिपदिक से जाने वाला) मार्ग तथा (जाने वाला) दूत कर्त्ता अभिधेय होने पर (यथाविहित प्रत्यय होता है)।

पथिमथोः — VI. i. 193

पथिन् तथा मथिन् शब्द को (सर्वनामस्थान परे रहते आदि उदात्त होता है)।

पथिमथ्यृभुक्षाम् — VII. i. 85

पथिन्, मथिन् तथा ऋभुक्षिन्- इन अङ्गों को (सु परे रहते आकारादेश होता है)।

पथ्यक्षयोः — VI. iii. 103

पथिन् तथा अक्ष शब्द उत्तरपद हो तो (कु शब्द को का आदेश होता है)।

पथ्यङ्गकर्मपत्रपात्रम् — V. ii. 7

(सर्व शब्द आदि में है जिनके, ऐसे द्वितीयासमर्थ) पथिन्, अङ्ग, कर्म, पत्र तथा पात्र प्रातिपदिकों से ('व्याप्त होता है' अर्थ में ख प्रत्यय होता है)।

पथ्यतिथिवसतिस्वपतेः — IV. iv. 104

(सप्तमीसमर्थ) पथिन्, अतिथि, वसति, स्वपति प्रातिपदिकों से (साधु अर्थ में ठञ् प्रत्यय होता है)।

वसति = निवास।

पद — III. i. 119

देखें — **पदास्वैरि० III. i. 119**

...पद...— III. ii. 154

देखें — **लषपत० III. ii. 154**

पद...— III. iii. 16

देखें — **पदरुज० III. iii. 16**

पद् — VI. i. 61

(वेदविषय में पाद शब्द के स्थान में) पद् आदेश हो जाता है,(शस् प्रकार वाले प्रत्ययों के परे रहते)।

पद — VI. iii. 51

(पाद शब्द को) पद आदेश होता है,(आजि, आति, ग तथा उपहत उत्तरपद परे रहते)।

पद् — VI. iii. 52

(अतदर्थ यत् प्रत्यय के परे रहते पाद शब्द को) पद् आदेश होता है।

...पद...— VII. iv. 84

देखें — **वञ्चुस्त्रंसु० VII. iv. 84**

...पद...— VIII. iii. 53

देखें — **पतिपुत्र० VIII. iii. 53**

...पद...— VIII. iv.17

देखें — **गदनद० VIII. iv. 17**

पदः — III. i. 60

गत्यर्थक पद् धातु से उत्तर (च्लि को चिण् आदेश होता है, कर्तृवाची लुङ् 'त' शब्द परे रहते)।

...पदः — III. ii. 150

देखें — **जुचङ्क्रम्य० III. ii. 150**

पदम् — I. iv. 14

(सुबन्त एवं तिङन्त शब्दरूपों की) पदसंज्ञा होती है।

पदम् — IV. iv. 87

(दृश्यसमानाधिकरण प्रथमासमर्थ) पद प्रातिपदिक से (सप्तम्यर्थ में यत् प्रत्यय होता है)।

पदम् — VI. i. 152
(जिस एक पद में उदात्त या स्वरित विधान किया है, उसी के एक अच् को छोड़कर शेष) पद (अनुदात्त अच् वाला हो जाता है)।

पदरुजविशस्पृशः — III. iii. 16
पद, रुज, विश तथा स्पृश धातुओं) से घञ् प्रत्यय होता है।

पदविधिः — II. i. 1
पदसम्बन्धी विधि = कार्य (समर्थों के आश्रित समझनी चाहिये)।

...पदवी... — IV. iv. 37
देखें — माथोत्तरपदपदव्य० IV. iv. 37

पदव्यवाये — VIII. iv. 37
(निमित्त र, ष तथा निमित्ती न के मध्य) पद का व्यवधान होने पर (भी नकार को णकार नहीं होता)।

...पदष्ठीव... — V. iv. 77
देखें — अचतुर० V. iv. 77
पदष्ठीव = पैर और घुटने।

पदस्य — VIII. i. 16
(यह अधिकार सूत्र है। 'अपदान्तस्य मूर्धन्यः' VIII. i. 55 से पहले तक कहे हुये कार्य) पद के स्थान में (होते हैं, ऐसा अधिकार जानना चाहिये)।

पदात् — VIII. i. 17
(यह अधिकार सूत्र है, 'कुत्सने च सुप्यगोत्रादौ' VIII. i. 69 से पहले-पहले कहे हुये कार्य) पद से उत्तरपद (के स्थान में होते हैं, ऐसा अधिकार जानना चाहिये)।

...पदादि...— VI. i. 165
देखें — ऊडिदम्० VI. i. 165

पदादौ — VIII. ii. 6
पदादि (अनुदात्त) के परे रहते (उदात्त के स्थान में हुआ जो एकारादेश, वह विकल्प करके स्वरित होता है)।

...पदाद्योः — VIII. iii. 111
देखें — सात्पदाद्योः VIII. iii. 111

पदान्त...— I. i. 57
देखें — पदान्तद्विर्वचनवरेयलोपस्वरसवर्णानुस्वारदीर्घजश्चर्विधिषु I. i. 57

पदान्तद्विर्वचनवरेयलोपस्वरसवर्णानुस्वारदीर्घजश्चर्विधिषु — I. i. 57
पदान्त, द्विर्वचन, वरे, यलोप, स्वर, सवर्ण, अनुस्वार, दीर्घ, जश्, चर्— इन विधियों में (परनिमित्तक अजादेश स्थानिवत् नहीं होता)।

पदान्तस्य — VII. iii. 9
पद शब्द अन्त में है जिसके, (ऐसे श्वन् आदि वाले) अङ्ग को (जो ऐच् आगम एवं वृद्धिप्रतिषेध कहा है, वह विकल्प से नहीं होता)।

पदान्तस्य — VIII. iv. 36
पद के अन्त के (नकार को णकार आदेश नहीं होता)।

पदान्तस्य — VIII. iv. 58
पदान्त के (अनुस्वार को यय् परे रहते विकल्प से पर-सवर्णादेश होता है)।

पदान्तात् — VI. i. 73
(दीर्घ से उत्तर जो दकार है, उसके परे रहते दीर्घ को नित्य तुक् का आगम होता है, तथा) पदान्त (दीर्घ) से उत्तर (छकार परे रहते पूर्व पदान्त दीर्घ को विकल्प से तुक् आगम होता है, संहिता के विषय में)।

पदान्तात् — VI. i. 105
पदान्त (एङ् प्रत्याहार) से उत्तर (अकार परे रहते पूर्व, पर के स्थान में पूर्वरूप एकादेश होता है, संहिता के विषय में)।

पदान्तात् — VIII. iv. 34
पदान्त (षकार से उत्तर नकार को णकार आदेश नहीं होता)।

पदान्तात् — VIII. iv. 41
पदान्त (टवर्ग) से उत्तर (सकार और तवर्ग को षकार और टवर्ग नहीं होता, नाम् को छोड़कर)।

पदान्ताभ्याम् — VII. iii. 3
पदान्त (यकार तथा वकार) से उत्तर (ञित्, णित्, कित्, तद्धित परे रहते अङ्ग के अचों में आदि अच् को वृद्धि नहीं होती, किन्तु उन यकार, वकार से पूर्व तो क्रमशः ऐच् = ऐ, औ आगम होता है)।

...पदाम् — VII. iv. 54
देखें — मीमाघु० VII. iv. 54

पदार्थ... — I. iv. 95

देखें — **पदार्थसम्भावनान्ववसर्ग० I. iv. 95**

पदार्थसम्भावनान्ववसर्गगर्हासमुच्चयेषु — I. iv. 95

पदार्थ = अप्रयुक्त पद का अर्थ, सम्भावन = सम्भावना व्यक्तकरना, अन्ववसर्ग = कामचार अर्थात् करे या न करे, गर्हा = निन्दा तथा समुच्चय — इन अर्थों में (अपि शब्द की कर्मप्रवचनीय और निपात संज्ञा होती है।

पदास्वैरिबाह्यापक्ष्येषु — III. i. 119

पद, अस्वैरी = पराधीन, बाह्या = बाहर, पक्ष्य = पक्ष में रहने वाले– इन अर्थों में (भी ग्रह् धातु से क्यप् प्रत्यय होता है)।

...पदि... — III. iv. 56

देखें — **विशिपतिपदि० III. iv. 56**

पदे — I. iv. 75

(मध्ये), पदे (तथा निवचने) शब्द (भी कृञ् के योग में विकल्प से गति और निपातसंज्ञक होते हैं)।

पदे — VI. ii. 7

(अपदेशवाची तत्पुरुष समास में) पद शब्द उत्तरपद रहते (पूर्वपद को प्रकृतिस्वर होता है)।

...पदे — VI. ii. 191

देखें — **अकृत्पदे VI. ii. 191**

पदे — VIII. iii. 21

(अवर्ण पूर्ववाले पदान्त य्, व् का उञ्) पद के परे रहते (भी लोप होता है)।

पदे — VIII. iii. 47

(समास में अनुत्तरपदस्थ अधस् तथा शिरस् के विसर्जनीय को सकार आदेश होता है), पद शब्द परे रहते।

...पदेषु — III. ii. 23

देखें — **शब्दश्लोक० III. ii. 23**

पदोत्तरपदम् — IV. iv. 39

पद शब्द उत्तरपदवाले (द्वितीयासमर्थ) प्रातिपदिक से ('ग्रहण करता है'– अर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

...पनिभ्यः — III. i. 28

देखें — **गुपूधूपविच्छि० III. i. 28**

पन्थ — IV. iii. 29

(सप्तमीसमर्थ पथिन् प्रातिपदिक से 'जात' अर्थ में वुन् प्रत्यय होता है तथा प्रत्यय के साथ-साथ पथिन् को) पन्थ आदेश (भी) होता है।

पन्थः — V. i. 75

(द्वितीयासमर्थ पथिन् प्रातिपदिक से 'नित्य ही जाता है' अर्थ में ण प्रत्यय होता है, तथा) उस प्रत्यय के सन्नियोग से पथिन् को पन्थ आदेश हो जाता है।

...पयस्... — VIII. iii. 53

देखें — **पतिपुत्र० VIII. iii. 53**

पयस् = दूध, पानी, वर्षा।

...पयसोः — IV. iv. 157

देखें — **गोपयसोः IV. iv. 157**

...पर... — I. i. 33

देखें — **पूर्वपरावरदक्षिणोत्तरापराधराणि I. i. 33**

पर = दूर।

पर... — III. iv. 18

देखें — **परावरयोगे III. iv. 18**

पर... — IV. iii. 5

देखें — **परावराधमोत्त० IV. iii. 5**

पर... — V. iii. 29

देखें — **परावराभ्याम् V. III. 29**

परः — I. i. 46

(अन्त्य अच् से) परे (मिदागम होता है)।

परः — I. iv. 108

(वर्णों के) अतिशयित = अत्यन्त (समीपता की संहिता संज्ञा होती है)।

परः — III. i. 2

(जिसकी प्रत्यय संज्ञा की गई है, वह जिस धातु या प्रातिपदिक से विधान किया जावे, उससे) परे होता है। (यह अधिकार भी पञ्चमाध्याय की समाप्ति तक जानना चाहिये)।

परः — VIII. iii. 4

(रु से पूर्व वर्ण, जो अनुनासिक से भिन्न है, उससे) परे (अनुस्वार आगम होता है)।

परक्षेत्रे — V. ii. 92

(क्षेत्रियच् शब्द का निपातन किया जाता है), दूसरे क्षेत्र = शरीर में (चिकित्सा किये जाने योग्य अर्थ में)।

परम् — I. iv. 2

(विप्रतिषेध = तुल्यबलविरोध होने पर) बाद वाले सूत्र से कथित (कार्य होता है)।

परम् — II. ii. 31

(राजदन्तादि-गणपठित शब्दों में उपसर्जन का) बाद में प्रयोग होता है।

परम् — VIII. i. 2

(उस द्वित्व किये हुये के) पर वाले शब्द की (आम्रेडित सञ्ज्ञा होती है)।

...परम...— II. i. 60

देखें — **सन्महत्परमो० II. i. 60**

परम = सबसे अधिक दूर, प्रमुख, सबसे अधिक ऊँचा, सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण।

....परमे... — VIII. iii. 97

देखें — **अम्बाम्बगोभूमि० VIII. iii. 97**

...परम्पर... — V. ii. 10

देखें — **परोवरपरम्पर० V. ii. 10**

परयोः — III. ii. 39

देखें — **द्विषत्परयोः III. ii. 39**

...परयोः — VI. i. 81

देखें — **पूर्वपरयोः VI. i. 81**

पररूपम् — VI. i. 90

(अवर्णान्त उपसर्ग से उत्तर एङ् आदिवाले धातु के परे रहते पूर्व, पर के स्थान में) पररूप एकादेश होता है।

परवत् — II. iv. 26

पर = उत्तरपद के समान (लिङ्ग होता है, द्वन्द्व और तत्पुरुष का)।

...परशव्ययोः — IV. iii. 165

देखें — **कंसीयपरशव्ययोः IV. iii. 165**

परश्वधात् — IV. iv. 58

(प्रहरण समानाधिकरणवाची प्रथमासमर्थ) परश्वध प्रातिपदिक से (षष्ठ्यर्थ में ठञ् प्रत्यय होता है और चकार से ठक् भी)।

परश्वध = कुल्हाड़ी, कुठार।

परसवर्णः — VIII. iv. 57

(अनुस्वार को यय् प्रत्याहारस्थ वर्ण परे रहते) परसवर्ण आदेश होता है।

परस्मिन् — I. i. 56

परनिमित्तक (अजादेश, पूर्व को विधि करने में स्थानिवत् हो जाता है)।

परस्मिन् — III. iii. 138

(भविष्यत्काल में) पहले भाग की (मर्यादा को कहना हो तो अनद्यतन की तरह प्रत्ययविधि विकल्प से नहीं होती, यदि वह कालविभाग अहोरात्रसम्बन्धी न हो तो)।

परस्मैपदम् — I. iii. 78

(जिन धातुओं से जिस विशेषण द्वारा आत्मनेपद का विधान किया है, उनसे अवशिष्ट धातुओं से कर्तृवाच्य में) परस्मैपद होता है।

परस्मैपदम् — I. iv. 98

(लादेश) परस्मैपदसंज्ञक होते हैं।

परस्मैपदम् — III. i. 90

(कुष और रञ्ज धातुओं से कर्मवद्भाव में श्यन् प्रत्यय और) परस्मैपद होता है, (प्राचीन आचार्यों के मत में)।

परस्मैपदानाम् — III. iv. 82

(लिट् लकार के) परस्मैपदसंज्ञक जो तिबादि आदेश, उनके स्थान में (यथासङ्ख्य करके णल्, अतुस्, उस्, थल्, अथुस्, अ, णल्, व, म– ये आदेश हो जाते हैं)।

परस्मैपदेषु — II. iv. 77

परस्मैपद परे रहते (गा, स्था, घुसञ्ज्ञक धातु, पा और भू — इन धातुओं से उत्तर सिच् का लुक् होता है)।

परस्मैपदेषु — III. i. 55

(कर्तृवाची लुङ्) परस्मैपद परे रहते (पुषादि, द्युतादि और लृदित् धातुओं से उत्तर च्लि को 'अङ्' आदेश होता है)।

परस्मैपदेषु — III. iv. 97

परस्मैपदविषय में (लेट्-लकार-सम्बन्धी इकार का भी विकल्प से लोप हो जाता है)।

परस्मैपदेषु — III. iv. 103

परस्मैपदविषयक (लिङ् लकार को यासुट् का आगम होता है और वह उदात्त तथा ङिद्वत् भी होता है)।

परस्मैपदेषु — VII. ii. 1

परस्मैपदपरक (सिच् के परे रहते इगन्त अङ्गों को वृद्धि होती है)।

परस्मैपदेषु — VII. ii. 40

परस्मैपदपरक (सिच् परे रहते भी वृ तथा ऋकारान्त धातुओं से उत्तर इट् को दीर्घ नहीं होता)।

परस्मैपदेषु — VII. ii. 58

(गम्लृ धातु से उत्तर सकारादि आर्धधातुक को) परस्मैपद परे रहते (इट् का आगम होता है)।

परस्मैपदेषु — VII. ii. 71

(ष्टुञ्, षुञ् तथा धूञ् से उत्तर) परस्मैपद परे रहते (सिच् को इट् का आगम होता है)।

परस्मैपदेषु — VII. iii. 76

(क्रमु अङ्गों को) परस्मैपदपरक (शित्) प्रत्यय परे रहते (दीर्घ होता है)।

परस्य — I. i. 33

पर को कहा गया कार्य (उस पर वाले के आदि अल् के स्थान में होवे)।

परस्य — VI. i. 108

(ख्य् और त्य् से) परे (सि तथा ङस्) के (अकार के स्थान में उकार आदेश होता है, संहिता के विषय में)।

परस्य — VI. iii. 7

(जिस सञ्ज्ञा से वैयाकरण ही व्यवहार करते हैं, उसको कहने में) पर शब्द (तथा चकार से आत्मन् शब्द) से उत्तर (भी चतुर्थी विभक्ति का अलुक् होता है)।

परस्य — VII. iii. 22

पर (इन्द्र शब्द) के (अचों में आदि अच् को वृद्धि नहीं होती)।

परस्य — VII. iii. 27

(अर्ध शब्द से) परे (परिमाणवाची शब्द के अचों में आदि अकार को वृद्धि नहीं होती, पूर्वपद को तो विकल्प से होती है; ञित्, णित् तथा कित् तद्धित परे रहते)।

परस्य — VII. iv. 88

(चर् तथा फल् धातुओं से) पर के (अकार के स्थान में उकारादेश होता है; यङ् तथा यङ्लुक् परे रहते)।

परस्य — VIII. ii. 92

(अग्नीध् के प्रेषण में पद के आदि को प्लुत होता है, तथा उससे) परे को (भी होता है, यज्ञकर्म में)।

परस्य — VIII. iii. 118

(लिट् परे रहते षद् धातु के परवाले सकार को मूर्धन्य आदेश नहीं होता)।

पराङ्गवत् — II. i. 2

(आमन्त्रितसंज्ञक पद के परे रहते पूर्व के सुबन्त पद को) पर के अङ्ग के समान कार्य होता है, (स्वरविषय में)।

पराजेः — I. iv. 26

परापूर्वक 'जि' धातु के (प्रयोग में जो सहन नहीं किया जा सकता, ऐसे कारक की अपादान संज्ञा होती है)।

परादिः — VI. ii. 199

(वेदविषय में) उत्तरपद सक्थ शब्द के आदि को (बहुल करके अन्तोदात्त होता है)।

...पराभ्याम् — I. iii. 19

देखें — **विपराभ्याम् I. iii. 19**

...पराभ्याम् — I. iii. 39

देखें — **उपपराभ्याम् I. iii. 39**

...पराभ्याम् — I. iii. 79

देखें—**अनुपराभ्याम् I. iii. 79**

....परारि...— V. iii. 32

देखें — **सद्यःपरुत्० V. iii. 32**

परावरयोगे — III. iv. 20

जब पर का अवर के साथ या पूर्व का पर के साथ योग गम्यमान हो (तो भी धातु से क्त्वा प्रत्यय होता है)।

परावराधमोत्तमपूर्वात् — IV. iii. 5

पर, अवर, अधम, उत्तम— ये शब्द पूर्व में हैं जिनके, ऐसे (अर्ध शब्द) से (भी शैषिक यत् प्रत्यय होता है)।

परावराभ्याम् — V. iii. 29

(दिशा, देश तथा काल अर्थों में वर्त्तमान सप्तम्यन्त, पञ्चम्यन्त तथा प्रथमान्त) पर तथा अवर प्रातिपदिकों से (विकल्प से स्वार्थ में अतसुच् प्रत्यय होता है)।

परि...— I. iii. 18

देखें — **परिव्यवेभ्यः I. iii. 18**

...परि...— I. iv. 89

देखें — **प्रतिपर्यनवः I. iv. 89**

...परि...— II. i. 11

देखें — **अपपरिबहिरञ्चवः II. i. 11**

परि...— III. iii. 37

देखें — **परिन्योः III. iii. 37**

परि... — IV. iii. 61

देखें — **पर्यनुपूर्वात् IV. iii. 61**

परि...— V. iii. 9

देखें — **पर्यभिभ्याम् V. iii. 9**

परि...— VI. ii. 33

देखें — **परिप्रत्युपापाः VI. ii. 33**

परि...— VIII. iii. 70

देखें — **परिनिविभ्यः VIII. iii. 70**

...परि...— VIII. iii. 72

देखें — **अनुविपर्य० VIII. iii. 72**

परिक्रयणे — I. iv. 44

परिक्रयण में (जो साधकतम कारक, उसकी विकल्प से सम्प्रदान संज्ञा होती है, पक्ष में करण संज्ञा)।

परिक्रयण = नियत समय तक वेतनादि द्वारा कर्ज चुकाना।

परिक्लिश्यमाने — III. iv. 55

चारों ओर से क्लेश को प्राप्त (स्वाङ्गवाची द्वितीयान्त) शब्द उपपद हो तो (भी धातु से णमुल् प्रत्यय होता है)।

...परिक्षिप...— III. ii. 142

देखें—सम्पृचानुरुध० — III. ii. 142

...परिक्षिप... — III. ii. 146

देखें — **निन्दहिंस० III. ii. 146**

परिखायाः — V. i. 17

(प्रथमासमर्थ) 'परिखा' प्रातिपदिक से (षष्ठ्यर्थ एवं सप्तम्यर्थ में ठञ् प्रत्यय होता है, यदि वह प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक स्यात् = 'सम्भव हो' क्रिया के साथ समानाधिकरणवाला हो तो)।

परिचाय्य...— III. i. 131

देखें — **परिचाय्योपचाय्य० III. i. 131**

परिचाय्योपचाय्यसमूह्याः — III. i. 131

(अग्नि अभिधेय हो तो) परिचाय्य, उपचाय्य, समूह्य— ये शब्द निपातन किये जाते हैं।

परिजय्य...— V. i. 92

देखें — **परिजय्यलभ्यकार्य० V. i. 92**

परिजय्यलभ्यकार्यसुकरम् — V. i. 92

(तृतीयासमर्थ कालवाची प्रातिपदिकों से) परिजय्य = 'जीता जा सकता है', लभ्य = 'प्राप्त करने योग्य' कार्य = 'किया जा सके' तथा सुकरम् = 'सुगमता से किया जा सके'— इन अर्थों में (यथाविहित ठञ् प्रत्यय होता है)।

परिजातः — V. ii. 67

(तृतीयासमर्थ सस्य प्रातिपदिक से) 'सब ओर से उत्पन्न' अर्थ में (कन् प्रत्यय होता है)।

परिणा — II. i. 10

(सुबन्त) 'परि' के साथ (अक्ष, शलाका और संख्यावाचक शब्दों का अव्ययीभाव समास होता है)।

...परिदह...— III. ii. 142

देखें — **सम्पृचानुरुध० III. ii. 142**

...परिदेवि...— III. ii. 142

देखें — **सम्पृचानुरुध० III. ii. 142**

परिनिविभ्यः — VIII. iii. 70

परि, नि तथा वि उपसर्ग से उत्तर (सेव, सित, सय, सिवु, सह, सुट् आगम, स्तु तथा स्वञ्ज् के सकार को मूर्धन्य

आदेश होता है; सित शब्द से पहले-पहले; अट्व्यवाय एवं अभ्यासव्यवाय में भी)।

परिन्योः — III. iii. 37

परि तथा नि उपपद रहते हुए (यथासंख्य नी तथा इण् धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में द्यूत तथा उचित आचरण के विषय में घञ् प्रत्यय होता है)।

परिपन्थम् — IV. iv. 36

(द्वितीयासमर्थ) परिपन्थ प्रातिपदिक से ('बैठता है' तथा 'मारता है' अर्थों में ठक् प्रत्यय होता है)।

परिपन्थि... — V. ii. 89

देखें — परिपन्थिपरिपरिणौ V. ii. 89

परिपन्थिपरिपरिणौ — V. ii. 89

(वेदविषय में) परिपन्थिन् और परिपरिन् शब्दों का निपातन किया जाता है; ('पर्यवस्थाता' = मार्ग का आरोधक वाच्य हो तो)।

...परिपरिणौ — V. ii. 89

देखें — परिपन्थिपरिपरिणौ V. ii. 89

...परिपूर्वात् — V. i. 91

देखें — सम्परिपूर्वात् V. i. 91

परिप्रत्युपापाः — VI. ii. 33

(पूर्वपदभूत) परि, प्रति, उप, अप — इन शब्दों को (वर्ज्यमान तथा दिन एवं रात्रि के अवयववाची शब्दों के परे रहते प्रकृतिस्वर हो जाता है)।

...परिप्रश्नयोः — III. iii. 110

देखें — आख्यानपरिप्रश्नयोः III. iii. 110

...परिभिः — II. iii. 10

देखें — अपाङ्परिभिः० II. iii. 10

...परिभू... — III. ii. 157

देखें — जिदृक्षि० III. ii. 157

...परिभ्यः — I. iii. 21

देखें — अनुसम्परिभ्यः I. iii. 21

...परिभ्यः — I. iii. 83

देखें — व्याङ्परिभ्यः० I. iii. 83

...परिभ्यः — VIII. iii. 96

देखें — विकुशमि० VIII. iii. 96

...परिभ्याम् — VI. i. 132

देखें — सम्परिभ्याम् VI. i. 132

...परिमाण... — II. iii. 46

देखें — प्रातिपदिकार्थलिङ्ग० II. iii. 46

...परिमाण... — V. i. 38

देखें — असंख्यापरिमाण० V. i. 38

परिमाणम् — V. i. 56

(प्रथमासमर्थ) परिमाणवाची प्रातिपदिकों से (षष्ठ्यर्थ में यथाविहित प्रत्यय होते हैं)।

...परिमाणम् — VI. ii. 55

देखें — हिरण्यपरिमाणम् VI. ii. 55

परिमाणस्य — VII. iii. 26

(अर्ध शब्द से उत्तर) परिमाणवाची उत्तरपद के (अचों में आदि अच् को वृद्धि होती है, पूर्वपद को तो विकल्प से होती है; ञित्, णित् तथा कित् तद्धित प्रत्यय परे रहते)।

परिमाणाख्यायाम् — III. iii. 20

(सब धातुओं से) परिमाण की आख्या = कथन गम्यमान होने पर (घञ् प्रत्यय होता है)।

परिमाणात् — IV. iii. 153

(षष्ठीसमर्थ) परिमाणवाची प्रातिपदिकों से (क्रीतार्थ में कहे गये प्रत्ययविकार अवयव अर्थों में भी होते हैं)।

...परिमाणात् — V. i. 19

देखें — अगोपुच्छसंख्या० V. i. 19

परिमाणान्तस्य — VII. iii. 17

परिमाणवाची शब्द अन्त में है जिस अङ्ग के, उसके (सङ्ख्यावाची शब्द से उत्तर उत्तरपद के अचों में आदि अच् को ञित्, णित् तथा कित् तद्धित परे रहते वृद्धि होती है, सञ्ज्ञा-विषय एवं शाण शब्द उत्तरपद को छोड़कर)।

परिमाणिना — II. ii. 5

परिमाणिवाचक शब्दों के साथ (कालवाचक सुबन्त समास को प्राप्त होते हैं और वह तत्पुरुष समास होता है)।

परिमाणे — III. ii. 33

परिमाण-वाचक उपपद रहते ('पच्' धातु से खश् प्रत्यय होता है)।

परिमाणे — III. iii. 66

परिमाण गम्यमान होने पर (पण् धातु से नित्य ही कर्तृ-भिन्न कारकसंज्ञा तथा भाव में अप् प्रत्यय होता है)।

परिमाणे — IV. iii. 150

(षष्ठीसमर्थ सुवर्णवाची प्रातिपदिकों से) परिमाण जाना जाये (तो विकार अभिधेय होने पर अण् प्रत्यय होता है)।

परिमाणे — V. ii. 39

(प्रथमासमर्थ) परिमाणसमानाधिकरणवाची (यत्, तत्, तथा एतद् प्रातिपदिकों से षष्ठ्यर्थ में वतुप् प्रत्यय होता है)।

परिमुखम् — IV. iv. 29

(द्वितीयासमर्थ) परिमुख प्रतिपदिक से (भी 'वर्तते' अर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

परिमुख = मुंह के सामने।

...परिमुह... — I. iii. 89

देखें — पादम्याङ्यमाङ्यस० I. iii. 89

...परिमुह ...— III. ii. 142

देखें — सम्पृचानुरुध० III. ii. 142

परिमृज ... — III. ii. 5

देखें — परिमृजापनुदोः III. ii. 5

परिमृजापनुदोः — III. ii. 5

(तुन्द तथा शोक कर्म उपपद रहते यथासङ्ख्य करके) परिपूर्वक मृज तथा अपपूर्वक नुद् धातु से (क प्रत्यय होता है)।

...परमे...— VIII. iii. 97

देखें — अम्बाम्ब० VIII. iii. 97

...परिरट...— III. ii. 142

देखें — सम्पृचानुरुध० III. ii. 142

परिरट = चीखना, चिल्लाना।

... परिरट ...— III. ii. 146

देखें — निन्दहिंस० III. ii. 146

...परिवद ... — III. ii. 142

देखें — सम्पृचानुरुध० III. ii. 142

...परिवादि...— III. ii. 146

देखें — निन्दहिंस० III. ii. 146

परिवापणे — V. iv 67

(मद्र प्रातिपदिक से कृञ् के योग में डाच् प्रत्यय होता है) मुण्डन वाच्य हो तो।

परिवृढः — VII. ii. 21

परिवृढ शब्द (निष्ठा परे रहते स्वामी अर्थ को कहने में निपातन किया जाता है)।

परिवृतः — IV. ii. 9

(तृतीयासमर्थ प्रातिपदिक से) 'ढका हुआ' – इस अर्थ में (यथाविहित प्रत्यय होता है, यदि वह ढका हुआ रथ हो तो)।

परिव्यवेभ्यः— I. iii. 18

परि, वि तथा अव उपसर्ग से उत्तर (डुक्रीञ् धातु से आत्मनेपद होता है)।

... परिव्राजकयोः — IV. i. 149

देखें — वेणुपरिव्राजकयोः IV. i. 149

... परिषदः — IV. iii. 122

देखें — पत्राध्वर्युपरिषदः IV. iii. 122

परिषदः — IV. iv. 44

(द्वितीयासमर्थ) परिषद् प्रातिपदिक से ('समवेत होता है' अर्थ में ण्य प्रत्यय होता है)।

परिषदः — IV. iv. 101

(सप्तमीसमर्थ) परिषद् प्रातिपदिक से (साधु अर्थ में ण्य प्रत्यय होता है)।

... परिषदः — V. ii. 112

देखें — रजःकृष्या० V. ii. 112

... परिसृ ...— III. ii. 142

देखें — सम्पृचानुरुध० III. ii. 142

परिस्कन्दः — VIII. iii. 75

परिस्कन्द शब्द में मूर्धन्याभाव निपातन है, (प्राग्देशी-यान्तर्गत भरतदेश के प्रयोग-विषय में)।

परीप्सायाम् — III. iv. 52

शीघ्रता गम्यमान हो तो (अपादान उपपद रहते धातु से णमुल् प्रत्यय होता है)।

परीप्सायाम् — VIII. i. 42

(पुरा शब्द से युक्त तिङन्त को भी) शीघ्रता अर्थ गम्यमान होने पर (अनुदात्त नहीं होता)।

परे — I. iv. 81

(वेद-विषय में गति, उपसर्गसंज्ञक शब्द धातु से) पर में (तथा पूर्व में भी) आते हैं।

परेः — I. iii. 82

परि उपसर्ग से उत्तर (मृष् धातु से परस्मैपद होता है)।

परेः — VI. i. 43

परि उपसर्ग से उत्तर (व्येञ् धातु को विकल्प करके सम्प्रसारण नहीं होता है)।

परेः — VI. ii. 182

परि उपसर्ग से उत्तर (अभितोभावी तथा मण्डल शब्द को अन्तोदात्त नहीं होता)।

परेः — VIII. i. 5

(छोड़ने अर्थ में वर्तमान) परि शब्द को (द्वित्व होता है)।

परेः — VIII. ii. 22

परि के (रेफ को भी घ तथा अङ्क शब्द पर रहते विकल्प से लत्व होता है)।

परेः — VIII. iii. 74

परि उपसर्ग से उत्तर (भी स्कन्द् के सकार को विकल्प से मूर्धन्य आदेश होता है)।

परोक्षे — III. ii. 115

(अनद्यतन) परोक्ष = जो अपनी इन्द्रियों से न देखा गया हो, (ऐसे भूतकाल में वर्तमान धातु से लिट् प्रत्यय होता है)।

परोवरपरम्परपुत्रपौत्रम् — V. ii. 10

(द्वितीयासमर्थ) परोवर, परम्पर तथा पुत्रपौत्र प्रातिपदिकों से ('अनुभव करता है' अर्थ में ख प्रत्यय होता है)।

परौ — III. iii. 38

परि पूर्वक (इण् धातु से क्रम परिपाटी गम्यमान होने पर कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

परौ — III. iii. 45

(यज्ञविषय में) परि पूर्वक (ग्रह् धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

परौ — III. iii. 55

तिरस्कार अर्थ में वर्तमान परिपूर्वक भू धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में विकल्प से घञ् प्रत्यय होता है, पक्ष में अप् प्रत्यय होता है)।

परौ — III. iii. 84

परि पूर्वक (हन् धातु से करण कारक में अप् प्रत्यय होता है तथा हन् के स्थान में घ आदेश भी होता है)।

परौ — VIII. iii. 51

(अधि के अर्थ में वर्तमान) परि शब्द के परे रहते (पञ्चमी के विसर्जनीय को सकारादेश होता है, वेद (विषय में)।

पर्पादिभ्यः — IV. iv. 10

(तृतीयासमर्थ) पर्पादि प्रातिपदिकों से ('चरति' अर्थ में ष्ठन् प्रत्यय होता है)।

पर्प = पहिए वाली कुर्सी।

पर्यनुपूर्वात् — IV. iii. 61

परि, अनुपूर्वक (अव्ययीभावसंज्ञक ग्रामशब्दान्त सप्तमीसमर्थ प्रातिपदिक) से ('भव' अर्थ में ठञ् प्रत्यय होता है)।

पर्यभिभ्याम् — V. iii. 9

परि तथा अभि शब्दों से (भी तसिल् प्रत्यय होता है)।

पर्यवस्थातरि — V. ii. 89

(वेद-विषय में परिपन्थिन्, परिपरिन् शब्दों का निपातन किया जाता है) पर्यवस्थाता = मार्ग का अवरोधक वाच्य हो तो।

पर्याप्तिवचनेषु III. iv. 77

(सामर्थ्य अर्थवाले) परिपूर्णतावाची शब्दों के उपपद रहते (धातु से तुमन् प्रत्यय होता है)।

पर्याय... — III. iii. 111

देखें — **पर्यायार्हर्णोत्पत्तिषु III. iii. 111**

पर्यायार्हर्णोत्पत्तिषु — III. iii. 111

पर्याय = बारी, अर्ह = सामर्थ्य, ऋण और उत्पत्ति अर्थों में (धातु से स्त्रीलिङ्ग भाव में विकल्प से ण्वुच् प्रत्यय होता है)।

पर्याये — III. iii. 39

(वि और उप पूर्वक शीङ् धातु से) पर्याय = बारी गम्यमान होने पर (कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

पर्यायेण — VII. iii. 31

(नञ् से उत्तर यथायथ तथा यथापुर अङ्गों के पूर्वपद एवं उत्तरपद के अचों में आदि अच् को) पर्याय = बारी-बारी से (वृद्धि होती है; ञित्, णित् तथा कित् तद्धित परे रहते)।

...पर्वत... — IV. i. 103

देखें — **द्रोणपर्वत० IV. i. 103**

पर्वतात् — IV. ii. 142

पर्वत शब्द से (भी शैषिक छ प्रत्यय होता है)।

पर्वते — IV. iii. 91

(प्रथमासमर्थ) पर्वतवाची प्रातिपदिकों से ('वह इनका अभिजन' इस अर्थ में छ प्रत्यय होता है, आयुधजीवियों को कहने के लिए)।

पर्वते — V. iv. 147

पर्वत अभिधेय हो तो (बहुव्रीहि समास में त्रिककुत् शब्द निपातन किया जाता है)।

...पर्श्वादि... — V. iii. 117

देखें — **पर्श्वादियौधे० V. iii. 117**

...पलद... — IV. ii. 141

देखें — **कन्थापलद० IV. ii. 141**

पलद = छत के उपयोग में।

...पलद्यादि... — IV. ii. 109

देखें — **प्रस्थोत्तरपदपलद्यादि० IV. ii. 109**

पलल... — VI. ii. 128

देखें — **पललसूप० VI. ii. 128**

पलल = एक प्रकार की स्थलीय वनस्पति।

पललसूपशाकम् — VI. ii. 128

(मिश्रवाची तत्पुरुष समास में) पलल, सूप, शाक — इन उत्तरपद शब्दों को (आद्युदात्त होता है)।

पलाशादिभ्यः — IV. iii. 138

(षष्ठीसमर्थ) पलाशादि प्रातिपदिकों से (विकल्प से विकार, अवयव अर्थों में अञ् प्रत्यय होता है, पक्ष में औत्सर्गिक अण् होता है)।

...पलित... — II. i. 66

देखें — **खलतिपलितवलिन० II. i. 66**

...पलित... — III. ii. 56

देखें — **आढ्यसुभग० III. ii. 56**

...पशाम् — VII. iv. 86

देखें — **जपजभ० VII. iv. 86**

...पशु... — II. iv. 12

देखें — **वृक्षमृगतृण० II. iv. 12**

पशुषु — III. iii. 69

(सम्, उत् पूर्वक अज् धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में, समुदाय से) पशुविषय प्रतीत हो (तो अप् प्रत्यय होता है)।

पशौ — III. ii. 25

पशु कर्ता अभिधेय होने पर (दृति और नाथ कर्म उपपद रहते हृ धातु से इन् प्रत्यय होता है)।

पाणिघताडघौ — III. ii. 55

पाणिघ, ताडघ शब्दों में पाणि तथा ताड कर्म उपपद रहते हन् धातु से क प्रत्यय तथा हन् धातु के टि अर्थात् अन् भाग का लोप एवं ह् को घ् निपातन किया जाता है, शिल्पी कर्ता वाच्य हो तो)।

...पाणिन्धमाः — III. ii. 37

देखें — **उग्रम्पश्येरम्मद० III. ii. 37**

पाणौ — I. iv. 76

(हस्ते और) पाणौ शब्द (उपयमन = विवाह-विषय में हों तो नित्य ही उनकी कृञ् के योग में गति और निपात संज्ञा होती है)।

पाण्डुकम्बलात् — IV. ii. 10

(तृतीयासमर्थ) पाण्डुकम्बल प्रातिपदिक से ('ढका हुआ जो रथ' अर्थ में इनि प्रत्यय होता है)।

पाण्युपतापयोः — VII. iii. 11

(भुज तथा न्युब्ज शब्द क्रमशः) हाथ और उपताप अर्थ में (निपातन किये जाते हैं)।

उपताप = गर्मी, आंच, पीड़ा।

पाते — VI. iii. 70

(श्येन तथा तिल शब्द को) पात शब्द के उत्तरपद रहते (तथा य प्रत्यय के परे रहते मुम् आगम होता है)।

पातौ — VIII. iii. 52

पा धातु के प्रयोग परे हों तो (भी पञ्चमी के विसर्जनीय को बहुल करके सकार आदेश होता है, वेद-विषय में)।

...पात्र... — VIII. iii. 46

देखें — **कृकमि० VIII. iii. 46**

...पात्रम् — V. ii. 7

देखें — **पथ्यंग० V. ii. 7**

पात्रात् — V. i. 45

(षष्ठीसमर्थ) पात्र प्रातिपदिक से (ष्ठन् प्रत्यय होता है, 'खेत' अर्थ अभिधेय होने पर)।

...पात्रात् — V. i. 52

देखें — **आढकाचितपात्रात् V. i. 52**

पात्रात् — V. i. 67

(द्वितीयासमर्थ) पात्र प्रातिपदिक से ('समर्थ है' अर्थ में घन् और यत् प्रत्यय होते हैं)।

पात्रेसंम्मितादयः — II. i. 47

पात्रेसम्मित आदि शब्द (भी क्षेप गम्यमान होने पर समुदाय रूप से तत्पुरुषसमासान्त निपातन किये जाते हैं।

पात्रेसम्मित — अधिकतर भोजन के समय उपस्थित।

पाथस्... — IV. iv. 111

देखें — **पाथोनदीभ्याम् IV. iv. 111**

पाथस् = जल, वायु, आहार।

पाथोनदीभ्याम् — IV. iv. 111

(सप्तमीसमर्थ) पाथस् और नदी प्रातिपदिकों से (वेद-विषय में ड्यण् प्रत्यय होता है)।

पाद्... — VI. ii. 197

देखें — **पाद्दन्० VI. ii. 197**

...पाद... — V. i. 34

देखें — **पणपादमाष० V. i. 34**

पाद... — V. iv. 1

देखें — **पादशतस्य V. iv. 1**

पाद... — V. iv. 25

देखें — **पादार्घाभ्याम् V. iv. 25**

पादः — IV. i. 8

पादन्त प्रातिपदिक से (स्त्रीलिङ्ग में विकल्प से ङीप् प्रत्यय होता है)।

पादः — VI. iv. 130

(भसञ्ज्ञक) पादशब्दान्त अङ्ग को (पत् आदेश हो जाता है)।

...पादपात् — IV. iii. 118

देखें — **क्षुद्राभ्रमरवटर० IV. iii. 118**

पादपूरणम् — VI. i. 130

('सः' के सु का लोप हो जाता है, अच् परे रहते; यदि लोप होने पर) पाद की पूर्ति हो रही हो तो।

पादपूरणे — VIII. i. 7

(प्र, सम्, उप तथा उत् उपसर्गों को; पाद की पूर्ति करनी हो तो (द्वित्व हो जाता है)।

पादम्याड्यमाङ्यसपरिमुहरुचिनृतिवदवस: — I. iii. 89

पा, दमि, आङ्पूर्वक यम, आङ्पूर्वक यस, परिपूर्वक मुह, रुचि, नृति, वद, वस् — इन ण्यन्त धातुओं से परस्मैपद नहीं होता है।

पादविहरणे — I. iii. 41

पादविहरण= टहलना अर्थ में वर्तमान (वि पूर्वक क्रम् धातु से आत्मनेपद होता है)।

पादशतस्य — V. iii. 1

(सङ्ख्या आदि में है जिसके, ऐसे) पाद और शत शब्द अन्त वाले प्रातिपदिकों से ('वीप्सा' गम्यमान हो तो वुन् प्रत्यय होता है तथा प्रत्यय के साथ-साथ पाद तथा शत के अन्त का लोप भी होता है)।

पादस्य — V. iv. 138

उपमानवाचक हस्त्यादिवर्जित प्रातिपदिकों से उत्तर को पाद शब्द, उसका समासान्त लोप हो जाता है, बहुव्रीहि समास में)।

पादस्य — VI. iii. 51

पाद शब्द को (पद आदेश होता है; आजि, आति, ग तथा उपहत उत्तरपद परे रहते)।

पादान्ते — VII. i. 57

(वेद-विषय में) ऋचा के पाद के अन्त में वर्तमान (गो शब्द से उत्तर आम् को नुट् का आगम होता है)।

पादार्घाभ्याम् — V. iv. 25

पाद और अर्घ प्रातिपदिकों से (भी 'उसके लिये यह' अर्थ में यत् प्रत्यय होता है)।

पाद्न्मूर्धसु — VI. ii. 197

(द्वि तथा त्रि से उत्तर) पाद, दत्, मूर्धन् इन शब्दों के उत्तरपद रहते (बहुव्रीहि समास में विकल्प से अन्तोदात्त होता है)।

पानम् — VII. iv. 1

(पूर्वपद में स्थित निमित्त से उत्तर) पान शब्द के (नकार को देश का अभिधान हो रहा हो तो णकारादेश होता है)।

पाप... — II. i. 53

देखें — पापाणके II. i. 53

...पाप... — III. ii. 89

देखें — सुकर्म० III. ii. 89

...पाप... — IV. i. 30

देखें — केवलमामक० IV. i. 30

पापम् — VI. ii. 68

(शिल्पिवाची शब्द उत्तरपद रहते) पाप शब्द को (भी विकल्प से आद्युदात्त होता है)।

...पापयोगात् — V. iv. 47

देखें — हीयमानपापयोगात् V. iv. 47

...पापवत्सु — VI. ii. 25

देखें — व्रज्यावम० VI. ii. 25

पापाणके — II. i. 53

(कुत्सनवाची) पाप और अणक शब्द (कुत्सितवाचक सुबन्तों के साथ विकल्प से तत्पुरुष समास को प्राप्त होते हैं)।

...पामादि... — V. ii. 100

देखें — लोमादिपामादि० V. ii. 100

पायौ — VIII. iii. 11

(स्वतवान् शब्द के नकार को रु होता है), पायु शब्द परे रहते।

पाय्य... — III. i. 129

देखें — पाय्यसान्नाय्य III. i. 129

...पारय... — VI. ii. 122

देखें — कंसमन्थ० VI. ii. 122

पाय्यसान्नाय्यनिकाय्यधाय्याः — III. i. 169

पाय्य, सान्नाय्य, निकाय्य, धाय्य – ये शब्द (यथासङ्ख्य करके मान, हवि, निवास तथा सामधेनी अभिधेय हो तो निपातन किये जाते हैं।

...पार... — III. ii. 48

देखें — अन्तात्यन्त० III. ii. 48

...पार... — VIII. iii. 53

देखें — पतिपुत्र० VIII. iii. 53

पारस्करप्रभृतीनि — VI. i. 151

पारस्कर इत्यादि शब्दों में (भी सुट् आगम निपातन किया जाता है, संज्ञा के विषय में)।

पारायण... — V. i. 72

देखें — पारायणतुरायण० V. i. 72

पारायणतुरायणचान्द्रायणम् — V. i. 71

(द्वितीयासमर्थ) पारायण, तुरायण तथा चान्द्रायण प्रातिपदिकों से ('बरतता है' अर्थ में यथाविहित ठञ् प्रत्यय होता है)।

पाराशर्य... — IV. iii. 110

देखें — **पाराशर्यशिलालिभ्याम् IV. iii. 110**

पाराशर्य = पाराशर की कृति।

पाराशर्यशिलालिभ्याम् — IV. iii. 110

(तृतीयासमर्थ) पाराशर्य, शिलालिन् प्रातिपदिकों से (यथासङ्ख्य करके भिक्षुसूत्र तथा नटसूत्र का प्रोक्त विषय कहना हो तो णिनि प्रत्यय होता है)।

...पारि... — III. i. 138

देखें — **लिम्पविन्द० III. i. 138**

पारे — II. i. 17

(मध्य और) पार शब्द (षष्ठ्यन्त सुबन्त के साथ विकल्प से अव्ययीभाव समास को प्राप्त होते हैं तथा समास के सन्नियोग से इन शब्दों को) एकारान्तत्व भी निपातन से हो जाता है।

पारेवडवा — VI. ii. 42

'पारेवडवा' इस समास किये हुये शब्द के (पूर्वपद को प्रकृतिस्वर होता है)।

पारेवडवा = विपरीत दिशा में घोड़ी के समान।

पार्श्वादियौधेयाभ्याम् — V. iii. 117

(शस्त्रों से जीविका कमाने वाले पुरुषों के समूहवाची पार्श्वादि तथा यौधेयादिगणपठित प्रातिपदिकों से (स्वार्थ में यथासंख्य करके अण् तथा अञ् प्रत्यय होते हैं)।

पार्श्वेन — V. ii. 75

तृतीयासमर्थ पार्श्व प्रातिपदिक से ('चाहता है' अर्थ में कन् प्रत्यय होता है)।

पाले — VI. ii. 78

(गो, तन्ति, यव — इन शब्दों को) पाल शब्द परे रहते (आद्युदात्त होता है)।

तन्ति = रस्सी, डोर।

पावयाङ्क्रियात् — III. i. 42

पावयाङ्क्रियात् शब्द वेदविषय में विकल्प से निपातित है, (साथ ही अभ्युत्सादयामकः, प्रजनयामकः, चिकयामकः, रमयामकः तथा विदामक्रन् शब्द भी वेदविषय में विकल्प से निपातित होते हैं)।

...पाश... — III. i. 25

देखें — **सत्यापपाश० III. i. 25**

पाशप् — V. iii. 47

('निन्दा' अर्थ में वर्तमान प्रातिपदिकों से) पाशप् प्रत्यय होता है।

पाशादिभ्यः — IV. ii. 48

(षष्ठीसमर्थ) पाशादि प्रातिपदिकों से (समूह अर्थ में य प्रत्यय होता है)।

...पिच्छादिभ्यः — V. ii. 100

देखें — **लोमादिपामादि० V. ii. 100**

...पिटच्... — V. ii. 33

देखें — **इनच्पिटच्० V. ii. 33**

पित् — III. iv. 92

(लोट् सम्बन्धी उत्तमपुरुष को आट् का आगम हो जाता है और वह उत्तम पुरुष) पित् (भी) माना जाता है।

पितरामातरा — VI. iii. 32

पितरामातरा — यह शब्द (भी वेदविषय में) निपातन किया जाता है।

पिता — I. ii. 70

(मातृ शब्द के साथ) पितृ शब्द (विकल्प से शेष रह जाता है, मातृ शब्द हट जाता है)।

...पितामहाः — VI. ii. 35

देखें — **पितृव्यमातुल० IV. ii. 35**

पिति — VI. i. 69

(ह्रस्वान्त धातु को) पित् (तथा कृत्) प्रत्यय के परे रहते (तुक् का आगम होता है)।

पिति — VI. i. 186

भी, ह्री, भृ, हु, मद, जन, धन, दरिद्रा तथा जागृ धातु के अभ्यस्त को पित् लसार्वधातुक परे रहते प्रत्यय से पूर्व को उदात्त होता है।

पिति — VII. iii. 87

(अभ्यस्तसञ्ज्ञक अङ्ग की लघु उपधा इक् को अजादि) पित् (सार्वधातुक) प्रत्यय के परे रहते (गुण नहीं होता)।

पितुः — IV. iii. 79

(पञ्चमीसमर्थ) पितृ प्रातिपदिक से ('आगत' अर्थ में यत् प्रत्यय होता है तथा चकार से ठञ् प्रत्यय होता है)।

...पितुर्भ्याम् — VIII. iii. 85

देखें — मातुःपितुर्भ्याम् VIII. iii. 85

...पितृ... — IV. ii. 30

देखें — वाय्वृतुपित्रुषसः IV. ii. 30

...पितृभ्याम् — VIII. iii. 84

देखें — मातृपितृभ्याम् VIII. iii. 84

पितृव्य... — IV. ii. 35

देखें — पितृव्यमातुल० IV. ii. 35

पितृव्यमातुलमातामहपितामहाः — IV. ii. 35

पितृव्य, मातुल, मातामह और पितामह शब्द निपातन किये जाते हैं।

पितृष्वसुः — IV. i. 132

पितृष्वसृ शब्द से (अपत्य अर्थ में छण् प्रत्यय होता है)।

...पितौ — III. i. 4

देखें — सुप्पितौ III. i. 4

...पिपर्त्योः — VII. iv. 77

देखें — अर्त्तिपिपर्त्योः VII. iv. 77

...पिपासा... — VII. iv. 34

देखें — अशनायोदन्य० VII. iv. 34

पिब... — VII. iii. 78

देखें— पिबजिघ्र० VII. iii. 78

पिबजिघ्रधमतिष्ठमनयच्छपश्यर्च्छधौशीयसीदाः — VII. iii. 78

(पा, घ्रा, ध्मा, ष्ठा, म्ना, दाण्, दृशिर्, ऋ, सृ, शद्लृ, षद्लृ — इन अङ्गों को शित् प्रत्यय परे रहते यथासङ्ख्य करके) पिब, जिघ्र, धम, तिष्ठ, मन, यच्छ, पश्य, ऋच्छ, धौ, शीय, सीद आदेश होते हैं।

पिबतेः — VII. iv. 4

पा पाने अङ्ग की (उपधा का चङ्परक णि परे रहते लोप होता है, तथा अभ्यास को ईकारादेश होता है)।

पिषः — III. iv. 35

(शुष्क, चूर्ण तथा रूक्ष कर्म उपपद रहते) पिष् धातु से (णमुल् प्रत्यय होता है)।

पिषः — III. iv. 38

(स्नेहवाची करण उपपद हो तो) पिष् धातु से (णमुल् प्रत्यय होता है)।

...पिषाम् — II. iii. 56

देखें — जासिनिप्रहण० II. iii. 56

पिष्टात् — IV. iii. 143

(षष्ठीसमर्थ) पिष्ट प्रातिपदिक से (भी विकार अर्थ में मयट् प्रत्यय होता है)।

...पिस... — III. ii. 175

देखें — स्थेशभास० III. ii. 175

पी — VI. i. 28

(ओप्यायी धातु को निष्ठा के परे रहते विकल्प से) पी आदेश होता है।

...पीड... — III. iv. 49

देखें — उपपीडरुधकर्षः III. iv. 49

...पीडाम् — VII. iv. 3

देखें — भ्राजभास० VII. iv. 3

...पीयूक्षाभ्यः — VIII. iv. 5

देखें— प्रनिरन्तः० VIII. iv. 5

पीलायाः — IV. i. 118

षष्ठीसमर्थ पीला प्रातिपदिक से (अपत्य अर्थ में विकल्प से अण् प्रत्यय होता है)।

पील्वादि... — V. ii. 24

देखें — पील्वादिकर्णादिभ्यः V. ii. 24

पील्वादिकर्णादिभ्यः — V. ii. 24

(षष्ठीसमर्थ) पील्वादि तथा कर्णादि प्रातिपदिकों से (यथासङ्ख्य करके 'पाक' तथा 'मूल' अर्थ अभिधेय हो तो कुणप् तथा जाहच् प्रत्यय होते हैं)।

पु... — VII. iv. 80

देखें — पुयण्ज्यपरे VII. iv. 80

...पु... — VIII. iv. 2

देखें — अट्कुप्वाङ्० VIII. iv. 2

पुक् — VII. iii. 36

(ऋ, ह्री, व्ली, री, क्नूयी, क्ष्मायी अङ्ग को तथा आकारान्त अङ्ग को णिच् परे रहते) पुक् आगम होता है।

पुगन्त... — VII. iii. 86
देखें — पुगन्तलघूपधस्य VII. iii. 86

पुगन्तलघूपधस्य — VII. iii. 86
पुक् परे रहने पर तत्समीपस्थ अङ्ग के इक् को तथा लघुसञ्ज्ञक इक् उपधा को (भी सार्वधातुक तथा आर्धधातुक प्रत्यय परे रहते गुण हो जाता है)।

पुच्छ... — III. i. 20
देखें — पुच्छभाण्डचीवरात् III. i. 20

...पुच्छ... — V. i. 19
देखें — अगोपुच्छ० V. i. 19

पुच्छभाण्डचीवरात्— III. i. 20
पुच्छ, भाण्ड, चीवर — इन (कर्मों) से (णिङ् प्रत्यय होता है, क्रियाविशेष को कहने में)।

...पुञ्जि... — VIII. iii. 97
देखें — अम्बाम्ब० VIII. iii. 97

पुण्यम् — VI. ii. 152
(सप्तम्यन्त से परे उत्तरपद) पुण्य शब्द को (अन्तोदात्त होता है)।

...पुण्यात् — V. iv. 87
देखें — सर्वैकदेश० V. iv. 87

...पुण्येषु — III. ii. 89
देखें — सुकर्म० III. ii. 89

...पुत्र... — VIII. iii. 53
देखें — पतिपुत्र० VIII. iii. 53

पुत्रः — VI. ii. 132
(तत्पुरुष समास में पुँल्लिङ्गवाची शब्द से उत्तर) पुत्र शब्द उत्तरपद को (आद्युदात्त होता है)।

पुत्रपत्योः — VI. i. 13
(ष्यङ् को सम्प्रसारण होता है), यदि पुत्र तथा पति शब्द उत्तरपद हों तो (तत्पुरुष समास में)।

...पुत्रपौत्रम् — V. ii. 10
देखें — परोवरपरम्पर० V. ii. 10

पुत्रस्य — VIII. iv. 47
(आक्रोश गम्यमान हो तो आदिनी शब्द परे रहते) पुत्र शब्द को (द्वित्व नहीं होता)।

पुत्रात् — V. i. 39
(षष्ठीसमर्थ) पुत्र प्रातिपदिक से ('कारण' अर्थ में छ तथा यत् प्रत्यय होते हैं, यदि वह कारण संयोग वा उत्पात हो तो)।

पुत्रान्तात् — IV. i. 159
(गोत्र से भिन्न वृद्धसंज्ञक) पुत्रान्त प्रातिपदिक से [फिञ् प्रत्यय (पूर्वसूत्रविहित) परे रहते पर विकल्प से कुक् आगम होता है]।

पुत्रे — VI. iii. 21
पुत्र शब्द उत्तरपद रहते (आक्रोश गम्यमान होने पर विकल्प करके षष्ठी का अलुक् होता है)।

...पुत्रौ — I. ii. 68
देखें — भ्रातृपुत्रौ I. ii. 68

...पुनर्वसु... — IV. iii. 34
देखें — श्रविष्ठाफल्गुन्यनु० IV. iii. 34

पुनर्वस्वोः — I. ii. 61
वेदविषय में पुनर्वसु (नक्षत्र) के (द्वित्व अर्थ में विकल्प से एकत्व होता है)।

...पुनर्वस्वोः — I. ii. 63
देखें — तिष्यपुनर्वस्वोः I. ii. 63

...पुम्... — VI. i. 165
देखें — ऊडिदम्० VI. i. 165

पुम् — VII. iv. 19
(पत्लृ अङ्ग को अङ् परे रहते) पुम् आगम होता है।

पुमः — VIII. iii. 6
(अम् प्रत्याहार परे है जिससे, ऐसे खय् के परे रहते) पुम् को (रु आदेश होता है, संहिता में)।

पुमान् — I. ii. 67
पुँल्लिङ्ग शब्द (स्त्रीलिङ्ग शब्द के साथ शेष रह जाता है, यदि उन शब्दों में स्त्रीत्व पुंस्त्वकृत ही विशेष हो, अन्य प्रकृति आदि सब समान ही हो)।

पुम्भ्यः — VI. ii. 132
(तत्पुरुष समास में) पुँल्लिङ्गवाची शब्दों से उत्तर (पुत्र शब्द उत्तरपद को आद्युदात्त होता है)।

पुंयोगात् — IV. i. 48
पुरुष के साथ सम्बन्ध होने के कारण (जो प्रातिपदिक स्त्रीलिङ्ग में वर्तमान हो तथा पुँल्लिङ्ग को पहले कह चुका हो, ऐसे अदन्त अनुपसर्जन) प्रातिपदिक से (ङीष् प्रत्यय होता है)।

पुंवत् — I. ii. 66
(गोत्रप्रत्ययान्त स्त्रीलिङ्ग शब्द युवप्रत्ययान्त के साथ शेष रह जाता है और गोत्रप्रत्ययान्त शब्द को) पुँल्लिङ्ग के समान कार्य (भी) होता है,(यदि उन दोनों में वृद्धयुव -प्रत्यय –निमित्तक ही वैरूप्य हो और सब समान हो)।

पुंवत् — VI. iii. 33
(एक ही अर्थ में अर्थात् एक ही प्रवृत्तिनिमित्त को लेकर भाषित= कहा है पुँल्लिङ्ग अर्थ को जिसने,ऐसे ऊङ्वर्जित भाषितपुंस्क स्त्री शब्द के स्थान में) पुँल्लिङ्गवाची शब्द के समान रूप हो जाता है; (पूरणी तथा प्रियादिवर्जित स्त्रीलिङ्ग समानाधिकरण उत्तरपद रहते)।

पुंवत् — VI. iii. 41
(कर्मधारय समास में तथा जातीय एवं देशीय प्रत्ययों के परे रहते ऊङ्वर्जित भाषितपुंस्क स्त्री शब्द को) पुंवद्भाव हो जाता है।

पुंवद् — VII. i. 74
(तृतीया विभक्ति से लेकर आगे की विभक्तियों के परे रहते भाषितपुंस्क नपुंसकलिङ्ग वाले इगन्त अङ्ग को गालव आचार्य के मत में) पुंवद्भाव हो जाता है।

पुंसः — VII. i. 89
पुंस् अङ्ग के स्थान में (सर्वनामस्थान परे रहते असुङ् आदेश होता है)।

...पुंसाभ्याम् — IV. i. 87
देखें — स्त्रीपुंसाभ्याम् IV. i. 87

पुंसि — II. iv. 29
(रात्र, अह्न, अह — ये कृतसमासान्त शब्द) पुँल्लिङ्ग में होते हैं।

पुंसि — II. iv. 31
(अर्धर्च आदि शब्द) पुँल्लिङ्ग (और नपुंसकलिङ्ग में होते हैं।

पुंसि — III. iii. 118
(धातु से करण और अधिकरण कारक में) पुँल्लिङ्ग में (प्रायः करके घ प्रत्यय होता है, यदि समुदाय से संज्ञा प्रतीत होती है)।

पुंसि — VI. i. 99
('प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' सूत्र से किये हुये पूर्वसवर्ण दीर्घ से उत्तर शस् के अवयव सकार को नकार आदेश होता है); पुँल्लिङ्ग में।

पुंसि — VII. ii. 111
(इदम् शब्द के इद् रूप को) पुँल्लिङ्ग में (आ आदेश होता है, सु विभक्ति परे रहते)।

पुयण्जि — VII. vi. 80
(अवर्णपरक) पवर्ग, यण् तथा जकार पर वाले (उवर्णान्त अभ्यास को इकारादेश होता है, सन् परे रहते)।

पुर्... — V. iii. 39
देखें — पुरधवः V. iii. 39

...पुर्... — V. iv. 74
देखें — ऋक्पूरब्धू:० V. iv. 74

...पुर... — IV. ii. 121
देखें — प्रस्थपुर० IV. ii. 121

पुरः — I. iv. 67
(अव्यय) जो पुरस् शब्द,उसकी (क्रिया के योग में गति और निपात संज्ञा होती है)।

पुरगा... — VIII. iv. 4
देखें — पुरगामिश्रका० VIII. iv. 4

पुरगामिश्रकासिध्रकाशारिकाकोटराग्रेभ्यः — VIII. iv. 4
पुरगा, मिश्रका, सिध्रका, शारिका, कोटरा, अग्रे — इन शब्दों से उत्तर (वन शब्द के नकार को णकारादेश होता है, सञ्ज्ञाविषय में)।

पुरधवः — V. iii. 39
(दिशा, देश तथा काल अर्थों में वर्तमान सप्तम्यन्त, पञ्चम्यन्त तथा प्रथमान्त दिशावाची पूर्व, अधर तथा अवर प्रातिपदिकों से असि प्रत्यय होता है और प्रत्यय के साथ-साथ इन शब्दों को यथासंख्य करके) पुर्, अध् तथा अव् आदेश होते हैं।

...पुरन्दरौ— VI. iii. 68
देखें — वाचंयमपुरन्दरौ VI. iii. 68

...पुरश्चरण... — IV. iii. 72
देखें — द्व्यजृद्ब्राह्मणर्क्० IV. iii. 72

पुरस्... — III. ii. 18
देखें — पुरोऽग्रतो० III. ii. 18

...पुरसः — IV. ii. 98
देखें — दक्षिणापश्चात्० IV. ii. 98

...पुरसोः — VIII. iii. 40
देखें — **नमस्पुरसोः VIII. iii. 40**

पुरस्तात् — V. iii. 68
('किञ्चित् न्यून' अर्थ में वर्तमान सुबन्त से विकल्प से बहुच् प्रत्यय होता है और वह सुबन्त से) पूर्व में (ही होता है)।

पुरा — VIII. i. 42
पुरा शब्द से युक्त (तिङन्त को भी शीघ्रता अर्थ गम्यमान होने पर अनुदात्त नहीं होता)।

...पुराण... — II. i. 48
देखें — **पूर्वकालैकसर्वजरत्० II. i. 48**

पुराणप्रोक्तेषु — IV. iii. 105
(तृतीयासमर्थ प्रातिपदिक से) पुराणप्रोक्त (ब्राह्मण और कल्प अभिधेय हो तो प्रोक्त अर्थ में णिनि प्रत्यय होता है)।

...पुरानिपातयोः — III. ii. 4
देखें — **यावत्पुरानिपातयोः III. ii. 4**

पुरि — III. ii. 120
(स्म शब्द उपपदरहित) पुरा शब्द उपपद हो तो (अनद्यतन भूतकाल में धातु से लुङ् प्रत्यय विकल्प से होता है, चकार से लट् भी होता है)।

...पुरीष... — III. ii. 65
देखें — **कव्यपुरीष० III. ii. 65**

पुरीषे — IV. iii. 142
(षष्ठीसमर्थ गो प्रातिपदिक से भी) मल अभिधेय होने पर (मयट् प्रत्यय होता है)।

...पुरीष्येषु — III. ii. 65
देखें — **कव्यपुरीष० III. ii. 65**

...पुरु... — V. iv. 56
देखें — **देवमनुष्य० V. iv. 56**

...पुरुदंसः — VII. i. 94
देखें — **ऋदुशनस्पुरुदंसोनेहसाम् VII. i. 94**

पुरुष... — V. ii. 38
देखें — **पुरुषहस्तिभ्याम् V. ii. 38**

...पुरुष... — V. iv. 56
देखें — **देवमनुष्य० V. iv. 56**

पुरुषः — VI. ii. 190
(अनु उपसर्ग से उत्तर अन्वादिष्टवाची) पुरुष शब्द को (भी अन्तोदात्त होता है)।

...पुरुषयोः — III. iv. 43
देखें — **जीवपुरुषयोः III. iv. 43**

पुरुषहस्तिभ्याम् — V. ii. 38
(प्रथमासमर्थ प्रमाणसमानाधिकरणवाची) पुरुष तथा हस्तिन् प्रातिपदिकों से (षष्ठ्यर्थ में अण् तथा द्वयसच्, दघ्नच् और मात्रच् प्रत्यय होते हैं)।

पुरुषात् — IV. i. 24
(प्रमाण अर्थ में वर्तमान जो) पुरुष शब्द, (तदन्त अनुपसर्जन द्विगुसंज्ञक प्रातिपदिक) से (तद्धित का लुक् होने पर स्त्रीलिङ्ग में विकल्प से ङीप् प्रत्यय नहीं होता अर्थात् विकल्प से हो जाता है)।

...पुरुषाभ्याम् — V. i. 10
देखें — **सर्वपुरुषाभ्याम् V. i. 10**

...पुरुषायुष... — V. iv. 78
देखें — **अचतुरविचतुर० V. iv. 78**

पुरुषे — VI. iii. 105
पुरुष शब्द उत्तरपद हो, तो (कु शब्द को विकल्प से का आदेश हो जाता है)।

पुरे — VI. ii. 99
पुर शब्द उत्तरपद रहते (प्राच्य भारत के देशों को कहने में पूर्वपद को अन्तोदात्त होता है)।

पुरोऽग्रतोऽग्रेषु — III. ii. 18
पुरस्, अग्रतस्, अग्रे — ये अव्यय उपपद रहते (सृ धातु से ट प्रत्यय होता है)।

पुरोडाः — VIII. ii. 67
पुरोडाः शब्द दीर्घ किया हुआ सम्बुद्धि में निपातित है।

...पुरोडाशः — III. ii. 71
देखें — **श्वेतवहोक्थशस्० III. ii. 71**

...पुरोडाशात् — IV. iii. 70
देखें — **पौरोडाशपुरोडाशात् IV. iii. 70**

पुरोडाशे — IV. iii. 145
(षष्ठीसमर्थ व्रीहि प्रातिपदिक से) पुरोडाशरूप विकार अभिधेय होने पर (मयट् प्रत्यय होता है)।

...पुरोहितादिभ्यः — V. i. 127
देखें — पत्यन्तपुरोहिता० V. i. 127

पुवः — III. ii. 183
पूञ् धातु से (करण कारक में ष्ट्रन् प्रत्यय होता है, यदि वह करण कारक हल् तथा सूकर का अवयव हो तो)।

पुवः — III. ii. 185
पूञ् धातु से (संज्ञा गम्यमान हो, तो करण कारक में इत्र प्रत्यय होता है, वर्तमानकाल में)।

पुषः — III. iv. 40
(स्ववाची करण उपपद रहते) पुष् धातु से (णमुल् प्रत्यय होता है)।

पुषादि... — III. i. 55
देखें — पुषादिद्युताद्य्लृदितः III. i. 55

पुषादिद्युताद्य्लृदितः — III. i. 55
पुषादि, द्युतादि तथा लृदित् धातुओं से उत्तर (च्लि को अङ् आदेश होता है, कर्तृवाची लुङ् परस्मैपद परे रहते)।

पुष्करादिभ्यः — V. ii. 135
पुष्करादि प्रातिपदिकों से ('मत्वर्थ' में इनि प्रत्यय होता है, देश वाच्य होने पर)।

...पुष्प... — IV. i. 64
देखें — पाककर्णपर्ण० IV. i. 64

...पुष्प्यत् — IV. iii. 43
देखें — साधुपुष्प्यत्० IV. iii. 43

पुष्य... — III. i. 116
देखें — पुष्यसिद्ध्यौ III. i. 116

पुष्यसिद्ध्यौ — III. i. 116
(नक्षत्र अभिधेय हो तो अधिकरण कारक में) पुष्य और सिद्ध्य शब्द क्यप् प्रत्ययान्त निपातन किये जाते हैं।

...पू... — III. iii. 49
देखें — श्रयतियौति० III. iii. 49

...पू... — VIII. iv. 33
देखें — भाभूपू० VIII. iv. 33

पूः ... — III. ii. 41
देखें — पूःसर्वयोः III. ii. 41

पूःसर्वयोः — III. ii. 41
पुर् तथा सर्व (कर्म) के उपपद रहते (ण्यन्त 'दृ' विदारणे धातु से तथा सह् धातु से यथासंख्य करके खच् प्रत्यय होता है)।

...पूग... — V. ii. 52
देखें — बहुपूग० V. ii. 52

पूगात् — V. iii. 112
(ग्रामणी पूर्व अवयव न हो जिसके, ऐसे) पूगवाची = अर्थ और काम में आसक्त पुरुषों के नानाजातीय और अनियत वृत्तिवाला समूह, तद्वाची प्रातिपदिकों से (ञ्य प्रत्यय होता है, स्वार्थ में)।

पूगेषु — VI. ii. 28
पूगवाची = अर्थ और काम में आसक्त पुरुषों के नानाजातीय और अनियत वृत्तिवाला समूह, तद्वाची शब्द उत्तरपद रहते (कर्मधारय समास में कुमार शब्द को विकल्प से आद्युदात्त होता है)।

पूङ्... — III. ii. 128
देखें — पूङ्यजोः III. ii. 128

...पूङ्... — VII. ii. 74
देखें — स्मिपूङ्० VII. ii. 74

पूङः — I. ii. 22
'पूङ् पवने' धातु से परे (सेट् निष्ठा तथा सेट् क्त्वा प्रत्यय भी कित् नहीं होता है)।

पूङः— VII. ii. 51
पूङ् धातु से उत्तर (भी क्त्वा तथा निष्ठा को इट् आगम विकल्प से होता है)।

पूङ्यजोः — III. ii. 129
पूङ् तथा यज् धातुओं से (वर्तमान काल में शानन् प्रत्यय होता है)।

पूजनात् — V. iv. 69
पूजनवाची प्रातिपदिक से (समासान्त प्रत्यय नहीं होते)।

पूजनात् — VIII. i. 67
पूजनवाची शब्दों से उत्तर (पूजितवाची शब्दों को अनुदात्त होता है)।

पूजायाम् — I. iv. 93
पूजा अर्थ में (सु शब्द कर्मप्रवचनीय और निपात-संज्ञक होता है)।

पूजायाम् — II. ii. 12
पूजा अर्थ में (विहित क्त प्रत्ययान्त के साथ षष्ठ्यन्त सुबन्त का समास नहीं होता)।

पूजायाम् — VI. iv. 30

पूजा अर्थ में (अञ्चु अङ्ग की उपधा के नकार का लोप नहीं होता है)।

पूजायाम् — VII. i. 53

(अञ्चु धातु से उत्तर) पूजा अर्थ में (क्त्वा तथा निष्ठा को इट् आगम होता है)।

पूजायाम् — VIII. i. 37

(यावत् और यथा से युक्त अव्यवहित तिङन्त को) पूजा विषय में (अननुदात्त नहीं होता अर्थात् अनुदात्त ही होता है)।

पूजायाम् — VIII. i. 39

(तु, पश्य, पश्यत, अह – इनसे युक्त तिङन्त को) पूजा-विषय में (अनुदात्त नहीं होता)।

...पूजार्थेभ्यः — III. ii. 188
देखें — **मतिबुद्धि० III. ii. 188**

...पूजि... — III. iii. 105
देखें — **चिन्तिपूजि० III. iii. 105**

पूजितम् — VIII. i. 67

(पूजनवाची शब्दों से उत्तर) पूजितवाची शब्दों को (अनुदात्त होता है)।

पूज्यमानम् — II. i. 61

पूज्यमानवाची (सुबन्त) शब्द (वृन्दारक, नाग, कुञ्जर – इन समानाधिकरण सुबन्तों के साथ विकल्प से समास को प्राप्त होता है और वह तत्पुरुष समास होता है)।

पूज्यमानैः — II. i. 60

(सत्, महत्, परम, उत्तम, उत्कृष्ट– ये शब्द समानाधिकरण) पूज्यमानवाची (सुबन्त) शब्दों के साथ (विकल्प से समास को प्राप्त होते हैं और वह समास तत्पुरुषसंज्ञक होता है)।

...पूत... — VI. ii. 187
देखें — **स्फिगपूत० VI. ii. 187**

पूतक्रतोः — IV. i. 36

अनुपसर्जन पूतक्रतु प्रातिपदिक से (स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय होता है तथा ऐकार अन्तादेश भी हो जाता है)।

पूतक्रतु = इन्द्र।

...पूति... — V. iv. 135
देखें — **उत्पूति० V. iv. 135**

पूरण... — II. ii. 11
देखें — **पूरणगुणसुहितार्थ० II. ii. 11**

पूरण... — V. i. 47
देखें — **पूरणार्धात् V. i. 47**

पूरणगुणसुहितार्थसदव्ययतव्यसमानाधिकरणेन — II. ii. 11

पूरण प्रत्ययान्त, गुणवाची शब्द, सुहित = तृप्ति अर्थ वाले, सत्सञ्ज्ञक प्रत्यय, अव्यय, तव्यप्रत्ययान्त तथा समानाधिकरणवाची शब्दों के साथ (षष्ठ्यन्त सुबन्त समास को प्राप्त नहीं होते)।

...पूरणयोः — VI. ii. 162
देखें — **प्रथमपूरणयोः VI. ii. 162**

पूरणात् — V. ii. 130

पूरण-प्रत्ययान्त शब्दों से (अवस्था गम्यमान हो तो 'मत्वर्थ' में इनि प्रत्यय होता है)।

पूरणात् — V. iii. 48

('भाग' अर्थ में वर्त्तमान) पूरणार्थक (तीय प्रत्ययान्त) प्रातिपदिकों से (स्वार्थ में अन् प्रत्यय होता है)।

पूरणार्द्धात् — V. i. 47

(प्रथमासमर्थ) पूरणवाची प्रातिपदिकों से तथा अर्ध प्रातिपदिक से (सप्तम्यर्थ में ठन् प्रत्यय होता है, यदि 'वृद्धि= व्याज के रूप में दिया जाने वाला द्रव्य, 'आय'= जमींदारों का भाग, 'लाभ'= मूल द्रव्य के अतिरिक्त प्राप्य द्रव्य, 'शुल्क'= राजा का भाग तथा 'उपदा' = घूस — ये 'दिया जाता है' क्रिया के कर्म हों तो)।

पूरणी... — V. iv. 116
देखें — **पूरणीप्रमाण्योः V. iv. 116**

पूरणीप्रमाण्योः — V. iv. 116

पूरण प्रत्ययान्त (जो स्त्रीलिङ्ग) शब्द तथा प्रमाणी अन्त-वाले (बहुव्रीहि) से (समासान्त अप् प्रत्यय होता है)।

पूरणे — V. ii. 48

(षष्ठीसमर्थ सङ्ख्यावाची प्रातिपदिकों से 'पूरण' अर्थ में (डट् प्रत्यय होता है)।

...पूरण्योः — VI. iii. 37
देखें — **संज्ञापूरण्योः VI. iii. 37**

पूरयितव्ये — VI. iii. 58

जिसे पूरा किया जाना चाहिये, तद्वाची (एक = असहाय हल् है आदि में) ऐसे शब्द के उत्तरपद रहते उदक शब्द के स्थान में (विकल्प करके उद आदेश होता है)।

...पूरि... — III. i. 61
देखें — **दीपजनबुध० III. i. 61**

पूरेः — III. iv. 31

(चर्म तथा उदर कर्म उपपद रहते) ण्यन्त पूरी धातु से (णमुल् प्रत्यय होता है)।

...पूरोः — III. iv. 44
देखें — **शुषिपूरोः III. iv. 44**

...पूर्ण... — VII. ii. 27
देखें — **दान्तशान्तपूर्ण० VII. ii. 27**

पूर्णात् — V. iv. 149

पूर्ण शब्द से उत्तर (काकुद शब्द का विकल्प से समासान्त लोप होता है, बहुव्रीहि समास में)।

पूर्व... — I. i. 33
देखें — **पूर्वपरावरदक्षिणोत्तरापराधराणि I. i. 33**

पूर्व... — II. i. 30
देखें — **पूर्वसदृशसमोनार्थ० II. i. 30**

पूर्व... — II. i. 57
देखें — **पूर्वापरप्रथम० II. i. 57**

पूर्व... — II. ii. 1
देखें — **पूर्वापराधरो० II. ii. 1**

पूर्व... — V. iii. 39
देखें — **पूर्वाधरा० V. iii. 39**

...पूर्व... — V. iii. 111
देखें — **प्रत्नपूर्व० V iii. 111**

पूर्व... — VI. i. 81
देखें — **पूर्वपरयोः VI. i. 81**

पूर्वः — I. i. 64

(अन्त्य अल् से) पूर्व वाला (अल् उपधासंज्ञक होता है)।

पूर्वः — VI. i. 4

(जो इस प्रकरण में द्वित्व कहा है, उन दोनों में) जो पूर्व है, वह (अभ्याससञ्ज्ञक होता है)।

पूर्वः — VI. i. 103

(अक् प्रत्याहार से उत्तर अम् विभक्ति के परे रहते) पूर्वरूप (एकादेश) होता है।

पूर्वः — VI. i. 131

(ककार से) पूर्व (सुट् का आगम होता है), यह अधिकार है।

पूर्वकाल... — II. i. 48
देखें — **पूर्वकालैकसर्वजरत्० II. i. 48**

पूर्वकाले — III. iv. 21

(दो क्रियाओं का एक कर्त्ता होने पर) उनमें से पूर्वकाल में वर्तमान (धातु से क्त्वा प्रत्यय होता है)।

पूर्वकालैकसर्वजरत्पुराणनवकेवलाः — II. i. 48

पूर्वकाल, एक, सर्व, जरत्, पुराण, नव, केवल — ये (सुबन्त) शब्द (समानाधिकरण सुबन्त के साथ विकल्प से समास को प्राप्त होते हैं और वह समास तत्पुरुषसंज्ञक होता है)।

पूर्वत्र — VIII. ii. 1

(यह अधिकार सूत्र है। यहां से आगे अध्याय की समाप्तिपर्यन्त) पूर्व-पूर्व की दृष्टि में अर्थात् सवा सात अध्याय में कहे गये सूत्रों की दृष्टि में (तीन पाद के सूत्र असिद्ध होते हैं)।

पूर्वपदम् — VI. ii. 1

(बहुव्रीहि समास में) पूर्वपद (प्रकृतिस्वर वाला होता है)।

पूर्वपदस्य — VII. iii. 19

(हृद्, भग, सिन्धु — ये शब्द अन्त में है जिन अङ्गों के, उनके) पूर्वपद के (तथा उत्तरपद के अचों में आदि अच् को भी ञित्, णित् तथा कित् तद्धित परे रहते वृद्धि होती है)।

पूर्वपदात् — VIII. iii. 106

पूर्वपद में स्थित निमित्त से उत्तर (सकार को वेद-विषय में कई आचार्यों के मत में मूर्धन्य आदेश होता है)।

पूर्वपदात् — VIII. iv. 3

(गकारभिन्न) पूर्वपद में स्थित निमित्त से उत्तर संज्ञाविषय में नकार को णकारादेश होता है)।

पूर्वपरयोः — VI. i. 81

'पूर्व और पर दोनों के स्थान में (एक आदेश होगा', यह अधिकृत होता है)।

पूर्वपरावरदक्षिणोत्तरापराधराणि — I. i. 33

पूर्व, पर, अवर, दक्षिण, उत्तर, अपर, अधर शब्द (जस्-सम्बन्धी कार्य में विकल्प से सर्वनामसंज्ञक होते हैं, यदि संज्ञा से भिन्न व्यवस्था हो तो)।

पूर्वम् — II. ii. 30

(समास में उपसर्जनसंज्ञक का) पूर्व प्रयोग होता है।

पूर्वम् — VI. i. 186

(भी, ह्री, भृ, हु, मद, जन, धन, दरिद्रा तथा जागृ धातु के अभ्यस्त को पित् लसार्वधातुक परे रहते प्रत्यय से) पूर्व को (उदात्त होता है)।

पूर्वम् — VI. i. 213

(मतुप् से) पूर्व (आकार को उदात्त होता है, यदि वह मत्वन्त शब्द स्त्रीलिङ्ग में सञ्ज्ञाविषयक हो तो)।

पूर्वम् — VI. ii. 83

('ज' उत्तरपद रहते बहुत अच् वाले पूर्वपद के अन्त्य अक्षर से) पूर्व को (उदात्त होता है)।

पूर्वम् — VI. ii. 173

(नञ् तथा सु से उत्तर उत्तरपद के कप् के परे रहते) उससे पूर्व को (उदात्त होता है)।

पूर्वम् — VI. ii. 174

(नञ् तथा सु से उत्तर बहुव्रीहि समास में ह्रस्वान्त उत्त-रपद में अन्त्य से) पूर्व को (उदात्त होता है, कप् परे रहते)।

पूर्वम् — VIII. i. 72

(किसी पद से) पूर्व (आमन्त्रितसञ्ज्ञक पद हो तो वह आमन्त्रितपद अविद्यमान के समान माना जावे)।

पूर्वम् — VIII. ii. 98

(विचार्यमाण वाक्यों के पूर्ववाले वाक्य की टि को ही भाषाविषय में प्लुत उदात्त होता है)।

पूर्ववत् — I. iii. 61

(सन् प्रत्यय के आने से पूर्व जो धातु आत्मनेपदी रही हो, उससे सन्नन्त होने पर भी) पूर्व के समान (आत्मनेपद होता है)।

पूर्ववत् — II. iv. 27

पूर्व के समान (लिङ्ग होता है, अश्व और वडवा का द्वन्द्व समास करने पर)।

पूर्वविधौ — I. i. 56

पूर्व को विधि करने में (परनिमित्तक आदेश स्थानिवत् होता है)।

पूर्वसदृशसमोनार्थकलहनिपुणमिश्रश्लक्ष्णैः — II. i. 30

(तृतीयान्त सुबन्त का) पूर्व, सदृश, सम, ऊनार्थ, कलह, निपुण, मिश्र, श्लक्ष्ण — इन (सुबन्तों) के साथ (विकल्प से समास हो जाता है और वह समास तत्पुरुषसंज्ञक होता है)।

...पूर्वसवर्ण... — VII. i. 39

देखें — सुलुक्० VII. i. 39

पूर्वसवर्णः — VI. i. 98

(अक् प्रत्याहार के पश्चात् प्रथमा और द्वितीया विभक्ति के अच् के परे रहते पूर्व, पर के स्थान में पूर्व) जो वर्ण, उसका सवर्ण (दीर्घ एकादेश) हो जाता है।

पूर्वस्मिन् — III. iv. 4

पूर्व के लोट्-विधायक सूत्र में (जिस धातु से लोट् का विधान किया गया हो, पश्चात् उसी धातु का अनुप्रयोग होता है)।

पूर्वस्य — I. i. 65

(सप्तमी विभक्ति से निर्देश किया हुआ जो शब्द, उससे अव्यवहित) पूर्व को कार्य होता है।

पूर्वस्य — I. iv. 40

(प्रति एवं आङ्पूर्वक श्रु धातु के प्रयोग में) पूर्व का (जो कर्त्ता, वह कारक सम्प्रदान-संज्ञक होता है)।

पूर्वस्य — VI. iii. 110

(ढ एवं रेफ को लोप हुआ है जिसके कारण, उसके परे रहते) पूर्व के (अण् को दीर्घ होता है)।

पूर्वस्य — VI. iv. 156

(स्थूल, दूर, युव, ह्रस्व, क्षिप्र, क्षुद्र — इन अङ्गों का पर जो यणादि भाग, उसका लोप होता है; इष्ठन् इमनिच् और ईयसुन् परे रहते तथा उस यणादि से) पूर्व को (गुण होता है)।

पूर्वस्य — VII. iii. 26

(अर्ध शब्द से उत्तर परिमाणवाची उत्तरपद के अचों में आदि अच् को वृद्धि होती है) पूर्वपद को (तो विकल्प से होती है; ञित्, णित् तथा कित् तद्धित परे रहते)।

पूर्वस्य — VII. iii. 44

(प्रत्यय में स्थित ककार से) पूर्व (अकार) के स्थान में (इकारादेश होता है, आप् परे रहते; यदि वह आप् सुप् से उत्तर न हो तो)।

पूर्वस्य — VIII. ii. 42

(रेफ तथा दकार से उत्तर निष्ठा के तकार को नकारादेश होता है, तथा निष्ठा के तकार से) पूर्व के (दकार को भी नकारादेश होता है)।

पूर्वस्य — VIII. ii. 107

(दूर से बुलाने के विषय से भिन्न विषय में अप्रगृह्य-सञ्ज्ञक एच् के) पूर्व के (अर्द्धभाग को प्लुत करने के प्रसङ्ग में आकारादेश होता है तथा उत्तरवाले भाग को इकार उकार (आदेश होते हैं)।

पूर्वस्य — VIII. iii. 2

(यहाँ से आगे जिसको रु विधान करेंगे, उससे) पूर्व के वर्ण को (तो विकल्प से अनुनासिक आदेश होता है, ऐसा अधिकार इस रुत्व-विधान-प्रकरण में समझना चाहिये)।

पूर्वस्य — VIII. iv. 60

(उत् उपसर्ग से उत्तर स्था तथा स्तम्भ् को) पूर्वसवर्ण आदेश होता है)।

पूर्वात् — V. ii. 86

प्रथमासमर्थ पूर्व प्रातिपदिक से ('इसके द्वारा' अर्थ में इनि प्रत्यय होता है)।

...पूर्वात् — V. iv. 98

देखें — **उत्तरमृगपूर्वात् V. iv. 98**

पूर्वादिभ्यः — VII. i. 16

पूर्व है आदि में जिसके, ऐसे पूर्वादिगणपठित (नौ सर्वनामों) से उत्तर (ङसि तथा ङि के स्थान में क्रमशः स्मात् तथा स्मिन् आदेश विकल्प से होते हैं)।

पूर्वाधरावराणाम् — V. iii. 39

(दिशा, देश तथा काल अर्थों में वर्तमान सप्तम्यन्त, पञ्चम्यन्त तथा प्रथमान्त दिशावाची) पूर्व, अधर तथा अवर प्रातिपदिकों से (असि प्रत्यय होता है और प्रत्यय के साथ-साथ इन शब्दों को यथासंख्य करके पुर्, अध् तथा अव् आदेश होते हैं)।

...पूर्वापर... — II. iv. 12

देखें — **वृक्षमृगतृणधान्य० II. iv. 12**

पूर्वापराधरोत्तरम् — II. ii. 1

पूर्व, अपर, अधर, उत्तर — ये (सुबन्त) शब्द (एकद्रव्य-वाची अवयवी सुबन्त के साथ विकल्प से समास को प्राप्त होते हैं और वह तत्पुरुष समास होता है)।

पूर्वापरप्रथमचरमजघन्यसमानमध्यमध्यमवीराः — II. i. 57

पूर्व, अपर, प्रथम, चरम, जघन्य, समान, मध्य, मध्यम, वीर — ये (विशेषणवाची सुबन्त) शब्द (भी विशेष्यवाची समानाधिकरण सुबन्तों के साथ विकल्प से तत्पुरुष समास को प्राप्त होते हैं)।

पूर्वाह्ण... — IV. iii. 24

देखें — **पूर्वाह्णापराह्णाभ्याम् IV. iii. 24**

पूर्वाह्ण... — IV. iii. 28

देखें — **पूर्वाह्णापराह्णार्द्रा० IV. iii. 28**

पूर्वाह्णापराह्णाभ्याम् — IV. iii. 24

(कालवाची) पूर्वाह्ण, अपराह्ण शब्दों से (विकल्प से ट्यु तथा ट्युल् प्रत्यय होते हैं तथा उनको तुट् आगम भी होता है)।

पूर्वाह्णापराह्णार्द्रामूलप्रदोषावस्करात्— IV. iii. 28

पूर्वाह्ण, अपराह्ण, आर्द्रा, मूल, प्रदोष, अवस्कर (सप्तमीसमर्थ) प्रातिपदिकों से (जात अर्थ में वुन् प्रत्यय होता है)।

पूर्वे — III. ii. 19

(कर्तृवाची) पूर्व शब्द उपपद रहते ('सृ' धातु से 'ट' प्रत्यय होता है)।

पूर्वे — VI. ii. 22

पूर्व शब्द उत्तरपद रहते (भूतपूर्ववाची तत्पुरुष समास में पूर्वपद को प्रकृतिस्वर हो जाता है)।

...पूर्वेद्युस्...— V. iii. 22

देखें — **सद्यःपरुत्० V. iii. 22**

...पूर्वेषु — III. iv. 24

देखें — **अग्रेप्रथमपूर्वेषु III. iv. 24**

पूर्वैः — IV. iv. 133

(तृतीयासमर्थ) पूर्व प्रातिपदिक से ('किया हुआ' अर्थ में इन और य प्रत्यय होते हैं)।

पूर्वौ — VII. iii. 3

(पदान्त यकार तथा वकार से उत्तर ञित्, णित्, कित् तद्धित परे रहते अङ्ग के अचों में आदि अच् को वृद्धि नहीं होती, किन्तु उन यकार, वकार से) पूर्व (तो क्रमशः ऐच्= ऐ और औ आगम होता है)।

पूल्वोः — III. iii. 28

(निर्, अभि पूर्वक क्रमशः) पू, लू धातुओं से (कर्तृभिन्न कारक संज्ञाविषय तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

...पूष... — VI. ii. 142

देखें— **अपृथिवीरुद्र ० VI. ii. 142**

...पूषन्... — VI. iv. 12

देखें — **इन्हन्पूषार्यम्णाम् VI. iv. 12**

...पृ... — VI. iv. 102

देखें — **श्रुशृणु० VI. iv. 102**

...पृच्छति... — VI. i. 16

देखें — **ग्रहिज्या० VI. i. 16**

पृतनर्त्ताभ्याम् — VIII. iii. 109

पृतना तथा ऋत शब्द से उत्तर (भी सह् धातु के सकार को वेद-विषय में मूर्धन्य आदेश होता है)।

...पृतनस्य — VII. iv. 39

देखें — **कव्यध्वर० VII. iv. 39**

पृतना... — VIII. iii. 109

देखें — पृतनर्त्ताभ्याम् VIII. iii. 109

पृथक्... — II. ii. 32

देखें — **पृथग्विनानानाभिः II. iii. 32**

पृथग्विनानानाभिः — II. iii. 32

पृथक्, विना, नाना— इन शब्दों के योग में (तृतीया विभक्ति विकल्प से होती है, पक्ष में पञ्चमी भी होती है)।

...पृथिवीभ्याम् — V. i. 40

देखें — **सर्वभूमिपृथिवीभ्याम् V. i. 40**

पृथिव्याम्— VI. iii. 29

पृथिवी शब्द उत्तरपद रहते (देवताद्वन्द्व में दिव् शब्द को दिवस् आदेश होता है तथा चकार से द्यावा आदेश भी हो जाता है)।

...पृथु... — VI. ii. 168

देखें — **अव्ययदिक्शब्द० VI. ii. 168**

पृथ्वादिभ्यः — V. i. 121

(षष्ठीसमर्थ) पृथु आदि प्रातिपदिकों से ('भाव' अर्थ में विकल्प से इमनिच् प्रत्यय होता है)।

पृषोदरादीनि — VI. iii. 108

पृषोदर इत्यादि शब्दरूप (शिष्टों के द्वारा जिस प्रकार उच्चरित हैं, वैसे ही साधु माने जाते हैं)।

पृष्टप्रतिवचने — III. ii. 120

पृष्टप्रतिवचन अर्थात् पूछे जाने पर जो उत्तर दिया जाये, उस अर्थ में (ननु शब्द उपपद रहते सामान्य भूतकाल में लट् प्रत्यय होता है)।

पृष्टप्रतिवचने — VIII. ii. 93

पूछे गये प्रश्न के प्रत्युत्तर वाक्य में (वर्तमान हि शब्द को विकल्प करके प्लुत उदात होता है)।

...पृष्ठ... — VI. ii. 114

देखें — **कण्ठपृष्ठ० VI. ii. 114**

...पृष्ठ... — VIII. iii. 53

देखें — **पतिपुत्र० VIII. iii. 53**

...पृ... — III. ii. 177

देखें — **भ्राजभास० III. ii. 177**

...पृ... — VIII. ii. 57

देखें — **ध्याख्यापृ० VIII. ii. 57**

पे — VIII. iii. 10

(नृन् शब्द के नकार को) प परे रहते (रु होता है)।

पेषम् — VI. iii. 57

देखें — **पेषंवासवाहन० VI. iii. 57**

पेषंवासवाहनधिषु — VI. iii. 57

पेषं, वास, वाहन तथा धि शब्द के उत्तरपद रहते (भी उदक शब्द को उद आदेश होता है)।

पेषम् = पीसना, चूरा करना।

पैलादिभ्यः — II. iv. 59

पैल आदि शब्दों से भी (युवापत्य विहित प्रत्यय का लुक् होता है)।

पोः — III. i. 98

(अकार उपधावाली) पवर्गान्त धातु से (यत् प्रत्यय होता है)।

...पोः — III. ii. 8
देखें — **गापोः III. ii. 8**

पोटा... — II. i. 64
देखें — **पोटायुवतिस्तोक० II. i. 64**

पोटायुवतिस्तोककतिपयगृष्टिधेनुवशावेहद्वष्कयणीप्रवक्तृ-श्रोत्रियाध्यापकधूर्तैः — II. i. 64

(जातिवाची सुबन्त शब्द) पोटा, युवति, स्तोक, कतिपय, गृष्टि, धेनु, वशा, वेहद्, वष्कयणी, प्रवक्तृ, श्रोत्रिय, अध्यापक, धूर्त — इन (समानाधिकरण समर्थ सुबन्तों) के साथ (समास को प्राप्त होता है और वह तत्पुरुष समास होता है)।

...पोतृ... — VI. iv. 11
देखें — **अप्तृन्तृच्० VI. iv. 11**

...पोषेषु — VIII. iii. 53
देखें — **पतिपुत्र० VIII. iii. 53**

...पौ — VIII. iii. 37
देखें — **क पौ VIII. iii. 37**

पौर्णमासी — IV. ii. 20

(प्रथमासमर्थ) पौर्णमासी विशेषवाची प्रातिपदिक से (अधिकरण अभिधेय होने पर यथाविहित अण् प्रत्यय होता है)।

...पौर्णमासी... — V. iv. 110
देखें — **नदीपौर्णमास्या० V. iv. 110**

पौत्रप्रभृति — IV. i. 162

पौत्र से लेकर (जो सन्तान उसकी गोत्रसंज्ञा होती है)।

पौरोडाश... — IV. iii. 70
देखें — **पौरोडाशपुरोडाशात् IV. iii. 70**

पौरोडाशपुरोडाशात् — IV. iii. 70

(षष्ठी, सप्तमीसमर्थ) पौरोडाश, पुरोडाश प्रातिपदिकों से (भव और व्याख्यान अर्थों में ष्ठन् प्रत्यय होता है)।

प्यायः — VI. i. 128

ओप्यायी धातु को (निष्ठा के परे रहते विकल्प से पी आदेश होता है)।

...प्यायिभ्यः — III. i. 61
देखें — **दीपजन० III. i. 61**

...प्यायी... — VIII. iv. 33
देखें — **भाभूपू० VIII. iv. 33**

...प्र... — I. iii. 22
देखें — **समवप्रविभ्यः I. iii. 22**

प्र... — I. iii. 42
देखें— **प्रोपाभ्याम् I. iii. 42**

प्र... — I. iii. 64
देखें — **प्रोपाभ्याम् I. iii. 64**

...प्र... — III. ii. 180
देखें — **विप्रसम्भ्यः III. ii. 180**

...प्र... — V. ii. 29
देखें — **सम्प्रोदश्च V. ii. 29**

प्र... — V. iv. 129
देखें — **प्रसम्भ्याम् V. iv. 129**

प्र... — VI. iv. 157
देखें — **प्रस्थस्फ० VI. iv. 157**

प्र... — VIII. i. 6
देखें — **प्रसमुपोदः VIII. i. 6**

...प्रकथन... — I. iii. 32
देखें — **गन्धनावक्षेपण० I. iii. 32**

प्रकाशन... — I. iii. 23
देखें — **प्रकाशनस्थेयाख्ययोः I. iii. 23**

प्रकाशनस्थेयाख्ययोः — I. iii. 23

अपने अभिप्राय के प्रकाशन में तथा विवाद का निर्णय करने वाले को कहने अर्थ में (भी स्था धातु से आत्मनेपद होता है)।

प्रकृतवचने — V. iv. 21

(प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से) 'प्रभूत' अर्थ में (मयट् प्रत्यय होता है)।

प्रकृतिः — I. iv. 30

(जन्यर्थ के कर्ता का) जो प्रकृति = उपादान कारण है, वह (कारक अपादान-संज्ञक होता है)।

प्रकृतौ — V. i. 12

(चतुर्थीसमर्थ विकृतिवाची प्रातिपदिक से) प्रकृति= उपादान कारण अभिधेय होने पर ('हित' अर्थ में यथाविहित प्रत्यय होता है, यदि वह उपादान कारण अपनी उत्तराव-स्थान्तर विकृति के लिए हो तो)।

प्रकृत्या — VI. i. 111

(पाद के मध्य में वर्तमान अकार के परे रहते एङ् को) प्रकृतिभाव हो जाता है।

प्रकृत्या — VI. ii. 1

(बहुव्रीहि समास में पूर्वपद को) प्रकृतिस्वर हो जाता है)।

प्रकृत्या — VI. ii. 137

(भग उत्तरपद को तत्पुरुष समास में) प्रकृतिस्वर होता है।

प्रकृत्या — VI. iii. 74

(नभ्राट्, नपात्, नवेदा, नासत्या, नमुचि, नकुल, नख, नक्षत्र, नक्र, नाक — इन शब्दों में जो नञ्, उसे) प्रकृतिभाव हो जाता है।

प्रकृत्या — VI. iii. 82

(आशीर्वाद विषय में सह शब्द को) प्रकृतिभाव हो जाता है।

प्रकृत्या — VI. iv. 163

(भसञ्ज्ञक एक अच् वाला अङ्ग) प्रकृति से रह जाता है; (इष्ठन्, इमनिच्, ईयसुन् परे रहते)।

प्रकृष्टे — V. i. 107

प्रकर्ष में वर्तमान (जो प्रथमासमर्थ काल शब्द, उससे षष्ठ्यर्थ में ठञ् प्रत्यय होता है)।

...प्रगदिन्... — IV. ii. 79

देखें — अरीहणकृशाश्व० IV. ii. 79

प्रगाथेषु — IV. ii. 54

(प्रथमासमर्थ छन्दोवाची प्रातिपदिकों से षष्ठ्यर्थ में यथाविहित अण् प्रत्यय होता है), प्रगाथों = जहां विभिन्न छन्दों की दो या तीन ऋचाओं का ग्रथन किया जाता है, के अभिधेय होने पर (यदि वह प्रथमासमर्थ छन्द आदि आरम्भ में हो)।

प्रगृह्यम् — I. i. 11

(ई, ऊ, ए, जिनके अन्त में हों, ऐसे जो द्विवचन शब्द हैं, उनकी) प्रगृह्य संज्ञा होती है।

...प्रगृह्याः — VI. i. 121

देखें — प्लुतप्रगृह्याः VI. i. 121

...प्रगे... — IV. iii. 23

देखें — सायंचिरंप्राह्णे० IV. iii. 23

प्रघणः — III. iii. 79

(गृह का एकदेश वाच्य हो तो) प्रघण (और प्रघाण) शब्द में प्र पूर्वक हन् धातु से अप् प्रत्यय और हन को घन आदेश [कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में (कर्म में)] निपातन किये जाते हैं।

प्रघाणः— III. iii. 79

(गृह का एकदेश वाच्य हो तो प्रघण और) प्रघाण शब्द में प्र पूर्वक हन् धातु से अप् प्रत्यय और हन को घन आदेश [कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में (कर्म में)] निपातन किये जाते हैं।

...प्रच्छ... — III. iii. 90

देखें — यजयाच० III. iii. 90

...प्रच्छः — I. ii. 8

देखें — रुदविदमुषग्रहिस्वपिप्रच्छः I. ii. 8

...प्रजन... — III. ii. 136

देखें — अलंकृञ्० III. ii. 136

प्रजनयाम् — III. i. 42

प्रजनयामकः, (अभ्युत्सादयामकः, चिकयामकः, रमयामकः) शब्दों का छन्द विषय में विकल्प से निपातन किया गया है।

प्रजने — III. i. 104

'प्रथम गर्भग्रहण का (समय हो गया है', इस अर्थ में उपसर्या शब्द का निपातन है।

प्रजने — III. iii. 71

प्रजन= गर्भधारण अर्थ में वर्तमान (सृ धातु से अप् प्रत्यय होता है, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में)।

प्रजने — VI. i. 54

प्रजन= गर्भधारण अर्थ में (वर्तमान वी धातु के एच् के स्थान में विकल्प से आकारादेश हो जाता है, णिच् परे रहते)।

प्रजा... — V. iv. 122

देखें — प्रजामेधयोः V. iv. 122

प्रजामेधयोः — V. iv. 122

(नञ्, दुस् तथा सु शब्दों से उत्तर जो) प्रजा और मेधा शब्द, (तदन्त बहुव्रीहि) से (नित्य ही समासान्त असिच् प्रत्यय होता है)।

प्रजोः — III. ii. 156

प्र पूर्वक जु धातु से (वर्तमानकाल में इनि प्रत्यय होता है)।

प्रज्ञा... — V. ii. 101

देखें — प्रज्ञाश्रद्धा० V. ii. 101

प्रज्ञादिभ्यः — V. iv. 38

प्रज्ञादि प्रातिपदिकों से (भी स्वार्थ में अण् प्रत्यय होता है)।

प्रज्ञाश्रद्धार्चाभ्यः — V. ii. 101

प्रज्ञा, श्रद्धा तथा अर्चा प्रातिपदिकों से (मत्वर्थ में विकल्प से ण प्रत्यय होता है)।

प्रणवः — VIII. ii. 89

(यज्ञकर्म में अन्तिम पद की टि को) प्रणव अर्थात् ओ३म् आदेश होता है (और वह प्लुत उदात्त होता है)।

प्रणाय्यः — III. i. 128

प्रणाय्य शब्द निपातन किया गया है, (असंमत अर्थात् अपूजित अर्थ अभिधेय होने पर)।

...प्रणीय... — III. i. 123

देखें — निष्टक्यदेवहूय० III. i. 123

प्रति... — I. iii. 59

देखें — प्रत्याङ्भ्याम् I. iii. 59

...प्रति... — I. iii. 80

देखें — अभिप्रत्यतिभ्यः I. iii. 80

प्रति — I. iv. 36

(क्रुध, द्रुह, ईर्ष्य, असूय — इन अर्थों वाली धातुओं के प्रयोग में जिसके) ऊपर (कोप किया जाये, उस कारक की सम्प्रदान संज्ञा होती है)।

प्रति... — I. iv. 40

देखें — प्रत्याङ्भ्याम् I. iv. 90

...प्रति... — I. iv. 41

देखें — अनुप्रतिगृणः I. iv. 41

प्रति... — I. vi. 89

देखें — प्रतिपर्यनवः I. iv. 89

प्रति... — III. i. 118

देखें — प्रत्यपिभ्याम् III. i. 118

प्रति... — IV. iv. 28

देखें — प्रत्यनुपूर्वम् IV. iv. 28

प्रति... — V. iv. 75

देखें — प्रत्यन्ववपूर्वात् V. iv. 75

...प्रति... — VI. ii. 33

देखें — प्रत्युपापाः VI. ii. 33

प्रतिः — I. iv. 91

प्रति शब्द (प्रतिनिधि और प्रतिदान विषय में कर्मप्रवचनीय और निपातसंज्ञक होता है)।

प्रतिकण्ठ... — IV. iv. 40

देखें — प्रतिकण्ठार्थललामम् IV. iv. 40

प्रतिकण्ठार्थललामम् — IV. iv. 40

(द्वितीयासमर्थ) प्रतिकण्ठ, अर्थ, ललाम प्रातिपदिकों से (भी 'ग्रहण करता है'— अर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

प्रतिकृतौ — V. iii. 96

प्रतिमाविषयक (इव के) अर्थ में (वर्तमान प्रातिपदिक से कन् प्रत्यय होता है)।

प्रतिजनादिभ्यः — IV. iv. 99

(सप्तमीसमर्थ) प्रतिजन आदि शब्दों से (साधु अर्थ में खञ् प्रत्यय होता है)।

प्रतिज्ञाने — I. iii. 52

प्रतिज्ञा = स्वीकार करने अर्थ में (सम् पूर्वक गृ धातु से आत्मनेपद होता है)।

...प्रतिदानयोः — I. iv. 91

देखें — प्रतिनिधिप्रतिदानयोः I. iv. 91

...प्रतिदाने — II. iii. 11

देखें — प्रतिनिधिप्रतिदाने II. iii. 11

प्रतिना — II. i. 9

(मात्रा अर्थ में विद्यमान) प्रति शब्द के साथ (समर्थ सुबन्त का अव्ययीभाव समास होता है)।

प्रतिनिधि... — I. iv. 91

देखें — प्रतिनिधिप्रतिदानयोः I. iv. 91

प्रतिनिधि... — II. iii. 11

देखें — प्रतिनिधिप्रतिदाने II. iii. 11

प्रतिनिधिप्रतिदानयोः — I. iv. 91

प्रतिनिधि और प्रतिदान विषय में (प्रति शब्द की कर्मप्रवचनीय और निपात संज्ञा होती है)।

प्रतिनिधिप्रतिदाने — II. iii. 11

(जिससे) प्रतिनिधित्व और (जिससे) प्रतिदान हो (उससे भी कर्मप्रवचनीय के योग में 'पञ्चमी' विभक्ति होती है)।

मुख्य के सदृश को 'प्रतिनिधि' और दिये हुवे के प्रतिनिर्यातन को 'प्रतिदान' कहते हैं।

प्रतिपथम् — IV. iv. 42

(द्वितीयासमर्थ) प्रतिपथ प्रातिपदिक से ('आता है'— अर्थ में ठन् तथा ठक् प्रत्यय होता है)।

...प्रतिपन्नाः — VI. ii. 170

देखें — अकृतमित० VI. ii. 170

प्रतिपर्यनवः — I. iv. 89

प्रति, परि और अनु शब्द (लक्षण, इत्थंभूताख्यान, भाग और वीप्सा — इन अर्थों के द्योतित होने पर कर्मप्रवचनीय और निपात-संज्ञक होते हैं)।

प्रतिबन्धि — VI. ii. 6

(चिर तथा कृच्छ्र शब्द उत्तरपद रहते तत्पुरुष समास में) प्रतिबन्धिवाची, जो कार्य की सिद्धि को बांध देता है अर्थात् रोक देता है, तद्वाची पूर्वपद को (प्रकृतिस्वर होता है)।

...प्रतिभू... — II. iii. 39

देखें — स्वामीश्वराधिपति० II. iii. 39

...प्रतिभ्याम् — I. iii. 46

देखें — सम्प्रतिभ्याम् I. iii. 46

...प्रतियत्न... — I. iii. 32

देखें — गन्धनावक्षेपणसेवन० I. iii. 32

प्रतियत्न... — VI. i. 134

देखें — प्रतियत्नवैकृत० VI. i. 134

प्रतियत्नवैकृतवाक्याध्याहारेषु — VI. i. 134

प्रतियत्न = किसी गुण को किसी अन्य गुण में परिवर्तित करना, वैकृत = विकृत या खराब होना तथा वाक्याध्याहार = गम्यमान अर्थ को भी सहजता से समझाने के लिये शब्दों द्वारा उपादान कर देना — अर्थ गम्यमान हों तो (कृ धातु के परे रहते उप उपसर्ग से उत्तर ककार से पूर्व सुट् का आगम होता है, संहिता के विषय में)।

प्रतियत्ने — II. iii. 53

प्रतियत्न = किसी गुण को किसी अन्य गुण में परिवर्तित करना गम्यमान होने पर (कृ धातु के कर्म कारक में शेष विवक्षित होने पर षष्ठी विभक्ति होती है)।

प्रतियोगे — V. iv. 44

प्रति शब्द के योग में (विहित पञ्चमी विभक्ति अन्त वाले प्रातिपदिक से विकल्प से तसि प्रत्यय होता है)।

...प्रतिरूपयोः — VI. ii. 11

देखें — सदृशप्रतिरूपयोः VI. ii. 11

प्रतिश्रवणे — VIII. ii. 99

प्रतिश्रवण= स्वीकार करना तथा अच्छी तरह सुनने में प्रवृत्ति अर्थ में (वर्तमान वाक्य की टि को भी प्लुत उदात्त होता है)।

...प्रतिषीव्य... — III. i. 123

देखें — निष्टक्यदेवहूय० III. i. 123

प्रतिषेधयोः — III. iv. 18

प्रतिषेधवाची (अलं तथा खलु शब्द) उपपद रहते (प्राचीन आचार्यों के मत में धातु से क्त्वा प्रत्यय होता है)।

प्रतिष्कशः — VI. i. 147

प्रतिष्कश शब्द में प्रति पूर्वक कश् धातु को सुट् आगम तथा उसी सुट् के सकार को षत्व निपातन किया जाता है।

प्रतिष्कश = सहायक, अग्रगामी, दूत।

प्रतिष्ठायाम् — VI. i. 141

प्रतिष्ठा अर्थ में (आस्पद शब्द में सुट् आगम निपातन किया जाता है)।

प्रतिष्णातम् — VIII. iii. 90

प्रतिष्णातम् में षत्व निपातन है, (धागा को कहने में)।

प्रतिस्तब्ध... — VIII. iii. 114

देखें — प्रतिस्तब्धनिस्तब्धौ VIII. iii. 114

प्रतिस्तब्धनिस्तब्धौ — VIII. iii. 114

प्रतिस्तब्ध, निस्तब्ध शब्दों में भी मूर्धन्याभाव निपातन है।

...प्रती — II. i. 13

देखें — अभिप्रती II. i. 13

...प्रतीचः — IV. ii. 100
देखें — द्युप्रागपागु० IV. ii. 100

प्रतीयमाने — I. iii. 77

(समीपोच्चरित पद के द्वारा कर्त्रभिप्राय क्रियाफल के) प्रतीति होने पर (धातु से आत्मनेपद होता है)।

...प्रतूर्त्त... — VIII. ii. 61
देखें — नसत्तनिषत्ता० VIII. ii. 61

प्रतेः — V. iv. 82

प्रति शब्द से उत्तर (उरस्-शब्दान्त प्रातिपदिक से समासान्त अच् प्रत्यय होता है, यदि वह उरस् शब्द सप्तमी विभक्ति के अर्थवाला हो तो)।

प्रतेः — VI. i. 25

प्रति से उत्तर (भी श्यैङ् धातु को सम्प्रसारण हो जाता है, निष्ठा के परे रहते)।

प्रतेः — VI. i. 137

(उप तथा) प्रति उपसर्ग से उत्तर ('कृ विक्षेपे' धातु के परे रहते हिंसा के विषय में ककार से पूर्व सुट् आगम होता है, संहिता के विषय में)।

प्रतेः — VI. ii. 193

प्रति उपसर्ग से उत्तर (तत्पुरुष समास में अश्वादिगण-पठित शब्दों को अन्तोदात्त होता है)।

प्रत्न... — V. iii. 112
देखें — प्रत्नपूर्व० V. iii. 112

प्रत्नपूर्वविश्वेमात् — V. iii. 112

प्रत्न, पूर्व, विश्व, इम — इन प्रातिपदिकों से (इवार्थ में थाल् प्रत्यय होता है, वेदविषय में)।

प्रत्न = पुराना, पहला।

प्रत्यग्रथ... — IV. i. 171
देखें — साल्वावयवप्रत्यग्रथ० IV. i. 171

प्रत्यनुपूर्वम् — IV. iv. 28

(द्वितीयासमर्थ) प्रति, अनुपूर्वक (जो ईप, लोम और कूल प्रातिपदिक — उनसे 'वर्तते हैं' अर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

प्रत्यन्ववपूर्वात् — V. iii. 75

प्रति, अनु तथा अव पूर्ववाले (सामन् और लोमन् प्रातिपदिक से समासान्त अच् प्रत्यय होता है)।

प्रत्यपिभ्याम् — III. i. 118

प्रति और अपि पूर्वक ('ग्रह्' धातु से क्यप् प्रत्यय होता है)।

प्रत्यभिवादे — VIII. ii. 83

(अशूद्र-विषयक) प्रत्यभिवाद = अभिवादन करने के पश्चात् जिसका अभिवादन किया गया है, उसके द्वारा जो आशीर्वचन कहा जाता है, उस अर्थ में (वाक्य के पद की टि को प्लुत होता है और वह प्लुत उदात्त होता है)।

प्रत्यय... — VII. ii. 98
देखें — प्रत्ययोत्तरपदयोः VII. ii. 98

प्रत्ययः — I. ii. 49

(एक = असहाय अल् वाला) प्रत्यय (अपृक्त-सञ्ज्ञक होता है)।

प्रत्ययः — III. i. 1

यहाँ से लेकर पञ्चमाध्याय की समाप्ति (V. iv. 160) तक प्रत्यय संज्ञा का अधिकार होगा।

...प्रत्यययोः — VIII. ii. 58
देखें — भोगप्रत्यययोः VIII. ii. 58

...प्रत्यययोः — VIII. iii. 59
देखें — आदेशप्रत्यययोः VIII. iii. 59

प्रत्ययलक्षणम् — I. i. 61

(प्रत्यय के लोप हो जाने पर) प्रत्ययलक्षण अर्थात् प्रत्यय को निमित्त मानकर जो कार्य पाता था, वह (उसके लोप हो जाने पर भी हो जावे)।

प्रत्ययलोपे — I. i. 61

प्रत्यय के लोप हो जाने पर (उस प्रत्यय को निमित्त मानकर कार्य हो जाता है)।

प्रत्ययवत् — VI. iii. 67

(खिदन्त उत्तरपद रहते इजन्त एकाच् को अम् आगम होता है और वह अम्) प्रत्यय के समान (भी माना जाता है)।

प्रत्ययविधिः — I. iv. 13

(जिस धातु या प्रातिपदिक से) प्रत्यय का विधान किया जाये, (उस प्रत्यय के परे रहते उस धातु या प्रातिपदिक का आदि वर्ण है आदि जिस समुदाय का, उस की अंग संज्ञा होती है)।

प्रत्ययस्थात् — VII. iii. 44

प्रत्यय में स्थित (ककार) से (पूर्व अकार के स्थान में इकारादेश होता है, आप् परे रहते, यदि वह आप् सुप् से उत्तर न हो तो)।

प्रत्ययस्य — I. i. 60

प्रत्यय के (अदर्शन की लुक्, श्लु, लुप् संज्ञायें होती हैं)।

प्रत्ययस्य — I. iii. 6

(उपदेश में) प्रत्यय के (आदि में वर्तमान षकार की इत्सञ्ज्ञा होती है)।

प्रत्ययाः — III. iv. 1

(दो धातुओं के अर्थ का सम्बन्ध होने पर भिन्नकाल में विहित) प्रत्यय (भी कालान्तर में) साधु होते हैं।

...प्रत्ययात् — III. i. 35

देखें — **कास्प्रत्ययात् III. i. 35**

प्रत्ययात् — III. iii. 102

प्रत्ययान्त धातुओं से (स्त्रीलिङ्ग कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में अ प्रत्यय होता है)।

प्रत्ययात् — VI. i. 186

(भी, ह्री, भृ, हु, मद, जन, धन, दरिद्रा तथा जागृ धातु के अभ्यस्त को पित् ल सार्वधातुक परे रहते) प्रत्यय से (पूर्व को उदात्त होता है)।

प्रत्ययात् — VI. iv. 106

(संयोग पूर्व में नहीं है जिससे, ऐसा जो उकार, तदन्त) जो प्रत्यय, तदन्त अङ्ग से उत्तर (भी हि का लुक् हो जाता है)।

प्रत्ययादीनाम् — VII. i. 2

प्रत्यय के आदि में (फ्, ढ्, ख्, छ् तथा घ् को यथासङ्ख्य करके आयन्, एय्, ईन्, ईय् तथा इय् आदेश होते हैं)।

...प्रत्ययार्थवचनम् — I. ii. 56

देखें — **प्रधानप्रत्ययार्थवचनम् I. ii. 56**

प्रत्यये — I. iv. 13

(जिस धातु या प्रातिपदिक से प्रत्यय का विधान किया जाये, उस) प्रत्यय के परे रहते (उस धातु या प्रातिपदिक का आदि वर्ण है आदि जिसका, उस समुदाय की अङ्ग संज्ञा होती है)।

प्रत्यये — VI. i. 76

(यकारादि) प्रत्यय के परे रहते (एच् के स्थान में संहिता के विषय में वकार अन्तवाले अर्थात् अव्, आव् आदेश होते हैं)।

प्रत्ययोत्तरपदयोः — VII. ii. 98

प्रत्यय तथा उत्तरपद परे रहते (भी एकत्व अर्थ में वर्तमान युष्मद्, अस्मद् अङ्ग के मपर्यन्त भाग को क्रमशः त्व, म आदेश होते हैं)।

...प्रत्यवसानार्थ... — I. iv. 52

देखें — **गतिबुद्धिप्रत्यवसानार्थ० I. iv. 52**

...प्रत्यवसानार्थेभ्यः — III. iv. 76

देखें — **ध्रौव्यगति० III. iv. 76**

प्रत्याङ्भ्याम् — I. iii. 59

प्रति तथा आङ् उपसर्ग से उत्तर (सन्नन्त श्रु धातु से आत्मनेपद नहीं होता है)।

प्रत्याङ्भ्याम् — I. iv. 40

प्रति एवं आङ् उपसर्ग से उत्तर (श्रु धातु के प्रयोग में पूर्व का जो कर्त्ता, वह कारक सम्प्रदान-संज्ञक होता है)।

प्रत्यारम्भे — VIII. i. 31

(नह से युक्त तिङन्त को) प्रत्यारम्भ = पुनः आरम्भ होने पर (अनुदात्त नहीं होता)।

प्रत्येनसि — VI. ii. 27

प्रत्येनस् शब्द उत्तरपद रहते (कर्मधारय समास में कुमार शब्द को आदि उदात्त होता है)।

प्रत्येनसि — VI. ii. 60

(षष्ठ्यन्त पूर्वपद राजन् शब्द को) प्रत्येनस् शब्द उत्तरपद रहते (विकल्प से प्रकृतिस्वर होता है)।

...प्रथ... — VII. iv. 95

देखें — **स्मृदृत्वर० VII. iv. 95**

प्रथने — III. iii. 33

(वि पूर्वक स्तृञ् धातु से अशब्दविषयक) विस्तार को कहना हो (तो कर्तृभिन्न कारक संज्ञाविषय तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

प्रथम... — I. i. 32

देखें — **प्रथमचरमतयाल्पार्धकतिपयनेमाः I. i. 32**

प्रथम... — I. iv. 100
देखें — **प्रथममध्यमोत्तमाः I. iv. 100**

...प्रथम... — II. i. 57
देखें — **पूर्वापरप्रथम० II. i. 57**

...प्रथम... — III. iv. 24
देखें — **अग्रेप्रथमपूर्वेषु III. iv. 24**

...प्रथम... — IV. iii. 72
देखें — **द्वयजृद्ब्राह्मण० IV. iii. 72**

प्रथम... — VI. ii. 162
देखें — **प्रथमपूरणयोः VI. ii. 162**

प्रथमः — I. iv. 107
(मध्यम, उत्तम पुरुष जिन विषयों में कहे गये हैं, उनसे अन्य विषय में) प्रथम पुरुष होता है।

प्रथमः — VI. ii. 56
(अचिरकाल-सम्बन्ध गम्यमान हो तो) प्रथम पूर्वपद को (विकल्प से प्रकृतिस्वर होता है)।

प्रथमचरमतयाल्पार्धकतिपयनेमाः — I. i. 32
प्रथम, चरम, तयप् प्रत्ययान्त शब्द, अल्प, अर्ध, कतिपय तथा नेम शब्दों (की भी जस्-सम्बन्धी कार्य में विकल्प करके सर्वनाम संज्ञा होती है)।

प्रथमपूरणयोः — VI. ii. 162
(बहुव्रीहि समास में इदम्, एतत्, तद् शब्दों से परे क्रिया के गणन में वर्तमान) प्रथम तथा पूरण प्रत्ययान्त शब्दों को (अन्तोदात्त होता है)।

प्रथममध्यमोत्तमाः — I. iv. 100
(तिङ् प्रत्ययों के तीन-तीन के जुट क्रम से) प्रथम, मध्यम और उत्तम संज्ञक होते हैं)।

प्रथमयोः — VI. i. 98
(अक् प्रत्याहार के पश्चात्) प्रथमा और द्वितीया विभक्ति के (अच् के) परे रहते (पूर्व, पर के स्थान में पूर्व जो वर्ण, उसका सवर्णदीर्घ एकादेश होता है)।

प्रथमयोः — VII. i. 28
(युष्मद् तथा अस्मद् अङ्ग से उत्तर ङे विभक्ति के स्थान में तथा) प्रथमा एवं द्वितीया विभक्ति के स्थान में (अम् आदेश होता है)।

प्रथमस्य — II. iv. 85
(लुडादेश) प्रथम पुरुष के (स्थान में क्रमशः डा, रौ और रस् आदेश होते हैं)।

प्रथमस्य — VI. i. 1
प्रथम (एकाच् वाले समुदाय) को (द्वित्व हो जाता है)।

प्रथमयोः — VII. i. 28
(युष्मद् तथा अस्मद् अङ्ग से उत्तर ङे विभक्ति के स्थान में तथा) प्रथमा एवं द्वितीया विभक्ति के स्थान में (अम् आदेश होता है)।

प्रथमा — II. iii. 46
(प्रातिपदिकार्थमात्र, लिङ्गमात्र, परिमाणमात्र और वचनमात्र में) प्रथमा विभक्ति होती है।

प्रथमा — VIII. i. 58
(च तथा वा के योग में) प्रथमोच्चरित (तिङन्त को अनुदात्त नहीं होता)।

प्रथमात् — IV. i. 82
(यहाँ से लेकर प्राग्दिशो विभक्तिः V. iii. 1 तक कहे जाने वाले प्रत्यय, समर्थों में) जो प्रथम, उनसे (विकल्प से होते हैं)।

प्रथमानिर्दिष्टम् — I. ii. 43
(समासविधान करने वाले सूत्रों में) जो प्रथमा विभक्ति से निर्दिष्ट पद, वह (उपसर्जन-संज्ञक होता है)।

..प्रथमाभ्यः — V. iii. 27
देखें — **सप्तमीपञ्चमी० V. iii. 27**

प्रथमायाः — VII. ii. 88
प्रथमा विभक्ति के (द्विवचन के परे रहते भी भाषाविषय में युष्मद्, अस्मद् को आकारादेश होता है)।

प्रथमायाः— VIII. i. 26
(विद्यमान है पूर्व में कोई पद जिससे, ऐसे) प्रथमान्त पद से उत्तर (षष्ठ्यन्त, चतुर्थ्यन्त तथा द्वितीयान्त युष्मद्, अस्मद् शब्दों को विकल्प से वाम्, नौ आदि आदेश नहीं होते)।

प्रथमे — IV. i. 20
प्रथम (अवस्था) में (वर्तमान अनुपसर्जन अदन्त प्रातिपदिकों से स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय होता है)।

...प्रदोष... — IV. iii. 28
देखें — पूर्वाह्णापराह्णार्द्रा० IV. iii. 28

...प्रदोषाभ्याम् — IV. iii. 14
देखें — निशाप्रदोषाभ्याम् IV. iii. 14

प्रधान... — I. ii. 56
देखें — **प्रधानप्रत्ययार्थवचनम् I. ii. 56**

प्रधानप्रत्ययार्थवचनम् — I. ii. 56
प्रधानार्थवचन एवं प्रत्ययार्थवचन (अशिष्य होते हैं, अर्थ में लोक के अधीन होने से)।

प्रनिरन्तःशरेक्षुप्लक्षाम्रकार्ष्यखदिरपीयूक्षाभ्यः — VIII. iv. 5
प्र, निर्, अन्तर्, शर, इक्षु, प्लक्ष, आम्र, कार्ष्य, खदिर, पीयूक्षा— इन से उत्तर (वन शब्द के नकार को असञ्ज्ञा-विषय में भी तथा अपि-ग्रहण से सञ्ज्ञा-विषय में भी णकार आदेश होता है)।

प्रपूर्वस्य — VI. i. 23
प्र पूर्ववाले (स्त्यै धातु) को (निष्ठा परे रहते सम्प्रसारण हो जाता है)।

प्रभवः — I. iv. 31
(भू धातु के कर्ता का) जो प्रभव= उत्पत्ति स्थान, वह (कारक अपादान संज्ञक होता है)।

प्रभवति — IV. iii. 83
(पञ्चमीसमर्थ प्रातिपदिक से) 'प्रभवति' अर्थ में (यथा-विहित प्रत्यय होता है)।
प्रभवति = प्रथमतः उपलब्धि या निकास।

प्रभवति — V. i. 100
(चतुर्थीसमर्थ सन्तापादि प्रातिपदिकों से) 'समर्थ है'= शक्त है अर्थ में (यथाविहित ठञ् प्रत्यय होता है)।

...प्रभा... — III. ii. 21
देखें — **दिवाविभा० III. ii. 21**

...प्रभृति... — VI. iii. 83
देखें — **अमूर्धप्रभृत्य० VI. iii. 83**

प्रभौ — VII. ii. 21
(परिवृढ शब्द निष्ठा परे रहते) स्वामी अर्थ को कहने में (निपातन किया जाता है)।

प्रमद... — III. iii. 68
देखें — **प्रमदसम्मदौ III. iii. 68**

प्रमदसम्मदौ — III. iii. 68
(हर्ष अभिधेय होने पर) प्रमद और सम्मद (ये अप्-प्रत्ययान्त शब्द निपातित किये जाते हैं, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में)।

प्रमाणे — III. iv. 51
आयाम = लम्बाई गम्यमान हो (तो भी सप्तम्यन्त तथा तृतीयान्त उपपद रहते धातु से णमुल् प्रत्यय होता है)।

प्रमाणे — IV. i. 24
प्रमाण= लम्बाई अर्थ में वर्तमान (जो पुरुष शब्द, तदन्त अनुपसर्जन द्विगुसंज्ञक प्रातिपदिक से तद्धित का लुक् होने पर स्त्रीलिङ्ग में विकल्प से ङीप् प्रत्यय नहीं होता)।

प्रमाणे — V. ii. 37
(प्रथमासमर्थ) प्रमाण समानाधिकरणवाची (प्रातिपदिकों से षष्ठ्यर्थ में द्वयसच्, दघ्नच् और मात्रच् प्रत्यय होते हैं)।

प्रमाणे — VI. ii. 4
प्रमाणवाची (तत्पुरुष समास) में (गाध तथा लवण शब्दों के उत्तरपद रहते पूर्वपद को प्रकृतिस्वर होता है)।
गाध = तरणीय, उथला।

प्रमाणे — VI. ii. 12
प्रमाणवाची (तत्पुरुष समास) में (द्विगु उत्तरपद रहते पूर्वपद को प्रकृतिस्वर होता है)।

...प्रमाणेषु — VI. i. 140
देखें — **सेवितासेवित० VI. i. 140**

...प्रमाण्योः — V. iv. 116
देखें — **पूरणीप्रमाण्योः V. iv. 116**

प्रयच्छति — IV. iv. 30
(द्वितीयासमर्थ प्रातिपदिक से) 'देता है' अर्थ में (ढक् प्रत्यय होता है, यदि देय पदार्थ निन्दित हो)।

प्रयाज... — VII. iii. 62
देखें — **प्रयाजानुयाजौ VII. iii. 62**

प्रयाजानुयाजौ — VII. iii. 62
प्रयाज तथा अनुयाज शब्द (यज्ञ का अङ्ग हो तो निपातन किये जाते हैं)।

प्रयुज्यमाने — VIII. ii. 101
(चित् यह निपात भी जब उपमा के अर्थ में) प्रयुक्त हो, तो (वाक्य के टि को अनुदात्त प्लुत होता है)।

प्रयै — III. iv. 10
प्रयै, (रोहिष्यै, अव्यथिष्यै) शब्द (वेदविषय में तुमर्थ में निपातन किये जाते हैं)।

प्रयोजन... — IV. ii. 55
देखें — प्रयोजनयोद्धृभ्य: IV. ii. 55

प्रयोजनम् — V. i. 108
प्रयोजन-समानाधिकरणवाची (प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में यथाविहित ठञ् प्रत्यय होता है)।

प्रयोजनयोद्धृभ्य: — IV. ii. 55
(प्रथमासमर्थ) प्रयोजन और योद्धा (के साथ समाना-धिकरण वाले) प्रातिपदिकों से (षष्ठ्यर्थ में सङ्ग्राम अभि-धेय हो तो यथाविहित अण् प्रत्यय होता है)।

...प्रयोजनात् — V. ii. 81
देखें — कालप्रयोजनात् V. ii. 81

प्रयोज्य... — VII. iii. 68
देखें — प्रयोज्यनियोज्यौ VII. iii. 68

प्रयोज्यनियोज्यौ — VII. iii. 68
प्रयोज्य तथा नियोज्य ण्यत् प्रत्ययान्त शब्द (शक्य अर्थ में निपातन किये जाते हैं)।

प्रलम्भने — I. iii. 69
प्रलम्भन = ठगने अर्थ में (ण्यन्त गृधु, वञ्चु धातुओं से आत्मनेपद होता है)।

...प्रलयानाम् — VII. iii. 2
देखें — केकयमित्रयु० VII. iii. 2

...प्रवक्तृ... — II. i. 64
देखें — पोटायुवतिस्तोक० II. i. 64

...प्रवच... — VII. iii. 66
देखें — यजयाच० VII. iii. 66

...प्रवचनीय... — III. iv. 68
देखें — भव्यगेय० III. iv. 68

...प्रवति... — VII. iv. 81
देखें — स्रवतिश्रृणोति० VII. iv. 81

...प्रवय्ये — VI. i. 80
देखें — भय्यप्रवय्ये VI. i. 80

प्रवाहणस्य — VII. iii. 28
प्रवाहण अङ्ग के (उत्तरपद के अचों में आदि अच् को नित्य वृद्धि होती है, पूर्वपद को तो विकल्प से होती है, ढ तद्धित प्रत्यय परे रहते)।

प्रवृद्धादीनाम् — VI. ii. 147
प्रवृद्धादियों के (क्तान्त उत्तरपद को भी अन्तोदात्त होता है)।

...प्रवृद्धेषु — VI. ii. 38
देखें — व्रीह्यपराहण० VI. ii. 38

प्रशस्यस्य — V. iii. 60
प्रशस्य शब्द के स्थान में (अजादि अर्थात् इष्ठन्, ईयसुन् प्रत्यय परे रहते श्र आदेश होता है)।

प्रशस्ये — IV. iv. 122
(षष्ठीसमर्थ रेवती, जगती तथा हविष्या प्रातिपदिकों से) प्रशस्य = प्रशंसा के योग्य अर्थ में (वैदिक प्रयोग में यत् प्रत्यय होता है)।

...प्रशंसयो: — III. iii. 86
देखें — गणप्रशंसयो: III. iii. 86

...प्रंशसयो: — V. ii. 120
देखें — आहतप्रशंसयो: V. ii. 120

प्रशंसायाम् — III. ii. 133
(अर्ह् धातु से) प्रशंसा गम्यमान हो तो (वर्तमान काल में शतृ प्रत्यय होता है)।

प्रशंसायाम् — V. iii. 66
'प्रशंसा-विशिष्ट' अर्थ में (वर्तमान प्रातिपदिक तथा तिङन्त से स्वार्थ में रूपप् प्रत्यय होता है)।

प्रशंसायाम् — V. iv. 40
प्रंशसा-विशिष्ट अर्थ में (वर्तमान मृद् प्रातिपदिक से स्वार्थ में स तथा स्न प्रत्यय होते हैं)।

प्रशंसायाम् — VI. ii. 63
प्रशंसा गम्यमान हो तो (शिल्पिवाची शब्द उत्तरपद रहते राजन् पूर्वपद वाले शब्द को भी विकल्प से प्रकृतिस्वर होता है)।

प्रशंसायाम् — VII. i. 66
प्रशंसा गम्यमान होने पर (उप उपसर्ग से उत्तर लभ् अङ्ग को यकारादि प्रत्यय के विषय में नुम् आगम होता है)।

प्रशंसावचनै: — II. i. 65
(जातिवाची सुबन्त) प्रशंसावाची (समानाधिकरण समर्थ सुबन्त) शब्दों के साथ (भी विकल्प से समास को प्राप्त होता है और वह तत्पुरुष समास होता है)।

...प्रशास्तॄणाम् — VI. iv. 11
देखें — अप्तृन्तृच्० VI. iv. 11

प्रश्न... — VIII. ii. 105
देखें — प्रश्नाख्यानयोः VIII. ii. 105

प्रश्नाख्यानयोः — VIII. ii. 105
(वाक्यस्थ अनन्त्य एवं 'अपि' ग्रहण से अन्त्य पद की टि को भी) प्रश्न एवं आख्यान= कथन उत्तर होने पर (स्वरित प्लुत होता है)।

प्रश्नान्त... — VIII. ii. 100
देखें — प्रश्नान्ताभिपूजितयोः VIII. ii. 100

प्रश्नान्ताभिपूजितयोः — VIII. ii. 100
प्रश्नान्त = प्रश्न किये जाने वाले वाक्य का अन्तिम पद तथा अभिपूजित = प्रशंसा में (विधीयमान प्लुत को अनुदात्त होता है)।

प्रश्ने — III. ii. 117
(समीपकालिक) प्रष्टव्य (अनद्यतन परोक्ष भूतकाल) में (वर्तमान धातु से भी लङ् तथा लिट् प्रत्यय होते हैं)।

प्रश्ने — VIII. i. 32
(सत्यम् शब्द से युक्त तिङन्त को) प्रश्न होने पर (अनुदात्त नहीं होता)।

...प्रश्रथ... — VI. iv. 29
देखें — अवोदैधौ० VI. iv. 29

प्रष्ठः — VIII. iii. 92
प्रष्ठ शब्द में षत्व निपातन है, (अग्रगामी अभिधेय हो तो)।

प्रसमुपोदः — VIII. i. 6
प्र, सम्, उप तथा उत् उपसर्गों को (पाद की पूर्त्ति करनी हो तो द्वित्व हो जाता है)।

प्रसम्भ्याम् — V. iv. 129
(बहुव्रीहि समास में) प्र तथा सम् से उत्तर (जो जानु शब्द, उसके स्थान में समासान्त ज्ञु आदेश होता है)।

प्रसहने — I. iii. 33
प्रसहन = किसी को दबा लेना वा हरा देना अर्थ में (वर्तमान अधि उपसर्ग से युक्त कृ धातु से आत्मनेपद होता है)।

प्रसित... — II. iii. 44
देखें — प्रसितोत्सुकाभ्याम् II. iii. 44

प्रसिते — V. II. 66
(सप्तमीसमर्थ स्वाङ्गवाची प्रातिपदिकों से) 'तत्पर' अर्थ में (कन् प्रत्यय होता है)।

प्रसितोत्सुकाभ्याम् — II. iii. 44
प्रसित= प्रसक्त और उत्सुक शब्दों के योग में (तृतीया और सप्तमी विभक्ति होती है)।

...प्रसूतैः — II. iii. 39
देखें — स्वामीश्वराधिपति० II. iii. 39

...प्रसूभ्यः — III. ii. 157
देखें — जिदृक्षि० III. ii. 157

प्रस्कण्व... — VI. i. 148
देखें — प्रस्कण्वहरिश्चन्द्रौ VI. i. 148

प्रस्कण्वहरिश्चन्द्रौ — VI. i. 148
प्रस्कण्व तथा हरिश्चन्द्र शब्द में सुट् का निपातन किया जाता है, (ऋषि अभिधेय हो तो)।

...प्रस्तार... — IV. iv. 72
देखें — कठिनान्तप्रस्तार० IV. iv. 72

प्रस्त्यः — VIII. ii. 54
प्रपूर्वक स्त्यै धातु से उत्तर (निष्ठा के तकार को विकल्प से मकारादेश होता है)।

प्रस्थ... — IV. ii. 121
देखें — प्रस्थपुरवहान्तात् IV. ii. 121

प्रस्थपुरवहान्तात् — IV. ii. 121
प्रस्थ, पुर, वह अन्तवाले जो (देशवाची वृद्धसंज्ञक) प्रातिपदिक, उनसे (भी शैषिक वुञ् प्रत्यय होता है)।

प्रस्थस्फवर्बंहिगर्वर्षित्रब्द्राघिवृन्दाः — VI. iv. 157
(प्रिय, स्थिर, स्फिर, उरु, बहुल, गुरु, वृद्ध, तृप्र, दीर्घ, वृन्दारक शब्दों के स्थान में क्रमशः प्र, स्थ, स्फ, वर्, बहि, गर्, वर्षि, त्रप्, द्राघि, वृन्द — ये आदेश हो जाते हैं; इष्ठन्, इमनिच् तथा ईयसुन् परे रहते)।

प्रस्थे — VI. ii. 87
प्रस्थ शब्द उत्तरपद रहते (कर्क्यादिगणस्थ तथा वृद्धसञ्ज्ञक शब्दों को छोड़कर पूर्वपद को आद्युदात्त होता है)।

प्रस्थोत्तरः... — IV. ii. 109
देखें — प्रस्थोत्तरपद० IV. ii. 109

प्रस्थोत्तरपदपलद्यादिकोपधात् — IV. ii. 109

प्रस्थ शब्द उत्तरपद हो जिनका, उन शब्दों से, पलद्यादि गण के शब्दों से तथा ककार उपधावाले शब्दों से (अण् प्रत्यय होता है)।

प्रहरणम् — IV. ii. 56

(प्रथमासमर्थ) प्रहरण = आयुध समानाधिकरण वाले प्रातिपदिकों से (सप्तम्यर्थ में ण प्रत्यय होता है, यदि 'अस्यां' से निर्दिष्ट क्रीडा हो)।

प्रहरणम् — IV. iv. 57

(प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में ठक् प्रत्यय होता है, यदि वह प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक) शस्त्र हो।

प्रहासे — I. iv. 105

परिहास गम्यमान होने पर (भी मन्य है उपपद जिसका, ऐसी धातु से युष्मद् उपपद रहते, समान अभिधेय होने पर, युष्मद् शब्द का प्रयोग हो या न हो तो भी मध्यम पुरुष हो जाता है तथा उस मन् धातु से उत्तम पुरुष हो जाता है और उत्तम पुरुष को एकत्व भी हो जाता है)।

प्रहासे — VIII. i. 46

(एहि तथा मन्य से युक्त लृडन्त तिङन्त को) हंसी गम्यमान हो तो (अनुदात्त नहीं होता)।

प्राक् — I. iv. 56

('अधिरीश्वरे' I. iv. 96 सूत्र से) पहले-पहले (निपात संज्ञा का अधिकार जाता है)।

प्राक् — I. iv. 79

(वे गति और उपसर्ग संज्ञक शब्द धातु से) पहले (होते हैं)।

प्राक् — II. i. 3

('कडाराः कर्मधारये' II. ii. 38 से) पहले-पहले (समास सञ्ज्ञा का अधिकार जायेगा)।

प्राक् — IV. i. 83

('तेन दीव्यति॰' IV. iv. 2 से) पहले-पहले (अण् प्रत्यय का अधिकार है)।

प्राक् — IV. iv. 1

(यहाँ से आरम्भ कर 'तद्वहति रथयुगप्रासङ्गम्' सूत्र के) पहले-पहले (जो अर्थ निर्दिष्ट किये गये है, वहां तक ठक् प्रत्यय का अधिकार जानना चाहिये)।

प्राक् — IV. iv. 75

(यहाँ से लेकर 'तस्मै हितम्' के) पहले कहे जाने वाले अर्थों में (अपवाद को छोड़कर सामान्यतया यत् प्रत्यय का अधिकार रहेगा)।

प्राक् — V. i. 1

(यहाँ से आगे 'तेन क्रीतम्' V. i. 36 से) पहले (जितने अर्थ कहे गये हैं, उन सब अर्थों में छ प्रत्यय होता है)।

प्राक् — V. i. 18

(यहाँ से आगे वति = 'तेन तुल्यं क्रिया चेद् वतिः' से) पहले-पहले तक (ठञ् प्रत्यय अधिकृत होता है)।

प्राक् — V. iii. 1

(यहाँ से आगे 'दिक्शब्देभ्यः सप्तमीपञ्चमी॰' V. iii. 27 सूत्र से) पहले-पहले (जितने प्रत्यय कहे हैं, उन सबकी विभक्ति सञ्ज्ञा होती है)।

प्राक् — V. iii. 49

('भाग' अर्थ में वर्तमान पूरण प्रत्ययान्त एकादश संख्या से) पहले-पहले (जो सङ्ख्यावाची शब्द, उनसे स्वार्थ में अन्) (प्रत्यय होता है, वेदविषय को छोड़कर।

प्राक् — V. iii. 70

('इवे प्रतिकृतौ' V. iii. 96 सूत्र से) पहले-पहले (क प्रत्यय अधिकृत होता है)।

प्राक् — V. iii. 71

(अव्यय तथा सर्वनामवाची प्रातिपदिकों से एवं तिङन्त से इवार्थ से पहले-पहले अकच् प्रत्यय होता है और वह टि से) पूर्व (होता है)।

प्राक् — VIII. iii. 63

(सित शब्द से) पहले-पहले (अट् का व्यवधान होने पर तथा अपि-ग्रहण से अट् का व्यवधान न होने पर भी सकार को मूर्धन्य आदेश होता है)।

...प्राक्षु — IV. ii. 75

देखें — सौवीरसाल्व॰ IV. ii. 75

...प्राच्... — IV. ii. 100

देखें — द्युप्रागपागु॰ IV. ii. 100

प्राचाम् — I. i. 74
(जिस समुदाय के अचों का आदि अच् एङ् हो, उसकी) पूर्वदेश को कहने में (वृद्धसंज्ञा होती है)।

प्राचाम् — II. iv. 60
प्राग्देश वालों के (गोत्रापत्य में विहित इञ्-प्रत्ययान्त से युवापत्य में विहित प्रत्ययों का लुक् होता है)।

प्राचाम् — III. i. 90
प्राचीन आचार्यों के मत में (कुष् और रञ्ज धातु से कर्मवद्भाव में श्यन् प्रत्यय और परस्मैपद होता है)।

प्राचाम् — III. iv. 18
(प्रतिषेधवाची अलं तथा खलु शब्द उपपद रहते) प्राचीन आचार्यों के मत में (धातु से क्त्वा प्रत्यय होता है)।

प्राचाम् — IV. i. 17
(अनुपसर्जन यञन्त प्रातिपदिकों से स्त्रीलिङ्ग में) प्राचीन आचार्यों के मत में (ष्फ प्रत्यय होता है और वह तद्धित-संज्ञक होता है)।

प्राचाम् — IV. i. 43
(अनुपसर्जन शोण प्रातिपदिक से) प्राचीन आचार्यों के मत में (स्त्रीलिङ्ग में ङीष् प्रत्यय होता है)।

प्राचाम् — IV. i. 160
(अवृद्धसंज्ञक प्रातिपदिक से अपत्यार्थ में बहुल करके फिन् प्रत्यय होता है); प्राचीन आचार्यों के मत में, (अन्यत्र इञ्)।

प्राच्यभरतेषु — IV. ii. 112
प्राच्य भरत गोत्रवाची (इञन्त द्व्यच् प्रातिपदिक से अण् प्रत्यय नहीं होता)।

प्राचाम् — IV. ii. 119
(उवर्णान्त वृद्धसंज्ञक) प्राग्देशवाची प्रातिपदिकों से (शैषिक ठञ् प्रत्यय होता है)।

प्राचाम् — IV. ii. 122
प्राग्देशवाची (रेफ उपधावाले तथा ईकारान्त वृद्धसंज्ञक प्रातिपदिकों से शैषिक वुञ् प्रत्यय होता है)।

प्राचाम् — IV. ii. 138
(कट शब्द आदि में है जिनके, ऐसे) प्राग्देशवाची (प्रातिपदिकों से शैषिक छ प्रत्यय होता है)।

प्राचाम् — V. iii. 80
(उप शब्द आदि वाले बहुत अच् वाले मनुष्यनामधेय प्रातिपदिक से नीति और अनुकम्पा गम्यमान होने पर अडच्, वुच् तथा घन्, इलच् और ठच् प्रत्यय विकल्प से होते हैं), प्राग्देशीय आचार्यों के मत में)।

प्राचाम् — V. iii. 94
(एक प्रातिपदिक से भी अपने अपने विषयों में डतरच् तथा डतमच् प्रत्यय होते हैं), प्राचीन आचार्यों के मत में।

प्राचाम् — V. iv. 101
(खारी-शब्दान्त द्विगुसञ्ज्ञक तत्पुरुष से तथा अर्धशब्द से उत्तर जो खारी शब्द, तदन्त से समासान्त टच् प्रत्यय होता है); प्राचीन आचार्यों के मत में।

प्राचाम् — VI. ii. 74
प्राग्देश निवासियों की (जो क्रीडा, तद्वाची समास में अकप्रत्ययान्त शब्द के उत्तरपद रहते पूर्वपद को आद्युदात्त होता है)।

प्राचाम् — VI. ii. 99
(पुर शब्द उत्तरपद रहते) प्राच्य भारत के देशों को कहने में (पूर्वपद को अन्तोदात्त होता है)।

प्राचाम् — VI. iii. 9
प्राच्यदेशों (जो करों के नाम वाले शब्द, उनमें भी हलादि शब्द के परे रहते हलन्त तथा अदन्त शब्दों से उत्तर सप्तमी विभक्ति का अलुक् होता है)।

प्राचाम् — VII. iii. 14
(दिशावाची शब्दों से उत्तर) प्राच्य देश में (वर्तमान ग्राम तथा नगरवाची शब्दों के अचों में आदि अच् को तद्धित ञित् णित् तथा कित् प्रत्यय परे रहते वृद्धि होती है)।

प्राचाम् — VII. iii. 24
प्राच्य देश में (नगर अन्त वाला जो अङ्ग, उसके पूर्वपद तथा उत्तरपद के अचों में आदि अच् को ञित्, णित् तथा कित् तद्धित परे रहते वृद्धि होती है)।

प्राचाम् — VIII. ii. 86
(ऋकार को छोड़कर वाक्य के अनन्त्य गुरु-सञ्ज्ञक वर्ण को एक-एक करके तथा अन्त्य के टि को भी) प्राचीन आचार्यों के मत में (प्लुत उदात्त होता है)।

प्राच्य... — II. iv. 66
देखें — प्राच्यभरतेषु II. iv. 66

प्राच्य... — IV. i. 176

देखें — **प्राच्यभर्गादि० IV. i. 176**

प्राच्यभरतेषु — II. iv. 66

प्राच्य गोत्र और भरत गोत्र में विहित (इञ् प्रत्यय का बहुत अच् वाले प्रातिपदिक से उत्तर बहुत्व की विवक्षा में लुक् होता है)।

प्राच्यभरतेषु — VIII. iii. 75

('परिस्कन्द' शब्द में मूर्धन्याभाव निपातन है), प्राग्देशीयान्तर्गत भरतदेश के प्रयोग-विषय में)।

प्राच्यभर्गादियौधेयादिभ्यः — IV. i. 176

(क्षत्रियाभिधायी जनपदवाची) प्राग्देशीय शब्द तथा भर्गादि, यौधेयादि शब्दों से (उत्पन्न जो तद्राजसंज्ञक प्रत्यय, उनका स्त्रीत्व अभिधेय हो तो लुक् नहीं होता)।

प्राणभृज्जाति... — V. i. 128

देखें — **प्राणभृज्जातिवयो० V. i. 128**

प्राणभृज्जातिवयोवचनोद्गात्रादिभ्यः — V. i. 128

(षष्ठीसमर्थ) जीवधारी, जातिवाची, अवस्थावाची तथा उद्गात्रादि प्रातिपदिकों से (भाव और कर्म अर्थों में अञ् प्रत्यय होता है)।

प्राणि... — II. iv. 2

देखें — **प्राणितूर्यसेनाङ्गानाम् II. iv. 2**

प्राणि... — IV. iii. 132

देखें — **प्राण्योषधिवृक्षेभ्यः IV. iii. 132**

प्राणि... — IV. iii. 151

देखें — **प्राणिरजतादिभ्यः IV. iii. 151**

प्राणितूर्यसेनाङ्गानाम् — II. iv. 2

प्राणी के अङ्गवाची, तूर्य = वाद्य अङ्गवाची तथा सेनाङ्गवाची शब्दों के (द्वन्द्व को भी एकवद्भाव हो जाता है)।

प्राणिरजतादिभ्यः — IV. iii. 151

(षष्ठीसमर्थ) प्राणिवाची तथा रजतादिगण में पढ़े प्रातिपदिकों से (विकार और अवयव अर्थों में अञ् प्रत्यय होता है)।

प्राणिस्थात् — V. ii. 96

प्राणिस्थ = प्राणी में स्थित, तद्वाची (आकारान्त) प्रातिपदिकों से 'मत्वर्थ' में विकल्प से लच् प्रत्यय होता है)।

प्राणिस्थात् — V. ii. 128

(द्वन्द्व समास, रोग तथा निन्द्य को कहने वाले) प्राणी में स्थित (अकारान्त) प्रातिपदिकों से ('मत्वर्थ' में इनि प्रत्यय होता है)।

प्राण्योषधिवृक्षेभ्यः — IV. iii. 132

(षष्ठीसमर्थ) प्राणिवाची, ओषधिवाची तथा वृक्षवाची प्रातिपदिकों से (अवयव तथा विकार अर्थों में यथाविहित प्रत्यय होता है)।

प्रात् — I. iii. 81

प्र उपसर्ग से उत्तर (वह् धातु से परस्मैपद होता है)।

प्रात् — VI. ii. 183

प्र उपसर्ग से उत्तर (अस्वाङ्गवाची उत्तरपद को सञ्ज्ञा-विषय में अन्तोदात्त होता है)।

प्रातिपदिकम् — I. ii. 43

(अर्थवान् शब्दों की) प्रातिपदिक संज्ञा होती है, (धातु और प्रत्यय को छोड़कर)।

प्रातिपदिकस्य — I. III. 47

(नपुंसकलिङ्ग में वर्तमान) प्रातिपदिक को (ह्रस्व हो जाता है)।

...प्रातिपदिकात् — IV. i. 1

देखें — **ङ्याप्प्रातिपदिकात् IV. i. 1**

प्रातिपदिकान्त... — VIII. iv. 11

देखें — **प्रातिपदिकान्तनुम्० VIII. iv. 11**

प्रातिपदिकान्तनुम्विभक्तिषु — VIII. iv. 11

(पूर्वपद में स्थित निमित्त से उत्तर) प्रातिपदिक के अन्त में जो नकार तथा नुम् एवं विभक्ति में जो नकार, उसको (भी विकल्प से णकार आदेश होता है)।

प्रातिपदिकान्तस्य — VIII. ii. 7

प्रातिपदिक पद के अन्त में (नकार का लोप होता है)।

प्रातिपदिकार्थ... — II. iii. 46

देखें — **प्रातिपदिकार्थलिङ्ग० II. iii. 46**

प्रातिलोम्ये — V. iv. 64

'प्रतिकूलता' अर्थ गम्यमान हो तो (दुःख प्रातिपदिक से कृञ् के योग में डाच् प्रत्यय होता है)।

प्रादयः — I. iv. 58

प्रादिगणपठित शब्द (निपातसंज्ञक होते हैं, तथा क्रिया के साथ प्रयुक्त होने पर वे उपसर्ग-सञ्ज्ञक होते हैं)।

...प्रादयः — II. ii. 18

देखें — **कुगतिप्रादयः II. ii. 18**

...प्रादुर्ष्याम् — VIII. iii. 87

देखें — **उपसर्गप्रादुर्ष्याम् VIII. iii. 87**

प्राध्वम् — I. iv. 77

'प्राध्वम्' शब्द (बन्धन अर्थ में कृञ् के योग में नित्य गति और निपात सञ्ज्ञक होता है)।

...प्राप्त... — II. i. 23

देखें — **श्रितातीतपतित० II. i. 23**

प्राप्त... — II. ii. 4

देखें — **प्राप्तापन्ने II. ii. 4**

...प्राप्तकालेषु — III. iii. 163

देखें — **प्रैषातिसर्ग० III. iii. 163**

प्राप्तम् — V. i. 103

(प्रथमासमर्थ समय प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में यथाविहित ठञ् प्रत्यय होता है, यदि वह प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक प्राप्त समानाधिकरण वाला हो तो।

प्राप्तापन्ने — II. ii. 4

प्राप्त, आपन्न — ये (सुबन्त) शब्द (भी द्वितीयान्त सुबन्त के साथ विकल्प से समास को प्राप्त होते हैं और वह तत्पुरुष समास होता है)।

प्राप्नोति — V. ii. 8

(द्वितीयासमर्थ आप्रपद प्रातिपदिक से) 'प्राप्त होता है' अर्थ में (ख प्रत्यय होता है)।

...प्राप्य... — IV. iv. 91

देखें — **तार्यतुल्य० IV. iv. 91**

...प्राम् — VII. iv. 12

देखें — **शृदृप्राम् VII. iv. 12**

प्रायभवः — IV. iii. 39

(सप्तमीसमर्थ प्रातिपदिकों से) 'प्रायः करके होता है' (अर्थ में यथाविहित प्रत्यय होता है)।

प्राये — V. ii. 82

(प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से सप्तम्यर्थ में कन् प्रत्यय होता है, यदि वह प्रथमासमर्थ) बहुल करके (सञ्ज्ञाविषय में अन्नविषयक हो तो)।

प्रायेण — III. iii. 118

(धातु से करण और अधिकरण कारक में पुंल्लिङ्ग में) प्रायः करके (घ प्रत्यय होता है, यदि समुदाय से संज्ञा प्रतीत होती हो)।

...प्रार्थनेषु — III. iii. 161

देखें — **विधिनिमन्त्रण० III. iii. 161**

...प्रावीण्ययोः — IV. ii. 127

देखें — **कुत्सनप्रावीण्ययोः IV. ii. 127**

प्रावृट्... — VI. iii. 14

देखें — **प्रावृट्शरत्० VI. iii. 14**

प्रावृट्शरत्कालदिवाम् — VI. iii. 14

प्रावृट्, शरत्, काल, दिव् — इन शब्दों की (सप्तमी का 'ज' उत्तरपद रहते अलुक् होता है)।

प्रावृषः — IV. iii. 17

प्रावृष् प्रातिपदिक से (एण्य प्रत्यय होता है)।

प्रावृषः — IV. iii. 26

(सप्तमीसमर्थ) प्रावृष् प्रातिपदिक से ('उत्पन्न हुआ' अर्थ में ठप् प्रत्यय होता है)।

...प्रासङ्गम् — IV. iv. 76

देखें — **रथयुगप्रासङ्गम् IV. iv. 76**

...प्राहणे... — IV. iii. 23

देखें — **सायंचिरंप्राहणे० IV. iii. 23**

प्रिय... — III. ii. 38

देखें — **प्रियवशे III. ii. 38**

...प्रिय... — III. ii. 44

देखें — **क्षेमप्रिय० III. ii. 44**

प्रिय... — VI. iv. 157

देखें — **प्रियस्थिर० VI. iv. 157**

प्रिय... — VIII. i. 13

देखें — **प्रियसुखयोः VIII. i. 13**

प्रियः — IV. iv. 95

(षष्ठीसमर्थ हृदय प्रातिपदिक से) प्रिय अर्थ में (यत् प्रत्यय होता है)।

...प्रिययोः — VI. ii. 15

देखें — सुखप्रिययोः VI. ii. 15

प्रियवशे — III. ii. 38

प्रिय तथा वश (कर्म) के उपपद रहते (वद् धातु से खच् प्रत्यय होता है)।

प्रियसुखयोः — VIII. i. 13

प्रिय तथा सुख शब्दों को ('कष्ट न होना' अर्थ द्योत्य हो तो विकल्प करके द्वित्व होता है, एवं उसको कर्मधारयवत् कार्य होता है)।

प्रियस्थिरस्फिरोरुबहुलगुरुवृद्धतृप्रदीर्घवृन्दारकाणाम् — VI. iv. 157

प्रिय, स्थिर, स्फिर, उरु, बहुल, गुरु, वृद्ध, तृप्र, दीर्घ, वृन्दारक — इन अङ्गों को (यथासङ्ख्य करके प्र, स्थ, स्फ, वर्, बंहि, गर्, वर्षि, त्रप्, द्राघि, वृन्द आदेश हो जाते हैं; इष्ठन्, इमनिच् तथा ईयसुन् परे रहते)।

...प्रियात् — V. iv. 63

देखें — सुखप्रियात् V. iv. 63

...प्रियादिषु — VI. iii. 33

देखें — अप्पूरणीप्रियादिषु VI. iii. 33

...प्रियेषु — III. ii. 56

देखें — आढ्यसुभग० III. ii. 56

...प्री... — III. i. 135

देखें — इगुपधज्ञा० III. i. 135

प्रीतौ — VI. ii. 16

प्रीति = लगाव गम्यमान हो तो (सुख तथा प्रिय शब्द उत्तरपद रहते भी तत्पुरुष समास में पूर्वपद को प्रकृतिस्वर हो जाता है)।

प्रीयमाणः — I. iv. 33

(रुचि अर्थ वाली धातुओं के प्रयोग में) प्रीयमाण = प्रिय जिसको हो, वह (कारक संप्रदानसञ्ज्ञक होता है)।

...प्रु... — I. iii. 86

देखें — बुधयुधनशजनेङ्० I. iii. 86

प्रु... — III. i. 149

देखें — प्रुसृल्वः III. i. 149

प्रुसृल्वः — III. i. 149

प्रु, सृ, लू धातुओं से (समभिहार गम्यमान होने पर वुन् प्रत्यय होता है)।

प्रे — III. ii. 6

प्र उपसर्ग पूर्वक (दा और ज्ञा धातु से कर्म उपपद रहते 'क' प्रत्यय होता है)।

प्रे — III. ii. 145

प्र पूर्वक (लप, सृ, द्रु, मथ, वद, वस् — इन धातुओं से तच्छीलादि कर्त्ता हों तो वर्तमानकाल में घिनुण् प्रत्यय होता है)।

प्रे — III. iii. 27

प्र पूर्वक (द्रु, स्तु, स्रु धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

प्रे — III. iii. 32

प्र पूर्वक (स्तृञ् आच्छादने धातु से यज्ञविषय को छोड़कर कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

प्रे — III. iii. 46

(प्राप्त करने की इच्छा गम्यमान हो तो) प्र पूर्वक (ग्रह धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

प्रे — III. iii. 52

(वणिक् सम्बन्धी प्रत्ययान्त वाच्य हो तो) प्र पूर्वक (ग्रह धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में विकल्प से घञ् प्रत्यय होता है)।

...प्रेक्ष... — IV. ii. 79

देखें — अरीहणकृशाश्व० IV. ii. 79

प्रेष्य... — II. iii. 61

देखें — प्रेष्यब्रुवः II. iii. 61

...प्रेष्य... — VIII. ii. 91

देखें — ब्रूहिप्रेष्य० VIII. ii. 91

प्रेष्यब्रुवः — II. iii. 61

(देवता सम्प्रदान है जिसका, उस क्रिया के वाचक) प्र पूर्वक इष धातु तथा ब्रू धातु के (कर्म हवि के वाचक शब्द से षष्ठी विभक्ति होती है)।

प्रैष... —III. iii. 163

देखें — **प्रैषातिसर्ग० III. iii. 163**

प्रैषातिसर्गप्राप्तकालेषु — III. iii. 163

प्रेषण करना, कामचारपूर्वक आज्ञा देना, समय आ जाना — इन अर्थों में (धातु से कृत्य प्रत्यय होते हैं तथा लोट् भी होता है)।

...प्रैषेषु — VIII. ii. 104

देखें — **क्षियाशीःप्रैषेषु VIII. ii. 104**

प्रोक्तम् — IV. iii. 101

(तृतीयासमर्थ प्रातिपदिक से) प्रोक्त=प्रवचन किया हुआ अर्थ में (यथाविहित प्रत्यय होता है)।

प्रोक्तात् — IV. ii. 63

(द्वितीयासमर्थ) प्रोक्त प्रत्ययान्त प्रातिपदिक से (अध्येतृ, वेदितृ अर्थ में उत्पन्न प्रत्यय का लुक् हो जाता है)।

प्रोपाभ्याम् — I. iii. 42

(समान अर्थ वाले) प्र तथा उप उपसर्ग से उत्तर (क्रम् धातु से आत्मनेपद होता है)।

प्रोपाभ्याम् — I. iii. 64

(अयज्ञपात्र विषय में) प्र तथा उप पूर्वक ('युजिर् योगे' धातु से आत्मनेपद हो जाता है)।

...प्रोष्ठपदाः — V. iv. 120

देखें — **सुप्रातसुश्व० V. iv. 120**

...प्रोष्ठपदात् — IV. ii. 34

देखें — **महाराजप्रोष्ठ० IV. ii. 34**

...प्रोष्ठपदानाम् — I. ii. 60

देखें — **फल्गुनीप्रोष्ठपदानाम् I. ii. 60**

प्रोष्ठपदानाम् — VII. iii. 18

('जात' अर्थ में विहित ञित्, णित् तथा कित् तद्धित परे रहते) प्रोष्ठपद अङ्ग के (उत्तरपद के अचों में आदि अच् को वृद्धि होती है)।

...प्लक्ष... — VIII. iv. 5

देखें — **प्रनिरन्तः० VIII. iv. 5**

प्लक्षादिभ्यः — IV. iii. 161

(षष्ठीसमर्थ) प्लक्षादि प्रातिपदिकों से (फल के विकार और अवयव की विवक्षा होने पर अण् प्रत्यय होता है)।

प्लक्ष=वटवृक्ष, गूलर का पेड़।

...प्लवति... — VII. iv. 81

देखें — **स्रवतिशृणोति० VII. iv. 81**

प्लुत... — VI. i. 121

देखें — **प्लुतप्रगृह्याः VI. i. 121**

...प्लुतः — I. ii. 27

देखें — **ह्रस्वदीर्घप्लुतः I. ii. 27**

प्लुतः — VIII. ii. 82

(यह अधिकार सूत्र है, पाद की समाप्ति-पर्यन्त सर्वत्र वाक्य के टि भाग को) प्लुत (उदात्त) होता है, (ऐसा अर्थ होता जायेगा)।

प्लुतप्रगृह्याः — VI. i. 121

प्लुत तथा प्रगृह्यसञ्ज्ञक शब्द (अच् परे रहते नित्य ही प्रकृतिभाव से रहते हैं)।

प्लुतौ — VIII. ii. 106

(ऐच् के स्थान में जब प्लुत का प्रसङ्ग हो तो उस ऐच् के अवयवभूत इकार, उकार) प्लुत होते हैं।

...प्लुवोः — III. iii. 50

देखें — **रुप्लुवोः III. iii. 50**

...प्लुवोः — VI. iv. 58

देखें — **युप्लुवोः VI. iv. 58**

प्वादीनाम् — VII. iii. 80

पूञ् इत्यादि अङ्गों को (शित् प्रत्यय परे रहते ह्रस्व होता है)।

...प्वोः — VIII. iii. 37

देखें — **कुप्वोः VIII. iii. 37**

...प्साति... — VIII. iv. 17

देखें — **गदनद० VIII. iv. 17**

फ

फ — प्रत्याहारसूत्र XI

आचार्य पाणिनि द्वारा अपने ग्यारहवें प्रत्याहारसूत्र में पठित द्वितीय वर्ण

पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का इकत्तीसवां वर्ण।

फ... — VII. i. 2
देखें — **फढख० VII. i. 2**

फक्... — IV. i. 91
देखें — **फक्फिञोः IV. i. 91**

...फक्... — IV. ii. 79
देखें — **वुञ्छण्कठ० IV. ii. 79**

फक् — IV. i. 99

(नडादि षष्ठ्यन्त प्रातिपदिकों से गोत्रापत्य में) फक् प्रत्यय होता है।

फक्फिञोः — IV. i. 91

(प्राग्दीव्यतीय अजादि प्रत्यय की विवक्षा में युवापत्य) फक् और फिञ् का (विकल्प से लुक् होता है)।

फञ् — IV. i. 110

(षष्ठीसमर्थ अश्वादि प्रातिपदिकों से गोत्रापत्य में) फञ् प्रत्यय होता है।

फढखछघाम् — VII. i. 2

(प्रत्यय के आदि के) फ्, ढ्, ख्, छ् तथा घ् को (यथासङ्ख्य करके आयन्, एय्, ईन्, ईय् तथा इय् आदेश होते हैं)।

फणाम् — VI. iv. 125

फण् आदि (सात) धातुओं के (अवर्ण के स्थान में भी विकल्प से एत्त्व तथा अभ्यासलोप होता है; कित्, ङित् लिट् तथा सेट् थल् परे रहते)।

...फल... — IV. i. 64
देखें — **पाककर्णपर्ण० IV. i. 64**

...फल.., — VI. iv. 122
देखें — **तृफल० VI. iv. 122**

...फलक... — VI. ii. 101
देखें — **हास्तिनफलक० VI. ii. 101**

फले — IV. iii. 160

फल अभिधेय हो (तो विकार और अवयव अर्थों में विहित प्रत्यय का लुक् होता है)।

फलेग्रहिः — III. ii. 26

फलेग्रहि शब्द (इन् प्रत्ययान्त) निपातन किया जाता है।

...फलोः — VII. iv. 87
देखें — **चरफलोः VII. iv. 87**

फल्गुनी... — I. ii. 60
देखें — **फल्गुनीप्रोष्ठपदानाम् I. ii. 60**

...फल्गुनी... — IV. iii. 34
देखें — **श्रविष्ठाफल्गुन्यनु० IV. iii. 34**

फल्गुनीप्रोष्ठपदानाम् — I. ii. 60

फल्गुनी और प्रोष्ठपद (नक्षत्रों) के (द्वित्व अर्थ में भी बहुवचन का प्रयोग विकल्प करके होता है)।

...फाण्ट... — VII. ii. 18
देखें — **क्षुब्धस्वान्त० VII. ii. 18**

फाण्टाहृति... — IV. i. 150
देखें — **फाण्टाहृतिमिमताभ्याम् IV. i. 150**

फाण्टाहृतिमिमताभ्याम् — IV. i. 150

(सौवीर विषय वाले) फाण्टाहृति तथा मिमत शब्दों से (अपत्यार्थ में ण तथा फिञ् प्रत्यय होते हैं)।

फाण्ट = काढ़ा, अर्क।

...फान्तात् — I. ii. 23
देखें — **थफान्तात् I. ii. 23**

फाल्गुनी... — IV. ii. 22
देखें — **फाल्गुनीश्रवणा० IV. ii. 22**

फाल्गुनीश्रवणाकार्त्तिकीचैत्रीभ्यः — IV. ii. 22

(प्रथमासमर्थ पौर्णमासी शब्द से समानाधिकरण वाले जो) फाल्गुनी, श्रवणा, कार्त्तिकी और चैत्री शब्द — उनसे (विकल्प से सप्तम्यर्थ में ठक् प्रत्यय होता है, पक्ष में अण् होगा)।

फिञ् — IV. i. 154

(तिकादि प्रातिपदिकों से अपत्य अर्थ में) फिञ् प्रत्यय होता है)।

...फिञ्... — IV. ii. 79
देखें — वुञ्छण्कठ० IV. ii. 79

...फिञोः — IV. i. 91
देखें — फक्फिञोः IV. i. 91

...फिञौ — IV. i. 150
देखें— णफिञौ IV. i. 150

फिन् — IV. i. 160
(अवृद्धसंज्ञक प्रातिपदिक से अपत्यार्थ में बहुल करके) फिन् प्रत्यय होता है, (प्राच्य आचार्यों के मत में, अन्यथा इञ्)।

फुल्ल... — VIII. ii. 54
देखें — फुल्लक्षीब० VIII. ii. 54

फुल्लक्षीबकृशोल्लाघाः — VIII. ii. 54
(उपसर्ग से उत्तर न होने पर) फुल्ल, क्षीब, कृश तथा उल्लाघ शब्द निपातन किये जाते हैं।

फेः — IV. i. 149
फिञन्त (वृद्धसंज्ञक) प्रातिपदिक (सौवीर गोत्रापत्य) से (कुत्सित युवापत्य को कहने में छ तथा ठक् प्रत्यय बहुल करके होता है)।

फेनात् — V. ii. 99
फेन प्रातिपदिक से (मत्वर्थ में इलच् प्रत्यय और लच् प्रत्यय विकल्प से होते हैं)।

ब

ब — प्रत्याहारसूत्र X
भगवान् पाणिनि द्वारा अपने दशम प्रत्याहारसूत्र में पठित द्वितीय वर्ण।
पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का छब्बीसवां वर्ण।

ब... — V. ii. 138
देखें — बभयुस्० V. ii. 138

बद्धा... — V. ii. 9
देखें — बद्धाभक्षयति० V. ii. 9

बद्धाभक्षयतिनेयेषु — V. ii. 9
(द्वितीयासमर्थ अनुपद, सर्वान्न तथा आनय प्रातिपदिकों से यथासङ्ख्य करके) 'सम्बद्ध', 'खाता है' तथा 'ले जाने योग्य' अर्थों में (ख प्रत्यय होता है)।

...बध... — III. i. 6
देखें — मान्बधदान्शान्भ्यः III. i. 6

...बध्नातिषु — VI. iii. 118
देखें — इन्सिद्धबध्नातिषु VI. iii. 18

बन्धः — III. iv. 41
(अधिकरणवाची शब्द उपपद हों तो) बन्ध् धातु से (णमुल् प्रत्यय होता है)।

बन्धनम् — V. ii. 79
(प्रथमासमर्थ शृङ्खल प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में कन् प्रत्यय होता है), यदि वह प्रथमासमर्थ बन्धन बन रहा हो (तथा जो षष्ठी से निर्दिष्ट हो, वह करभ = ऊंट का छोटा बच्चा हो तो)।

बन्धने — I. iv. 77
('प्राध्वम्' शब्द की) बन्धन अर्थ में (कृञ् के योग में नित्य गति और निपात संज्ञा होती है)।

बन्धने — IV. iv. 96
(षष्ठीसमर्थ हृदय शब्द से) बन्धन अर्थ में (भी वेद अभिधेय होने पर यत् प्रत्यय होता है)।

बन्धुनि — V. iv. 9
(जाति शब्द अन्त वाले प्रातिपदिक से) द्रव्य गम्यमान हो तो (स्वार्थ में छ प्रत्यय होता है)।

बन्धुनि — VI. i. 14
बन्धु शब्द उत्तरपद हो तो (बहुव्रीहि समास में ष्यङ् को सम्प्रसारण होता है)।

बन्धुनि — VI. ii. 109
(बहुव्रीहि समास में) बन्धु शब्द उत्तरपद रहते (नद्यन्त पूर्वपद को अन्तोदात्त होता है)।

...बन्धुभ्यः — IV. ii. 42
देखें — ग्रामजनबन्धु० IV. ii. 42

...बन्धुषु — VI. iii. 84
देखें — ज्योतिर्जनपद० VI. iii. 84

बन्धे — VI. iii. 12

बन्ध शब्द उत्तरपद रहते (भी हलन्त तथा अदन्त शब्द से उत्तर सप्तमी का विकल्प करके अलुक् होता है)।

...बन्धेषु — VI. ii. 32

देखें — **सिद्धशुष्क० VI. ii. 32**

...बन्धैः — II. i. 40

देखें — **सिद्धशुष्कपक्वबन्धैः II. i. 40**

बभयुस्तितुतयसः — V. ii. 138

(कम् तथा शम् प्रातिपदिकों से मत्वर्थ में) ब, भ, युस्, ति, तु, त तथा यस् प्रत्यय होते हैं।

बभूथ — VII. ii. 64

'बभूथ' यह शब्द (वेदविषय में) इडभावयुक्त निपातन किया जाता है,(थल् परे रहते)।

...बभ्र्वोः — IV. i. 106

देखें — **मधुबभ्र्वोः IV. i. 106**

बर्हिषि — IV. iv. 119

(सप्तमीसमर्थ) बर्हिष् प्रातिपदिक से ('दिया हुआ' अर्थ में यत् प्रत्यय होता है, वेद-विषय में)।

...बर्हिस्... — VIII. iii. 97

देखें — **अम्बाम्ब० VIII. iii. 97**

...बल... — IV. ii. 79

देखें — **अरीहणकृशाश्व० IV. ii. 79**

...बलयोः — VII. ii. 20

देखें — **स्थूलबलयोः VII. ii. 20**

बलादिभ्यः — V. ii. 136

बलादि प्रातिपदिकों से (विकल्प से 'मत्वर्थ' में मतुप् प्रत्यय होता है)।

...बलि... — II. i. 35

देखें — **तदर्थार्थबलिहित० II. i. 35**

...बलि... — III. ii. 21

देखें — **दिवाविभा० III. ii. 21**

...बलि... — V. ii. 139

देखें— **तुन्दिबलि० V. ii. 139**

....बले — V. ii. 98

देखें — **कामबले V. ii. 98**

....बलेः — V. i. 13

देखें — **छदिरुपधिबलेः V. i. 13**

बशः — VIII. ii. 32

(धातु का अवयव जो एक अच् वाला तथा झषन्त उसके अवयव) बश् के स्थान में (भष् आदेश होता है; झलादि सकार तथा झलादि ध्व शब्द के परे रहते एवं पदान्त में।

...बहिर्... — II. i. 11

देखें — **अपपरिबहिरञ्चवः II. i. 11**

...बहिर्ष्याम् — V. iv. 116

देखें — **अन्तर्बहिर्ष्याम् V. iv. 116**

बहिर्योग... — I. i. 35

देखें — **बहिर्योगोपसंव्यानयोः I. i. 35**

बहु... — I. i. 22

देखें — **बहुगणवतुडति I. i. 22**

...बहु... — III. ii. 21

देखें — **दिवाविभा० III. ii. 21**

बहु... — V. ii. 52

देखें — **बहुपूग० V. ii. 52**

बहु... — V. iv. 42

देखें — **बह्वल्पार्थात् V. iv. 42**

बहु — VI. ii. 30

(द्विगु समास में इगन्त, कालवाची, कपाल, भगाल तथा शराव शब्दों के उत्तरपद रहते) बहु शब्द (विकल्प करके प्रकृतिस्वर होता है)।

बहुगणवतुडति — I. i. 22

बहु शब्द, गण शब्द, वतु प्रत्ययान्त तथा डति प्रत्ययान्त शब्दों (की संख्या संज्ञा होती है)।

बहुच् — V. iii. 68

('किञ्चित् न्यून' अर्थ में वर्तमान सुबन्त से विकल्प से) बहुच् प्रत्यय होता है (और वह सुबन्त से पूर्व में ही होता है)।

बहुपूगगणसङ्घस्य — V. ii. 52

षष्ठीसमर्थ बहु, पूग, गण, सङ्घ — इन को ('पूरण' अर्थ में विहित डट् प्रत्यय के परे रहते तिथुक् आगम होता है)।

बहुप्रजाः — V. iv. 123

(वेद-विषय में) असिच् प्रत्ययान्त बहुप्रजाः शब्द (बहुव्रीहि समास में) निपातन किया जाता है।

बहुभाषिणि — V. ii. 125

(वाच् प्रातिपदिक से 'मत्वर्थ' में आलच् और आटच् प्रत्यय होते हैं), 'बहुत बोलने वाला' अभिधेय हो तो।

...बहुध्यः — V. iii. 2

देखें — किंसर्वनाम० V. iii. 2

...बहुल... — VI. iv. 157

देखें — प्रियस्थिर० VI. iv. 157

बहुलम् — II. i. 32

(कर्तृवाची और करणवाची जो तृतीयान्त सुबन्त, वे समर्थ कृदन्त सुबन्त के साथ) बहुल करके (समास को प्राप्त होते हैं और वह तत्पुरुष समास होता है)।

बहुलम् — II. iii. 62

बहुल करके (चतुर्थी के अर्थ में षष्ठी विभक्ति होती है, वेद में)।

बहुलम् — II. iv. 39

बहुल करके (अद् को घस्लृ आदेश होता है छन्द में, घञ् और अप् प्रत्यय के परे रहते)।

बहुलम् — II. iv. 73

(वैदिक प्रयोग विषय में शप् का) बहुल करके (लुक् होता है)।

बहुलम् — II. iv. 76

(जुहोत्यादि धातुओं से उत्तर) बहुल करके (शप् को श्लु होता है, वेद में)।

बहुलम् — II. iv. 84

(अदन्त अव्ययीभाव से उत्तर सप्तमी और तृतीया के सुप् को) बहुल करके (अम् आदेश होता है)।

बहुलम् — III. i. 34

बहुल करके (धातु से सिप् प्रत्यय होता है, लेट् परे रहते)।

बहुलम् — III. i. 85

(वेदविषय में) बहुल करके (सब विधियों में परस्पर विनिमय हो जाता है)।

बहुलम् — III. ii. 81

(अभीक्ष्णता अर्थात् पौनःपुन्य गम्यमान हो तो धातु से) बहुल करके (णिनि प्रत्यय होता है)।

बहुलम् — III. ii. 88

(वेदविषय में कर्म उपपद रहते भूतकाल में हन् धातु से) बहुल करके (क्विप् प्रत्यय होता है)।

बहुलम् — III. iii. 1

प्रायः, जहाँ विहित है, उनके अतिरिक्त भी, विना विधान के भी (धातुओं से उणादि प्रत्यय वर्तमान काल में) बहुल करके होते हैं।

बहुलम् — III. iii. 108

(रोगविशेष की संज्ञा में धातु से स्त्रीलिङ्ग में ण्वुल् प्रत्यय) बहुल करके होता है।

बहुलम् — III. iii. 113

(कृत्यसंज्ञक प्रत्यय तथा ल्यु[illegible]य) बहुल अर्थों में होते हैं।

बहुलम् — IV. i. 148

(सौवीर गोत्र में [illegible]र्तमान वृद्धसंज्ञक प्रातिपदिकों से अपत्य अर्थ में) बहुल करके (ठक् प्रत्यय होता है, कुत्सन गम्यमान होने पर)।

बहुलम् — IV. i. 160

(अवृद्धसंज्ञक प्रातिपदिक से अपत्यार्थ में) बहुल करके (फिन् प्रत्यय होता है, प्राच्य आचार्यों के मत में, अन्यत्र इञ्)।

बहुलम् — IV. iii. 37

(नक्षत्रवाची प्रातिपदिकों से जातार्थ में उत्पन्न प्रत्यय का) बहुल करके लुक् होता है।

बहुलम् — IV. iii. 99

(प्रथमासमर्थ भक्तिसमानाधिकरणवाची गोत्र आख्या-वाले तथा क्षत्रिय आख्या वाले प्रातिपदिकों से) बहुल करके (वुञ् प्रत्यय होता है)।

बहुलम् — V. ii. 122

(प्रातिपदिकों से वैदिक प्रयोग-विषय में) बहुल करके ('मत्वर्थ' में विनि प्रत्यय होता है)।

बहुलम् — V. iv. 56

(द्वितीया तथा सप्तमी-विभक्त्यन्त देव,मनुष्य,पुरुष,पुरु तथा मर्त्य शब्दों से) बहुल करके (त्रा प्रत्यय होता है)।

बहुलम् — VI. i. 33

(वेदविषयम में ह्वेञ् धातु को) बहुल करके (सम्प्रसारण हो जाता है)।

बहुलम् — VI. i. 68

(शि का) बहुल करके (लोप हो जाता है,वेदविषय में)।

बहुलम् — VI. i. 122

(आङ् को अच् परे रहते संहिता के विषय में) बहुल करके (अनुनासिक आदेश होता है तथा उस अनुनासिक को प्रकृतिभाव भी हो जाता है)।

बहुलम् — VI. i. 129

(स्यः शब्द के सु का हल् परे रहते) बहुल करके (लोप हो जाता है, संहिता के विषय में)।

बहुलम् — VI. i. 172

(वेदविषय में ङ्यन्त शब्द से उत्तर) बहुल करके (नाम् विभक्ति को उदात्त होता है)।

बहुलम् — VI. ii. 199

(वेदविषय में उत्तरपद के = सक्थ शब्द के आदि को) बहुल करके (अन्तोदात्त होता है)।

बहुलम् — VI. iii. 13

(तत्पुरुष समास में कृदन्त शब्द उत्तरपद रहते) बहुल करके (सप्तमी का अलुक् होता है)।

बहुलम् — VI. iii. 62

(ङ्यन्त तथा आबन्त शब्दों को संज्ञा तथा छन्द-विषय में उत्तरपद परे रहते) बहुल करके (ह्रस्व होता है)।

बहुलम् — VI. iii. 121

(घञन्त उत्तरपद रहते अमनुष्य अभिधेय होने पर उपसर्ग के अण् को) बहुल करके (दीर्घ) होता है।

बहुलम् — VI. iv. 75

(लुङ्, लङ्, लृङ् परे रहने पर वेदविषय में माङ् का योग होने पर अट्, आट् आगम) बहुल करके होते हैं (और माङ् का योग न होने पर भी नहीं होते)।

बहुलम् — VI. iv. 128

(मघवा शब्द को) बहुल करके (तृ आदेश होता है)।

बहुलम् — VII. i. 8

(वेदविषय में झादेश अत् को) बहुल करके (रुट् का आगम होता है)।

बहुलम् — VII. i. 10

(वेदविषय में अकारान्त अङ्ग से उत्तर) बहुल करके (भिस् को ऐस् आदेश होता है)।

बहुलम् — VII. i. 103

(वेदविषय में ऋकारान्त धातु अङ्ग को) बहुल करके (उकारादेश होता है)।

बहुलम् — VII. iii. 97

(अस् तथा सिच् से उत्तर हलादि अपृक्त सार्वधातुक को) बहुल करके (ईट् आगम होता है, वेदविषय में)।

बहुलम् — VII. iv. 78

(वेद-विषय में अभ्यास को) बहुल करके (श्लु होने पर इकारादेश होता है)।

बहुलम् — VIII. iii. 52

(पा धातु के प्रयोग परे हों तो भी पञ्चमी के विसर्जनीय को) बहुल करके (सकार आदेश होता है, वेद-विषय में)।

...बहुलात् — IV. iii. 34
देखें — **श्रविष्ठफल्गुन्य० IV. iii. 34**

बहुवचनम् — I. ii. 58

(जाति को कहने में एकत्व को विकल्प करके) बहुत्व हो जाता है।

बहुवचनम् — I. iv. 21

(बहुतों को कहने की विवक्षा में) बहुवचन का प्रत्यय होता है।

बहुवचनविषयात् — IV. ii. 124

(जनपद तथा जनपद अवधिवाची अवृद्ध तथा वृद्ध भी) बहुवचन-विषयक प्रातिपदिकों से (शैषिक वुञ् प्रत्यय होता है)।

बहुवचनस्य — I. ii. 63

(तिष्य तथा पुनर्वसु शब्दों के नक्षत्रविषयक द्वन्द्व-समास में) बहुवचन के स्थान में (नित्य ही द्विवचन हो जाता है)।

बहुवचनस्य — VIII. i. 21

(पद से उत्तर अपादादि में वर्तमान) जो बहुवचन (षष्ठ्यन्त, चतुर्थ्यन्त एवं द्वितीयान्त युष्मद् तथा अस्मद्) पद, उनको (क्रमशः वस् तथा नस् आदेश होते हैं)।

...बहुवचनानि — I. iv. 101

देखें — एकवचनद्विवचनबहुवचनानि I. iv. 101

बहुवचने — IV. iii. 100

बहुवचनविषय में वर्तमान (जो जनपद के समान ही क्षत्रियवाची प्रातिपदिक, उनको जनपद की भाँति ही सारे कार्य हो जाते हैं)।

बहुवचने — VII. iii. 103

(अकारान्त अङ्ग को) बहुवचन (झलादि सुप्) परे रहते (एकारादेश होता है)।

बहुवचने — VIII. ii. 81

(असकारान्त अदस् शब्द के दकार से उत्तर एकार के स्थान में ईकारादेश होता है एवं दकार को मकार भी होता है) बहुत पदार्थों को कहने में।

बहुव्रीहिः — II. ii. 23

बहुव्रीहि संज्ञा होती है, (शेष समास की) यह अधिकार है।

बहुव्रीहिवत् — VIII. i. 9

(द्वित्व किये हुये एक शब्द को) बहुव्रीहि के समान कार्य हो जाता है।

बहुव्रीहेः — IV. i. 12

बहुव्रीहि समास (में जो अन्नन्त प्रातिपदिक, उस) से (स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय नहीं होता)।

बहुव्रीहेः — IV. i. 25

बहुव्रीहि समास में वर्तमान (ऊधस्-शब्दान्त प्रातिपदिक) से (स्त्रीलिङ्ग में ङीष् प्रत्यय होता है)।

बहुव्रीहेः — IV. i. 52

बहुव्रीहि समास में भी जो (क्तान्त अन्तोदात्त) प्रातिपदिक, उससे (स्त्रीलिङ्ग में ङीष् प्रत्यय होता है)।

बहुव्रीहौ — I. i. 27

(दिक् वाची पदों के) बहुव्रीहि समास में (सर्वादियों की सर्वनाम सञ्ज्ञा विकल्प से होती है)।

बहुव्रीहौ — I. i. 28

बहुव्रीहि समास में (सर्वादियों की सर्वनाम संज्ञा नहीं होती)।

बहुव्रीहौ — II. ii. 35

बहुव्रीहि समास में (सप्तम्यन्त और विशेषण का पूर्व प्रयोग होवे)।

बहुव्रीहौ — V. iv. 73

(बहु तथा गण शब्द जिसके अन्त में नहीं है, ऐसे सङ्ख्येय अर्थ में वर्तमान) बहुव्रीहिसमासयुक्त प्रातिपदिक से (डच् प्रत्यय होता है)।

बहुव्रीहौ — V. iv. 113

(स्वाङ्गवाची जो सक्थि तथा अक्षि शब्द, तदन्त प्रातिपदिक से समासान्त षच् प्रत्यय होता है), बहुव्रीहि समास में।

बहुव्रीहौ — VI. i. 14

बन्धु शब्द उत्तरपद हो तो) बहुव्रीहि समास में (ष्यङ् को सम्प्रसारण होता है)।

बहुव्रीहौ — VI. ii. 1

बहुव्रीहि समास में (पूर्वपद को प्रकृतिस्वर होता है)।

बहुव्रीहौ — VI. ii. 106

बहुव्रीहि समास में (सञ्ज्ञाविषय में पूर्वपद विश्व शब्द को अन्तोदात्त होता है)।

बहुव्रीहौ — VI. ii. 138

(शिति शब्द से उत्तर नित्य ही जो अबह्वच् उत्तरपद, उसको) बहुव्रीहि समास में (प्रकृतिस्वर होता है, भसत् शब्द को छोड़कर)।

बहुव्रीहौ — VI. ii. 162

बहुव्रीहि समास में (इदम्, एतत्, तद् से उत्तर क्रिया के गणन में वर्तमान प्रथम तथा पूरण प्रत्ययान्त शब्दों को अन्तोदात्त होता है)।

बहुव्रीहौ — VI. ii. 196

बहुव्रीहि समास में (द्वि तथा त्रि से उत्तर पाद, दत्, मूर्धन् शब्दों के उत्तरपद रहते विकल्प से अन्तोदात्त होता है)।

बहुषु — I. iv. 21

बहुत्व अर्थ की विवक्षा में (बहुवचन होता है)।

बहुषु — II. iv. 62

बहुत्व अर्थ में वर्तमान (स्त्रीलिङ्गभिन्न तद्राज का लुक् होता है, यदि वह बहुत्व तद्राज के द्वारा ही निष्पादित हो तो)।

बहुषु — V. iv. 22

'बहुत' अर्थ को कहने में (प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से 'तस्य समूहः' IV. ii. 22 के अधिकार में कहे हुए प्रत्ययों के समान प्रत्यय होते हैं तथा मयट् प्रत्यय भी होता है)।

बहूनाम् — V. iii. 93

('जाति को पूछने विषय में' किम्, यत् तथा तत् प्रातिपदिकों से) बहुतों में से (एक का निर्धारण गम्यमान हो तो विकल्प से डतमच् प्रत्यय होता है)।

बहोः — V. iv. 20

(आसन्नकालिक क्रिया की अभ्यावृत्ति के गणन अर्थ में वर्तमान) बहु प्रातिपदिक से (विकल्प से धा प्रत्यय होता है)।

बहोः — VI. ii. 175

(उत्तरपदार्थ के बहुत्व को कहने में वर्तमान) बहु शब्द से (नञ् के समान स्वर होता है)।

बहोः — VI. iv. 158

(बहु शब्द से उत्तर इष्ठन्, इमनिच् तथा ईयसुन् का लोप होता है और उस) बहु शब्द के स्थान में (भू आदेश भी होता है)।

बह्वचः — II. iv. 65

बहुत अच् वाले शब्द से उत्तर (प्राच्य और भरत गोत्र में विहित 'इञ्' प्रत्यय का तत्कृत बहुवचन में लुक् होता है)।

...बहवचः — IV. i. 56

देखें — **क्रोडादिबह्वचः IV. i. 56**

बह्वचः — IV. ii. 72

बहुल अच् वाले प्रातिपदिकों से (कुएँ को कहना हो तो चातुरर्थिक अञ् प्रत्यय होता है)।

बह्वचः — IV. ii. 108

(अन्तोदात्त) बहुत अच् वाले (उत्तर दिशा में होने वाले ग्रामवाची) प्रातिपदिकों से (भी अञ् प्रत्यय होता है)।

बह्वचः — IV. iii. 67

(व्याख्यान और भव अर्थ में षष्ठी और सप्तमीसमर्थ) बहुत अच् वाले (अन्तोदात्त व्याख्यातव्य-नाम) प्रातिपदिकों से (ठञ् प्रत्यय होता है)।

बह्वचः — V. iii. 78

बहुत अच् वाले (मनुष्यनामधेय) प्रातिपदिक से (अनुकम्पा से युक्त नीति गम्यमान होने पर ठच् प्रत्यय होता है, विकल्प से)।

बह्वचः — VI. ii. 83

('ज' उत्तरपद रहते) बहुत अच् वाले पूर्वपद के (अन्त्य अक्षर से पूर्व को उदात्त होता है)।

बह्वचः — VI. iii. 118

(अजिरादियों को छोड़कर, मतुप् परे रहते) बह्वच् शब्दों के (अण् को दीर्घ होता है)।

बह्वच्पूर्वपदात् — IV. iv. 64

(अध्ययन विषय में वृत्तकर्मसमानाधिकरणवाची प्रथमासमर्थ) बह्वच् पूर्वपदवाले प्रातिपदिक से (षष्ठ्यर्थ में ठच् प्रत्यय होता है)।

बह्वजङ्गात् — IV. ii. 71

(जिस मतुप् के परे रहने पर) बहुत अच् वाला अङ्ग हो, (उस मत्वन्त प्रातिपदिक से भी अञ् प्रत्यय होता है)।

बह्वल्पार्थात् — V. iv. 42

बहुत तथा थोड़ा अर्थ वाले (कारकाभिधायी प्रातिपदिकों से विकल्प से शस् प्रत्यय होता है)।

बह्वादिभ्यः — IV. i. 45

बहु आदि प्रातिपदिकों से (भी स्त्रीलिङ्ग में विकल्प से ङीष् प्रत्यय होता है)।

...बह्वच... — IV. iii. 129

देखें — **छन्दोगौक्थिक० IV. iii. 129**

...बंहि... — VI. iv. 157

देखें — **प्रस्थस्फ० VI. iv. 157**

...बाढयोः — V. iii. 63

देखें — **अन्तिकबाढयोः V. iii. 63**

...बाढानि — VII. ii. 18

देखें — **क्षुब्धस्वान्त० VII. ii. 18**

...बाहु... — III. ii. 21
देखें — **दिवाविभा० III. ii. 21**

बाहुल्ये — II. iv. 22

बाहुल्य = अधिकता गम्यमान होने पर (नञ्कर्मधारयवर्जित — छायान्त तत्पुरुष नपुंसकलिङ्ग में होता है)।

...बाह्या... — III. i. 119
देखें — **पदास्वैरि० III. i. 119**

बाह्वन्तात् — IV. i. 67

बाहु शब्द अन्तवाले प्रातिपदिकों से (संज्ञाविषय में स्त्रीलिङ्ग में ऊङ् प्रत्यय होता है)।

बाह्वादिभ्यः — IV. i. 96

बाहु आदि प्रातिपदिकों से (भी 'तस्यापत्यम्' अर्थ में इञ् प्रत्यय होता है)।

बिडच्... — V. ii. 32
देखें — **बिडज्बिरीसचौ V. ii. 32**

बिडज्बिरीसचौ — V. ii. 32

(नि उपसर्ग प्रातिपदिक से 'नासिकासम्बन्धी झुकाव' को कहना हो तो सञ्ज्ञाविषय में) बिडच् तथा बिरीसच् प्रत्यय होते हैं।

...बिडाल... — VI. ii. 72
देखें — **गोबिडाल० VI. ii. 72**

बिदादिभ्यः — IV. i. 104

(षष्ठीसमर्थ) बिदादि प्रातिपदिकों से (गोत्रापत्य में अञ् प्रत्यय होता है, परन्तु इनमें जो अनृषिवाची हैं, उनसे अनन्तरापत्य में अञ् होता है)।

...बिन्दु... — VI. iii. 59
देखें — **मन्थौदन० VI. iii. 59**

बिभेतेः — VI. i. 55

(हेतु जहां भय का कारण हो, उस अर्थ में वर्तमान) ञिभी धातु के (एच् के स्थान में णिच् परे रहते विकल्प से आत्व होता है)।

...बिरीसचौ — V. ii. 32
देखें — **बिडज्बिरीसचौ V. ii. 32**

...बिल्वात् — IV. iii. 148
देखें — **उत्वद्वर्ध्र० IV. iii. 148**

बिले — VI. ii. 102

बिल शब्द उत्तरपद रहते (कुसूल, कूप, कुम्भ, शाला — इन पूर्वपद-स्थित शब्दों को अन्तोदात्त होता है)।

बिल्वकादिभ्यः — VI. iv. 153

बिल्वकादि शब्दों से उत्तर (भसञ्ज्ञक छ का लुक् होता है)।

बिल्वादिभ्यः — IV. iii. 133

(षष्ठीसमर्थ) बिल्वादि प्रातिपदिकों से (विकार और अवयव अर्थों में अन् प्रत्यय होता है)।

...बिस्त... — IV. i. 22
देखें — **अपरिमाणबिस्ता० IV. i. 22**

...बीजात् — V. iv. 58
देखें — **द्वितीयतृतीय० V. iv. 58**

...बुद्धि... — I. iv. 52
देखें — **गतिबुद्धिप्रत्यवसानार्थ० I. iv. 52**

...बुद्धि... — III. ii. 188
देखें — **मतिबुद्धि० III. ii. 188**

बुध... — I. iii. 86
देखें — **बुधयुधनशजनेङ्० I. iii. 86**

...बुध... — III. i. 61
देखें — **दीपजन० III. i. 61**

बुधयुधनशजनेङ्प्रुद्रुस्रुभ्यः — I. iii. 86

बुध, युध, नश, जन, इङ्, प्रु, द्रु, स्रु — इन (ण्यन्त) धातुओं से (परस्मैपद होता है)।

बुभुक्षा... — VII. iv. 34
देखें — **बुभुक्षापिपासा० VII. iv. 34**

बुभुक्षापिपासागर्धेषु — VII. iv. 34

(अशनाय, उदन्य, धनाय शब्द क्रमशः) बुभुक्षा, पिपासा, गर्ध अर्थों में (निपातन किये जाते हैं)।

बृहत्या — V. iv. 6

('ढकने' अर्थ में वर्तमान) बृहती प्रातिपदिक से (स्वार्थ में कन् प्रत्यय होता है)।

...बोधात् — IV. i. 107
देखें — **कपिबोधात् IV. i. 107**

बोभूतु — VII. iv. 65

बोभूतु शब्द (वेद-विषय में) निपातन किया जाता है।

ब्रह्म... — III. ii. 87
देखें — ब्रह्मभ्रूण० III. ii. 87

ब्रह्म... — V. iv. 78
देखें — ब्रह्महस्तिभ्याम् V. iv. 78

ब्रह्मचर्यम् — V. i. 93

(प्रथमासमर्थ कालवाची प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में यथाविहित ठञ् प्रत्यय होता है); ब्रह्मचर्य गम्यमान होने पर)।

ब्रह्मचारिणि — V. ii. 134

(वर्ण प्रातिपदिक से 'मत्वर्थ' में इनि प्रत्यय होता है); ब्रह्मचारी वाच्य हो तो।

ब्रह्मचारिणि — VI. iii. 85

(चरण गम्यमान हो तो) ब्रह्मचारी शब्द के उत्तरपद रहते (समान शब्द को स आदेश हो जाता है)।

...ब्रह्मणः — V. i. 7
देखें — खलयवमाष० V. i. 7

ब्रह्मणः — V. i. 135

(षष्ठीसमर्थ ऋत्विग् विशेषवाची) ब्रह्मन् प्रातिपदिक से (भाव और कर्म अर्थों में त्व प्रत्यय होता है)।

ब्रह्मणः — V. iv. 104

ब्रह्मन् शब्दान्त (तत्पुरुष समास) से (समासान्त टच् प्रत्यय होता है, यदि समास के द्वारा जनपद सम्बन्ध प्रतीत होता हो तो)।

...ब्रह्मणोः — I. ii. 38
देखें — देवब्रह्मणोः I. ii. 38

ब्रह्मभ्रूणवृत्रेषु — III. ii. 87

ब्रह्म, भ्रूण, वृत्र (कर्म) उपपद रहते (हन् धातु से भूतकाल में क्विप् प्रत्यय होता है)।

भ्रूण = गर्भ, कलल।

वृत्र = असुर, बादल, अन्धकार, शत्रु।

...ब्रह्मवाद्य... — III. i. 123
देखें — निष्टर्क्यदेवहूय III. i. 123

ब्रह्महस्तिभ्याम् — V. iv. 78

ब्रह्म और हस्ति शब्द से उत्तर (जो वर्चस् शब्द, तदन्त प्रातिपदिक से समासान्त अच् प्रत्यय होता है)।

ब्राह्मः — VI. iv. 171

ब्राह्म शब्द में टिलोप निपातन किया जाता है, (अपत्य जाति अर्थ को छोड़कर)।

ब्राह्मण... — IV. i. 106
देखें — ब्राह्मणकौशिकयोः IV. i. 106

ब्राह्मण... — IV. ii. 41
देखें — ब्राह्मणमाणवक० IV. ii. 41

...ब्राह्मण... — IV. iii. 72
देखें — द्व्यजृद्ब्राह्मण० IV. iii. 72

ब्राह्मण... — IV. iii. 105
देखें — ब्राह्मणकल्पेषु IV. iii. 105

ब्राह्मण... — VI. ii. 58
देखें — ब्राह्मणकुमारयोः VI. ii. 58

ब्राह्मणक... — V. ii. 71
देखें — ब्राह्मणकोष्णिके V. ii. 71

ब्राह्मणकल्पेषु — IV. iii. 105

(तृतीयासमर्थ प्रातिपदिक से पुराणप्रोक्त) ब्राह्मण और कल्प अभिधेय हो (तो प्रोक्त अर्थ में णिनि प्रत्यय होता है)।

ब्राह्मणकुमारयोः — VI. ii. 58

ब्राह्मण तथा कुमार शब्द उपपद रहते (कर्मधारय समास में पूर्वपद आर्य शब्द को विकल्प से प्रकृतिस्वर होता है)।

ब्राह्मणकोष्णिके — V. ii. 71

ब्राह्मणक और उष्णिक शब्द कन्-प्रत्ययान्त सञ्ज्ञाविषय में निपातन किये जाते हैं।

ब्राह्मणक = अयोग्य, नीच या नाममात्र का ब्राह्मण।

उष्णिक = मांड।

ब्राह्मणकौशिकयोः — IV. i. 106

(मधु तथा बभ्रु शब्दों से यथासंख्य करके) ब्राह्मण तथा कौशिक गोत्र वाच्य हो (तो यञ् प्रत्यय होता है)।

ब्राह्मणमाणववाडवात् — IV. ii. 41

(षष्ठीसमर्थ) ब्राह्मण, माणव तथा वाडव प्रातिपदिकों से (यत् प्रत्यय होता है)।

...ब्राह्मणानि — IV. ii. 65
देखें — छन्दोब्राह्मणानि० IV. ii. 65

...ब्राह्मणादिभ्यः — V. i. 123

देखें — **गुणवचनब्राह्मणा० V. i. 123**

ब्राह्मणे — II. iii. 60

ब्राह्मणविषयक प्रयोग होने पर (व्यवहारार्थक 'दिव्' धातु के कर्म कारक में द्वितीया विभक्ति होती है)।

ब्राह्मणे — V. i. 61

(परिमाण समानाधिकरण वाले प्रथमासमर्थ त्रिंशत् तथा चत्वारिंशत् प्रातिपदिकों से षष्ठ्यर्थ में सञ्ज्ञा के विषय होने पर डण् प्रत्यय होता है), ब्राह्मण ग्रन्थ अभिधेय हो तो।

...ब्राह्मणेषु — VI. ii. 69

देखें — **गोत्रान्तेवासि० VI. ii. 69**

...ब्रुव... — VI. iii. 42

देखें — **घरूप० VI. iii. 42**

ब्रुवः — II. iv. 53

'ब्रूञ्' धातु को (वच् आदेश होता है, आर्धधातुक के विषय में)।

ब्रुवः— III. iv. 84

ब्रू धातु से परे (लट् लकार के स्थान में जो परस्मैपद-संज्ञक आदि के पाँच – तिप्, तस्, झि, सिप्, थस् आदेश उनके स्थान में क्रमशः – णल्, अतुस्, उस्, थल्, अथुस् विकल्प से हो जाते हैं, साथ ही ब्रू धातु को आह आदेश भी हो जाता है)।

ब्रुवः — VII. iii. 13

ब्रूञ् अङ्ग से उत्तर (हलादि पित् सार्वधातुक को ईट् आगम होता है)।

...ब्रुवोः — II. iii. 61

देखें — **प्रेष्यब्रुवोः II. iii. 61**

ब्रूहि... — VIII. ii. 91

देखें — **ब्रूहिप्रेष्य० VIII. ii. 91**

ब्रूहिप्रेष्यश्रौषड्वौषडावहानाम् — VIII. ii. 91

ब्रूहि, प्रेष्य, श्रौषट्, वौषट्, आवह — इन पदों के (आदि को यज्ञकर्म में प्लुत उदात्त होता है)।

भ

भ — प्रत्याहारसूत्र VIII

आचार्य पाणिनि द्वारा अपने अष्टम प्रत्याहारसूत्र में पठित द्वितीय वर्ण।

पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का इक्कीसवां वर्ण।

...भ... — V. ii. 138

देखें — **बभयुस्० V. ii. 138**

भ... — VIII. ii. 69

देखें — **भकुर्छुराम् VIII. ii. 69**

भः — V. ii. 139

(तुन्दि, बलि तथा वटि प्रातिपदिकों से मत्वर्थ में) भ प्रत्यय होता है।

तुन्दि = तोंद।

बलि = आहुति, भेंट, दैनिक आहार।

वटि = चींटी या जूं।

भकुर्छुराम् — VIII. ii. 79

(रेफ तथा वकारान्त) भसञ्ज्ञक एवं कुर्, छुर् धातु की (उपधा को दीर्घ नहीं होता)।

...भक्तलौ — IV. ii. 53

देखें — **विधल्भक्तलौ IV. ii. 53**

भक्ताख्याः — VI. ii. 71

अन्न की आख्यावाले शब्दों को (उस अन्न के लिये जो पात्रादि, तद्वाची शब्द के उत्तरपद रहते आद्युदात्त होता है)।

भक्तात् — IV. iv. 68

(प्रथमासमर्थ) भक्त प्रातिपदिक से ('इसको नियतरूप से दिया जाता है', अर्थ में विकल्प से अण् प्रत्यय होता है, पक्ष में ठक्)।

भक्तात् — IV. iv. 100

(सप्तमीसमर्थ) भक्त प्रातिपदिक से (साधु अर्थ में ण प्रत्यय होता है)।

...भक्ति... — III. ii. 21

देखें — दिवाविभा० III. ii. 21

भक्तिः — IV. iii. 95

(प्रथमासमर्थ) भक्ति समानाधिकरण प्रातिपदिक से (षष्ठ्यर्थ में यथाविहित प्रत्यय होता है)।

...भक्षयति... — V. ii. 9

देखें — बद्धाभक्षयति० V. ii. 9

भक्षाः — IV. ii. 15

(सप्तमीसमर्थ प्रातिपदिक से 'संस्कार किया गया' अर्थ में यथाविहित प्रत्यय होता है, यदि वह संस्कृत) भक्ष = खाद्य पदार्थ हो तो।

भक्षाः — IV. iv. 65

(हित समानाधिकरण वाले) भक्ष्यवाची (प्रथमासमर्थ) प्रातिपदिक से (षष्ठ्यर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

भक्ष्ये — VII. iii. 69

(भोज्यम् शब्द) भक्ष्य = खाद्य अभिधेय होने पर (निपातन किया जाता है)।

भक्ष्येण — II. i. 35

भक्ष्य = खाद्यवाचक (समर्थ सुबन्त) के साथ (मिश्रीकरणवाची तृतीयान्त सुबन्त विकल्प से समास को प्राप्त होता है और वह समास तत्पुरुष संज्ञक होता है)।

...भग... — VII. iii. 19

देखें — हृद्भग० VII. iii. 19

भगात् — IV. iv. 131

(वेशस् और यशस् आदि वाले) भग शब्दान्त प्रातिपदिक से (मत्वर्थ में थल् प्रत्यय होता है, वेदविषय में)।

...भगाल... — VI. ii. 29

देखें — इगन्तकाल० VI. ii. 29

...भगो... — VIII. iii. 17

देखें — भोभगो० VIII. iii. 17

...भङ्ग... — V. ii. 4

देखें — तिलमाषोमा० V. ii. 4

...भज... — III. ii. 142

देखें — सम्पृचानुरुध० III. ii. 142

...भज... — VI. iv. 122

देखें — नृफलभज० VI. iv. 122

भजः — III. ii. 62

भज् धातु से (सुबन्त उपपद रहते सोपसर्ग हो या निरुपसर्ग, तो भी ण्वि प्रत्यय होता है)।

भञ्ज... — III. ii. 161

देखें — भञ्जभासमिदः III. ii. 161

...भञ्ज... — VII. iv. 86

देखें — जपजभ० VII. iv. 86

भञ्जभासमिदः — III. ii. 161

भञ्ज, भास, मिद्— धातुओं से (तच्छीलादि कर्त्ता हों, तो वर्तमानकाल में घुरच् प्रत्यय होता है)।

भञ्जेः — VI. iv. 33

भञ्ज् अङ्ग के (नकार का भी विकल्प से लोप होता है, चिण् प्रत्यय परे रहते)।

...भद्र... — II. iii. 73

देखें — आयुष्यमद्रभद्र० II. iii. 73

...भद्रपूर्वायाः — IV. i. 115

देखें — संख्यासंभद्र० IV. i. 115

भम् — I. iv. 18

(सर्वनामस्थानभिन्न यकारादि अजादि स्वादि प्रत्ययों के परे रहते पूर्व की) भ संज्ञा होती है।

भयहेतुः — I. iv. 25

(भय तथा रक्षा अर्थ वाली धातुओं के प्रयोग में) भय का जो हेतु है, वह (कारक अपादानसंज्ञक होता है)।

भयेन — II. i. 36

(पञ्चम्यन्त सुबन्त) भय शब्द (समर्थ सुबन्त) के साथ (विकल्प से समास को प्राप्त होता है और वह तत्पुरुष समास होता है)।

...भयेषु — III. ii. 43

देखें — मेघर्त्तिभयेषु III. ii. 43

भय्य... — VI. i. 80

देखें — भय्यप्रवय्ये VI. i. 80

भय्यप्रवय्ये — VI. i. 80

भय्य तथा प्रवय्य शब्द भी निपातन किये जाते हैं, (वेदविषय में)।

...भर... — VII. ii. 49
देखें — इवन्तर्ध० VII. ii. 49

...भरतेषु — II. iv. 66
देखें — प्राच्यभरतेषु II. iv. 66

...भरद्वाज... — IV. i. 117
देखें — वत्सभरद्वाजा० IV. i. 117

भरिभ्रत् — VII. iv. 65
भरिभ्रत् शब्द वेदविषय में निपातन किया जाता है।

भर्गात् — IV. i. 111
भर्ग शब्द से (गोत्र में फञ् प्रत्यय होता है, त्रिगर्त देश में उत्पन्न अर्थ वाच्य हो तो)।

...भर्गादि... — IV. i. 176
देखें — प्राच्यभर्गादि० IV. i. 176

...भर्त्सनेषु — VIII. i. 8
देखें — असूयासम्मति० VIII. i. 8

...भव... — IV. i. 48
देखें — इन्द्रवरुणभव० IV. i. 48

भवः — IV. iii. 53
(सप्तमीसमर्थ प्रातिपदिक से) 'होने वाला' अर्थ में (यथाविहित प्रत्यय होता है)।

भवतः — IV. ii. 114
(वृद्धसंज्ञक) भवत् शब्द से (शैषिक ठक् और छस् प्रत्यय होते हैं)।

...भवतिभ्याम् — I. ii. 6
देखें — इन्धिभवतिभ्याम् I. ii. 6

भवतेः — VII. iv. 73
भू (अङ्ग) के (अभ्यास को अकारादेश होता है, लिट् परे रहते)।

भवनात् — IV. i. 87
'धान्यानां भवने'० V. i. 1 तक जिन अर्थों में प्रत्यय कहे गये हैं, उन सब अर्थों में (स्त्री तथा पुंस् शब्दों से यथासङ्ख्य करके नञ् तथा स्नञ् प्रत्यय होते हैं)।

भवने — V. ii. 1
(षष्ठीसमर्थ धान्य विशेषवाची प्रातिपदिकों से) 'उत्पत्ति-स्थान' अभिधेय हो तो (खञ् प्रत्यय होता है, यदि वह उत्पत्तिस्थान खेत हो तो)।

भववत् — IV. ii. 33
(कालविशेषवाची प्रातिपदिकों से 'सास्य देवता' विषय में) भवाधिकार के समान प्रत्यय होते हैं।

भववत् — V. i. 95
(सप्तमीसमर्थ कालवाची प्रातिपदिकों से 'दिया जाता है' और 'कार्य' अर्थों में) भव अर्थ के समान ही प्रत्यय हो जाते हैं।

भविष्यत्... — II. iii. 70
देखें — भविष्यदाधमर्ण्ययोः II. iii. 70

भविष्यति — III. iii. 3
भविष्यत् काल (के अर्थ) में (उणादिप्रत्ययान्त गमी आदि पद साधु होते हैं)।

भविष्यति — III. iii. 136
(अवर प्रविभाग अर्थात् इधर के भाग को लेकर मर्यादा कहनी हो तो) भविष्यत्काल में (धातु से अनद्यतनवत् प्रत्ययविधि (नहीं होती)।

भविष्यदाधमर्ण्ययोः — II. iii. 70
भविष्यत् काल और आधमर्ण्य = ऋणविशिष्टकर्ता (विहित अक और इन् प्रत्ययान्तों के योग में षष्ठी विभक्ति नहीं होती)।

भवे — IV. iv. 110
(सप्तमीसमर्थ प्रातिपदिक से) भव = होने वाला अर्थ में (वेद-विषय में यत् प्रत्यय होता है)।

भव्य... — III. iv. 68
देखें — भव्यगेय० III. iv. 68

भव्यगेयप्रवचनीयोपस्थानीयजन्याप्लाव्यापात्याः — III. iv. 68
भव्य, गेय, प्रवचनीय, उपस्थानीय, जन्य, आप्लाव्य और आपात्य शब्द (कर्त्ता में विकल्प से निपातन किये जाते हैं)।

भव्ये — V. iii. 104
(द्रु शब्द से भी) पात्रत्व अभिधेय होने पर (द्रव्य पद यत् प्रत्ययान्त निपातन किया जाता है)।

भष् — VIII. ii. 37

(एक अच् वाला तथा झषन्त धातु का अवयव जो उसके अवयव बश् के स्थान में) भष् आदेश होता है, (झलादि सकार तथा झलादि ध्व शब्द के परे रहते एवं पदान्त में)।

...भसोः — VI. iv. 98

देखें — **घसिभसोः VI. iv. 98**

भस्त्रा... — VII. iii. 47

देखें — **भस्त्रैषा० VII. iii. 47**

भस्त्रादिभ्यः — IV. iv. 16

(तृतीयासमर्थ) भस्त्रादिगणपठित प्रातिपदिकों से ('हरति'-अर्थ में ष्ठन् प्रत्यय होता है)।

भस्त्रैषाजाज्ञाद्वास्वाः — VII. iii. 47

भस्त्रा, एषा, अजा, ज्ञा, द्वा, स्वा — ये शब्द (नञ् पूर्ववाले हों तो भी न हों तो भी; इनके आकार के स्थान में जो अकार, उसको उदीच्य आचार्यों के मत में इत्व नहीं होता)।

भस्य — VI. iv. 129

यह अधिकारसूत्र है, अध्याय की समाप्तिपर्यन्त जायेगा।

भस्य — VII. i. 88

(पथिन्, मथिन् तथा ऋभुक्षिन्) भसञ्ज्ञक अङ्गों के (टि भाग का लोप होता है)।

भा... — VIII. iv. 33

देखें — **भाभूपू० VIII. iv. 33**

...भाग... — I. iv. 89

देखें — **लक्षणेत्थम्भूताख्यानभाग० I. iv. 89**

भाग... — IV. iv. 120

देखें — **भागकर्मणी IV. iv. 120**

...भागधेय... — IV. i. 30

देखें — **केवलमामक० IV. i. 30**

भागात् — V. i. 48

(प्रथमासमर्थ) भाग प्रातिपदिक से (सप्तम्यर्थ में यत् और ठन् प्रत्यय होते हैं, यदि 'वृद्धि' = ब्याज के रूप में दिया जाने वाला द्रव्य, 'आय' = जमींदारों का भाग, 'लाभ' = मूल द्रव्य के अतिरिक्त प्राप्य द्रव्य, 'शुल्क' = राजा का भाग तथा 'उपदा' = घूस — ये 'दिया जाता है' क्रिया के वाच्य हों तो)।

...भाज... — IV. i. 42

देखें — **जानपदकुण्ड० IV. i. 42**

...भाण्ड... — III. i. 20

देखें — **पुच्छभाण्डचीवरात् III. i. 20**

भाभूपूकमिगमिप्यायीवेपाम् — VIII. iv. 33

उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर भा, भू, पूञ्, कमि, गमि, ओप्यायी तथा वेप् धातुओं से (विहित अच् से उत्तर कृत्स्थ नकार को णकार आदेश नहीं होता)।

...भार... — VI. ii. 38

देखें — **व्रीह्यपराहण० VI. ii. 38**

...भार... — VI. iii. 59

देखें — **मन्थौदन० VI. iii. 59**

...भारत... — VI. ii. 38

देखें — **व्रीहयपराहण० VI. ii. 38**

भारद्वाजस्य — VII. ii. 63

भारद्वाज आचार्य के मत में (तास् परे रहते नित्य अनिट् ऋकारान्त धातु से उत्तर तास् के समान ही थल् को इडागम नहीं होता)।

कृकण = एक प्रकार का तीतर।

भारद्वाजे — IV. ii. 144

भारद्वाज देश में वर्तमान (जो कृकण तथा पर्ण प्रातिपदिक, उनसे शैषिक छ प्रत्यय होता है)।

भारात् — V. i. 49

(वंशादिगणपठित प्रातिपदिकों से उत्तर) जो भार शब्द, तदन्त (द्वितीयासमर्थ) प्रातिपदिक से ('हरण करता है', 'वहन करता है' और 'उत्पन्न करता है' अर्थों में यथाविहित प्रत्यय होते हैं)।

...भारिषु — VI. iii. 64

देखें — **चिततूलभारिषु VI. iii. 64**

भाव... — I. ii. 21

देखें — **भावादिकर्मणोः I. ii. 21**

भाव... — I. iii. 13

देखें — **भावकर्मणोः I. iii. 13**

भाव... — III. i. 66
देखें — भावकर्मणोः III. i. 66

भाव... — VI. ii. 150
देखें — भावकर्मवचनः VI. ii. 150

भाव... — VI. iv. 27
देखें — भावकरणयोः VI. iv. 27

भाव... — VI. iv. 62
देखें — भावकर्मणोः VI. iv. 62

भाव... — VII. ii. 17
देखें — भावादिकर्मणोः VII. ii. 17

भाव... — VIII. iv. 10
देखें — भावकरणयोः VIII. iv. 10

भावः — V. i. 118

(षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिक से) 'भाव' अर्थ में (त्व और तल् प्रत्यय होते हैं)।

भावकरणयोः — VI. iv. 27

भाववाची तथा करणवाची (घञ् के) परे रहते (भी रञ्ज् धातु की उपधा के नकार का लोप होता है)।

भावकरणयोः — VIII. iv. 10

(पूर्वपद में स्थित निमित्त से उत्तर) भाव तथा करण में (वर्तमान पान शब्द के नकार को विकल्प से णकार आदेश होता है)।

भावकर्मणोः — I. iii. 13

भाववाच्य एवं कर्मवाच्य में (धातु से आत्मनेपद होता है)।

भावकर्मणोः — III. i. 66

भाववाची एवं कर्मवाची (लुङ् का त शब्द) परे रहते (धातुमात्र से उत्तर च्लि को चिण् आदेश होता है)।

भावकर्मणोः —VI. iv. 62

भाव तथा कर्म-विषयक (स्य, सिच्, सीयुट् और तास् के परे रहते उपदेश में अजन्त धातुओं तथा हन्, ग्रह् एवं दृश् धातुओं का चिण् के समान विकल्प से कार्य होता है तथा इट् आगम भी होता है)।

भावकर्मवचनः — VI. ii. 150

भाव तथा कर्मवाची (अन् प्रत्ययान्त उत्तरपद) को (कारक से उत्तर अन्तोदात्त होता है)।

भावगर्हायाम् — III. i. 24

धात्वर्थ की निन्दा अभिधेय होने पर (लुप, सद, चर आदि धातुओं से नित्य 'यङ्' प्रत्यय होता है)।

...भावयोः — III. ii. 45
देखें — करणभावयोः III. ii. 45

भावलक्षणम् — II. iii. 37

(जिसकी क्रिया से) क्रियान्तर लक्षित होवे, (उसमें सप्तमी विभक्ति होती है)।

भावलक्षणे — III. iv. 16

क्रिया के लक्षण में वर्तमान (स्था, इण् आदि धातुओं से वेदविषय में तुमर्थ में तोसुन् प्रत्यय होता है)।

भाववचनाः — III. iii. 11

(क्रियार्थ क्रिया उपपद हो तो भविष्यत्काल में धातु से) भाववाचक अर्थात् भाव को कहने वाले प्रत्यय (भी होते हैं)।

भाववचनात् — II. iii. 15

(तुमुन् के समान अर्थ वाले) भाववचन= भाव को कहने वाले प्रत्ययान्त से (भी चतुर्थी विभक्ति होती है)।

भाववचनानाम् — II. iii. 54

धात्वर्थ को कहने वाले घञादि-प्रत्ययान्त-कर्तृक (रुजार्थक धातुओं) के (कर्म में शेष विवक्षित होने पर षष्ठी विभक्ति होती है, ज्वर् धातु को छोड़कर)।

भावादिकर्मणोः — I. ii. 21

(उकार उपधा वाली धातु से परे) भाववाच्य तथा आदि-कर्म में (वर्तमान सेट् निष्ठा प्रत्यय विकल्प करके कित् नहीं होता है)।

भावादिकर्मणोः — VII. ii. 17

भाव तथा आदिकर्म में (वर्तमान आकार इत्सञ्ज्ञक धातुओं को निष्ठा परे रहते विकल्प से इट् आगम नहीं होता)।

भावी — V. i. 79

(द्वितीयासमर्थ कालवाची प्रातिपदिकों से 'सत्कारपूर्वक व्यापार', 'खरीदा हुआ', 'हो चुका' और) 'होने वाला' — (इन अर्थों में यथाविहित ठञ् प्रत्यय होता है)।

भावे — III. i. 107

भाव में (अनुपसर्ग भू धातु से सुबन्त उपपद रहते क्यप् प्रत्यय होता है)।

भावे — III. iii. 18

भाव अर्थात् धात्वर्थ वाच्य होने पर (धातुमात्र से घञ् प्रत्यय होता है)।

भावे — III. iii. 44

(अभिव्याप्ति गम्यमान हो तो धातु से) भाव में (इनुण् प्रत्यय होता है)।

भावे — III. iii. 75

(उपसर्गरहित ह्वे धातु से) भाव में (अप् प्रत्यय तथा सम्प्रसारण हो जाता है)।

भावे — III. iii. 95

(स्था, गा, पा, पच् धातुओं से स्त्रीलिङ्ग) भाव में (क्तिन् प्रत्यय होता है) ।

भावे — III. iii. 98

(व्रज तथा यज् धातुओं से स्त्रीलिङ्ग) भाव में (क्यप् प्रत्यय होता है और वह उदात्त होता है)।

भावे — III. iii. 114

(नपुंसकलिङ्ग) भाव में (धातुमात्र से क्त प्रत्यय होता है)।

भावे — III. iv. 69

(सकर्मक धातुओं से लकार कर्मकारक में होते हैं, चकार से कर्ता में भी होते हैं और अकर्मक धातुओं से) भाव में होते हैं (तथा चकार से कर्ता में भी होते हैं)।

भावे — IV. iv. 144

(षष्ठीसमर्थ शिव, शम् और अरिष्ट प्रातिपदिकों से वेद-विषय में) भाव अर्थ में (भी तातिल् प्रत्यय होता है)।

भावे — VI. ii. 25

(श्र, ज्य, अवम, कन् तथा पापवान् शब्द के उत्तरपद रहते कर्मधारय समास में) भाववाची पूर्वपद को (प्रकृति-स्वर होता है)।

भावेन — II. iii. 37

(जिसकी) क्रिया से (क्रियान्तर लक्षित हो, उसससे भी सप्तमी विभक्ति होती है)।

...भाव्य... — III. i. 123

देखें — निष्टर्क्यदेवहूय० III. i. 123

...भाष... — VII. iv. 3

देखें — भ्राजभास० VII. iv. 3

भाषायाम् — III. ii. 108

लौकिक प्रयोग विषय में (सद्, वस, श्रु — इन धातुओं से परे भूतकाल में विकल्प से लिट् प्रत्यय होता है)।

भाषायाम् — IV. i. 62

(सखी तथा अशिश्वी– ये शब्द) भाषाविषय में (स्त्रीलिङ्ग में ङीष्-प्रत्ययान्त निपातन किये जाते हैं)।

भाषायाम् — IV. iii. 140

(षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिकों से भक्ष्यवर्जित, आच्छादन-वर्जित विकार तथा अवयव अर्थों में) लौकिक प्रयोग-विषय में (विकल्प से मयट् प्रत्यय होता है)।

भाषायाम् — VI. i. 175

(षट्सञ्ज्ञक, त्रि तथा चतुर् शब्द से उत्पन्न जो झलादि विभक्ति, तदन्त शब्द का उपोत्तम) भाषाविषय में (उदात्त होता है विकल्प से)।

भाषायाम् — VI. iii. 19

(स्थ शब्द के उत्तरपद रहते भी) भाषा = लौकिक प्रयोग विषय में (सप्तमी का अलुक् नहीं होता है)।

भाषायाम् — VII. ii. 88

(प्रथमा विभक्ति के द्विवचन के परे रहते भी) लौकिक प्रयोग विषय में (युष्मद्, अस्मद् को आकारादेश होता है)।

भाषायाम् — VIII. ii. 98

(विचार्यमाण वाक्यों के पूर्ववाले वाक्य की टि को ही) भाषा-विषय में (प्लुत उदात्त होता है)।

भाषितपुंस्कम् — VII. i. 74

(तृतीया विभक्ति से लेकर आगे की अजादि विभ-क्तियों के परे रहते) भाषितपुंस्क = एक ही अर्थ में अर्थात् एक ही प्रवृत्तिनिमित्त को लेकर कहा है पुँल्लिङ्ग अर्थ को जिस शब्द ने, ऐसे नपुंसकलिंग वाले (इगन्त) अंग को (गालव आचार्य के मत में पुंवद्भाव हो जाता है)।

भाषितपुंस्कादनूङ् — VI. iii. 33

एक ही अर्थ में अर्थात् एक ही प्रवृत्तिनिमित्त को लेकर कहा है पुँल्लिङ्ग अर्थ को जिस शब्द ने, ऐसे ऊङ्वर्जित भाषितपुंस्क (स्त्री शब्द) के स्थान में (पुंल्लिङ्गवाची शब्द के समान रूप हो जाता है, पूरणी तथा प्रियादिवर्जित स्त्रीलिङ्ग समानाधिकरण उत्तरपद परे हो तो)।

...भास्... — III. ii. 21

देखें — दिवाविभा० III. ii. 21

...भास... — III. ii. 161

देखें — भञ्जभासमिदः III. ii. 161

...भास... — III. ii. 175

देखें — स्थेशभास० III. ii. 175

...भास... — III. ii. 177

देखें—भ्राजभास० III. ii. 177

भासन... — I. iii. 47

देखें — भासनोपसम्भाषा० I. iii. 47

भासनोपसम्भाषाज्ञानयत्नविमत्युपमन्त्रणेषु — I. iii. 47

भासन = दीप्ति, उपसम्भाषा = सान्त्वना देना, ज्ञान, यत्न, विमति = विवाद करना, उपमन्त्रण= एकान्त में सलाह करना —इन अर्थों में (वर्तमान वद् धातु से आत्मनेपद होता है)।

भि — VII. iv. 48

(अप् अङ्ग को) भकारादि प्रत्यय के परे रहते (तकारादेश होता है)।

...भिक्ष... — III. ii. 155

देखें — जल्पभिक्ष० III. ii. 155

...भिक्षः — III. ii. 168

देखें — सनाशंस० III. ii. 168

भिक्षा... — III. ii. 17

देखें — भिक्षासेना० III. ii. 17

भिक्षादिभ्यः — IV. ii. 37

(षष्ठीसमर्थ) भिक्षादि प्रातिपदिकों से (समूह अर्थ में अण् प्रत्यय होता है)।

भिक्षासेनादायेषु — III. ii. 17

भिक्षा, सेना, आदाय शब्द उपपद रहते (भी चर् धातु से ट प्रत्यय होता है)।

भिक्षु... — IV. iii. 110

देखें — भिक्षुनटसूत्रयोः IV. iii. 110

भिक्षुनटसूत्रयोः — IV. iii. 110

(तृतीयासमर्थ पाराशर्य, शिलालि प्रातिपदिकों से यथासङ्ख्य करके) भिक्षुसूत्र तथा नटसूत्र का प्रोक्त विषय हो (तो णिनि प्रत्यय होता है)।

भित्तम् — VIII. ii. 50

भित्तम् शब्द में भिदिर् धातु से उत्तर क्त के नत्व का अभाव निपातन है, (यदि भित्तम् से टुकड़ा कहा जा रहा हो तो)।

...भिद... — III. ii. 61

देखें — सत्सू० III. ii. 61

...भिदादिभ्यः — III. iii. 104

देखें — षिद्भिदादिभ्यः III. iii. 104

...भिदि... — III. ii. 162

देखें — विदिभिदि० III. ii. 162

भिद्य... — III. i. 115

देखें — भिद्योद्ध्यौ III. i. 115

भिद्योद्ध्यौ — III. i. 115

(नदी अभिधेय हो तो कर्त्ता में) भिद्य और उद्ध्य शब्द क्यप्प्रत्ययान्त निपातन किये जाते हैं।

...भिन्न... —VI. iii. 114

देखें — अविष्टाष्ट०VI. iii. 114

भियः — III. ii. 174

भी धातु से (तच्छीलादि कर्त्ता हो, तो वर्तमानकाल में क्रुक् तथा लुकन् प्रत्यय हो जाते हैं)।

भियः — VI. iv. 115

भी अङ्ग को (विकल्प करके इकारादेश होता है; हलादि कित् ङित्, सार्वधातुक परे रहते)।

भियः — VII. iii. 40

'ञिभी भये' अङ्ग को (हेतुभय अर्थ में णि परे रहते पुक् आगम होता है)।

...भिस्... — IV. i. 2
देखें — **स्वौजसमौट्० IV. i. 2**

भिसः — VII. i. 9

(अकारान्त अङ्ग से उत्तर) भिस् के स्थान में (ऐस् आदेश होता है)।

भी... — I. iii. 38
देखें — **भीस्म्योः I. iii. 38**

भी... — I. iv. 25
देखें — **भीत्रार्थानाम् I. iv. 25**

भी... — III. i. 39
देखें — **भीह्रीभृहुवाम् III. i. 39**

भी... — VI. i. 186
देखें — **भीह्रीभृ० VI. i. 186**

भीत्रार्थानाम् — I. iv. 25

भय तथा रक्षा अर्थ वाली धातुओं के (प्रयोग में जो भय का हेतु, उस कारक की अपादान संज्ञा होती है)।

भीमादयः — III. iv. 74

भीमादि उणादिप्रत्ययान्त शब्द (अपादान कारक में निपातन किये जाते हैं)।

भीरोः — VIII. iii. 81

भीरु शब्द से उत्तर (स्थान शब्द के सकार को मूर्धन्य आदेश होता है)।

भीस्म्योः — I. iii. 68

(ण्यन्त) भी तथा स्मि धातुओं से (हेतु = प्रयोजक कर्त्ता से भय होने पर आत्मनेपद होता है)।

भीह्रीभृहुमदजनधनदरिद्राजागराम् — VI. i. 186

भी, ह्री, भृ, हु, मद, जन, धन, दरिद्रा तथा जागृ धातु के (अभ्यस्त को पित् लसावर्धातुक परे रहते प्रत्यय से पूर्व को उदात्त होता है)।

भीह्रीभृहुवाम् — III. i. 39

भी, ह्री, भृ, हु — इन धातुओं से (अमन्त्रविषयक लिट् परे रहते विकल्प से आम् प्रत्यय होता है तथा इनको श्लुवत् कार्य होता है)।

भुक्तम् — V. ii. 85

भुक्त क्रिया के समानाधिकरण वाले (प्रथमासमर्थ श्राद्ध प्रातिपदिक से 'इसके द्वारा' अर्थ में इनि और ठन् प्रत्यय होते हैं)।

भुज... — VII. iii. 61
देखें — **भुजन्युब्जौ VII. iii. 60**

भुजः — I. iii. 66

भुज् धातु से (आत्मनेपद होता है; अनवन = पालन करने से भिन्न अर्थ में)।

भुजन्युब्जौ — VII. iii. 61

भुज तथा न्युब्ज शब्द (क्रमशः हाथ और रोग अर्थ में निपातन किये जाते हैं)।

भुवः — I. iv. 31

'भू' धातु के (कर्ता का जो प्रभव = उत्पत्तिस्थान है, उस कारक की अपादान संज्ञा होती है)।

भुवः — III. i. 107

(अनुपसर्ग) भू धातु से (सुबन्त उपपद रहते क्यप् प्रत्यय होता है, भाव अर्थ में)।

भुवः — III. ii. 45

'भू' धातु से (आशित सुबन्त उपपद रहते करण और भाव में 'खच्' प्रत्यय होता है)।

भुवः — III. ii. 56

(च्व्यर्थ में वर्तमान अच्व्यन्त आढ्य, सुभग, स्थूल, पलित, नग्न, अन्ध, प्रिय — ये सुबन्त उपपद रहते कर्तृ कारक में) भू धातु से (खिष्णुच् तथा खुकञ् प्रत्यय होते हैं)।

भुवः — III. ii. 138

भू धातु से (भी वेदविषय में तच्छीलादि कर्ता हो, तो वर्तमान काल में इष्णुच् प्रत्यय होता है)।

भुवः — III. ii. 179

भू धातु से (संज्ञा तथा अन्तर = मध्य गम्यमान हो तो वर्तमानकाल में क्विप् प्रत्यय होता है)।

...भुवः — III. iii. 24
देखें — **श्रिणीभुवः III. iii. 24**

भुवः — III. iii. 55

(तिरस्कार अर्थ में वर्तमान परिपूर्वक) भू धातु से (कर्तृ-भिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में विकल्प से घञ् प्रत्यय होता है, पक्ष में अप् होता है)।

भुवः — III. iv. 63

(तूष्णीम् शब्द उपपद हो तो) भू धातु से (क्त्वा, णमुल् प्रत्यय होते हैं)।

भुवः — IV. i. 47

वेद-विषय में अनुपसर्जन भू शब्दान्त प्रातिपदिक से भी स्त्रीलिङ्ग में नित्य ही ङीष् प्रत्यय होता है।

भुवः — VI. iv. 88

भू अङ्ग को (वुक् आगम होता है, लुङ् तथा लिट् अजादि प्रत्यय के परे रहते)।

भुवः — VIII. ii. 71

(महाव्याहति) भुवस् शब्द को (भी वेद-विषय में दोनों प्रकार से अर्थात् रु एवं रेफ दोनों ही होते हैं)।

भुवनम् — VI. ii. 20

(ऐश्वर्यवाची तत्पुरुष समास में पति शब्द उत्तरपद रहते पूर्वपद) भुवन शब्द को (विकल्प से प्रकृतिस्वर हो जाता है)।

भुवि — III. i. 12

भवति के अर्थ में (भृश आदि अच्व्यन्त प्रातिपदिकों से 'क्यङ्' प्रत्यय होता है और हलन्तों का लोप भी)।

भू... — I. iii. 1
देखें — **भूवादयः I. iii. 1**

...भू... — III. ii. 154
देखें — **लषपत० III. ii. 154**

...भू... — III. iii. 96
देखें — **वृषेष० III. iii. 96**

भू... — III. iii. 127
देखें — **भूकृञोः III. iii. 127**

भू... — V. iv. 50
देखें — **कृभ्वस्ति० V. iv. 50**

भू... — VI. ii. 19
देखें — **भूवाक्० VI. ii. 19**

भू... — VI. iv. 85
देखें — **भूसुधियोः VI. iv. 85**

भू — VI. iv. 158

(बहु शब्द से उत्तर इष्ठन्, इमनिच् तथा ईयसुन् का लोप होता है और उस बहु के स्थान में) भू आदेश (भी होता है)।

भू... — VII. iii. 88
देखें — **भूसुवोः VII. iii. 88**

...भू... — VIII. iv. 33
देखें—**भाभूपू० VIII. iv. 33**

भूः — II. iv. 52

(अस् के स्थान में, आर्धधातुक-विषय उपस्थित होने पर) भू आदेश होता है।

भूकृञोः — III. iii. 127

भू तथा कृञ् धातु से (यथासङ्ख्य करके कर्त्ता एवं कर्म उपपद रहते; चकार से कृच्छ्र, अकृच्छ्र अर्थ में वर्तमान ईषद्, दुर्, सु उपपद हों तो भी खल् प्रत्यय होता है)।

भूत... — VI. ii. 91
देखें — **भूताधिक० VI. ii. 91**

भूतः — V. i. 79

(द्वितीयासमर्थ कालवाची प्रातिपदिकों से 'सत्कारपूर्वक व्यापार', 'खरीदा हुआ', 'हो चुका' (और 'होने वाला' — इन अर्थों में यथाविहित ठञ् प्रत्यय होता है)।

भूतपूर्वे — V. ii. 18

'भूतपूर्व' अर्थ में वर्तमान (गोष्ठ प्रातिपदिक से खञ् प्रत्यय होता है)।

भूतपूर्वे — V. iii. 53

'भूतपूर्व' अर्थ में वर्तमान (प्रातिपदिक से चरट् प्रत्यय होता है)।

भूतपूर्वे — VI. ii. 22

(पूर्व शब्द उत्तरपद रहते) भूतपूर्ववाची (तत्पुरुष समास) में (पूर्वपद को प्रकृतिस्वर हो जाता है)।

भूतवत् — III. iii. 132

(आशंसा गम्यमान होने पर धातु से) भूतकाल के समान (तथा वर्तमानकाल के समान भी विकल्प से प्रत्यय हो जाते हैं)।

आशंसा = इच्छा अभिलाषा, आशा।

भूताधिकसंजीवमद्राश्मकज्जलम् — VI. ii. 91

भूत, अधिक, संजीव, मद्र, अश्मन्, कज्जल — इन पूर्वपदों को (अर्य शब्द उत्तरपद रहते आद्युदात्त नहीं होता)।

भूते — III. ii. 84

यहाँ से लेकर 'वर्तमाने लट्' III. ii. 123 तक 'भूते' का अधिकार जाता है, अर्थात् वहाँ तक जितने प्रत्यय-विधान करेंगे, वे सब भूतकाल में होंगे, ऐसा जानना चाहिये।

भूते — III. iii. 2

(उणादि प्रत्यय) भूतकाल (के अर्थ) में भी (देखे जाते हैं)।

भूते — III. iii. 140

(लिङ् का निमित्त हेतुहेतुमत् हो तो क्रियातिपत्ति होने पर) भूतकाल में (भी धातु से लृङ् प्रत्यय होता है)।

...भूभ्यः — II. iv. 77

देखें — **गातिस्थाघुपा० II. iv. 77**

...भूमि... — VIII. iii. 97

देखें — **अम्बाम्ब० VIII. iii. 97**

भूवाक्चिद्दिधिषु — VI. ii. 19

(ऐश्वर्यवाची तत्पुरुष समास में पति शब्द उत्तरपद रहते पूर्वपद) भू, वाक्, चित् तथा दिधिषू शब्दों को (प्रकृतिस्वर नहीं होता)।

दिधिषू = पुनर्विवाहिता स्त्री, अविवाहित बड़ी बहन जिसकी छोटी बहन विवाहिता हो।

भूवादयः — I. iii. 1

भू जिनके आदि में है तथा वा धातु के समान जो क्रियावाची शब्द हैं, वे (धातु संज्ञक होते हैं)।

भूषणे — I. iv. 63

भूषण = अलंकार करने अर्थ में (वर्तमान अलं शब्द क्रियायोग में गति और निपात संज्ञक होता है)।

भूषणे — VI. i. 132

भूषण = अलंकार अर्थ में (सम् तथा परि उपसर्ग से उत्तर कृ धातु के परे रहते ककार से पूर्व सुट् का आगम होता है, संहिता के विषय में)।

भूसुधियोः — VI. iv. 85

भू तथा सुधी अङ्ग को (यणादेश नहीं होता, अजादि सुप् परे रहते)।

भूसुवोः — VII. iii. 88

भू तथा षूङ् अङ्ग को (तिङ् पित् सार्वधातुक परे रहते गुण नहीं होता)।

...भृ... — III. i. 39

देखें — **भीह्रीभृहुवाम् III. i. 39**

भृ... — III. ii. 46

देखें — **भृतृवृ० III. ii. 46**

...भृ... — VI. i. 186

देखें — **भीह्रीभृ० VI. i. 186**

...भृ... — VII. ii. 13

देखें — **कृसृभृ० VII. ii. 13**

...भृ... — II. iv. 65

देखें — **अभिभृगुकुत्स० II. vi. 65**

भृगु... — IV. i. 102

देखें — **भृगुवत्साग्रा० IV. i. 102**

भृगुवत्साग्रायणेषु — IV. i. 102

(शरद्वत्, शुनक और दर्भ प्रातिपदिकों से यथासङ्ख्य) भृगु, वत्स और आग्रायण गोत्रापत्य वाच्य हों (तो फक् प्रत्यय होता है)।

...भृज्जतीनाम् — VI. i. 16

देखें — **ग्रहिज्या० VI. i. 16**

...भृञ्... — III. iii. 99

देखें — **समजनिषद० III. iii. 99**

भृञः — III. i. 112

भृञ् धातु से (क्यप् प्रत्यय होता है, असंज्ञाविषय में)।

भृञाम् — VII. iv. 76

भृञ्, माङ् और ओहाङ् धातुओं के (अभ्यास को इकारादेश होता है, श्लु होने पर)।

भृतः — V. i. 79

(द्वितीयासमर्थ कालवाची प्रातिपदिकों से 'सत्कारपूर्वक व्यापार') 'खरीदा हुआ', ('हो चुका' और 'होने वाला' — इन अर्थों में यथाविहित ठञ् प्रत्यय होता है)।

...भृतयः — V. i. 55

देखें — **अंशवस्नभृतयः V. i. 55**

...भृति... — I. iii. 37

देखें — **सम्माननोत्सञ्ज० I. iii. 37**

भृतृवृजिधारिसहितपिदमः — III. ii. 46

(संज्ञा गम्यमान हो तो कर्म अथवा सुबन्त उपपद रहते) भृ, तृ, वृ, जि, धारि, सहि, तपि, दम् — इन धातुओं से (खच् प्रत्यय होता है)।

भृतौ — III. ii. 22

भृति = वेतन गम्यमान होने पर (क्रियार्थक कर्म शब्द उपपद रहते 'कृ' धातु से 'ट' प्रत्यय होता है)।

भृशादिभ्यः — III. i. 12

(च्व्यन्तवर्जित) भृश आदि प्रातिपदिकों से (भवति अर्थ में क्यङ् प्रत्यय होता है और हलन्तों का लोप भी)।

...भृशेषु — VII. ii. 18
देखें — मन्थमनस्० VII. ii. 18

...भेषजात् — IV. i. 30
देखें — केवलमामक० IV. i. 30

...भेषजात् — V. iv. 23
देखें — अनन्तावसथ० V. iv. 23

भो... — VIII. iii. 17
देखें — भोभगो० VIII. iii. 17

भोग... — VIII. ii. 58
देखें — भोगप्रत्यययोः VIII. ii. 58

भोगप्रत्यययोः — VIII. ii. 58

(वित्त शब्द में विद्लृ लाभे धातु से उत्तर क्त प्रत्यय के नत्व का अभाव) भोग = उपभोग तथा प्रत्यय = प्रतीति अभिधेय होने पर (निपातित होता है)।

...भोगोत्तरपदात् — V. i. 8
देखें — आत्मन्विश्वजन० V. i. 8

भोजने — VIII. iii. 69

(वि उपसर्ग से उत्तर तथा चकार से अप उपसर्ग से उत्तर) भोजन अर्थ में (स्वन् धातु के सकार को मूर्धन्य आदेश होता है, अड्व्यवाय एवं अभ्यासव्यवाय में भी)।

भोज्यम् — VII. iii. 69

भोज्यम् शब्द (भक्ष्य अभिधेय होने पर निपातन किया जाता है)।

भोभगोअघोअपूर्वस्य — VIII. iii. 17

भो, भगो, अघो तथा अवर्ण पूर्व में है जिस (रु) के, उस (रु के रेफ) को (यकार आदेश होता है, अश् परे रहते)।

भौरिक्यादि ... — IV. ii. 53
देखें — भौरिक्याद्यैषु० IV. ii. 53

भौरिक्याद्यैषुकार्यादिभ्यः — IV. ii. 53

(षष्ठीसमर्थ) भौरिकि आदि तथा ऐषुकारि आदि शब्दों से ('विषयो देशे' अर्थ में यथासङ्ख्य विधल् और भक्तल् प्रत्यय होते हैं)।

भौरिकि = राजकीय कोषाध्यक्ष का पुत्र।

भ्यम् — VII. i. 30

(युष्मद्, अस्मद् अङ्ग से उत्तर भ्यस् के स्थान में) भ्यम् (अथवा अभ्यम्) आदेश होता है।

...भ्यस्... — IV. i. 2
देखें — स्वौजसमौट्० IV. i. 2

...भ्यस्... — IV. i. 2
देखें — स्वौजसमौट्० IV. i. 2

भ्यसः — VII. i. 30

(युष्मद्, अस्मद् अङ्ग से उत्तर) भ्यस् के स्थान में (भ्यम् अथवा अभ्यम् आदेश होता है)।

...भ्याम्... — IV. i. 2
देखें — स्वौजसमौट्० IV. i. 2

...भ्याम्... — IV. i. 2
देखें — स्वौजसमौट्० IV. i. 2

...भ्याम्... — IV. i. 2
देखें — स्वौजसमौट्० IV. i. 2

...भ्वोः — III. iv. 61
देखें — कृभ्वोः III. iv. 61

...भ्रटचः — V. ii. 31
देखें — टीटञ्नाटच्० V. ii. 31

...भ्रमर... — IV. iii. 118
देखें — क्षुद्राभ्रमरवटर० IV. iii. 118

...भ्रमु... — III. i. 70
देखें — भ्राशभ्लाश० III. i. 70

...भ्रमु... — VI. iv. 124
देखें — जृभ्रमु० VI. iv. 124

...भ्रस्ज... — VII. ii. 49
देखें — इवन्तर्ध० VII. ii. 49

...भ्रस्ज... — VIII. ii. 36
देखें — व्रश्चभ्रस्ज० VIII. ii. 36

भ्रस्जः — VI. iv. 47

भ्रस्ज् धातु के (रेफ तथा उपधा के स्थान में विकल्प से रम् आगम होता है, आर्धधातुक परे रहने पर)।

...भ्रंसु... — VII. iv. 84

देखें — **वञ्चुस्रंसु० VII. iv. 84**

भ्राज... — III. ii. 177

देखें — **भ्राजभास० III. ii. 177**

भ्राज... — VII. iv. 3

देखें — **भ्राजभास० VII. iv. 3**

...भ्राज... — VIII. ii. 36

देखें — **व्रश्चभ्रस्ज० VIII. ii. 36**

भ्राजभासधुर्विद्युतोर्जिपृजुग्रावस्तुवः — III. ii. 177

भ्राज्, भासृ, धुर्वी, द्युत, ऊर्ज, पृ, जु, ग्रावपूर्वक ष्टुञ् —इन धातुओं से (तच्छीलादि कर्ता हों, वर्तमानकाल में क्विप् प्रत्यय होता है)।

भ्राजभासभाषदीपजीवमीलपीडाम् — VII. iv. 3

भ्राज, भास, भाष, दीपी, जीव, मील, पीड — इन अङ्गों की (उपधा को चङ्परक णि परे रहते विकल्प से ह्रस्व होता है)।

भ्रातरि — IV. i. 164

(बड़े) भाई के (जीवित रहते पौत्रप्रभृति का जो अपत्य छोटा भाई, उसकी भी युवा संज्ञा हो जाती है)।

भ्रातुः — IV. i. 144

भ्रातृ शब्द से (अपत्य अर्थ में व्यत् तथा छ प्रत्यय होता है)।

भ्रातुः — V. iv. 157

('पूजित' अर्थ में वर्तमान) भ्रातृ-शब्दान्त (बहुव्रीहि) से (समासान्त कप् प्रत्यय नहीं होता है)।

भ्रातृ... — I. ii. 68

देखें — **भ्रातृपुत्रौ I. ii. 68**

भ्रातृपुत्रौ — I. ii. 68

भ्रातृ और पुत्र शब्द (यथाक्रम स्वसृ और दुहितृ शब्दों के साथ शेष रह जाते हैं, स्वसृ तथा दुहितृ शब्द हट जाते हैं)।

भ्राश... — III. i. 70

देखें — **भ्राशभ्लाश० III. i. 70**

भ्राशभ्लाशभ्रमुक्रमुक्लमुत्रसित्रुटिलषः — III. i. 70

टुभ्राशृ, टुभ्लाशृ, भ्रमु, क्रमु, क्लमु, त्रसि, त्रुटि, लष् — इन धातुओं से (विकल्प से श्यन् प्रत्यय होता है, कर्तृवाची सार्वधातुक परे रहते)।

...भ्राष्ट्र... — VI. ii. 82

देखें — **दीर्घकाश० VI. ii. 82**

भ्रुवः — IV. i. 125

भ्रू प्रातिपदिक से (अपत्य अर्थ में ढक् प्रत्यय होता है), तथा भ्रू को (वुक् का आगम भी होता है)।

...भ्रुवाम् — VI. iv. 77

देखें — **श्नुधातु० VI. iv. 77**

...भ्रूण... — III. ii. 87

देखें — **ब्रह्मभ्रूण० III. ii. 87**

...भ्रौणहत्य... — VI. iv. 174

देखें — **दण्डिनायनहास्ति० VI. iv. 174**

...भ्लाश... — III. i. 70

देखें — **भ्राशभ्लाश० III. i. 70**

म

म्... — I. i. 38

देखें — **मेजन्तः I. i. 38**

म्... — VI. iv. 107

देखें — **म्वोः VI. iv. 107**

...म्... — VII. ii. 5

देखें — **हम्यन्तक्षण० VII. ii. 5**

म्... — VIII. ii. 65

देखें — **म्वोः VIII. ii. 65**

म — प्रत्याहारसूत्र VII

भगवान् पाणिनि द्वारा अपने सप्तम प्रत्याहारसूत्र में पठित द्वितीय वर्ण।

पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का सोलहवां वर्ण।

...मः — III. ii. 2
देखें — **ह्वावामः III. ii. 2**

मः — IV. iii. 8
(मध्य प्रातिपदिक से) शैषिक म प्रत्यय होता है।

मः — V. ii. 108
(द्यु तथा द्रु प्रातिपदिकों से 'मत्वर्थ' में) म प्रत्यय होता है।

मः — VII. ii. 108
(इदम् अङ्ग को सु विभक्ति परे रहते) मकारादेश होता है।

मः — VIII. ii. 53
(क्षै धातु से उत्तर निष्ठा के तकार को) मकारादेश होता है।

मः — VIII. ii. 64
मकारान्त (धातुपद) को (नकारादेश होता है)।

मः — VIII. ii. 80
(असकारान्त अदस् शब्द के दकार से उत्तर जो वर्ण, उसके स्थान में उवर्ण आदेश होता है तथा दकार को) मकारादेश (भी) होता है।

मः — VIII. iii. 23
(पदान्त) मकार को (अनुस्वार आदेश होता है; हल् परे रहते, संहिता में)।

मः — VIII. iii. 25
(सम् के मकार को) मकारादेश होता है; (क्विप् प्रत्ययान्त राजृ धातु के परे रहते)।

...मक्षु... — VI. iii. 132
देखें — **तुनुघम० VI. iii. 132**

...मगध... — IV. i. 168
देखें — **द्व्यञ्मगध० IV. i. 168**

मघवा — VI. iv. 128
मघवन् अङ्ग को (बहुल करके तृ आदेश होता है)।

...मघोनाम् — VI. iv. 133
देखें — **श्वयुवमघोनाम् VI. iv. 133**

...मज्ञि... — VIII. iii. 97
देखें — **अम्बाम्ब० VIII. iii. 97**

मट् — V. ii. 49
(सङ्ख्या आदि में न हो जिसके, ऐसे सङ्ख्यावाची षष्ठीसमर्थ नकारान्त प्रातिपदिक से 'पूरण' अर्थ में विहित डट् प्रत्यय को) मट् का आगम होता है।

मड्डुक... — IV. iv. 56
देखें — **मड्डुकझर्झरात् IV. iv. 56**

मड्डुकझर्झरात् — IV. iv. 56
(शिल्पवाची प्रथमासमर्थ) मड्डुक, झर्झर प्रातिपदिकों से (विकल्प से षष्ठ्यर्थ में अण् प्रत्यय होता है)।
मड्डुक = एक प्रकार का ढोल।
झर्झर = ढोल, झांझ।

...मणि... — VI. iii. 114
देखें — **अविष्टाष्ट० VI. iii. 114**

मणौ — V. iv. 30
मणिविशेष में (वर्तमान लोहित प्रातिपदिक से कन् प्रत्यय होता है, स्वार्थ में)।

मण्डलम् — VI. ii. 182
(परि उपसर्ग से उत्तर अभितोभाववाची पद तथा) मण्डल शब्द को (अन्तोदात्त होता है)।

...मण्डार्थेभ्यः — III. ii. 151
देखें — **क्रुधमण्डार्थेभ्यः III. ii. 151**

मण्डूकात् — IV. i. 119
मण्डूक प्रातिपदिक से (ढक् प्रत्यय होता है तथा विकल्प से अण् भी होता है)।

मत... — IV. iv. 97
देखें — **मतजनहलात् IV. iv. 97**

...मत... — VI. iii. 42
देखें — **घरूप० VI. iii. 42**

मतजनहलात् — IV. iv. 97
(षष्ठीसमर्थ) मत, जन, हल प्रातिपदिकों से (यथासंख्य करके करण, जल्प, कर्ष अर्थों में यत् प्रत्यय होता है)।

मति... — III. ii. 188
देखें — **मतिबुद्धि० III. ii. 188**

मतिः — IV. iv. 60
(प्रथमासमर्थ अस्ति, नास्ति, दिष्ट प्रातिपदिकों से इसकी) मति विषय में (ढक् प्रत्यय होता है)।

मतिबुद्धिपूजार्थेभ्यः — III. ii. 188

मत्यर्थक, बुद्ध्यर्थक तथा पूजार्थक धातुओं से (भी वर्तमानकाल में क्त प्रत्यय होता है)।

मतु... — VIII. iii. 1

देखें — मतुवसोः VIII. iii. 1

मतुप् — IV. ii. 84

(ङ्यन्त, आबन्त प्रातिपदिक से नदी अभिधेय हो तो चातुरर्थिक) मतुप् प्रत्यय होता है।

मतुप् — IV. iv. 127

(उपधान मन्त्र समानाधिकरण प्रथमासमर्थ मतुबन्त मूर्धन् प्रातिपदिक से ईटों के अभिधेय होने पर वेदविषय में) मतुप् प्रत्यय होता है (तथा प्रकृत्यन्तर्गत जो मतुप् उसका लुक् हो जाता है)।

मतुप् — V. ii. 94

('है' क्रिया के समानाधिकरण वाले प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ तथा सप्तम्यर्थ में) मतुप् प्रत्यय होता है)।

मतुप् — V. ii. 136

(बलादि प्रातिपदिकों से 'मत्वर्थ में') मतुप् प्रत्यय विकल्प से होता है, पक्ष में इनि।

मतुप् — VI. i. 170

(अन्तोदात्त ह्रस्व तथा नुट् से उत्तर) मतुप् प्रत्यय (उदात्त होता है)।

मतुवसोः — VIII. III. 1

मत्वन्त तथा वस्वन्त पद को (संहिता में सम्बुद्धि परे रहते रु आदेश होता है)।

मतोः — IV. ii. 71

(जिस मतुप् के परे रहते बहुत अच् वाला अङ्ग हो) उस मत्वन्त प्रातिपदिक से (भी अञ् प्रत्यय होता है)।

मतोः — IV. iv. 125

(उपधान मन्त्र समानाधिकरण प्रथमासमर्थ मतुबन्त प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में यत् प्रत्यय होता है, यदि षष्ठ्यर्थ में निर्दिष्ट ईंटें ही हों तथा) मतुप् का (लुक् भी हो जाता है, वेद-विषय में)।

...मतोः — V. iii. 65

देखें — विन्मतोः V. iii. 65

मतोः — VI. i. 213

मतुप् से (पूर्व आकार को उदात्त होता है, यदि वह मत्वन्त शब्द स्त्रीलिङ्ग में सञ्ज्ञाविषयक हो तो)।

मतोः — VIII. ii. 9

(मकारान्त एवं अवर्णान्त तथा मकार एवं अवर्ण उपधावाले प्रातिपदिक से उत्तर) मतुप् को (वकारादेश होता है, किन्तु यवादि शब्दों से उत्तर मतुप् को व नहीं होता)।

मतौ — IV. iv. 136

(प्रथमासमर्थ सहस्र प्रातिपदिक से) मत्वर्थ में (भी घ प्रत्यय होता है, वेद-विषय में)।

मतौ — V. ii. 59

(प्रातिपदिकमात्र से) मत्वर्थ में (छ प्रत्यय होता है, सूक्त और साम वाच्य हों तो)।

मतौ — VI. iii. 118

(अजिरादियों को छोड़कर) मतुप् परे रहते (बह्वच् शब्दों के अण् को दीर्घ होता है, सञ्ज्ञाविषय में)।

मतौ — VI. iii. 130

(सोम, अश्व, इन्द्रिय, विश्वदेव्य — इन शब्दों को) मतुप् प्रत्यय परे रहते (दीर्घ हो जाता है, मन्त्र-विषय में)।

मत्वर्थे — I. iv. 19

मतुबर्थक प्रत्ययों के परे रहते (तकारान्त और सकारान्त शब्दों की भ संज्ञा होती है)।

मत्वर्थे — IV. iv. 128

(मास और तनु प्रत्ययार्थ विशेषण हों तो प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से) मतुप् के अर्थ में (यत् प्रत्यय होता है)।

...मत्स्य... — IV. iv. 35

देखें — पक्षिमत्स्यमृगान् IV. iv. 35

...मत्स्यानाम् — VI. iv. 149

देखें — सूर्यतिष्य० VI. iv. 149

मत्स्ये — V. iv. 16

(विसारिन् प्रातिपदिक से स्वार्थ में अण् प्रत्यय होता है), मछली अभिधेय हो तो।

विसारिन् = फैलाने वाली, रेंगने वाली मछली।

...मथ... — III. ii. 145
देखें — लपसृद्रु० III. ii. 145

...मथाम् — III. ii. 27
देखें — वनसन० III. ii. 27

...मथि... — VII. i. 85
देखें — पथिमथि० VII. i. 85

...मद... — III. i. 100
देखें — गदमद० III. i. 100

...मद... — VI. i. 186
देखें — भीह्रीभृ० VI. i. 186

मदः — III. iii. 67
(उपसर्गरहित) मद् धातु से (कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में अप् प्रत्यय होता है)।

...मदाम् — VIII. ii. 57
देखें — ध्याख्यापृ० VIII. ii. 57

...मद्र... — II. iii. 73
देखें — आयुष्यमद्रभद्र० II. iii. 73

मद्र... — IV. ii. 130
देखें — मद्रवृज्योः IV. ii. 130

...मद्र... — VI. ii. 91
देखें — भूताधिक० VI. ii. 91

मद्रवृज्योः — IV. ii. 130
(देशविशेषवाची) मद्र तथा वृजि शब्दों से (शैषिक कन् प्रत्यय होता है)।

मद्र = उस देश, उस देश का शासक, उस देश के वासी।

वृजि = कतराना, परित्याग करना।

मद्रात् — V. iv. 67
मद्र प्रातिपदिक से (कृञ् के योग में डाच् प्रत्यय होता है, मुण्डन वाच्य हो तो)।

...मद्रे — III. ii. 44
देखें — क्षेमप्रिय० III. ii. 44

मद्रेभ्यः — IV. ii. 107
(दिशापूर्वपद वाले) मद्रान्त प्रातिपदिक से (शैषिक अञ् प्रत्यय होता है)।

मधु... — IV. i. 106
देखें — मधुबभ्र्वोः IV. i. 106

मधुबभ्र्वोः — IV. i. 106
मधु तथा बभ्रु शब्दों से (यथासंख्य करके ब्राह्मण तथा कौशिक गोत्र वाच्य हों तो यञ् प्रत्यय होता है)।

मधोः — IV. iv. 129
(प्रथमासमर्थ) मधु प्रातिपदिक से (मत्वर्थ में मास और तनु प्रत्ययार्थ विशेषण हों तो ञ और यत् प्रत्यय होते हैं)।

मधोः — IV. iv. 139
मधु प्रातिपदिक से (मयट् के अर्थ में यत् प्रत्यय होता है, वेद-विषय में)।

...मघः — V. ii. 107
देखें — ऊषसुषि० V. ii. 107

...मध्यम... — I. iv. 100
देखें — प्रथममध्यमोत्तमाः I. iv. 100

...मध्यम... — II. i. 57
देखें — पूर्वापरप्रथम० II. i. 57

मध्यमः — I. iv. 104
(युष्मद् शब्द के उपपद रहते समान अभिधेय होने पर युष्मद् शब्द का प्रयोग न हो या हो तो भी) मध्यम पुरुष होता है।

मध्यात् — IV. iii. 8
मध्य प्रातिपदिक से (शैषिक म प्रत्यय होता है)।

मध्यात् — VI. iii. 10
मध्य शब्द से उत्तर (गुरु शब्द उत्तरपद रहते सप्तमी विभक्ति का अलुक् होता है)।

मध्ये — I. iv. 75
मध्ये, (पदे तथा निवचने) शब्द (भी कृञ् के योग में विकल्प से गति और निपात संज्ञक होते हैं)।

मध्ये — II. i. 17
(पार और) मध्य शब्द (षष्ठ्यन्त सुबन्त के साथ विकल्प से अव्ययीभाव समास को प्राप्त होते हैं तथा समास के सन्नियोग से इन शब्दों को) एकारान्तत्व भी निपातन से हो जाता है।

मध्वादिभ्यः — IV. ii. 85

मधु आदि प्रातिपदिकों से (भी चातुरर्थिक मतुप् प्रत्यय होता है)।

मन्... — V. ii. 137

देखें — **मन्माभ्याम् V. ii. 137**

मन्... — VI. ii. 151

देखें — **मन्क्तिन्० VI. ii. 151**

...मन्... — VI. iv. 97

देखें — **इस्मन्० VI. iv. 97**

...मन... — III. iii. 96

देखें — **वृषेष० III. iii. 96**

...मन... — III. iii. 99

देखें — **समजनिषद० III. iii. 99**

...मन... — VII. iii. 78

देखें — **पिबजिघ्र० VII. iii. 78**

मनः — III. ii. 82

मन् धातु से (सुबन्त उपपद रहते 'णिनि' प्रत्यय होता है)।

मनः — IV. i. 11

मन् अन्त वाले प्रातिपदिकों से (स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय नहीं होता)।

...मनस्... — V. iv. 51

देखें — **अरुर्मनस्० V. iv. 51**

...मनस्... — VII. ii. 18

देखें — **मन्थमनस्० VII. ii. 18**

मनसः — VI. iii. 4

मनस् शब्द से उत्तर (सञ्ज्ञाविषय में तृतीया विभक्ति का उत्तरपद परे रहते अलुक् होता है)।

...मनसी — I. iv. 65

देखें — **कणेमनसी I. iv. 65**

...मनसी — I. iv. 74

देखें — **उरसिमनसी I. iv. 74**

मनसी — VI. ii. 117

(सु से उत्तर मन् अन्तवाले) तथा अस् अन्तवाले उत्तरपद शब्दों को (बहुव्रीहि समास में आद्युदात्त होता है, लोमन् तथा उषस् शब्दों को छोड़कर)।

मनिन्... — III. ii. 74

देखें — **मनिन्क्वनिप्० III. ii. 74**

मनिन्क्वनिब्वनिपः — III. ii. 74

(आकारान्त धातुओं से सुबन्त उपपद रहते वेदविषय में) मनिन्, क्वनिप्, वनिप् (तथा विच्) प्रत्यय होते हैं।

...मनुष्य... — IV. ii. 38

देखें — **गोत्रोक्षोष्ट्रो० IV. ii. 38**

मनुष्य... — IV. ii. 133

देखें — **मनुष्यतत्स्थयोः IV. ii. 133**

...मनुष्य... — V. iv. 56

देखें — **देवमनुष्य० V. iv. 56**

मनुष्यजातेः — IV. i. 65

(इकारान्त) मनुष्यजातिवाची (अनुपसर्जन) शब्द से (स्त्रीलिङ्ग में ङीष् प्रत्यय होता है)।

मनुष्यतत्स्थयोः — IV. ii. 133

मनुष्य तथा मनुष्य में स्थित कोई कर्मादि अभिधेय हो (तो कच्छादि प्रातिपदिकों से वुञ् प्रत्यय होता है)।

मनुष्यनाम्नः — V. iii. 78

(बहुत अच् वाले) मनुष्य नामधेय प्रातिपदिक से (अनुकम्पा से युक्त नीति गम्यमान होने पर विकल्प से ठच् प्रत्यय होता है)।

मनुष्ये — IV. ii. 128

(अरण्य प्रातिपदिक से) मनुष्य अभिधेय हो तो (शैषिक वुञ् प्रत्यय होता है)।

मनुष्ये — V. iii. 98

(सञ्ज्ञाविषय में विहित कन् प्रत्यय का) मनुष्य अभिधेय होने पर (लुप् हो जाता है)।

...मनुष्येभ्यः — IV. iii. 81

देखें — **हेतुमनुष्येभ्यः IV. iii. 81**

मनोः — IV. i. 38

मनु शब्द से (स्त्रीलिङ्ग में विकल्प से ङीप् प्रत्यय, औकार अन्तादेश एवं ऐकार अन्तादेश भी हो जाता है और वह ऐकार उदात्त भी होता है)।

मनोः — IV. i. 161

मनु शब्द से (जाति को कहना हो तो अञ् तथा यत् प्रत्यय होते हैं तथा) मनु शब्द को (षुक् का आगम भी हो जाता है)।

...मनोज्ञादिभ्यः — V. i. 132

देखें — द्वन्द्वमनोज्ञादिभ्यः V. i. 132

मन्क्तिन्व्याख्यानशयनासनस्थानयाजकादिक्रीताः — VI. ii. 151

(कारक से उत्तर) मन् प्रत्ययान्त, क्तिन् प्रत्ययान्त, व्याख्यान, शयन, आसन, स्थान, याजकादि तथा क्रीत शब्द उत्तरपद को (अन्तोदात्त होता है)।

...मन्तात् — VI. iv. 137

देखें — वमन्तात् VI. iv. 137

...मन्त्र... — III. ii. 22

देखें — शब्दश्लोक० III. ii. 22

...मन्त्र... — III. ii. 89

देखें — सुकर्मपाप० III. ii.89

मन्त्रः — IV. iv. 165

(उपधान) मन्त्र (समानाधिकरण प्रथमासमर्थ मतुबन्त प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में यत् प्रत्यय होता है, यदि षष्ठ्यर्थ में निर्दिष्ट ईटें ही हों तथा मतुप् का लुक् भी हो जाता है, वेद-विषय में)।

मन्त्रकरणे — I. iii. 25

मन्त्रकरण = स्तुति अर्थ में प्रयुज्यमान (उपपूर्वक स्था धातु से आत्मनेपद होता है)।

मन्त्रे — II. iv. 80

मन्त्र-विषयक प्रयोग में (घस, ह्वर, णश, वृ, दह, आदन्त, वृच्, कृ, गम् और जन् धातुओं से विहित 'च्लि' का लुक् हो जाता है)।

मन्त्रे — III. ii. 71

वैदिक प्रयोग-विषय में (श्वेतवह, उक्थशस्, पुरोडाश् — ये शब्द ण्विन्प्रत्ययान्त निपातन किये जाते हैं)।

मन्त्रे — III. iii. 96

मन्त्रविषय में (वृष, इष, पच, मन, विद, भू, वी, रा धातुओं से स्त्रीलिङ्ग भाव में क्तिन् प्रत्यय होता है और वह उदात्त होता है)।

मन्त्रे — VI. i. 146

(ह्रस्व से उत्तर चन्द्र शब्द उत्तरपद में हो तो सुट् का आगम होता है), मन्त्रविषय में।

मन्त्रे — VI. i. 204

(जुष्ट तथा अर्पित शब्दों को) मन्त्रविषय में (नित्य ही आद्युदात्त होता है)।

मन्त्रे — VI. iii. 130

(सोम, अश्व, इन्द्रिय, विश्वदेव्य — इन शब्दों को मतुप् प्रत्यय परे रहने पर दीर्घ हो जाता है,) मन्त्रविषय में।

मन्त्रे — VI. iv. 53

मन्त्र-विषय में (इडादि तृच् परे रहते 'जनिता' यह निपातन होता है)।

मन्त्रेषु — VI. iv. 141

मन्त्र-विषय में (आङ् = टा परे रहते आत्मन् शब्द के आदि का लोप होता है)।

मन्थ... — V. i. 109

देखें — मन्थदण्डयोः V. i. 109

...मन्थ... — VI. ii. 122

देखें — कंसमन्थ० VI. ii. 122

मन्थ... — VI. iii. 59

देखें — मन्थौदन० VI. iii. 59

मन्थ... — VII. ii. 18

देखें — मन्थमनस्० VII. ii. 18

...मन्थिषु — VI. ii. 142

देखें — अपृथिवीरुद्र० VI. ii. 142

मन्थौदनसक्तुबिन्दुवज्रभारहारवीवधगाहेषु — VI. iii. 59

मन्थ, ओदन, सक्तु, बिन्दु, वज्र, भार, हार, वीवध, गाह — इन शब्दों के उत्तरपद रहते (भी उदक शब्द को उद आदेश विकल्प करके होता है)।

वीवध = बोझा ढोने के लिये भंगी, भोझा।

गाह = डुबकी लगाना, गहराई, आभ्यन्तर प्रवेश।

मन्माभ्याम् — V. ii. 137

मन् अन्तवाले तथा म शब्दान्त प्रातिपदिकों (से मत्वर्थ में इनि प्रत्यय होता है, सञ्ज्ञाविषय में)।

मन्यकर्मणि — II. iii. 17

मन् धातु के (प्राणिवर्जित) कर्म में (विकल्प से चतुर्थी विभक्ति होती है, अनादर गम्यमान होने पर)।

मन्यतेः — I. iv. 105

(परिहास गम्यमान हो रहा हो तो भी मन्य है उपपद जिसका, ऐसी धातु से युष्मद् उपपद रहते समान अभिधेय होने पर युष्मद् शब्द का प्रयोग हो या न हो, तो भी मध्यम पुरुष हो जाता है तथा उस) मन् धातु से (उत्तम पुरुष हो जाता है और उस उत्तम पुरुष को एकत्व भी हो जाता है)।

...मन्ये — VIII. i. 46
देखें — एहिमन्ये VIII. i. 46

मन्योपपदे — I. iv. 105

(परिहास गम्यमान हो रहा हो तो भी) मन्य है उपपद जिसका, ऐसी धातु से (युष्मद् उपपद रहते समान अभि-धेय होने पर युष्मद् शब्द प्रयोग हो या न हो, तो भी मध्यम पुरुष हो जाता है तथा उस मन् धातु से उत्तम पुरुष हो जाता है और उत्तम पुरुष को एकत्व भी हो जाता है)।

मप् — IV. iv. 20

(तृतीयासमर्थ क्त्रि प्रत्ययान्त प्रातिपदिक से निर्वृत्त अर्थ में नित्य ही) मप् प्रत्यय होता है।

मपरे — VIII. iii. 26

मकारपरक (हकार) के परे रहते (पदान्त मकार को विकल्प से मकारादेश होता है)।

मपर्यन्तस्य — VII. ii. 91

(यहाँ से आगे 'प्रत्ययोत्तरपदयोश्च' VII. ii. 98 तक सब आदेश) मकारपर्यन्त को कहेंगे।

मपूर्वः — VI. iv. 170

(अपत्यार्थक अण् के परे रहते वर्म्मन् शब्द के अन् को छोड़कर) जो मकार पूर्ववाला अन्, उसको (प्रकृतिभाव नहीं होता)।

...ममकौ — IV. iii. 3
देखें — तवकममकौ IV. iii. 3

...ममौ — VII. ii. 96
देखें — तवममौ VII. ii. 96

मयः — VIII. iii. 33

मय् प्रत्याहार से उत्तर (उञ् को अच् परे रहते विकल्प से वकारादेश होता है)।

मयट् — IV. iii. 82

(पञ्चमीसमर्थ हेतु तथा मनुष्यवाची प्रातिपदिकों से आगत अर्थ में) मयट् प्रत्यय (भी) होता है।

मयट् — IV. iii. 140

(षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिकों से भक्ष्य, आच्छादन से वर्जित विकार तथा अवयव अर्थों में लौकिक प्रयोगविषय में विकल्प से) मयट् प्रत्यय होता है।

मयट् — V. ii. 47

(प्रथमासमर्थ सङ्ख्यावाची प्रातिपदिकों से 'इस भाग का यह मूल्य' अर्थ में) मयट् प्रत्यय होता है।

मयट् — V. iv. 21

(प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से 'प्रभूत' अर्थ में) मयट् प्रत्यय होता है।

मयतेः — VI. iv. 70

'मेङ् प्रणिदाने' अङ्ग को (विकल्प करके इकारादेश होता है, ल्यप् परे रहते)।

मयूरव्यंसकादयः — II. i. 71

मयूरव्यंसकादिगणपठित समुदायरूप शब्द (भी समा-नाधिकरण तत्पुरुषसंज्ञक निपातित हैं)।

मये — IV. iv. 138

(सोम शब्द से) मयट् के अर्थ में (भी य प्रत्यय होता है)।

...मयौ — VIII. i. 22
देखें — तेमयौ VIII. i. 22

...मर... — VI. ii. 116
देखें — जरमर० VI. ii. 116

...मरुत्वत्... — IV. ii. 31
देखें — द्यावापृथिवीशुना० IV. ii. 31

...मर्त्येभ्यः — V. iv. 56
देखें — देवमनुष्य० V. iv. 56

मर्मृज्य — VII. iv. 65

मर्मृज्य शब्द (वेद-विषय में) निपातन किया जाता है।

...मर्य... — III. i. 123
देखें — निष्टर्क्यदेवहूय० III. i. 123

मर्यादा... — II. i. 12
देखें — मर्यादाभिविध्योः II. i. 12

मर्यादाभिविध्योः — II. i. 12
मर्यादा और अभिविधि अर्थ में (वर्तमान 'आङ्' का पञ्चम्यन्त के साथ विकल्प से अव्ययीभाव समास होता है)।
मर्यादा = (तेन विना) मर्यादा।
अभिविधिः =(तेन सह) अभिविधिः।

...मर्यादावचन... — VIII. i. 15
देखें — रहस्यमर्यादावचन० VIII. i. 15

मर्यादावचने—I. iv. 88
मर्यादा और अभिविधि अर्थ द्योतित होने पर (आङ् शब्द कर्मप्रवचनीय और निपात-संज्ञक होता है)।

मर्यादावचने — III. iii. 136
(अवर प्रविभाग अर्थात् इधर के भाग को लेकर) मर्यादा कहनी हो (तो भविष्यत्काल में धातु से अनद्यतनवत् प्रत्ययविधि=लुट् नहीं होता है)।

...मलिन... — V. ii. 114
देखें — ज्योत्स्नातमिस्रा० V. ii. 114

...मलीमसाः — V. ii. 114
देखें — ज्योत्स्नातमिस्रा० V. ii. 114

...मवाम् — VI. iv. 20
देखें — ज्वरत्वर० VI. iv. 20

मश् — VII. i. 40
(अम् के स्थान में) मश् आदेश होता है, (वेद-विषय में)।

...मस्... — III. iv. 78
देखें — तिप्तस्झि० III. iv. 78

मसि — VII. i. 46
(वेद-विषय में) मस् शब्द (इकार अवयववाला हो जाता है)।

...मस्कर.. — VI. i. 149
देखें — मस्करमस्करिणौ VI. i. 149

मस्करमस्करिणौ — VI. i. 149
मस्कर तथा मस्करिन् शब्द (यथासंख्य करके बांस तथा सन्यासी अभिधेय हो, तो) निपातन किये जाते हैं।

...मस्करिणौ — VI. i. 149
देखें — मस्करमस्करिणौ VI. i. 149

मस्जि... — VII. i. 60
देखें — मस्जिनशोः VII. i. 60

मस्जिनशोः — VII. i. 60
'टुमस्जो शुद्धौ' तथा 'णश अदर्शने' धातुओं को (झलादि प्रत्यय परे रहते नुम् आगम होता है)।

...मस्तकात् — VI. iii. 11
देखें — अमूर्धमस्तकात् VI. iii. 11

...महत्... — II. i. 60
देखें — सन्महत्परमो० II. i. 60

...महत्... — VI. ii. 168
देखें — अव्ययदिक्शब्द० VI. ii. 168

महतः — VI. iii. 45
(समानाधिकरण उत्तरपद रहते तथा जातीय प्रत्यय परे रहते) महत् शब्द को (आकारादेश होता है)।

...महतः — VI. iv. 110
देखें — सान्तमहतः VI. iv. 110

...महद्भ्याम् — V. iv. 105
देखें — कुमहद्भ्याम् V. iv. 105

महाकुलात् — IV. i. 141
महाकुल प्रातिपदिक से (अञ् और खञ् प्रत्यय विकल्प से होते हैं, पक्ष में ख)।

महान् — VI. ii. 38
(व्रीहि, अपराह्ण, गृष्टि, इष्वास, जाबाल, भार, भारत, हैलिहिल, रौरव तथा प्रवृद्ध — इन शब्दों के उत्तरपद रहते पूर्वपद) महान् शब्द को (प्रकृतिस्वर होता है)।
गृष्टि = एक बार ब्याई हुई गौ।
रौरव = रुरु मृग की छाल का बना हुआ, डरावना।

महाराज... — IV. ii. 34
देखें — महाराजप्रोष्ठ० IV. ii. 34

महाराजप्रोष्ठपदात् — IV. ii. 34
(प्रथमासमर्थ देवतावाची) महाराज तथा प्रोष्ठपद प्रातिपदिकों से (षष्ठ्यर्थ में ठञ् प्रत्यय होता है)।

महाव्याहृतेः — VIII. ii. 71
महाव्याहृति (भुवस् शब्द) को (भी वेद-विषय में दोनों प्रकार से अर्थात् रु एवं रेफ दोनों ही होते हैं)।

...महिङ्... — III. iv. 78
देखें — तिप्तस्झि० III. iv. 78

महिष्यादिभ्यः — IV. iv. 48
(षष्ठीसमर्थ) महिषी आदि प्रातिपदिकों से (न्याय्य व्यवहार अर्थ में अण् प्रत्यय होता है)।

महेन्द्राद् — IV. ii. 28
(प्रथमासमर्थ देवतावाची) महेन्द्र शब्द से (षष्ठ्यर्थ में घ, अण् तथा छ प्रत्यय भी होते हैं)।

...महोक्ष... — V. iv. 77
देखें — अचतुर० V. iv. 77

...मा... — VI. iv. 66
देखें — घुमास्था० VI. iv. 66

...मा... — VII. iv. 40
देखें — द्यतिस्यति० VII. iv. 40

...मा... — VII. iv. 54
देखें—मीमाघु० VII. iv. 54

...मा... — VIII. iv. 17
देखें — मीमाघु० VII. iv. 17

...माः — I. iii. 4
देखें — तुस्माः I. iii. 4

...माः — III. iv. 82
देखें — णलतुसुस्० III. iv. 82

माङः — III. iv. 19
(व्यतीहार = अदल बदल अर्थवाली) मेङ् धातु से (उदीच्य आचार्यों के मत में क्त्वा प्रत्यय होता है)।

माङ् — III. iii. 175
माङ् शब्द उपपद हो तो (धातु से लुङ्, लिङ् तथा लोट् प्रत्यय भी होते हैं)।

माङ्योगे — VI. iv. 74
(लुङ्, लङ् तथा लृङ् के परे रहते जो अट्, आट् आगम कहे हैं, वे) माङ् के योग में (नहीं होते)।

...माङोः — VI. i. 72
देखें — आङ्माङोः VI. i. 72

...माणव... — IV. ii. 41
देखें — ब्राह्मणमाणव० IV. ii. 41

माणव... — V. i. 11
देखें— माणवचरकाभ्याम् V. i. 11

...माणव... — VI. ii. 69
देखें — गोत्रान्तेवासि० VI. ii. 69

माणवचरकाभ्याम् — V. i. 11
(चतुर्थीसमर्थ) माणव तथा चरक प्रातिपदिकों से ('हित' अर्थ में खञ् प्रत्यय होता है)।
माणव = लड़का, छोटा मनुष्य।
चरक = दूत, अवधूत।

...माण्डूकाभ्याम् — IV. i. 19
देखें — कौरव्यमाण्डूकाभ्याम् IV. i. 19

मात् — I. i. 12
(अदस् के) मकार से (ईदन्त, ऊदन्त और एदन्त की प्रगृह्य संज्ञा होती है)।

मात् — VIII. ii. 9
मकारान्त एवं अवर्णान्त (तथा मकार एवं अवर्ण उपधावाले) प्रातिपदिक से (उत्तर मतुप् को वकारादेश होता है, किन्तु यवादि शब्दों से उत्तर मतुप् को व नहीं होता)।

मातरपितरौ — VI. iii. 31
(उदीच्य आचार्यों के मत में) मातरपितरौ यह शब्द निपातन किया जाता है।

...मातामह... — IV. ii. 35
देखें — पितृव्यमातुल० IV. ii. 35

मातुः — IV. i. 115
(संख्या, सम् तथा भद्र पूर्व वाले) मातृ शब्द से (अपत्य अर्थ में अण् प्रत्यय होता है, साथ ही) मातृ शब्द को (उकार अन्तादेश भी हो जाता है)।

मातुः... — VIII. iii. 85
देखें — मातुःपितुर्भ्याम् VIII. iii. 85

मातुःपितुर्भ्याम् — VIII. iii. 85
मातुर् तथा पितुर् शब्द से उत्तर (स्वसृ के सकार को समास में विकल्प करके मूर्धन्य आदेश होता है)।

...मातुल... — IV. i. 48
देखें — इन्द्रवरुणभव० IV. i. 48

...मातुल... — IV. ii. 35
देखें — पितृव्यमातुल० IV. ii. 35

मातृ... — VIII. iii. 84
देखें — मातृपितृभ्याम् VIII. iii. 84

मातृपितृभ्याम् — VIII. iii. 84

मातृ तथा पितृ शब्द से उत्तर (स्वसृ शब्द के सकार को समास में मूर्धन्य आदेश होता है)।

मातृष्वसुः — IV. i. 134

(पितृष्वसृ प्रातिपदिक को जो कुछ कहा है वह) मातृष्वसृ शब्द को (भी होता है)।

...मात्रच्... — IV. i. 15
देखें — टिड्ढाणञ्० IV. i. 15

...मात्रचः — V. ii. 37
देखें — द्वयसज्दघ्न० V. ii. 37

मात्रा — I. ii. 70

मातृ शब्द के साथ (पितृ शब्द विकल्प से शेष रह जाता है, मातृ शब्द हट जाता है)।

मात्रा... — VI. ii. 14
देखें — मात्रोपज्ञोप० VI. ii. 14

मात्रार्थे — II. i. 9

मात्रा = बिन्दु अथवा अल्प अर्थ में (वर्तमान प्रति शब्द के साथ समर्थ सुबन्त अव्ययीभाव समास को प्राप्त होता है)।

मात्रोपज्ञोपक्रमच्छाये — VI. ii. 14

(नपुंसकवाची तत्पुरुष समास में) मात्रा, उपज्ञा, उपक्रम तथा छाया शब्द उत्तरपद हों तो (पूर्वपद को प्रकृतिस्वर होता है)।

उपज्ञा =अन्तःकरण में अपने आप उपजा ज्ञान, अविष्कार।

माथोत्तरपद... — IV. iv. 37
देखें — माथोत्तरपदपदव्य० IV. iv. 37

माथोत्तरपदपदव्यनुपदम् — IV. iv. 37

(द्वितीयासमर्थ) माथ शब्द उत्तरपद वाले प्रातिपदिक से तथा पदवी, अनुपद प्रातिपदिकों से ('दौड़ता है' अर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

माथ = मन्थन, हत्या, मार्ग।

माद... — VI. iii. 95
देखें — मादस्थयोः VI. iii. 95

मादस्थयोः — VI. iii. 95

माद तथा स्थ उत्तरपद रहते (वेद-विषय में सह शब्द को सध आदेश होता है)।

माद = नशा, हर्ष, अंहकार।

...माध्वी... — VI. iv. 175
देखें — ऋत्व्यवास्त्व्य० VI. iv. 175

मान्... — III. i. 6
देखें — मान्बधदान्शान्भ्यः III. i. 6

मान... — III. i. 129
देखें — मानहविर्निवास० III. i. 129

मान... — V. iii. 51
देखें — मानपश्वङ्गयोः V. iii. 51

मानपश्वङ्गयोः — V. iii. 51

माप तथा पशु का अङ्ग (रूपी षष्ठ और अष्टम) प्रातिपदिकों से (यथासङ्ख्य करके कन् प्रत्यय तथा ञ और अन् प्रत्यय का विकल्प से लुक् होता है तथा यथाप्राप्त अन् और अञ् भी होते हैं)।

मानहविर्निवाससामिधेनीषु — III. i. 129

(पाय्य, सान्नाय्य, निकाय्य, धाय्या — ये शब्द यथासंख्य करके) मान = तोलने का बाट, हविः, निवास तथा सामिधेनी = एक ऋचा अभिधेय होने पर (निपातन किये जाते हैं)।

...मानिनोः — VI. iii. 35
देखें — क्यङ्मानिनोः VI. iii. 35

...मानुषीभ्यः — IV. i. 103
देखें — नदीमानुषीभ्यः IV. i. 103

माने — IV. iii. 159

(षष्ठीसमर्थ द्रु प्रातिपदिक से) मानरूपी विकार अभिधेय हो (तो वय प्रत्यय होता है)।

मान्तस्य — VII. iii. 34

(उपदेश में उदात्त तथा) मकारान्त धातु को (चिण् तथा ञित् कृत् परे रहते जो कहा गया है, वह नहीं होता; आङ्पूर्वक चम् धातु को छोड़कर)।

मान्बधदान्शान्भ्यः — III. i. 6

मान्, बध, दान् और शान् धातुओं से (सन् प्रत्यय होता है तथा अभ्यास के विकार को दीर्घ आदेश होता है)।

...माभ्याम् — V. ii. 137
देखें — मन्माभ्याम् V. ii. 137

...मामक... — IV. i. 30
देखें — केवलमामक० IV. i. 30

...माया... — V. ii. 121
देखें — अस्मायामेधा० V. ii. 121

मायायाम् — IV. iv. 124

(षष्ठीसमर्थ असुर शब्द से वेद-विषय में असुर की अपनी) माया अभिधेय होने पर (अण् प्रत्यय होता है)।

...मार्देयाः — VI. ii. 107
देखें — हास्तिनफलक० VI. ii. 107

मालादीनाम् — VI. ii. 88

(प्रस्थ शब्द उत्तरपद रहते पूर्वपद) मालादि शब्दों को (भी आद्युदात्त होता है)।

...मालानाम् — VI. iii. 64
देखें — इष्टकेषीका० VI. iii. 64

...माष... — V. i. 7
देखें — खलयवमाष० V. i. 7

माष... — V. i. 34
देखें — पणपादमाष० V. i. 34

...माष... — V. ii. 4
देखें — तिलमाषो० V. ii. 4

मास् — VI. i. 61

(वेद-विषय में मास शब्द के स्थान में) मास् आदेश हो जाता है,(शस् प्रकार वाले प्रत्ययों के परे रहते)।

मास... — IV. iv. 128
देखें — मासतन्वोः IV. iv. 128

...मास... — V. ii. 57
देखें — शतादिमास० V. ii. 57

मासतन्वोः — IV. iv. 128

मास और तनू प्रत्ययार्थ विशेषण हों तो (प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से मतुप् के अर्थ में यत् प्रत्यय होता है)।

मासात् — V. i. 80

(द्वितीयासमर्थ कालवाची) मास प्रातिपदिक से (अवस्था गम्यमान होने पर 'हो चुका' अर्थ में यत् और खञ् प्रत्यय होते हैं)।

...मांस... — IV. iv. 67
देखें — श्राणामांसौदनात् IV. iv. 67

मित् — I. i. 46

मकार इत्संज्ञा वाला आगम (अचों में अन्तिम अच् से परे होता है)।

मित...— III. ii. 34
देखें — मितनखे III. ii. 34

...मित... — VI. ii. 170
देखें — अकृतमित० VI. ii. 170

मिताम् — VI. iv. 92

मित्सञ्ज्ञक अङ्ग की (उपधा को ह्रस्व होता है, णि परे रहते)।

मितनखे — III. ii. 34

मित और नख (कर्म) उपपद हों तो (भी पच् धातु से खश् प्रत्यय होता है)।

मित्र... — V. iv. 150
देखें — मित्रामित्रयोः V. iv. 150

...मित्र... — VI. ii. 116
देखें — जरमर० VI. ii. 116

मित्र ...— VI. ii. 165
देखें — मित्राजिनयोः VI. ii. 165

...मित्रयु... — VII. iii. 2
देखें — केकयमित्रयु० VII. iii. 2

मित्राजिनयोः — VI. ii. 164

(सञ्ज्ञा विषय में उत्तरपद) मित्र तथा अजिन शब्दों को (बहुव्रीहि समास में अन्तोदात्त होता है)।

मित्रामित्रयोः — V. iv. 150

(सुहृद् तथा दुर्हृद् शब्द कृतसमासान्त निपातन किये जाते हैं; यथासङ्ख्य करके) मित्र तथा अमित्र वाच्य हों तो।

मित्रे — VI. iii. 129

मित्र शब्द उत्तरपद रहते (भी ऋषि अभिधेय होने पर विश्व शब्द को दीर्घ हो जाता है)।

मिथ्योपपदात् — I. iii. 71

मिथ्या शब्द उपपद वाले (ण्यन्त कृञ् धातु) से (अभ्यास अर्थ में आत्मनेपद होता है)।

...मिदः — III. ii. 161
देखें — भञ्जभासमिदः III. ii. 161

...मिदि... — I. ii. 19
देखें — **शीङ्स्विदिमिदिक्ष्विदिधृषः I. ii. 19**

मिदेः — VII. iii. 82
मिद् अङ्ग के (इक् को शित् प्रत्यय परे रहते गुण होता है)।

...मिनोति... — VI. i. 49
देखें — **मीनातिमिनोति० VI. i. 49**

...मिप्... — III. iv. 78
देखें — **तिप्तस्झि० III. iv. 78**

...मिपाम् — III. iv. 101
देखें — **तस्थस्थमिपाम् III. iv. 101**

...मिमताभ्याम् — IV. i. 150
देखें — **फाण्टाहृतिमिमताभ्याम् IV. i. 150**

...मिश्र... — II. i. 30
देखें — **पूर्वसदृशसमो० II. i. 30**

...मिश्र... — III. i. 21
देखें — **मुण्डमिश्र० III. i. 21**

...मिश्र... — VI. iii. 55
देखें — **घोषमिश्र० VI. iii. 55**

...मिश्रका... — VIII. iv. 4
देखें — **पुरगामिश्रका० VIII. iv. 4**

मिश्रम् — VI. ii. 154
(तृतीयान्त से परे उपसर्गरहित) मिश्र शब्द उत्तरपद को (भी अन्तोदात्त होता है, असन्धि गम्यमान हो तो)।

मिश्रीकरणम् — II. i. 35
मिश्रीकरणवाची (तृतीयान्त सुबन्त भक्ष्यवाची सुबन्त के साथ विकल्प से समास को प्राप्त होता है और वह समास तत्पुरुषसंज्ञक होता है)।

मिश्रे — VI. ii. 128
मिश्रवाची (तत्पुरुष समास) में (पलल, सूप, शाक — इन उत्तरपद शब्दों को आद्युदात्त होता है)।

...मिह... — III. ii. 182
देखें — **दाम्नी० III. ii. 182**

मी... — VII. iv. 54
देखें — **मीमाघु० VII. iv. 54**

मीढ्वान् — VI. i. 12
मीढ्वान् शब्द का (छन्द तथा भाषा में सामान्य करके) निपातन किया जाता है।

...मीना — VIII. iv. 15
देखें — **हिनुमीना VIII. iv. 15**

मीनाति... — VI. i. 49
देखें — **मीनातिमिनोति० VI. i. 49**

मीनातिमिनोतिदीङाम् — VI. i. 49
मीञ्, डुमिञ् तथा दीङ् धातुओं को (ल्यप् के परे रहते तथा एच् के विषय में भी उपदेश अवस्था में ही आत्व हो जाता है)।

मीनातेः — VII. iii. 81
'मीञ् हिंसायाम्' अङ्गों को (शित् प्रत्यय परे रहते वेद-विषय में ह्रस्व होता है)।

मीमाघुरभलभशकपतपदाम् — VII. iv. 34
मी, मा तथा घुसञ्ज्ञक एवं रभ, डुलभष्, शक्लृ, पत्लृ और पत् अङ्गों के (अच् के स्थान में इस् आदेश होता है, सकारादि सन् परे रहते)।

...मील... — VII. iv. 3
देखें — **भ्राजभास० VII. iv. 3**

मु — VIII. ii. 3
(ना परे रहते) मु भाव (असिद्ध नहीं होता)।

मुक् — VII. ii. 82
(आन परे रहने पर अङ्ग के अकार को) मुक् आगम होता है।

...मुक्त... — II. i. 37
देखें— **अपेतापोढमुक्त० II. i. 37**

मुख... — I. i. 8
देखें— **मुखनासिकावचनः I. i. 8**

मुखनासिकावचनः — I. i. 8
कुछ मुख से, कुछ नासिका से (अर्थात् दोनों की सहायता से) बोले जाने वाले (वर्ण की अनुनासिक संज्ञा होती है)।

मुखम् — VI. ii. 169
(अपना अङ्गवाची उत्तरपद) मुख शब्द को (बहुव्रीहि समास में अन्तोदात्त होता है)।

मुखम् — VI. ii. 185

(अभि उपसर्ग से उत्तर उत्तरपदस्थित) मुख शब्द को (अन्तोदात्त होता है)।

...मुखात् — IV. i. 58

देखें — **नखमुखात् IV. i. 58**

मुचः — VII. iv. 57

(अकर्मक) मुच्लृ धातु को (विकल्प से गुण होता है, सकारादि सन् प्रत्यय परे रहते)।

मुचादीनाम् — VII. i. 59

(श प्रत्यय परे रहते) मुचादि धातुओं को (नुम् आगम होता है)।

मुञ्ज... — III. i. 117

देखें — **मुञ्जकल्क० III. i. 117**

मुञ्जकल्कहलिषु — III. i. 117

(विपूय, विनीय और जित्य शब्दों का निपातन किया जाता है; यथासंख्य करके) मुञ्ज = मूंज, कल्क = ओषधि और हलि = बड़ा हल अभिधेय हो तो।

मुण्ड... — III. i. 21

देखें — **मुण्डमिश्र० III. i. 21**

मुण्डमिश्रश्लक्ष्णलवणव्रतवस्त्रहलकलकृततूस्तेभ्यः — III. i. 21

मुण्ड, मिश्र, श्लक्ष्ण, लवण, व्रत, वस्त्र, हल, कल, कृत, तूस्त — इन (कर्मों) से ('करोति' अर्थ में णिच् प्रत्यय होता है)।

मुद्गात् — IV. iv. 25

(तृतीयासमर्थ) मुद्ग प्रातिपदिक से (मिला हुआ अर्थ में अण् प्रत्यय होता है)।

मुम् — VI. iii. 66

(अरुस्, द्विषत् तथा अव्यय-भिन्न अजन्त शब्दों को खिदन्त उत्तरपद रहते) मुम् आगम होता है।

...मूर्च्छि... — VIII. ii. 57

देखें — **ध्याख्यापॄ० VIII. ii. 57**

मूर्तौ — III. iii. 77

मूर्त्ति (काठिन्य) अभिधेय हो (तो हन् धातु से अप् प्रत्यय होता है तथा हन को घन आदेश भी हो जाता है)।

मूर्धन्यः — VIII. iii. 55

(अपदान्त को) मूर्धन्य आदेश होता है,(ऐसा अधिकार पाद की समाप्तिपर्यन्त जानें)।

...मूर्धसु — VI. ii. 197

देखें — **पाद्दन्मूर्धसु VI. ii. 197**

मूर्ध्नः — IV. iv. 127

(उपधान मन्त्र समानाधिकरण प्रथमासमर्थ मतुबन्त) मूर्धन् प्रातिपदिक से (ईटों के अभिधेय होने पर वेद-विषय में मतुप् प्रत्यय होता है तथा प्रकृत्यन्तर्गत जो मतुप्, उसका लुक् हो जाता है)।

मूर्ध्नः — V. iv. 115

द्वि तथा त्रि शब्दों से उत्तर जो मूर्धन् शब्द, तदन्त प्रातिपदिक से (समासान्त ष प्रत्यय होता है, बहुव्रीहि समास में)।

...मुष... — I. ii. 8

देखें — **रुदविदमुषग्रहिस्वपिप्रच्छः I. ii. 8**

...मुष्क... — V. ii. 107

देखें — **ऊषसुषि० V. ii. 107**

...मुष्टि... — VI. ii. 168

देखें — **अव्ययदिक्शब्द० VI. ii. 168**

मुष्टौ — III. iii. 36

(सम्-पूर्वक ग्रह् धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में) मुट्ठी अर्थ में (घञ् प्रत्यय होता है)।

...मुष्ट्योः — III. ii. 30

देखें — **नाडीमुष्ट्योः III. ii. 30**

...मुह... — VIII. ii. 33

देखें — **द्रुहमुह० VIII. ii. 33**

...मूल... — IV. i. 64

देखें — **पाककर्णपर्ण० IV. i. 64**

...मूल... — IV. iii. 28

देखें — **पूर्वाह्णापराह्णा० IV. iii. 28**

...मूल... — IV. iv. 91

देखें — **नौवयोधर्म० IV. iv. 91**

...मूल... — VI. ii. 121

देखें — **कूलतीर० VI. ii. 121**

मूलम् — IV. iv. 88
(आबर्हि =उत्पाटनीय समानाधिकरण प्रथमासमर्थ) मूल प्रातिपदिक से (षष्ठ्यर्थ में यत् प्रत्यय होता है)।

...मूले — V. ii. 24
देखें — पाकमूले V. ii. 24

...मृ... — III. i. 59
देखें — कृमृदृ० III. i. 59

...मृग... — II. iv. 12
देखें — वृक्षमृगतृणधान्य० II. iv. 12

...मृग... — V. iv. 98
देखें — उत्तरमृगपूर्वात् V. iv. 98

मृगः — IV. iii. 51
(सप्तमीसमर्थ कालवाची प्रातिपदिकों से) 'मृग (शब्द करता है' अर्थ में यथाविहित प्रत्यय होता है)।

...मृगान् — IV. iv. 35
देखें — पक्षिमत्स्यमृगान् IV. iv. 35

...मृज... — VIII. ii. 36
देखें — व्रश्चभ्रस्ज० VIII. ii. 36

मृजेः — III. i. 113
मृज् धातु से (विकल्प से क्यप् प्रत्यय होता है)।

मृजेः — VII. ii. 114
मृज् अङ्ग के (इक् के स्थान में वृद्धि होती है)।

मृड... — I. ii. 7
देखें — मृडमृदगुधकुषक्लिशवदवसः I. ii. 7

...मृड... — IV. i. 48
देखें — इन्द्रवरुणभव० IV. i. 48

मृडमृदगुधकुषक्लिशवदवसः — I. ii. 7
'मृड् सुखने', 'मृद क्षोदे', 'गुध रोषे', 'कुष निष्कर्षे', 'क्लिशू विबाधने', 'वद व्यक्तायां वाचि', 'वस निवासे', — इन धातुओं से परे (क्त्वा प्रत्यय कित्वत् होता है)।

...मृताः — VI. ii. 116
देखें — जरमर० VI. ii. 116

...मृद... — I. ii. 7
देखें — मृडमृदगुधकुषक्लिशवदवसः I. ii. 7

मृदः — V. iv. 39
मृद् प्रातिपदिक से (स्वार्थ में तिकन् प्रत्यय होता है)।

मृषः — I. ii. 20
(क्षमा अर्थ में वर्तमान) मृष् धातु से परे (सेट् निष्ठा प्रत्यय कित् नहीं होता है)।

मृषः — I. iii. 82
(परि उपसर्ग से उत्तर) 'मृष्' धातु से (परस्मैपद होता है)।

...मृषि... — I. ii. 25
देखें — तृषिमृषिकृशेः I. ii. 25

...मृषोद्य... — III. i. 114.
देखें — राजसूयसूर्य० III. i. 114

मेः — III. iv. 89
(लोडादेश जो) मिप्, उसके स्थान में (नि आदेश हो जाता है)।

मेघ... — III. ii. 43
देखें — मेघर्त्तिभयेषु III. ii. 43

मेघर्त्तिभयेषु — III. ii. 43
मेघ, ऋति, भय — इन (कर्मों) के उपपद रहते (कृञ् धातु से खच् प्रत्यय होता है)।

...मेघेभ्यः — III. i. 17
देखें — शब्दवैरकलहा० III. i. 17

मेजन्तः — I. i. 38
मकारान्त तथा एजन्त (कृत्) शब्द (अव्ययसंज्ञक होते हैं)।

...मेधयोः — V. iv. 122
देखें — प्रजामेधयोः V. iv. 122

...मेधा... — V. ii. 121
देखें — अस्मायामेधा० V. ii. 121

...मैत्रेय... — VI. iv. 174
देखें — दाण्डिनायन० VI. iv. 174

...मैथुनिकयोः — IV. iii. 124
देखें — वैरमैथुनिकयोः IV. iii. 124

...मैथुनेच्छा... — IV. i. 42
देखें — वृत्त्यमत्रावपना० IV. i. 42

मैरेये — VI. ii. 70
मैरेय शब्द उत्तरपद रहते (उसके उपादानकारणवाची पूर्वपद को आद्युदात्त होता है)।

मैरेय = एक प्रकार का मादक पेय।

...मोः — VIII. iv. 22
देखें — वमोः VIII. iv. 22

...मौ — VII. ii. 97
देखें — त्वमौ VII. ii. 97

...मौ — VIII. i. 23
देखें — त्वामौ VIII. i. 23

...म्ना... — VII. iii. 78
देखें — पाघ्राध्मा० VII. iii. 78

...म्रद... — VII. iv. 95
देखें — स्मृदृत्वर० VII. iv. 95

म्रियतेः — I. iii. 61
(लुङ्, लिङ् लकार में तथा शित् विषय में) 'मृङ् प्राणत्यागे' धातु से (आत्मनेपद होता है)।

...मुचु... — III. i. 58
देखें — जृस्तम्भु० III. i. 58

...म्लिष्ट...— VII. ii. 18
देखें — क्षुब्धस्वान्त० VII. ii. 18

...म्लुचु... — III. i. 58
देखें — जृस्तम्भु० III. i. 58

म्वोः — VI. iv. 107
(असंयोग पूर्व उकारान्त प्रत्यय का विकल्प से लोप भी होता है), मकारादि तथा वकारादि प्रत्ययों के परे रहते।

म्वोः — VIII. ii. 65
मकार तथा वकार परे रहते (भी मकारान्त धातु को नकारादेश होता है)।

य

य् — प्रत्याहारसूत्र
आचार्य पाणिनि द्वारा अपने बारहवें प्रत्याहारसूत्र में इत्सञ्ज्ञार्थ पठित वर्ण।

य्... — I. iv. 18
देखें — यचि I. iv. 18

य्... — VII. iii. 3
देखें — य्वाभ्याम् VII. iii. 3

य्... — VIII. ii. 108
देखें — य्वौ VIII. ii. 108

य्... — VIII. iii. 87
देखें — यच्परः VIII. iii. 87

य — प्रत्याहारसूत्र V
आचार्य पाणिनि द्वारा अपने पञ्चम प्रत्याहारसूत्र में पठित द्वितीय वर्ण।

पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का ग्यारहवां वर्ण।

...य... — IV. ii. 79
देखें — वुञ्छण्कठ० IV. ii. 79

य... — IV. ii. 94
देखें — यखञौ IV. ii. 94

य... — VI. ii. 156
देखें — ययतोः VI. ii. 156

य... — VII. iii. 46
देखें — यकपूर्वायाः VII. iii. 46

यः — III. ii. 152
यकारान्त धातुओं से (तच्छीलादि कर्ता हों तो वर्तमानकाल में युच् प्रत्यय नहीं होता है)।

यः — III. ii. 176
(यङन्त) 'या प्रापणे' धातु से (भी तच्छीलादि कर्ता हों, तो वर्तमानकाल में वरच् प्रत्यय होता है)।

यः — IV. ii. 48
(षष्ठीसमर्थ पाशादि प्रातिपदिकों से समूह अर्थ में) य प्रत्यय होता है।

यः — IV. iv. 105
(सप्तमीसमर्थ सभा प्रातिपदिक से साधु अर्थ में) य प्रत्यय होता है।

यः — IV. iv. 109
(सप्तमीसमर्थ सोदर प्रातिपदिक से 'शयन किया हुआ' अर्थ में) य प्रत्यय होता है।

यः — IV. iv. 137

(द्वितीयासमर्थ सोम प्रातिपदिक से 'अर्हति' अर्थ में) य प्रत्यय होता है।

यः — V. i. 125

(षष्ठीसमर्थ सखि प्रातिपदिक से भाव और कर्म अर्थ में) य प्रत्यय होता है।

यः — VI. i. 37

(लिट् लकार के परे रहते वय् धातु के) यकार को (सम्प्रसारण नहीं होता है)।

यः — VI. iv. 149

(भसञ्ज्ञक अङ्ग के उपधा) यकार का (लोप होता है; ईकार तथा तद्धित के परे रहते; यदि वह य् सूर्य, तिष्य, अगस्त्य तथा मत्स्य-सम्बन्धी हो)।

यः — VII. i. 13

(अकारान्त अङ्ग से उत्तर 'ङे' के स्थान में) य आदेश होता है।

यः — VII. ii. 89

(कोई आदेश जिसको नहीं हुआ है, ऐसी अजादि विभक्ति के परे रहते युष्मद्, अस्मद् अङ्ग को) यकारादेश होता है।

यः — VII. ii. 110

(इदम् के दकार के स्थान में) यकार आदेश होता है; (सु विभक्ति परे रहते)।

यः — VIII. iii. 17

(भो, भगो, अघो तथा अवर्ण पूर्व में है जिस रु के, उस रु के रेफ को) यकार आदेश होता है, (अश् परे रहते)।

यक् — III. i. 27

(कण्डूञ् आदि धातुओं से) यक् प्रत्यय होता है।

यक् — III. i. 67

(धातु मात्र से) यक् प्रत्यय होता है, (भाव और कर्मवाची सार्वधातुक प्रत्यय परे रहते)।

यक्... — III. i. 89

देखें — **यक्चिणौ III. i. 89**

यक् — V. i. 127

(षष्ठीसमर्थ पति शब्द अन्तवाले तथा पुरोहितादि प्रातिपदिकों से भाव और कर्म अर्थों में) यक् प्रत्यय होता है।

यक् — VII. i. 47

(वेद-विषय में क्त्वा को) यक् आगम होता है।

...यक्... — VII. iv. 28

देखें — **शयग्लिङ्क्षु VII. iv. 28**

...यकः — IV. iii. 94

देखें — **ढक्छण्ढ्व्यकः IV. iii. 94**

यकन् — VI. i. 61

(वेदविषय में यकृत् शब्द के स्थान में) यकन् आदेश हो जाता है, (शस् प्रकार वाले प्रत्ययों के परे रहते)।

यकपूर्वायाः — VII. iii. 46

यकार तथा ककार पूर्ववाले (आकार) के स्थान में (जो प्रत्ययस्थित ककार से पूर्व अकार, उसके स्थान में उदीच्य आचार्यों के मत में इकारादेश नहीं होता)।

यकि — VI. iv. 44

(तनु अङ्ग को विकल्प से) यक् परे रहते (आकारादेश होता है)।

यक्चिणौ — III. i. 89

यक् और चिण् (जो दुह, स्नु और नम् को कर्मवद्भाव में कहे गये हैं, वे नहीं होते)।

यखञौ — IV. ii. 93

(ग्राम शब्द से) य और खञ् प्रत्यय होते हैं।

यङ् — III. i. 22

(एकाच् हलादि धातु से क्रिया के बार-बार होने या अतिशय अर्थ में) यङ् प्रत्यय होता है।

यङ्... — VII. iv. 82

देखें — **यङ्लुकोः VII. iv. 82**

यङः — III. ii. 166

(यज, जप, दश— इन) यङन्त धातुओं से (तच्छीलादि कर्ता हो, तो वर्तमानकाल में ऊक प्रत्यय होता है)।

यङः — III. ii. 176

यङन्त ('या प्रापणे') धातु से (भी तच्छीलादि कर्ता हों, तो वर्तमानकाल में वरच् प्रत्यय होता है)।

यङः — IV. i. 74

यङन्त = ञ्यङ् या ष्यङ् अन्तवाले प्रातिपदिकों से (स्त्रीलिङ्ग में चाप् प्रत्यय होता है)।

यङः — II. iv. 74

(अच् प्रत्यय के परे रहते) यङ् का (लुक् हो जाता है, चकार से बहुल करके अच् परे न हो तो भी लुक् हो जाता है)।

यङः — VII. iii. 94

यङ् से उत्तर (हलादि पित् सार्वधातुक को विकल्प से ईट् आगम होता है)।

यङि — VI. i. 19

(ञिष्वप्, स्यमु तथा व्येञ् धातुओं को सम्प्रसारण हो जाता है) यङ् प्रत्यय के परे रहते।

यङि — VII. iv. 30

(ऋ तथा संयोग आदि वाले ऋकारान्त अङ्ग को) यङ् परे रहते (गुण होता है)।

यङि — VII. iv. 63

(कुङ् अङ्ग के अभ्यास को) यङ् परे रहते (चवर्गादेश नहीं होता)।

यङि — VIII. ii. 20

(गृ धातु के रेफ को) यङ् परे रहते (लत्व होता है)।

यङि — VIII. iii. 112

(इण् तथा कवर्ग से उत्तर सिच् के सकार को) यङ् परे रहते (मूर्धन्य आदेश नहीं होता)।

...यङोः — VI. i. 9

देखें — सन्यङोः VI. i. 9

...यङोः — VI. i. 29

देखें — लिड्यङोः VI. i. 29

यङ्लुकोः — VII. iv. 82

यङ् तथा यङ्लुक् के परे रहते (इगन्त अभ्यास को गुण होता है)।

यचि — I. iv. 18

(सर्वनामस्थानभिन्न) यकारादि और अजादि (स्वादि) प्रत्ययों के परे रहते (पूर्व की भसंज्ञा होती है)।

यच्च... — III. iii. 148

देखें — यच्चयत्रयोः III. iii. 148

यच्चयत्रयोः — III. iii. 148

(अनवक्लृप्ति = असम्भावना, अमर्ष = अक्षमा गम्यमान हो तो) यच्च, यत्र ये अव्यय उपपद रहते (धातु से लिङ् प्रत्यय होता है)।

...यच्छ... — VII. iii. 78

देखें — पिबजिघ्र० VII. iii. 78

यच्परः — VIII. iii. 87

(उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर तथा प्रादुस् शब्द से उत्तर) यकारपरक एवं अच्परक (अस् धातु के सकार को मूर्धन्य आदेश होता है)।

यज... — III. ii. 166

देखें — यजजपदशाम् III. ii. 166

यज... — III. iii. 90

देखें — यजयाच० III. iii. 90

यज... — VII. iii. 66

देखें — यजयाच० VII. iii. 66

...यज... — VIII. ii. 36

देखें — व्रश्चभ्रस्ज० VIII. ii. 36

यजः — III. ii. 72

यज् धातु से (अव उपपद रहते मन्त्र विषय में 'ण्विन्' प्रत्यय होता है)।

यजः — III. ii. 85

यज् धातु से (करण उपपद रहते णिनि प्रत्यय होता है, भूतकाल में)।

यजजपदशाम् — III. ii. 166

यज, जप, दश् — इन (यङन्त) धातुओं से (तच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमानकाल में ऊक प्रत्यय होता है)।

यजध्वैनम् — VII. i. 43

(वेद-विषय में) 'यजध्वैनम्' यह शब्द भी निपातन किया जाता है।

यजयाचयतविच्छप्रच्छरक्षः — III. iii. 90

यज्, याच, यत, विच्छ, प्रच्छ तथा रक्ष् धातुओं से (कर्तृ-भिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में नङ् प्रत्यय होता है)।

यजयाचरुचप्रवचर्चः — VII. iii. 66

यज, टुयाचृ, रुच, प्रपूर्वक वच तथा ऋच् — इन अङ्गों के (चकार, जकार को भी ण्य प्रत्यय परे रहते कवर्गादेश नहीं होता)।

...यजादीनाम् — VI. i. 15
देखें — वचिस्वपि० VI. i. 15

यजुषि — VI. i. 113
यजुर्वेद-विषय में (एङन्त उरः शब्द को प्रकृतिभाव होता है, अकार परे रहते)।

यजुषि — VII. iv. 38
(देव तथा सुम्न अङ्ग को क्यच् परे रहते आकारादेश होता है) यजुर्वेद की (काठक शाखा में)।

यजुषि — VIII. iii. 104
यजुर्वेद में (तकारादि युष्मद्, तत् तथा ततक्षुस् परे रहते इण् तथा कवर्ग से उत्तर सकार को कुछ आचार्यों के मत में मूर्धन्य आदेश होता है)।

यजेः — II. iii. 63
यज् धातु के (करण कारक में भी वेदविषय में बहुल करके षष्ठी विभक्ति होती है)।

...यजोः — III. ii. 103
देखें — सुयजोः III. ii. 103

...यजोः — III. ii. 128
देखें — पूङ्यजोः III. ii. 128

...यजोः — III. iii. 94
देखें — व्रजयजोः III. iii. 94

यज्ञ... — V. i. 70
देखें — यज्ञर्त्विग्भ्याम् V. i. 70

यज्ञकर्मणि — I. ii. 34
यज्ञकर्म में (उदात्त, अनुदात्त तथा स्वरित स्वरों को एकश्रुति हो जाती है; जप, न्यूङ्ख = आश्वलायन श्रौतसूत्र-पठित निगदविशेष तथा साम = सामवेद के गान को छोड़कर)।

यज्ञकर्मणि — VIII. ii. 88
('ये' शब्द को) यज्ञ की क्रिया में (प्लुत उदात्त होता है)।

...यज्ञपात्रप्रयोग... — VIII. i. 15
देखें — रहस्यमर्यादा० VIII. i. 15

यज्ञर्त्विग्भ्याम् — V. i. 70
(द्वितीयासमर्थ) यज्ञ तथा ऋत्विग् प्रातिपदिकों से ('समर्थ है' अर्थ में यथासङ्ख्य करके घ तथा खञ् प्रत्यय होते हैं)।

यज्ञसंयोगे — III. ii. 132
यज्ञ से संयुक्त अभिषव में वर्तमान (षुञ् धातु से वर्तमान काल में शतृ प्रत्यय होता है)।

यज्ञसंयोगे — IV. i. 33
(पति शब्द से स्त्रीलिङ्ग में) यज्ञसंयोग गम्यमान होने पर (ङीप् प्रत्यय होता है और नकार अन्तादेश भी हो जाता है)।

यज्ञाख्येभ्यः — V. i. 94
(षष्ठीसमर्थ) यज्ञ की आख्यावाले प्रातिपदिकों से (भी 'दक्षिणा' अर्थ में ठञ् प्रत्यय होता है)।

यज्ञाङ्गे — VII. iii. 62
(प्रयाज तथा अनुयाज शब्द) यज्ञ का अंग हों तो (निपातन किये जाते हैं)।

यज्ञे — III. iii. 31
यज्ञविषय में (सम् पूर्वक स्तु धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञाविषय में घञ् प्रत्यय होता है)।

यज्ञे — III. iii. 47
यज्ञविषय में (परि पूर्वक ग्रह् धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

यज्ञे — VI. iv. 54
यज्ञकर्म में (इडादि तृच् परे रहते 'शमिता' यह निपातन किया जाता है)।

...यज्ञेभ्यः — IV. iii. 68
देखें — क्रतुयज्ञेभ्यः IV. iii. 68

यञ्... — II. iv. 64
देखें — यञञोः II. iv. 64

यञ्... — IV. i. 101
देखें — यञिञोः IV. i. 101

यञ् — IV. i. 105
(गर्गादि षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिकों से गोत्रापत्य में) यञ् प्रत्यय होता है।

यञ् — IV. ii. 39
(षष्ठीसमर्थ केदार शब्द से) यञ् प्रत्यय होता है (तथा वुञ् भी)।

यञ्... — IV. ii. 47
देखें — यञ्छौ IV. ii. 47

यञ् — IV. iii. 10
(समुद्र के समीप अर्थ में वर्तमान जो द्वीप प्रातिपदिक, उससे) शैषिक यञ् प्रत्यय होता है।

...यञ्... — IV. iii. 126
देखें — अञ्यञिञाम् IV. iii. 126

यञ्... — IV. iii. 165
देखें — यञञौ IV. iii. 165

यञ् — V. iii. 118
(अभिजित्, विदभृत्, शालावत्, शिखावत्, शमीवत्, ऊर्णावत् तथा श्रुमत् सम्बन्धी जो अण् प्रत्ययान्त शब्द, उनसे स्वार्थ में) यञ् प्रत्यय होता है।

यञः — IV. i. 16
(अनुपसर्जन) यञन्त प्रातिपदिक से (भी स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय होता है)।

यञञोः — II. iv. 64
(गोत्र में विहित) यञ् और अञ् प्रत्ययों का (भी तत्कृत बहुत्व में लुक् होता है, स्त्रीलिङ्ग को छोड़कर)।

यञञौ — IV. iii. 165
(षष्ठीसमर्थ कंसीय, परशव्य प्रातिपदिकों से विकार अर्थ में यथासङ्ख्य करके) यञ् और अञ् प्रत्यय होते हैं, (तथा प्रत्यय के साथ-साथ कंसीय और परशव्य का लुक् भी होता है)।

यञि — VII. iii. 101
(अकारान्त अङ्ग को दीर्घ होता है), यञ् प्रत्याहार आदि वाले (सार्वधातुक प्रत्यय) के परे रहते।

यञिञोः — IV. i. 101
(गोत्र में विहित जो) यञ् और इञ् प्रत्यय, तदन्त से (भी 'तस्यापत्यम्' अर्थ में फक् प्रत्यय होता है)।

यञ्छौ - IV. ii. 47
(समूहार्थ में षष्ठीसमर्थ केश, अश्व प्रातिपदिकों से यथासङ्ख्य) यञ् और छ प्रत्यय होते हैं, (पक्ष में विकल्प से ढक् होता है)।

यड्ढकञौ — IV. i. 140
(अविद्यमान पूर्वपद वाले कुल शब्द से विकल्प से) यत् और ढकञ् प्रत्यय होते हैं, (पक्ष में ख)।

यड्ढकौ — IV. iv. 77
(द्वितीयासमर्थ धुर् प्रातिपदिक से 'ढोता है' अर्थ में) यत् और ढक् प्रत्यय होते हैं।

यण् — VI. i. 74
(इक् = इ, उ, ऋ, लृ के स्थान में यथासङ्ख्य करके) यण् = य् व् र् ल् आदेश होते हैं; (अच् परे रहते, संहिता-विषय में)।

यण्— VI. iv. 81
(इक् अङ्ग को) यणादेश होता है, (अच् परे रहते)।

...यण्... — VII. iv. 77
देखें — पुयण्जि VII. iv. 77

यणः — I. i. 44
यण् = य् र् ल् व् के स्थान में (हुआ या होने वाला इक् = इ, उ, ऋ, लृ —उसकी सम्प्रसारणसंज्ञा होती है)।

यणः — VIII. ii. 4
(उदात्त तथा स्वरित के स्थान में वर्तमान) यण् से उत्तर (अनुदात्त के स्थान में स्वरित आदेश होता है)।

यणादिपरम् — VI. iv. 156
(स्थूल, दूर, युव, ह्रस्व, क्षिप्र, क्षुद्र – इन अङ्गों का) जो यणादि भाग, उसका (लोप होता है; इष्ठन्, इमनिच् तथा ईयसुन् परे रहते तथा उस यणादि से पूर्व को गुण होता है)।

यण्वतः — VIII. ii. 43
(संयोग आदि वाले आकारान्त एवं) यण्वान् धातु से उत्तर (निष्ठा के तकार को नकारादेश होता है)।

यत् — I. iii. 67
(अण्यन्तावस्था में) जो (कर्म, वही यदि ण्यन्तावस्था में कर्ता बन रहा हो तो ऐसी ण्यन्त धातु से आत्मनेपद होता है; आध्यान = उत्कण्ठापूर्वक स्मरण अर्थ को छोड़कर)।

यत्... — III. i. 97
(अजन्त धातुओं से) यत् प्रत्यय होता है।

...यत्... — III. ii. 21
देखें — दिवाविभा० III. ii. 21

यत् – IV. i. 137

(राजन् तथा श्वशुर प्रातिपदिकों से अपत्यार्थ में) यत् प्रत्यय होता है।

यत्... – IV. i. 140
देखें – यड्ढकञौ IV. i. 140

यत् – IV. ii. 16

(सप्तमीसमर्थ शूल तथा उखा प्रातिपदिकों से 'सस्कृतं भक्षाः' अर्थ में यत् प्रत्यय होता है।

यत् – IV. ii. 30

(प्रथमासमर्थ देवतावाची वायु, ऋतु, पितृ तथा उषस् प्रातिपदिकों से षष्ठ्यर्थ में) यत् प्रत्यय होता है।

यत् – IV. ii. 100

(दिव्, प्राच्, अपाच्, उदच्, प्रतीच्— इन प्रातिपदिकों से शैषिक) यत् प्रत्यय होता है।

यत् – IV. iii. 4

(अर्ध प्रातिपदिक से) शैषिक यत् प्रत्यय होता है।

यत् – IV. iii. 54

(सप्तमीसमर्थ दिगादि प्रातिपदिकों से भव अर्थ में) यत् प्रत्यय होता है)।

यत्... – IV. iii. 64
देखें – यत्खौ IV. iii. 64

यत्... – IV. iii. 71
देखें – यदणौ IV. iii. 71

यत् – IV. iii. 79

(पञ्चमीसमर्थ पितृ प्रातिपदिक से 'आगत' अर्थ में) यत् प्रत्यय होता है (तथा चकार से ढञ् प्रत्यय होता है)।

यत् – IV. iii. 114

(तृतीयासमर्थ उरस् शब्द से एकदिक् अर्थ में) यत् प्रत्यय (तथा चकार से तसि प्रत्यय भी) होता है।

यत् – IV. iii. 120

(षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिक से 'इदम्' अर्थ में) यत् प्रत्यय होता है।

यत् – IV. iii. 157

(षष्ठीसमर्थ गो तथा पयस् शब्दों से विकार तथा अवयव अर्थों में) यत् प्रत्यय होता है।

यत् – IV. iv. 75

(यहाँ से लेकर 'तस्मै हितम्' के पहले कहे जाने वाले अर्थों में सामान्येन) यत् प्रत्यय का अधिकार रहेगा।

यत्... – IV. iv. 77
देखें – यड्ढकौ IV. iv. 77

यत् – IV. iv. 116

(सप्तमीसमर्थ अग्र प्रातिपदिक से वेदविषयक भवार्थ में) यत् प्रत्यय होता है।

यत्... – IV. iv. 130
देखें – यत्खौ IV. iv. 130

यत् – V. i. 2

(उवर्णान्त तथा गवादिगण-पठित प्रातिपदिकों से 'क्रीत' अर्थ से पहले पहले कहे हुये अर्थों में) यत् प्रत्यय होता है।

यत् – V. i. 6

(चतुर्थीसमर्थ शरीर के अवयववाची प्रातिपदिकों से 'हित' अर्थ में) यत् प्रत्यय होता है।

यत् – V. i. 34

(अध्यर्द्ध शब्द पूर्ववाले तथा द्विगुसञ्ज्ञक पण, पाद, माष और शतशब्दान्त प्रातिपदिकों से 'तदर्हति'-पर्यन्त कथित अर्थों में) यत् प्रत्यय होता है।

यत् – V. i. 38

(सङ्ख्यावाची, परिमाणवाची तथा अश्वादि प्रातिपदिकों को छोड़कर षष्ठीसमर्थ गो शब्द तथा दो अच् वाले प्रातिपदिकों से 'कारण' अर्थ में) यत् प्रत्यय होता है, (यदि वह कारण संयोग अथवा उत्पात हो तो)।

यत् – V. i. 48

(प्रथमासमर्थ भाग प्रातिपदिक से सप्तम्यर्थ में) यत् प्रत्यय (तथा ठन् प्रत्यय होते हैं, यदि 'वृद्धि' = व्याज के रूप में दिया जाने वाला द्रव्य, 'आय' = जमींदारों का भाग, 'लाभ' = मूल द्रव्य के अतिरिक्त प्राप्य द्रव्य, 'शुल्क' = राजा का भाग तथा 'उपदा' = घूस — ये 'दिया जाता है' क्रिया के कर्म हों तो)।

यत् – V. i. 64

(द्वितीयासमर्थ शीर्षच्छेद प्रातिपदिक से 'नित्य ही समर्थ है' अर्थ में) यत् प्रत्यय (भी) होता है, (यथाविहित ढक् भी)।

यत्... — V. i. 80
देखें— **यत्खञौ V. i. 80**

यत् — V. i. 99

(तृतीयासमर्थ कर्मन् तथा वेष प्रातिपदिकों से 'शोभित किया' अर्थ में) यत् प्रत्यय होता है।

यत् — V. i. 101

(चतुर्थीसमर्थ योग प्रातिपदिक से 'शक्त है' अर्थ में) यत् प्रत्यय (तथा ठञ् प्रत्यय) होता है।

यत् — V. i. 106

(प्रथमासमर्थ काल प्रातिपदिकों से षष्ठ्यर्थ में) यत् प्रत्यय होता है, (यदि वह प्रथमासमर्थ काल प्रातिपदिक प्राप्त समानाधिकरण वाला हो तो)।

यत् — V. i. 124

(षष्ठीसमर्थ स्तेन प्रातिपदिक से भाव और कर्म अर्थ में) यत् प्रत्यय होता है (तथा स्तेन शब्द के न का लोप भी हो जाता है)।

यत् — V. ii. 3

(षष्ठीसमर्थ धान्यविशेषवाची यव, यवक, तथा षष्टिक प्रातिपदिकों से 'उत्पत्तिस्थान' अभिधेय हो तो) यत् प्रत्यय होता है, (यदि वह उत्पत्तिस्थान खेत हो तो)।

यत्... — V. ii. 16
देखें — **यत्खौ V. ii. 16**

यत्... — V. ii. 39
देखें — **यत्तदेतेभ्यः V. ii. 39**

...यत्... — V. iii. 15
देखें — **सर्वैकान्य० V. iii. 15**

...यत्... — V. iii. 92
देखें — **किंयत्तदोः V. iii. 92**

यत् — V. iii. 103

(शाखादि प्रातिपदिकों से इवार्थ में) यत् प्रत्यय होता है।

यत् — V. iv. 24

(देवता शब्द अन्त वाले प्रातिपदिक से 'उसके लिये यह' अर्थ में यत् प्रत्यय होता है।

...यत्... — VI. iii. 49
देखें — **लेखयदण्० VI. iii. 49**

यत्... — VIII. i. 30
देखें — **यद्यदि० VIII. i. 30**

यत्... — VIII. i. 56
देखें — **यद्धितुपरम् VIII. i. 56**

...यत... — III. iii. 90
देखें — **यजयाच० III. iii. 90**

यतः — II. iii. 41

जिससे (निर्धारण हो, उससे भी षष्ठी और सप्तमी विभक्ति होती है)।

यतः — VI. i. 207

(दो अचों वाले) यत्प्रत्ययान्त शब्दों को (आद्युदात्त होता है, नौ शब्द को छोड़कर)।

यति — VI. iii. 52

(अतदर्थ) यत् प्रत्यय के परे रहते (पाद शब्द को पद् आदेश होता है)।

यति — VI. iv. 65

(आकारान्त अङ्ग को ईकारादेश होता है), यत् प्रत्यय के परे रहते।

...यतोः — VI. ii. 156
देखें — **ययतोः VI. ii. 156**

...यतौ — IV. i. 161
देखें — **अञ्यतौ IV. i. 161**

...यतौ — V. i. 21
देखें — **ठन्यतौ V. i. 21**

...यतौ — V. i. 97
देखें — **णयतौ V. i. 97**

यत्खञौ — V. i. 80

(द्वितीयासमर्थ कालवाची मास प्रातिपदिक से ''हो चुका' अर्थ में अवस्था गम्यमान होने पर) यत् और खञ् प्रत्यय होते हैं।

यत्खौ — IV. iii. 64

(सप्तमीसमर्थ वर्गान्त प्रातिपदिक से अशब्द प्रत्ययार्थ अभिधेय होने पर भव अर्थ में विकल्प से) यत् तथा ख प्रत्यय होते है।

यत्खौ — IV. iv. 130

(ओजस् प्रातिपदिक से मत्वर्थ में) यत् और ख प्रत्यय होते हैं; (दिन अभिधेय हो तो, वेद-विषय में)।

यत्खौ — V. ii. 16

(द्वितीयासमर्थ अध्वन् प्रातिपदिक से 'पर्याप्त जाता है' अर्थ में) यत् और ख प्रत्यय होते हैं।

यत्तदेतेभ्यः — V. ii. 39

(प्रथमासमर्थ परिमाण समानाधिकरणवाची) यत्, तत् तथा एतद् प्रातिपदिकों से (षष्ठ्यर्थ में वतुप् प्रत्यय होता है)।

...यत्न... — I. iii. 47
देखें — भासनोपसम्भाषा० I. iii. 47

यत्र — VI. i. 155

जिस अनुदात्त के परे रहते (उदात्त का लोप होता है, उस अनुदात्त को भी आदि उदात्त हो जाता है)।

...यत्रयुक्तम् — VIII. i. 30
देखें — यद्यदि० VIII. i. 30

...यत्रयोः — III. iii. 148
देखें — यच्चयत्रयोः III. iii. 148

यत्समया — II. i. 14

जिसका समीपवाची (अनु सुबन्त हो, उस लक्षणवाची सुबन्त के साथ विकल्प करके 'अनु' समास को प्राप्त होता है और वह अव्ययीभाव समास होता है)।

...यथा... — II. i. 6
देखें — विभक्तिसमीपसमृद्धि० II. i.

यथा — II. i. 7

'यथा' यह अव्ययपद (असादृश्य अर्थ में समर्थ सुबन्त के साथ समास को प्राप्त होता है और वह समास अव्ययीभाव-सञ्ज्ञक होता है)।

यथा... — III. iv. 28
देखें — यथातथयोः III. iv. 28

यथाकथाच... — V. i. 97
देखें — यथाकथाचहस्ताभ्याम् V. i. 97

यथाकथाचहस्ताभ्याम् — V. i. 97

(तृतीयासमर्थ) यथाकथाच तथा हस्त प्रातिपदिकों से (यथासङ्ख्य करके ण और यत् प्रत्यय होते हैं, 'दिया जाता है' और 'कार्य' अर्थों में)।

यथातथ... — VII. iii. 31
देखें — यथातथयथापुरयोः VII. iii. 31

यथातथयथापुरयोः — VII. iii. 31

(नञ् से उत्तर) यथातथ तथा यथापुर अङ्गों के (पूर्वपद एवं उत्तरपद के शब्दों में आदि अच् को पर्याय से वृद्धि होती है; ञित्, णित् तथा कित् तद्धित परे रहते)।

यथातथयोः — III. iv. 28

यथा और तथा शब्द उपपद रहते (निन्दा से प्रत्युत्तर गम्यमान हो तो कृञ् धातु से णमुल् प्रत्यय होता है, यदि कृञ् का अप्रयोग सिद्ध हो)।

...यथापुरयोः — VII. iii. 31
देखें — यथातथयथापुरयोः VII. iii. 31

...यथाध्याम् — VIII. i. 36
देखें — यावद्यथाध्याम् VIII. i. 36

यथामुख... — V. ii. 6
देखें — यथामुखसम्मुखस्य V. ii. 6

यथामुखसम्मुखस्य — V. ii. 6

षष्ठीसमर्थ यथामुख तथा सम्मुख प्रातिपदिकों से ('दर्शन' = शीशा अर्थ में ख प्रत्यय होता है)।

यथायथम् — VIII. i. 14

(यथास्वम् अर्थ में) यथायथ शब्द निपातन है, (तथा इसे कर्मधारयवत् कार्य भी होता है)।

यथाविधि — III. iv. 4

(पूर्व के लोट्-विधायक सूत्र में) जिस धातु से लोट् का विधान किया गया हो, पश्चात् उसी धातु का (अनुप्रयोग होता है)।

यथाविधि — III. iv. 46

(कषादि धातुओं में) यथाविधि (अनुप्रयोग होता है) अर्थात् जिस धातु से णमुल् का विधान करेंगे, उसका ही पश्चात् प्रयोग होगा।

यथासङ्ख्यम् — I. iii. 10

(सम सङ्ख्या वाले शब्दों के स्थान में पीछे आने वाले शब्द) यथाक्रम होते है।

यथास्वे — VIII. i. 14

यथास्वम् अर्थ में (यथायथम् शब्द निपातन है तथा इसे कर्मधारयवत् कार्य भी होता है)।

यथोपदिष्टम् — VI. iii. 108

(पृषोदर इत्यादि शब्दरूप) शिष्टों के द्वारा जिस प्रकार उच्चरित हैं, वैसे ही साधु माने जाते है।

यदणौ — IV. iii. 71

(षष्ठी-सप्तमीसमर्थ व्याख्यातव्यनाम छन्दस् प्रातिपदिक से भव और व्याख्यान अर्थों में) यत् और अण् प्रत्यय होते हैं।

यदि — III. ii. 113

(स्मरणार्थक) यत् शब्द उपपद हो तो (अनद्यतन भूतकाल में धातु से लृट् प्रत्यय नहीं होता)।

यदि — III. iii. 168

(काल, समय, वेला और) यत् शब्द उपपद हो (तो धातु से लिङ् प्रत्यय होता है)।

यदि — III. iv. 23

(समानकर्तावाले धातुओं में से पूर्वकालिक धात्वर्थ में वर्तमान धातु से) यद् शब्द के उपपद होने पर (क्त्वा, णमुल् प्रत्यय नहीं होते, यदि अन्य वाक्य की आकाङ्क्षा न रखनेवाला वाक्य अभिधेय हो)।

...यदि... — VIII. i. 30

देखें — **यद्यदि० VIII. i. 30**

...यदोः — III. iii. 147

देखें — **जातुयदोः III. iii. 147**

यद्धितुपरम् — VIII. i. 56

यत्परक, हिपरक तथा तुपरक (तिङ् को वेद-विषय में अनुदात्त नहीं होता)।

यद्यदिहन्तकुविन्नेच्चेच्चण्कच्चिद्यत्रयुक्तम् — VIII. i. 30

यत्, यदि, हन्त, कुवित्, नेत्, चेत्, चण्, कच्चित्, यत्र — इन निपातों से युक्त (तिङन्त को अनुदात्त नहीं होता)।

यद्वृत्तात् — VIII. i. 66

यद् शब्द से घटित पद से अव्यवहित अथवा व्यवहित उत्तर (तिङन्त को नित्य ही अनुदात्त नहीं होता)।

यन् — IV. ii. 41

(षष्ठीसमर्थ ब्राह्मण, माणव तथा वाडव प्रातिपदिकों से) यन् प्रत्यय होता है।

यन् — IV. iv. 114

(सप्तमीसमर्थ सगर्भ, सयूथ, सनुत — इन प्रातिपदिकों से वेदविषयक भवार्थ में) यन् प्रत्यय होता है।

...यन्त... — VII. ii. 5

देखें — **ह्म्यन्तक्षण० VII. ii. 5**

यप् — V. i. 81

(द्विगुसञ्ज्ञक मासशब्दान्त प्रातिपदिक से आस्था अभिधेय हो तो 'हो चुका' अर्थ में) यप् प्रत्यय होता है।

यप् — V. ii. 120

(आहत और प्रशंसा अर्थों में वर्तमान रूप प्रातिपदिक से 'मत्वर्थ' में) यप् प्रत्यय होता है।

यम् — I. iv. 32

(करणभूत कर्म के द्वारा) जिसको (अभिप्रेत किया जाये, उस कारक की सम्प्रदान संज्ञा होती है)।

यम् — I. iv. 36

(क्रुध, द्रुह, ईर्ष्य तथा असूय —इन अर्थों वाली धातुओं के प्रयोग में) जिसके (ऊपर कोप किया जाये, उस कारक की सम्प्रदान संज्ञा होती है)।

यम... — I. iii. 28

देखें — **यमहनः I. iii. 28**

यम... — VII. ii. 73

देखें — **यमरमनमाताम् VII. II. 73**

यमः — I. ii. 15

(गन्धन अर्थ में वर्तमान) यम् धातु से परे (आत्मनेपद विषय में सिच् प्रत्यय कित्वत् होता है)।

यमः — I. iii. 56

(पाणिग्रहण अर्थ में वर्तमान उप पूर्वक) यम् धातु से (आत्मनेपद होता है)।

यमः — I. iii. 75

(सम्, उत् एवं आङ् से उत्तर) यम् धातु से (आत्मनेपद होता है; क्रियाफल के कर्ता को मिलने पर, यदि ग्रन्थ-विषयक प्रयोग न हो तो)

...यमः — III. i. 100

देखें — **गदमदचरयमः III. i. 100**

यमः — III. ii. 40

यम् धातु से (वाक् कर्म उपपद रहते व्रत गम्यमान होने पर खच् प्रत्यय होता है)।

यमः — III. iii. 63

(सम्, उप, नि, वि उपसर्ग पूर्वक तथा विना उपसर्ग भी) यम् धातु से (कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में विकल्प से अप् प्रत्यय होता है) पक्ष में घञ्।

यमरमनमाताम् — VII. ii. 73

यम, रमु, णम तथा आकारान्त अङ्ग को (सक् आगम होता है तथा सिच् को परस्मैपद परे रहते इट् का आगम होता है)।

यमहनः — I. iii. 28

(आङ् उपसर्ग से उत्तर अकर्मक) यम् तथा हन् धातुओं से (आत्मनेपद होता है)।

....यमाम् — VII. iii. 77

देखें — इषुगमियमाम् VII. iii. 77

यमाम् — VIII. iv. 63

(हल् से उत्तर) यम् का (यम् परे रहते विकल्प से लोप होता है)।

यमि — VIII. iv. 63

(हल् से उत्तर यम् का) यम् परे रहते (विकल्प से लोप होता है)।

ययतोः — VI. ii. 156

(गुणप्रतिषेध अर्थ में नञ् से उत्तर अतदर्थ में वर्तमान) जो य तथा यत् (तद्धित) प्रत्यय, तदन्त उत्तरपद को (भी अन्त उदात्त होता है)।

ययि — VIII. iv. 57

(अनुस्वार को) यय् प्रत्याहार परे रहते (परसवर्ण आदेश होता है)।

यरः — VIII. iv. 44

(पदान्त) यर् प्रत्याहार को (अनुनासिक परे रहते विकल्प से अनुनासिक आदेश होता है)।

यल् — V. iv. 131

(वेशस् और यशस् आदिवाले भग शब्दान्त प्रातिपदिक से मत्वर्थ में) यल् प्रत्यय होता है, (विदविषय में)।

...यलोप... — I. i. 57

देखें — पदान्तद्विर्वचनवरे० I. i. 57

...यव... — IV. i. 48

देखें — इन्द्रवरुणभव० IV. i. 48

...यव... — V. i. 7

देखें — खलयवमाष० V. i. 7

यव.. — V. ii. 3

देखें — यवयवक० V. ii. 3

...यवक... — V. ii. 3

देखें — यवयवक० V. ii. 3

...यवन... — IV. i. 48

देखें — इन्द्रवरुणभव० IV. i. 48

...यवबुसात् — IV. iii. 48

देखें — कलाप्यश्वत्थ० IV. iii. 48

...यवाभ्याम् — IV. iii. 146

देखें — तिलयवाभ्याम् IV. iii. 146

...यवम् — VI. ii. 78

देखें — गोतन्तियवम् VI. ii. 78

यवयवकषष्टिकात् — V. ii. 3

(षष्ठीसमर्थ धान्यविशेषवाची) यव, यवक तथा षष्टिक प्रातिपदिकों से ('उत्पत्तिस्थान' अभिधेय हो तो यत् प्रत्यय होता है, यदि वह उत्पत्तिस्थान खेत हो तो)।

...यवाग्वोः — IV. ii. 135

देखें—गोयवाग्वोः IV. ii. 135

...यशआदेः — IV. iv. 131

देखें — वेशोयशआदेः IV. iv. 131

...यष्ट्योः — IV. iv. 59

देखें — शक्तियष्ट्योः IV. iv. 59

यसः — III. i. 71

प्रयत्नार्थक यसु धातु से (उपसर्गरहित होने पर विकल्प से श्यन् प्रत्यय होता है, कर्तृवाची सार्वधातुक परे रहने पर)।

...यसः — V. ii. 138

देखें — बभयुस्० V. ii. 138

यस्कादिभ्यः — II. iv. 63

यस्क आदि गणपठित शब्दों से परे (स्त्रीवर्जित गोत्र में विहित प्रत्यय का बहुत्व की विवक्षा में लुक् होता है; यदि उस गोत्र-प्रत्यय के द्वारा किया बहुत्व हो तो)।

यस्मात् — I. iv. 13

जिस (धातु या प्रातिपदिक) से (प्रत्यय का विधान किया जाये, उस प्रत्यय के परे रहते उस धातु या प्रातिपदिक का आदि वर्ण है आदि जिसका, उस समुदाय की अंग संज्ञा होती है)।

यस्मात् — II. iii. 9

जिससे अधिक हो और जिसका सामर्थ्य हो, उसमें कर्मप्रवचनीय के योग में सप्तमी विभक्ति होती है)।

यस्मात् — II. iii. 11

जिससे (प्रतिनिधित्व और जिससे प्रतिदान हो, उससे कर्मप्रवचनीय के योग में 'पञ्चमी' विभक्ति होती है)।

यस्य — I. i. 72

जिस समुदाय के (अचों में आदि अच् वृद्धिसंज्ञक हो, उस समुदाय की वृद्धसंज्ञा होती है)।

यस्य — I. iv. 39

(राध् तथा ईक्ष् धातुओं के प्रयोग में) जिसके विषय में (विविध प्रश्न हों, उस कारक की सम्प्रदान संज्ञा होती है)।

यस्य — II. i. 15

जिसका (विस्तारवाची अनु है उस लक्षणवाची समर्थ सुबन्त के साथ भी अनु विकल्प से समास को प्राप्त होता है और वह अव्ययीभाव समास होता है)।

यस्य — II. ii. 9

(जिससे अधिक हो और) जिसका (सामर्थ्य हो, उसमें कर्मप्रवचनीय के योग में सप्तमी विभक्ति होती है)।

यस्य — II. iii. 37

जिसकी (क्रिया से क्रियान्तर लक्षित होवे, उसमें भी सप्तमी विभक्ति होती है)।

यस्य — VI. iv. 49

(हल् से उत्तर) 'य' का (लोप होता है, आर्धधातुक परे रहते)।

यस्य — VI. iv. 148

(भसञ्ज्ञक) इवर्णान्त तथा अवर्णान्त अङ्ग का (लोप होता है, ईकार तथा तद्धित के परे रहते)।

यस्य — VII. ii. 15

जिस धातु को (कहीं भी इट् विधान विकल्प से किया गया हो, उसको निष्ठा के परे रहते इडागम नहीं होता)।

...या... — VII. i. 39
देखें — सुलुक्० VII. i. 39

या — VII. ii. 80

(अकारान्त अङ्ग से उत्तर सार्वधातुक के) या के स्थान में (इय् आदेश होता है)।

या... — VII. iii. 45
देखें — यासयोः VII. iii. 45

...याच्... — VII. i. 39
देखें — सुलुक्० VII. i. 39

...याच... — III. iii. 90
देखें — यजयाच० III. iii. 90

...याच... — VII. iii. 66
देखें — यजयाच० VII. iii. 66

...याचिताभ्याम् — IV. iv. 21
देखें — अपमित्ययाचिताभ्याम् IV. iv. 21

...याजकादि... — VI. ii. 150
देखें — मन्क्तिन्० VI. ii. 150

याजकादिभिः — II. ii. 9

याजक आदि गण-पठित सुबन्तों के साथ (भी षष्ठ्यन्त सुबन्त का समास होता है और वह तत्पुरुष समास होता है)।

...याज्ञिक... — IV. iii. 128
देखें — छन्दोगौक्थिकयाज्ञिक० IV. iii. 128

याज्यान्तः — VIII. ii. 90

याज्या नाम की ऋचाओं के अन्त की (टि को यज्ञकर्म में प्लुत उदात्त होता है)।

याट् — VII. iii. 113

(आबन्त अङ्ग से उत्तर ङित् प्रत्यय को) याट् आगम होता है।

...यति... — VIII. iv. 17
देखें — गदनद० VIII. iv. 17

...यातूनाम् — IV. iv. 121
देखें — रक्षोयातूनाम् IV. iv. 121

यादेः — VII. iii. 2

(केकय, मित्रयु तथा प्रलय अङ्गों के) य् आदि वाले भाग को (इय आदेश होता है; ञित्, णित्, कित् तद्धित परे रहते)।

यापनायाम् — V. iv. 60

'अतिक्रमण' अर्थ गम्यमान हो तो (समय प्रातिपदिक से डाच् प्रत्यय होता है, कृञ् के योग में)।

याप्ये — V. iii. 47

'निन्दा' अर्थ में वर्तमान (प्रातिपदिकों से पाशप् प्रत्यय होता है)।

यावत् — II. i. 8

'यावत्' यह (अव्ययपद अवधारण = इयत्तापरिच्छेद अर्थ में समर्थ सुबन्त के साथ अव्ययीभाव समास को प्राप्त होता है)।

यावत्... — III. iii. 4

देखें — यावत्पुरानिपातयोः III. iii. 4

यावत्... — VIII. i. 36

देखें — यावद्यथाभ्याम् VIII. i. 36

यावति — III. iv. 30

यावत् शब्द उपपद रहते (विद्लृ लाभे) तथा जीव प्राण-धारणे धातुओं से णमुल् प्रत्यय होता है)।

यावत्पुरानिपातयोः — III. iii. 4

यावत् तथा पुरा निपात उपपद हों तो (भविष्यत् काल में धातु से लट् प्रत्यय होता है)।

यावद्यथाभ्याम् — VIII. i. 36

यावत् तथा यथा से युक्त (तिङन्त को अनुदात्त नहीं होता)।

यावादिभ्यः — V. iv. 29

यावादि प्रातिपदिकों से (स्वार्थ में कन् प्रत्यय होता है)।

याव = जौ से तैयार किया गया आहार, लाख, लाल रंग।

यासयोः — VII. iii. 45

(प्रत्यय में स्थित ककार से पूर्व) या तथा सा के (अकार के स्थान में इकारादेश नहीं होता)।

यासुट् — III. iv. 103

(परस्मैपदविषयक लिङ् लकार को) यासुट् का आगम होता है (और वह उदात्त तथा ङिद्वत् भी होता है)।

यि — VI. i. 76

यकारादि प्रत्यय के परे रहते (एच् के स्थान में संहिता के विषय में वकार अन्तवाले अर्थात् अव्, आव् आदेश होते हैं)।

यि — VI. iv. 116

(ओहाक् अङ्ग का लोप होता है); यकारादि (कित्, ङित् सार्वधातुक) परे रहते।

यि — VII. i. 65

(आङ् से उत्तर) यकारादि प्रत्यय के विषय में (लभ् अङ्ग को नुम् आगम होता है)।

यि — VII. iv. 22

यकारादि (कित्, ङित्) प्रत्यय परे रहते (शीङ् अङ्ग को अयङ् आदेश होता है)।

यि... — VII. iv. 53

देखें — यीवर्णयोः VII. iv. 53

यिट् — VI. iv. 159

(बहु शब्द से उत्तर इष्ठन् को) यिट् आगम होता है, (तथा बहु शब्द को भू आदेश भी होता है)।

यीवर्णयोः — VII. iv. 53

(दीधीङ् तथा वेवीङ् अङ्ग का) यकारादि एवं इवर्णादि प्रत्यय के परे रहते (लोप होता है)।

...यु... — III. i. 126

देखें — आसुयुवपि० III. i. 126

यु... — III. iii. 32

देखें — युद्रुदुवः III. iii. 32

यु... — VI. iv. 58

देखें — युप्लुवोः VI. iv. 58

यु... — VII. i. 1

देखें — युवोः VII. i. 1

...यु... — VII. ii. 49

देखें — इवन्तर्ध० VII. ii. 49

युक् — VII. iii. 33

(आकारान्त अङ्ग को चिण् तथा ञित्, णित् कृत् प्रत्यय परे रहते) युक् आगम होता है।

युक् — VII. iii. 37

(शो, छो, षो, ह्वेञ्, व्येञ्, वेञ्, पा – इन अङ्गों को णि परे रहते) युक् आगम होता है।

युक्तः — IV. ii. 3

(नक्षत्रविशेषवाची तृतीयासमर्थ प्रातिपदिक से 'उन नक्षत्रों से) युक्त काल कहने में (यथाविहित अण् प्रत्यय होता है)।

युक्तम् — I. iv. 50

(जिस प्रकार कर्ता का अत्यन्त ईप्सित कारक क्रिया के साथ युक्त होता है, उसी प्रकार कर्ता का न चाहा हुआ कारक क्रिया के साथ) युक्त हो, तो (उसकी भी कर्म संज्ञा होती है)।

युक्तवत् — I. ii. 51

(प्रत्ययलुप् होने पर तदर्थ में लिङ्ग और वचन) प्रकृत्यर्थ के समान हों।

युक्तारोह्यादयः — VI. ii. 81

युक्तारोही आदि समस्त शब्दों का (भी आदिस्वर उदात्त होता है)।

युक्ते — VI. ii. 66

युक्तवाची समास में (भी पूर्वपद को आद्युदात्त होता है)।

...युग... — IV. iv. 76

देखें — **रथयुगप्रासङ्गम् IV. iv. 76**

...युगन्धराभ्याम् — IV. iv. 129

देखें — **कुरुयुगन्धराभ्याम् IV. iv. 129**

युगपत् — VI. ii. 51

(तवै प्रत्यय को अन्त उदात्त भी होता है तथा अव्यवहित पूर्वपद गति को भी प्रकृतिस्वर) एक साथ (होता है)।

युगपत् — VI. ii. 140

(वनस्पत्यादि समस्त शब्दों में दोनों = पूर्व तथा उत्तरपद को) एक साथ (प्रकृतिस्वर होता है)।

युग्यम् — III. i. 121

(वाहन को कहना हो तो) क्यप् प्रत्ययान्त युग्य शब्द निपातन होता है।

युच् — III. ii. 148

(अकर्मक, चलनार्थक और शब्दार्थक धातुओं से तच्छीलादि कर्ता हो, तो वर्तमान काल में) युच् प्रत्यय होता है।

युच् — III. iii. 107

(ण्यन्त धातुओं, आस् तथा श्रन्थ् धातुओं से स्त्रीलिङ्ग कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में) युच् प्रत्यय होता है।

युच् — III. iii. 128

(आकारान्त धातुओं से कृच्छ्र तथा अकृच्छ्र अर्थों में ईषद्, दुर्, सु उपपद रहते) युच् प्रत्यय होता है।

...युज... — III. ii. 61

देखें — **सत्सू० III. ii. 61**

...युज... — III. ii. 142

देखें — **सम्पृचानुरुध० III. ii. 142**

...युज... — III. ii. 182

देखें — **दाम्नी० III. ii. 182**

...युजि... — III. ii. 59

देखें — **ऋत्विग्दधृक्० III. ii. 59**

युजेः — I. iii. 64

(अयज्ञपात्र विषय में प्र तथा उपपूर्वक) 'युजिर् योगे' धातु से (आत्मनेपद हो जाता है)।

युजेः — VII. i. 71

(असमास में) युजि अङ्ग को (सर्वनामस्थान परे रहते नुम् आगम होता है)।

युट् — VI. iv. 63

(अजादि कित्, ङित् प्रत्ययों के परे रहते दीङ् धातु से उत्तर) युट् का आगम होता है।

युद्धे — III. iii. 73

युद्ध अभिधेय हो (तो आङ्पूर्वक ह्वेञ् धातु को सम्प्रसारण तथा अप् प्रत्यय होता है)।

युद्रुदुवः — III. iii. 23

(सम् पूर्वक) यु, द्रु तथा दु धातुओं से (कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

...युध... — I. iii. 86

देखें — **बुधयुधनशजनेङ्० I. iii. 86**

...युध... — V. i. 120

देखें — **अचतुरमंगल० V. i. 120**

युधि... — III. ii. 95

देखें — **युधिकृञः III. ii. 95**

युधिकृञः — III. ii. 95

(राजन् कर्म उपपद रहते) युध् तथा कृञ् धातुओं से (भूतकाल में क्वनिप् प्रत्यय होता है)।

...युधिभ्याम् — VIII. iii. 95
देखें — गवियुधिभ्याम् VIII. iii. 95

युप्लुवोः — VI. iv. 58
(वेद-विषय में) 'यु मिश्रणे' तथा 'प्लुङ् गतौ' धातु को (दीर्घ होता है, ल्यप् परे रहते)।

युव... — V. iii. 64
देखें — युवाल्पयोः V. iii. 64

...युव... — VI. iv. 133
देखें — श्वयुवमघोनाम् VI. iv. 133

...युव... — VI. iv. 156
देखें — स्थूलदूर॰ VI. iv. 156

युव... — VII. ii. 92
देखें — युवावौ VII. ii. 92

...युवति... — II. i. 64
देखें — पोटायुवतिस्तोक॰ II. i. 64

युवा — II. i. 66
युवन् शब्द (समानाधिकरणवाची खलति, पलित, वलिन और जरती — इन सुबन्तों के साथ विकल्प से तत्पुरुष समास को प्राप्त होता है)।

युवा — IV. i. 163
(पौत्रप्रभृति का जो अपत्य, उसकी पिता इत्यादि के जीवित रहते) युवा संज्ञा (ही होती है)।

...युवादिभ्यः — V. i. 130
देखें — हायनान्तयुवादिभ्यः V. i. 130

युवाल्पयोः — V. iii. 64
युव और अल्प शब्दों के स्थान में (विकल्प से कन् आदेश होता है; अजादि अर्थात् इष्ठन्, ईयसुन् प्रत्यय परे रहते)।

युवावौ — VII. ii. 96
(द्विवचनविषयक युष्मद्, अस्मद् अङ्ग के मपर्यन्त भाग के स्थान में क्रमशः) युव, आव आदेश हो जाते हैं।

युवोः — VII. i. 1
(अङ्गसम्बन्धी) यु तथा वु के स्थान में (यथासङ्ख्य करके अन तथा अक आदेश होते है)।

युष्मत्... — VI. i. 205
देखें — युष्मदस्मदोः VI. i. 205

युष्मत्... — VIII. iii. 103
देखें — युष्मत्तत्तक्षुःषु VIII. iii. 103

युष्मत्तत्तक्षुःषु — VIII. iii. 103
(इण् तथा कवर्ग से उत्तर सकार को तकारादि) युष्मत्, तत् तथा ततक्षुस् परे रहते (मूर्धन्यादेश होता है, यदि वह सकार पाद के मध्य में वर्तमान हो तो)।

युष्मद्... — IV. iii. 1
देखें — युष्मदस्मदोः IV. iii. 1

युष्मद्... — VII. i. 27
देखें — युष्मदस्मद्भ्याम् VII. i. 27

युष्मद्... — VII. ii. 86
देखें — युष्मदस्मदोः VII. ii. 86

युष्मद्... — VIII. i. 20
देखें — युष्मदस्मदोः VIII. i. 20

युष्मदस्मदोः — IV. iii. 1
युष्मद् तथा अस्मद् शब्दों से (खञ् तथा चकार से छ प्रत्यय विकल्प से होते हैं, पक्ष में औत्सर्गिक अण् होता है)।

युष्मदस्मदोः — VI. i. 205
युष्मत् तथा अस्मद् शब्दों के (आदि को उदात्त होता है, ङस् परे रहते)।

युष्मदस्मदोः — VII. ii. 81
युष्मद् तथा अस्मद् अङ्ग को (आदेशरहित विभक्ति के परे रहते आकारादेश होता है)।

युष्मदस्मदोः — VIII. i. 20
(पद से उत्तर षष्ठ्यन्त, चतुर्थ्यन्त तथा द्वितीयान्त अपादादि में वर्तमान) युष्मद् तथा अस्मद् शब्दों के स्थान में (क्रमशः वाम् तथा नौ आदेश होते हैं एवं उन आदेशों को अनुदात्त भी होता है)।

युष्मदस्मद्भ्याम् — VII. i. 27
युष्मत् तथा अस्मत् अङ्ग से उत्तर (ङस् के स्थान में अश् आदेश होता है)।

युष्मदि — I. iv. 104
युष्मद् शब्द के उपपद रहते (समान अभिधेय होने पर युष्मद् शब्द का प्रयोग न हो या हो तो भी मध्यम पुरुष होता है)।

युष्माक... — IV. iii. 2
देखें — युष्माकास्माकौ IV. iii. 2

युष्माकास्माकौ — IV. iii. 2
(उस खञ् तथा अण् प्रत्यय के परे रहते युष्मद्, अस्मद् के स्थान में यथासङ्ख्य) युष्माक, अस्माक आदेश होते हैं।

युस् — V. ii. 123
(ऊर्णा प्रातिपदिक से 'मत्वर्थ' में) युस् प्रत्यय होता है।

...युस्... — V. ii. 138
देखें — बभयुस्० V. ii. 138

युस् — V. ii. 140
(अहम् तथा शुभम् प्रातिपदिकों से मत्वर्थ में) युस् प्रत्यय होता है।

यू — I. iv. 3
ईकारान्त तथा ऊकारान्त (स्त्रीलिङ्ग को कहने वाले शब्द नदीसञ्ज्ञक होते हैं)।

...यूति... — III. iii. 97
देखें — ऊतियूति० III. iii. 97

यूनः — IV. i. 77
युवन् शब्द से (स्त्रीलिङ्ग में ति प्रत्यय होता है और वह तद्धित होता है)।

यूना — I. ii. 65
युवा प्रत्ययान्त शब्द के साथ (वृद्ध = गोत्रप्रत्ययान्त शब्द शेष रह जाता है, यदि वृद्ध-युव-प्रत्ययनिमित्तक ही भेद हो तो)।

यूनि — II. iv. 58
(ण्यन्त गोत्रप्रत्ययान्त, तद्धितवाची गोत्रप्रत्ययान्त) ऋषिवाची गोत्रप्रत्ययान्त तथा ञित्प्रत्ययान्त युवा अपत्य में विहित (अण् और इञ् का लुक् होता है)।

यूनि — IV. i. 90
(प्राग्दीव्यतीय अजादि प्रत्यय की विवक्षा में) युवा अर्थ में उत्पन्न प्रत्यय का (लुक् हो जाता है)।

यूनि — IV. i. 94
युवापत्य की विवक्षा होने पर (गोत्र से ही युवापत्य में प्रत्यय हो, अनन्तरापत्य या प्रथम प्रकृति से नहीं, स्त्री अपत्य को छोड़कर)।

यूय... — VII. ii. 93
देखें — यूयवयौ VII. ii. 93

यूयवयौ — VII. ii. 93
(जस् विभक्ति परे रहते युष्मद्, अस्मद् अङ्ग के मपर्यन्त भाग को क्रमशः) यूय, वय आदेश होते हैं।

यूषन् — VI. i. 61
(वेदविषय में यूष शब्द के स्थान में) यूषन् आदेश हो जाता है, (शस् प्रकार वाले प्रत्ययों के परे रहते)।

ये — VI. i. 60
यकारादि (तद्धित) के परे रहते (भी शिरस् को शीर्षन् आदेश हो जाता है)।

ये — VI. iii. 86
(तीर्थ शब्द उत्तरपद हो तो) य प्रत्यय परे रहते (समान शब्द को स आदेश हो जाता है)।

ये — VI. iv. 43
यकारादि (कित्, ङित्) प्रत्ययों के परे रहते (जन, सन, खन अङ्गों को विकल्प से आकारादेश हो जाता है)।

ये — VI. iv. 109
यकारादि प्रत्यय परे रहते (भी कृ अङ्ग से उत्तर उकार प्रत्यय का नित्य ही लोप होता है)।

ये — VI. iv. 168
(भाव तथा कर्म से भिन्न अर्थ में वर्तमान) यकारादि (तद्धित) के परे रहते भी (अन्नन्त भसञ्ज्ञक अङ्ग को प्रकृतिभाव हो जाता है)।

ये — VIII. ii. 88
'ये' शब्द को (यज्ञ की क्रिया में प्लुत उदात्त होता है)।

येन — I. i. 71
जिस विशेषण से (विधि की जाये, वह विशेषण अन्त में है जिसके, उस विशेषणान्त समुदाय का ग्राहक होता है और अपने स्वरूप का भी)।

येन — I. iv. 28
(व्यवधान के कारण) जिससे (छिपना चाहता हो, उस कारक की अपादान संज्ञा होती है)।

येन — II. iii. 20

जिस (विकृत अङ्ग) के द्वारा (अङ्गी का विकार लक्षित हो, उसमें तृतीया विभक्ति होती है)।

येन — III. iii. 116

जिस कर्म के (संस्पर्श से कर्त्ता को शरीर-सुख उत्पन्न हो, ऐसे कर्म के उपपद रहते भी धातु से ल्युट् प्रत्यय होता है)।

येषाम् — II. iv. 9

जिन जीवों का (सनातन विरोध है, तद्वाची शब्दों का द्वन्द्व भी एकवत् होता है)।

...योः — VI. i. 64

देखें — व्योः VI. i. 64

...योः — VIII. iii. 18

देखें — व्योः VIII. iii. 18

योगप्रमाणे — I. ii. 55

सम्बन्ध को प्रमाणवाचक मानकर यदि संज्ञा हो तो (भी उस सम्बन्ध के हट जाने पर उस संज्ञा का अदर्शन होना चाहिये; पर वह होता नहीं है अर्थात् पञ्चालादि संज्ञायें जनपद-विशेष की हैं, सम्बन्धनिमित्तक नहीं)।

योगात् — V. i. 101

(चतुर्थीसमर्थ) योग प्रातिपदिक से ('शक्त है' अर्थ में यत् और ठञ् प्रत्यय होते हैं)।

योगाप्रख्यानात् — I. ii. 54

निवासादि सम्बन्ध की अप्रतीति होने से (लुब्विधायक सूत्र भी नहीं कहे जा सकते)।

योजनम् — V. i. 73

(द्वितीया समर्थ) योजन प्रातिपदिक से ('जाता है' अर्थ में यथाविहित ठञ् प्रत्यय होता है)।

...योद्धृभ्यः — IV. ii. 55

देखें — प्रयोजनयोद्धृभ्यः IV. ii. 55

...योनिसम्बन्धेभ्यः — VI. iii. 22

देखें — विद्यायोनि० VI. iii. 22

...योनिसम्बन्धेभ्यः — IV. iii. 77

देखें — विद्यायोनिसम्बन्धेभ्यः IV. iii. 77

...योपधात् — IV. ii. 120

देखें — धन्वयोपधात् IV. ii. 120

योपधात् — V. i. 131

(षष्ठीसमर्थ) यकार उपधा वाले (गुरु है उपोत्तम जिसका, ऐसे) प्रातिपदिक से (भाव और कर्म अर्थों में वुञ् प्रत्यय होता है)।

यौ — II. iv. 57

(आर्धधातुक) युच् प्रत्यय परे रहते (अज् को वी आदेश होता है)।

...यौ — IV. iv. 133

देखें — इनयौ IV. iv. 133

...यौगपद्य... — II. i. 7

देखें — विभक्तिसमीपसमृद्धि० II. i. 7

...यौति... — III. iii. 49

देखें — श्रयतियौति० III. iii. 49

...यौधेयादिभ्यः — IV. i. 176

देखें — प्राच्यभर्गादि० IV. i. 176

...यौधेयादिभ्यः — V. iii. 117

देखें — पार्श्वादियौधे० V. iii. 117

य्वाभ्याम् — VII. iii. 3

(पदान्त) यकार तथा वकार से उत्तर (ञित्, णित्, कित् तद्धित परे रहते अङ्ग के अचों में आदि अच् को वृद्धि नहीं होती, किन्तु उन यकार, वकार से पूर्व तो क्रमशः ऐ और औ आगम होते हैं)।

य्वोः — VI. iv. 77

(श्नु प्रत्ययान्त अङ्ग तथा) इवर्णान्त, उवर्णान्त (धातु एवं भ्रू शब्द) को (इयङ्, उवङ् आदेश होते हैं, अच् परे रहते)।

य्वौ — VIII. ii. 108

(उनके अर्थात् प्लुत के प्रसंग में एच् के उत्तरार्ध को जो इकार, उकार पूर्व सूत्र से विधान कर आये हैं ; उन इकार, उकार के स्थान में क्रमशः) य्, व् आदेश हो जाते हैं; (अच् परे रहते, सन्धि के विषय में)।

र

र् — प्रत्याहारसूत्र XII

आचार्य पाणिनि द्वारा अपने तेरहवें प्रत्याहारसूत्र में इत्सञ्ज्ञार्थ पठित वर्ण।

र्... — VIII. ii. 76

देखें — **र्वोः VIII. ii. 76**

र... — VI. iv. 47

देखें — **रोपधयोः VI. iv. 47**

र — प्रत्याहारसूत्र V

आचार्य पाणिनि द्वारा अपने पञ्चम प्रत्याहारसूत्र में पठित चतुर्थ वर्ण।

पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का तेरहवां वर्ण।

र — IV. i. 7

(वमन्त प्रातिपदिकों से स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय होता है, तथा उस वमन्त प्रातिपदिक को) रेफ अन्तादेश भी होता है।

...र... — IV. ii. 79

देखें — **वुञ्छण्कठ० IV. ii. 79**

र... — V. iii. 4

देखें — **रथोः V. iii. 4**

..,र... — VII. ii. 2

देखें — **व्रान्तस्य VII. ii. 2**

र... — VIII. ii. 42

देखें — **रदाभ्याम् VIII. ii. 42**

र... — VIII. iv. 1

देखें — **रषाभ्याम् VIII. iv. 1**

र... — VIII. iv. 45

देखें — **रहाभ्याम् VIII. iv. 45**

रः — III. ii. 167

(णम, कपि, ष्मिङ्, नञ्पूर्वक जसु, कमु, हिंस, दीपी — इन धातुओं से वर्तमानकाल में तच्छीलादि कर्त्ता हो तो) र प्रत्यय होता है।

रः — V. ii. 107

(ऊष, सुषि, मुष्क तथा मधु प्रातिपदिकों से 'मत्वर्थ' में) र प्रत्यय होता है।

रः — V. iii. 88

('छोटा' अर्थ गम्यमान हो तो कुटी, शमी और शुण्डा प्रातिपदिकों से र प्रत्यय होता है।

रः — VI. iv. 161

(हल् आदि वाले भसञ्ज्ञक अङ्ग के लघु ऋकार के स्थान में) र आदेश होता है; (इष्ठन्, इमनिच् तथा ईयसुन् परे रहते)।

रः — VII. ii. 100

(तिसृ, चतसृ अङ्गों के ऋकार के स्थान में अजादि विभक्ति परे रहते) रेफ आदेश होता है।

...रः — VIII. ii. 15

देखें — **इरः VIII. ii. 15**

रः — VIII. ii. 18

(कृप् धातु के) रेफ को (लकारादेश होता है)।

रः — VIII. ii. 69

(अहन् को) रेफ आदेश होता है, (सुप् परे न हो तो)।

रः — VIII. iii. 14

(पद के) रेफ का (रेफ परे रहते लोप होता है)।

रक्तम् — IV. ii. 1

(समर्थों में जो प्रथम तृतीयासमर्थ रङ्ग विशेषवाची प्रातिपदिक, उससे) 'रंगा गया' इस अर्थ में (यथाविहित प्रत्यय होता है)।

रक्ते — V. iv. 32

'रंगा हुआ' अर्थ में (वर्त्तमान लोहित प्रातिपदिक से कन् प्रत्यय होता है)।

...रक्षः — III. iii. 90

देखें — **यजयाच० III. iii. 90**

रक्षति — IV. iv. 33

(द्वितीयासमर्थ प्रातिपदिक से) 'रक्षा करता है' — अर्थ में (ठक् प्रत्यय होता है)।

रक्षस्... — IV. iv. 121

देखें — **रक्षोयातूनाम् IV. iv. 121**

...रक्षि... — III. ii. 27

देखें — **वनसन० III. ii. 27**

...रक्षितैः — II. i. 35
देखें — **तदर्थार्थबलिहित० II. i. 35**

रक्षोयातूनाम् — IV. iv. 121

(षष्ठीसमर्थ) रक्षस् तथा यातु प्रातिपदिकों से (हननी अर्थ में यत् प्रत्यय होता है)।

रक्षस् = भूत, प्रेत, पिशाचा। यातु = याची, हवा, समय।

रङ्कु — IV. ii. 99

रङ्कु शब्द से (मनुष्य अभिधेय न हो तो अण् और ष्फक् प्रत्यय होते हैं)।

...रज... — III. ii. 142
देखें — **सम्पृचानुरुध० III. ii. 142**

रजःकृष्यासुतिपरिषदः — V. ii. 112

रजस्, कृषि, आसुति तथा परिषद् प्रातिपदिकों से ('मत्वर्थ' में वलच् प्रत्यय होता है)।

रजस् = धूल, कण, आसुति॒ अर्क, काढ़ां।

...रजतादिभ्यः — IV. iii. 152
देखें — **प्राणिरजतादिभ्यः IV. iii. 152**

रजस्... — V. ii. 112
देखें — **रजःकृष्या० V. ii. 112**

...रजसाम् — V. iv. 51
देखें — **अरुर्मनस्० V. iv. 51**

...रजोः — III. i. 90
देखें — **कुषिरजोः III. i. 90**

रञ्जेः — VI. iv. 26

रञ्ज् अङ्ग की (उपधा के नकार का भी लोप होता है, शप् परे रहते)।

रथ... — IV. iv. 76
देखें — **रथयुगप्रासङ्गम् IV. iv. 76**

रथ... — VI. iii. 101
देखें — **रथवदयोःVI. iii. 101**

रथः — IV. ii. 9

(तृतीयासमर्थ प्रातिपदिक से 'ढका हुआ' अर्थ में यथा-विहित प्रत्यय होता है, यदि वह ढका हुआ) रथ हो तो।

रथयुगप्रासङ्गम् — IV. iv. 76

(द्वितीयासमर्थ) रथ, युग, प्रासङ्ग प्रातिपदिकों से ('ढोता है' अर्थ में यत् प्रत्यय होता है)।

युग = जुआ, जोड़ा। प्रासङ्ग = जुआ, बैलों के लिये।

रथवदयोः — VI. iii. 101

रथ तथा वद शब्द उत्तरपद हों तो (भी कु को कत् आदेश होता है)।

रथाङ्गम्— VI. i. 144

(अपस्कर शब्द सुट्सहित निपातन किया जाता है) यदि उससे रथ का अवयव कहा जा रहा हो तो।

...रथात् — IV. ii. 49
देखें — **खलगोरथात् IV. ii. 49**

रथात् — IV. iii. 120

(षष्ठीसमर्थ) रथ प्रातिपदिक से ('इदम्' अर्थ में यत् प्रत्यय होता है)।

रथोः — V. iii. 4

(इदम् शब्द के स्थान में) रेफादि तथा थकारादि प्रत्ययों के परे रहते (यथासङ्ख्य करके एत तथा इत आदेश होते हैं)।

रदाभ्याम् — VIII. ii. 42

रेफ तथा दकार से उत्तर (निष्ठा के तकार को नकारादेश होता है तथा निष्ठा के तकार से पूर्व के दकार को भी नकारादेश होता है)।

रधादिभ्यः — VII. ii. 45

रधादि धातुओं से उत्तर (भी वलादि आर्धधातुक को विकल्प से इट् आगम होता है)।

रधि... — VII. i. 61
देखें — **रधिजभोः VII. i. 61**

रधिजभोः — V˜I. i. 61

(अजादि प्रत्यय परे रहते) 'रध हिंसासंराध्योः' तथा जभ गात्रविनामे अङ्ग को (नुम् आगम होता है)।

रधेः — VII. i. 62

(लिड् भिन्न इडादि प्रत्यय परे रहते) रध् अङ्ग को (नुम् आगम नहीं होता)।

रन् — III. iv. 105

(लिङ्गादेश जो झ, उसको) रन् आदेश होता है।

रपर... — VIII. iii. 110
देखें — **रपरसृपि० VIII. iii. 110**

रपरः — I. i. 50

(ऋवर्ण के स्थान में यदि अण् होना हो, तो वह साथ ही) र परे वाला होता है।

रपरसृपिसृजिस्पृशिस्पृहिसवनादीनाम् — VIII. iii. 110

रेफ परे है जिससे, उस सकार को तथा सृप, सृज, स्पृश, स्पृह एवं सवनादि गणपठित शब्दों के (सकार को इण् तथा कवर्ग से उत्तर मूर्धन्य आदेश नहीं होता)।

...रपि... — III. i. 126
देखें — आसुयुवपि० III. i. 126

...रभ... — VII. iv. 54
देखें — मीमीघु० VII. iv. 54

रभेः — VII. i. 63

(शप् तथा लिट्वर्जित अजादि प्रत्ययों के परे रहते) 'रभ राभस्ये' अङ्ग को (नुम् आगम होता है)।

रम् — VI. iv. 47

(भ्रस्ज् धातु के रेफ तथा उपधा के स्थान में विकल्प से) रम् आगम होता है, (आर्धधातुक परे रहने पर)।

...रम... — VII. ii. 73
देखें — यमरमनमाताम् VII. ii. 73

रमः — I. iii. 83

(वि, आङ् एवं परि पूर्वक) रम् धातु से (परस्मैपद होता है)।

रमयामकः — III. i. 42

रमयामकः शब्द का विकल्प से छन्द में निपातन किया जाता है, (साथ ही अभ्युत्सादयामकः, प्रजनयामकः, चिकयामकः, पावयांक्रियात् तथा विदामक्रन् पद भी वेद में विकल्प से निपातित किये जाते हैं)।

रमि... — III. ii. 13
देखें — रमिजपोः III. ii. 13

रमिजपोः — III. ii. 13

(स्तम्ब और कर्ण सुबन्त उपपद रहते) रम तथा जप धातुओं से (अच् प्रत्यय होता है)।

रलः — I. ii. 26

(इकार, उकार उपधावाली) रलन्त (एवं हलादि) धातुओं से परे (सेट् सन् और सेट् क्त्वा प्रत्यय विकल्प से कित् नहीं होते)।

...रलोपे — VI. iii. 110
देखें — ढ्रलोपे VI. iii. 110

रश्मौ — III. iii. 53

घोड़े की लगाम वाक्य हो (तो भी प्र पूर्वक ग्रह् धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है, पक्ष में अप् होता है)।

रषाभ्याम् — VIII. iv. 1

रेफ तथा षकार से उत्तर (नकार को णकारादेश होता है, एक ही पद में)

...रस... — V. i. 120
देखें — अचतुरमङ्गल० V. i. 120

...रसः — II. iv. 85
देखें — डारौरसः II. iv. 85

रसादिभ्यः — V. ii. 95

(प्रथमासमर्थ) रसादि प्रातिपदिकों से (भी 'मत्वर्थ' में मतुप् प्रत्यय होता है)।

...रहस्... — V. iv. 51
देखें — अरुर्मनस्० V. iv. 51

रहसः — V. iv. 81

(अनु, अव तथा तप्त शब्द से उत्तर) रहस्-शब्दान्त प्रातिपदिक से (समासान्त अच् प्रत्यय होता है)।

रहस्य... — VIII. i. 15
देखें — रहस्यमर्यादा० VIII. i. 15

रहाभ्याम् — VIII. iv. 45

(अच् से उत्तर वर्तमान) रेफ और हकार से उत्तर (यर् को विकल्प से द्वित्व होता है)।

...राग... — VI. i. 210
देखें — त्यागराग० VI. i. 210

...राग... — VI. iii. 98
देखें — आशीरास्था० VI. iii. 98

रागात् — IV. ii. 1

(समर्थों में जो प्रथम तृतीयासमर्थ) रङ्गविशेषवाची प्रातिपदिक, उससे ('रंगा गया' अर्थ में यथाविहित प्रत्यय होता है)।

राज... — IV. i. 137
देखें — राजश्वशुरात् IV. i. 137

...राज... – IV. ii. 38
देखें – गोत्रोक्षोष्ट्रो० IV. ii. 38

राज... – V. iv. 91
देखें – राजाहःसखिभ्यः V. iv. 91

...राज... – VIII. i. 36
देखें – व्रश्चभ्रस्ज० VIII. i. 36

राजदन्तादिषु – II. ii. 31

राजदन्त आदि गणपठित शब्दों में (उपसर्जन का पर प्रयोग होता है)।

राजनि – III. ii. 95

'राजन्' (कर्म) उपपद रहते (युध और कृ धातुओं से 'क्वनिप्' प्रत्यय होता है, भूतकाल में)।

...राजन्य... – IV. ii. 38
देखें – गोत्रोक्षोष्ट्रो० IV. ii. 38

राजन्यबहुवचनद्वन्द्वे – VI. ii. 34

क्षत्रियवाची जो बहुवचनान्त शब्द, उनका द्वन्द्व (अन्धक तथा वृष्णि वंश को कहने में वर्त्तमान हो तो (पूर्वपद को प्रकृतिस्वर होता है)।

...राजन्यात् – V. iii. 114
देखें – अब्राह्मणराजन्यात् V. iii. 114

राजन्यादिभ्यः – IV. ii. 52

(षष्ठीसमर्थ) राजन्यादि प्रातिपदिकों से ('विषयो देशे' अर्थ में वुञ् प्रत्यय होता है)।

राजन्वान् – VIII. ii. 14

राजन्वान् शब्द (सौराज्य गम्यमान होने पर निपातन है)।

...राजपुत्र... – IV. ii. 38
देखें – गोत्रोक्षोष्ट्रो० IV. ii. 38

राजश्वशुरात् – IV. i. 137

राजन् तथा श्वशुर प्रातिपदिकों से (अपत्यार्थ में यत् प्रत्यय होता है)।

राजसूय... – III. i. 114
देखें – राजसूयसूर्य० III. i. 114

राजसूयसूर्यमृषोद्यरुच्यकुप्यकृष्टपच्याव्यथ्याः – III. i. 114

राजसूय, सूर्य, मृषोद्य, रुच्य, कुप्य, कृष्टपच्य, अव्यथ्य — ये शब्द क्यप्प्रत्ययान्त निपातन हैं।

राजा... – II. iv. 23
देखें – राजामनुष्यपूर्वा II. iv. 23

राजा – VI. ii. 59

(ब्राह्मण तथा कुमार शब्द उपपद रहते कर्मधारय समास में) राजा शब्द को (भी विकल्प से प्रकृतिस्वर होता है)।

राजा – VI. ii. 63

(प्रशंसा गम्यमान हो तो शिल्पिवाची शब्द उत्तरपद रहते) राजन् पूर्वपद वाले शब्द को (भी विकल्प से प्रकृतिस्वर होता है)।

...राजा... – VI. ii. 133
देखें – आचार्यराज० VI. ii. 133

...राजाम्... – III. ii. 61
देखें – सत्सू० III. ii. 61

राजामनुष्यपूर्वा – II. iv. 23

(नञ्कर्मधारयवर्जित) राजा और अमनुष्य पूर्वपदवाला (सभाशब्दान्त तत्पुरुष नपुंसकलिङ्ग में होता है)।

राजाहःसखिभ्यः – V. iv. 91

राजन्, अहन् तथा सखिशब्दान्त प्रातिपदिकों से (समासान्त टच् प्रत्यय होता है, तत्पुरुष समास में)।

राजि – VIII. iii. 25

(सम् के मकार को मकारादेश होता है, क्विप् प्रत्ययान्त) राजृ धातु के परे रहते।

राज्ञः – IV. ii. 139

राजन् शब्द से (शैषिक छ प्रत्यय होता है तथा उसको क अन्तादेश भी होता है)।

राज्यम् – VI. ii. 130

(कर्मधारयवर्जित तत्पुरुष समास में उत्तरपद) राज्य शब्द को (आद्युदात्त होता है)।

...राट्... – VI. i. 176
देखें – गोश्वन्० VI. i. 176

...राटोः – VI. iii. 127
देखें – वसुराटोः VI. iii. 127

रात् – VI. iv. 21

रेफ से उत्तर (छकार और वकार का लोप हो जाता है, क्वि तथा झलादि अनुनासिकादि प्रत्ययों के परे रहते)।

रात् — VIII. ii. 24

(संयोग अन्त वाले) रेफ से उत्तर (सकार का लोप होता है)।

रात्र... — II. iv. 29

देखें — **रात्राह्नाहाः II. iv. 29**

...रात्रावयवाः — II. i. 44

देखें — **अहोरात्रावयवाः II. i. 44**

...रात्रावयवेषु — VI. ii. 33

देखें — **वर्ज्यमानाहोरात्रा० VI. ii. 33**

रात्राह्नाहाः — II. iv. 29

रात्र, अह्न, अह —इन कृतसमासान्त शब्दों को (पुँल्लिङ्ग होता है)।रात्र, अह्न, अह ये कृतसमासान्त निर्दिष्ट हैं।

रात्रि... — V. i. 86

देखें — **रात्र्यहः संवत्सरात् V. i. 86**

...रात्रि... — VI. iii. 84

देखें — **ज्योतिर्जनपद० VI. iii. 84**

...रात्रिन्दिव... — V. iv. 77

देखें — **अचतुर० V. iv. 77**

...रात्रे — II. iv. 28

देखें — **अहोरात्रे II. iv. 28**

रात्रेः — IV. i. 31

रात्रि शब्द से (भी स्त्रीलिङ्ग विवक्षित होने पर संज्ञा तथा छन्द-विषय में, जस् विषय से अन्यत्र ङीप् प्रत्यय होता है)।

रात्रेः — V. iv. 87

(अहर्, सर्व, एकदेश वाचक शब्द, सङ्ख्यात तथा पुण्य शब्दों से उत्तर तथा सङ्ख्या और अव्ययों से उत्तर भी) जो रात्रि शब्द, तदन्त (तत्पुरुष) से (समासान्त अच् प्रत्यय होता है)।

रात्रेः — VI. iii. 71

(कृदन्त उत्तरपद रहते) रात्रि शब्द को (विकल्प करके मुम् आगम होता है)।

रात्र्यहःसंवत्सरात् — V. i. 86

(द्वितीयासमर्थ) रात्रि-शब्दान्त, अहन्-शब्दान्त तथा संवत्सर-शब्दान्त (द्विगुसञ्ज्ञक प्रातिपदिकों से भी 'सत्कारपूर्वक व्यापार', 'खरीदा हुआ', 'हो चुका' तथा 'होने वाला' — इन अर्थों में विकल्प से ख प्रत्यय होता है)।

राधः — VI. iv. 123

(हिंसा अर्थ में वर्तमान) राध् अङ्ग के (अवर्ण के स्थान में एकारादेश तथा अभ्यासलोप होता है; कित्, ङित् लिट् परे रहते तथा सेट् थल् परे रहते)।

राधि... — I. iv. 39

देखें — **राधीक्ष्योः I. iv. 39**

राधीक्ष्योः — I. iv. 39

राध् तथा ईक्ष् धातु के (प्रयोग में जिस के विषय में विविध प्रश्न हों, उस कारक की सम्प्रदान संज्ञा होती है)।

रायः — VII. ii. 85

रै अङ्ग को (हलादि विभक्ति परे रहते आकारादेश हो जाता है)।

राष्ट्र... — IV. ii. 92

देखें — **राष्ट्रावारपारात् IV. ii. 92**

राष्ट्रावारपारात् — IV. ii. 92

राष्ट्र तथा अवारपार शब्दों से (शैषिक जातादि अर्थों में यथासङ्ख्य करके घ और ख प्रत्यय होते हैं)।

अवारपार = समुद्र।

रि — VII. iv. 51

रेफादि प्रत्यय के परे रहते (भी तास् और अस् के सकार का लोप होता है)।

रि — VIII. iii. 14

(पद के रेफ का) रेफ परे रहते (लोप होता है)।

...रिकौ — VII. iv. 91

देखें — **रुग्रिकौ VII. iv. 91**

रिक्तगुरु — VI. i. 42

'रिक्तगुरु' इस समास किये हुये शब्द के (पूर्वपद को प्रकृतिस्वर होता है)।

रिक्ते — VI. i. 202

रिक्त शब्द में (विकल्प से आद्युदात्तत्व होता है)।

रिङ् — VII. iv. 28

(ऋकारान्त अङ्ग को श, यक् तथा यकारादि सार्वधातुक-भिन्न लिङ् परे रहते) रिङ् आदेश होता है।

रिति — VI. i. 211

रेफ इत् वाले शब्द के (उपोत्तम को उदात्त होता है)।

...रिषः — VII. ii. 48

देखें — **इषसह० VII. ii. 48**

रिषण्यति — VII. iv. 96

(दुरस्युः, द्रविणस्युः, वृषण्यति), रिषण्यति —ये क्यच्प्रत्ययान्त शब्द (वेद-विषय में) निपातित किये जाते हैं।

...री... — VII. iii. 36

देखें — **अर्त्तिह्री० VII. iii. 36**

रीक् — VII. iv. 90

(ऋकार उपधा वाले अङ्ग के अभ्यास को भी यङ् तथा यङ्लुक् में) रीक् आगम होता है।

रीङ् — VII. iv. 27

(ऋकारान्त अङ्ग को कृत्-भिन्न एवं सार्वधातुक-भिन्न यकार तथा च्वि परे हो तो) रीङ् आदेश होता है।

रीश्वरात् — I. iv. 56

'अधिरीश्वरे' I. iv. 86 सूत्र से (पहले-पहले निपात संज्ञा का अधिकार जाता है)।

...रु... — VII. iii. 95

देखें — **तुरुस्तु० VII. iii. 95**

रु — VIII. iii. 1

(मत्वन्त तथा वस्वन्त पद को संहिता में सम्बुद्धि परे रहते वेद-विषय में) रु आदेश होता है।

रु... — III. iii. 50

देखें — **रुप्लुवोः III. iii. 50**

रुः — III. ii. 159

(दा, धेट्, सि, शद्, सद् — इन धातुओं से तच्छीलादि कर्त्ता हो, तो वर्तमानकाल में) रु प्रत्यय होता है।

रुः — VIII. ii. 66

(सकारान्त पद को तथा सजुष् पद को) रु आदेश होता है।

रुः — VIII. ii. 74

(धात्ववयवभूत पदान्त सकार को सिप् परे रहते विकल्प से) रु आदेश होता है।

रुक्... — VII. iv. 91

देखें — **रुग्रिकौ VII. iv. 91**

...रुच... — VII. iii. 66

देखें — **यजयाच० VII. iii. 66**

रुग्रिकौ — VII. iv. 91

(ऋकार उपधा वाले अङ्ग के अभ्यास को) रुक्, रिक् (तथा चकार से रीक् आगम होते हैं, यङ्लुक् में)।

...रुचि... — I. iii. 89

देखें — **पादम्याङ्यमाङ्यस० I. iii. 89**

...रुचि... — III. ii. 136

देखें — **अलंकृञ्० III. ii. 136**

...रुचि... — VI. iii. 115

देखें — **नहिवृति० VI. iii. 115**

....रुच्य... — III. i. 114

देखें — **राजसूयसूर्य० III. i. 114**

रुच्यर्थानाम् — I. iv. 33

रुचि अर्थ वाले धातुओं के (प्रयोग में प्रीयमाण कारक की सम्प्रदान संज्ञा होती है)।

...रुज... — III. iii. 16

देखें — **पदरुज० III. iii. 16**

रुजार्थानाम् — II. iii. 54

(धात्वर्थ को कहने वाले घञादिप्रत्ययान्त-कर्तृक) रुजार्थक धातुओं के (कर्म में शेष विवक्षित होने पर षष्ठी विभक्ति होती है, ज्वर् धातु को छोड़कर)।

रुजि... — III. ii. 31

देखें — **रुजिवहोः III. ii. 31**

रुजिवहोः — III. ii. 31

(उत् पूर्वक) रुज् तथा वह् धातुओं से (कूल कर्म उपपद रहते खश् प्रत्यय होता है)।

रुट् — VII. i. 6

(शीङ् अङ्ग से उत्तर झ के स्थान में हुआ जो अत् आदेश, उसको) रुट् आगम होता है।

रुद... — I. ii. 8

देखें — **रुदविदमुषग्रहिस्वपिप्रच्छः I. ii. 8**

रुदविदमुषग्रहिस्वपिप्रच्छः — I. ii. 8

'रुदिर् अश्रुविमोचने', 'विद ज्ञाने', 'मुष स्तेये', 'ग्रह उपादाने', 'ञिष्वप् शये', 'प्रच्छ ज्ञीप्सायाम्' — इन धातुओं से परे (सन् और क्त्वा प्रत्यय कित्वत् होते हैं)।

रुदः — VII. iii. 98

रुदिर् (इत्यादि पाँच) धातुओं से उत्तर (भी हलादि अपृक्त सार्वधातुक को ईट् आगम होता है)।

रुदादिभ्यः— VII. ii. 76

रुदादि (पाँच) धातुओं से उत्तर (वलादि सार्वधातुक को इट् आगम होता है)।

...रुद्र... — IV. i. 48

देखें — **इन्द्रवरुणभव० IV. i. 48**

...रुद्र... — VI. ii. 142

देखें — **अपृथिवीरुद्र० VI. ii. 142**

...रुध... — III. iv. 49

देखें — **उपपीडरुधकर्षः III. iv. 49**

रुधः — III. i. 64

आवरणार्थक रुधिर् धातु से उत्तर (च्लि के स्थान में चिण् आदेश नहीं होता, कर्मकर्तृवाची 'त' शब्द परे रहते)।

रुधादिभ्यः — III. i. 78

रुधादि धातुओं से उत्तर (श्नम् प्रत्यय होता है, कर्तृवाची सार्वधातुक परे रहने पर)।

रुप्लुवोः — III. iii. 50

(आङ् पूर्वक) रु तथा प्लु धातुओं से (कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में विकल्प से घञ् प्रत्यय होता है)।

रुमण्वत् — VIII. ii. 12

रुमण्वत् शब्द का निपातन किया जाता है।

रुवः — III. iii. 22

(उपसर्ग उपपद रहने पर) रु धातु से (घञ् प्रत्यय होता है, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में)।

...रुष... — VII. ii. 48

देखें — **इषसह० VII. ii. 48**

रुषि... — VII. ii. 28

देखें — **रुष्यमत्वर० VII. ii. 28**

रुष्यमत्वरसंघुषास्वनाम् — VII. ii. 28

रुषि, अम, त्वर, सम् पूर्वक घुष तथा आङ्पूर्वक स्वन् अङ्ग को (निष्ठा परे रहते विकल्प से इट् आगम नहीं होता)।

...रुह... — III. iv. 72

देखें — **गत्यर्थाकर्मक० III. iv. 72**

रुहः — VII. iii. 43

रुह् अङ्ग को (विकल्प से णि परे रहते णकारादेश होता है)।

...रुहिभ्यः — III. i. 59

देखें — **कृमृह० III. i. 59**

...रुहोः — V. iv. 45

देखें — **अहीयरुहोः V iv. 45**

...रूक्षेषु — III. iv. 35

देखें — **शुष्कचूर्णरूक्षेषु III. iv. 35**

...रूप... — III. i. 25

देखें — **सत्यापपाशरूप० III. i. 25**

...रूप... — VI. iii. 42

देखें — **घरूप० VI. iii. 42**

...रूप... — VI. iii. 84

देखें — **ज्योतिर्जनपद० VI. iii. 84**

रूपप् — V. iii. 66

('प्रशंसा-विशिष्ट' अर्थ में (वर्तमान प्रातिपदिक तथा तिङन्त से स्वार्थ में) रूपप् प्रत्यय होता है।

रूपम् — I. i. 67

(इस व्याकरणशास्त्र में शब्द के अपने) स्वरूप का (ग्रहण होता है, उसके अर्थ या पर्यायवाची शब्दों का नहीं, शब्द-संज्ञा को छोड़कर)।

रूपात् — V. ii. 120

(आहत और प्रशंसा अर्थों में वर्तमान रूप प्रातिपदिक से (मत्वर्थ में यप् प्रत्यय होता है)।

रूप्य — V. iii. 54

('भूतपूर्व' अर्थ में षष्ठीविभक्त्यन्त प्रातिपदिक से) रूप्य प्रत्यय (और चरट् प्रत्यय होते हैं)।

रूप्यः — IV. iii. 81

(पञ्चमीसमर्थ हेतु तथा मनुष्यवाची प्रातिपदिकों से आगत अर्थ में विकल्प से) रूप्य प्रत्यय होता है।

...रूप्योत्तरपदात् — IV. ii. 105

देखें — **तीररूप्योत्तर० IV. ii. 105**

रे — VI. iv. 76

(इरे के स्थान में वेदविषय में बहुल करके) रे आदेश होता है।

रेवती... — IV. iv. 122

देखें — **रेवतीजगतीह० IV. iv. 122**

रेवतीजगतीहविष्याभ्यः — IV. iv. 122

(षष्ठीसमर्थ) रेवती, जगती तथा हविष्या प्रातिपदिकों से (प्रशस्य अर्थ में वैदिक प्रयोग में यत् प्रत्यय होता है)।

रेवत्यादिभ्यः — IV. i. 146

रेवती आदि शब्दों से (अपत्य अर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

रैवतिकादिभ्यः — IV. iii. 130

(षष्ठीसमर्थ) रैवतिकादि प्रातिपदिकों से ('इदम्' अर्थ में छ प्रत्यय होता है)।

रोः — VI. i. 109

(अप्लुत अकार से उत्तर अप्लुत अकार परे रहते) रु के (रेफ को उकार आदेश होता है, संहिता के विषय में)।

रोग... — VIII. iii. 16

रु के (रेफ को सुप् परे रहते विसर्जनीय आदेश होता है)।

रोग... — IV. iii. 13

देखें — **रोगातपयोः IV. iii. 13**

रोगाख्यायाम् — III. iii. 108

रोगविशेष की संज्ञा में (धातु से स्त्रीलिङ्ग में ण्वुल् प्रत्यय बहुल करके होता है)।

रोगात् — V. iv. 49

('चिकित्सा' गम्यमान हो तो रोगवाची शब्द से परे (भी जो षष्ठी, तदन्त प्रातिपदिक से विकल्प से तसि प्रत्यय होता है)।

रोगातपयोः — IV. iii. 13

(कालविशेषवाची शरत् शब्द से) रोग तथा आतप अभिधेय हो तो (ठञ् प्रत्यय विकल्प से होता है)।

रोगे — V. ii. 81

(कालवाची तथा प्रयोजनवाची प्रातिपदिकों से) 'रोग' अभिधेय हो तो (कन् प्रत्यय होता है)।

...रोगेषु — VI. iii. 50

देखें — **शोकष्यञ्रोगेषु VI. iii. 50**

...रोचनात् — IV. ii. 2

देखें — **लाक्षारोचनात् IV. ii. 2**

रोणी — IV. ii. 77

रोणी तथा रोणी अन्तवाले प्रातिपदिक से (चातुरर्थिक अण् प्रत्यय होता है)।

रोपधयोः — VI. iv. 47

(भ्रस्ज् धातु के) रेफ तथा उपधा के स्थान में (विकल्प से रम् आगम होता है, आर्धधातुक परे रहने पर)।

रोपधेतोः — IV. ii. 122

(प्राग्देशवाची) रेफ उपधावाले तथा ईकारान्त (वृद्ध-संज्ञक) प्रातिपदिकों से (शैषिक वुञ् प्रत्यय होता है)।

रोमन्थ... — III. i. 15

देखें — **रोमन्थतपोभ्याम् III. i. 15**

रोमन्थतपोभ्याम् — III. i. 15

रोमन्थ तथा तप (कर्म) से (यथासंख्य करके वर्तन और चरण अर्थ में क्यङ् प्रत्यय होता है)।

रोहिष्यै — III. iv. 10

(प्रयै), रोहिष्यै (तथा अव्यथिष्यै) शब्द (वेदविषय में तुमर्थ में निपातन किये जाते हैं)।

....रै... — VI. i. 165

देखें — **ऊडिदम् VI. i. 165**

...रौ... — II. iv. 85

देखें — **डारौरसः II. iv. 85**

...रौरव... — VI. ii. 38

देखें — **व्रीह्यपराहण० VI. ii. 38**

र्वोः — VIII. ii. 76

रेफान्त तथा वकारान्त जो (धातु पद) उसकी (उपधा इक् को दीर्घ होता है)।

र्हिल् — V. iii. 16

(सप्तम्यन्त इदम् प्रातिपदिक से) र्हिल् प्रत्यय होता है।

र्हिल् — V. iii. 21

(सप्तम्यन्त किम्, सर्वनाम और बहु प्रातिपदिकों से) र्हिल् प्रत्यय (विकल्प से) होता है; (अनद्यतन कालविशेष को कहना हो तो)।

...र्हिलौ — V. iii. 20

देखें — **दार्हिलौ V. iii. 20**

ल

ल् — प्रत्याहारसूत्र XIV

आचार्य पाणिनि द्वारा अपने चौदहवें अर्थात् अन्तिम प्रत्याहारसूत्र में इत्सञ्ज्ञार्थ पठित वर्ण।

ल्... — VII. ii. 2

देखें — **ल्रान्तस्य VII. ii. 2**

ल — प्रत्याहारसूत्र VI

भगवान् पाणिनि द्वारा अपने छठे प्रत्याहारसूत्र में पठित वर्ण।

पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी में पठित वर्णमाला का चौदहवां वर्ण।

ल... — I. iii. 8

देखें — **लशकु I. iii. 8**

ल... — II. iii. 69

देखें — **लोकाव्ययनिष्ठा० II. iii. 69**

लः — I. iv. 98

लादेश (परस्मैपदसंज्ञक होते हैं)।

लः — III. iv. 69

(सकर्मक धातुओं से) लकार (कर्मकारक में होते हैं, चकार से कर्ता में भी होते हैं और अकर्मक धातुओं से भाव में होते हैं तथा चकार से कर्ता में भी होते हैं)।

लः — VIII. ii. 18

(कृप् धातु के रेफ को) लकारादेश होता है।

लक्षण... — I. iv. 89

देखें — **लक्षणेत्यम्भूताख्यानभाग० I. iv. 89**

लक्षण... — III. ii. 126

देखें — **लक्षणहेत्वोः III. ii. 126**

...लक्षण... — IV. i. 70

देखें — **संहितशफलक्षण० IV. i. 70**

...लक्षण... — IV. i. 152

देखें — **सेनान्तलक्षण० IV. i. 152**

लक्षणस्य — VI. iii. 114

(कर्ण शब्द उत्तरपद रहते विष्ट, अष्टन्, पञ्चन्, मणि, भिन्न, छिन्न, छिद्र, स्रुव, स्वस्तिक — इन शब्दों को छोड़कर) लक्षणवाची शब्दों के (अण् को दीर्घ होता है, संहिता के विषय में)।

...लक्षणात् — VI. ii. 112

देखें — **वर्णलक्षणात् VI. ii. 112**

लक्षणे — I. iv. 83

लक्षण द्योतित हो रहा हो तो (अनु शब्द कर्मप्रवचनीय और निपातसंज्ञक होता है)।

लक्षणे — III. ii. 52

लक्षणवाची (कर्ता) अभिधेय होने पर (जाया और पति कर्म उपपद रहते 'हन्' धातु से 'टक्' प्रत्यय होता है)।

लक्षणेन — II. i. 13

लक्षण चिह्न वाची (सुबन्त) के साथ (आभिमुख्य अर्थ में वर्तमान अभि और प्रति का विकल्प से समास होता है और वह अव्ययीभावसंज्ञक होता है)।

...लक्षणेषु — IV. iii. 126

देखें — **संघाङ्कलक्षणेषु IV. iii. 126**

...लग्न... — VII. ii. 18

देखें — **क्षुब्धस्वान्त० VII. ii. 18**

लघु — I. iv. 10

(ह्रस्व अक्षर की) लघु संज्ञा होती है।

लघुनि — VII. iv. 93

(चङ्परक णि के परे रहते अङ्ग के अभ्यास को) लघु धात्वक्षर परे रहते (सन् के समान कार्य होता है, यदि अङ्ग के अक् प्रत्याहार का लोप न हुआ हो तो)।

लघुपूर्वात् — V. i. 130

(षष्ठीसमर्थ) लघु = ह्रस्व अक्षर पूर्व में है जिसके, ऐसे (इक् = इ, उ, ऋ, लृ अन्तवाले) प्रातिपदिक से (भी भाव और कर्म अर्थों में अण् प्रत्यय होता है)।

लघुपूर्वात् — VI. iv. 56

लघु = ह्रस्व अक्षर है पूर्व में जिससे, ऐसे वर्ण से उत्तर (णि के स्थान में ल्यप् परे रहते अयादेश हो जाता है)।

लघुप्रयत्नतरः — VIII. iii. 18

(भोः, भगो, अघो तथा अवर्ण पूर्व वाले पदान्त के वकार, यकार को) लघुप्रयत्नतर आदेश होता है, (शाकटायन आचार्य के मत में)।

उच्चारण में तालु आदि स्थान तथा जिह्वामूलादि की शिथिलता अर्थात् जिसके उच्चारण में थोड़ा बल पड़े, वह लघुप्रयत्नतर कहलाता है।

...लघूपधस्य — VII. iii. 86
देखें — पुगन्तलघूपधस्य VII. iii. 86

लघोः — VI. iv. 161
(हल् आदिवाले भसञ्ज्ञक अङ्ग के) लघु (ऋकार) के स्थान में (र आदेश होता है; इष्ठन्, इमनिच् तथा ईयसुन् परे रहते)।

लघोः — VII. i. 7
(हलादि अङ्ग के) लघु (अकार) को (परस्मैपदपरक इडादि सिच् के परे रहते विकल्प से वृद्धि नहीं होती)।

लघोः — VII. iv. 94
(चङ्परक णि के परे रहते अङ्ग के) लघु अभ्यास को (लघुधात्वक्षर परे रहते दीर्घ होता है)।

लङ् — III. ii. 111
(अनद्यतन भूतकाल में धातु से) लङ् प्रत्यय होता है।

लङ् — III. ii. 116
(ह, शश्वत् – ये शब्द उपपद हों तो धातु से अनद्यतन परोक्ष भूतकाल में) लङ् प्रत्यय होता है (और चकार से लिट् भी होता है)।

लङ्— III. iii. 176
(स्म शब्द अधिक है जिससे, उस माङ् शब्द के उपपद रहते धातु से) लङ् (तथा लुङ् प्रत्यय होते हैं)।

...लङ्... — III. iv. 7
देखें — लुङ्लङ्लिटः III. iv. 7

...लङ्... — VI. iv. 71
देखें — लुङ्लङ्लृङ्क्षु VI. iv. 71

लङः — III. iv. 111
(आकारान्त धातुओं से उत्तर) लङ् के स्थान में (जो झि आदेश, उसको जुस् आदेश होता है, शाकटायन के मत में ही)।

लङ्वत् — III. iv. 85
(लोट् लकार को) लङ् के समान कार्य हो जाते हैं।

लच् — V. ii. 96
(प्राणिस्थवाची आकारान्त प्रातिपदिकों से 'मत्वर्थ' में विकल्प से) लच् प्रत्यय होता है।

लट् — III. ii. 118
(परोक्ष अनद्यतन भूतकाल में वर्तमान धातु से स्म शब्द उपपद रहते) लट् प्रत्यय होता है।

लट् — III. ii. 122
(वर्तमान काल में विद्यमान धातु से) लट् प्रत्यय होता है।

लट् — III. iii. 4
(यावत् तथा पुरा निपातों के उपपद रहने पर भविष्यत् काल में धातु से) लट् प्रत्यय होता है।

लट् — III. iii. 142
(निन्दा गम्यमान हो तो अपि तथा जातु उपपद रहते धातु से) लट् प्रत्यय होता है।

लटः — III. ii. 128
(धातु से) लट् के स्थान में (शतृ तथा शानच् आदेश होते हैं, यदि अप्रथमान्त के साथ उस लट् का सामानाधिकरण्य हो)!

लटः — III. iv. 83
(विद् ज्ञाने धातु से) लडादेश (तिप् आदि) जो परस्मैपदसंज्ञक, उनके स्थान में (क्रमशः णल्, अतुस्, उस्, थल्, अथुस्, अ, णल्, व, म— 9 आदेश विकल्प से होते हैं)।

लप... — III. ii. 145
देखें — लपसृद्रु० III. ii. 145

लपसृद्रुमथवदवसः — III. ii. 145
(प्र पूर्वक) लप, सृ, द्रु, मथ, वद, वस्– इन धातुओं से (तच्छीलादि कर्ता हों तो वर्तमानकाल में घिनुण् प्रत्यय होता है)।

...लपि... — III. i. 126
देखें — आसुयुवपि० III. i. 126

...लब्ध... — IV. iii. 38
देखें — कृतलब्ध० IV. iii. 38

लब्धा — IV. iv. 84
(द्वितीयासमर्थ धन और गण प्रातिपदिकों से) प्राप्त करने वाला अभिप्रेत हो (तो यत् प्रत्यय होता है)।

...लभ... — VII. iv. 54
देखें — मीमाघु० VII. iv. 54

लभेः — VII. i. 64
(शप् तथा लिट्वर्जित अजादि प्रत्ययों के परे रहते) 'डुलभष् प्राप्तौ' अङ्ग को (भी नुम् आगम होता है)।

...लभ्य... — V. i. 92
देखें — परिजय्यलभ्य० V. i. 92

ललाट... — IV. iv. 46
देखें — ललाटकुक्कुट्यौ IV. iv. 46

ललाटकुक्कुट्यौ — IV. iv. 46
(द्वितीयासमर्थ) ललाट तथा कुक्कुटी प्रातिपदिकों से (संज्ञा गम्यमान होने पर 'देखता है' — अर्थ में ढक् प्रत्यय होता है)।

...ललाटात् — IV. iii. 65
देखें— कर्णललाटात् IV. iii. 65

...ललाटयोः — III. ii. 36
देखें — असूर्यललाटयोः III. ii. 36

...ललामम् — IV. iv. 40
देखें — प्रतिकण्ठार्थललामम् IV. iv. 40

...लवण... — III. i. 21
देखें — मुण्डमिश्र० III. i. 21

...लवण... — V. i. 120
देखें — अचतुरमङ्गल० V. i. 120

...लवणयोः — VI. ii. 4
देखें — गाधलवणयोः VI. ii. 4

लवणात् — IV. iv. 24
(तृतीयासमर्थ) लवण प्रातिपदिक से 'मिला हुआ' अर्थ में उत्पन्न प्रत्यय का लुक् होता है)।

लवणात् — IV. iv. 52
(प्रथमासमर्थ) लवण प्रातिपदिक से ('इसका बेचना' अर्थ में ठञ् प्रत्यय होता है)।

...लवणानाम् — VII. i. 51
देखें — अश्वक्षीर० VII. i. 51

लवने — VI. i. 135
काटने के विषय में (कॄ विलेपे धातु के परे रहते उप उपसर्ग से उत्तर ककार से पूर्व सुट् का आगम होता है, संहिता के विषय में)।

लशकु — I. iii. 8
(उपदेश में प्रत्यय के आदि में वर्तमान) लकार, शकार और कवर्ग (इत्सञ्ज्ञक होते हैं, तद्धित को छोड़कर)।

...लष... — III. ii. 150
देखें — जुचङ्क्रम्य० III. ii. 150

लष... — III. ii. 154
देखें — लषपत० III. ii. 154

...लषः — III. i. 70
देखें — भ्राशभ्लाश० III. i. 70

लषः — III. ii. 144
(अपपूर्वक तथा चकार से विपूर्वक) लष् धातु से (भी घिनुण् प्रत्यय होता है)।

लषपतपदस्थाभूवृषहनकमगमशृभ्यः — III. ii. 154
लष, पत, पद, स्था, भू, वृष, हन्, कम्, गम तथा शॄ – इन धातुओं से (तच्छीलादि कर्ता हो, तो वर्तमान काल में उकञ् प्रत्यय होता है)।

...लस... — III. ii. 143
देखें — कषलस० III. ii. 143

लसार्वधातुकम् — VI. i. 180
(तासि प्रत्यय, अनुदात्तेत् धातु, ङित् धातु तथा उपदेश में जो अवर्णान्त– इनसे उत्तर) लकार के स्थान में जो सार्वधातुक प्रत्यय, वे (अनुदात्त होते हैं; ह्नुङ् तथा इङ् धातु को छोड़कर)।

...लसेभ्यः — V. i. 120
देखें — अचतुरमङ्गल० V. i. 120

लस्य — III. iv. 77
(यहाँ से आगे जो कार्य कहेंगे, वे) लकार के स्थान में (हुआ करेंगे)।

लाक्षा... — IV. ii. 2
देखें — लाक्षारोचनात् IV. ii. 2

लाक्षारोचनात् — IV. ii. 2
(तृतीयासमर्थ रागविशेषवाची) लाक्षा तथा रोचना प्रातिपदिकों से ('रंगा गया' अर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।
लाक्षा = लाख, लाल रंग।
रोचना = उज्ज्वल आकाश, सुन्दर स्त्री, एक प्रकार का पीला रंग।

...लाभ... — V. i. 46
देखें — वृद्ध्यायलाभ० V. i. 46

...लासेषु — VI. iii. 49
देखें — लेखयदणलासेषु VI. iii. 49

लि — VIII. iv. 59
(तवर्ग के स्थान में) लकार परे रहते (परसवर्ण आदेश होता है)।

लिङ् ...— I. ii. 11
देखें — **लिङ्सिचौ I. ii. 11**

लिङ् — III. iii. 9
(दो घड़ी से ऊपर के भविष्यत्काल को कहना हो तो लोडर्थलक्षण में वर्तमान धातु से) लिङ् प्रत्यय (भी विकल्प से होता है, साथ में लट् भी)।

लिङ् — III. iii. 134
(आशंसावाची शब्द उपपद हो तो धातु से) लिङ् प्रत्यय होता है।

लिङ् — III. iii. 143
(गर्हा गम्यमान हो तो कथम् शब्द उपपद रहते विकल्प से) लिङ् प्रत्यय होता है (तथा चकार से लट् प्रत्यय भी होता है)।

लिङ् ... — III. iii. 144
देखें — **लिङ्लृटौ III. iii. 144**

लिङ् — III. iii. 147
(अनवक्लृप्ति = असम्भावना तथा अमर्ष = सहन न करना अभिधेय हो तो जातु तथा यद् उपपद रहते धातु से) लिङ् प्रत्यय होता है।

लिङ् — III. iii. 152
(उत, अपि समानार्थक उपपद हों तो धातु से) लिङ् प्रत्यय होता है।

लिङ् — III. iii. 156
(हेतु और हेतुमत् अर्थ में वर्तमान धातु से) लिङ् प्रत्यय (विकल्प से होता है)।

लिङ् ... — III. iii. 157
देखें — **लिङ्लोटौ III. iii. 157**

लिङ् — III. iii. 159
(समानकर्तृक इच्छार्थक धातुओं के उपपद रहते धातु से) लिङ् प्रत्यय भी होता है।

लिङ् — III. iii. 161
(आज्ञा देना, निमन्त्रण, आमन्त्रण, सत्कारपूर्वक व्यवहार करना, सम्प्रश्न, प्रार्थना अर्थों में धातु से) लिङ् प्रत्यय होता है।

लिङ् — III. iii. 164
(प्रैष = प्रेरणा देना, अतिसर्ग = कामचारपूर्वक आज्ञा देना तथा प्राप्तकाल = समय आ जाना अर्थ गम्यमान हों तो मुहूर्त्तभर से ऊपर के काल के कहने में धातु से) लिङ् प्रत्यय होता है (तथा चकार से यथाप्राप्त कृत्यसंज्ञक एवं लोट् प्रत्यय होते हैं)।

लिङ् — III. iii. 168
(काल, समय, वेला और यत् शब्द भी उपपद हो तो धातु से) लिङ् प्रत्यय होता है।

लिङ् — III. iii. 172
(शक्यार्थ गम्यमान हो तो धातु से) लिङ् प्रत्यय होता है, (तथा चकार से कृत्यसंज्ञक प्रत्यय भी होते हैं)।

लिङ्... — III. iii. 173
देखें — **लिङ्लोटौ III. iii. 173**

लिङ् — III. iv. 116
(आशीर्वाद अर्थ में जो) लिङ्, (वह आर्धधातुकसंज्ञक होता है)।

लिङ:... — VII. ii. 42
देखें — **लिङ्सिचोः VII. ii. 42**

लिङः — III. iv. 102
लिङ् के आदेशों को (सीयुट् आगम होता है)।

लिङः — VII. ii. 79
(सार्वधातुक में) लिङ् लकार के (अनन्त्य सकार का लोप होता है)।

लिङर्थे — III. iv. 7
(वेदविषय में) लिङ् के अर्थ में (विकल्प से लेट् प्रत्यय होता है और वह परे होता है)।

लिङि — II. iv. 42
(आर्धधातुक) लिङ् के परे रहते (हन् को वध आदेश होता है)।

लिङि — III. i. 86
आशीर्वादार्थक लिङ् परे रहते (धातु से अङ् प्रत्यय होता है, छन्दविषय में)।

लिङि — VI. iv. 67
(कित्, ङित्) लिङ् (आर्धधातुक) परे रहते (घु, मा, स्था, गा, पा, हा तथा सा – इन अङ्गों को एकारादेश हो जाता है)।

लिङि — VII. ii. 39

(वृ तथा ऋकारान्त धातुओं से उत्तर इट् को) लिङ् परे रहते (दीर्घ नहीं होता)।

लिङि — VII. iv. 24

(उपसर्गों से उत्तर 'इण् गतौ' अङ्ग को यकारादि कित्, ङित्) लिङ् परे रहते (ह्रस्व होता है)।

...लिङोः — I. iii. 61

देखें — **लुङ्लिङोः I. iii. 61**

...लिङ्क्षु — VII. iv. 28

देखें — **शयग्लिङ्क्षु VII. iv. 28**

...लिङ्ग... — II. iii. 46

देखें — **प्रातिपदिकार्थलिङ्ग० II. iii. 46**

लिङ्गम् — II. iv. 26

लिङ्ग (पर के समान होता है, द्वन्द्व और तत्पुरुष का)।

लिङ्निमित्ते — III. iii. 139

(भविष्यत्काल में) लिङ् का निमित्त होने पर (क्रिया का उल्लंघन अथवा सिद्ध न होना गम्यमान हो तो धातु से लृङ् प्रत्यय होता है)।

लिङ्लृटौ — III. iii. 144

(किंवृत्त उपपद हो तो गर्हा गम्यमान होने पर धातु से) लिङ् तथा लृट् प्रत्यय होते हैं।

लिङ्लोटौ — III. iii. 157

(इच्छार्थक धातुओं के उपपद रहते) लिङ् तथा लोट् प्रत्यय होते हैं।

लिङ्लोटौ — III. iii. 173

(आशीर्वादविशिष्ट अर्थ में वर्तमान धातु से) लिङ् तथा लोट् प्रत्यय होते हैं।

लिङ्सिचोः — VII. ii. 42

(वृ तथा ऋकारान्त धातुओं से उत्तर आत्मनेपदपरक) लिङ् तथा सिच् को (विकल्प से इट् आगम होता है)।

लिङ्सिचौ — I. ii. 10

(इक् के समीप जो हल् उससे परे) लिङ् और सिच् प्रत्यय (आत्मनेपदविषय में कित्वत् होते हैं)।

लिट् — I. ii. 5

(असंयोगान्त धातु से परे अपित्) लिट् प्रत्यय (कित्वत् होता है)।

लिट् — III. ii. 105

(वेदविषय में भूतकाल सामान्य में धातुमात्र से) लिट् प्रत्यय होता है)।

लिट् — III. ii. 115

(अनद्यतन परोक्ष भूतकाल में वर्तमान धातु से) लिट् प्रत्यय होता है।

लिट् — III. ii. 171

(आत् = आकारान्त, ऋ = ऋकारान्त तथा गम्, हन्, जन् धातुओं से तच्छीलादि कर्त्ता हो तो वेदविषय में वर्तमानकाल में कि तथा किन् प्रत्यय होते हैं और उन कि, किन् प्रत्ययों को) लिट् के समान कार्य होता है।

लिट् — III. iv. 115

लिडादेश जो तिबादि, उनकी (भी आर्धधातुक संज्ञा होती है)।

लिट्... — VI. i. 29

देखें — **लिड्यङोः VI. i. 29**

लिटः — III. ii. 106

(वेदविषय में भूतकाल में विहित) लिट् के स्थान में (विकल्प से कानच् आदेश होता है)।

...लिटः — III. iv. 7

देखें — **लुङ्लङ्लिटः III. iv. 7**

लिटः — III. iv. 81

लिट् के स्थान में (जो त और झ आदेश, उनको यथासङ्ख्य करके एश् तथा इरेच् आदेश होते हैं)।

...लिटाम् — VIII. iii. 78

देखें — **षीध्वंलुङ्लिटाम् VIII. iii. 78**

लिटि — II. iv. 40

(अद् को विकल्प से घस्लृ आदेश होता है) लिट् के परे रहते।

लिटि — II. iv. 49

(आर्धधातुक) लिट् परे रहते (इङ् को गाङ् आदेश होता है)।

लिटि — II. iv. 55

(आर्धधातुक) लिट् परे रहने पर (चक्षिङ् को विकल्प से ख्या आदेश होता है)।

लिटि — III. i. 35

लिट् परे रहते (कास् धातु और प्रत्ययान्त धातुओं से आम् प्रत्यय होता है, अमन्त्रविषय में)।

लिटि — III. i. 40

लिट् परे रहते (आम् प्रत्यय के बाद कृञ् = कृ तथा भू, अस् का भी अनुप्रयोग होता है)।

लिटि — VI. i. 8

लिट् लकार के परे रहते (धातु के अवयव अनभ्यास प्रथम एकाच् एवं अजादि के द्वितीय एकाच् को द्वित्व होता है)।

लिटि — VI. i. 17

(दोनों के अर्थात् वचि-स्वपि-यजादि तथा ग्रहिज्यादियों के अभ्यास को सम्प्रसारण हो जाता है,) लिट् लकार के परे रहते।

लिटि — VI. i. 37

लिट् लकार के परे रहते (वय् धातु के यकार को सम्प्रसारण नहीं होता है)।

लिटि — VI. i. 45

(उपदेश में एजन्त व्येञ् धातु को आकारादेश नहीं होता है) लिट् लकार के परे रहते।

लिटि — VI. iv. 12

(लिट् परे रहते जिस अङ्ग के आदि को आदेश नहीं हुआ है, उसके असहाय हलों के बीच में वर्तमान जो अकार, उसको एकारादेश तथा अभ्यासलोप हो जाता है; कित्, ङित्) लिट् परे रहते।

लिटि — VII. ii. 13

(कृ, सृ, भृ, वृ, स्तु, द्रु, स्रु श्रु—इन अङ्गों को) लिट् प्रत्यय परे रहते (इट् आगम नहीं होता)।

लिटि — VII. iv. 9

('देङ् रक्षणे' धातु को) लिट् लकार परे रहते (दिगि आदेश होता है)।

लिटि — VII. iv. 68

(व्यथ् अङ्ग के अभ्यास को) लिट् परे रहते (सम्प्रसारण होता है)।

लिटि — VIII. iii. 118

लिट् परे रहते (षद् धातु के सकार को मूर्धन्य आदेश नहीं होता)।

...लिटोः — VI. iv. 88
देखें — लुङ्लिटोः VI. iv. 88

...लिटोः — VII. i. 63
देखें — अशब्लिटोः VII. i. 63

...लिटोः — VII. iii. 57
देखें — सन्लिटोः VII. iii. 57

लिड्यङोः — VI. i. 29

लिट् तथा यङ् के परे रहते (भी ओप्यायी धातु को पी आदेश होता है)।

लिति — VI. i. 187

लित् प्रत्यय के परे रहते (प्रत्यय से पूर्व को उदात्त होता है)।

लिपि...— III. i. 53
देखें — लिपिसिचिह्वः III. i. 53

...लिपि...— III. ii. 21
देखें — दिवाविभा० III. ii. 21

लिपिसिचिह्वः — III. i. 53

लिप, सिच तथा ह्वेञ् से (भी च्लि के स्थान में अङ् आदेश होता है, कर्तृवाची लुङ् परे रहने पर)।

लिप्सायाम् — III. iii. 6

प्राप्त करने की इच्छा या प्रार्थना की अभिलाषा गम्यमान होने पर (किंवृत्त उपपद हो तो भविष्यत्काल में धातु से विकल्प से लट् प्रत्यय होता है)।

लिप्सायाम् — III. iii. 46

प्राप्त करने की इच्छा गम्यमान हो (तो प्र पूर्वक ग्रह् धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

लिप्स्यमानसिद्धौ — III. iii. 7

चाहे जाते हुए अभीष्ट पदार्थ से सिद्धि गम्यमान हो तो (भी भविष्यत्काल में धातु से विकल्प से लट् प्रत्यय होता है)।

...लिबि... — III. ii. 21
देखें — दिवाविभा० III. ii. 21

लिम्प... — III. i. 138
देखें — लिम्पविन्द० III. i. 138

लिम्पविन्दधारिपारिवेद्युदेजिचेतिसातिसाहिभ्यः — III. i. 138

(उपसर्गरहित) लिप उपदेहे, विद्लृ लाभे तथा णिच्प्रत्ययान्त धृञ् धारणे, पृ पालनपूरणयोः, विद चेतनाख्याननिवासेषु, उद्पूर्वक एजृ कम्पने, चिती संज्ञाने, साति (सौत्र) तथा षह मर्षणे—इन धातुओं से (भी श प्रत्यय होता है)।

लियः — I. iii. 70

(ण्यन्त)'ली' धातु से (आत्मनेपद होता है; सम्मानन, शालीनीकरण और प्रलम्भन अर्थ में)।

सम्मानन = पूजन।

शालीनीकरण = अभिभवन, दबाना।

प्रलम्भन = ठगना।

...लिह...— III. i. 141
देखें— श्याद्व्यध० III. i. 141

...लिह...— VII. iii. 73
देखें — दुहदिह० VII. iii. 73

लिहः — III. ii. 32

'लिह्' धातु से (वह और अभ्र कर्म उपपद रहते 'खश्' प्रत्यय होता है)।

वह = कन्धा।

अभ्र = बादल।

ली...— VII. iii. 39
देखें — लीलोः VII. iii. 39

लीयतेः — VI. i. 50

ली धातु को (ल्यप् परे रहते तथा एच् के विषय में विकल्प से उपदेश अवस्था में ही आत्त्व हो जाता है)।

लीलोः — VII. iii. 39

ली तथा ला अङ्ग को (स्नेह = घृतादि पदार्थ के पिघलना अर्थ में णि परे रहते विकल्प से क्रमशः नुक् तथा लुक् आगम होते हैं)।

लुक्... — I. i. 60
देखें — लुक्श्लुलुपः I. i. 60

लुक् — I. ii. 49

(तद्धित के लुक् हो जाने पर उपसर्जन स्त्रीप्रत्यय का) लुक् = अदर्शन हो जाता है।

लुक् — II. iv. 58

(ण्यन्त गोत्रप्रत्ययान्त, क्षत्रियवाची गोत्रप्रत्ययान्त, ऋषिवाची गोत्रप्रत्ययान्त तथा ञित् गोत्रप्रत्ययान्त शब्द से युवापत्य में विहित अण् और इञ् प्रत्ययों का) लुक् हो जाता है।

लुक् — IV. i. 88

(प्राग्दीव्यतीय अर्थों में विहित अपत्य अर्थ से भिन्न द्विगुसम्बन्धी जो तद्धित, उसका) लुक् होता है।

लुक् — IV. i. 90

(प्राग्दीव्यतीय अजादि प्रत्यय की विवक्षा में युवा अर्थ में उत्पन्न प्रत्यय का) लुक् हो जाता है।

लुक् — IV. i. 109

(आङ्गिरस गोत्रापत्य में जो यञ् प्रत्यय, उसका स्त्री अभिधेय हो तो) लुक् हो जाता है।

लुक् — IV. i. 173

(क्षत्रियाभिधायी, जनपदवाची जो कम्बोज शब्द, उससे अपत्यार्थ में विहित तद्राजसंज्ञक प्रत्यय का) लुक् हो जाता है।

लुक् — IV. ii. 63

(द्वितीयासमर्थ–प्रोक्त प्रत्ययान्त प्रातिपदिक से अध्येतृ-वेदितृ-विषयक प्रत्यय का) लुक् हो जाता है।

लुक् — IV. iii. 34

(श्रविष्ठा, फल्गुनी, अनुराधा, स्वाति, तिष्य, पुनर्वसु, हस्त, विशाखा, अषाढा तथा बहुल प्रातिपदिकों से जातार्थ में उत्पन्न प्रत्यय का) लुक् होता है।

लुक् — IV. iii. 107

(कठ और चरक शब्द से उत्पन्न प्रोक्त प्रत्यय का छन्द विषय में) लुक् होता है।

लुक् — IV. iii. 160

(फल अभिधेय हो तो विकार) और अवयव अर्थों में विहित प्रत्यय का) लुक् होता है।

लुक् — IV. iii. 165

(षष्ठीसमर्थ कंसीय, परशव्य प्रातिपदिकों से विकार अर्थ में यथासङ्ख्य करके यञ् और अञ् प्रत्यय होते हैं तथा प्रत्यय के साथ साथ कंसीय और परशव्य का) लुक् (भी) होता है।

लुक् — IV. iv. 24

(तृतीयासमर्थ लवण प्रातिपदिक से मिला हुआ अर्थ में उत्पन्न प्रत्यय का) लुक् होता है।

लुक् — IV. iv. 79

(द्वितीयासमर्थ एकधुर प्रातिपदिक से 'ढोता है' अर्थ में ख प्रत्यय तथा उसका) लोप होता है।

लुक् — IV. iv. 125

(उपधान मन्त्र समानाधिकरण प्रथमासमर्थ मतुबन्त प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में यत् प्रत्यय होता है, यदि षष्ठ्यर्थ में निर्दिष्ट ईंटें ही हों तथा मतुप् का) लुक् (भी) हो जाता है,(वेदविषय में)।

लुक् — V. i. 28

(अध्यर्द्ध शब्द पूर्व हो जिसके उससे तथा द्विगु-सञ्ज्ञक प्रातिपदिक से 'तदर्हति'-पर्यन्त कथित अर्थों में उत्पन्न प्रत्यय का) लुक् होता है,(सञ्ज्ञाविषय को छोड़कर)।

लुक्...— V. i. 54

देखें — **लुक्खौ V. i. 54**

लुक् — V. i. 87

(द्वितीयासमर्थ वर्ष-शब्दान्त द्विगुसञ्ज्ञक प्रातिपदिकों से 'सत्कारपूर्वक व्यापार', 'खरीदा हुआ', 'हो चुका' तथा 'होने वाला'-इन अर्थों में विकल्प करके ख प्रत्यय तथा विकल्प से) प्रत्यय का लुक् होता है।

लुक् — V. ii. 60

('अध्याय' और 'अनुवाक' अभिधेय होने पर मत्वर्थ में विहित छ प्रत्यय का) लुक् हो जाता है।

लुक् — V. ii. 77

(ग्रहण क्रिया के समानाधिकरणवाची पूरण-प्रत्ययान्त प्रातिपदिक से स्वार्थ में कन् प्रत्यय होता है तथा विकल्प से) पूरण प्रत्यय का लुक् भी हो जाता है।

लुक् — V. iii. 30

(दिशा, देश और काल अर्थों में वर्तमान सप्तम्यन्त, पञ्चम्यन्त तथा प्रथमान्त **अञ्चु धातु अन्त**वाले दिशावाची प्रातिपदिकों से उत्पन्न अस्ताति प्रत्यय का) लुक् होता है।

लुक् — V. iii. 65

(विन् और मतुप् प्रत्ययों का) लुक् होता है; (अजादि अर्थात् इष्ठन्, ईयसुन् प्रत्यय परे रहते)।

लुक् — VI. iv. 104

(चिण् से उत्तर प्रत्यय का) लुक् होता है।

लुक् — VI. iv. 153

(बिल्वकादि शब्दों से उत्तर भसञ्ज्ञक छ का) लुक् होता है।

लुक् — VII. i. 22

(षट्सञ्ज्ञक से उत्तर जश्, शस् का) लुक् होता है।

...लुक्...— VII. i. 39

देखें — **सुलुक्० VII. i. 39**

लुक् — VII. iii. 73

(दुह प्रपूरणे, दिह उपचये, लिह आस्वादने, गुहू संवरणे-इन धातुओं के क्स का विकल्प से) लुक् होता है,(दन्त्य अक्षर आदि वाले आत्मनेपद-सञ्ज्ञक प्रत्ययों के परे रहते)।

लुकि — VII. iii. 89

(उकारान्त अङ्ग को) लुक् हो जाने पर (हलादि पित् सार्वधातुक परे रहते वृद्धि होती है)।

लुकि — VII. iv. 91

(ऋकार उपधावाले अङ्ग के अभ्यास को रुक्, रिक् तथा चकार से रीक् आगम होता है) यङ्लुक् में।

...लुकोः — VII. iv. 82

देखें — **यङ्लुकोः VII. iv. 82**

...लुकौ — V. iii. 51

देखें — **कन्लुकौ V. iii. 51**

...लुकौ — VII. iii. 39

देखें — **नुग्लुकौ VII. iii. 39**

लुक्खौ — V. i. 54

(द्वितीयासमर्थ द्विगुसञ्ज्ञक कुलिजशब्दान्त प्रातिपदिक से 'सम्भव है', 'अवहरण' करता है तथा 'पकाता है' अर्थों में) प्रत्यय का लुक्, ख प्रत्यय (तथा ष्ठन् प्रत्यय होते हैं)।

लुक्श्लुलुपः — I. i. 60

लुक्, श्लु, लुप् संज्ञायें (प्रत्यय के अदर्शन की होती हैं)।

लुङ्... — I. iii. 61

देखें — **लुङ्लिङोः I. iii. 61**

लुङ्... — II. iv. 37
देखें — लुङ्सनोः II. iv. 37

लुङ्... — II. iv. 50
देखें — लुङ्लृङोः II. iv. 50

लुङ् — III. ii. 110

(सामान्य भूतकाल में वर्तमान धातु से) लुङ् प्रत्यय होता है।

लुङ् — III. ii. 122

(स्मशब्दरहित पुरा शब्द उपपद हो तो अनद्यतन भूतकाल में धातु से) लुङ् प्रत्यय (विकल्प से) होता है,(चकार से लट् भी होता है)।

लुङ् — III. iii. 175

(माङ् शब्द उपपद हो तो धातु से) लुङ्, (लिङ्, लोट्) प्रत्यय भी होते हैं।

लुङ् ... — III. iv. 7
देखें — लुङ्लङ्लिटः III. iv. 7

लुङ् ...— VI. iv. 71
देखें — लुङ्लङ्लृङ्क्षु VI. iv. 71

लुङ् ...— VI. iv. 87
देखें — लुङ्लिटोः VI. iv. 87

...लुङ् ... — VIII. iii. 78
देखें — षीध्वंलुङ्लिटाम् VIII. iii. 78

लुङि — I. iii. 91

(द्युतादि धातुओं से) लुङ् लकार में (विकल्प से परस्मैपद होता है)।

लुङि — II. iv. 43

(आर्धधातुक) लुङ् परे रहते (भी हन् को वध आदेश होता है)।

लुङि — II. iv. 45

(आर्धधातुक) लुङ् परे रहते (इण् को गा आदेश होता है)।

लुङि — III. i. 43

लुङ् परे रहते (धातु से च्लि प्रत्यय होता है)।

लुङ्लङ्लिटः — III. iv. 6

(वेदविषय में धात्वर्थसम्बन्ध होने पर विकल्प से) लुङ्, लङ् तथा लिट् प्रत्यय होते हैं।

लुङ्लङ्लृङ्क्षु — VI. iv. 71

लुङ्, लङ् तथा लृङ् के परे रहते (अङ्ग को अट् का आगम होता है और वह अट् उदात्त भी होता है)।

लुङ्लिङोः — I. iii. 61

लुङ्, लिङ् लकार में (तथा शित् विषय में जो 'मृङ् प्राणत्यागे' धातु उससे आत्मनेपद होता है)।

लुङ्लिटोः — VI. iv. 88

(भू अङ्ग को वुक् आगम होता है,) लुङ् तथा लिट् (अजादि) प्रत्यय के परे रहते।

लुङ्लृङोः — II. iv. 50

लुङ् और लृङ् परे रहते (इङ् को गाङ् आदेश विकल्प से होता है)।

लुङ्सनोः — II. iv. 37

लुङ् और सन् (आर्धधातुक) परे रहते (अद् को घस्लृ आदेश होता है)।

...लुञ्चि... — I. ii. 24
देखें — वञ्चिलुञ्च्यृतः I. ii. 24

लुट् — III. iii. 15

(अनद्यतन भविष्यत्काल में धातु से) लुट् प्रत्यय होता है (और वह आगे होता है)।

लुट् — VIII. i. 29

(पद से उत्तर) लुडन्त (तिङन्त को अनुदात्त नहीं होता)।

लुटः — II. iv. 85

लुट् लकार के (प्रथम पुरुष के स्थान में क्रमशः डा, रौ और रस् आदेश होते हैं)।

लुटि — I. iii. 93

लुट् लकार में (एवं स्य, सन् प्रत्ययों के होने पर भी कृपू धातु से विकल्प से परस्मैपद होता है)।

...लुटोः — III. i. 33
देखें — लृलुटोः III. i. 33

...लुण्ठ...— III. ii. 155
देखें — जल्पभिक्ष० III. ii. 155

लुप् — I. ii. 54

लुब्विधायक सूत्र = जनपदे लुप्, वरणादिभ्यश्च इत्यादि (भी विहित नहीं किये जा सकते, निवासादि

सम्बन्ध के अप्रतीत होने से)।

लुप् — IV. ii. 4

(पूर्वसूत्र से नक्षत्रवाची शब्दों से विधान किये गये प्रत्यय का यदि सामान्यतया नक्षत्रयोग कहना हो तो) लुप् होता है।

लुप् — IV. ii. 80

(ङ्यन्त, आबन्त प्रातिपदिक से देशसामान्य में जो चातुरर्थिक प्रत्यय, उसका, प्रान्तविशेष को कहना हो तो) लुप् हो जाता है।

लुप् — IV. iii. 163

(षष्ठीसमर्थ जम्बू प्रातिपदिक से फल अभिधेय होने पर विकारावयव अर्थों में विहित प्रत्यय का विकल्प से) लुप् (भी) होता है।

लुप्...— V. ii. 105
देखें — लुबिलचौ V. ii. 105

लुप् — V. iii. 98

(संज्ञाविषय में विहित कन् प्रत्यय का मनुष्य अभिधेय होने पर) लुप् हो जाता है।

लुप...— III. i. 24
देखें— लुपसदचर० III. i. 24

...लुपः — I. i. 60
देखें — लुक्श्लुलुपः I. i. 60

लुपसदचरजपजभदहदशगृभ्यः — III. i. 24

लुप, सद, चर, जप, जभ, दह, दश, गृ —इन धातुओं से (भाव की निन्दा अर्थात् धात्वर्थ की निन्दा में ही यङ् प्रत्यय होता है)।

लुपि — I. ii. 51

प्रत्यय के लुप् अर्थात् अदर्शन होने पर (उस प्रत्यय के अर्थ में लिङ्ग और संख्या प्रकृत्यर्थ के समान हों)।

लुपि — II. iii. 45

लुबन्त (नक्षत्रवाची) शब्द से (तृतीया और सप्तमी विभक्ति होती है)।

लुबिलचौ — V. ii. 105

(सिकता तथा शर्करा प्रातिपदिकों से 'देश' अभिधेय हो तो) लुप् और इलच् प्रत्यय (तथा अण् प्रत्यय विकल्प से होते हैं, मत्वर्थ में)।

लुब्धयोगे — V. iv. 126

(बहुव्रीहि समास में) व्याध का सम्बन्ध होने पर ('दक्षिणेर्मा' शब्द अनिच्-प्रत्ययान्त निपातन किया जाता है)।

...लुभ...— VII. ii. 48
देखें — इषसहलुभ० VII. ii. 48

लुभः — VII. ii. 54

(व्याकुल करने अर्थ में वर्तमान) लुभ् धातु से उत्तर (क्त्वा तथा निष्ठा को इट् आगम होता है)।

लुमता — I. i. 62

लुमान् = लुक्, श्लु, लुप् शब्दों से (प्रत्यय का अदर्शन हुआ हो तो उसके परे रहते जो अङ्ग, उस अङ्ग को जो प्रत्यय-लक्षण कार्य प्राप्त हों, वे नहीं होते)।

...लू...— III. ii. 184
देखें — अर्तिलूधू० III. ii. 184

लृ...— III. i. 33
देखें — लृलुटोः III. i. 33

लृङ् — III. iii. 139

(भविष्यत्काल में लिङ् का निमित्त होने पर क्रिया का उल्लंघन अथवा सिद्ध न होना गम्यमान हो तो धातु से) लृङ् प्रत्यय होता है।

...लृङोः — II. iv. 50
देखें — लुङ्लृङोः II. iv. 50

...लृङ्क्षु — VI. iv. 71
देखें — लुङ्लङ्० VI. iv. 71

लृट् — III. ii. 112

(अभिज्ञावचन अर्थात् स्मृति को कहने वाला कोई शब्द उपपद हो तो धातु से अनद्यतन भूतकाल में) लृट् प्रत्यय होता है।

लृट् — III. iii. 13

(धातु से केवल भविष्यत्काल में तथा क्रियार्थ क्रिया उपपद रहने पर भी भविष्यत्काल में) लृट् प्रत्यय होता है।

लृट् — III. iii. 133

(शीघ्रवाची शब्द उपपद हो तो आशंसा गम्यमान होने पर धातु से) लृट् प्रत्यय होता है।

लृट् — III. iii. 146

(अनवक्लृप्ति तथा अमर्ष गम्यमान हों तो किंकिल तथा अस्ति अर्थ वाले पदों के उपपद रहते धातु से) लृट् प्रत्यय होता है।

लृट् — III. iii. 151

(यदि का प्रयोग न हो तो यच्च, यत्र से भिन्न शब्द उपपद हो तो चित्रीकरण गम्यमान होने पर धातु से) लृट् प्रत्यय होता है।

लृट् — VII. i. 47

(एहि तथा मन्ये से युक्त) लृडन्त तिङन्त को (हँसी गम्यमान हो तो अनुदात्त नहीं होता)।

लृट् — VIII. i. 51

(गति अर्थवाले धातुओं के लोट् लकार से युक्त) लृडन्त (तिङन्त को अनुदात्त नहीं होता, यदि कारक सारा अन्य न हो तो)।

लृटः — III. iii. 14

(भविष्यत्काल में विहित जो) लृट्, उसके स्थान में (सत्संज्ञक शतृ, शानच् प्रत्यय विकल्प से होते हैं)।

...लृटौ — III. iii. 144
देखें — **लिङ्लृटौ III. iii. 144**

...लृदितः — III. i. 55
देखें — **पुषादिद्युताद्य० III. i. 55**

लृलुटोः — III. i. 33

(धातु से) लृ = लृट्, लृङ् तथा लुट् परे रहते (यथासंख्य करके स्य तथा तास् प्रत्यय हो जाते हैं)।

लेः — II. iv. 80

(घस, ह्वर, णश, वृ, दह, आदन्त, वृच्, कृ, गम् और जन् से विहित) च्लि का (लुक् होता है, मन्त्रविषयक प्रयोग होने पर)।

लेख...— VI. iii. 49
देखें — **लेखयदण० VI. iii. 49**

लेखयदण्लासेषु — VI. iii. 49

(हृदय शब्द को हृत् आदेश होता है;) लेख, यत्, अण् तथा लास परे रहते।

लास = खेलना, कूदना, प्रेमालिङ्गन, स्त्रियों का नाच, रसा।

लेट् — III. iv. 7

(वेदविषय में लिङ् के अर्थ में धातु से विकल्प से) लेट् प्रत्यय होता है (और वह परे होता है)।

लेटः — III. iv. 94

लेट् लकार को (अट्, आट् आगम पर्याय से होता है)।

लेटि — III. i. 34

लेट् परे रहते (धातु से बहुल करके सिप् होता है)।

लेटि — VII. ii. 70

(घुसञ्ज्ञक अङ्ग का) लेट् परे रहते (विकल्प से लोप होता है)।

...लोः — VII. iii. 39
देखें — **लीलोः VII. iii. 39**

लोक...— V. i. 43
देखें — **लोकसर्वलोकात् V. i. 43**

लोकसर्वलोकात् — V. i. 43

(सप्तमीसमर्थ) लोक तथा सर्वलोक प्रातिपदिकों से ('प्रसिद्ध' अर्थ में ठञ् प्रत्यय होता है)।

लोकाव्ययनिष्ठाखलर्थतृनाम् — II. iii. 69

ल अर्थात् लकारस्थानी शतृ शानच् आदि, उ, उक, अव्यय, निष्ठा, खलर्थ और तृन् प्रत्ययान्तों के योग में (षष्ठी विभक्ति नहीं होती)।

लोट् — III. iii. 162

(विधि, निमन्त्रण, आमन्त्रण, अधीष्ट, सम्प्रश्न, प्रार्थना अर्थों में) लोट् प्रत्यय (भी) होता है।

लोट् — III. iii. 165

(प्रैषादि अर्थ गम्यमान हों तो मुहूर्त्त भर से ऊपर के काल के कहने में स्म शब्द उपपद रहते धातु से) लोट् प्रत्यय होता है।

लोट् — III. iv. 2

(क्रिया का पौनःपुन्य गम्यमान हो तो धातु से धात्वर्थ सम्बन्ध होने पर सब कालों में) लोट् प्रत्यय हो जाता है (और उस लोट् के स्थान में सब पुरुषों तथा वचनों में हि और स्व आदेश नित्य होते हैं तथा त, ध्वम् भावी लोट् के स्थान में विकल्प से हि, स्व आदेश होते हैं)।

लोट् — VIII. i. 52

(गत्यर्थक धातुओं के लोडन्त से युक्त) लोडन्त (तिङन्त को भी अनुदात्त नहीं होता, यदि कारक सारे अन्य न हों तो)।

लोट् — VIII. iv. 16

(उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर) लोडादेश (आनि के नकार को णकारादेश होता है)।

लोटः — III. iv. 2

(क्रिया का पौनःपुन्य गम्यमान हो तो धातु से धात्वर्थ सम्बन्ध होने पर सब कालों में लोट् प्रत्यय हो जाता है और उस) लोट् के स्थान में (हि और स्व आदेश नित्य होते हैं तथा त, ध्वम् भावी लोट् के स्थान में विकल्प से हि, स्व आदेश होते हैं)।

लोटः — III. iv. 85

लोट् लकार को (लङ् के समान कार्य हो जाते हैं)।

...लोटौ — III. iii. 157

देखें — लिङ्लोटौ III. iii. 157

...लोटौ — III. iii. 173

देखें — लिङ्लोटौ III. iii. 173

लोडर्थलक्षणे — III. iii. 8

करो, करो, ऐसा प्रेरित करना– यह लोट् का अर्थ यदि गम्यमान हो तो (भी धातु से भविष्यत् काल में विकल्प से लट् प्रत्यय होता है)।

लोपः — I. i. 59

(विद्यमान के अदर्शन की) लोप संज्ञा होती है।

लोपः — I. iii. 9

(उस इत्सञ्ज्ञक वर्ण का) लोप = अदर्शन होता है।

लोपः — III. i. 12

(भृश आदि अच्व्यन्त प्रातिपदिकों से भू धातु के अर्थ में क्यङ् प्रत्यय होता है और भृशादि में विद्यमान हलन्तों के हल् का) लोप (भी) होता है।

लोपः — III. iv. 97

(परस्मैपदविषय में लेट्-लकार-सम्बन्धी इकार का भी विकल्प से) लोप हो जाता है।

लोपः — IV. i. 133

(अपत्यार्थ में आये हुए ढक् प्रत्यय के परे रहते पितृष्वसृ शब्द का) लोप हो जाता है।

लोपः — V. iv. 1

(सङ्ख्या आदि में है जिसके, ऐसे पाद और शत शब्द अन्तवाले प्रातिपदिकों से वीप्सा गम्यमान हो तो वुन् प्रत्यय होता है तथा प्रत्यय के साथ-साथ पाद और शत के अन्त का) लोप (भी) हो जाता है।

लोपः — V. iv. 51

(सम्पद्यते के कर्ता में वर्तमान अरुस्, मनस्, चक्षुस्, चेतस्, रहस् तथा रजस् शब्दों के अन्त्य का) लोप (भी कृ, भू तथा अस्ति के योग में) हो जाता है (तथा च्वि प्रत्यय भी होता है)।

लोपः — V. iv. 138

(उपमानवाचक हस्त्यादिवर्जित प्रातिपदिकों से उत्तर जो पाद शब्द, उसका समासान्त) लोप हो जाता है, (बहुव्रीहि समास में।)

लोपः — V. iv. 146

(बहुव्रीहि समास में ककुभ-शब्दान्त का समासान्त) लोप होता है, (अवस्था गम्यमान होने पर)।

लोपः — VI. i. 64

(वकार और यकार का वल् परे रहते) लोप होता है।

लोपः — VI. iv. 21

(रेफ से उत्तर छकार और वकार का) लोप हो जाता है; (क्वि तथा झलादि अनुनासिकादि प्रत्ययों के परे रहते)।

लोपः— VI. iv. 37

(अनुदात्तोपदेश और जो अनुनासिकान्त उनके तथा वन् एवं तनोति आदि अङ्गों के अनुनासिक का) लोप होता है; (झलादि कित्, ङित् प्रत्ययों के परे रहते)।

लोपः — VI. iv. 45

(क्तिच् प्रत्यय परे रहते सन् अङ्ग को आकारादेश हो जाता है तथा विकल्प से इसका) लोप भी होता है।

लोपः — VI. iv. 48

(अकारान्त अङ्ग का आर्धधातुक परे रहते) लोप हो जाता है।

लोपः — VI. iv. 64

(इडादि आर्धधातुक तथा अजादि कित्, ङित् आर्धधातुक प्रत्ययों के परे रहते आकारान्त अङ्ग का) लोप होता है।

लोपः — VI. iv. 98

(गम, हन, जन, खन, घस् —इन अङ्गों की उपधा का) लोप हो जाता है; (अङ्भिन्न अजादि कित्, ङित् प्रत्यय परे रहते)।

लोपः — VI. iv. 107

असंयोगपूर्व जो उकार, तदन्त इस प्रत्यय का भी विकल्प से लोप होता है, मकारादि तथा वकारादि प्रत्ययों के परे रहते।

लोपः — VI. iv. 118

(ओहाक् अङ्ग का) लोप होता है; (यकारादि कित्, ङित् सार्वधातुक परे रहते)।

लोपः — VI. iv. 147

(कद्रू शब्द को छोड़कर जो उवर्णान्त भसञ्ज्ञक अङ्ग उसका ढ तद्धित प्रत्यय परे रहते) लोप होता है।

लोपः — VI. iv. 158

(बहु शब्द से उत्तर इष्ठन्, इमनिच् तथा ईयसुन् का) लोप होता है (और उस बहु के स्थान में भू आदेश भी होता है)।

लोपः — VII. i. 41

(वेद-विषय में आत्मनेपद में वर्तमान तकार का) लोप हो जाता है।

लोपः — VII. i. 88

(पथिन्, मथिन् तथा ऋभुक्षिन् भसञ्ज्ञक अङ्गों के टि भाग का) लोप होता है।

लोपः — VII. ii. 90

(शेष विभक्ति के परे रहते युष्मद्, अस्मद् अङ्ग का) लोप होता है।

लोपः — VII. ii. 113

(ककाररहित इदम् शब्द के इद् भाग का हलादि विभक्ति परे रहते) लोप होता है।

लोपः — VII. iii. 70

(घुसञ्ज्ञक अङ्ग का लेट् परे रहते विकल्प से) लोप होता है।

लोपः — VII. iv. 4

('पा पाने' अङ्ग की उपधा का चङ्परक णि परे रहते) लोप होता है (तथा अभ्यास को ईकारादेश होता है)।

लोपः — VII. iv. 39

(कवि, अध्वर, पृतना– इन अङ्गों का) लोप होता है; (क्यच् परे रहते, पादबद्धमन्त्र के विषय में)।

पृतना= सेना, युद्ध।

लोपः — VII. iv. 50

(तास् तथा अस् धातु के सकार का सकारादि आर्धधातुक के परे रहते) लोप होता है।

लोपः — VII. iv. 58

(यहाँ सन् परे रहते जो कार्य कहा है, अर्थात् जो इस्, ईत् का विधान किया है, उनके अभ्यास का) लोप होता है।

लोपः — VIII. ii. 23

(संयोग अन्तवाले पद का) लोप होता है।

लोपः — VIII. iii. 19

(अवर्ण पूर्व वाले पदान्त यकार, वकार का शाकल्य आचार्य के मत में) लोप होता है।

लोपः — VIII. iv. 63

(हल् से उत्तर यम् का यम् परे रहते विकल्प से) लोप होता है।

लोपे — VI. i. 130

(स्यः के सु का लोप होता है अच् परे रहते, यदि) लोप होने पर (पाद की पूर्त्ति हो रही हो)।

लोपे — VIII. i. 45

(किम् शब्द का) लोप होने पर (क्रिया के प्रश्न में अनुपसर्ग तथा अप्रतिषिद्ध तिङ् को विकल्प करके अनुदात्त नहीं होता)।

...लोम...— III. i. 25

देखें — सत्यापपाश० III. i. 25

...लोम...— IV. iv. 28

देखें — ईपलोमकूलम् IV. iv. 28

लोमसु— VII. ii. 29

लोम विषय में (हृष् धातु को निष्ठा परे रहते इट् आगम विकल्प से नहीं होता है)।

लोमादि.... — V. ii. 100

देखें — लोमादिपामादि० V. ii. 100

लोमादिपामादिपिच्छादिभ्यः — V. ii. 100

लोमादि, पामादि तथा पिच्छादि —इन तीन गणपठित प्रातिपदिकों से (मत्वर्थ में यथासंख्य करके विकल्प से श, न तथा इलच् प्रत्यय होते हैं)।

...लोम्नः — V. iv. 75

देखें — **सामलोम्नः V. iv. 75**

लोम्नः — V. iv. 117

(अन्तर् तथा बहिस् शब्दों से उत्तर भी) जो लोमन् शब्द, तदन्त (बहुव्रीहि) से (समासान्त अप् प्रत्यय होता है)।

लोहितात् — V. iv. 30

(मणि-विशेष में वर्तमान) लोहित प्रातिपदिक से (कन् प्रत्यय होता है, स्वार्थ में)।

लोहितादि....— III. i. 13

देखें — **लोहितादिडाज्भ्यः III. i. 13**

लोहितादि ...— IV. i. 18

देखें — **लोहितादिकतन्तेभ्यः IV. i. 18**

लोहितादिकतन्तेभ्यः — IV. i. 18

(अनुपसर्जन यञन्त) लोहित से लेकर कत पर्यन्त प्राति-, पदिकों से (स्त्रीलिङ्ग विषय में ष्फ प्रत्यय होता है; सब आचार्यों के मत में और वह तद्धितसंज्ञक होता है)।

लोहितादिडाज्भ्यः — III. i. 13

(अच्व्यन्त) लोहित आदि तथा डाच्प्रत्ययान्त शब्दों से (भवति अर्थ में क्यष् प्रत्यय होता है)।

ल्यप् — II. iv. 36

(अद् को जग्ध् आदेश होता है) ल्यप् परे रहते (तथा तकारादि कित् आर्धधातुक के परे रहते)।

ल्यप् — VII. i. 37

(नञ् से भिन्न पूर्व अवयव है जिसमें, ऐसे समास में क्त्वा के स्थान में) ल्यप् आदेश होता है।

ल्यपि — VI. i. 40

ल्यप् के परे रहते (भी वेञ् धातु का सम्प्रसारण नहीं होता है)।

ल्यपि — VI. i. 49

(मीञ्, डुमिञ् तथा दीङ् धातुओं को) ल्यप् के परे रहते (तथा एच् के विषय में भी उपदेश अवस्था में ही आत्व हो जाता है)।

ल्यपि — VI. iv. 38

(अनुदात्तोपदेश, वनति तथा तनोति आदि अङ्गों के अनु-नासिक का लोप) ल्यप् परे रहते (विकल्प करके होता है।

ल्यपि — VI. iv. 56

(लघु है पूर्व में जिससे, ऐसे वर्ण से उत्तर णि के स्थान में) ल्यप् परे रहते (अयादेश हो जाता है)।

ल्यपि — VI. iv. 69

(घु, मा, स्था, गा, पा, हा तथा सा अङ्गों को) ल्यप् परे रहते (जो कुछ कहा है, वह नहीं होता)।

ल्यु...— III. i. 134

देखें — **ल्युणिन्यचः III. i. 134**

ल्युट् — III. iii. 115

(नपुंसकलिङ्ग भाव में धातु से) ल्युट् प्रत्यय (भी) होता है।

...ल्युटः — III. iii. 111

देखें — **कृत्यल्युटः III. iii. 111**

ल्युणिन्यचः — III. i. 134

(नन्द्यादि, ग्रह्यादि तथा पचादि धातुओं से यथासंख्य करके) ल्यु, णिनि तथा अच् प्रत्यय होते हैं।

व्रान्तस्य — VII. ii. 2

(अकार के समीप वाले) रेफान्त तथा लकारान्त अङ्ग के (अकार के स्थान में ही वृद्धि होती है, परस्मैपदपरक सिच् परे हो तो)।

...ल्वः — III. i. 149

देखें — **प्रसृल्वः III. i. 149**

ब

व् — प्रत्याहारसूत्र XI

आचार्य पाणिनि द्वारा अपने ग्यारहवें प्रत्याहारसूत्र में इत्सञ्ज्ञार्थ पठित वर्ण।

व्... — VI. i. 64

देखें — **व्योः VI. i. 64**

व्... — VIII. iii. 18

देखें — **व्योः VIII. iii. 18**

व — प्रत्याहारसूत्र V

आचार्य पाणिनि द्वारा अपने पञ्चम प्रत्याहारसूत्र में पठित तृतीय वर्ण।

पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का बारहवाँ वर्ण।

...व... — III. iv. 82

देखें — **णलतुसुस्० III. iv. 82**

व... — III. iv. 91

देखें — **वामौ III. iv. 91**

व... — VI. iv. 137

देखें — **वमौ VI. iv. 137**

व... — VIII. iv. 22

देखें — **वमोः VIII. iv. 22**

वः — V. ii. 40

(प्रथमासमर्थ परिमाणसमानाधिकरणवाची किम् तथा इदम् प्रातिपदिकों से षष्ठ्यर्थ में वतुप् प्रत्यय होता है और उस वतुप् के) वकार के स्थान में (घकार आदेश हो जाता है)।

वः — V. ii. 109

(केश प्रातिपदिक से मत्वर्थ में विकल्प से) व प्रत्यय होता है।

वः — VI. i. 38

(इस वय् के यकार को कित् लिट् प्रत्यय के परे रहते विकल्प से) वकारादेश (भी) हो जाता है।

वः — VII. iii. 38

('कंपाना' अर्थ में वर्तमान) वा धातु को (णि परे रहते जुक् आगम होता है)।

वः — VII. iii. 41

('स्फायी वृद्धौ' अङ्ग को णि परे रहते) वकारादेश होता है।

वः — VIII. ii. 9

(यकारान्त एवं अवर्णान्त तथा मकार एवं अवर्ण उपधावाले प्रातिपदिक से उत्तर मतुप् को) वकारादेश होता है,(किन्तु यवादि शब्दों से उत्तर मतुप् को नहीं होता)।

वः — VIII. ii. 52

'डुपचष् पाके' धातु से उत्तर निष्ठा के तकार को) वकारादेश होता है।

वः — VIII. iii. 33

(मय् प्रत्याहार से उत्तर उञ् को अच् परे रहते विकल्प करके) वकारादेश होता है।

...वक्ति... — III. i. 52

देखें — **अस्यतिवक्ति० III. i. 52**

...वक्त्र... — IV. ii. 125

देखें — **कच्छाग्नि० IV. ii. 125**

वचः — VII. iii. 67

(शब्द की सञ्ज्ञा न हो तो) वच् अङ्ग को (ण्य परे रहते कवर्गादेश नहीं होता)।

वचः — VII. iv. 20

वच् अङ्ग को (अङ् परे रहते उम् आगम होता है)।

...वचन... — VI. iii. 84

देखें — **ज्योतिर्जनपद० VI. iii. 84**

...वचनमात्रे — II. iii. 46

देखें — **प्रातिपदिकार्थलिङ्ग० II. iii. 46**

...वचने — I. ii. 51

देखें — **व्यक्तिवचने I. ii. 51**

वचि... — VI. i. 15

देखें — **वचिस्वपियजादीनाम् VI. i. 15**

वचिः — II. iv. 53

(ब्रूञ् को आर्धधातुक के विषय में) वचि आदेश होता है।

वचिस्वपियजादीनाम् — VI. i. 15

वच्, ञिष्वप् तथा यजादि धातुओं को (कित् प्रत्यय के परे रहते सम्प्रसारण हो जाता है)।

...वञ्र... — VI. iii. 59

देखें — मन्थौदन० VI. iii. 59

वञ्चि... — I. ii. 24

देखें — वञ्चिलुञ्च्यृतः I. ii. 24

वञ्चिलुञ्च्यृतः — I. ii. 24

वञ्चु, लुञ्च, ऋत् —इन धातुओं से परे (भी सेट् क्त्वा प्रत्यय विकल्प करके कित् नहीं होता है)।

वञ्चु... — VII. iv. 84

देखें — वञ्चुस्रंसु० VII. iv. 84

वञ्चुस्रंसुध्वंसुभ्रंशुकसपतपदस्कन्दाम् — VII. iv. 84

वञ्चु, स्रंसु, ध्वंसु, भ्रंशु, कस, पत्लृ, पद, स्कन्दिर् —इन धातुओं के (अभ्यास को यङ् तथा यङ्लुक् परे रहते नीक् आगम होता है)।

वञ्चेः — VII. iii. 63

(गति अर्थ में वर्तमान) वञ्चु अङ्ग को (कवर्गादेश नहीं होता)।

...वञ्चयोः — I. iii. 69

देखें — गृधिवञ्च्योः I. iii. 69

...वट ... — V. i. 120

देखें — अचतुरमङ्गल० V. i. 120

...वटम् — VI. ii. 82

देखें — दीर्घकाश० VI. ii. 82

...वटः — V. ii. 139

देखें — तुन्दिबलि० V. ii. 139

...वटर...— IV. iii. 118

देखें — क्षुद्राभ्रमर० IV. iii. 118

...वडवौ — II. iv. 26

देखें — अश्ववडवौ II. iv. 26

वणिजाम् — III. iii. 52

वणिक्सम्बन्धी तत्त्व प्रत्ययान्त का वाच्य हो (तो प्र पूर्वक ग्रह् धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में विकल्प से घञ् प्रत्यय होता है)।

वतण्डात् — IV. i. 108

वतण्ड शब्द से (भी आङ्गिरस गोत्र को कहना हो तो यञ् प्रत्यय होता है)।

वतिः — V. i. 114

(तृतीयासमर्थ प्रातिपदिकों से 'समान' अर्थ में) वति प्रत्यय होता है; (यदि समानता क्रिया की हो तो)।

...वतु... — I. i. 22

देखें — बहुगणवतुडति I. i. 22

वतुप् — V. ii. 39

(प्रथमासमर्थ परिमाणसमानाधिकरणवाची यत्, तत् तथा एतद् प्रातिपदिकों से षष्ठ्यर्थ में) वतुप् प्रत्यय होता है।

...वतुषु — VI. iii. 88

देखें — दृक्दृश्वतुषु VI. iii. 88

वतेः — V. i. 18

(यहाँ से आगे) वतेः = 'तेन तुल्यं क्रिया चेद्वतिः' सूत्र से पहले पहले तक (ठञ् प्रत्यय अधिकृत होता है)।

वतोः — V. i. 23

वतुप्रत्ययान्त सङ्ख्यावाची प्रातिपदिक से ('तदर्हति'-पर्यन्त कथित अर्थों में कन् प्रत्यय होता है तथा उस कन् को विकल्प से इट् आगम होता है)।

वतोः — V. ii. 53

वतुप्-प्रत्ययान्त प्रातिपदिक को ('पूरण' अर्थ में विहित डट् प्रत्यय के परे रहते तिथुक् आगम होता है)।

...वत्स... — IV. i. 102

देखें — भृगुवत्साग्रा० IV. i. 102

वत्स... — IV. i. 117

देखें — वत्सभरद्वाजा० IV. i. 117

...वत्स... — IV. ii. 38

देखें — गोत्रोक्षोष्ट्रो० IV. ii. 38

वत्स... — V. ii. 98

देखें — वत्सांसाभ्याम् V. ii. 98

वत्स... — V. iii. 90

देखें — वत्सोक्षा० V. iii. 90

वत्सभरद्वाजात्रिषु — IV. i. 117

(विकर्ण, शुङ्ग, छगल शब्दों से यथासङ्ख्य करके) वत्स, भरद्वाज और अत्रि अपत्यविशेष को कहना हो (तो अण् प्रत्यय होता है)।

वत्सरान्तात् — V. i. 90

वत्सर शब्दान्त (द्वितीयासमर्थ) प्रातिपदिकों से ('सत्कारपूर्वक व्यापार', 'खरीदा हुआ', 'हो चुका' तथा 'होने वाला' अर्थों में छ प्रत्यय होता है, वेदविषय में)।

वत्सशाल... — IV. iii. 36
देखें — **वत्सशालाभिजि० IV. iii. 36**

वत्सशालाभिजिदश्वयुक्शतभिषजः — IV. iii. 36

वत्सशाल, अभिजित्, अश्वयुज्, शतभिषज् प्रातिपदिकों से (जातार्थ में उत्पन्न प्रत्यय का विकल्प से लुक् होता है)।

वत्सांसाभ्याम् — V. ii. 98

वत्स और अंस प्रातिपदिकों से ('मत्वर्थ' में यथासङ्ख्य करके काम तथा बल अर्थ गम्यमान हो तो लच् प्रत्यय होता है)।

अंस = भाग, कन्धा।

...वत्सेभ्यः — VI. ii. 168
देखें — **अव्ययदिक्शब्द० VI. ii. 168**

वत्सोक्षाश्वर्षभेभ्यः — V. iii. 90

वत्स, उक्षन्, अश्व, ऋषभ —इन प्रातिपदिकों से ('अल्पता' द्योतित हो रही हो तो ष्टरच् प्रत्यय होता है)।

ऋषभ = सांड़, श्रेष्ठ, संगीत का स्वर, सूअर या मगरमच्छ की पूंछ।

...वद... — I. ii. 7
देखें — **मृडमृदगुधकुषक्लिशवदवसः I. ii. 7**

...वद... — I. iii. 89
देखें — **पादम्याङ्यमाङ्यस० I. iii. 89**

...वद... — III. ii. 145
देखें — **लपसृद्० III. ii. 145**

वद... — VII. ii. 3
देखें — **वदव्रज० VII. ii. 3**

वदः — I. iii. 47

(भासन, उपसम्भाषा, ज्ञान, यत्न, विमति तथा उपमन्त्रण अर्थों में) वद् धातु से (आत्मनेपद होता है)।

भासन = चमकना, द्युतिमान।

उपसम्भाषा = वार्त्तालाप, मैत्रीपूर्ण अनुरोध।

विमति = मूर्ख, असहमति, अरुचि।

उपमन्त्रण = सम्बोधित करना, उकसाना।

वदः — I. iii. 73

(अप उपसर्ग से उत्तर) वद् धातु से (आत्मनेपद होता है, क्रियाफल के कर्ता को मिलने पर)।

वदः — III. i. 106

वद् धातु से (उपसर्गरहित होने पर सुबन्त उपपद रहते क्यप् प्रत्यय होता है; चकार से यत् प्रत्यय भी होता है)।

वदः — III. ii. 38

वद् धातु से (प्रिय और वश कर्म उपपद रहते 'खच्' प्रत्यय होता है)।

...वदयोः — VI. iii. 101
देखें — **रथवदयोः VI. iii. 101**

वदव्रजहलन्तस्य — VII. ii. 3

वद, व्रज तथा हलन्त अङ्गों के (अच् के स्थान में वृद्धि होती है, परस्मैपदपरक सिच् के परे रहते)।

...वदि... — III. iv. 16
देखें — **स्थेण्कृञ्० III. iv. 16**

...वदेषु — I. iv. 68
देखें — **गत्यर्थवदेषु I. iv. 68**

वध — II. iv. 42

(हन् धातु को) वध आदेश होता है, (आर्धधातुक लिङ् परे रहते)।

वधः — III. iii. 76

(अनुपसर्ग हन् धातु से भाव में अप् प्रत्यय होता है तथा प्रत्यय के साथ ही हन् को) वध आदेश भी हो जाता है।

...वध्य... — IV. iv. 91
देखें — **तार्यतुल्य० IV. iv. 91**

...वध्योः — VII. iii. 35
देखें — **जनिवध्योः VII. iii. 35**

वन... — III. ii. 27
देखें — **वनसन० III. ii. 27**

वन... — VI. iii. 116
देखें — **वनगिर्योः VI. iii. 116**

वनः — IV. i. 7

वन् अन्त वाले प्रातिपदिकों से (स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय होता है, तथा उस वन्नन्त प्रातिपदिक को रेफ अन्तादेश भी होता है)।

वनगिर्योः — VI. iii. 116

वन तथा गिरि शब्द उत्तरपद रहते (यथासंख्य करके कोटरादि एवं किंशुलकादि गणपठित शब्दों को सञ्ज्ञा-विषय में दीर्घ होता है)।

...वनति... — VI. iv. 37
देखें — **अनुदात्तोपदेशवनति० VI. iv. 37**

वनम् — VI. ii. 136

वनवाची (उत्तरपद कुण्ड) शब्द को (तत्पुरुष समास में आद्युदात्त होता है)।

वनम् — VI. ii. 178

(समासमात्र में उपसर्ग से उत्तर उत्तरपद) वन शब्द को (अन्तोदात्त होता है)।

वनम् — VIII. iv. 44

(पुरगा, मिश्रका, सिध्रका, शारिका, कोटरा, अग्रे —इन शब्दों से उत्तर) वन शब्द के (नकार को णकारादेश होता है, सञ्ज्ञाविषय में)।

वनसनरक्षिमथाम् — III. ii. 27

(वेदविषय में) वन, षण्, रक्ष, मथ् – इन धातुओं से (कर्म उपपद रहते इन् प्रत्यय होता है)।

...वनस्पतिभ्यः — VIII. iv. 6
देखें — **ओषधिवनस्पतिभ्यः VIII. iv. 6**

वनस्पत्यादिषु — VI. ii. 140

वनस्पति आदि समस्त शब्दों में (दोनों = पूर्व तथा उत्तरपद को एक साथ प्रकृतिस्वर होता है)।

...वनिपः — III. ii. 74
देखें — **मनिन्क्वनिप्० III. ii. 74**

...वनोः — VI. iv. 41
देखें — **विड्वनोः VI. iv. 41**

...वन्द ... — VI. i. 208
देखें — **ईडवन्द० VI. i 208**

वन्दिते — V. iv. 157

'पूजित' अर्थ में (वर्तमान भ्रातृ-शब्दान्त बहुव्रीहि से समासान्त कप् प्रत्यय नहीं होता है)।

...वन्द्योः — III. ii. 173
देखें — **शृवन्द्योः III. ii. 173**

...वपति... — VIII. iv. 17
देखें — **गदनद० VIII. iv. 17**

...वपि... — III. i. 126
देखें — **आसुयुवपि० III. i. 126**

वप्रत्यये — VI. ii. 52

(इक् अन्त में नहीं है जिसके, ऐसे गतिसञ्ज्ञक को) व-प्रत्ययान्त (अञ्चु धातु) के परे रहते (प्रकृतिस्वर होता है)।

वप्रत्यये — VI. iii. 91

(विष्वग् तथा देव शब्दों के तथा सर्वनाम शब्दों के टिभाग को अद्रि आदेश होता है) वप्रत्ययान्त (अञ्चु धातु) के परे रहते।

विष्वग् = सर्वव्यापक भागों में अलग-अलग करने वाला।

...वम... — III. ii. 157
देखें — **जिदृक्षि० III. ii. 157**

वमन्तात् — VI. iv. 137

वकार तथा मकार अन्त में है जिसके, ऐसे (संयोग) से उत्तर (तदन्त भसञ्ज्ञक अन् के अकार का लोप नहीं हो-ता)।

वमिति — VII. ii. 34

वमिति शब्द वेदविषय में इडागमयुक्त निपातित होता है।

वमोः — VIII. iv. 22

(उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर अकार पूर्ववाले हन् धातु के नकार को विकल्प से) व तथा म परे रहते (णकार आदेश होता है)।

वयः — IV. iii. 159

(षष्ठीसमर्थ द्रु प्रातिपदिक से मानरूपी विकार अभिधेय हो तो) वय प्रत्यय होता है।

द्रु = लकड़ी, वृक्ष, शाखा।

वयः — VI. i. 37

(लिट् लकार के परे रहते वय् धातु के (यकार को सम्प्रसारण नहीं होता है)।

...वयस्... — IV. iv. 91
देखें — **नौवयोधर्म० IV. iv. 91**

...वयस्... — VI. iii. 64
देखें — **ज्योतिर्जनपद० VI. iii. 64**

वयसि — III. ii. 10

आयु गम्यमान होने पर (भी कर्म उपपद रहते हृञ् धातु से 'अच्' प्रत्यय होता है)।

वयसि — IV. i. 20

(प्रथम) अवस्था में वर्तमान (अनुपसर्जन) अदन्त प्रातिपदिकों से स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय होता है)।

वयसि — V. i. 80

(द्वितीयासमर्थ कालवाची मास प्रातिपदिक से) अवस्था गम्यमान होने पर ('हो चुका' अर्थ में यत् और खञ् प्रत्यय होते हैं)।

वयसि — V. ii. 130

(पूरणप्रत्ययान्त शब्दों से) अवस्था गम्यमान हो तो ('मत्वर्थ' में इनि प्रत्यय होता है)।

वयसि — V. iv. 141

(सङ्ख्यापूर्ववाले तथा सु-पूर्व वाले दन्त शब्द को समासान्त दतृ आदेश होता है; (बहुव्रीहि समास में)।

वयसि — VI. ii. 95

अवस्था गम्यमान हो तो (कुमारी शब्द उपपद रहते पूर्वपद को अन्तोदात्त होता है)।

वयस्यासु — IV. iv. 127

(उपधानमन्त्र-समानाधिकरण प्रथमासमर्थ मतुबन्त मूर्धन् प्रातिपदिक से) वयस्या = वयस् शब्द वाला मन्त्र उपधा में मन्त्र है जिनका, ऐसे (ईटों) के अभिधेय होने पर (मतुप् प्रत्यय होता है तथा प्रकृत्यन्तर्गत जो मतुप्, उसका लुक् हो जाता है)।

...वयि... — VI. i. 16
देखें — **ग्रहिज्या० VI. i. 16**

वयिः — II. iv. 41

(वेञ् के स्थान में लिट् आर्धधातुक परे रहते) वयि आदेश होता है।

...वयोवचन...— III. ii. 129
देखें— **ताच्छील्यवयोवचन० III. ii. 129**

...वयोवचन...— V. i. 128
देखें— **प्राणभृज्जातिवयो० V. i. 128**

...वयौ...— VII. ii. 93
देखें— **यूयवयौ VII. ii. 93**

...वर...— VI. iv. 157
देखें— **प्रस्थस्फ० VI. iv. 157**

वरच्— III. ii. 175

(ष्ठा, ईश, भास्, पिस्, कस् – इन धातुओं से तच्छीलादि कर्ता हों, तो वर्तमान काल में) वरच् प्रत्यय होता है।

वरणादिभ्यः— IV. ii. 81

वरणादि प्रातिपदिकों से (विहित जो चातुरर्थिक प्रत्यय, उसका भी लुप् होता है)।

...वरतन्तु...— IV. iii. 102
देखें— **तित्तिरिवरतन्तु० IV. iii. 102**

...वरात्...— VI. iii. 15
देखें— **वर्षक्षरशरवरात् VI. iii. 15**

...वराह... — IV. ii. 79
देखें — **अरीहणकृशाश्व० IV. ii. 79**

...वराहेभ्यः — V. iv. 145
देखें — **अग्रान्त० V. iv. 145**

...वरिवस्... — III. i. 19
देखें — **नमोवरिवश्चित्रङः III. i. 19**

वरीवृजत् — VII. iv. 65

वरीवृजत् शब्द (वेद-विषय में) निपातन किया जाता है।

...वरुण... — IV. i. 48
देखें — **इन्द्रवरुणभव० IV. i. 48**

...वरुण... — V. iii. 84
देखें — **शेवलसुपरि० V. iii. 84**

...वरुणयोः — VI. iii. 26
देखें — **सोमवरुणयोः VI. iii. 26**

वरुणस्य — VII. iii. 23

(दीर्घ से उत्तर भी) वरुण शब्द के (अचों में आदि अच् को वृद्धि नहीं होती)।

वरुतृ — VII. ii. 34

वरुतृ शब्द (वेदविषय में) इडभावयुक्त निपातन किया जाता है।

वरूतृ — VII. ii. 34

वरूतृ शब्द वेदविषय में इडभावयुक्त निपातित है।

वरूत्रीः — VII. ii. 34

वरूत्रीः शब्द (वेदविषय में) इडभावयुक्त निपातन किया जाता है।

...वरे... — I. i. 57

देखें — पदान्तवरेयलोपस्वरसवर्णानुस्वार० I. i. 57

वर्गान्तात् — IV. iii. 63

(सप्तमीसमर्थ) वर्ग अन्तवाले प्रातिपदिक से ('तत्र भवः' अर्थ में छ प्रत्यय होता है)।

वर्गे — V. i. 59

(पञ्चत् और दशत्— ये तिप्रत्ययान्त शब्द 'तदस्य परिमाणम्' विषय में) वर्ग अभिधेय होने पर (विकल्प से निपातन किये जाते हैं)।

वर्ग्यादयः — VI. ii. 131

(कर्मधारयवर्जित तत्पुरुष समास में उत्तरपद) वर्ग्यादि शब्दों को (भी आद्युदात्त होता है)।

वर्चसः — V. iv. 78

(ब्रह्म और हस्ति शब्द से उत्तर) जो वर्चस् शब्द, तदन्त प्रातिपदिक से (समासान्त अच् प्रत्यय होता है)।

वर्चस्के — VI. i. 143

अन्न का कचरा अभिधेय हो, तो (अवस्कर शब्द में सुट् आगम निपातन किया जाता है)।

वर्जने — I. iv. 87

छोड़ना अर्थ की प्रतीति होने पर (अप, परि शब्दों की कर्मप्रवचनीय और निपात संज्ञा होती है)।

वर्जने — VIII. i. 5

छोड़ने अर्थ में (वर्तमान परि शब्द को द्वित्व होता है)।

वर्ज्यमान... — VI. ii. 33

देखें — वर्ज्यमानाहोरात्रा० VI. ii. 33

वर्ज्यमानाहोरात्रावयवेषु — VI. ii. 33

(पूर्वपदभूत परि, प्रति, उप, अप —इन शब्दों को) वर्ज्यमान = जो छोड़ा जा रहा है तथा दिन एवं रात्रि के अवयववाची शब्दों के परे रहते (प्रकृतिस्वर हो जाता है)।

...वर्ण... — III. i. 23

देखें — सत्यापपाश० III. i. 23

...वर्ण... — IV. i. 42

देखें — वृत्त्यमत्रावपना० IV. i. 42

वर्ण... —V. i. 12?

देखें — वर्णदृढादिभ्यः V. i. 122

वर्ण...— VI. ii. 112

देखें — वर्णलक्षणात् VI. ii. 112

...वर्ण... — VI. iii. 84

देखें — ज्योतिर्जनपद० VI. iii. 84

वर्णः — II. i. 68

वर्णविशेषवाची (सुबन्त वर्णविशेषवाची समानाधिकरण सुबन्त के साथ विकल्प से समास को प्राप्त होता है और वह समास तत्पुरुषसंज्ञक होता है)।

वर्णः — VI. ii. 3

(वर्णवाची शब्द के उत्तरपद में रहते) वर्णवाची पूर्वपद को (तत्पुरुष समास में प्रकृतिस्वर हो जाता है)।

वर्णलक्षणात् — VI. ii. 112

(बहुव्रीहि समास में) वर्णवाची तथा लक्षणवाची से परे (उत्तरपद कर्ण शब्द को आद्युदात्त होता है)।

वर्णात् — IV. i. 39

वर्णवाची (अदन्त अनुपसर्जन अनुदात्तान्त तकार उपधा वाले) प्रातिपदिकों से (विकल्प से स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय तथा तकार को नकारादेश हो जाता है)।

वर्णात् — V. ii. 134

वर्ण प्रातिपदिक से ('मत्वर्थ' में इनि प्रत्यय होता है, ब्रह्मचारी वाच्य हो तो)।

वर्णदृढादिभ्यः — V. i 122

(षष्ठीसमर्थ) वर्णवाची तथा दृढादि प्रातिपदिकों से ('भाव' अर्थ में ष्यञ् तथा इमनिच् प्रत्यय होते हैं)।

...वर्णान्तात् — V. ii. 132

देखें — धर्मशील० V. ii. 132

वर्णे — V. iv. 31

(नित्यधर्मरहित) वर्ण अर्थ में (वर्तमान लोहित प्रातिपदिक से भी स्वार्थ में कन् प्रत्यय होता है)।

वर्णेन — II. i. 68

(वर्ण विशेषवाची सुबन्त) वर्णविशेषवाची (समानाधिकरण सुबन्त) शब्द के साथ (विकल्प से समास को प्राप्त होता है और वह समास तत्पुरुषसंज्ञक होता है)।

वर्णेषु — VI. ii. 3

वर्णवाची शब्द के उत्तरपद में रहते (वर्णवाची पूर्वपद को प्रकृतिस्वर हो जाता है, एत शब्द उत्तरपद में न हो तो)।

वर्णौ — IV. ii. 102

वर्णु नाम वाले (देशविषयक कन्था प्रातिपदिक से वुक् प्रत्यय होता है)।

वर्त्तते — IV. iv. 27

(तृतीयासमर्थ ओजस्, सहस्, अम्भस् प्रातिपदिकों से) 'व्यवहार करता है' अर्थ में (ठक् प्रत्यय होता है)।

वर्तमानवत् — III. iii. 131

(वर्तमान के समीप अर्थात् निकट के भूत निकट के भविष्यत् काल में वर्तमान धातु से) वर्तमान काल के समान (विकल्प से प्रत्यय होते हैं)।

वर्तमानसामीप्ये — III. iii. 131

वर्तमान के समीप अर्थात् निकट (के भूत, निकट के भविष्यत् काल के समान विकल्प से प्रत्यय होते हैं)।

वर्तमाने — II. iii. 67

वर्तमान काल में (विहित क्त प्रत्यय के योग में षष्ठी विभक्ति होती है)।

वर्तमाने — III. ii. 122

वर्तमान काल में (विद्यमान धातु से लट् प्रत्यय होता है)।

वर्तमाने — III. iii. 160

(इच्छार्थक धातुओं से) वर्तमान काल में (विकल्प से लिङ् प्रत्यय होता है, पक्ष में लट्)।

वर्त्तयति — V. i. 71

(द्वितीयासमर्थ पारायण, तुरायण तथा चान्द्रायण प्रातिपदिकों से) 'बरतता है' अर्थ में (यथाविहित ठञ् प्रत्यय होता है)।

वर्ति... — III. i. 15

देखें — वर्तिचरोः III. i. 15

...वर्ति... — III. iv. 39

देखें — वर्तिग्रहोः III. iv. 39

वर्तिग्रहोः — III. iv. 39

(हस्तवाची करण उपपद हो तो) वर्त्ति तथा ग्रह् धातुओं से (णमुल् प्रत्यय होता है)।

वर्तिचरोः — III. i. 15

वर्ति और चर् अर्थ में (यथासंख्य करके रोमन्थ और तप कर्म से क्यङ् प्रत्यय होता है)।

...वर्द्ध... — IV. iii. 148

देखें — उत्वद्वर्द्ध० IV. iii. 148

...वर्म... — III. i. 25

देखें — सत्यापपाश० III. i. 25

...वर्मती... — IV. iii. 94

देखें — तूदीशलातुर० IV. iii. 94

...वर्याः — III. i. 101

देखें — अवद्यपण्य० III. i. 101

वर्ष... — VI. iii. 15

देखें — वर्षक्षरशरवरात् VI. iii. 15

वर्षक्षरशरवरात् — VI. iii. 15

वर्ष, क्षर, शर, वर — इन शब्दों से उत्तर (सप्तमी का ज उत्तरपद रहते विकल्प से अलुक् होता है)।

वर्षप्रतिबन्धे — III. iii. 51

वर्षा का समय हो जाने पर भी वर्षा का न होना गम्यमान हो (तो अव पूर्वक ग्रह् धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में विकल्प करके घञ् प्रत्यय होता है)।

वर्षप्रमाणे — III. iv. 32

वर्षा का प्रमाण = मापन गम्यमान हो (तो कर्म उपपद रहते ण्यन्त पूरी धातु से णमुल् प्रत्यय होता है, तथा इस पूरी धातु के ऊकार का लोप विकल्प से होता है)।

वर्षस्य— VII. iii. 16

(सङ्ख्यावाची शब्द से उत्तर) वर्ष शब्द के (अचों में आदि अच् को ञित्, णित् तथा कित् तद्धित प्रत्यय परे रहते वृद्धि होती है, यदि वह तद्धित प्रत्यय भविष्यत् अर्थ में न हुआ हो तो)।

वर्षात् — V. i. 87

(द्वितीयासमर्थ) वर्ष-शब्दान्त (द्विगुसञ्ज्ञक) प्रातिपदिक से ('सत्कारपूर्वक व्यापार', 'खरीदा हुआ', 'हो चुका' तथा

'होने वाला' —इन सब अर्थों में विकल्प करके ख प्रत्यय और प्रत्यय का विकल्प से लुक् होता है)।

वर्षाभ्यः — IV. iii. 18

वर्षा प्रातिपदिक से (शैषिक ठञ् प्रत्यय होता है)।

वर्षाभ्वः — VI. iv. 84

वर्षाभू इस अङ्ग को (भी अजादि सुप् परे रहते यणादेश होता है)।

...वर्षि... — VI. iv. 157
देखें — **प्रस्थस्फ० VI. iv. 157**

वर्षिष्ठे — VI. i. 114

वर्षिष्ठे पद (यजुर्वेद में पठित होने पर अकार परे रहते प्रकृतिभाव से रहता है)।

वलच् — IV. ii. 88

(शिखा शब्द से चातुरर्थिक) वलच् प्रत्यय होता है।

वलच् — V. ii. 112

(रजस्, कृषि, आसुति तथा परिषद् प्रातिपदिकों से) वलच् प्रत्यय होता है,(मत्वर्थ में)।

...वलजान्तस्य — VII. iii. 25
देखें — **जंगलधेनु० VII. iii. 25**

वलादेः — VII. ii. 35

वल् प्रत्याहार आदि में है जिसके, ऐसे (आर्धधातुक) को (इट् का आगम होता है)।

वलि — VI. i. 64

(वकार और यकार का) वल् परे रहते (लोप होता है)।

...वलिन... — II. i. 66
देखें — **खलतिपलित० II. i. 66**

वले — VI. iii. 117

वल परे रहते (पूर्व अण् को दीर्घ हो जाता है, सञ्ज्ञा को कहने में)।

ववर्थ — VII. ii. 64

'ववर्थ' यह शब्द थल् परे रहते (वेदविषय में) इडभाव-युक्त निपातन किया जाता है।

वशः — VI. i. 20

वश् धातु को (यङ् प्रत्यय के परे रहते सम्प्रसारण नहीं होता)।

वशम् — IV. iv. 86

(द्वितीयासमर्थ) वश प्रातिपदिक से (प्राप्त हुआ अर्थ में यत् प्रत्यय होता है)।

...वशा... — II. i. 64
देखें — **पोटायुवतिस्तोक० II. i. 64**

वशि — VII. ii. 8

वशादि (कृत्) प्रत्यय परे रहते (इट् का आगम नहीं होता)।

...वशे — III. ii. 38
देखें — **प्रियवशे III. ii. 38**

वषट्कारः — I. ii. 35

वषट्कार = वौषट् शब्द (यज्ञकर्म में विकल्प से उदात्ततर होता है, पक्ष में एकश्रुति हो जाती है)।

... वषट्योगात् — II. iii. 16
देखें — **नमःस्वस्तिस्वाहा० II. iii. 16**

...वष्कयणी... — II. i. 64
देखें — **पोटायुवतिस्तोक० II. i. 64**

...वष्टि... — VI. i. 16
देखें — **ग्रहिज्या० VI. i. 16**

...वस्... — III. iv. 78
देखें — **तिप्तस्झि० III. iv. 78**

वस्... — VIII. i. 21
देखें — **वस्नसौ VIII. i. 21**

...वस... — III. ii. 108
देखें — **सदवस० III. ii. 108**

...वस... — III. iv. 72
देखें — **गत्यर्थाकर्मक० III. iv. 72**

...वसः — I. ii. 7
देखें — **मृडमृदगुधकुषक्लिशवदवसः I. ii. 7**

...वंसः — I. iii. 89
देखें — **पादम्याङ्यमाङ्यस० I. iii. 89**

...वसः — I. iv. 48
देखें — **उपान्वध्याङ्वसः I. iv. 48**

...वसः — III. ii. 145
देखें — **लपसृद० III. ii. 145**

वसति — IV. iv. 73

(सप्तमीसमर्थ निकट प्रातिपदिक से) 'बसता है' अर्थ में (ढक् प्रत्यय होता है)।

...वसति... — IV. iv. 104
देखें — पथ्यतिथि० IV. iv. 104

वसति... — VII. ii. 52
देखें — वसतिक्षुधो: VII. ii. 52

वसतिक्षुधो: — VII. ii. 52

वस् तथा क्षुध् धातु के (क्त्वा तथा निष्ठा प्रत्यय को इट् आगम होता है)।

...वसनात् — V. i. 27
देखें — शतमानविंशति० V. i. 27

वसन्तात् — IV. iii. 20

(कालवाची) वसन्त प्रातिपदिक से (भी वेदविषय में ठञ् प्रत्यय होता है)।

...वसन्तात् — IV. iii. 46
देखें — ग्रीष्मवसन्तात् IV. iii. 46

वसन्तादिभ्य: — IV. ii. 62

वसन्तादि प्रातिपदिकों सऽ 'तदधीते तद्वेद' अर्थों में ढक् प्रत्यय होता है)।

...वसि... — VIII. iii. 60
देखें — शासिवसि० VIII. iii. 60

...वसिष्ठ... — II. iv. 65
देखें — अत्रिभृगुकुत्स० II. iv. 65

वसीय: — V. iv. 80
देखें — वसीय:श्रेयस: V. iv. 80

वसीय:श्रेयस: — V. iv. 80

(श्वस् शब्द से उत्तर) वसीयस् और श्रेयस् शब्दान्त प्रातिपदिकों से (समासान्त अच् प्रत्यय होता है)।

वसु... — VI. iii. 127
देखें — वसुराटो: VI. iii. 127

वसु — VII. ii. 67

(कृतद्विर्वचन एकाच् धातु तथा आकारान्त एवं घस् धातु से उत्तर) वसु को (इट् का आगम होता है)।

वसु... — VIII. ii. 72
देखें — वसुस्रंसु० VIII. ii. 72

वसु: — VII. i. 36

('विद् ज्ञाने' धातु से उत्तर शतृ के स्थान में) वसु आदेश होता है।

वसुधित — VII. iv. 45

वसुधित शब्द वेदविषय में निपातन किया जाता है।

वसुराटो: — VI. iii. 127

वसु तथा राट् उत्तरपद रहते (विश्व शब्द को दीर्घ हो जाता है)।

वसुस्रंसुध्वंस्वनडुहाम् — VIII. ii. 71

(सकारान्त) वस्वन्त पद को तथा स्रंसु, ध्वंसु एवं अनडुह पदों को (दकारादेश होता है)।

वसो: — IV. iv. 140

वसु प्रातिपदिक से (समूह तथा मयट् के अर्थ में यत् प्रत्यय होता है, वेद-विषय में)।

वसो: — VI. iv. 131

(भसञ्ज्ञक) वस्वन्त अङ्ग को (सम्प्रसारण होता है)।

...वसो: — VIII. iii. 1
देखें — मतुवसो: VIII. iii. 1

...वस्ति... — IV. iii. 56
देखें — दृतिकुक्षिकलशि० IV. iii. 56

वस्ते: — V. iii. 101

वस्ति प्रातिपदिक से (इव का अर्थ द्योतित हो रहा हो तो ढञ् प्रत्यय होता है)।

वस्ति = निवास, उदर, मूत्राशय।

...वस्त्र... — III. i. 21
देखें — मुण्डमिश्र० III. i. 21

वस्न... — IV. iv. 13
देखें — वस्नक्रयविक्रयात् IV. iv. 13

वस्न... — V. i. 50
देखें — वस्नद्रव्याभ्याम् V. i. 50

...वस्न... — V. i. 55
देखें — अंशवस्नभृतय: V. i. 55

वस्नक्रयविक्रयात् — IV. iv. 13

(तृतीयासमर्थ) वस्न, क्रयविक्रय प्रातिपदिकों से (ठन् प्रत्यय होता है)।

वस्नद्रव्याभ्याम् — V. i. 50

(द्वितीयासमर्थ) वस्न और द्रव्य प्रातिपदिकों से ('हरण करता है', 'वहन करता है' और 'उत्पन्न करता है' अर्थों में यथासंङ्ख्य ठन् और कन् प्रत्यय होते हैं)।

वस्नसौ — VIII. i. 21

(पद से उत्तर अपादादि में वर्तमान जो बहुवचन में षष्ठ्यन्त, चतुर्थ्यन्त एवं द्वितीयान्त युष्मद् तथा अस्मद् पद, उनको क्रमशः) वस् तथा नस् आदेश होते हैं।

वह... — III. ii. 32

देखें — **वहाभ्रे III. ii. 32**

...वह... — III. iii. 119

देखें — **गोचरसञ्चर० III. iii. 119**

वहः — I. iii. 81

(प्र उपसर्ग से उत्तर) वह् धातु से (परस्मैपद होता है)।

वहः — III. ii. 64

वह् धातु से (भी सुबन्त उपपद रहते छन्दविषय में 'ण्वि' प्रत्यय होता है)।

वहति — IV. iv. 76

(द्वितीयासमर्थ रथ, युग, प्रासङ्ग प्रातिपदिकों से) 'ढोता है' अर्थ में (यत् प्रत्यय होता है)।

वहति — V. i. 49

(वंशादिगणपठित प्रातिपदिकों से उत्तर जो भार शब्द, तदन्त द्वितीयासमर्थ प्रातिपदिक से 'हरण करता है') 'वहन करता है' (और 'उत्पन्न करता है' अर्थों में यथाविहित प्रत्यय होते हैं)।

...वहति... — VIII. iv. 17

देखें — **गदनद० VIII. iv. 17**

वहतेः — IV. iv. 1

(यहाँ से लेकर) 'तद्वहति रथयुगप्रासङ्गम्' से (पहले पहले जो अर्थ निर्दिष्ट किये गये हैं, वहाँ तक ठक् प्रत्यय का अधिकार समझना चाहिये)।

...वहान्तात् — IV. ii. 122

देखें — **प्रस्थपुरवहान्तात् IV. ii. 122**

वहाभ्रे — III. ii. 32

वह तथा अभ्र (कर्म) उपपद रहते (लिह् धातु से खश् प्रत्यय होता है)।

अभ्र = बादल, वायु-मण्डल।

...वहि... — III. iv. 78

देखें — **तिप्तस्झि० III. iv. 78**

वहे — VI. iii. 120

(पीलु शब्द को छोड़कर जो इगन्त शब्द पूर्वपद, उनको) वह शब्द के उत्तरपद रहते (दीर्घ होता है)।

पीलु = बाण, अणु, कीड़ा, हाथी।

वह = वहन करने वाला, बैल के कन्धे, घोड़ा, हवा।

...वहोः — III. ii. 31

देखें — **रुजिवहोः III. ii. 31**

...वहोः — III. iv. 43

देखें — **नशिवहोः III. iv. 43**

...वहोः — VI. iii. 111

देखें — **सहिवहोः VI. iii. 111**

वह्यम् — III. i. 102

'वह्यम्' पद वह् धातु से (करणकारक में) यत् प्रत्ययान्त निपातन है)।

वंशादिभ्यः — V. i. 49

वंशादिगणपठित प्रातिपदिकों से उत्तर (जो भारशब्द, तदन्त द्वितीयासमर्थ प्रातिपदिक से 'हरण करता है', 'वहन करता है' और 'उत्पन्न करता है' अर्थों में यथाविहित प्रत्यय होते हैं)।

वंश्ये — IV. i. 163

(पौत्रप्रभृति का जो अपत्य, उसकी) पिता इत्यादि के (जीवित रहते युवा संज्ञा ही होती है)।

वंश्येन — II. i. 18

वंश्यवाचक अर्थात् विद्याप्रयुक्त अथवा जन्मप्रयुक्त वंश में उत्पन्न पुरुषों के अर्थ में वर्तमान सुबन्त के साथ (संख्या-वाचकों का विकल्प से समास होता है और वह अव्ययीभाव समास होता है)।

वा — I. i. 43

(निषेध और) विकल्प (की विभाषासंज्ञा होती है)।

वा — I. ii. 13

(गम् धातु से परे झलादि लिङ् और सिच् आत्मनेपद विषय में) विकल्प से (कित्वत् होते हैं)।

वा — I. ii. 23

(नकारोपध थकारान्त और फकारान्त धातु से परे सेट् क्त्वा प्रत्यय) विकल्प करके (कित् नहीं होता है)।

वा – I. ii. 35

(यज्ञकर्म में वषट्कार अर्थात् वषट् शब्द) विकल्प से (उदात्ततर होता है, पक्ष में एकश्रुति हो जाती है)।

वा – I. iii. 43

(उपसर्गरहित क्रम् धातु से) विकल्प से (आत्मनेपद होता है)।

वा – I. iii. 90

(क्यष् प्रत्ययान्त धातु से) विकल्प करके (परस्मैपद होता है)।

वा – I. iv. 5

(इयङ्-उवङ्स्थानी स्त्री की आख्यावाले ईकारान्त, ऊकारान्त शब्दों की आम् परे रहते) विकल्प से (नदीसञ्ज्ञा नहीं होती, स्त्री शब्द को छोड़कर)।

वा – I. iv. 9

(वेदविषय में षष्ठ्यन्त से युक्त पति शब्द) विकल्प से (घिसञ्ज्ञक होता है)।

वा – II. i. 17

(पार और मध्य शब्दों का षष्ठ्यन्त सुबन्त के साथ) विकल्प से (अव्ययीभाव समास होता है तथा समास के सन्नियोग से इन शब्दों को एकारान्तत्व भी निपातन से हो जाता है)।

वा – II. ii. 37

(आहिताग्न्यादि-गणपठित निष्ठान्त शब्दों का बहुव्रीहिसमास में) विकल्प से (पूर्व में प्रयोग होता है)।

वा – II. iii. 71

(कृत्यप्रत्ययान्तों के प्रयोग में) विकल्प से (षष्ठी होती है, न कि कर्म में)।

वा – II. iv. 55

(आर्धधातुक लिट् परे रहते चक्षिङ् धातु को) विकल्प से (ख्याञ् आदेश होता है)।

वा – II. iv. 57

(अज धातु को) वी आदेश होता है, (औणादिक युच् आर्धधातुक प्रत्यय के परे रहते)।

वा – III. i. 7

(इच्छाक्रिया के कर्म का अवयव जो धातु, इच्छाक्रिया का समानकर्तृक अर्थात् इष् धातु के साथ समान कर्तावाला हो, उससे इच्छा अर्थ में सन् प्रत्यय) विकल्प से होता है।

वा – III. i. 31

(आय आदि प्रत्यय आर्धधातुक विषय में विकल्प से होते हैं)।

वा – III. i. 57

('इर्' इत् वाली धातुओं से उत्तर च्लि के स्थान में) विकल्प से (अङ् आदेश होता है, कर्तृवाची परस्मैपद लुङ् परे रहते)।

वा – III. i. 70

(टुभ्राशृ, टुभ्लाशृ, भ्रमु, क्रमु, क्लमु, त्रसि, त्रुटि तथा लष् धातुओं से कर्तृवाची सार्वधातुक परे रहते) विकल्प से (श्यन् प्रत्यय होता है)।

वा – III. i. 94

(इस धात्वधिकार में असमानरूपवाले अपवाद प्रत्यय) विकल्प से (बाधक होते हैं, 'स्त्री' अधिकार में विहित प्रत्ययों को छोड़कर)।

...वा... – III. ii. 2

देखें – ह्वावामः III. ii. 2

वा – III. ii. 106

(वेदविषय में भूतकाल में विहित लिट् के स्थान में) विकल्प से (कानच् आदेश होता है)।

वा – III. iii. 14

(भविष्यत्काल में विहित जो लृट्, उसके स्थान में सत्संज्ञक शतृ और शानच् प्रत्यय) विकल्प से होते हैं।

वा – III. iii. 62

(उपसर्गरहित स्वन तथा हस् धातुओं से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में) विकल्प से (अप् प्रत्यय होता है)।

वा – III. iii. 131

(वर्तमान के समीप अर्थात् निकट के भूत, निकट के भविष्यत् काल में वर्तमान धातु से वर्तमान काल के समान) विकल्प से (प्रत्यय होते हैं)।

वा – III. iii. 141

('उताप्योः समर्थयोर्लिङ्' से पहले पहले जितने सूत्र हैं, उनमें लिङ् का निमित्त होने पर क्रिया की अतिपत्ति में भूतकाल में) विकल्प से (लृङ् प्रत्यय होता है)।

वा — III. iv. 2

(क्रिया का पौनःपुन्य गम्यमान हो तो धातु से धात्वर्थ सम्बन्ध होने पर सब कालों में लोट् प्रत्यय हो जाता है, और उस लोट् के स्थान में हि और स्व आदेश नित्य होते हैं, तथा त, ध्वम्-भावी लोट् के स्थान में) विकल्प से (हि, स्व आदेश होते हैं)।

वा — III. iv. 68

(भव्य, गेय, प्रवचनीय, उपस्थानीय, जन्य, आप्लाव्य और आपात्य शब्द कर्ता में) विकल्प से (निपातन किये जाते हैं)।

वा — III. iv. 83

(विद ज्ञाने धातु से लडादेश तिप् आदि जो परस्मैपद-संज्ञक, उनके स्थान में क्रमशः णल्, अतुस्, उस्, थल्, अथुस्, अ, णल्, व, म— नौ आदेश) विकल्प से (होते हैं)।

वा — III. iv. 88

(पूर्वसूत्र से जो लोट् को हि विधान किया है, वह वेद-विषय में) विकल्प से (अपित् होता है)।

वा — III. iv. 96

(लेट्-सम्बन्धी जो एकार, उसके स्थान में ऐकारादेश) विकल्प से होता है, ('आत ऐ' सूत्र के विषय को छोड़कर)।

वा — IV. i. 38

(मनु शब्द से स्त्रीलिङ्ग में) विकल्प से (ङीप् प्रत्यय और औकार एवं ऐकार अन्तादेश भी हो जाता है और वह ऐकार उदात्त भी होता है)।

वा — IV. i. 44

(उकारान्त गुणवचन प्रातिपदिक से स्त्रीलिङ्ग में) विकल्प से (ङीष् प्रत्यय होता है)।

वा — IV. i. 53

(अस्वाङ्ग जिसके पूर्वपद में है, ऐसे अन्तोदात्त क्तान्त बहुव्रीहि समासवाले प्रातिपदिक से) विकल्प से (स्त्रीलिङ्ग में ङीष् प्रत्यय होता है)।

वा — IV. i. 82

(यहाँ से लेकर 'प्राग्दिशो विभक्तिः' V. iii. i. तक कहे जाने वाले प्रत्यय, समर्थों में जो प्रथम, उनसे) विकल्प से होते हैं।

वा — IV. i. 118

(षष्ठीसमर्थ पीला प्रातिपदिक से अपत्य अर्थ में) विकल्प से (अण् प्रत्यय होता है)।

वा — IV. i. 127

(कुलटा शब्द से अपत्य अर्थ में ढक् प्रत्यय होता है तथा कुलटा को) विकल्प से (इनङ् आदेश भी होता है)।

वा — IV. i. 131

(क्षुद्रावाची प्रकृतियों से अपत्य अर्थ में) विकल्प से (ढ्रक् प्रत्यय होता है)।

वा — IV. i. 165

(भाई से अन्य सात पीढियों में से कोई पद तथा आयु दोनों से बूढ़ा व्यक्ति जीवित हो तो पौत्रप्रभृति का जो अपत्य, उसके जीते ही) विकल्प से (युवा संज्ञा होती है, पक्ष में गोत्र संज्ञा)।

वा — IV. ii. 82

(शर्करा शब्द से उत्पन्न चातुरर्थिक प्रत्यय का) विकल्प से (लुप् होता है)।

वा — IV. iii. 30

(सप्तमीसमर्थ अमावस्या प्रातिपदिक से 'जात' अर्थ में वुन् प्रत्यय) विकल्प से होता है।

वा — IV. iii. 36

(वत्सशाल, अभिजित्, अश्वयुज्, शतभिषज् प्रातिप-दिकों से जातार्थ में उत्पन्न प्रत्यय का) विकल्प से (लुक् हो जाता है)।

वा — IV. iii. 127

(षष्ठीसमर्थ गोत्रप्रत्ययान्त शकल शब्द से) विकल्प से (अण् प्रत्यय होता है, पक्ष में वुञ् होता है)।

वा — IV. iii. 138

(षष्ठीसमर्थ पलाशादि प्रातिपदिकों से) विकल्प से (विकार, अवयव अर्थों में अञ् प्रत्यय होता है, पक्ष में औत्सर्गिक अण् होता है)।

वा— IV. iii. 140

(षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिकों से भक्ष्य, आच्छादनवर्जित विकार तथा अवयव अर्थों में लौकिक प्रयोगविषय में) विकल्प से (मयट् प्रत्यय होता है)।

वा — IV. iii. 155

(षष्ठीसमर्थ उमा तथा ऊर्णा प्रातिपदिक से) विकल्प से (विकार अवयव अर्थों में वुञ् प्रत्यय होता है)।

वा — IV. iii. 162

(षष्ठीसमर्थ जम्बू प्रातिपदिक से विकार, अवयव अर्थों में फल अभिधेय हो तो) विकल्प से (अण् प्रत्यय होता है)।

वा — IV. iv. 45

(द्वितीयासमर्थ सेना प्रातिपदिक से 'इकट्ठा होता है'— अर्थ में) विकल्प से (ण्य प्रत्यय होता है, पक्ष में ढक् प्रत्यय होता है)।

वा — V. i. 23

(वतुप्रत्ययान्त सङ्ख्यावाची प्रातिपदिक से 'तदर्हति'—पर्यन्त कथित अर्थों में कन् प्रत्यय होता है तथा उस कन् को) विकल्प से (इट् आगम होता है)।

वा — V. i. 35

(अध्यर्द्धशब्द पूर्व वाले तथा द्विगुसञ्ज्ञक शाणशब्दान्त प्रातिपदिक से 'तदर्हति'—पर्यन्त कथित अर्थों में) विकल्प से (यत् प्रत्यय होता है)।

वा — V. i. 59

(पञ्चत् और दशत्— ये तिप्रत्ययान्त शब्द 'तदस्य परिमाणम्' विषय में 'वर्ग' अभिधेय होने पर) विकल्प से (निपातन किये जाते हैं)।

वा — V. i. 85

(द्वितीयासमर्थ समाशब्दान्त द्विगुसञ्ज्ञक प्रातिपदिक से 'सत्कारपूर्वक व्यापार', 'खरीदा हुआ', 'हो चुका' तथा 'होने वाला' अर्थों में) विकल्प से (ख प्रत्यय होता है)।

वा — V. i. 121

(षष्ठीसमर्थ पृथ्वादि प्रातिपदिकों से 'भाव' अर्थ में इमनिच् प्रत्यय) विकल्प से होता है।

वा — V. ii. 43

(प्रथमासमर्थ द्वि तथा त्रि प्रातिपदिकों से षष्ठ्यर्थ में विहित तयप् प्रत्यय के स्थान में) विकल्प से (अयच् आदेश होता है)।

वा — V. ii. 77

(ग्रहण क्रिया के समानाधिकरण पूरणप्रत्ययान्त प्रातिपदिक से स्वार्थ में कन् प्रत्यय होता है तथा) विकल्प से (पूरण प्रत्यय का लुक् भी हो जाता है)।

वा — V. ii. 93

(इन्द्रियम् शब्द का निपातन किया जाता है, जीवात्मा का चिह्न, जीवात्मा के द्वारा देखा गया, जीवात्मा के द्वारा सृजन किया गया, जीवात्मा के द्वारा सेवित ईश्वर के द्वारा दिया गया – इन अर्थों में) विकल्प से।

वा — V. iii. 13

(वेदविषय में सप्तम्यन्त किम् शब्द से) विकल्प से (ह प्रत्यय भी होता है)।

वा — V. iii. 78

(बहुत अच् वाले मनुष्यनामधेय प्रातिपदिक से अनुकम्पा गम्यमान होने पर) विकल्प से (ठच् प्रत्यय होता है, पक्ष में क)।

वा — V. iii. 93

(जाति को पूछने विषय में किम्, यत् तथा तत् प्रातिपदिकों से बहुतों में से एक का निर्धारण गम्यमान हो तो) विकल्प से डतमच् प्रत्यय होता है)।

वा — V. iv. 133

(सञ्ज्ञाविषय में धनुष्-शब्दान्त बहुव्रीहि को) विकल्प से (समासान्त अनङ् आदेश होता है)।

वा — VI. i. 73

(दीर्घ से उत्तर जो छकार, उसके परे रहते दीर्घ को तुक् का आगम होता है तथा पदान्त दीर्घ से उत्तर छकार परे रहते पूर्व पदान्त दीर्घ को) विकल्प से (तुक् आगम होता है, संहिता के विषय में)।

वा — VI. i. 89

(सुबन्त अवयव वाले ऋकारादि धातु के परे रहते अवर्णान्त उपसर्ग से उत्तर, पूर्व-पर के स्थान में संहिता के विषय में, आपिशलि आचार्य के मत में) विकल्प से (वृद्धि एकादेश होता है)।

वा — VI. i. 96

(आम्रेडित-सञ्ज्ञक जो अव्यक्तानुकरण का अत् शब्द उसे इति परे रहते पररूप एकादेश नहीं होता, किन्तु जो उस आम्रेडित का अन्त्य तकार, उसको) विकल्प से (पररूप होता है, संहिता के विषय में)।

वा — VI. i. 102

(दीर्घ से उत्तर जस् तथा इच् प्रत्याहार परे रहते वेदविषय में पूर्व-पर के स्थान में पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश) विकल्प से (होता है)।

वा — VI. i. 145

(विष्किर —इस में ककार से पूर्व सुट् का) विकल्प से (निपातन किया जाता है, पक्षी को कहा जा रहा हो तो)।

वा — VI. i. 190

(सेट् थल् परे रहते इट् को) विकल्प से (उदात्त होता है एवं चकार से प्रकृतिभूतशब्द के आदि अथवा अन्त को होता है)।

वा — VI. ii. 20

(ऐश्वर्यवाची तत्पुरुष समास में पति शब्द उत्तरपद रहते पूर्वपद भुवन शब्द को) विकल्प से (प्रकृतिस्वर हो जाता है)।

वा — VI. ii. 171

(जातिवाची, कालवाची तथा सुखादियों से उत्तर जात शब्द उत्तरपद को) विकल्प से (अन्तोदात्त होता है, बहुव्रीहि समास में)।

वा — VI. iii. 50

(शोक, ष्यञ् तथा रोग के परे रहते हृदय शब्द को हृत् आदेश) विकल्प करके (होता है)।

वा — VI. iii. 55

(घोष, मिश्र तथा शब्द उत्तरपद रहते पाद शब्द को) विकल्प करके (पद् आदेश होता है)।

वा — VI. iii. 81

(जिस समास के सारे अवयव उपसर्जन हैं, तदवयव सह शब्द को) विकल्प से (स आदेश होता है)।

वा — VI. iv. 9

(वेदविषय में नकारान्त अङ्ग के षकारपूर्व उपधा अच् को सम्बुद्धिभिन्न सर्वनामस्थान के परे रहते) विकल्प से (दीर्घ होता है)।

वा — VI. iv. 38

(अनुदात्तोपदेश, वनति तथा तनोति आदि अङ्गों के अनुनासिक का लोप, ल्यप् परे रहते) विकल्प करके (होता है)।

वा — VI. iv. 61

(क्षि अङ्ग को अण्यदर्थ निष्ठा के परे रहते आक्रोश तथा दैन्य गम्यमान होने पर) विकल्प से (दीर्घ होता है)।

वा — VI. iv. 62

(भाव तथा कर्मविषयक स्य, सिच्, सीयुट् और तास् के परे रहते उपदेश में अजन्त धातुओं तथा हन्, ग्रह् एवं दृश् धातुओं को चिण् के समान) विकल्प से (कार्य होता है, इट् आगम भी होता है)।

वा — VI. iv. 68

(घु, मा, स्था, गा, पा, हा तथा सा —इन से अन्य जो संयोग-आदिवाला आकारान्त अङ्ग, उसको कित्, ङित् लिङ् आर्धधातुक परे रहते) विकल्प से (एकारादेश होता है)।

वा — VI. iv. 80

(अम् तथा शस् विभक्ति परे रहते स्त्री शब्द को) विकल्प से (इयङ् आदेश होता है)।

वा — VI. iv. 91

(चित्त के विकार अर्थ में दोष अङ्ग की उपधा को णि परे रहते) विकल्प से (ऊकारादेश होता है)।

वा — VI. iv. 124

(जॄ, भ्रमु, त्रस् —इन अङ्गों के अकार के स्थान में एत्व तथा अभ्यासलोप) विकल्प से (होता है; कित्, ङित् लिट् तथा सेट् थल् परे रहते)।

वा — VII. i. 16

(पूर्व है आदि में जिसके, ऐसे गणपठित नौ सर्वनामों से उत्तर ङसि तथा ङि के स्थान में क्रमशः स्मात् तथा स्मिन् आदेश) विकल्प से (होते हैं)।

वा — VII. i. 79

(अभ्यस्त अङ्ग से उत्तर जो शतृ प्रत्यय, तदन्त नपुंसक शब्द को) विकल्प से (नुम् आगम होता है)।

वा — VII. i. 91

(उत्तमपुरुष-सम्बन्धी णल् प्रत्यय) विकल्प से (णित्-वत् होता है)।

वा — VII. ii. 27

(दम्, शम्, पूरी, दस्, स्पश्, छद् तथा ज्ञप् —इन ण्यन्त धातुओं को) विकल्प से (अनिट्त्व तथा णिलुक् निपातन से होकर पक्ष में दान्त, शान्त, पूर्ण, दस्त, स्पष्ट, छन्न, ज्ञप्त प्रयोग बनते हैं)।

वा — VII. ii. 38

(वृ तथा ऋकारान्त धातुओं से उत्तर इट् को) विकल्प से (लिट् भिन्न वलादि आर्धधातुक परे रहते दीर्घ होता है)।

वा — VII. ii. 41

(वृ तथा ऋकारान्त धातुओं से उत्तर सन् आर्धधातुक को) विकल्प से (इट् आगम होता है)।

वा — VII. ii. 44

('स्वृ शब्दोपतापयोः 'षूङ् प्राणिगर्भविमोचने', 'षूङ् प्राणिप्रसवे', 'धूञ् कम्पने' तथा ऊदित् धातुओं से उत्तर वलादि आर्धधातुक को) विकल्प से (इट् आगम होता है)।

वा — VII. ii. 56

(उकार इत्सञ्ज्ञक धातुओं से उत्तर क्त्वा प्रत्यय को) विकल्प से (इट् आगम होता है)।

वा — VII. iii. 26

(अर्ध शब्द से उत्तर परिमाणवाची उत्तरपद के अचों में आदि अच् को वृद्धि होती है, पूर्वपद को तो (विकल्प से (होती है; ञित्, णित् तथा कित् तद्धित परे रहते)।

वा — VII. iii. 70

(घुसञ्ज्ञक धातुओं के आकार का लेट् परे रहते) विकल्प से (लोप होता है)।

वा — VII. iii. 73

('दुह् प्रपूरणे', 'दिह् उपचये', 'लिह् आस्वादने', 'गुहू संवरणे' —इन धातुओं के क्स का) विकल्प से (लुक् होता है, दन्त्य अक्षर आदि वाले आत्मनेपद-सञ्ज्ञक प्रत्ययों के परे रहते)।

वा — VII. iii. 94

(यङ् से उत्तर हलादि पित् सार्वधातुक को ईट् आगम) विकल्प से (होता है)।

वा — VII. iv. 6

(घ्रा गन्धोपादाने अङ्ग की उपधा को चङ्परक णि परे रहते) विकल्प से (इकारादेश होता है)।

वा — VII. iv. 12

(शॄ, दॄ तथा पॄ अङ्गों को लिट् परे रहते) विकल्प से (ह्रस्व होता है)।

वा — VII. iv. 37

(अकर्मक मुच्लृ धातु को) विकल्प से (गुण होता है, सकारादि सन् प्रत्यय परे रहते)।

वा — VII. iv. 81

(स्रु, श्रु, द्रु, प्रुङ्, प्लुङ्, च्युङ् —इनके अवर्णपरक यण् परे है जिससे, ऐसे होनेवाले उवर्णान्त अभ्यास को) विकल्प से (इकारादेश होता है)।

...वा... — VIII. i. 24

देखें — चवाहा० VIII. i. 24

वा — VIII. ii. 6

(पदादि अनुदात्त के परे रहते उदात्त के साथ में हुआ जो एकादेश, वह) विकल्प करके (स्वरित होता है)।

वा — VIII. ii. 33

('द्रुह जिघांसायाम्', 'मुह वैचित्ये', 'ष्णुह् उद्गिरणे', 'ष्णिह प्रीतौ' —इन धातुओं के हकार के स्थान में) विकल्प से (घकारादेश होता है, झल् परे रहते या पदान्त में)।

वा — VIII. ii. 63

(नश् पद को) विकल्प से (कवर्गादेश होता है)।

वा — VIII. ii. 74

(सकारान्त पद् धातु को सिप् परे रहते) विकल्प से (रु आदेश होता है)।

वा — VIII. iii. 2

(यहाँ से जिसको रु विधान करेंगे, उससे पूर्व के वर्ण को तो) विकल्प से (अनुनासिक आदेश होता है, ऐसा अधिकार इस रुत्व-विधान के प्रकरण में समझना चाहिये)।

वा — VIII. iii. 26

(मकारपरक हकार के परे रहते पदान्त मकार को) विकल्प से (मकारादेश होता है)।

वा — VIII. iii. 33

(मय् प्रत्याहार से उत्तर उञ् को अच् परे रहते) विकल्प करके (वकारादेश होता है)।

वा — VIII. iii. 36

(विसर्जनीय को) विकल्प से (विसर्जनीय आदेश होता है, शर् परे रहते)।

वा — VIII. iii. 49

(प्र तथा आम्रेडित को छोड़कर कवर्ग तथा पवर्ग परे हो तो वेदविषय में विसर्जनीय को) विकल्प से (सकारादेश होता है)।

वा — VIII. iii. 54

(इडा शब्द के षष्ठीविभक्ति के विसर्जनीय को) विकल्प से (सकार आदेश होता है; पति, पुत्र, पृष्ठ, पार, पद, पयस्, पोष शब्दों के परे रहते)।

वा — VIII. iii. 69

(परि, नि तथा वि उपसर्ग से उत्तर सिवादि धातुओं के सकार को अट् के व्यवधान होने पर भी) विकल्प से (मूर्धन्य आदेश होता है)।

वा — VIII. iii. 100

(अगकार से परे नक्षत्रवाची शब्दों से उत्तर सकार को एकार परे रहते सञ्ज्ञा-विषय में) विकल्प से (मूर्धन्य आदेश होता है)।

वा — VIII. iii. 119

(नि, वि तथा अभि उपसर्गों से उत्तर अट् का व्यवधान होने पर वेदविषय में) विकल्प से (मूर्धन्य आदेश नहीं होता)।

वा — VIII. iv. 10

(पूर्वपद में स्थित निमित्त से उत्तर भाव तथा करण में वर्तमान पान शब्द के नकार को) विकल्प से (णकार आदेश होता है)।

वा — VIII. iv. 22

(उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर अकार पूर्ववाले हन् धातु के नकार को) विकल्प से (व तथा म परे रहते णकार आदेश होता है)।

वा — VIII. iv. 32

(उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर निंस, निक्ष तथा निन्द् धातु के नकार को) विकल्प से (णकारादेश होता है)।

वा — VIII. iv. 44

(पदान्त यर् प्रत्याहार को अनुनासिक परे रहते) विकल्प से (अनुनासिक आदेश होता है)।

वा — VIII. iv. 55

(अवसान में वर्तमान झलों को) विकल्प करके (चर् आदेश होता है)।

वा — VIII. iv. 58

(पदान्त के अनुस्वार को यय् परे रहते) विकल्प से (परसवर्णादेश होता है)।

...वाक्... — VI. ii. 19
देखें — भूवाक्० VI. ii. 19

वाकिनादीनाम् — IV. i. 158

(गोत्रभिन्न वृद्धसंज्ञक) वाकिन आदि प्रातिपदिकों से (उदीच्य आचार्यों के मत में अपत्यार्थ में फिञ् प्रत्यय तथा कुक् का आगम होता है)।

वाक्यस्य — VIII. ii. 82

(यह अधिकार सूत्र है, पाद की समाप्तिपर्यन्त सर्वत्र) वाक्य के (टि भाग का प्लुत उदात्त होता है, ऐसा अर्थ होता जायेगा)।

वाक्यादेः — VIII. i. 8

वाक्य के आदि के (आमन्त्रित को द्वित्व होता है, यदि वाक्य से असूया, सम्मति, कोप, कुत्सन एवं भर्त्सन गम्यमान हो रहा हो तो)।

...वाक्याध्याहारेषु — VI. i. 134
देखें — प्रतियत्न० VI. i. 134

...वाङ्मनस... — V. iv. 77
देखें — अचतुर० V. iv. 77

वाचः — V. ii. 124

वाच् प्रातिपदिक से ('मत्वर्थ' में ग्मिनि प्रत्यय होता है)।

वाचः — V. iv. 35

('सन्देश वाणी' अर्थ में वर्तमान) वाच् प्रातिपदिक से (स्वार्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

वाचंयम... — VI. iii. 68
देखें — वाचंयमपुरन्दरौ VI. iii. 68

वाचंयमपुरन्दरौ — VI. iii. 68

वाचंयम तथा पुरन्दर शब्दों में (भी) पूर्वपदों को अम् आगम निपातन किया जाता है।

वाचि — III. ii. 40

वाक् (कर्म) उपपद रहते (यम् धातु से 'खच्' प्रत्यय होता है, व्रत गम्यमान होने पर)।

...वाडवात् — IV. ii. 41
देखें — ब्राह्मणमाणव० IV. ii. 41

वाणिजे — VI. ii. 13

वाणिज शब्द उत्तरपद रहते (तत्पुरुष समास में गन्तव्य-वाची तथा पण्यवाची पूर्वपद को प्रकृतिस्वर हो जाता है)।

वात... — V. ii. 129
देखें — वातातीसाराभ्याम् V. ii. 129

वातातीसाराभ्याम् — V. ii. 129

वात तथा अतीसार प्रातिपदिकों से ('मत्वर्थ' में इनि प्रत्यय होता है तथा इन शब्दों को कुक् आगम भी होता है)।

...वाति... — VIII. iv. 17
देखें — गदनद० VIII. iv. 17

...वादयः — I. iii. 1
देखें — भूवादयः I. iii. 1

...वादि... — VI. iv. 126
देखें — शसदद० VI. iv. 126

वान्तः — VI. i. 76

(यकारादि प्रत्यय के परे रहते एच् के स्थान में संहिता-विषय में) वकार अन्तवाले अर्थात् अव्, आव् आदेश होते हैं)।

वान्नावौ — VIII. i. 20

(पद से उत्तर षष्ठ्यन्त, चतुर्थ्यन्त तथा द्वितीयान्त युष्मद् एवं अस्मद् शब्दों के स्थान में क्रमशः) वाम् और नौ आदेश होते हैं (तथा उन आदेशों को अनुदात्त भी होता है)।

वापः — V. i. 44

(षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिकों से) 'खेत' अर्थ अभिधेय हो तो (यथाविहित प्रत्यय होते हैं)।

...वाभ्याम् — III. iv. 91
देखें — सवाभ्याम् III. iv. 91

...वाभ्याम् — VII. iii. 2
देखें — य्वाभ्याम् VII. iii. 2

वाम्... — VIII. i. 20
देखें — वान्नावौ VIII. i. 20

वामदेवात् — IV. ii. 8

(तृतीयासमर्थ) वामदेव प्रातिपदिक से ('देखा गया साम' अर्थ में ड्यत् और ड्य प्रत्यय होते हैं)।

...वामादेः — IV. i. 70
देखें — संहितशफ० IV. i. 70

वामौ — III. iv. 91

(सकार, वकार से उत्तर लोट्-सम्बन्धी एकार के स्थान में यथासङ्ख्य करके) व और अम् आदेश हो जाते हैं।

...वाम्योः — VI. ii. 40
देखें — सादिवाम्योः VI. ii. 40

वायु... — IV. ii. 30
देखें — वाय्वृतुपित्रुषसः IV. ii. 30

...वायोगे — VIII. i. 59
देखें — चवायोगे VIII. i. 59

वाय्वृतुपित्रुषसः — IV. ii. 30

(प्रथमासमर्थ देवतावाची) वायु, ऋतु, पितृ तथा उषस् प्रातिपदिकों से (षष्ठ्यर्थ में यत् प्रत्यय होता है)।

वारणार्थानाम् — I. iv. 27

रोकने अर्थ वाली धातुओं के प्रयोग में (जो इष्ट पदार्थ, उस कारक की अपादान संज्ञा होती है)।

...वालोत्तरपदात् — IV. i. 64
देखें — पाककर्णपर्ण० IV. i. 64

...वाव — VIII. i. 64
देखें — वैवाव VIII. i. 64

...वाशिनायनि... — VI. iv. 174
देखें — दाण्डिनायनहास्ति० VI. iv. 174

वाष्प... — III. i. 16
देखें — वाष्पोष्मभ्याम् III. i. 16

वाष्पोष्मभ्याम् — III. i. 16

वाष्प और ऊष्म (कर्म) से (उद्वमन अर्थ में क्यङ् प्रत्यय होता है)।

...वास... — VI. iii. 17
देखें — शयवासवासिषु VI. iii. 17

...वास... — VI. iii. 57
देखें — पेषंवास० VI. iii. 57

...वासिषु — VI. iii. 17
देखें — शयवासवासिषु VI. iii. 17

वासी — IV. iv. 107
(सप्तमीसमर्थ समानतीर्थ प्रातिपदिक से) रहने वाला अर्थ में (यत् प्रत्यय होता है)।

वासुदेव... — IV. iii. 98
देखें — वासुदेवार्जुनाभ्याम् IV. iii. 98

वासुदेवार्जुनाभ्याम् — IV. iii. 98
(प्रथमासमर्थ भक्तिसमानाधिकरणवाची) वासुदेव तथा अर्जुन शब्दों से (षष्ठ्यर्थ में वुन् प्रत्यय होता है)।

...वास्तोष्पति... — IV. ii. 31
देखें — द्यावापृथिवीशुना० IV. ii. 31

...वास्त्व... — VI. iv. 175
देखें — ऋत्व्यवास्त्व्य० VI. iv. 175

...वास्त्व्य... — VI. iv. 175
देखें — ऋत्व्यवास्त्व्य० VI. iv 175

वाहः — IV. i. 61
वाहन्त (अनुपसर्जन) प्रातिपदिक से (स्त्रीलिङ्ग में वेद-विषय में ङीष् प्रत्यय होता है)।

वाहः — VI. iv. 132
(भसञ्ज्ञक वाह् अन्तवाले अङ्ग को (सम्प्रसारण-सञ्ज्ञक ऊठ् होता है)।

...वाहन... — VI. iii. 57
देखें — पेषंवास० VI. iii. 57

वाहनम् — VIII. iv. 8
(आहितवाची पूर्वपदस्थ निमित्त से उत्तर) वाहन शब्द के (नकार को णकारादेश होता है)।

वाहीकग्रामेभ्यः — IV. ii. 116
वाहीक देश के जो ग्राम, तद्वाची (वृद्धसंज्ञक) प्रातिपदिक से (भी शैषिक ठञ् और ञिठ् प्रत्यय होते हैं)।

वाहीकेषु — V. iii. 114
वाहीक देशविषय में (शस्त्र से जीविका कमाने वाले पुरुषों के समूहवाची प्रातिपदिकों से स्वार्थ में ञ्यट् प्रत्यय होता है, ब्राह्मण और राजन्य को छोड़कर)।

...वि... — I. iii. 18
देखें — परिव्यवेभ्यः I. iii. 18

वि... — I. iii. 19
देखें — विपराभ्याम् I. iii. 19

वि... — I. iii. 83
देखें — व्याङ्परिभ्यः I. iii. 83

वि... — II. iii. 57
देखें — व्यवहृपणोः II. iii. 57

वि... — III. ii. 180
देखें — विप्रसम्भ्यः III. ii. 180

वि... — III. iii. 39
देखें — व्युपयोः III. iii. 39

...वि... — III. iii. 82
देखें — अयोविद्रुषु III. iii. 82

वि... — V. ii. 27
देखें — विनञ्भ्याम् V. ii. 27

...वि... — VI. iii. 109
देखें — संख्याविसाय० VI. iii. 109

...वि... — VIII. iii. 72
देखें — अनुविपर्य० VIII. iii. 72

...वि... — VIII. iii. 88
देखें — सुविनिर्दुर्भ्यः VIII. iii. 88

वि... — VIII. iii. 96
देखें — विकुशमि० VIII. iii. 96

...वि... — VIII. iii. 119
देखें — निव्यभिभ्यः VIII. iii. 119

विकर्ण... — IV. i. 117
देखें — विकर्णशुङ्ग० IV. i. 117

विकर्ण... — IV. i. 124
देखें — विकर्णकुषीतकात् IV. i. 124

विकर्णकुषीतकात् — IV. i. 124
विकर्ण तथा कुषीतक शब्दों से (काश्यप अपत्यविशेष को कहना हो तो ढक् प्रत्यय होता है)।
विकर्ण = एक कुरुवंशी राजकुमार।

विकर्णशुङ्गच्छगलात् — IV. i. 117
विकर्ण, शुङ्ग, छगल शब्दों से (यथासङ्ख्य करके वत्स, भरद्वाज और अत्रि अपत्य-विशेष कहना हो तो अण् प्रत्यय होता है)।

...विकस्ताः — VII. ii. 34
देखें — ग्रसितस्कभित० VII. ii. 34

विकारः — IV. iii. 131

(षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिक से) विकार अर्थ में (यथाविहित प्रत्यय होता है)।

...विकारे — VI. iii. 38

देखें — **अरक्तविकारे VI. iii. 38**

विकुशमिपरिभ्यः — VIII. iii. 96

वि, कु, शमि तथा परि से उत्तर (स्थल शब्द के सकार को मूर्धन्य आदेश होता है)।

विकृतेः — V. i. 12

(चतुर्थीसमर्थ) विकृतिवाची प्रातिपदिक से (उपादानकारण अभिधेय हो तो 'हित' अर्थ में यथाविहित प्रत्यय होता है, यदि वह उपादानकारण अपने उत्तरावस्थान्तर विकृति के लिये हो तो)।

विक्रियः — III. ii. 83

वि पूर्वक 'क्रीञ्' धातु से (कर्म उपपद रहते 'इनि' प्रत्यय होता है, भूतकाल में)।

विख्ये — III. iv. 11

(दृशे) विख्ये शब्द (भी वेदविषय में तुमुन् के अर्थ में) निपातन (किये जाते हैं)।

...विगणन... — I. iii. 36

देखें — **सम्माननोत्सञ्ज० I. iii. 36**

...विचति... — VI. i. 16

देखें — **ग्रहिज्या० VI. i. 16**

...विचतुर... — V. iv. 77

देखें — **अचतुरविचतुर० V. iv. 77**

विचार्यमाणानाम् — VIII. ii. 97

विचार्यमाण = जिसके बारे में विचार करना हो, उस पदार्थ को विषय बनाने वाले वाक्य की (टि को प्लुत उदात्त होता है)।

...विच्छ... — III. iii. 90

देखें — **यजयाच० III. iii. 90**

...विच्छि... — III. i. 28

देखें — **गुपूधूपविच्छि० III. i. 28**

विच् — III. ii. 73

('यज्' धातु से वेदविषय में) विच् प्रत्यय होता है।

विजः — I. ii. 2

'ओविजी भयसञ्चलनयोः' धातु से परे (इडादि प्रत्यय ङित्वत् होते हैं)।

विजायते — V. ii. 12

(द्वितीयासमर्थ समांसमाम् प्रातिपदिक से) 'बच्चा देती है' अर्थ में (ख प्रत्यय होता है)।

विट् — III. ii. 67

सुबन्त उपपद रहते जन, सन, खन, क्रम और गम् धातुओं से वैदिक प्रयोग में विट् प्रत्यय होता है।

विट्... — VI.iv. 41

देखें — **विड्वनोः VI. iv. 41**

विड्वनोः — VI. iv. 41

विट् तथा वन् प्रत्यय परे रहते (अनुनासिकान्त अङ्गों को आकारादेश होता है)।

...वितस्त्योः — VI. ii. 31

देखें — **दिष्टिवितस्त्योः VI. ii. 31**

वित्तः — V. ii. 27

(तृतीयासमर्थ प्रातिपदिक से) 'ज्ञात' अर्थ में (चुञ्चुप् और चणप् प्रत्यय होते हैं)।

वित्तः — VIII. ii. 58

वित्त शब्द में विद्लृ लाभे धातु से उत्तर क्त प्रत्यय के नत्व का अभाव, भोग तथा प्रत्यय अभिधेय होने पर निपातित है।

...विद... — I. ii. 8

देखें — **रुदविदमुषग्रहिस्वपिप्रच्छः I. ii. 8**

...विद... — III. i. 38

देखें — **उषविदजागृभ्यः III. i. 38**

...विद... — III. ii. 61

देखें — **सत्सू० III. ii. 61**

...विद... — III. iii. 96

देखें — **वृषेष० III. iii. 96**

...विद... — III. iii. 99

देखें — **समजनिषद० III. iii. 99**

...विद... — VII. ii. 68

देखें — **गमहन० VII. ii. 68**

...विद... — VIII. ii. 56
देखें — नुदविदोन्द० VIII. ii. 56

विदः — III. iv. 83

विद् ज्ञाने धातु से (लडादेश तिप् आदि जो परस्मैपद-संज्ञक, उनके स्थान में क्रमशः णल्, अतुस्, उस्, थल्, अथुस्, अ, णल्, व, म आदेश विकल्प से होते हैं)।

...विदथि... — VI. iv. 165
देखें — गाथिविदथि० VI. iv. 165

...विदभृत्... — V. iii. 118
देखें — अभिजिद्० V. iii. 118

विदाङ्कुर्वन्तु — III. i. 41

'विदाङ्कुर्वन्तु' (यह शब्द विकल्प से) निपातन किया जाता है।

विदामक्रन् — III. i. 42

विदामक्रन् शब्द वेदविषय में विकल्प से निपातन होता है, (साथ ही अभ्युत्सादयामकः, प्रजनयामकः, चिकयामकः, रमयामकः तथा पावयांक्रियात् पद भी वेदविषय में विकल्प से निपातित होते है)।

विदि ... — III. ii. 162
देखें — विदिभिदि० III. ii. 162

विदितः — V. i. 42

(सप्तमीसमर्थ सर्वभूमि तथा पृथिवी प्रातिपदिकों से)'प्रसिद्ध' अर्थ में भी (यथासङ्ख्य करके अञ् और अण् प्रत्यय होते हैं)।

विदिभिदिच्छिदेः — III. ii. 162

विद्, भिदिर्, छिदिर् —इन धातुओं से (तच्छीलादि कर्ता हों, तो वर्तमानकाल में कुरच् प्रत्यय होता है)।

...विदिभ्यः — III. iv. 109
देखें — सिजभ्यस्तविदि० III. iv. 109

विदूरात् — IV. iii. 84

(पञ्चमीसमर्थ) विदूर शब्द से ('प्रभवति' अर्थ में ञ्य प्रत्यय होता है)।

विदेः — VII. i. 37

'विद् ज्ञाने' धातु से उत्तर (शतृ के स्थान में वसु आदेश होता है)।

...विदोः — III. iv. 20
देखें — दृशिविदोः III. iv. 20

...विद्यमानपूर्वात् — IV. i. 57
देखें — सहनञ्विद्यमान० IV. i. 57

विद्या... — IV. iii. 77
देखें — विद्यायोनिसंबन्धेभ्यः IV. iii. 77

विद्या... — VI. iii. 22
देखें — विद्यायोनिसंबन्धेभ्यः VI. iii. 22

विद्यायोनिसम्बन्धेभ्यः — IV. iii. 77

विद्यासम्बन्धवाची, योनिसम्बन्धवाची (पञ्चमीसमर्थ) प्रातिपदिकों से (आगत अर्थ में वुञ् प्रत्यय होता है)।

विद्यायोनिसम्बन्धेभ्यः — VI. iii. 22

विद्याकृत सम्बन्धवाची एवं योनिकृत सम्बन्धवाची (ऋकारान्त) शब्दों से उत्तर (षष्ठी का उत्तरपद के परे रहते अलुक् होता है)।

विधल्... — IV. ii. 53
देखें — विधल्भक्तलौ IV. ii. 53

विधल्भक्तलौ — IV. ii. 53

(षष्ठीसमर्थ भौरिकि आदि तथा ऐषुकारी आदि शब्दों से 'विषयो देशे' अर्थ में यथासङ्ख्य) विधल् और भक्तल् प्रत्यय होते है।

विधार्थे — V. iii. 42

क्रिया के प्रकार अर्थ में वर्तमान (सङ्ख्यावाची प्रातिपदिकों से धा प्रत्यय होता है)।

विधि... — III. iii. 161
देखें — विधिनिमन्त्रण० III. iii. 161

विधिः — I. i. 71

(जिस विशेषण से) विधि की जाये, (वह, विशेषण अन्त में है जिसके, उस विशेषणान्त समुदाय का ग्राहक होता है और अपने स्वरूप का भी)।

विधिनिमन्त्रणामन्त्रणाधीष्टसम्प्रश्नप्रार्थनेषु — III. iii. 161

आज्ञा देना, निमन्त्रण, आमन्त्रण, सत्कारपूर्वक व्यवहार करना, संप्रश्न, प्रार्थना अर्थों में (लिङ् प्रत्यय होता है)।

विधु... — III. ii. 35
देखें — विध्वरुषः III. ii. 35

विधूनने — VII. iii. 38

'कंपाना' अर्थ में (वर्तमान वा धातु को णि परे रहते जुक् आगम होता है)।

विध्यति — IV. iv. 83

(द्वितीयासमर्थ प्रातिपदिक से) 'बींधता है' अर्थ में (यदि धनुष करण न हो तो यत् प्रत्यय होता है)।

विध्व्वरुषोः — III. ii. 35

विधु और अरुस् (कर्म) उपपद हों तो (तुद धातु से खश् प्रत्यय होता है)।

विन्... — V. iii. 65

देखें — विन्मतोः V. iii. 65

विनञ्भ्याम् — V. ii. 27

वि तथा नञ् प्रातिपदिकों से ('प्रथम भाव' अर्थ में यथासङ्ख्य करके ना तथा नञ् प्रत्यय होते हैं)।

विनयादिभ्यः — V. iv. 34

विनयादि प्रातिपदिकों से (स्वार्थ में ढक् प्रत्यय होता है)।

...विना... — II. iii. 32

देखें — पृथग्विनानानाभिः II. iii. 32

...विनाश... — III. ii. 146

देखें — निन्दहिंस० III. ii. 146

विनि... — V. ii. 102

देखें — विनीनी V. ii. 102

विनिः — V. ii. 121

(अस् अन्तवाले एवं माया, मेधा तथा स्रज् प्रातिपदिकों से 'मत्वर्थ' में) विनि प्रत्यय होता है।

विनीनी — V. ii. 102

(तपस् तथा सहस्र प्रातिपदिकों से 'मत्वर्थ' में यथासङ्ख्य करके) विनि तथा इनि प्रत्यय होते हैं)।

विनियोगे — VIII. i. 61

('अह' इससे युक्त प्रथम तिङन्त को) विनियोग = अनेक प्रयोजन के लिये प्रैष = प्रेरणा (तथा चकार से क्षिया = धर्मोल्लंघन) गम्यमान होने पर अनुदात्त नहीं होता।

...विनीय... — III. i. 117

देखें — विपूयविनीय० III. i. 117

...विन्द... — III. i. 138

देखें — लिम्पविन्द० III. i. 138

विन्द... — III. iv. 30

देखें — विन्दजीवोः III. iv. 30

विन्दजीवोः — III. iv. 30

(यावत् शब्द उपपद रहते) विद्लृ (लाभे) तथा जीव् (प्राणधारणे) धातुओं से (णमुल् प्रत्यय होता है)।

विन्दुः — III. ii. 169

विद् धातु से तच्छीलादि अर्थों में वर्तमान काल में उ प्रत्यय तथा विद् को नुम् का आगम करके विन्दु शब्द का निपातन किया जाता है।

विन्मतोः — V. iii. 65

विन् और मतुप् प्रत्ययों का (लुक् होता है, अजादि अर्थात् इष्ठन्, ईयसुन् प्रत्यय परे रहते)।

विपराभ्याम् — I. iii. 19

वि एवं परा उपसर्ग से उत्तर ('जि' धातु से आत्मनेपद होता है)।

विपाशः — IV. ii. 73

विपाट् नदी के (किनारे पर जो कुएँ है, उनके अभिधेय होने पर भी अञ् प्रत्यय होता है)।

विपूय... — III. i. 117

देखें — विपूयविनीय० III. i. 117

विपूयविनीयजित्याः — III. i. 117

विपूय, विनीय और जित्य शब्दों का निपातन किया जाता है; (यथासंख्य करके मुञ्ज = मूंज, कल्क = ओषधि की पीठी और हलि = बड़ा हल अर्थों में)।

विप्रतिषिद्धम् — II. iv. 13

परस्पर विरुद्धार्थक (अद्रव्यवाची) शब्दों का (द्वन्द्व भी विकल्प से एकवद् होता है)।

विप्रतिषेधे — I. iv. 2

विप्रतिषेध = तुल्यबलविरोध होने पर (क्रम में बाद वाला सूत्र कार्य करता है)।

विप्रलापे — I. iii. 50

परस्पर-विरुद्ध कथन रूप (स्पष्टवाणी वालों के सह उच्चारण) अर्थ में (वर्तमान वद् धातु से विकल्प से आत्मनेपद होता है)।

विप्रश्नः — I. iv. 39

(राध् और ईक्ष् धातु के प्रयोग में जिसके विषय में) विविध प्रश्न हों, वह (कारक सम्प्रदान-संज्ञक होता है)।

विप्रसम्भ्यः — III. ii. 180

(संज्ञा गम्यमान न हो, तो) वि, प्र तथा सम्पूर्वक (भू धातु से डु प्रत्यय होता है, वर्तमानकाल में)।

विभक्ति... — II. i. 6
देखें — विभक्तिसमीपसमृद्धि० II. i. 6

विभक्तिः — I. iv. 103

(तिङों व सुपों के तीन-तीन की) विभक्ति संज्ञा (भी) हो जाती है।

विभक्तिः —V. iii. 1

(यहाँ से आगे 'दिक्शब्देभ्यः सप्तमीपञ्चमी०' V. iii. 27 सूत्र से पहले पहले जितने प्रत्यय कहे हैं, उन सबकी) विभक्ति सञ्ज्ञा होती है।

विभक्तिः — VI. i. 162

(सप्तमीबहुवचन सुप् के परे रहते एक अच् वाले शब्द से उत्तर तृतीया विभक्ति से लेकर आगे की) विभक्तियों को (उदात्त होता है)।

...विभक्तिषु — VIII. iv. 11
देखें — प्रातिपदिकान्तनुम्विभक्तिषु VIII. iv. 11

विभक्ते — II. iii. 42

जिस (निर्धारण) में विभाग किया जाये, उसमें (पञ्चमी विभक्ति हो जाती है)।

विभक्तौ — I. iii. 8

विभक्ति में (वर्तमान अन्तिम तवर्ग, सकार और मकार की इत्सञ्ज्ञा नहीं होती)।

विभक्तौ — VII. i. 73

(इक् अन्त वाले नपुंसक अङ्ग को अजादि) विभक्ति परे रहते (नुम् आगम होता है)।

विभक्तौ — VII. ii. 84

(अष्टन् अङ्ग को) विभक्ति परे रहते (आकारादेश हो जाता है)।

...विभज्योपपदे — V. iii. 57
देखें — द्विवचनविभज्यो० V. iii. 57

...विभा... — III. ii. 21
देखें — दिवाविभा० III. ii. 21

विभाषा — I. i. 26

(दिशावाची बहुव्रीहि समास में सर्वादियों की सर्वनाम संज्ञा) विकल्प से (होती है)।

विभाषा — I. i. 31

(द्वन्द्व समास में सर्वादियों की सर्वनामसंज्ञा जस्-सम्बन्धी कार्य में) विकल्प से (नहीं होती)।

विभाषा — I. i. 43

(निषेध और विकल्प की) विभाषा संज्ञा (होती है)।

विभाषा — I. ii. 3

('ऊर्णुञ् आच्छादने' धातु से परे इडादि प्रत्यय) विकल्प करके (ङित्वत् होता है)।

विभाषा — I. ii. 16

(उपयमन अर्थ में वर्तमान यम् धातु से परे आत्मनेपद विषय में सिच् प्रत्यय) विकल्प करके (कित्वत् होता है)।

विभाषा — I. ii. 26

(वेदविषय में तीनों स्वरों को) विकल्प से (एकश्रुति हो जाती है)।

विभाषा — I. iii. 50

(परस्परविरुद्ध कथन रूप व्यक्तवाणी वालों के सह उच्चारण अर्थ में वर्तमान वद् धातु से) विकल्प से (आत्मनेपद होता है)।

विभाषा — I. iii. 77

(समीपोच्चरित पद के द्वारा कर्त्रभिप्राय क्रियाफल के प्रतीत होने पर) विकल्प करके (धातु से आत्मनेपद होता है)।

विभाषा — I. iii. 85

(अकर्मक उपपूर्वक रम् धातु से) विकल्प करके (परस्मैपद होता है)।

विभाषा — I. iv. 69

(छिपने अर्थ में तिरः शब्द की कृञ् धातु के योग में) विकल्प से (गति और निपात संज्ञा होती है)।

विभाषा — I. iv. 97

(अधि शब्द की कृञ् के परे) विकल्प से (कर्मप्रवचनीय और निपात संज्ञा होती है)।

विभाषा — II. i. 11

(अप, परि, बहिस्, अञ्चु – ये सुबन्त पञ्चम्यन्त समर्थ सुबन्त के साथ) विकल्प से (समास को प्राप्त होते हैं और वह अव्ययीभाव समास होता है)।

विभाषा — II. iii. 17

(अनादर गम्यमान होने पर मन् धातु के प्राणिवर्जित कर्म में) विकल्प से (चतुर्थी विभक्ति होती है)।

विभाषा — II. iii. 25

विकल्प से (पञ्चमी विभक्वि होती है, स्त्रीलिङ्गवर्जित गुणरूप हेतु में)।

विभाषा — II. iii. 58

उपसर्गसहित दिव् धातु के कर्म कारक में) विकल्प से (षष्ठी विभक्ति होती है)।

विभाषा — II. iv. 12

(वृक्ष, मृग, तृण, धान्य, व्यञ्जन, पशु, शकुनि, अश्ववडव, पूर्वापर, अधरोत्तरवाची शब्दों का द्वन्द्व) विकल्प से (एकवद्भाव को प्राप्त होता है)।

विभाषा — II. iv. 16

(अधिकरण के परिमाण का समीप अर्थ कहना हो तो द्वन्द्वसमास में) विकल्प से (एकवद् होता है)।

विभाषा — II. iv. 25

(नञ्कर्मधारयवर्जित सेना, सुरा, छाया, शाला, निशा-शब्दान्त तत्पुरुष) विकल्प से (नपुंसकलिङ्ग में होता है)।

विभाषा — II. iv. 50

(इङ् धातु को) विकल्प से (गाङ् आदेश होता है, लुङ् तथा लृङ् लकार परे रहते)।

विभाषा — II. iv. 78

(घ्रा, धेट्, शा, छा एवं सा धातुओं से परे) विकल्प करके (परस्मैपद परे रहते सिच् का लुक् हो जाता है)।

विभाषा — III. i. 20

(कृ तथा वृष् धातुओं से) विकल्प से (क्यप् प्रत्यय होता है)।

विभाषा — III. i. 49

(धेट् तथा टुओश्वि धातुओं से च्लि के स्थान में चङ् आदेश) विकल्प से (होता है, कर्तृवाची लुङ् परे रहते)।

विभाषा — III. i. 113

(मृज् धातु से) विकल्प से (क्यप् प्रत्यय होता है)।

विभाषा — III. i. 139

(अनुपसर्ग डुधाञ् और डुदाञ् धातुओं से) विकल्प से (श प्रत्यय होता है)।

विभाषा — III. i. 143

(ग्रह् धातु से) विकल्प से (ण प्रत्यय होता है)।

विभाषा — III. ii. 114

(अभिज्ञावचन शब्द उपपद हो तो यत् का प्रयोग हो या न हो, तो भी अनद्यतन भूतकाल में धातु से लृट् प्रत्यय) विकल्प से (होता है, यदि प्रयोक्ता साकांक्ष हो तो)।

विभाषा — III. ii. 121

(पृष्टप्रतिवचन अर्थ में धातु से न तथा नु उपपद रहते सामान्य भूतकाल में) विकल्प से (लट् प्रत्यय होता है)।

पृष्टप्रतिवचन = पूछे जाने पर दिया जाने वाला उत्तर।

विभाषा — III. iii. 5

(कदा तथा कर्हि उपपद हों, तो धातु से भविष्यत्काल में) विकल्प से (लट् प्रत्यय होता है)।

विभाषा — III. iii. 50

(आङ् पूर्वक रु तथा प्लु धातुओं से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में) विकल्प से (घञ् प्रत्यय होता है)।

विभाषा — III. iii. 110

(उत्तर तथा प्रश्न गम्यमान होने पर धातु से स्त्रीलिङ्ग कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में) विकल्प से (इञ् प्रत्यय होता है तथा चकार से ण्वुल् भी होता है)।

विभाषा — III. iii. 138

(भविष्यत्काल में पहले भाग की मर्यादा को कहना हो तो अनद्यतन की तरह प्रत्ययविधि) विकल्प से (नहीं होती, यदि वह कालविभाग अहोरात्रसम्बन्धी न हो तो)।

विभाषा — III. iii. 143

(गर्हा गम्यमान हो तो कथम् शब्द उपपद रहते) विकल्प से (लिङ् प्रत्यय होता है तथा चकार से लट् प्रत्यय भी होता है)।

विभाषा — III. iii. 155

(सम्भावन अर्थ के कहने वाला धातु उपपद हो तो यत् शब्द उपपद न होने पर सम्भावन अर्थ में वर्तमान धातु

से) विकल्प से (लिङ् प्रत्यय होता है, यदि अलम् शब्द का अप्रयोग सिद्ध हो)।

विभाषा— III. iii. 160

(इच्छार्थक धातुओं से वर्तमान काल में) विकल्प से (लिङ् प्रत्यय होता है, पक्ष में लट्)।

विभाषा— III. iv. 24

(अग्रे, प्रथम, पूर्व उपपद हों तो समानकर्तृक पूर्वकालिक धातु से) विकल्प से (क्त्वा, णमुल् प्रत्यय होते हैं, पक्ष में लडादि लकार होते हैं)।

विभाषा— IV. i. 34

जिसके पूर्व में कोई शब्द विद्यमान हो, ऐसे पति-शब्दान्त अनुपसर्जन प्रातिपदिक को स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय विकल्प से हो जाता है, तथा नकारादेश भी हो जाता है, (ङीप् न होने पर नकारादेश भी नही)।

विभाषा— IV. ii. 22

(प्रथमासमर्थ पौर्णमासी शब्द से समानाधिकरणवाले फाल्गुनी, श्रवणा, कार्त्तिकी और चैत्री शब्दों से सप्तम्यर्थ में) विकल्प से (ढक् प्रत्यय होता है, पक्ष में अण्)।

विभाषा— IV. ii. 117

(उशीनर देश में जो वाहीक ग्राम वृद्धसंज्ञक हैं, उनसे) विकल्प से (ठञ् तथा ञिठ् शैषिक प्रत्यय होते हैं)।

विभाषा— IV. ii. 129

(कुरु तथा युगन्धर जनपदवाची शब्दों से) विकल्प से (शैषिक वुञ् प्रत्यय होता है)।

विभाषा— IV. ii. 143

(अमनुष्य अभिधेय हो तो पर्वत शब्द से) विकल्प से (छ प्रत्यय होता है, पक्ष में अण्)।

विभाषा— IV. iii. 13

(कालविशेषवाची शरत् शब्द से रोग तथा आतप अभिधेय हो तो ठञ् प्रत्यय) विकल्प से (होता है)।

विभाषा— IV. iii. 24

(कालवाची पूर्वाह्ण अपराह्ण शब्दों से) विकल्प से (ट्यु तथा ट्युल् प्रत्यय होते हैं, उन प्रत्ययों को तुट् आगम भी होता है)।

विभाषा— IV. iv. 17

(तृतीयासमर्थ विवध तथा वीवध प्रातिपदिकों से) विकल्प से (ष्ठन् प्रत्यय होता है)।

विभाषा — IV. iv. 113

(सप्तमीसमर्थ स्रोतस् प्रातिपदिक से वेदविषय में भवार्थ में) विकल्प से (ड्यत्, ड्य – दोनों प्रत्यय होते हैं)।

विभाषा — V. i. 4

(हविविशेषवाची तथा 'अपूप' इत्यादि प्रातिपदिकों से क्रीत अर्थ से पूर्व पूर्व पठित अर्थों में) विकल्प से (यत् प्रत्यय होता है)।

विभाषा — V. i. 28

(अध्यर्द्ध शब्द पूर्व में है जिसके, ऐसे तथा द्विगुसञ्ज्ञक कार्षापण एवं सहस्र-शब्दान्त प्रातिपदिक से 'तदर्हति'-पर्यन्त कथित अर्थों में उत्पन्न प्रत्यय का) विकल्प से (लुक् होता है)।

विभाषा — V. ii. 4

(षष्ठीसमर्थ धान्यविशेषवाची तिल, माष, उमा, भङ्गा और अणु प्रातिपदिकों से) विकल्प करके (यत् प्रत्यय होता है, यदि इनका उत्पत्तिस्थान खेत वाच्य हो तो)।

विभाषा — V. iii. 29

(दिशा, देश और काल अर्थों में वर्तमान सप्तम्यन्त, पञ्चम्यन्त तथा प्रथमान्त पर तथा अवर प्रातिपदिकों से) विकल्प से (स्वार्थ में अतसुच् प्रत्यय होता है)।

विभाषा — V. iii. 42

(सप्तमी, पञ्चमी, प्रथमान्त दिशा, देश तथा कालवाची अवर शब्द को अस्तात् प्रत्यय परे रहते) विकल्प से (अव् आदेश होता है)।

विभाषा — V. iii. 68

('किञ्चित् न्यून' अर्थ में वर्तमान सुबन्त से) विकल्प से (बहुच् प्रत्यय होता है और वह सुबन्त से पूर्व में ही होता है)।

विभाषा — V. iv. 8

(दिशावाची स्त्रीलिङ्ग न हो तो अञ्चति उत्तरपदवाले प्रातिपदिक से स्वार्थ में) विकल्प से (ख प्रत्यय होता है)।

विभाषा — V. iv. 10

(स्थान-शब्दान्त प्रातिपदिक से) विकल्प से (छ प्रत्यय होता है, यदि समान स्थान वाले सदृश व्यक्ति द्वारा स्थानान्त प्रतिपाद्य तत्त्व अर्थवत् हो तो)।

विभाषा — V. iv. 15

(जिस बहुव्रीहि से समासान्त प्रत्यय का विधान नहीं किया है, उससे) विकल्प करके (कप् प्रत्यय होता है)।

विभाषा — V. iv. 20

(आसन्नकालिक क्रिया के अभ्यावृत्ति के गणन अर्थ में वर्तमान बहु प्रातिपदिक से) विकल्प से (धा प्रत्यय होता है)।

विभाषा — V. iv. 52

(कृ, भू तथा अस् धातु के योग में सम् पूर्वक पद् धातु के कर्ता में वर्तमान प्रातिपदिक से 'सम्पूर्णता' गम्यमान हो तो) विकल्प से (साति प्रत्यय होता है)।

विभाषा — V. iv. 72

(नञ् से परे जो पथिन् शब्द, तदन्त तत्पुरुष से समासान्त प्रत्यय) विकल्प से (नहीं होता)।

विभाषा — V. iv. 130

(ऊर्ध्व शब्द से उत्तर जो जानु शब्द, उसको) विकल्प से (समासान्त ज्ञु आदेश होता है, बहुव्रीहि समास में)।

विभाषा — V. iv. 144

(श्याव तथा अरोक शब्दों से उत्तर दन्त शब्द को) विकल्प से (समासान्त दतृ आदेश होता है, बहुव्रीहि समास में)।

श्याव = पीला;

अरोक = मैला, गन्दा।

विभाषा — V. iv. 149

(पूर्ण शब्द से उत्तर काकुद शब्द का) विकल्प से (समासान्त लोप होता है, बहुव्रीहि समास में)।

विभाषा — VI. i. 27

(अभि तथा अव पूर्व वाले श्यैङ् धातु को निष्ठा परे रहते) विकल्प से (सम्प्रसारण होता है)।

विभाषा — VI. i. 43

(परि उपसर्ग से उत्तर व्येञ् धातु को विकल्प करके (सम्प्रसारण नहीं होता है)।

विभाषा — VI. i. 50

(ली धातु को ल्यप् परे रहते तथा एच् के विषय में) विकल्प से (उपदेश अवस्था में ही आत्व हो जाता है)।

विभाषा — VI. i. 118

(सर्वत्र = छन्द तथा भाषा विषय दोनों में, गो शब्द के पदान्त एङ् को) विकल्प से (अकार परे रहते प्रकृतिभाव होता है)।

विभाषा — VI. i. 130

(लिट् तथा यङ् के परे रहते टुओश्वि धातु को) विकल्प से (सम्प्रसारण हो जाता है)।

विभाषा — VI. i. 175

(षट्सञ्ज्ञक, त्रि तथा चतुर् शब्द से उत्पन्न जो झलादि विभक्ति शब्द का उपोत्तम) विकल्प से (भाषाविषय में उदात्त होता है)।

विभाषा — VI. i. 202

(रिक्त शब्द में) विकल्प से (आद्युदात्तत्व होता है)।

विभाषा — VI. i. 209

(वेणु तथा इन्धान शब्दों के आदि को) विकल्प से (उदात्त होता है)।

विभाषा — VI. ii. 67

(अध्यक्ष शब्द उत्तरपद रहते पूर्वपद को) विकल्प से (आद्युदात्त होता है)।

विभाषा — VI. ii. 161

(नञ् से उत्तर तृप्रत्ययान्त एवं अन्न, तीक्ष्ण तथा शुचि उत्तरपद शब्दों को) विकल्प से (अन्तोदात्त होता है)।

विभाषा — VI. ii. 164

(वेदविषय में संख्या शब्द से परे स्तन शब्द को बहुव्रीहि समास में) विकल्प से (अन्तोदात्त होता है)।

विभाषा — VI. ii. 196

(तत्पुरुष समास में उत्पुच्छ शब्द को) विकल्प से (अन्तोदात्तत्व होता है)।

विभाषा — VI. iii. 12

(बन्ध शब्द उत्तरपद रहते भी हलन्त तथा अदन्त शब्द से उत्तर सप्तमी का) विकल्प करके (अलुक् होता है)।

विभाषा — VI. iii. 15

(वर्ष, क्षर, शर, वर – इन शब्दों से उत्तर सप्तमी का ज उत्तरपद रहते) विकल्प से (अलुक् होता है)।

विभाषा — VI. iii. 23

(स्वसृ तथा पति शब्द के उत्तरपद रहते विद्या तथा योनि-सम्बन्धवाची ऋकारान्त शब्दों से उत्तर षष्ठी का) विकल्प से (अलुक् होता है)।

विभाषा — VI. iii. 48

(सबको अर्थात् द्वि, अष्टन् तथा त्रि को जो कुछ भी कह आयें है, वह चत्वारिंशत् आदि सङ्ख्या उत्तरपद रहते, बहुव्रीहि समास तथा अशीति को छोड़कर) विकल्प करके (हो)।

विभाषा — VI. iii. 71

(कृदन्त उत्तरपद रहते रात्रि शब्द को) विकल्प करके (मुम् आगम होता है)।

विभाषा — VI. iii. 87

(उदर शब्द उत्तरपद रहते य् प्रत्यय परे हो तो समान शब्द को) विकल्प करके (स आदेश हो जाता है)।

विभाषा — VI. iii. 99

(अर्थ शब्द उत्तरपद हो तो अषष्ठीस्थित तथा अतृतीया-स्थित अन् शब्द को) विकल्प करके (दुक् आगम होता है)।

विभाषा — VI. iii. 105

(पुरुष शब्द उत्तरपद हो तो) विकल्प से (कु शब्द को का आदेश हो जाता है)।

विभक्तौ — VI. iii. 131

(मन्त्र-विषय में प्रथमा से भिन्न) विभक्ति के परे रहते (ओषधि शब्द को भी दीर्घ हो जाता है)।

विभाषा — VI. iv. 17

(तन् अङ्ग की उपधा को झलादि सन् परे रहते) विकल्प से (दीर्घ होता है)।

विभाषा — VI. iv. 32

(जकारान्त अङ्ग के तथा नश् के नकार का लोप) विकल्प करके (नहीं होता)।

विभाषा — VI. iv. 43

(यकारादि कित्, ङित् प्रत्ययों के परे रहते अन, सन, खन् अङ्गों को) विकल्प से (आकारादेश हो जाता है)।

विभाषा — VI. iv. 50

(हल् से उत्तर 'क्य' का) विकल्प से (लोप होता है, आर्धधातुक परे रहते)।

विभाषा — VI. iv. 57

(आप् से उत्तर ल्यप् परे रहते) विकल्प से (णि के स्थान में अयादेश होता है)।

विभाषा — VI. iv. 137

(ङि तथा शी विभक्ति परे रहते अन् के अकार का लोप) विकल्प से (होता है)।

विभाषा — VI. iv. 162

(ऋतु अङ्ग के हलादि, लघु ऋकार के स्थान में) विकल्प से (र आदेश होता है, वेदविषय में; इष्ठन् इमनिच्, ईयसुन् परे रहते)।

विभाषा — VII. i. 7

(विद् अङ्ग से उत्तर झ् के स्थान में हुआ जो अत् आदेश, उसको) विकल्प से (रुट् आगम होता है)।

विभाषा — VII. i. 69

(लभ् अङ्ग को चिण् तथा णमुल् प्रत्यय परे रहते) विकल्प से (नुम् आगम होता है)।

विभाषा — VII. i. 97

(तृतीयादि अजादि विभक्तियों के परे रहते क्रोष्टु शब्द को) विकल्प से (तृज्वत् अतिदेश होता है)।

विभाषा — VII. ii. 6

(ऊर्णुञ् अङ्ग को परस्मैपदपरक इडादि सिच् परे रहते) विकल्प से (वृद्धि नहीं होती)।

विभाषा — VII. ii. 15

(जिस धातु को कहीं भी इट् विधान) विकल्प से (किया गया हो, उसको निष्ठा के परे रहते इडागम नहीं होता)।

विभाषा — VII. ii. 17

(भाव तथा आदिकर्म में वर्तमान आकार इत्सञ्ज्ञक धातुओं को निष्ठा परे रहते) विकल्प से (इट् आगम नहीं होता)।

विभाषा — VII. ii. 65

(सृज् तथा दृशिर् अङ्ग के थल् को) विकल्प से (इट् आगम नहीं होता)।

विभाषा — VII. ii. 68

(गम्लृ, हन्, विद्लृ, विश् — इन अङ्गों से उत्तर वसु को) विकल्प से (इट् आगम होता है)।

विभाषा— VII. iii. 58

(अभ्यास से उत्तर जि अङ्ग को) विकल्प से (कवर्गादेश होता है, सन् तथा लिट् परे रहते)।

विभाषा— VII. iii. 90

(हलादि पित् सार्वधातुक परे रहते 'ऊर्णुञ् आच्छादने' धातु को) विकल्प से (वृद्धि होती है)।

विभाषा — VII. iii. 115

(द्वितीया तथा तृतीया शब्द से उत्तर ङित् प्रत्यय को) विकल्प से (स्याट् आगम होता है तथा द्वितीया, तृतीया शब्द को स्याट् के योग में ह्रस्व भी हो जाता है)।

विभाषा — VII. iv. 44

(ओहाक् अङ्ग को) विकल्प से (वेदविषय में क्त्वा प्रत्यय परे रहते 'हि' आदेश होता है)।

विभाषा — VII. iv. 97

(वेष्ट तथा चेष्ट अङ्ग के अभ्यास को णि परे रहते) विकल्प से (अकारादेश होता है)।

विभाषा — VIII. i. 27

(विद्यमान है कोई पद पूर्व में जिससे, ऐसे प्रथमान्त पद से उत्तर षष्ठ्यन्त, चतुर्थ्यन्त तथा द्वितीयान्त युष्मद्, अस्मद् शब्दों को) विकल्प से (वाम्, नौ आदि आदेश नहीं होते)।

विभाषा — VIII. i. 41

(अहो शब्द से युक्त तिङन्त को पूजा-विषय से शेष विषयों में) विकल्प करके (अनुदात्त नहीं होता)।

विभाषा — VIII. i. 45

(किम् शब्द का लोप होने पर क्रिया के प्रश्न में अनुपसर्ग तथा अप्रतिषिद्ध तिङन्त को) विकल्प करके (अनुदात्त नहीं होता)।

विभाषा — VIII. i. 50

(अविद्यमानपूर्व आहो, उताहो शब्दों से युक्त तिङन्त को अनन्तर से शेष विषय में) विकल्प करके (अनुदात्त नहीं होता)।

विभाषा — VIII. i. 63

(चादियों के लोप होने पर प्रथम तिङन्त को) विकल्प करके (अनुदात्त नहीं होता)।

विभाषा — VIII. ii. 21

(अजादि प्रत्यय परे रहते गृ धातु के रेफ को) विकल्प करके (लत्व होता है)।

विभाषा — VIII. ii. 93

(पूछे गये प्रश्न के प्रत्युत्तर वाक्य में वर्तमान हि शब्द को) विकल्प करके (प्लुत उदात्त होता है)।

विभाषा — VIII. iii. 79

(इण् से परे इट् से उत्तर षीध्वम्, लुङ् तथा लिट् के धकार को) विकल्प से (मूर्धन्य आदेश होता है)।

विभाषा — VIII. iv. 9

(ओषधिवाची तथा वनस्पतिवाची पूर्वपद में स्थित निमित्त से उत्तर वन शब्द के नकार को) विकल्प करके (णकार आदेश होता है)।

विभाषा — VIII. iv. 18

(उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर, जो उपदेश में ककार तथा खकार आदि वाला नहीं है एवं षकारान्त भी नहीं है, ऐसे शेष धातु के परे रहते नि के नकार को) विकल्प से (णकारादेश होता है)।

विभाषा— VIII. iv. 29

(ण्यन्त धातु से विहित जो कृत् प्रत्यय, उसमें स्थित जो अच् से उत्तर नकार, उसको उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर) विकल्प से (णकार आदेश होता है)।

विभाषितम्— VII. iii. 25

(जङ्गल, धेनु, वलज अन्तवाले अङ्ग के पूर्वपद के अचों में आदि अच् को वृद्धि होती है तथा इन अङ्गों का उत्तर) विकल्प से (वृद्धिवाला होता है; ञित्, णित् तथा कित् तद्धित परे रहते)।

विभाषितम् — VIII. i. 53

(गत्यर्थक धातुओं के लोडन्त से युक्त उपसर्गरहित एवं उत्तमपुरुषवर्जित जो लोडन्त तिङन्त; उसे) विकल्प करके (अनुदात्त नहीं होता, यदि कारक सभी अन्य न हों तो)।

विभाषितम् — VIII. i. 74

(विशेषवाची समानाधिकरण आमन्त्रित परे रहते सामान्यवचन आमन्त्रित को) विकल्प से (अविद्यमानवत् होता है)।

...विभ्यः — I. iii. 22

देखें — **समवप्रविभ्यः I. iii. 22**

...विभ्यः — I. iii. 30

देखें — **निसमुपविभ्यः I. iii. 30**

...विभ्यः — VII. ii. 24
देखें — सन्निविभ्यः VII. ii. 24
...विभ्यः — VIII. iii. 70
देखें — परिनिविभ्यः VIII. iii. 70
...विभ्यः — VIII. iii. 76
देखें — निर्निविभ्यः VIII. iii. 76
...विभ्याम् — I. iii. 27
देखें — उद्विभ्याम् I. iii. 27
...विभ्याम् — V. iv. 148
देखें — उद्विभ्याम् V. iv. 148
...विभ्याम् — VI. ii. 181
देखें — निविभ्याम् VI. ii. 181
...विमति... — I. iii. 47
देखें — भासनोपसम्भाषा० I. iii. 47
विमुक्तादिभ्यः — V. ii. 61
विमुक्तादि प्रातिपदिकों से ('अध्याय' और 'अनुवाक' अभिधेय हों तो मत्वर्थ में अण् प्रत्यय होता है)।
विमोहने — VII. ii. 54
व्याकुल करने अर्थ में (वर्तमान लुभ् धातु से उत्तर क्त्वा तथा निष्ठा को इट् आगम होता है)।
विरामः — I. iv. 109
विराम = वर्णोच्चारण के अभाव की (अवसान संज्ञा होती है)।
...विरिब्ध... — VII. ii. 18
देखें — क्षुब्धस्वान्त० VII. ii. 18
विरोधः — II. iv. 9
विरोध = वैर (जिनका स्वाभाविक है, तद्वाची शब्दों का द्वन्द्व एकवद् होता है)।
विवधात् — IV. iv. 17
(तृतीयासमर्थ) विवध प्रातिपदिक से (विकल्प से ष्ठन् प्रत्यय होता है)।

विवध = बोझा ढोने के लिये जूआ, मार्ग, अनाज का संग्रह, घड़ा।
...विविच्... — III. ii. 142
देखे — सम्पृचानुरुध० III. ii. 142
...विश... — III. iii. 16
देखें — पदरुज० III. iii. 16
विशः — I. iii. 17
(नि उपसर्ग से उत्तर) 'विश्' धातु से (आत्मनेपद होता है)।
...विशः — I. iv. 47
देखें — अभिनिविशः I. iv. 47
विशस्तृ — VII. ii. 34
विशस्तृ शब्द वेदविषय में इडभावयुक्त निपातित है।
विशाखयोः — I. ii. 62
विशाखा (नक्षत्र) के (द्वित्व अर्थ में भी विकल्प करके एकवचन होता है, छन्द विषय में)।
...विशाखा... — IV. iii. 34
देखें — श्रविष्ठाफल्गुन्य० IV. iii. 34
विशाखा... — V. i. 109
देखें — विशाखाषाढात् V. i. 109
विशाखाषाढात् — V. i. 109
(प्रयोजन समानाधिकरणवाची प्रथमासमर्थ) विशाखा तथा आषाढ प्रातिपदिकों से (यथासङ्ख्य करके मन्थ = मथन का साधन तथा दण्ड अभिधेय होने पर षष्ठ्यर्थ में अण् प्रत्यय होता है)।
...विशाम् — VII. ii. 68
देखें — गमहन० VII. ii. 68
...विशाल... — V. iii. 84
देखें — शेवलसुपरि० V. iii. 84
विशि... — III. iv. 56
देखें — विशिपतिपदि० III. iv. 56
विशिपतिपदिस्कन्दाम् — III. iv. 56
(व्याप्यमान तथा आसेव्यमान गम्यमान हों तो द्वितीयान्त उपपद रहते) विशि, पति, पदि तथा स्कन्द् धातुओं से (णमुल् प्रत्यय होता है)।
विशिष्टलिङ्गः — II. iv. 7
भिन्न लिङ्ग वाले (नदीवाचकों और ग्रामवर्जित देशवाचियों का द्वन्द्व एकवद् होता है)।
विशेषः — I. ii. 65
(वृद्ध = गोत्र प्रत्ययान्त शब्द युवा प्रत्ययान्त के साथ शेष रह जाता है, यदि वृद्ध-युव-प्रत्ययनिमित्तक ही) भेद हो तो।
विशेषणम् — II. i. 56
विशेषणवाचक (सुबन्त) शब्द (समानाधिकरण विशेष्यवाची सुबन्त शब्द के साथ बहुल करके समास को प्राप्त होता है और वह तत्पुरुषसंज्ञक होता है)।

विशेषणानाम् — I. ii. 52
(प्रत्यय के लुप् होने पर उस लुबर्थ के) विशेषणों में (भी लिङ्ग और संख्या प्रकृत्यर्थ के समान हो जाते हैं, जाति के प्रयोग से पूर्व ही)।

...विशेषणे — II. ii. 35
देखें — **सप्तमीविशेषणे II. ii. 35**

विशेषवचने — VIII. i. 74
विशेषवाची (समानाधिकरण आमन्त्रित) परे रहते (सामान्यवचन आमन्त्रित को विकल्प से अविद्यमानवत् होता है)।

विशेष्येण — II. i. 56
(समानाधिकरण) विशेष्यवाचक (सुबन्त) शब्द के साथ (विशेषणवाची सुबन्त का बहुल करके तत्पुरुष समास होता है)।

...विश्रि... — III. ii. 157
देखें — **जिदृक्षि० III. ii. 157**

...विश्व... — V. iii. 111
देखें — **प्रत्नपूर्व० V. iii. 111**

...विश्वजन... — V. i. 8
देखें — **आत्मन्विश्वजन० V. i. 8**

...विश्वदेव्यस्य — VI. iii. 130
देखें — **सोमाश्वेन्द्रिय० VI. iii. 130**

विश्वम् — VI. ii. 107
(बहुव्रीहि समास में सञ्ज्ञाविषय में पूर्वपद) विश्व शब्द को (अन्तोदात्त होता है)।

विश्वस्य — VI. iii. 127
(वसु तथा राट् उत्तरपद रहते) विश्व शब्द को (दीर्घ हो जाता है)।

...विष... — IV. iv. 91
देखें — **नौवयोधर्म० IV. iv. 91**

विषयः — IV. ii. 51
(षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिक से) विषय अर्थ में (यथाविहित प्रत्यय होता है, यदि वह विषय देश हो)।

...विषु — III. iii. 63
देखें — **समुप० III. iii. 63**

...विषु — III. iii. 72
देखें — **न्यभ्युपविषु III. iii. 72**

विष्किरः — VI. i. 145
विष्किर —इस में ककार से पूर्व सुट् (विकल्प से) निपातन किया जाता है, (पक्षी को कहा जा रहा हो तो)।

विष्टरः — VIII. iii. 93
(वृक्ष तथा आसन वाच्य हो तो) विष्टर शब्द में (षत्व निपातन है)।

विष्वक्... — VI. iii. 91
देखें — **विष्वग्देवयोः VI. iii. 91**

विष्वग्देवयोः — VI. iii. 91
विष्वग् एवं देव शब्दों के (तथा सर्वनाम शब्दों के टिभाग को अद्रि आदेश होता है, वप्रत्ययान्त अञ्चु धातु के परे रहते)।

...विसर्जनीय... — VIII. iii. 58
देखें — **नुम्विसर्जनीय० VIII. iii. 58**

विसर्जनीयः — VIII. iii. 15
(रेफान्त पद को खर् परे रहते तथा अवसान में) विसर्जनीय आदेश होता है, (संहिता में)।

विसर्जनीयः — VIII. iii. 35
(शर्परक खर् के परे रहते विसर्जनीय को) विसर्जनीय आदेश होता है।

विसर्जनीयस्य — VIII. iii. 34
(खर् परे रहते) विसर्जनीय को (सकार आदेश होता है)।

विसारिणः — V. iv. 16
विसारिन् प्रातिपदिक से (स्वार्थ में अण् प्रत्यय होता है, मछली अभिधेय हो तो)।

विस्तात् — V. i. 31
(द्वि तथा त्रि शब्द पूर्ववाले) विस्तशब्दान्त द्विगुसञ्ज्ञक प्रातिपदिक से (भी 'तदर्हति'-पर्यन्त कथित अर्थों में उत्पन्न प्रत्यय का विकल्प से लुक् होता है)।

विस्पष्टादीनि — VI. ii. 24
(गुण को कहने वाले शब्दों के उत्तरपद रहते) विस्पष्टादि पूर्वपद को (तत्पुरुष समास में प्रकृतिस्वर होता है)।

विंशति... — V. i. 24
देखें — **विंशतित्रिंशद्भ्याम् V. i. 24**

...विंशति... — V. i. 58
देखें — **पंक्तिविंशति० V. i. 58**

...विंशतिक... — V. i. 27
देखें — **शतमानविंशतिक० V. i. 27**

विंशतिकात् — V. i. 32
(अर्ध्यर्द्ध शब्द पूर्ववाले तथा द्विगुसञ्ज्ञक विंशतिकशब्दान्त प्रातिपदिक से ('तदर्हति'-पर्यन्त कथित अर्थों में ख प्रत्यय होता है)।

विंशतित्रिंशद्भ्याम् — V. i. 24
विंशति तथा त्रिंशद् प्रातिपदिकों से ('तदर्हति'-पर्यन्त कथित अर्थों में ड्वुन् प्रत्यय होता है, सञ्ज्ञाभिन्न विषय में)।

...विंशतेः — V. ii. 46
देखें — शदन्तविंशतेः V. ii. 46

विंशतेः — VI. iv. 142
(भसञ्ज्ञक) विंशति अङ्ग के (ति का डित् प्रत्यय परे रहते लोप होता है)।

विंशत्यादिभ्यः — V. ii. 56
(षष्ठीसमर्थ) सङ्ख्यावाची विंशति आदि प्रातिपदिकों से (पूरण अर्थ में विहित डट् प्रत्यय को विकल्प से तमट् आगम होता है)।

वी — II. iv. 56
(अज् धातु के स्थान में घञ् और अपवर्जित आर्धधातुक परे रहते) वी आदेश होता है।

...वीणा... — III. i. 25
देखें — सत्यापपाश० III. i. 25

...वीणा... — VI. ii. 187
देखें — स्फिगपूत० VI. ii. 187

वीणायाम् — III. iii. 65
वीणा विषय होने पर (नी पूर्वक तथा अनुपसर्ग भी क्वण् धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में विकल्प से अप् प्रत्यय होता है, पक्ष में घञ्)।

...वीप्सयोः — VIII. i. 4
देखें — नित्यवीप्सयोः VIII. i. 4

...वीप्सासु — I. iv. 89
देखें — लक्षणेत्थम्भूताख्यानभागवीप्सासु I. iv. 89

वीयतेः — VI. i. 53
(प्रजन अर्थ में वर्तमान) वी धातु के (एच् के स्थान में विकल्प से आकारादेश हो जाता है, णिच् परे रहते)।

वीर... — VI. ii. 120
देखें — वीरवीर्यौ VI. ii. 120

वीरवीर्यौ — VI. ii. 120
(बहुव्रीहि समास में सु से उत्तर) वीर तथा वीर्य शब्दों को (भी वेदविषय में आद्युदात्त होता है)।

...वीराः — II. i. 57
देखें — पूर्वापरप्रथमचरम० II. i. 57

...वीराः — III. iii. 96
देखें — वृषेष० III. iii. 96

...वीर्यौ — VI. ii. 120
देखें — वीरवीर्यौ VI. ii. 120

...वीवध — VI. iii. 59
देखें — मन्थौदन० VI. iii. 59

वुक् — IV. i. 125
(भ्रू प्रातिपदिक से अपत्य अर्थ में ढक् प्रत्यय होता है तथा भ्रू को) वुक् का आगम भी होता है।

वुक् — IV. ii. 120
(वर्णु नाम वाले देशविषयक कन्था प्रातिपदिक से) वुक् प्रत्यय होता है।

वुक् — VI. iv. 88
(भू अङ्ग को) वुक् आगम होता है, (लुङ् तथा लिट् अजादि प्रत्यय के परे रहते)।

...वुचौ — V. iii. 80
देखें — अडज्वुचौ V. iii. 80

वुञ् — III. ii. 146
(निन्द, हिंस, क्लिश, खाद, वि + नाश, परि + क्षिप्, परि + रट्, परि + वादि, वि + आ + भाष तथा असूय — इन धातुओं से तच्छीलादि कर्ता हों तो वर्तमानकाल में) वुञ् प्रत्यय होता है।

वुञ् — IV. ii. 38
(षष्ठीसमर्थ गोत्रवाची शब्दों से तथा उक्षन्, उष्ट्र, उरभ्र, राजन्, राजन्य, राजपुत्र, वत्स, मनुष्य तथा अज शब्दों से समूह अर्थ में) वुञ् प्रत्यय होता है।

वुञ् — IV. ii. 52
(षष्ठीसमर्थ राजन्यादि प्रातिपदिकों से 'विषयो देशे' अर्थ में) वुञ् प्रत्यय होता है।

वुञ्... — IV. ii. 79
देखें — वुञ्छण्कठजिल० IV. ii. 79

वुञ् — IV. ii. 120
(देश में वर्तमान धन्ववाची तथा यकार उपधावाले वृद्धसंज्ञक प्रातिपदिकों से शैषिक) वुञ् प्रत्यय होता है।

वुञ् — IV. ii. 133
(मनुष्य या मनुष्य में स्थित कोई कर्मादि अभिधेय हो तो कच्छादि प्रातिपदिकों से) वुञ् प्रत्यय होता है।

वुञ् — IV. iii. 27

(सप्तमीसमर्थ शरद् प्रातिपदिक से जात अर्थ में संज्ञा-विषय होने पर) वुञ् प्रत्यय होता है।

वुञ् — IV. iii. 45

(सप्तमीसमर्थ आश्वयुजी प्रातिपदिक से बोया हुआ अर्थ में) वुञ् प्रत्यय होता है।

आश्वयुजी = आश्विन मास की पूर्णिमा।

वुञ् — IV. iii. 49

(सप्तमीसमर्थ कालवाची ग्रीष्म और अवरसम प्रातिपदिकों से 'देयमृणे' अर्थ में) वुञ् प्रत्यय होता है।

वुञ् — IV. iii. 77

(विद्यासम्बन्धवाची एवं योनिसम्बन्धवाची पञ्चमीसमर्थ प्रातिपदिकों से आगत अर्थ में) वुञ् प्रत्यय होता है।

वुञ् — IV. iii. 99

(प्रथमासमर्थ भक्तिसमानाधिकरणवाची गोत्र आख्या वाले तथा क्षत्रिय आख्या वाले प्रातिपदिकों से बहुल करके) वुञ् प्रत्यय होता है।

वुञ् — IV. iii. 117

(तृतीयासमर्थ कुलालादि प्रातिपदिकों से संज्ञा गम्यमान होने पर कृत अर्थ में) वुञ् प्रत्यय होता है।

वुञ्—IV. iii. 125

(षष्ठीसमर्थ गोत्रवाची तथा चरणवाची प्रातिपदिकों से 'इदम्' अर्थ में) वुञ् प्रत्यय होता है।

वुञ् — IV. iii. 154

(षष्ठीसमर्थ उष्ट्र प्रातिपदिक से विकार और अवयव अर्थों में) वुञ् प्रत्यय होता है।

वुञ् — V. i. 131

(षष्ठीसमर्थ यकार उपधावाले गुरु है उपोत्तम जिसका, ऐसे प्रातिपदिक से भाव और कर्म अर्थों में) वुञ् प्रत्यय होता है।

वुञ्छण्कठजिलसेनिरढञ्ण्ययफक्फिञिञ्ञ्यकक्ठकः — IV. ii. 79

(अरीहण, कृशाश्व, ऋषि, कुमुद, काश, तृण, प्रेक्ष, अश्म, सखि, संकाश, बल, पक्ष, कर्ण, सुतङ्गम, प्रगदिन्, वराह, कुमुद आदि सत्रह गणों के प्रातिपदिकों से यथासङ्ख्य करके) वुञ्, छण्, क, ठच्, इल, स, इनि, र, ढञ्, ण्य, य, फक्, फिञ्, इञ्, ञ्य, कक्, ठक् चातुरर्थिक प्रत्यय होते हैं।

वुन् — III. i. 149

(प्र, सृ, लू धातुओं से समभिहार गम्यमान होने पर) वुन् प्रत्यय होता है।

वुन् — IV. ii. 60

(द्वितीयासमर्थ क्रमादि प्रातिपदिकों से अध्ययन तथा जानने का कर्ता अभिधेय होने पर) वुन् प्रत्यय होता है।

वुन् — IV. iii. 28

(सप्तमीसमर्थ पूर्वाह्ण, अपराह्ण, आर्द्रा, मूल, प्रदोष, अवस्कर प्रातिपदिकों से 'जात' अर्थ में) वुन् प्रत्यय होता है।

आर्द्रा = छठा नक्षत्र।

अवस्कर = विष्ठा, गुह्यदेश, गर्द।

वुन् — IV. iii. 48

(सप्तमीसमर्थ कालवाची कलापि, अश्वत्थ, यव, बुस शब्दों से) वुन् प्रत्यय होता है, ('देयमृणे' विषय में)।

कलापि = मोर, कोयल, अंजीरवृक्ष।

अश्वत्थ = पीपल का पेड़।

वुन् — IV. iii. 98

(प्रथमासमर्थ भक्तिसमानाधिकरणवाची वासुदेव तथा अर्जुन शब्दों से षष्ठ्यर्थ में) वुन् प्रत्यय होता है।

वुन् — IV. iii. 124

(षष्ठीसमर्थ द्वन्द्वसंज्ञक प्रातिपदिक से 'इदम्' अर्थ में वैर, मैथुनिक अभिधेय हों तो) वुन् प्रत्यय होता है।

मैथुनिक =

वुन् — V. ii. 62

(गोषदादि प्रातिपदिकों से मत्वर्थ में 'अध्याय' और 'अनुवाक' अभिधेय हों तो) वुन् प्रत्यय होता है।

वुन् — V. iv. 1

(सङ्ख्या आदि में है जिसके, ऐसे पाद और शत शब्द अन्तवाले प्रातिपदिकों से वीप्सा गम्यमान हो तो) वुन् प्रत्यय होता है (तथा प्रत्यय के साथ-साथ पाद और शत के अन्त का लोप भी हो जाता है)।

...वृ... — II. iv. 80
देखें — घसह्वरणश० II. iv. 80

...वृ... — III. i. 109
देखें — एतिस्तु० III. i. 109

वृ... — III. ii. 46
देखें — भृतवृ० III. ii. 46

वृ — III. iii. 48
(नि पूर्वक) वृ धातु से (धान्यविशेष को कहना हो तो कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

...वृ... — III. iii. 58
देखें — ग्रहवृद० III. iii. 58

...वृ... — VII. ii. 13
देखें — कृसृभृ० VII. ii. 13

वृ... — VII. ii. 38
देखें — वृतः VII.ii. 38

वृक... — V. iv. 41
देखें — वृकज्येष्ठाभ्याम् V. iv. 41

वृकज्येष्ठाभ्याम् — V. iv. 41
('प्रशंसाविशिष्ट' अर्थ में वर्तमान) वृक तथा ज्येष्ठ प्रातिपदिकों से (यथासंख्य करके तिल् तथा तातिल् प्रत्यय भी होते हैं, वेदविषय में)।

वृकात् — V. iii. 115
(अस्त्रों से जीविका कमाने वाले पुरुषों के समूहवाची, वृक प्रातिपदिक से (स्वार्थ में टेण्यण् प्रत्यय होता है)।

वृक्ष... — II. iv. 12
देखें — वृक्षमृगतृणधान्य० II. iv. 12

वृक्ष...— VIII. iii. 93
देखें — वृक्षासनयोः VIII. iii. 93

वृक्षमृगतृणधान्यव्यञ्जनपशुशकुन्यश्ववडवपूर्वापराधरोत्तराणाम् — II. iv. 12
वृक्ष, मृग, तृण, धान्य, व्यञ्जन, पशु, शकुनि और वडव, पूर्वापर, अधरोत्तरवाची शब्दों का (द्वन्द्व विकल्प से एकवद्भाव को प्राप्त होता है)।

वृक्षासनयोः — VIII. iii. 93
वृक्ष तथा आसन वाच्य हो तो (विष्टर शब्द में षत्व निपातन है)।

...वृक्षेभ्यः — IV. iii. 132
देखें — प्राण्योषधिवृक्षेभ्यः IV. iii. 132

...वृङः — III. ii. 155
देखें — जल्पभिक्ष० III. ii. 155

...वृच्— II. iv. 80
देखें — घसह्वरणश० II. iv. 80

...वृज्योः — IV. ii. 130
देखें — मद्रवृज्योः IV. ii. 130

वृणोतेः — III. iii. 54
(आच्छादन अर्थ में प्र पूर्वक) वृञ् धातु से (कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में विकल्प से घञ् प्रत्यय होता है, पक्ष में अप् होता है)।

...वृति... — VI. iii. 115
देखें — नहिवृति० VI. iii. 115

...वृतु... — III. ii. 136
देखें — अलंकृञ्० III. ii. 136

वृत्तम् — IV. iv. 63
(अध्ययन में) वर्तमान (कर्म समानाधिकरणवाची प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

वृत्तम् — VII. ii. 26
(अध्ययन को कहने में निष्ठा के विषय में) ण्यन्त वृति धातु का वृत्त शब्द निपातन किया जाता है।

वृत्ति... — I. iii. 38
देखें — वृत्तिसर्गतायनेषु I. iii. 38

वृत्ति... — IV. i. 42
देखें — वृत्यमत्रावपना० IV. i. 42

वृत्तिसर्गतायनेषु — I. iii. 38
वृत्ति = अनुरोध = विना रुकावट के चलना, सर्ग= उत्साह, तायन = विस्तार – इन अर्थों में (वर्तमान क्रम् धातु से आत्मनेपद होता है)।

वृत्यमत्रावपनाकृत्रिमाश्राणास्थौल्यवर्णानाच्छादनायोविकारमैथुनेच्छाकेशवेशेषु — IV. i. 42
(जानपद इत्यादि 11 प्रातिपदिकों से यथासंख्य करके) वृत्ति, अमत्रादि ग्यारह अर्थों में (स्त्रीलिङ्ग में ङीष् प्रत्यय होता है)।

...वृत्रेषु — III. ii. 87
देखें — ब्रह्मभ्रूण० III. ii. 87

वृद्ध... — IV. i. 169
देखें — वृद्धेत्कोसला० IV. i. 169

वृद्ध... — IV. iii. 141
देखें — वृद्धशरादिभ्यः IV. iii. 141

...वृद्ध... — VI. iv. 157
देखें — प्रियस्थिर० VI. iv. 157

वृद्धः — I. ii. 65
वृद्ध = गोत्रप्रत्ययान्त शब्द (युवा प्रत्ययान्त शब्द के साथ शेष रह जाता है, यदि वृद्ध-युवप्रत्ययनिमित्तक ही भेद हो तो)।

वृद्धम् — I. i. 72
(जिस समुदाय के अचों) में आदि अच् वृद्धिसंज्ञक हो, उस समुदाय की) वृद्ध संज्ञा होती है।

वृद्धशरादिभ्यः — IV. iii. 141
(भक्ष्य और आच्छादनवर्जित विकार और अवयव अर्थों में षष्ठीसमर्थ) वृद्धसंज्ञक तथा शरादि प्रातिपदिकों से (लौकिक प्रयोगविषय में नित्य ही मयट् प्रत्यय होता है)।

वृद्धस्य — V. iii. 62
वृद्ध शब्द के स्थान में (भी अजादि अर्थात् इष्ठन्, ईयसुन् प्रत्यय परे रहते ज्य आदेश होता है)।

वृद्धात् — IV. i. 148
(सौवीर गोत्र में वर्तमान) वृद्धसंज्ञक प्रातिपदिकों से (अपत्य अर्थ में बहुल करके ठक् प्रत्यय होता है, कुत्सन गम्यमान होने पर)।

वृद्धात् — IV. i. 157
(गोत्र से भिन्न जो) वृद्धसंज्ञक प्रातिपदिक, उससे (उदीच्य आचार्यों के मत में फिञ् प्रत्यय होता है)।

वृद्धात् — IV. ii. 113
वृद्धसंज्ञक प्रातिपदिक से (शैषिक छ प्रत्यय होता है)।

वृद्धात् — IV. ii. 119
(उवर्णान्त) वृद्धसंज्ञक (प्राग्देशवाची) प्रातिपदिकों से (शैषिक ठञ् प्रत्यय होता है)।

वृद्धात् — IV. ii. 140
(अक, इक अन्त वाले तथा खकार उपधावाले जो देशवाची) वृद्धसंज्ञक प्रातिपदिक, उनसे (शैषिक छ प्रत्यय होता है)।

वृद्धि... — V. i. 46
देखें — वृद्ध्यायलाभ० V. i. 46

वृद्धिः — I. i. 1
(आ, ऐ, औ की) वृद्धि संज्ञा होती है।

वृद्धिः — I. i. 72
(जिस समुदाय के अचों में आदि अच्) वृद्धिसंज्ञक = आ, ऐ, औ में से कोई हो, (उस समुदाय की वृद्ध संज्ञा होती है)।

वृद्धिः — VI. i. 85
(अवर्ण से उत्तर जो एच् तथा एच् परे रहते जो अवर्ण, इन दोनों पूर्व-पर के स्थान में) वृद्धि (एकादेश) होता है।

वृद्धिः — VII. ii. 1
(परस्मैपदपरक सिच् के परे रहते इगन्त अङ्ग को) वृद्धि होती है।

वृद्धिः — VII. iii. 89
(उकारान्त अङ्ग को लुक् हो जाने पर हलादि पित् सार्वधातुक परे रहते) वृद्धि होती है।

वृद्धिः — VII. iii. 114
(मृज् अङ्ग के इक् के स्थान में) वृद्धि होती है।

वृद्धिनिमित्तस्य — VI. iii. 38
वृद्धि का कारण है जिस तद्धित में, ऐसा तद्धित यदि रक्त तथा विकार अर्थ में विहित न हो तो तदन्त स्त्री शब्द को भी पुंवद्भाव नहीं होता।

...वृद्धी — I. i. 3
देखें — गुणवृद्धी I. i. 3

वृद्धेत्कोसलाजादात् — IV. i. 169
(क्षत्रियाभिधायी, जनपदवाची), वृद्धसंज्ञक, इकारान्त तथा कोसल और अजाद प्रातिपदिकों से (अपत्य अर्थ में ञ्यङ् प्रत्यय होता है)।

...वृद्धोक्ष... — V. iv. 77
देखें — अचतुर० V. iv. 77

वृद्धौ... — VI. iii. 27
(देवताद्वन्द्व में) वृद्धि किया गया शब्द उत्तरपद में हो, तो (अग्नि शब्द को ईकारादेश होता है)।

वृद्ध्यायलाभशुल्कोपदाः — V. i. 46
(प्रथमासमर्थ प्रातिपदिकों से सप्तम्यर्थ में यथाविहित प्रत्यय होते हैं) यदि 'वृद्धि' = ब्याज के रूप में दिया

जाने वाला द्रव्य, 'आय' = जमींदारों का भाग, 'लाभ' = मूलद्रव्य के अतिरिक्त प्राप्य द्रव्य, 'शुल्क' = राजा का भाग तथा 'उपदा' = घूस – ये ('दिया जाता है' क्रिया के कर्म हों तो)।

वृद्‌भ्यः — I. iii. 92

वृतादि धातुओं से (विकल्प से परस्मैपद होता है, स्य और सन् प्रत्ययों के परे होने पर)।

वृद्‌भ्यः — VII. ii. 59

वृतु इत्यादि (चार) धातुओं से उत्तर (सकारादि आर्धधातुक को परस्मैपद परे रहते इट् का आगम नहीं होता)।

...वृधु ... — III. ii. 136
देखें — **अलंकृञ्० III. ii. 136**

...वृन्दाः — VI. iv. 157
देखें — **प्रस्थस्फ० VI. iv. 157**

वृन्दारक... — II. i. 61
देखें — **वृन्दारकनागकुञ्जरैः II. i. 61**

वृन्दारकनागकुञ्जरैः — II. i. 61

(पूज्यमानवाची सुबन्त) वृन्दारक, नाग, कुञ्जर —इन (समानाधिकरण सुबन्त) शब्दों के साथ (विकल्प से समास को प्राप्त होता है और वह तत्पुरुष समास होता है)।

...वृन्दारकाणाम् — VI. iv. 157
देखें — **प्रियस्थिर० VI. iv. 157**

...वृभ्यः — VI. iv. 102
देखें — **श्रुशृणु० VI. iv. 102**

...वृश्चति... — VI. i. 16
देखें — **ग्रहिज्या० VI. i. 16**

वृष... — III. iii. 96
देखें — **वृषेषपच० III. iii. 96**

...वृष... — III. ii. 154
देखें — **लषपत० III. ii. 154**

...वृष... — V. iv. 145
देखें — **अग्रान्त० V. iv. 145**

...वृष... — VII. i. 51
देखें — **अश्वक्षीर० VII. i. 51**

वृषण्यति — VII. iv. 37

(दुरस्युः, द्रविणस्युः) वृषण्यति, (रिषण्यति – ये) शब्द क्यच्प्रत्ययान्त (वेदविषय में) निपातित (किये जाते हैं)।

वृषाकपि... — IV. i. 37
देखें — **वृषाकप्यग्नि० IV. i. 37**

वृषाकप्यग्निकुसितकुसीदानाम् — IV. i. 37

वृषाकपि, अग्नि, कुसित, कुसीद —इन अनुपसर्जन प्रातिपदिकों को (स्त्रीलिङ्ग में उदात्त ऐकारादेश हो जाता है तथा ङीप् प्रत्यय होता है)।

वृषादीनाम् — VI. i. 197

वृषादि शब्दों के (भी आदि को उदात्त होता है)।

...वृषि... — VI. iii. 115
देखें — **नहिवृति० VI. iii. 115**

वृषेषपचमनविदभूवीराः — III. iii. 96

(मन्त्रविषय में) वृष, इष, पच, मन, विद, भू, वी तथा रा धातुओं से (स्त्रीलिङ्ग भाव में क्तिन् प्रत्यय होता है और वह उदात्त होता है)।

...वृषोः — III. i. 120
देखें — **कृवृषोः III. i. 120**

...वृष्णि... — IV.i. 114
देखें — **ऋष्यन्धकवृष्णि० IV. i. 114**

...वृष्णिषु — VI. ii. 34
देखें — **अन्धकवृष्णिषु VI. ii. 34**

वृष्णो — VI. i. 114

'वृष्णो' पद (यजुर्वेद में पठित होने पर अकार परे रहते प्रकृतिभाव से रहता है)।

वृतः — VII. ii. 38

वृ तथा ऋकारान्त धातुओं से उत्तर (इट् को विकल्प से लिट्‌भिन्न वलादि आर्धधातुक परे रहते दीर्घ होता है)।

वेः — I. iii. 34

(शब्द कर्म वाले) वि उपसर्ग से उत्तर (कृञ् धातु से आत्मनेपद होता है)।

वेः — I. iii. 41

वि उपसर्ग से उत्तर (पादविहरण अर्थ में वर्तमान क्रम् धातु से आत्मनेपद होता है)।

वेः — V. ii. 28

वि उपसर्ग प्रातिपदिक से (स्वार्थ में शालच् तथा शङ्कटच् प्रत्यय होते हैं)।

वेः — VI. i. 65

(अपृक्तसञ्ज्ञक) वि का (लोप होता है)।

वे: — VIII. iii. 69

वि उपसर्ग से उत्तर (तथा चकार से अव उपसर्ग से उत्तर भोजन अर्थ में स्वन् धातु के सकार को मूर्धन्य आदेश होता है, अड्व्यवाय एवं अभ्यासव्यवाय में भी)।

वे: — VIII. iii. 73

वि उपसर्ग से उत्तर (स्कन्दिर् धातु के सकार को निष्ठा परे न हो तो विकल्प से मूर्धन्य आदेश होता है)।

वे: — VIII. iii. 77

वि उपसर्ग से उत्तर (स्कन्भु धातु के सकार को नित्य ही मूर्धन्य आदेश होता है)।

वेञः — II. iv. 41

वेञ् के स्थान में (विकल्प से वयि आदेश होता है; लिट् आर्धधातुक परे रहते)।

वेञः — VI.i. 39

वेञ् धातु को (लिट् परे रहते सम्प्रसारण नहीं होता है)।

वेणु... — VI. i. 149
देखें — **वेणुपरिव्राजकयोः VI. i. 149**

वेणु... — VI. i. 209
देखें — **वेण्विन्धानयोः VI. i. 209**

वेणुपरिव्राजकयोः — VI. i. 149

(मस्कर तथा मस्करिन् शब्द यथासङ्ख्य करके) बांस तथा सन्यासी अभिधेय हों तो (निपातन किये जाते हैं)।

वेण्विन्धानयोः — VI. i. 209

वेणु तथा इन्धान शब्दों के (आदि को विकल्प से उदात्त होता है)।

वेतनादिभ्यः — IV. iv. 12

(तृतीयासमर्थ) वेतनादि प्रातिपदिकों से ('जीता है'— इस अर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

...वेतसेभ्यः — IV. ii. 86
देखें — **कुमुदनडवेतसेभ्यः IV. ii. 86**

वेत्तेः — VII. i. 7

विद् अङ्ग से उत्तर (झ के स्थान में हुआ जो अत् आदेश, उसको विकल्प से रुट् का आगम होता है)।

वेद — IV. ii. 58

(द्वितीयासमर्थ प्रातिपदिक से 'अध्ययन करता है' अर्थ में यथाविहित अण् प्रत्यय होता है, इसी प्रकार द्वितीया-समर्थ प्रातिपदिक से) 'जानता है' अर्थ में (यथाविहित अण् प्रत्यय होता है)।

...वेदि ... — III. i. 138
देखें — **लिम्पविन्द० III. i. 138**

वेदिः — V. iv. 84

(द्विस्तावा तथा त्रिस्तावा शब्द का निपातन किया जाता है) यज्ञ की वेदि अभिधेय हो तो।

...वेपाम् — VII. iii. 37
देखें — **शाच्छासा० VII. iii. 37**

...वेपाम् — VIII. iv. 33
देखें — **भाभूपू० VIII. iv. 33**

...वेलासु — III. iii. 167
देखें — **कालसमयवेलासु III. iii. 167**

...वेवी... — I. i. 6
देखें — **दीधीवेवीटाम् I. i. 6**

...वेव्योः — VII. iv. 53
देखें — **दीधीवेव्योः VII. iv. 53**

वेशन्त... — IV. iv. 112
देखें — **वेशन्तहिमवद्भ्याम् IV. iv. 112**

वेशन्तहिमवद्भ्याम् — IV. iv. 112

(सप्तमीसमर्थ) वेशन्त और हिमवत् प्रातिपदिकों से (वेदविषय में 'भव' अर्थ में अण् प्रत्यय होता है)।

वेशस्... — IV. iv. 131
देखें — **वेशोयशआदेः VI. iv. 131**

वेशोयशआदेः — IV. iv. 131

वेशस् और यशस् आदि वाले (भग शब्दान्त) प्रातिपदिक से (मत्वर्थ में यल् प्रत्यय होता है; वेदविषय में)।

...वेषात् — V. i. 99
देखें — **कर्मवेषात् V. i. 99**

वेष्टि... — VII. iv. 96
देखें — **वेष्टिचेष्ट्योः VII. iv. 96**

वेष्टिचेष्ट्योः — VII. iv. 96

वेष्ट तथा चेष्ट अङ्ग के (अभ्यास को णि परे रहते आकारादेश होता है)।

...वेहद्... — II. i. 64
देखें — **पोटायुवतिस्तोक० II. i. 64**

वै... — VIII. i. 64
देखें — **वैवाव VIII. i. 64**

...वैकृत... — VI. i. 134
देखें — **प्रतियत्नवैकृत० VI. i. 134**

वैयाकरणाख्यायाम् — VI. iii. 7
जिस सञ्ज्ञा से वैयाकरण ही व्यवहार करते हैं, उसको कहने में (पर शब्द तथा चकार से आत्मन् शब्द से उत्तर चतुर्थी विभक्ति का अलुक् होता है)।

...वैयाघ्रात् — IV. ii. 12
देखें — **द्वैपवैयाघ्रात् IV. ii. 12**

वैयात्ये — VII. ii. 19
('ञिधृषा प्रागल्भ्ये' तथा 'शसुओं हिंसायाम्' धातु से निष्ठापरे रहते) अविनीतता गम्यमान होने पर (इट् आगम नहीं होता)।

...वैर... — III. i. 17
देखें — **शब्दवैरकलहा० III. i. 17**

...वैर... — III. ii. 23
देखें — **शब्दश्लोक० III. ii. 23**

वैर... — IV. iii. 124
देखें — **वैरमैथुनिकयोः IV. iii. 124**

वैरमैथुनिकयोः — IV. iii. 124
(षष्ठीसमर्थ द्वन्द्वसंज्ञक प्रातिपदिक से 'इदम्' अर्थ में) वैर, मैथुनिक अभिधेय हो (तो वुन् प्रत्यय होता है)।

वैवाव — VIII. i. 64
वै तथा वाव से युक्त (प्रथम तिङन्त को भी विकल्प से वेदविषय में अनुदात्त नहीं होता)।

...वैशम्पायनान्तेवासिभ्यः — IV. iii. 104
देखें — **कलापिवैशम्पा० IV. iii. 104**

...वैश्ययोः — III. i. 103
देखें — **स्वामिवैश्ययोः III. i. 103**

वैश्वदेवे — VI. ii. 39
वैश्वदेव शब्द उत्तरपद रहते (पूर्वपदस्थित क्षुल्लक तथा महान् शब्द को प्रकृतिस्वर होता है)।
क्षुल्लक = नीच

...वोः —VI. iv. 19
देखें — **च्छ्वोः VI. iv. 19**

...वोः — VI. iv. 77
देखें — **य्वोः VI. iv. 77**

...वोः — VI. iv. 107
देखें — **म्वोः VI. iv. 107**

...वोः — VII. i. 1
देखें — **युवोः VII. i. 1**

...वोः — VIII. ii. 65
देखें — **म्वोः VIII. ii. 65**

...वोः — VIII. ii. 76
देखें — **र्वोः VIII. ii. 76**

वौ — III. ii. 143
वि पूर्वक (कष, लस, कत्थ, स्रम्भ् —इन धातुओं से तच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमान काल में घिनुण् प्रत्यय होता है)।

वौ — III. iii. 25
विपूर्वक (क्षु तथा श्रु धातुओं से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

वौ — III. iii. 33
वि पूर्वक (स्तृञ् धातु से अशब्दविषयक विस्तार कहना हो तो कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

...वौ — VIII. ii. 108
देखें — **य्वौ VIII. ii. 108**

...वौषट्... — VIII. ii. 91
देखें — **ब्रूहिप्रेष्य० VIII. ii. 91**

व्यः — VI. i. 42
व्येञ् धातु को (भी ल्यप् परे रहते सम्प्रसारण नहीं होता है)।

व्यः — VI. i. 45
(उपदेश में एजन्त) व्येञ् धातु को (लिट् लकार के परे रहते आकारादेश नहीं होता है)।

व्यक्तवाचाम् — I. iii. 48
स्पष्टवाणी वालों के (सहोच्चारण अर्थ में वर्तमान वद् धातु से आत्मनेपद हो जाता है)।

व्यक्ति... — I. ii. 51
देखें — **व्यक्तिवचने I. ii. 51**

व्यक्तिवचने — I. ii. 51
(प्रत्यय के लुप् हो जाने पर उस प्रत्यय के अर्थ में) व्यक्ति = लिङ्ग तथा वचन = संख्या (प्रकृत्यर्थ में समान हों)।

...व्यज... — III. iii. 119
देखें — गोचरसञ्चर० III. iii. 119

...व्यञ्जन... — II. iv. 12
देखें — वृक्षमृगतृणधान्य० II. iv. 12

व्यञ्जनम् — II. i. 33

(तृतीयान्त) व्यञ्जनवाची सुबन्त (अन्नवाची समर्थ सुबन्त के साथ विकल्प से तत्पुरुष समास को प्राप्त होता है)।

व्यञ्जनैः — IV. iv. 26

(तृतीयासमर्थ) व्यञ्जनवाची प्रातिपदिकों से ('ऊपर से डाला हुआ' अर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

व्यत् — IV. i. 144

(भ्रातृ शब्द से अपत्य अर्थ में) व्यत् (तथा छ) प्रत्यय होता है।

व्यत्ययः — III. i. 85

(वेदविषय में सभी विधियाँ) व्यतिगमन या व्यतिहार = परस्पर एक दूसरे के स्थान में (बहुल करके हो जाती हैं)।

व्यथः — VII. iv. 68

व्यथ् अङ्ग के (अभ्यास को लिट् परे रहते सम्प्रसारण होता है)।

व्यध... — III. iii. 61
देखें — व्यधजपोः III. iii. 61

व्यधजपोः — III. iii. 61

(उपसर्गरहित) व्यध् तथा जप् धातुओं से (कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में अप् प्रत्यय होता है)।

...व्यधा... — III. i. 141
देखें — श्याद्व्य० III. i. 141

...व्याधि... — VI. i. 16
देखें — ग्रहिज्या० VI. i. 16

...व्यधि... — VI. iii. 115
देखें — नहिवृति० VI. iii. 115

व्यन् — IV. i. 145

(भ्रातृ शब्द से सपत्न अर्थात् शत्रु वाच्य हो तो) व्यन् प्रत्यय होता है।

...व्याभाष... — III. ii. 146
देखें — निन्दहिंस० III. ii. 146

...व्ययतीनाम् — VII. ii. 66
देखें — अत्यर्तिव्ययतीनाम् VII. ii. 66

...व्ययेषु — I. iii. 36
देखें — सम्माननोत्सर्ग० I. iii. 36

...व्यवसर्गयोः — V. iv. 2
देखें — दण्डव्यवसर्गयोः V. iv. 2

व्यवस्थायाम् — I. i. 33

(पूर्व, पर, अवर, दक्षिण, उत्तर, अपर, अधर शब्दों की जस्-सम्बन्धी कार्य में विकल्प से सर्वनाम संज्ञा होती है, यदि संज्ञा से भिन्न) व्यवस्था हो तो।

व्यवहरति — IV. iv. 72

(सप्तमीसमर्थ कठिन शब्द अन्त वाले, प्रस्तार तथा संस्थान प्रातिपदिकों से) 'व्यवहार करता है' अर्थ में (ठक् प्रत्यय होता है)।

व्यवहिताः — I. iv. 89

(वे गति और उपसर्ग-संज्ञक शब्द वेद में) व्यवधान से (भी) होते हैं।

व्यवहृ... — II. iii. 57
देखें — व्यवहृपणोः II. iii. 57

व्यवहृपणोः — II. iii. 57

(समान अर्थ वाली) वि और अव उपसर्ग पूर्वक 'हृ' धातु तथा 'पण्' धातु के (कर्मकारक में षष्ठी विभक्ति होती है)।

व्यवायिनः — VI. ii. 166

व्यवधायकवाची शब्द से उत्तर (उत्तरपद अन्तर शब्द को बहुव्रीहि समास में अन्तोदात्त होता है)।

...व्या... — VII. iii. 37
देखें — शाच्छासा० VII. iii. 37

व्याख्यातव्यनाम्नः — IV. iii. 66

(षष्ठीसमर्थ) व्याख्यान किये जाने योग्य जो प्रातिपदिक, उनसे (व्याख्यान अभिधेय होने पर यथाविहित प्रत्यय होता है तथा सप्तमीसमर्थ व्याख्यातव्यनामवाची शब्दों से 'भव' अर्थ में भी यथाविहित प्रत्यय होता है)।

...व्याख्यान... — VI.ii. 151
देखें — मन्क्तिन्० VI. ii. 151

व्याख्याने — IV. iii. 66

(षष्ठीसमर्थ व्याख्यान किये जाने योग्य जो प्रातिपदिक हैं, उनसे) व्याख्यान अभिधेय होने पर (यथाविहित प्रत्यय होता है तथा सप्तमीसमर्थ व्याख्यातव्यनामवाची शब्दों से भवार्थ में यथाविहित प्रत्यय होता है)।

व्याघ्रादिभिः — II. i. 55

(साधारणधर्मवाची शब्द के प्रयोग न होने पर उपमेय-वाची सुबन्त का समानाधिकरण) व्याघ्र आदि (सुबन्त) शब्दों के साथ (विकल्प से समास होता है और वह तत्पुरुष समास होता है)।

व्याङ्परिभ्यः — I. iii. 83

वि, आङ् एवं परि उपसर्ग से उत्तर (रम् धातु से परस्मैपद होता है)।

व्याप्नोति — V. ii. 7

(सर्व शब्द आदि में है जिनके, ऐसे द्वितीयासमर्थ पथिन्, अङ्ग, कर्म, पत्र तथा पात्र प्रातिपदिकों से) 'व्याप्त होता है' अर्थ में (ख प्रत्यय होता है)।

व्याप्यमान... — III. iv. 56

देखें — व्याप्यमानासेव्यमा० III. iv. 56

व्याश्रये — V. iv. 48

'भिन्न भिन्न पक्षों का आश्रयण' गम्यमान हो तो (षष्ठी-विभक्त्यन्त प्रातिपदिक से विकल्प से तसि प्रत्यय होता है)।

व्याहरति — IV. iii. 51

(सप्तमीसमर्थ कालवाची प्रातिपदिकों से 'मृग) शब्द करता है' अर्थ में (यथाविहित प्रत्यय होता है)।

व्याहृतार्थायाम् — V. iv. 35

'प्रकाशित वाणी' अर्थ में (वर्तमान वाच् प्रातिपदिक से स्वार्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

...व्युत्क्रमण... — VIII. i. 15

देखें — रहस्यमर्यादा० VIII. i. 15

व्युपधात् — I. ii. 26

(रलन्त एवं हलादि) धातुओं से परे (सेट् सन् और सेट् क्त्वा प्रत्यय विकल्प से कित् नहीं होते हैं)।

व्युपयोः — III. iii. 39

वि तथा उप पूर्वक (शीङ् धातु से पर्याय गम्यमान होने पर कर्तृभिन्न कारक संज्ञाविषय तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

व्युष्टादिभ्यः — V. i. 96

(सप्तमीसमर्थ) व्युष्टादि प्रातिपदिकों से ('दिया जाता है' और 'कार्य' अर्थों में अण् प्रत्यय होता है)।

...व्यृद्धि... — II. i. 7

देखें — विभक्तिसमीपसमृद्धि० II. i. 7

...व्येञाम् — VI. i. 19

देखें — स्वपिस्यमि० VI. i. 19

व्योः — VI. i. 64

वकार और यकार का (वल् परे रहते लोप हो जाता है)।

व्योः — VIII. iii. 18

(भो, भगो, तथा अवर्ण पूर्ववाले पदान्त के) वकार तथा यकार को (लघु प्रयत्नतर आदेश होता है; अश् परे रहते, शाकटायन आचार्य के मत में)।

व्रज... — III. iii. 94

देखें — व्रजयजोः III. iii. 94

...व्रज... — III. iii. 119

देखें — गोचरसञ्चर० III. iii. 119

...व्रज... — VII. ii. 3

देखें — वदव्रज० VII. ii. 3

व्रजयजोः — III. iii. 98

व्रज तथा यज् धातुओं से (स्त्रीलिङ्ग भाव में क्यप् प्रत्यय होता है और वह उदात्त होता है)।

...व्रज्योः — VII. iii. 60

देखें — अजिव्रज्योः VII. iii. 60

...व्रत — III. i. 21

देखें — मुण्डमिश्र० III. i. 21

व्रते — III. ii. 40

व्रत गम्यमान होने पर (वाक् कर्म उपपद रहते यम् धातु से खच् प्रत्यय होता है)।

व्रते — III. ii. 80

व्रत = शास्त्र से नियम गम्यमान हो तो (सुबन्त उपपद रहते धातु से णिनि प्रत्यय होता है)।

व्रते — IV. ii. 14

(सप्तमीसमर्थ स्थण्डिल प्रातिपदिक से सोनेवाला अभिधेय हो तो) व्रत गम्यमान होने पर (यथाविहित प्रत्यय होता है)।

व्रश्च... — VIII. ii. 36
देखें — **व्रश्चभ्रस्ज० VIII. ii. 36**

व्रश्चभ्रस्जसृजमृजयजराजभ्राजच्छशाम् — VIII. ii. 36

ओव्रश्चू, भ्रस्ज, सृज, मृजूष्, यज, राजृ, टुभ्राजृ —इन धातुओं को तथा छकारान्त एवं शकारान्त धातुओं को (भी झल् परे रहते एवं पदान्त में षकारादेश होता है)।

...व्रश्च्योः — VII. ii. 55
देखें — **जॄव्रश्च्योः VII. ii. 55**

व्रात... — V. iii. 113
देखें — **व्रातच्फञोः V. iii. 113**

व्रातच्फञोः — V. iii. 113

व्रात = शस्त्रोपजीवी लोगों का संघ, तद्वाची प्रातिपदिकों तथा च्फञ्-प्रत्ययान्तो से (स्वार्थ में ञ्य प्रत्यय होता है, स्त्रीलिङ्ग को छोड़कर)।

व्रातेन — V. ii. 21

तृतीयासमर्थ व्रात प्रातिपदिक से ('जीता है' अर्थ में खञ् प्रत्यय होता है)।

व्रीहि... — III. i. 148
देखें — **व्रीहिकालयोः III. i. 148**

व्रीहि... — V. ii. 2
देखें — **व्रीहिशाल्योः V. ii. 2**

व्रीहि... — VI. ii. 38
देखें — **व्रीह्यपराह्ण० VI. ii. 38**

व्रीहिशाल्योः — V. ii. 2

(षष्ठीसमर्थ धान्यविशेषवाची) व्रीहि तथा शालि प्रातिपदिकों से ('उत्पत्तिस्थान' अभिधेय हो तो ठक् प्रत्यय होता है, यदि वह उत्पत्तिस्थान क्षेत्र हो तो)।

व्रीहेः — IV. iii. 145

(षष्ठीसमर्थ) व्रीहि प्रातिपदिक से (पुरोडाशरूप विकार अभिधेय होने पर मयट् प्रत्यय होता है)।

व्रीह्यपराह्णगृष्टीष्वासजाबालभारभारतहैलिहिलरौरवप्रवृद्धेषु — VI. ii. 38

व्रीहि, अपराह्ण, गृष्टि, इष्वास, जाबाल, भार, भारत, हैलिहिल, रौरव, प्रवृद्ध शब्दों के उत्तरपद रहते (पूर्वपद महान् शब्द को प्रकृतिस्वर होता है)।

व्रीह्यादिभ्यः — V. ii. 116

ब्रीह्यादि प्रातिपदिकों से (भी 'मत्वर्थ' में इनि तथा ठन् प्रत्यय होतें है, विकल्प से)।

...व्ली... — VII. iii. 36
देखें — **अर्त्तिह्रीव्ली० VII. iii. 36**

श

श् — प्रत्याहारसूत्र X

भगवान् पाणिनि द्वारा अपने दशम प्रत्याहारसूत्र में इत्सञ्ज्ञार्थ पठित वर्ण।

श् — VI. iv. 19
देखें — **शूठ् VI. iv. 19**

श्... — VIII. iv. 39
देखें — **श्चुना VIII. iv. 39**

श्... — VIII. iv. 39
देखें — **श्चुः VIII. iv. 39**

श — प्रत्याहारसूत्र XIII

आचार्य पाणिनि द्वारा अपने तेरहवें प्रत्याहारसूत्र में पठित प्रथम वर्ण।

पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का चालीसवां वर्ण।

...श... — I. iii. 8
देखें — **लशकु I. iii. 8**

श — III. iii. 100

(कृञ् धातु से स्त्रीलिङ्ग में कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में) श प्रत्यय होता है (तथा चकार से क्यप् भी होता है)।

...श... — IV. ii. 79
देखें — **वुञ्छण्कठ० IV. ii. 79**

श... — V. ii. 100
देखें — **शनेलचः V. ii. 100**

श... — VIII. iv. 28
देखें — **शयग्लिङ्क्षु VIII. iv. 28**

शः — III. i. 77

(तुदादि धातुओं से कर्तृवाची सार्वधातुक परे रहने पर) श प्रत्यय होता है।

शः — III. i. 137

(पा, घ्रा, ध्मा, धेट् और दृश् धातुओं से) श प्रत्यय होता है।

शः — VIII. iv. 62

(झय् प्रत्याहार से उत्तर) शकार के स्थान में (अट् परे रहते विकल्प से छकार आदेश होता है)।

...शक... — VII. iv. 54
देखें — मीमाघु० VII. iv. 54

शकटात् — IV. iv. 80

(द्वितीयासमर्थ) शकट प्रातिपदिक से ('ढोता है' अर्थ में अण् प्रत्यय होता है)।

शकन् — VI. i. 61

(वेदविषय में शकृत् शब्द के स्थान में) शकन् आदेश हो जाता है, (शस् प्रकार वाले प्रत्ययों के परे रहते)।

शकलम् — VIII. ii. 59

(भित्तम् शब्द में भिदिर् धातु से उत्तर क्त के नत्व का अभाव निपातन है, यदि भित्तम् से) टुकड़ा कहा जा रहा हो तो।

शकलात् — IV. iii. 127

(षष्ठींसमर्थ गोत्रप्रत्ययान्त यञन्त) शकल शब्द से (विकल्प से अण् प्रत्यय होता है, पक्ष में वुञ् होता है)।

शकि... — III. i 99
देखें — शकिसहोः III. i 99

शकि — III. iii. 172

शक्यार्थ गम्यमान हो (तो धातु से लिङ् प्रत्यय होता है तथा चकार से कृत्यसंज्ञक प्रत्यय भी होते हैं)।

शकि — III. iv. 12

शक्नोति धातु उपपद हो (तो वेदविषय में धातु से णमुल् तथा कमुल् प्रत्यय होते हैं)।

शकिसहोः — III. i. 99

शक्लृ तथा षह मर्षणार्थक धातु से (भी यत् प्रत्यय होता है)।

...शकुनि... — II. iv. 12
देखें — वृक्षमृगतृणधान्य० II. iv. 12

...शकुनिषु — VI. i. 137
देखें — चतुष्पाच्छकुनिषु VI. i. 137

शकुनौ — VI. i. 145

(विष्किर —इस में ककार से पूर्व सुट् विकल्प से निपातन किया जाता है) पक्षी को कहा जा रहा हो तो।

...शकृतोः — III. ii. 24
देखें — स्तम्बशकृतोः III. ii. 24

शक्ति... — IV. iv. 59
देखें — शक्तियष्ट्योः IV. iv. 59

शक्तियष्ट्योः — IV. iv. 59

(प्रथमासमर्थ प्रहरणसमानाधिकरणवाची) शक्ति तथा यष्टि प्रातिपदिकों से (षष्ठ्यर्थ में ईकक् प्रत्यय होता है)।

...शक्तिषु — III. ii. 129
देखें — ताच्छील्यवयोवचन० III. ii. 129

शक्तौ — III. ii. 54

शक्ति गम्यमान होने पर (हस्ति और कपाट कर्म उपपद रहते 'हन्' धातु से टक् प्रत्यय होता है)।

शक्यार्थे — VI. i. 78

(क्षय्य और जय्य शब्द निपातन किये जाते हैं), शक्य = सकने योग्य अर्थ में।

शक्यार्थे — VII. iii. 68

(प्रयोज्य तथा नियोज्य ण्यत् प्रत्ययान्त शब्द) शक्य = सकने योग्य अर्थ में (निपातन किये जाते हैं)।

...शङ्कटचौ — V. ii. 28
देखें — शालच्छङ्कटचौ V. ii. 28

...शङ्कु... — VIII. iii. 97
देखें — अम्बाम्ब० VIII. iii. 97

शण्डिकादिभ्यः — IV. iii. 92

(प्रथमासमर्थ) शण्डिकादि प्रातिपदिकों से ('इसका अभिजन' अर्थ में ञ्य प्रत्यय होता है)।

शत... — V. ii. 119

देखें — शतसहस्रान्तात् V. ii. 119

...शतभिषजः — IV. iii. 37
देखें — वत्सशालाभिजि० IV. iii. 37

...शतम् — V. i. 58
देखें — पंक्तिविंशति० V. i. 58

शतमान... — V. i. 27
देखें — शतमानविंशतिक० V. i. 27

शतमानविंशतिकसहस्रवसनात् — V. i. 27

शतमान, विंशतिक, सहस्र तथा वसन प्रातिपदिक से ('तदर्हति'-पर्यन्त कथित अर्थों में अण् प्रत्यय होता है)।

शतसहस्रान्तात् — V. ii. 119

शतशब्द अन्तवाले तथा सहस्र शब्द अन्त वाले (निष्क प्रातिपदिक से भी 'मत्वर्थ' में ठक् प्रत्यय होता है)।

...शतस्य — V. iv. 1

देखें — **पादशतस्य V. iv. 1**

शतात् — V. i. 21

शत प्रातिपदिक से ('तदर्हति'-पर्यन्त कथित अर्थों में ठन् और यत् प्रत्यय होते हैं, यदि सौ अभिधेय न हो तो)।

...शतात् — V. i. 34

देखें — **पणपादमाष० V. i. 34**

शतादि ... — V. ii. 57

देखें — **शतादिमास० V. ii. 57**

शतादिमासार्द्धमाससंवत्सरात् — V. ii. 57

(षष्ठीसमर्थ) शतादि प्रातिपदिकों से तथा मास, अर्द्ध-मास और संवत्सर प्रातिपदिकों से ('पूरण' अर्थ में विहित डट् प्रत्यय को तमट् का आगम नित्य ही हो जाता है)।

शतुः — VI. i. 167

(नुम्रहित अन्तोदात्त) शतृप्रत्ययान्त शब्द से परे (नदी-सञ्ज्ञक प्रत्यय तथा अजादि सर्वनामस्थानभिन्न विभक्ति को उदात्त होता है)।

शतुः — VII. i. 37

('विद् ज्ञाने' धातु से उत्तर) शतृ के स्थान में (वसु आदेश होता है)।

शतुः — VII. i. 78

(अभ्यस्त अङ्ग से उत्तर) शतृ को (नुम् आगम नहीं होता है)।

शतृ... — III. ii. 124

देखें — **शतृशानचौ III. ii. 124**

शतृ — III. ii. 130

(इङ् तथा ण्यन्त धृङ् धातु से वर्तमान काल में) शतृ प्रत्यय होता है, (यदि जिसके लिये क्रिया कष्टसाध्य न हो, ऐसा कर्ता वाच्य हो तो)।

शतृशानचौ — III. ii. 124

(धातु से लट् के स्थान में) शतृ तथा शानच् आदेश होते हैं, (यदि अप्रथमान्त के साथ उस लट् का सामाना-धिकरण्य हो)।

...शद... — III. ii. 159

देखें — **दाधेट्० III. ii. 159**

...शद... — VII. iii. 78

देखें — **पाघ्राध्मा० VII. iii. 78**

शदन्त... — V. ii. 46

देखें — **शदन्तविंशतेः V. ii. 46**

शदन्तविंशतेः — V. ii. 46

(अधिक समानाधिकरणवाची) शत शब्द अन्त में है जिसके, ऐसे तथा विंशति प्रातिपदिक से (भी सप्तम्यर्थ में ड प्रत्यय होता है)।

...शदन्तायाः — V. i. 22

देखें — **अतिशदन्तायाः V. i. 22**

शदेः — I. iii. 60

(शित् सम्बन्धी) 'शदलृ शातने' धातु से (आत्मनेपद होता है)।

शदेः — VII. iii. 42

(अगति अर्थ में वर्तमान) 'शदलृ शातने' अङ्ग को (तका-रादेश होता है, णि परे रहते)।

...शध्यै... — III. iv. 9

देखें — **सेसेनसे० III. iv. 9**

...शध्यैन्... — III. iv. 9

देखें — **सेसेनसे० III. iv. 9**

शनेलचः — V. ii. 100

(लोमादि, पामादि तथा पिच्छादि —इन तीन गणपठित प्रातिपदिकों से यथासंख्य करके विकल्प से) श, न तथा इलच् प्रत्यय होते हैं, 'मत्वर्थ' में।

शप् — III. i. 68

(धातु से) शप् प्रत्यय होता है, (कर्तृवाची सार्वधातुक परे रहते)।

शप्... — VII. i. 81

देखें — **शप्श्यनोः VII. i. 81**

शपः — II. iv. 72

शप् का (लुक् होता है, अदादियों से परे)।

...शपाम् — I. iv. 34

देखें — **श्लाघह्नुङ्स्थाशपाम् I. iv. 34**

शपि — VI. iv. 25

(दंश, सञ्ज, ष्वञ्ज —इन अङ्गों की उपधा नकार का लोप होता है) शप् प्रत्यय परे रहते।

शप्श्यनोः — VII. i. 81

शप् और श्यन् का (जो शतृ प्रत्यय, उसको नित्य ही नुम् आगम होता है)।

...शफ... — IV. i. 70

देखें — **संहितशफलक्षण० IV. i. 70**

शब्द ... — III.i. 17

देखें — **शब्दवैरकलहा० III. i. 17**

शब्द... — III. ii. 23

देखें — **शब्दश्लोक० III. ii. 23**

शब्द... — IV. iv. 34

देखें — **शब्ददर्दुरम् IV. iv. 34**

...शब्दकर्म... — I. iv. 52

देखें — **गतिबुद्धिप्रत्यवसानार्थ० I. iv. 52**

शब्दकर्मणः — I. iii. 34

शब्दकर्मवाले (वि उपसर्ग) से उत्तर (कृञ् धातु से आत्मनेपद होता है)।

शब्ददर्दुरम् — IV. iv. 34

(द्वितीयासमर्थ) शब्द और दर्दुर प्रातिपदिकों से ('करता है'— अर्थ में ठक् प्रत्यय होता हैं)।

दर्दुर = मेंढक, बादल, वाद्य, पहाड़।

...शब्दप्रादुर्भाव... — II. i. 7

देखें — **विभक्तिसमीपसमृद्धि० II. i. 7**

शब्दवैरकलहाभ्रकण्वमेघेभ्यः — III. i. 17

शब्द, वैर, कलह, अभ्र, कण्व, मेघ — इन (कर्म) शब्दों से (करण अर्थ में क्यङ् प्रत्यय होता है)।

अभ्र = बादल, आकाश, अबरक, शून्य।

कण्व = एक ऋषि।

शब्दश्लोककलहगाथावैरचाटुसूत्रमन्त्रपदेषु — III. ii. 23

शब्द, श्लोक, कलह, गाथा, वैर, चाटु, सूत्र, मन्त्र, पद— इन (कर्मों) के उपपद रहते (कृञ् धातु से ट प्रत्यय नहीं होता)।

शब्दसञ्ज्ञायाम् — VIII. iii. 86

(अभि तथा निस् से स्तन धातु के सकार को) शब्द की सञ्ज्ञा गम्यमान हो तो (विकल्प से मूर्धन्य आदेश हो जाता है)।

शब्दस्य — I. i. 67

(व्याकरण शास्त्र में) शब्द के (अपने रूप का ग्रहण होता है, उसके अर्थ अथवा पर्यायवाची शब्दों का नहीं, शब्द-संज्ञा को छोड़कर)।

शब्दानुशासनम् —

(यहां से) लौकिक तथा वैदिक शब्दों का अनुशासन = उपदेश आरम्भ करते हैं।

शब्दार्थप्रकृतौ — VI. ii. 80

शब्दार्थवाली प्रकृति है जिन (णिन्नन्त) शब्दों की, उनके उत्तरपद रहते (ही उपमानवाची पूर्वपद को आद्युदात्त होता है)।

...शब्दार्थात् — III. ii. 148

देखें — **चलनशब्दार्थात् III. ii. 148**

...शब्देषु — VI. iii. 55

देखें — **घोषमिश्र० VI. iii. 55**

...शम्... — IV. iv. 143

देखें — **शिवशमरिष्टस्य IV. iv. 143**

शमाम् — VII. iii. 74

शम् इत्यादि (आठ) अङ्गों को (श्यन् परे रहते दीर्घ होता है)।

शमि — III. ii. 14

शम् उपपद रहते (धातुमात्र से संज्ञा-विषय में अच् प्रत्यय होता है)।

...शमि... — VII. iii. 95

देखें — **तुरुस्तु० VII. iii. 95**

...शमि... — VIII. iii. 96

देखें — **विकुशमि० VIII. iii. 96**

शमिता — VI. iv. 54

(यज्ञकर्म में) इडादि तृच् परे रहते 'शमिता' पद निपातन किया जाता है।

शमिति — III. ii. 141

शमादि (आठ) धातुओं से (तच्छीलादि कर्ता हों तो वर्तमानकाल में घिनुण् प्रत्यय होता है)।

...शमी... — V. iii. 88

देखें — **कुटीशमी० V. iii. 88**

...शमीवत्... — V. iii. 118

देखें — **अभिजिद्० V. iii. 118**

...शम्ब... — V. iv. 58

देखें — **द्वितीयतृतीय० V. iv. 58**

शम्याः — IV. iii. 39

(षष्ठीसमर्थ) शमी प्रातिपदिक से (विकार और अवयव अर्थों में ट्लञ् प्रत्यय होता है)।

शमी = एक वृक्ष, फली, सेम।

शय... — IV. iii. 17

देखें — **शयवासवासिषु VI. iii. 17**

शयग्लिङ्क्षु — VII. iv. 28

(ऋकारान्त अङ्ग को) श, यक् तथा (यकारादि सार्वधातुकभिन्न) लिङ् परे रहते (रिङ् आदेश होता है)।

...शयन... — VI. ii. 151

देखें — **मन्क्तिन्० VI. ii. 151**

शयवासवासिषु — VI. iii. 17

शय, वास तथा वासिन् शब्दों के उत्तरपद रहते (कालवाचियों से भिन्न शब्दों से उत्तर सप्तमी का विकल्प से अलुक् होता है)।

शयितः — IV. iv. 108

(सप्तमीसमर्थ समानोदर प्रातिपदिक से) 'शयन किया हुआ' अर्थ में (यत् प्रत्यय होता है तथा समानोदर शब्द के ओकार को उदात्त होता है)।

शयितरि — IV. ii. 14

(सप्तमीसमर्थ स्थण्डिल प्रातिपदिक से) सोने वाला अभिधेय हो (तो व्रत गम्यमान होने पर यथाविहित प्रत्यय होता है)।

स्थण्डिल = भूखण्ड, बंजर भूमि, सीमा।

...शर... — VI. iii. 15

देखें — **वर्षक्षरशरवरात् VI. iii. 15**

...शर... — VIII. iv. 5

देखें — **प्रनिरन्तः० VIII. iv. 5**

शरः — VIII. iv. 48

(अच् परे रहते) शर् प्रत्याहार को (द्वित्व नहीं होता)।

...शरत्... — VI. iii. 14

देखें — **प्रावृट्शरत्० VI. iii. 14**

शरत्प्रभृतिभ्यः — V. iv. 107

(अव्ययीभाव समास में वर्तमान) शरदादि प्रातिपदिकों से (समासान्त टच् प्रत्यय होता है)।

शरदः — IV. iii. 12

(कालवाची) शरत् शब्द से (श्राद्ध अभिधेय हो, तो शैषिक ठञ् प्रत्यय होता है)।

शरदः — IV. iii. 27

(सप्तमीसमर्थ) शरद् प्रातिपदिक से (जात अर्थ में संज्ञाविषय होने पर वुञ् प्रत्यय होता है)।

शरद्वच्छुनकदर्भात् — IV. i. 102

शरद्वत्, शुनक और दर्भ— इन प्रातिपदिकों से (यथासङ्ख्य करके भृगु, वत्स, आग्रायणगोत्रस्थ वाच्य हो तो फक् प्रत्यय होता है)।

शुनक = भृगुवंशीय ऋषि, कुत्ता।

शरद्वत्... — IV. i. 102

देखें — **शरद्वच्छुनक० IV. i. 102**

...शरादिभ्यः — IV. iii. 141

देखें — **वृद्धशरादिभ्यः IV. iii. 141**

शरादीनाम् — VI. iii. 119

शरादि शब्दों को (भी सञ्ज्ञाविषय में मतुप् परे रहते दीर्घ होता है)।

...शरावेषु — VI. ii. 29

देखें — **इगन्तकाल० VI. ii. 29**

शरि — VIII. iii. 28

(पदान्त ङकार तथा णकार को यथासङ्ख्य करके विकल्प से कुक् तथा टुक् आगम होते हैं;) शर् प्रत्याहार परे रहते)।

शरि — VIII. iii. 36

(विसर्जनीय को विकल्प से विसर्जनीय आदेश होता है) शर् परे रहते।

...शरीर... — III. iii. 41

देखें — **निवासचिति० III. iii. 41**

शरीरसुखम् — III. iii. 116

(जिस कर्म के संस्पर्श से कर्ता को) शरीर का सुख उत्पन्न हो, (ऐसे कर्म के उपपद रहते भी धातु से ल्युट् प्रत्यय होता है)।

शरीरावयवात् — IV. iii. 55

(सप्तमीसमर्थ) शरीर के अवयववाची प्रातिपदिकों से (भी 'भव' अर्थ में यत् प्रत्यय होता है)।

शरीरावयवात् — V. i. 6

(चतुर्थीसमर्थ) शरीर के अवयववाची प्रातिपदिकों से (हित अर्थ में यत् प्रत्यय होता है)।

शर्करादिभ्यः — V. iii. 107

शर्करादि प्रातिपदिकों से (अण् प्रत्यय होता है, इवार्थ में)।

...शर्कराभ्याम् — V. ii. 104

देखें — **सिकताशर्कराभ्याम् V. ii. 104**

शर्करायाः — IV. ii. 82

शर्करा शब्द से (उत्पन्न चातुरर्थिक प्रत्यय का विकल्प से लुप् होता है)।

शर्परे — VIII. iii. 35

शर्परक (खर् के परे रहते विसर्जनीय को विसर्जनीय आदेश होता है)।

शर्पूर्वाः — VII. iv. 61

शर् प्रत्याहार का कोई वर्ण पूर्व में है जिस (खय् प्रत्याहार) के, ऐसे (अभ्यास का खय् शेष रहता है)।

...शर्व... — IV. i. 48

देखें — **इन्द्रवरुणभव० IV. i. 48**

...शर्व्यवाये — VIII. iii. 58

देखें — **नुम्विसर्जनीय० VIII. iii. 58**

शलः — III. i. 45

शलन्त (जो इगुपध और अनिट् धातु उस) से (च्लि के स्थान पर क्स आदेश होता है, लुङ् परे रहते)।

...शलाका... — II. i. 10

देखें — **अक्षशलाकासंख्याः II. i. 10**

...शलातुर... — IV. iii. 94

देखें — **तूदीशलातुर० IV. iii. 94**

शलालुनः — IV. iv. 54

(प्रथमासमर्थ) शलालु प्रातिपदिक से ('इसका बेचना' विषय में विकल्प से ष्ठन् प्रत्यय होता है)।

....शश्वतः — III. ii. 116

देखें — **हशश्वतः III. ii. 116**

शषसर् — प्रत्याहार सूत्र XIII

श, ष, स वर्णों को पढ़कर भगवान् पाणिनि ने रेफ इत् किया है प्रत्याहार बनाने के लिये। इससे ५ प्रत्याहार बनते हैं – खर्, चर्, झर्, यर् और शर्।

...शस् — IV. i. 2

देखें — **स्वौजसमौट्० IV. i. 2**

शस् — V. iv. 42

(बहुत तथा थोड़ा अर्थ वाले कारकाभिधायी प्रातिपदिकों से विकल्प से) शस् प्रत्यय होता है।

...शस... — III. ii. 182

देखें — **दाम्नी० III. ii. 182**

शस... — VI. iv. 126

देखें — **शसदद० VI. iv. 126**

शसः — VI. i. 99

('प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' सूत्र से किये हुये पूर्वसवर्णदीर्घ से उत्तर) शस् के अवयव सकार को (नकार आदेश होता है, पुँल्लिङ्ग में)।

शसः — VII. i. 21

(युष्मद्, अस्मद् अङ्ग से उत्तर) शस् के स्थान में (नकारादेश होता है)।

शसददवादिगुणानाम् — VI. iv. 126

शस, दद, वकार आदिवाले एवं गुण-ऐसा उच्चारण करके गुणादेश स्वरूप जो (अकार), उसके स्थान में (एत्त्व तथा अभ्यासलोप नहीं होता; कित्, ङित् लिट् एवं थल् परे रहते)।

शसि — VI. i. 161

(चतुर् शब्द को अन्तोदात्त होता है) शस् के परे रहते।

...शसी — VII. ii. 19

देखें — धृषिशसी VII. ii. 19

...शसोः — VI. i. 90

देखें — अम्शसोः VI. i. 90

...शसोः — VI. iv. 82

देखें — अम्शसोः VI. iv. 82

...शसोः — VII. i. 20

देखें — जश्शसोः VII. i. 20

शस्प्रभृतिषु — VI. i. 61

(वेदविषय में पाद, दन्त, नासिका, मास, हृदय, निशा, असृज्, यूष, दोष, यकृत्, शकृत्, उदक, आस्य —इन शब्दों के स्थान में यथासंख्य करके पद्, दत्, नस्, मास्, हृत्, निश्, असन्, यूषन्, दोषन्, यकन्, शकन्, उदन्, आसन् —ये आदेश हो जाते हैं) शस् प्रकार वाले प्रत्ययों के परे रहते)।

...शंभ्याम् — V. ii. 138

देखें — कंशंभ्याम् V. ii. 138

...शंस... — VI. i. 208

देखें — ईडवन्द० VI. i. 208

शंस्तृ — VII. ii. 34

शंस्तृ शब्द (वेदविषय में) इडभावयुक्त निपातित है।

...शा... — II. iv. 78

देखें — घ्राधेट्शाच्छासः II. iv. 78

शा — VI. iv. 35

(शास् अङ्ग के स्थान में हि परे रहते) शा आदेश होता है।

शा... — VII. iii. 37

देखें — शाच्छासा० VII. iii. 37

शा... — VII. iv. 41

देखें — शाच्छोः VII. iv. 41

शाकटायनस्य — III. iv. 111

(आकारान्त धातुओं से उत्तर लङ् के स्थान में जो झि आदेश, उसको जुस् आदेश होता है) शाकटायन के मत में (ही)।

शाकटायनस्य — VIII. iii. 18

(भो, भगो, अघो तथा अवर्ण पूर्ववाले पदान्त के वकार, यकार को लघु प्रयत्नतर आदेश होता है;) शाकटायन आचार्य के मत में।

शाकटायनस्य — VIII. iv. 49

(तीन मिले हुये संयुक्त वर्णों को) शाकटायन आचार्य के मत में (द्वित्व नहीं होता)।

...शाकम् — VI. ii. 128

देखें — पललसूप० VI. ii. 128

शाकल्यस्य — I. i. 16

शाकल्याचार्य के अनुसार (अवैदिक 'इति' शब्द के परे 'सम्बुद्धि' संज्ञा के निमित्तभूत ओकार की प्रगृह्य संज्ञा होती है)।

शाकल्यस्य — VI. i. 123

(असवर्ण अच् परे रहते इक् को) शाकल्य आचार्य के मत में (प्रकृतिभाव हो जाता है तथा उस इक् के स्थान में ह्रस्व हो जाता है)।

शाकल्यस्य — VIII. iii. 19

(अवर्ण पूर्ववाले पदान्त यकार, वकार का) शाकल्य आचार्य के मत में (लोप होता है)।

शाकल्यस्य — VIII. iv. 50

शाकल्य आचार्य के मत में (सर्वत्र अर्थात् त्रिप्रभृति अथवा अत्रिप्रभृति सर्वत्र द्वित्व नहीं होता)।

शाखादिभ्यः — V. iii. 103

शाखादि प्रातिपदिकों से (इवार्थ में यत् प्रत्यय होता है)।

शाच्छासाह्वाव्यावेपाम् — VII. iii. 37

शो, छो, षो, ह्वेञ्, व्येञ्, वेञ्, पा —इन अङ्गों को (णि परे रहते युक् आगम होता है)।

शाच्छोः — VII. iv. 41

शो तथा छो अङ्ग को (विकल्प करके इकारादेश होता है, तकारादि कित् प्रत्यय परे रहते)।

...शाणयोः — VII. iii. 17

देखें — असंज्ञाशाणयोः VII. iii. 17

शाणाद् — V. i. 35

(अध्यर्द्ध पूर्व वाले तथा द्विगुसञ्ज्ञक) शाण शब्दान्त प्रातिपदिक से ('तदर्हति'-पर्यन्त कथित अर्थों में विकल्प से यत् प्रत्यय होता है)।

शात् — VIII. iv. 43

शकार से उत्तर (तवर्ग को श्चुत्व नहीं होता)।

...शादात् — IV. ii. 87
देखें — **नडशादात् IV. ii. 87**

शानच् — III. i. 83

(हलन्त से उत्तर श्ना के स्थान में 'हि' परे रहते) शानच् आदेश होता है।

...शानचौ — III. ii. 124
देखें — **शतृशानचौ III. ii. 124**

शानन् — III. ii. 128

(पूङ् तथा यज् धातुओं से वर्तमानकाल में) शानन् प्रत्यय होता है।

...शान्त... — VII. ii. 27
देखें — **दान्तशान्त० VII. ii. 27**

...शान्भ्यः — III. i. 6
देखें — **मान्बधदान्शान्भ्यः III. i. 6**

...शाम् — VIII. ii. 36
देखें — **व्रश्चभ्रस्ज० VIII. ii. 36**

...शाम्यति — VIII. iv. 17
देखें — **गदनद० VIII. iv. 17**

शायच् — III.i. 84

(श्ना के स्थान में, वेदविषय में) शायच् आदेश होता है (तथा शानच् भी होता है)।

शारदे — VI. ii. 9

(अनार्तववाची) शारद शब्द उत्तरपद परे रहते (तत्पुरुष समास में पूर्वपद को प्रकृतिस्वर हो जाता है)।

अनार्तव = असामयिक।

...शारिका... — VIII. iv. 4
देखें — **पुरगामिश्रका० VIII. iv. 4**

...शारिकुक्ष... — V. iv. 120
देखें — **सुप्रातसुश्व० V. iv. 120**

शार्ङ्गरवादि... — IV. i. 73
देखें — **शार्ङ्गरवाद्यञः IV. i. 73**

शार्ङ्गरवाद्यञः — IV. i. 73

(अनुपसर्जन जातिवाची) शार्ङ्गरवादि तथा अञन्त प्रातिपदिकों से (स्त्रीलिङ्ग में ङीन् प्रत्यय होता है)।

शालच्... — V. ii. 28
देखें — **शालच्छङ्कटचौ V. ii. 28**

शालच्छङ्कटचौ — V. ii. 28

(वि उपसर्ग प्रातिपदिक से) शालच् तथा शङ्कटच् प्रत्यय होते हैं।

...शालम् — VI. ii. 102
देखें — **कुसूलकूप० VI. ii. 102**

...शाला... — II. iv. 25
देखें — **सेनासुरा० II. iv. 25**

...शाला... — VI. ii. 120
देखें — **कूलतीर० VI. ii. 120**

शालायाम् — VI. ii. 86

शाला शब्द उत्तरपद रहते (छात्रि आदि शब्दों को आद्युदात्त होता है)।

शालायाम् — VI. ii. 123

(नपुंसकलिङ्ग वाले) शालाशब्दान्त (तत्पुरुष समास) में (उत्तरपद को आद्युदात्त होता है)।

...शालावत्... — V. iii. 118
देखें — **अभिजिद्० V. iii. 118**

शालीन... — V. ii. 20
देखें — **शालीनकौपीने V. ii. 20**

शालीनकौपीने — V. ii. 20

शालीन तथा कौपीन शब्द (यथासङ्ख्य करके 'अधृष्ट' तथा 'अकार्य' वाच्य हों तो) निपातन किये जाते हैं।

...शालीनीकरणयोः — I. iii. 70
देखें — **सम्माननशालीनीकरणयोः I. iii. 70**

...शाल्योः — V. ii. 2
देखें — **व्रीहिशाल्योः V. ii. 2**

शाश्वतिकः — II. iv. 8

स्वाभाविक (विरोध है जिनका, तद्वाची सुबन्तों का द्वन्द्व एकवद् होता है)।

शासः — VI. iv. 34

शास् अङ्ग की (उपधा को इकारादेश हो जाता है; अङ् तथा हलादि कित्, ङित् प्रत्यय परे रहते)।

शासि... — VIII. iii. 60

देखें — **शासिवसिघसीनाम् VIII. iii. 60**

शासिवसिघसीनाम् — VIII. iii. 60

(इण् तथा कवर्ग से उत्तर) शासु, वस् तथा घस् के (सकार को भी मूर्धन्य आदेश होता है)।

...शासु... — III. i. 109

देखें — **एतिस्तु॰ III. i. 109**

...शासु... — VII. iv. 2

देखें — **अग्लोपिशास्वृदिताम् VII. iv. 2**

...शास्ति... — III.i. 36

देखें — **सर्तिशास्त्य॰ III. i. 36**

शास्तृ — VII. ii. 34

शास्तृ शब्द (वेदविषय में) इडभावयुक्त निपातित है।

शि — I. i. 41

जस् और शस् के स्थान में 'जश्शसोः शिः' से विहित शि आदेश (की सर्वनाम स्थान संज्ञा होती है)।

शि — VIII. iii. 31

(पदान्त नकार को) शकार परे रहते (विकल्प से तुक् आगम होता है)।

शिः — VII. i. 20

(नपुंसकलिङ्ग वाले अङ्ग से उत्तर जश् और शस् के स्थान में) शि आदेश होता है।

...शिखात् — V. ii. 113

देखें — **दन्तशिखात् V. ii. 113**

शिखायाः — IV. ii. 88

शिखा शब्द से (चातुरर्थिक वलच् प्रत्यय होता है)।

...शिखावत् — V. iii. 118

देखें — **अभिजिद्॰ V. iii. 118**

...शित् — I. i. 54

देखें — **अनेकाल्शित् I. i. 54**

...शित् — III.iv. 113

देखें — **तिङ्शित् III. iv. 113**

शितः — I. iii. 60

शित् सम्बन्धी ('शद्लृ शातने' धातु) से (आत्मनेपद होता है)।

शिति — VII. iii. 753

(ष्ठिवु, क्लमु तथा चमु अङ्गों को) शित् प्रत्यय परे रहते (दीर्घ होता है)।

शितेः — VI.ii. 138

शिति शब्द से उत्तर (नित्य ही जो अबह्वच् उत्तरपद, उसको बहुव्रीहि समास में प्रकृतिस्वर होता है, भसत् शब्द को छोड़कर)।

...शिरसी — VIII. iii. 47

देखें — **अधःशिरसी VIII. iii. 47**

शिलायाः — V. iii. 102

शिला शब्द से (इवार्थ में ढ प्रत्यय होता है)।

...शिलालिभ्याम् — IV. iii. 110

देखें — **पाराशर्यशिलालिभ्याम् IV. iii. 110**

शिल्पम् — IV. iv. 55

(प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से 'इसका) शिल्प' अर्थ में (ढक् प्रत्यय होता है)।

शिल्पिनि — III. i. 145

शिल्पी कर्ता अभिधेय होने पर (धातु से 'ष्वुन्' प्रत्यय होता है)।

शिल्पिनि — III. ii. 55

शिल्पी कर्ता अभिधेय होने पर (पाणिघ और ताडघ शब्द का निपातन किया जाता है)।

शिल्पिनि — VI. ii. 62

शिल्पिवाची शब्द उत्तरपद रहते (ग्राम पूर्वपद को विकल्प से प्रकृतिस्वर होता है)।

शिल्पिनि — VI. ii. 68

शिल्पिवाची शब्द उत्तरपद रहते (पाप शब्द को भी विकल्प से आद्युदात्त होता है)।

शिल्पिनि — VI. ii. 76

शिल्पिवाची समास में (भी अणन्त उत्तरपद रहते पूर्वपद को आद्युदात्त होता है, यदि वह अण् कृञ् से परे न हो तो)।

शिव... — IV. iv. 143
देखें — शिवशमरिष्टस्य IV. iv. 143

शिवशमरिष्टस्य — IV. iv. 143

(षष्ठीसमर्थ) शिव, शम् और अरिष्ट प्रातिपदिकों से ('करनेवाला' अर्थ में स्वार्थ में तातिल् प्रत्यय होता है)।

शिवादिभ्यः — IV. i. 112

शिवादि प्रातिपदिकों से ('तस्यापत्यम्' अर्थ में अण् प्रत्यय होता है)।

...शिशिरौ — II. iv. 28
देखें — हेमन्तशिशिरौ II. iv. 28

शिशुक्रन्द ... — IV. iii. 88
देखें — शिशुक्रन्दयमसभ० IV. iii. 88

शिशुक्रन्दयमसभद्वन्द्वेन्द्रजननादिभ्यः — IV. iii. 88

शिशुक्रन्द, यमसभ, द्वन्द्ववाची तथा इन्द्रजननादिगणपठित शब्दों से ('अधिकृत्य कृते ग्रन्थे' अर्थ में छ प्रत्यय होता है)।

...शिंशपा... — VII. iii. 1
देखें — देविकाशिंशपा० VII. iii. 1

शी — VII. i. 13

(अकारान्त सर्वनाम अङ्ग से उत्तर जस् के स्थान में) शी आदेश होता है।

शी... — VII. i. 79
देखें — शीनद्योः VII. i. 79

शीङ्... — I. ii. 19
देखें — शीङ्स्विदिमिदिक्ष्विदिधृषः I. ii. 19

...शीङ्... — I. iv. 46
देखें — अधिशीङ्स्थासाम् I. iv. 46

...शीङ्... — III. iii. 99
देखें — समजनिषद० III. iii. 99

...शीङ्... — III. iv. 72
देखें — गत्यर्थाकर्मक० III. iv. 72

शीङः ... — VII. i. 6

शीङ् अङ्ग से उत्तर (झकार के स्थान में हुआ जो अत् आदेश, उसको रुट् का आगम होता है)।

शीङः ... — VII. iv. 21

शीङ् अङ्ग को (सार्वधातुक परे रहते गुण होता है)।

शीङ्स्विदिमिदिक्ष्विदिधृषः — I. ii. 19

शीङ्, ञिष्विदा, ञिमिदा, ञिक्ष्विदा, ञिधृषा — इन धातुओं से परे (सेट् निष्ठा प्रत्यय कित् नहीं होता है)।

शीत... — V. ii. 72
देखें — शीतोष्णाभ्याम् V. ii. 72

शीतोष्णाभ्याम् — V. ii. 72

(द्वितीयासमर्थ) शीत तथा उष्ण प्रातिपदिकों से ('करने वाला' अभिधेय हो तो कन् प्रत्यय होता है)।

शीनद्योः — VII. i. 80

(अवर्णान्त अङ्ग से उत्तर) शी तथा नदी परे रहते (शतृ प्रत्यय को विकल्प से नुम् आगम होता है)।

...शीय... — VII. iii. 78
देखें — पिबजिघ्र० VII. iii. 78

शीर्ष... — V. i. 64
देखें — शीर्षच्छेदात् V. i. 64

शीर्षच्छेदात् — V. i. 64

(द्वितीयासमर्थ) शीर्षच्छेद प्रातिपदिक से 'नित्य ही समर्थ है' अर्थ में यत् प्रत्यय भी होता है, यथाविहित ठक् भी)।

शीर्षन् — VI. i. 59

(वेदविषय में) शीर्षन् शब्द का निपातन किया जाता है।

...शीर्षयोः — III. ii. 48
देखें — कुमारशीर्षयोः III. ii. 48

...शील... — V. ii. 132
देखें — धर्मशील० V. ii. 132

शीलम् — IV. iv. 61

(प्रथमासमर्थ) शील (समानाधिकरणवाची) प्रातिपदिक से (षष्ठ्यर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

शुक्राद् — IV. ii. 25

प्रथमासमर्थ शुक्र शब्द से (षष्ठ्यर्थ में घन् प्रत्यय होता है, 'सास्य देवता' अर्थ में)।

...शुङ्ग... — IV. i. 117
देखें — विकर्णशुङ्ग० IV. i. 117

...शुच... — III. ii. 150
देखें — जुचङ्क्रम्य० III. ii. 150

शुचि... — VII. iii. 30
देखें — शुचीश्वर० VII. iii. 30

...शुचिषु — VI. ii. 161
देखें — तृनन्न० VI. ii. 161

शुचीश्वरक्षेत्रज्ञकुशलनिपुणानाम् — VII. iii. 30

(नञ् से उत्तर) शुचि, ईश्वर, क्षेत्रज्ञ, कुशल, निपुण —इन शब्दों के (अचों में आदि अच् को वृद्धि होती है, तथा पूर्वपद को विकल्प से होती है; ञित्, णित्, कित् तद्धित परे रहते)।

...शुण्डाभ्यः — V. iii. 88
देखें — कुटीशमी० V. iii. 88

शुण्डिकादिभ्यः — VI. iii. 76

(पञ्चमीसमर्थ) शुण्डिकादि प्रातिपदिकों से ('आया हुआ' अर्थ में अण् प्रत्यय होता है)।

...शुद्ध... — V. iv. 145
देखें — अग्रान्त० V. iv. 145

शुनः — V. iv. 96

(अति शब्द से उत्तर) श्वन् शब्दान्त (तत्पुरुष) से (समासान्त टच् प्रत्यय होता है)।

...शुनक... — IV. i. 102
देखें — शरद्वच्छुनक० IV. i. 102

...शुनासीर... — IV. ii. 31
देखें — द्यावापृथिवीशुनासीर० IV. ii. 31

...शुभमोः — V. ii. 140
देखें — अहंशुभमोः V. ii. 140

...शुभ्र... — V. iv. 145
देखें — अग्रान्त० V. iv. 145

शुभ्रादिभ्यः — IV. i. 123

शुभ्रादि प्रातिपदिकों से (भी अपत्य अर्थ में ढक् प्रत्यय होता है)।

शुल्क... — V. i. 46
देखें — वृद्ध्यायलाभ० V. i. 46

शुषः — VIII. ii. 51

'शुष् शोषणे' धातु से उत्तर (निष्ठा के तकार को ककारादेश होता है)।

शुषि... — III. iv. 44
देखें — शुषिपूरोः III. iv. 44

शुषिपूरोः — III. iv. 44

(कर्तृवाची ऊर्ध्व शब्द उपपद हो तो) शुषि शोषणे (तथा पूरी आप्यायने) धातु से (णमुल् प्रत्यय होता है)।

...शुष्क... — II. i. 40
देखें — सिद्धशुष्कपक्वबन्धैः II. i. 40

शुष्क... — III. iv. 35
देखें — शुष्कचूर्णरूक्षेषु III. iv. 35

शुष्क... — VI. i. 200
देखें — शुष्कधृष्टौ VI. i. 200

...शुष्क... — VI. ii. 32
देखें — सिद्धशुष्क० VI. ii. 32

शुष्कचूर्णरूक्षेषु — III. iv. 35

शुष्क, चूर्ण तथा रूक्ष कर्म उपपद रहते (पिष् धातु से णमुल् प्रत्यय होता है)।

शुष्कधृष्टौ — VI. i. 100

शुष्क तथा धृष्ट शब्दों को (आद्युदात्त होता है)।

शूठ् — VI. iv. 19

(च्छ् और व् के स्थान में यथासङ्ख्य करके) श् और ऊठ् आदेश होते हैं, (अनुनासिकादि प्रत्यय परे रहते तथा क्वि एवं झलादि कित्, ङित् प्रत्ययों के परे रहते)।

शूद्राणाम् — II. iv. 10

(अबहिष्कृत) शूद्रवाचकों का (द्वन्द्व एकवद् होता है)।

...शूर्प... — VI. ii. 123
देखें — कंसमन्थ० VI. ii. 123

शूर्पात् — V. i. 26

शूर्प प्रातिपदिक से ('तदर्हति'-पर्यन्त कथित अर्थों में विकल्प से अञ् प्रत्यय होता है)।

शूल... — IV. ii. 17
देखें — शूलोखात् IV. ii. 17

शूलात् — V. iv. 65

('पकाना' विषय हो तो) शूल प्रातिपदिक से (कृञ् के योग में डाच् प्रत्यय होता है)।

शूलोखात् — IV. ii. 16

(सप्तमीसमर्थ) शूल तथा उख प्रातिपदिकों से ('संस्कृतं भक्षाः' अर्थ में यत् प्रत्यय होता है)।

शूल = नोकदार हथियार शिव का त्रिशूल।

उख = पतीली, देगची।

शृ — III. i. 74

शृ आदेश होता है,(श्रु धातु के स्थान में और श्नु प्रत्यय भी, कर्तृवाची सार्वधातुक परे रहने पर)।

शॄ... — III. ii. 173
देखें — शॄवन्द्योः III. ii. 173

शॄ... — VII. iv. 12
देखें — शॄदॄप्राम् VII. iv. 12

शृङ्खलम् — V. ii. 79

प्रथमासमर्थ शृङ्खल प्रातिपदिक से (षष्ठ्यर्थ में कन् प्रत्यय होता है, यदि वह प्रथमासमर्थ बन्धन बन रहा हो, तथा जो षष्ठी से निर्दिष्ट हो वह करभ = ऊंट का छोटा बच्चा हो तो)।

शृङ्गम् — VI. ii. 115

(अवस्था गम्यमान होने पर तथा सञ्ज्ञा और उपमा विषय में बहुव्रीहि समास में उत्तरपद शृङ्ग शब्द को (आद्यु-दात्त होता है)।

...शृङ्गात् — IV. i. 55
देखें — नासिकोदरौष्ठ० IV. i. 55

...शृङ्गिण... — V. ii. 114
देखें — ज्योत्स्नातमिस्रा० V. ii. 114

...शृणु... — VI. iv. 102
देखें — श्रुशृणु० VI. iv. 102

...शृणोति... — VII. iv. 81
देखें — सुवतिशृणोति० VII. iv. 81

शृतम् — VI. i. 27

(पाक अभिधेय होने पर) शृतम् शब्द का निपातन किया जाता है।

शॄदॄप्राम् — VII. iv. 12

शॄ, दॄ तथा पॄ अङ्गों को (लिट् परे रहते विकल्प से ह्रस्व होता है)।

...शृभ्यः — III. ii. 154
देखें — लषपत० III. ii. 154

शे — I. i. 13

('सुपां सुलुक्'०6-1-39 से सुपों के स्थान में विहित) शे आदेश (की प्रगृह्य सञ्ज्ञा होती है)।

शे — VI. iii. 54

(ऋचा-सम्बन्धी पाद शब्द को) श परे रहते (पद आदेश होता है)।

...शे... — VII. i. 39
देखें — सुलुक्० VII. i. 39

शे — VII. i. 59

श प्रत्यय परे रहते (मुचादि धातुओं को नुम् आगम होता है)।

शेः — VI. i. 68

शि का (बहुल करके वेदविषय में लोप होता है)।

...शेकु... — VIII. iii. 97
देखें — अम्बाम्ब० VIII. iii. 97

शेतेः — III. ii. 15

शीङ् धातु से (अधिकरण सुबन्त उपपद रहते अच् प्रत्यय होता है)।

शेतेः — III. iii. 39

(वि तथा उप पूर्वक) शीङ् धातु से (पर्याय गम्यमान होने पर कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

शेवल... — V. iii. 84
देखें — शेवलसुपरि० V. iii. 84

शेवलसुपरिविशालवरुणार्यमादीनाम् — V. iii. 84

(मनुष्यनामवाची) शेवल, सुपरि, विशाल, वरुण तथा अर्यमा शब्द आदि में है जिनके, ऐसे शब्दों के (तीसरे अच् के बाद की प्रकृति का लोप हो जाता है, ठ तथा अजादि प्रत्ययों के परे रहते)।

शेषः — I. iv. 71

(नदीसञ्ज्ञा से) अवशिष्ट (ह्रस्व इकारान्त, उकारान्त शब्द घिसंज्ञक होते हैं, सखि शब्द को छोड़कर)।

शेषः — II. ii. 23

उपर्युक्त से अन्य शेष है; शेष की (बहुव्रीहि संज्ञा होती है; यह अधिकार है)।

शेषः — III. iv. 114

तिङ्, शित् से शेष बचे, (धातु से विहित जो प्रत्यय, उनकी आर्धधातुक संज्ञा होती है)।

शेषः — VII. iv. 60

(अभ्यास का आदि हल्) शेष रहता है।

शेषस्य — VI. iii. 43

(नदीसञ्ज्ञक) पूर्वसूत्र से शेष शब्दों को (विकल्प करके ह्रस्व होता है; घ, रूप, कल्प, चेलट्, ब्रुव, गोत्र, मत तथा हत शब्दों के परे रहते)।

शेषात् — I. iii. 78

(जिन धातुओं से जिस विशेषण द्वारा आत्मनेपद का विधान किया; उनसे) अवशिष्ट धातुओं से (कर्तृवाच्य में परस्मैपद होता है)।

शेषात् — V. iv. 154

जिस बहुव्रीहि से समासान्त प्रत्यय का विधान नहीं किया है; वह शेष, उससे (विकल्प करके समासान्त कप् प्रत्यय होता है)।

शेषे — I. iv. 107

(मध्यम, उत्तम पुरुष जिन विषयों में कहे गये हैं, उनसे) अन्य विषय में (प्रथम पुरुष होता है)।

शेषे — II. iii. 50

शेष = स्वस्वामिभावादि सम्बन्धों में (षष्ठी विभक्ति होती है)।

कर्मादियों से तथा प्रातिपदिकार्थ से भिन्न स्वस्वामिभावादि सम्बन्ध शेष है।

शेषे — III. iii. 13

(धातु से) क्रियार्थ क्रिया उपपद रहने पर या न होने पर (भी भविष्यत्कालार्थक लृट् प्रत्यय होता है)।

शेषे — III. iii. 151

(यदि का प्रयोग न हो और) यच्च, यत्र से भिन्न शब्द उपपद हो (तो चित्रीकरण गम्यमान होने पर धातु से लृट् प्रत्यय होता है)।

शेषे — IV. ii. 91

('तस्यापत्यम्' से चातुरर्थिक-पर्यन्त जो अर्थ कहे जा चुके हैं) उनसे शेष अर्थ में (उनमें आगे के कहे हुए प्रत्यय हुआ करेंगे)।

शेषे — VII. ii. 90

शेष विभक्ति के परे रहने पर (युष्मद्, अस्मद् अङ्ग का लोप होता है)।

शेषे — VIII. i. 41

(आहो शब्द से युक्त तिङन्त को पूजा-विषय से) शेष विषयों में (विकल्प करके अनुदात्त नहीं होता)।

शेषे — VIII. i. 50

(अविद्यमानपूर्व आहो उताहो शब्दों से युक्त तिङन्त को) अनन्तर से शेष विषय में (विकल्प करके अनुदात्त नहीं होता)।

शेषे — VIII. iv. 18

(उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर, जो उपदेश में ककार तथा खकार आदि वाला नहीं हैं एवं षकारान्त भी नहीं है, ऐसे) शेष धातु के परे रहते (नि के नकार को विकल्प से णकारादेश होता है)।

शोक... — VI. iii. 50

देखें — **शोकष्यञ्रोगेषु VI. iii. 50**

...शोकयोः — III. ii. 5

देखें — **तुन्दशोकयोः III. ii. 5**

शोकष्यञ्रोगेषु — VI. iii. 50

शोक, ष्यञ् तथा रोग के परे रहते (हृदय शब्द को हृत् आदेश विकल्प करके होता है)।

शोणात् — IV. i. 43

(अनुपसर्जन) शोण प्रातिपदिक से (प्राचीन आचार्यों के मत में स्त्रीलिङ्ग में ङीष् प्रत्यय होता है)।

शौ — VI. iv. 12

(इन्प्रत्ययान्त, हन्, पूषन्, अर्यमन् —इन अङ्गों की उपधा को) शि विभक्ति के परे रहते (ही दीर्घ होता है)।

...शौचिवृक्षि... — IV. i. 81

देखें — **दैवयज्ञिशौचिवृक्षि० IV. i. 81**

शौण्डैः — II. i. 39

(सप्तम्यन्त सुबन्त) शौण्ड इत्यादि (समर्थ सुबन्तों) के साथ (विकल्प से समास को प्राप्त होता है और वह तत्पुरुष होता है)।

शौनकादिभ्यः — IV. iii. 106

(तृतीयासमर्थ) शौनकादि प्रातिपदिकों से (प्रोक्तविषय में छन्द अभिधेय होने पर णिनि प्रत्यय होता है)।

श्चुः — VIII. iv. 39

(शकार और चवर्ग के योग में सकार एवं तवर्ग के स्थान में) शकार तथा चवर्ग आदेश होते हैं।

श्चुना — VIII. iv. 39

शकार और चवर्ग के योग में (सकार और तवर्ग के स्थान में शकार और चवर्ग होते हैं)।

श्न... — VI. iv. 111

देखें — श्नसोः VI. iv. 111

श्नः — III. i. 83

श्ना के स्थान में (हलन्त से उत्तर शानच् आदेश होता है', 'हि' परे रहते)।

श्नम् — III. i. 87

(रुधादि धातुओं से) श्नम् प्रत्यय होता है, (कर्तृवाची सार्वधातुक परे रहने पर)।

श्नसोः — VI. iv. 111

श्नम् प्रत्यय तथा अस् धातु के (अकार का लोप होता है; कित्, ङित् सार्वधातुक परे रहते)।

श्ना — III. i. 81

(क्री आदि धातुओं से कर्तृवाची सार्वधातुक परे रहने पर) श्ना प्रत्यय होता है।

श्ना... — VI. iv. 112

देखें — श्नाभ्यस्तयोः VI. iv. 112

श्नात् — VI. iv. 23

श्न से उत्तर (नकार का लोप हो जाता है)।

श्नाभ्यस्तयोः — VI. iv. 112

श्ना तथा अभ्यस्तसञ्ज्ञक के (आकार का लोप होता है; कित्, ङित् सार्वधातुक परे रहते)।

श्नु... — VI. iv. 77

देखें — श्नुधातुभ्रुवाम् VI. iv. 77

श्नुः — III. i. 73

(स्वादिगण की धातुओं से कर्तृवाची सार्वधातुक परे रहते) श्नु प्रत्यय होता है।

श्नुः — III. i. 82

(स्तम्भु, स्तुम्भु, स्कम्भु, स्कुम्भु और स्कुञ् धातुओं से कर्तृवाची सार्वधातुक परे रहने पर) श्नु प्रत्यय होता है (तथा श्ना प्रत्यय भी होता है)।

श्नुधातुभ्रुवाम् — VI. iv. 77

श्नु प्रत्ययान्त अङ्ग तथा (इवर्णान्त, उवर्णान्त) धातु एवं भ्रू शब्द को (इयङ्, उवङ् आदेश होते हैं; अच् परे रहते)।

...श्नुवोः — VI. iv. 87

देखें — हुश्नुवोः VI. iv. 87

श्यः — VI. i. 124

(तरल पदार्थ के काठिन्य तथा स्पर्श अर्थ में वर्तमान) श्यैङ् धातु को (सम्प्रसारण हो जाता है, निष्ठा के परे रहते)।

श्यः — VIII. ii. 47

श्यैङ् धातु से उत्तर (निष्ठा के तकार को नकारादेश होता है, स्पर्श अर्थ को छोड़कर)।

श्यन् — III. i. 69

(दिवादिगण की धातुओं से) श्यन् प्रत्यय होता है, (कर्तृवाची सार्वधातुक परे रहते)।

श्यन् — III. i. 90

(कुष और रञ्ज धातुओं से कर्मवद्भाव होने पर) श्यन् प्रत्यय (तथा परस्मैपद भी) होता है, (प्राचीन आचार्यों के मत में)।

श्यनि — VII. iii. 71

(ओकारान्त अङ्ग का) श्यन् परे रहते (लोप होता है)।

श्यनि — VII. iii. 74

(शम् इत्यादि आठ अङ्गों को) श्यन् परे रहते (दीर्घ होता है)।

...श्यनोः — VII. i. 81

देखें — शप्श्यनोः VII. i. 81

श्या... — III. i. 141

देखें — श्याद्व्यध० III. i. 141

श्याद्व्यधास्रुसंस्र्वतीणवसावहलिहश्लिषश्वसः — III. i. 141

श्यैङ्, आत् = आकारान्त, व्यध, आङ् और संपूर्वक स्रु, अतिपूर्वक इण्, अवपूर्वक षो, अवपूर्वक हृ, लिह, श्लिष्, श्वस् —इन धातुओं से (भी ण प्रत्यय होता है)।

श्याव... — V. iv. 144

देखें — श्यावारोकाभ्याम् V. iv. 144

श्यावारोकाभ्याम् — V. iv. 144

श्याव तथा अरोक शब्दों से उत्तर (दन्त शब्द को विकल्प से दतृ आदेश होता है, बहुव्रीहि समास में)।

श्याव ≐ कपिश, गहरे भूरे रंग का।

अरोक = कान्तिहीन, मलिन, धुंधला।

श्येन... — VI. iii. 70
देखें — श्येनतिलस्य VI. iii. 70

श्येनतिलस्य — VI. iii. 70

श्येन तथा तिल शब्द को (पात शब्द के उत्तरपद रहते तथा ञ प्रत्यय के परे रहते मुम् आगम होता है)।

...श्योः — VI. iv. 136
देखें — ङिश्योः VI. iv. 136

श्र... — VI.ii. 25
देखें — श्रज्यावम० VI. ii. 25

श्रः — V. iii. 60

(प्रशस्य शब्द के स्थान में अजादि अर्थात् इष्ठन्, ईयसुन् प्रत्यय के परे रहते) श्र आदेश होता है।

श्रज्यावमकन्यापवत्सु — VI. ii. 25

श्र, ज्य, अवम, कन् तथा पापवान् शब्द के उत्तरपद रहते (कर्मधारय समास में भाववाची पूर्वपद को प्रकृतिस्वर होता है)।

...श्रद्धा... — V. ii. 101
देखें — प्रज्ञाश्रद्धा० V. ii. 101

...श्रद्धाभ्यः — III. ii. 158
देखें — स्पृहिगृहि० III. ii. 158

...श्रन्थः — III. iii. 107
देखें — ण्यासश्रन्थः III. iii. 107

श्रमणादिभिः — II. i. 69

(कुमार शब्द समानाधिकरण) श्रमण आदि (समर्थ सुबन्त) शब्दों के साथ (विकल्प से समास को प्राप्त होता है और वह समास तत्पुरुषसंज्ञक होता है)।

श्रयति... — III. iii. 49
देखें — श्रयतियौति० III. iii. 49

श्रयतियौतिपूद्रुवः — III. iii. 49

(उत् पूर्वक) श्रि, यु, पू तथा द्रु धातुओं से (कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

श्रवण... – IV. ii. 5
देखें — श्रवणाश्वत्थाभ्याम् IV. ii. 5

...श्रवण... — IV. ii. 23
देखें — फाल्गुनीश्रवणा० IV. ii. 23

श्रवणाश्वत्थाभ्याम् — IV. ii. 5

(तृतीयासमर्थ नक्षत्रवाची) श्रवण तथा अश्वत्थ शब्दों से ('युक्तः कालः' अर्थ में विहित प्रत्यय का संज्ञाविषय में सर्वत्र लुप् होता है)।

श्रविष्ठा... — IV. iii. 34
देखें — श्रविष्ठाफल्गुन्यनु० IV. iii. 34

श्रविष्ठाफल्गुन्यनुराधास्वातितिष्यपुनर्वसुहस्तविशाखाषाढाबहुलात् — IV. iii. 34

श्रविष्ठा, फल्गुनी, अनुराधा, स्वाति, तिष्य, पुनर्वसु, हस्त, विशाखा, अषाढा तथा बहुल प्रातिपदिकों से (जातार्थ में उत्पन्न प्रत्यय का लुक् होता है)।

...श्राणा... — IV. i. 42
देखें — वृत्यमत्रावपना० IV. i. 42

श्राणा... — IV. iv. 67
देखें — श्राणामांसौदनात् IV. iv. 67

श्राणामांसौदनात् — IV. iv. 67

(प्रथमासमर्थ) श्राणा तथा मांसौदन प्रातिपदिकों से ('इसको नियत रूप से दिया जाता है' अर्थ में टिठन् प्रत्यय होता है)।

श्राताः — VI. i. 35

(वेदविषय में) श्राताः शब्द का निपातन किया जाता है।

श्राद्धम् — V. ii. 85

(भुक्त क्रिया के समानाधिकरण वाले) प्रथमासमर्थ श्राद्ध प्रातिपदिक से ('इसके द्वारा' अर्थ में इनि और ठन् प्रत्यय होते हैं)।

श्राद्धे — IV. iii. 12

(कालवाची शरत् शब्द से) श्राद्ध अभिधेय हो तो (शैषिक ठञ् प्रत्यय होता है)।

...श्रि... — III. i. 48
देखें — णिश्रिद्रुस्रुभ्यः III. i. 48

श्रि... — III. iii. 24
देखें — श्रिणीभुवः III. iii. 24

श्रि... — VII. ii. 11

देखें — श्र्युकः VII. ii. 11

...श्रि... — VII. ii. 49

देखें — इवन्तर्ध० VII. ii. 49

श्रिणीभुवः — III. iii. 24

(उपसर्गरहित) श्रि, णी तथा भू धातुओं से (कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

श्रित... — II. i. 23

देखें — श्रितातीतपतितगता० II. i. 23

श्रितम् — VI. i. 35

(वेदविषय में) श्रितम् शब्द का निपातन किया जाता है।

श्रितातीतपतितगतात्यस्तप्राप्तापन्नैः — II. i. 23

(द्वितीयान्त सुबन्त) श्रित, अतीत, पतित, गत, अत्यस्त, प्राप्त, आपन्न —इन (समर्थ सुबन्तों) के साथ (विकल्प से समास को प्राप्त होता है और वह समास तत्पुरुषसंज्ञक होता है)।

श्री... — VII. i. 56

देखें — श्रीग्रामण्योः VII. i. 56

श्रीग्रामण्योः — VII. i. 56

श्री तथा ग्रामणी अङ्ग के (आम् को वेदविषय में नुट् का आगम होता है)।

...श्रु... — I. iii. 57

देखें — ज्ञाश्रुस्मृदृशाम् I. iii. 57

श्रु... — VI. iv. 102

देखें — श्रुश्रृणु० VI. iv. 102

...श्रुतयोः — VI. ii. 148

देखें — दत्तश्रुतयोः VI. ii. 148

श्रुवः — I. iii. 59

(प्रति, आङ् पूर्वक सन्नन्त) श्रु धातु से (आत्मनेपद नहीं होता है)।

श्रुवः — I. iv. 40

(प्रति एवं आङ् उपसर्ग से उत्तर) श्रु धातु के (प्रयोग में पूर्व का जो कर्ता, वह कारक सम्प्रदानसंज्ञक होता है)।

श्रुवः — III. i. 74

श्रु धातु से उत्तर (श्नु प्रत्यय होता है और 'श्रु' को 'शृ-आदेश भी, कर्तृवाची सार्वधातुक परे रहते)।

...श्रुवः — III. ii. 108

देखें — सदवस० III. ii. 108

...श्रुवः — III. iii. 25

देखें — क्षुश्रुवः III. iii. 25

...श्रुवः — VII. ii. 13

देखें — कृसृभृ० VII. ii. 13

...श्रुमदणः — V. iii. 118

देखें — अभिजिद्० V. iii. 118

श्रुश्रृणुपृकृवृभ्यः — VI. iv. 102

श्रु, श्रृणु, पृ, कृ तथा वृ से उत्तर (वेदविषय में हि को धि आदेश होता है)।

शृवन्द्योः — III. ii. 173

शृ तथा वदि धातुओं से (तच्छीलादि कर्ता हों तो वर्तमान काल में आरु प्रत्यय होता है)।

श्रेण्यादयः — II. i. 58

श्रेणि आदि (सुबन्त) शब्द (कृत आदि समानाधिकरण सुबन्त शब्दों के साथ विकल्प से समास को प्राप्त होते हैं और वह समास तत्पुरुषसंज्ञक होता है)।

...श्रेयसः — V. iv. 80

देखें — वसीयःश्रेयसः V. iv. 80

...श्रेयसाम् — VII. iii. 1

देखें — देविकाशिंशपा० VII. iii. 1

...श्रोत्रिय... — II. i. 64

देखें — पोटायुवतिस्तोक० II. i. 64

श्रोत्रियन् — V. ii. 84

('वेद को पढ़ता है' अर्थ में) श्रोत्रियन् शब्द का निपातन किया जाता है।

...श्रौषड्... — VIII. ii. 91

देखें — ब्रूहिप्रेष्य० VIII. ii. 91

श्र्युकः — VII. ii. 11

श्रि तथा उगन्त धातुओं को (कित् प्रत्यय परे रहते इट् आगम नहीं होता)।

...श्लक्ष्ण... — III. i. 21

देखें — मुण्डमिश्र० III. i. 21

...श्लक्ष्णैः — II. i. 30

देखें — पूर्वसदृशसमो० II. i. 30

श्लाघ... — I. iv. 34

देखें — श्लाघह्नुङ्स्थाशपाम् I. iv. 34

श्लाघह्नुङ्स्थाशपाम् — I. iv. 34

श्लाघ, ह्नुङ्, स्था तथा शप् धातुओं के (प्रयोग में जो जनाये जाने की इच्छा वाला है, उस कारक की सम्प्रदान संज्ञा होती है)।

श्लाघा... — V. i. 133

देखें — श्लाघात्याकार० V. i. 133

श्लाघात्याकारतदवेतेषु — V. i. 133

(षष्ठीसमर्थ गोत्रवाची तथा चरणवाची प्रातिपदिकों से) 'श्लाघा' = प्रशंसा करना, 'अत्याकार' = अपमान करना तथा 'तदवेत' = उससे युक्त —इन विषयों में (भाव और कर्म अर्थों में वुञ् प्रत्यय होता है)।

...श्लिष... — III. i. 141

देखें — श्याद्व्य० III. i. 141

...श्लिष... — III. iv. 72

देखें — गत्यर्थाकर्मक० III. iv. 72

श्लिषः — III. i. 46

श्लिष् धातु से उत्तर (च्लि के स्थान में क्स आदेश होता है; आलिङ्गन अर्थ में लुङ् परे रहने पर)।

...श्लु... — I. i. 70

देखें — लुक्श्लुलुपः I. i. 70

श्लुः — II. iv. 75

श्लु आदेश होता है,(शप् के स्थान में जुहोत्यादि धातुओं से उत्तर)।

श्लुवत् — III. i. 39

(भी, ह्री, भृ, हु —इन धातुओं से अमन्त्रविषयक लिट् परे रहते विकल्प से आम् प्रत्यय होता है तथा इनको) श्लुवत् कार्य अर्थात् श्लु के परे होने पर जो कार्य होने चाहियें, वे भी हो जाते हैं।

...श्लोक... — III. i. 25

देखें — सत्यापपाश० III. i. 25

...श्लोक... — III. ii. 23

देखें — शब्दश्लोक० III. ii. 23

श्लौ — VI. i. 10

श्लु के परे रहते (धातु के अनभ्यास अवयव प्रथम एकाच् तथा अजादि के द्वितीय एकाच् को द्वित्व होता है)।

श्लौ — VII. iv. 75

(निजिर् इत्यादि तीन धातुओं के अभ्यास को) श्लु होने पर (गुण होता है)।

श्व... — IV. ii. 95

देखें — श्वास्यलंकारेषु IV. ii. 95

श्व... — VI. iv. 133

देखें — श्वयुवमघोनाम् VI. iv. 133

श्वगणात् — IV. iv. 11

(तृतीयासमर्थ) श्वगण प्रातिपदिक से (ठञ् तथा ष्ठन् प्रत्यय होते हैं)।

...श्वठ... — VI. i. 210

देखें — त्यागराग० VI. i. 210

...श्वन्... — VI. i. 176

देखें — गोश्वन्० VI. i. 176

श्वयतेः — VII. iv. 18

टुओश्वि अङ्ग को (अङ् परे रहते अकारादेश होता है)।

श्वयुवमघोनाम् — VI. iv. 133

भसञ्ज्ञक श्वन्, युवन्, मघवन् अङ्गों को (तद्धितभिन्न प्रत्यय परे रहते सम्प्रसारण होता है)।

श्वशुरः — I. ii. 71

श्वशुर शब्द (श्वश्रू शब्द के साथ विकल्प से शेष रह जाता है, श्वश्रू शब्द हट जाता है)।

...श्वशुरात् — IV. i. 137

देखें — राजश्वशुरात् IV. i. 137

श्वश्रा — I. ii. 71

श्वश्रू शब्द के साथ (श्वशुर शब्द विकल्प से शेष रह जाता है, श्वश्रू शब्द हट जाता है)।

...श्वसः – III. i. 141
देखें – श्याद्व्यध० III. i. 141

...श्वसः – IV. ii. 104
देखें – ऐषमोह्यः० IV. ii. 104

श्वसः – IV. iii. 15
(कालविशेषवाची) श्वस् प्रातिपदिक से (विकल्प से ठञ् प्रत्यय होता है तथा उस प्रत्यय को तुट् का आगम भी होता है)।

...श्वस... – VII. ii. 5
देखें – ह्म्यन्तक्षण० VII. ii. 5

श्वसः – V. iv. 80
श्वस् शब्द से उत्तर (वसीयस् तथा श्रेयस्-शब्दान्त प्रातिपदिकों से समासान्त अच् प्रत्यय होता है)।

श्वादेः – VII. iii. 8
श्वन् आदि वाले अङ्ग को (इञ् प्रत्यय परे रहते जो कुछ कहा है, वह नहीं होता)।

श्वास्यलङ्कारेषु – IV. ii. 95
(कुल, कुक्षि तथा ग्रीवा शब्दों से यथासङ्ख्य करके) श्वन्, असि तथा अलङ्कार अभिधेय होने पर (जातादि अर्थों में ढकञ् प्रत्यय होता है)।

...शिव... – VII. ii. 5
देखें – ह्म्यन्तक्षण० VII. ii. 5

शिव... – VII. ii. 14
देखें – श्वीदितः VII. ii. 14

...शिवभ्यः – III. i. 58
देखें – जॄस्तम्भु० III. i. 58

श्वीदितः – VII.ii. 14
टुओश्वि तथा ईकार इत्सञ्ज्ञक धातुओं को (निष्ठा परे रहते इट् आगम नहीं होता)।

श्वेः – VI. i. 130
(लिट् तथा यङ् के परे रहते) टुओश्वि धातु को (विकल्प से सम्प्रसारण हो जाता है)।

श्वेतवह... – III. ii. 71
देखें – श्वेतवहोक्थशस् III. ii. 71

श्वेतवहोक्थशस्पुरोडाशः – III. ii. 71
(वैदिक प्रयोगविषय में) श्वेतवह, उक्थशस्, पुरोडाश् शब्द ण्विन्प्रत्ययान्त निपातन किये जाते हैं।

श्वेतवाः – VIII. ii. 67
श्वेतवाः शब्द दीर्घ किया हुआ सम्बुद्धि में निपातित है।

ष

ष् – प्रत्याहारसूत्र IX
भगवान पाणिनि द्वारा अपने नवम प्रत्याहारसूत्र में इत्सञ्ज्ञार्थ पठित वर्ण।

ष्... – VIII. iv. 40
देखें – ष्टुना VIII. iv. 40

ष्... – VIII. iv. 40
देखें – ष्टुः VIII. iv. 40

ष – प्रत्याहारसूत्र XIII
आचार्य पाणिनि द्वारा अपने तेरहवें प्रत्याहार सूत्र में पठित द्वितीय वर्ण।

पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का इकतालीसवां वर्ण।

...ष... – V. iv. 106
देखें – चुदषहान्तात् V. iv. 106

ष – V. iv. 115
(द्वि तथा त्रि शब्दों से उत्तर जो मूर्धन् शब्द, तदन्त प्रातिपदिक से समासान्त) ष प्रत्यय होता है, (बहुव्रीहि समास में)।

ष... – VIII. ii. 41
देखें – षढोः VIII. ii. 41

षः – I. iii. 6
(उपदेश में प्रत्यय के आदि में वर्तमान) षकार (इत्संज्ञक होता है)।

षः – VI. i. 62
(धातु के आदि में) षकार के स्थान में (उपदेश अवस्था में सकार आदेश होता है)।

षः — VIII. ii. 36

(ओव्रश्चू, भ्रस्ज, सृज, मृजूष्, यज, राजृ, टुभाजृ —इन धातुओं को तथा छकारान्त एवं शकारान्त धातुओं को भी झल् परे रहते एवं पदान्त में) षकारादेश होता है।

षः — VIII. iii. 39

(इण् से उत्तर विसर्जनीय को) षकारादेश होता है; (अपदादि कवर्ग, पवर्ग से परे रहते)।

षच् — V. iv. 113

(स्वाङ्गवाची जो सक्थि तथा अक्षि शब्द, तदन्त से समासान्त) षच् प्रत्यय होता है, (बहुव्रीहि समास में)।

षट् — I. i. 23

(षकारान्त और नकारान्त संख्यावाची शब्दों की) षट् संज्ञा होती है)।

षट्... — IV. i. 10
देखें — **षट्स्वस्रादिभ्यः IV. i. 10**

षट्... — V. ii. 51
देखें — **षट्कति० V. ii. 51**

षट् — VI. i. 6

(जक्ष् तथा जक्षादिक) छः धातुओं की (अभ्यस्त संज्ञा होती है)।

षट्... — VI. i. 173
देखें — **षट्त्रिचतुर्भ्यः VI. i. 173**

षट् — VI. ii. 135

(अप्राणिवाची षष्ठ्यन्त शब्द से उत्तर) पूर्वोक्त छः काण्डादि उत्तरपद शब्दों को (भी आद्युदात्त होता है)।

षट्... — VII. i. 55
देखें — **षट्चतुर्भ्यः VII. i. 55**

षट्कतिकतिपयचतुराम् — V. ii. 51

(षष्ठीसमर्थ) षट्, कति, कतिपय तथा चतुर् प्रातिपदिकों से ('पूरण' अर्थ में विहित डट् प्रत्यय के परे रहते थुक् आगम होता है)।

षट्चतुर्भ्यः — VII. i. 55

षट्सञ्ज्ञक तथा चतुर् शब्द से उत्तर (भी आम् को नुट् का आगम होता है)।

षट्त्रिचतुर्भ्यः — VI. i. 173

षट्सञ्ज्ञक शब्दों से तथा त्रि, चतुर् शब्दों से उत्तर (हलादि विभक्ति उदात्त होती है)।

षट्स्वस्रादिभ्यः — IV. i. 10

षट्संज्ञक प्रातिपदिकों से तथा स्वस्रादि प्रातिपदिकों से (स्त्रीलिङ्ग में विहित प्रत्यय नहीं होता)।

षड्भ्यः — VII. i. 22

षट्सञ्ज्ञक से उत्तर (जश्, शस् का लुक् होता है)।

षढोः — VIII. ii. 41

षकार तथा ढकार के स्थान में (क आदेश होता है, सकार परे रहते)।

षणि — VIII. iii. 61

(अभ्यास के इण् से उत्तर स्तु तथा ण्यन्त धातुओं के आदेश सकार को ही) षत्वभूत सन् परे रहते (मूर्धन्य आदेश होता है)।

षण्मासात् — V. i. 82

षण्मास प्रातिपदिक से (अवस्था अभिधेय हो तो 'हो चुका' अर्थ में ण्यत् और यप् प्रत्यय होते हैं तथा औत्सर्गिक ठञ् प्रत्यय भी)।

षत्व... — VI. i. 83
देखें — **षत्वतुकोः VI. i. 83**

षत्वतुकोः — VI. i. 83

षत्व और तुक् विधि करने में (एकादेश असिद्ध होता है)।

षपूर्व... — VI. iv. 135
देखें — **षपूर्वहन्० VI. iv. 135**

षपूर्वस्य — VI. iv. 9

(वेदविषय में नकारान्त अङ्ग के उपधाभूत) षकार है पूर्व में जिससे, ऐसे (अच् को सम्बुद्धिभिन्न सर्वनामस्थान के परे रहते विकल्प से दीर्घ होता है)।

षपूर्वहन्धृतराज्ञाम् — VI. iv. 135

षकार पूर्व में है जिसके, ऐसा जो (अन्) तदन्त तथा हन् एवं धृतराजन् भसञ्ज्ञक अङ्ग के (अन् के अकार का लोप होता है, अण् परे रहते)।

...षष्टि ... — V.i. 58
देखें — **पंक्तिविंशति० V. i. 58**

षष्टिकाः — V. i. 89
(तृतीयासमर्थ षष्टिरात्र प्रातिपदिक से) षष्टिक शब्द का निपातन किया जाता है, ('पकाया जाता है' अर्थ में)।

...षष्टिकात् — V. ii. 3
देखें — **यवयवक० V. ii. 3**

षष्टिरात्रेण — V. i. 89
तृतीयासमर्थ षष्टिरात्र प्रातिपदिक से ('पकाया जाता है' अर्थ में षष्टिक शब्द का निपातन किया जाता है)।

षष्ट्यादेः — V. ii. 58
(षष्ठीसमर्थ सङ्ख्या आदि में न हो जिनके, ऐसे सङ्ख्यावाची) षष्टि आदि प्रातिपदिकों से (भी 'पूरण' अर्थ में विहित डट् प्रत्यय को नित्य ही तमट् का आगम होता है)।

षष्ठ... — V. iii. 50
देखें — **षष्ठाष्टमाभ्याम् V. iii. 50**

षष्ठाष्टमाभ्याम् — V. iii. 50
'भाग' अर्थ में वर्तमान) षष्ठ और अष्टम शब्दों से (ञ तथा अन् प्रत्यय होते हैं; वेदविषय को छोड़कर)।

षष्ठी — I. i. 48
(इस शास्त्र में) षष्ठी विभक्ति, (यदि अन्य किसी से सम्बद्ध नहीं हो तो स्थान के साथ सम्बन्धवाली होती है)।

षष्ठी — II. ii. 8
षष्ठ्यन्त सुबन्त (समर्थ के साथ समास को प्राप्त होता है और वह तत्पुरुष समास होता है)।

षष्ठी — II. iii. 26
(हेतु शब्द के प्रयोग और हेतु द्योत्य होने पर) षष्ठी विभक्ति होती है ।

षष्ठी — II. iii. 30
(अतसुच् के अर्थ वाले प्रत्यय के योग में) षष्ठी विभक्ति होती है।

षष्ठी — II. iii. 34
(दूरार्थक और अन्तिकार्थक शब्दों के योग में विकल्प से) षष्ठी विभक्ति होती है, (पक्ष में पञ्चमी भी)।

षष्ठी — II. iii. 38
(जिसकी क्रिया से क्रियान्तर लक्षित हो, उसमें अनादर गम्यमान होने पर) षष्ठी विभक्ति होती है (तथा चकार से सप्तमी भी)।

षष्ठी — II. iii. 50
(कर्मादियों से और प्रातिपदिकार्थ से भिन्न स्वस्वामि-भाव-सम्बन्ध आदि की विवक्षा होने पर) षष्ठी विभक्ति होती है।

षष्ठी — VI. ii. 60
षष्ठ्यन्त (पूर्वपद राजन् शब्द को प्रत्येनस् शब्द उत्तरपद रहते विकल्प से प्रकृतिस्वर होता है)।

षष्ठी... — VIII. i. 20
देखें — **षष्ठीचतुर्थी० VIII. i. 20**

षष्ठीचतुर्थीद्वितीयास्थयोः — VIII. i. 20
(पद से उत्तर) षष्ठ्यन्त, चतुर्थ्यन्त तथा द्वितीयान्त (अपदादि में वर्तमान युष्मद् तथा अस्मद् शब्दों के स्थान में क्रमशः वाम् तथा नौ आदेश होते हैं एवं उन आदेशों को अनुदात्त भी होता है)।

षष्ठीयुक्तः — I. iv. 9
षष्ठ्यन्त शब्द से युक्त (पति शब्द छन्द-विषय में विकल्प से घिसञ्ज्ञक होता है)।

षष्ठ्या — II. i. 16
षष्ठ्यन्त (सुबन्त) के साथ (पार और मध्य शब्द का (विकल्प से अव्ययीभाव समास होता है तथा समास के सन्नियोग से इन शब्दों को एकारान्तत्व भी निपातन से हो जाता है)।

षष्ठ्याः — V. iii. 54
('भूतपूर्व' अर्थ में) षष्ठीविभक्त्यन्त प्रातिपदिक से (रूप्य और चरट् प्रत्यय होते हैं)।

षष्ठ्याः — V. iv. 48
(भिन्न भिन्न पक्षों का आश्रयण गम्यमान हो तो) षष्ठी-विभक्त्यन्त प्रातिपदिक से (विकल्प से तसि प्रत्यय होता है)।

षष्ठ्याः — VI. iii. 20
(आक्रोश गम्यमान होने पर उत्तरपद परे रहते) षष्ठी विभक्ति का (अलुक् होता है)।

षष्ठ्याः — VIII. iii. 53

(पति, पुत्र, पृष्ठ, पार, पद, पयस्, पोष —इन शब्दों के परे रहते वेदविषय में) षष्ठी विभक्ति के (विसर्जनीय को सकारादेश होता है)।

षाकन् — III. ii. 155

(जल्प, भिक्ष, कुट्ट, लुण्ठ, वृङ् —इन धातुओं से तच्छीलादि कर्ता हों तो वर्तमान काल में) षाकन् प्रत्यय होता है।

षात् — VIII. iv. 34

(पदान्त) षकार से उत्तर (नकार को णकार आदेश नहीं होता)।

षान्तस्य — VIII. iv. 35

षकारान्त (नश् धातु) के (नकार को णकारादेश नहीं होता)।

...षाभ्याम् — VIII. iv. 1

देखें — रषाभ्याम् VIII. iv. 1

षि — VIII. iv. 42

(तवर्ग को) षकार परे रहते (ष्टुत्व नहीं होता)।

षिद्... — III. iii. 104

देखें — षिद्भिदादिभ्यः III. iii. 104

षिद्... — IV. i. 40

देखें — षिद्गौरादिभ्यः IV. i. 40

षिद्गौरादिभ्यः — IV. i. 40

षित् प्रातिपदिकों से तथा गौरादि प्रातिपदिकों से (भी स्त्रीलिङ्ग में ङीष् प्रत्यय होता है)।

षिद्भिदादिभ्यः — III. iii. 104

षकार इत्संज्ञक है जिनका, ऐसी धातुओं से तथा भिदादिगणपठित धातुओं से (स्त्रीलिङ्ग में अङ् प्रत्यय होता है , कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में)।

...षीध्वम्... — VIIi. iii. 78

देखें — षीध्वंलुङ्लिटाम् VIII. iii. 78

षीध्वंलुङ्लिटाम् — VIII. iii. 78

(इण् प्रत्याहार अन्तवाले अङ्ग से उत्तर) षीध्वम्, लुङ् तथा लिट् के (धकार को मूर्धन्य आदेश होता है)।

षुक् — IV. i. 161

(मनु शब्द से जाति को कहना हो तो अञ् तथा यत् प्रत्यय होते हैं तथा मनु शब्द को) षुक् आगम भी हो जाता है।

षुक् — IV. iii. 135

(षष्ठीसमर्थ त्रपु और जतु प्रातिपदिकों से अण् प्रत्यय होता है तथा इन दोनों को) षुक् आगम भी होता है।

षुक् — VII. iii. 40

('ञिभी भये' अङ्ग को हेतुभय अर्थ में णि परे रहते) षुक् आगम होता है।

...षुञ्... — III. iii. 99

देखें — समजनिषद० III. iii. 99

...षुभ्यः — VIII. iv. 26

देखें — धातुस्थोरुषुभ्यः VIII. iv. 26

ष्कन् — V. i. 74

(द्वितीयासमर्थ पथिन् प्रातिपदिक से 'जाता है' अर्थ में) ष्कन् प्रत्यय होता है।

ष्टरच् — V. iii. 90

('छोटा' अर्थ गम्यमान हो तो कासू तथा गोणी प्रातिपदिकों से) ष्टरच् प्रत्यय होता है।

ष्टुः — VIII. iv. 40

(षकार और टवर्ग के योग में सकार और तवर्ग के स्थान में) षकार और टवर्ग आदेश होते हैं।

ष्ट्रन् — III. ii. 181

(धा धातु से कर्मकारक में) ष्ट्रन् प्रत्यय होता है,(वर्तमान काल में)।

...ष्ठचौ — IV. iv. 31

देखें — ष्ठन्ष्ठचौ IV. iv. 31

ष्ठन् — IV. iii. 70

(षष्ठीसप्तमीसमर्थ पौरोडाश, पुरोडाश व्याख्यातव्यनाम प्रातिपदिकों से 'भव' और 'व्याख्यान' अर्थों में) ष्ठन् प्रत्यय होता है)।

ष्ठन् — IV. iv. 10

(तृतीयासमर्थ पर्णादि प्रातिपदिकों से 'चरति' अर्थ में) ष्ठन् प्रत्यय होता है।

ष्ठन् — IV. iv. 16

(तृतीयासमर्थ भस्त्रादिगणपठित प्रातिपदिकों से 'हरति' अर्थ में) ष्ठन् प्रत्यय होता है।

ष्ठन्... — IV. iv. 31

देखें — **ष्ठन्ष्ठचौ IV. iv. 31**

ष्ठन् — IV. iv. 53

(प्रथमासमर्थ किशरादि प्रातिपदिकों से 'इसका बेचना' अर्थ में) ष्ठन् प्रत्यय होता है।

ष्ठन् — V. i. 45

(षष्ठीसमर्थ पात्र प्रातिपदिक से 'श्वेत' अर्थ अभिधेय हो तो) ष्ठन् प्रत्यय होता है।

ष्ठन् — V. i. 53

(द्विगुसंज्ञक द्वितीयासमर्थ आढक, आचित तथा पात्र प्रातिपदिक से 'सम्भव है', 'अवहरण करता है' तथा 'पकाता है' अर्थों में) ष्ठन् प्रत्यय (भी) होता है।

ष्ठन्ष्ठचौ — IV. iv. 31

(द्वितीयासमर्थ कुसीद तथा दशैकादश प्रातिपदिकों से 'निन्दित वस्तु को देता है'—अर्थ में यथासङ्ख्य करके) ष्ठन् और ष्ठच् प्रत्यय होते हैं।

ष्ठल् — IV. iv. 9

(तृतीयासमर्थ आकर्ष प्रातिपदिक से 'चरति' अर्थ में) ष्ठल् प्रत्यय होता है।

ष्टल् — IV. iv. 74

(सप्तमीसमर्थ आवसथ प्रातिपदिक से 'बसता है'—अर्थ में) ष्ठल् प्रत्यय होता है।

आवसथ = आवास, विश्राम-स्थल, छात्रावास।

ष्ठिवु... — VII. iii. 75

देखें — **ष्ठिवुक्लमुचमाम् VII. iii. 75**

ष्ठिवुक्लमुचमाम् — VII. iii. 75

ष्ठिवु, क्लमु तथा चम् अङ्गों को (शित् प्रत्यय परे रहते दीर्घ होता है)।

ष्णान्ता — I. i. 23

षकारान्त और नकारान्त (संख्यावाची) शब्दों (की षट् संज्ञा होती है)।

...ष्णिहाम् — VIII. ii. 33

देखें — **द्रुहमुह० VIII. ii. 33**

...ष्णुह... — VIII. ii. 33

देखें — **द्रुहमुह० VIII. ii. 33**

ष्फः — IV. i. 17

(अनुपसर्जन यञन्त प्रातिपदिकों से स्त्रीलिङ्ग में प्राचीन आचार्यों के मत में) ष्फ प्रत्यय होता है (और वह तद्धित होता है)।

ष्फक् — IV. ii. 98

(कापिशी शब्द से शैषिक) ष्फक् प्रत्यय होता है।

ष्यङ् — IV. i. 78

(गोत्र में विहित ऋष्यपत्य से भिन्न अण् और इञ् प्रत्यय अन्त वाले उपोत्तम गुरुवाले प्रातिपदिकों को स्त्रीलिङ्ग में) ष्यङ् आदेश होता है।

ष्यङः — VI. i. 13

ष्यङ् को (सम्प्रसारण होता है, यदि पुत्र तथा पति शब्द उत्तरपद हों तो, तत्पुरुष समास में)।

...ष्यञ्... — VI. iii. 50

देखें — **शोकष्यञ्रोगेषु VI. iii. 50**

ष्यञ् — V. i. 122

(षष्ठीसमर्थ वर्णवाची तथा दृढादि प्रातिपदिकों से 'भाव' अर्थ में) ष्यञ् तथा इमनिच् प्रत्यय होते हैं।

ष्वुन् — III. i. 145

(शिल्पी कर्ता अभिधेय हो तो धातुमात्र से) ष्वुन् प्रत्यय होता है।

स

...स्... — I. iii. 4
देखें — तुस्माः I. iii. 4

स्... — VIII. ii. 29
देखें — स्कोः VIII. ii. 29

स्... — VIII. ii. 37
देखें — स्ध्वोः VIII. ii. 37

स्... — VIII. iv. 39
देखें — स्तोः VIII. iv. 39

स — प्रत्याहारसूत्र XIII
आचार्य पाणिनि द्वारा अपने तेरहवें प्रत्याहारसूत्र में पठित तृतीय वर्ण।

पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का बयालीसवां वर्ण।

स... — III. iv. 91
देखें — सवाभ्याम् III. iv. 91

स... — V. iv. 40
देखें — सस्नौ V. iv. 40

स... — VIII. ii. 67
देखें — ससजुषः VIII. ii. 67

सः — I. iii. 67
(अण्यन्तावस्था में जो कर्म) वही (यदि ण्यन्तावस्था में) कर्ता बन रहा हो तो ऐसी ण्यन्त धातु से आत्मनेपद होता है, आध्यान = उत्कण्ठापूर्वक स्मरण अर्थ को छोड़कर)।

सः — I. iv. 32
(करणभूत कर्म के द्वारा जिसको अभिप्रेत किया जाये) वह कारक (सम्प्रदानसंज्ञक होता है)।

सः — I. iv. 52
(गत्यर्थक, बुद्ध्यर्थक, भोजनार्थक तथा शब्दकर्मवाली और अकर्मक धातुओं का जो अण्यन्तावस्था में कर्ता) वह (ण्यन्तावस्था में कर्मसंज्ञक हो जाता है)।

सः — II. iv. 17
(जिसको पूर्व में एकवद्भाव कहा है) वह (नपुंसकलिंग वाला होता है)।

...सः — II. iv. 78
देखें — घ्राधेट्शाच्छासः II. iv. 78

सः — III. iv. 98
(लेट्-सम्बन्धी उत्तमपुरुष के) सकार का (लोप विकल्प से हो जाता है)।

सः — IV. ii. 54
प्रथमासमर्थ [छन्दोवाची प्रातिपदिकों से षष्ठ्यर्थ में यथाविहित (अण्) प्रत्यय होता है, प्रगाथों के अभिधेय होने पर, यदि वह प्रथमासमर्थ छन्द आदि आरम्भ में हो]।

सः — IV. iii. 89
प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से (षष्ठ्यर्थ में यथाविहित प्रत्यय होता है, यदि प्रथमासमर्थ निवास हो तो)।

सः — V. i. 55
प्रथमासमर्थ प्रातिपदिकों से (षष्ठ्यर्थ में यथाविहित प्रत्यय होते हैं, यदि वह प्रथमासमर्थ भाग, मूल्य तथा वेतन समानाधिकरण वाला हो तो)।

सः — V. ii. 78
प्रथमासमर्थ प्रातिपदिकों से (षष्ठ्यर्थ में कन् प्रत्यय होता है, यदि वह प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक ग्राम का मुखिया हो तो)।

सः — V. iii. 6
(सर्व शब्द के स्थान में विकल्प से) स आदेश होता है, (ढकारादि प्रत्यय के परे रहते)।

सः — VI. i. 62
(धातु के आदि में षकार के स्थान में आदेश अवस्था में) सकार आदेश होता है।

सः — VI. i. 130
'सः' के (सु का अच् परे रहते लोप होता है, यदि लोप होने पर पाद की पूर्ति हो रही हो तो)।

सः — VI. iii. 77
(सह शब्द को) स आदेश होता है, (उत्तरपद परे रहते, सञ्ज्ञाविषय में)।

सः — VII. ii. 106
(त्यदादि अंगों के अनन्त्य तकार और दकार के स्थान में सु विभक्ति परे रहते) सकारादेश होता है।

सः — VII. iv. 49
सकारान्त अङ्ग को (सकारादि आर्धधातुक के परे रहते तकारादेश होता है)।

सः — VIII. iii. 34
(खर् परे रहते विसर्जनीय को) सकार आदेश होता है।

सः — VIII. iii. 38
(अपदादि कवर्ग तथा पवर्ग परे रहते विसर्जनीय को) सकारादेश होता है।

सः — VIII. iii. 56

(सह् धातु के साड्रूप) सकार को (मूर्धन्य आदेश होता है)।

सः — VIII. iii. 62

(अभ्यास के इण् से उत्तर ण्यन्त ञिष्विदा, ष्वद तथा षह धातुओं के सकार को) सकारादेश होता है, (षत्वभूत सन् परे रहते भी)।

सक् — VII. ii. 73

(यम, रमु, णम तथा आकारान्त अङ्ग को) सक् आगम होता है (तथा सिच् को परस्मैपद परे रहते इट् आगम होता है)।

सकर्मकात् — I. iii. 53

(उत् उपसर्ग से उत्तर) सकर्मक (चर् धातु) से (आत्मनेपद होता है)।

सकृत् — V. iv. 19

(एक शब्द के स्थान में) सकृत् आदेश होता है (तथा सुच् प्रत्यय होता है, 'क्रियागणन' अर्थ में)।

...सक्त... — VII. ii. 18
देखें — **मन्थमनस्० VII. ii. 18**

...सक्तु... — VI. iii. 59
देखें — **मन्थौदन० VI. iii. 59**

सक्थम् — VI. ii. 198

(क्र अन्त में 'नहीं' है जिसके, ऐसे अक्रान्त शब्द से उत्तर) सक्थ शब्द को (भी विकल्प से अन्तोदात्त होता है, बहुव्रीहि समास में)।

सक्थि... — V. iv. 113
देखें — **सक्थ्यक्ष्णोः V. iv. 113**

...सक्थि... — VII. i. 75
देखें — **अस्थिदधि० VII. i. 75**

सक्थ्नः — V. iv. 98

(उत्तर, मृग और पूर्व शब्दों से उत्तर तथा उपमानवाची शब्दों से उत्तर भी) जो सक्थि शब्द, तदन्त (तत्पुरुष) से (समासान्त टच् प्रत्यय होता है)।

सक्थ्यक्ष्णोः — V. iv. 113

(स्वाङ्गवाची) जो सक्थि और अक्षि शब्द, तदन्त से (समासान्त षच् प्रत्यय होता है, बहुव्रीहि समास में)।

...सक्थ्योः — V. iv. 121
देखें — **हलिसक्थ्योः V. iv. 121**

...सखि... — IV. ii. 79
देखें — **अरीहणकृशाश्व० IV. ii. 79**

...सखिभ्यः — V. iv. 91
देखें — **राजाहःसखिभ्यः V. iv. 91**

सखी — IV. i. 62

सखी (तथा अशिश्वी – ये) शब्द (भाषा-विषय में स्त्रीलिङ्ग में ङीष्-प्रत्ययान्त निपातन किये जाते हैं)।

सख्यम् — V. ii. 22

('साप्तपदीनम्' शब्द का निपातन किया जाता है) मित्रता वाच्य हो तो।

सख्युः — V. i. 125

(षष्ठीसमर्थ) सखि प्रातिपदिक से (भाव और कर्म अर्थ में य प्रत्यय होता है)।

सख्युः — VII. ii. 92

(संबुद्धि परे नहीं है जिससे, ऐसे) सखि शब्द से उत्तर (सर्वनामस्थान विभक्ति णित्वत् होती है)।

सगतिः — VIII. i. 68

(पूजनवाचियों से उत्तर) गतिसहित तिङन्त को (तथा गतिभिन्न तिङन्त को भी अनुदात्त होता है)।

सगर्भ... — IV. iv. 114
देखें — **सगर्भसयूथ० IV. iv. 114**

सगर्भसयूथसनुतात् — IV. iv. 1143

(सप्तमीसमर्थ) सगर्भ, सयूथ, सनुत —इन प्रातिपदिकों से (वेदविषयक भवार्थ में यन् प्रत्यय होता है)।

सङ्कलादिभ्यः — IV. ii. 74

सङ्कलादि प्रातिपदिकों से (भी चातुरर्थिक अञ् प्रत्यय होता है)।

...सङ्काश... — IV. ii. 79
देखें — **अरीहणकृशाश्व० IV. ii. 79**

संख्यया — II. ii. 25

(संख्येय में वर्तमान) सङ्ख्या के साथ (अव्यय, आसन्न, अदूर, अधिक और संख्या का विकल्प से समास होता है और वह बहुव्रीहिसञ्ज्ञक होता है)।

...सङ्ख्यस्य – VII. iii. 15
देखें – सम्वत्सरसंख्यस्य VII. iii. 15

सङ्ख्या – I. i. 22
(बहु, गण शब्दों की तथा वतु प्रत्ययान्त और डति प्रत्ययान्त शब्दों की) संख्या संज्ञा होती है।

...सङ्ख्याः – II. i. 10
देखें – अक्षशलाकासङ्ख्याः II. i. 10

सङ्ख्या – II. i. 18
(एक, द्वि, त्रि आदि) संख्यावाचंक शब्द (वंश्यवाची सुबन्तों के साथ विकल्प से अव्ययीभाव समास को प्राप्त होते हैं)।

...सङ्ख्या... – III. ii. 21
देखें – दिवाविभा० III. ii. 21

संख्या... – IV. i. 26
देखें – संख्याव्ययादेः IV. i. 26

संख्या... – IV. i. 115
देखें – संख्यासंभद्र० IV. i. 115

...संख्या... – V. i. 19
देखें – अगोपुच्छसंख्या० V. i. 19

संख्या... – V. iv. 43
देखें – संख्यैकवचनात् V. iv. 43

सङ्ख्या... – V. iv. 86
देखें – संख्याव्ययादेः V. iv. 86

सङ्ख्या... – V. iv. 140
देखें – संख्यासुपूर्वस्य V. iv. 140

सङ्ख्या – VI. ii. 35
(द्वन्द्व समास में) सङ्ख्यावाची पूर्वपद को (प्रकृतिस्वर होता है)।

संख्या... – VI. iii. 109
देखें – संख्याविसाय० VI. iii. 109

...सङ्ख्याः – II. ii. 25
देखें – अव्ययासन्नादूरा० II. ii. 25

...सङ्ख्यात... – V. iv. 87
देखें – सर्वैकदेश० V. iv. 87

सङ्ख्यादेः – V. iii. 1
सङ्ख्या आदि में हो जिसके, ऐसे (पाद् और शत शब्द अन्त वाले) प्रातिपदिकों से (वीप्सा गम्यमान हो तो वुन् प्रत्यय होता है तथा प्रत्यय के साथ-साथ पाद और शत के अन्त का लोप भी हो जाता है)।

सङ्ख्यादेः – V. iv. 89
सङ्ख्या आदि वाले (तत्पुरुष समास में समाहार में वर्तमान अहन्) शब्द को (अह्न आदेश नहीं होता)।

सङ्ख्यापरिमाणे – V. ii. 41
सङ्ख्या के परिमाण अर्थ में वर्तमान (प्रथमासमर्थ किम् प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में डति तथा वतुप् प्रत्यय होते हैं तथा उस वतुप् के वकार के स्थान में घकार आदेश होता है)।

सङ्ख्यापूर्वः – II. i. 51
संख्या पूर्व में है जिसके, ऐसा समास (तद्धितार्थ-विषय में उत्तरपद परे रहते समाहार वाच्य होने पर 'द्विगु' संज्ञक होता है)।

संङ्ख्यायाः – V. i. 22
सङ्ख्यावाची प्रातिपदिक से ('तदर्हति'-पर्यन्त कथित अर्थों में कन् प्रत्यय होता है, यदि वह सङ्ख्यावाची प्रातिपदिक ति-शब्दान्त एवं शत-शब्दान्त न हो तो)।

सङ्ख्यायाः – V. i. 57
(परिमाण समानाधिकरण वाले प्रथमासमर्थ) संख्यावाची प्रातिपदिक से (सञ्ज्ञा, सङ्घ, सूत्र तथा अध्ययन के प्रत्ययार्थ होने पर षष्ठ्यर्थ में यथाविहित प्रत्यय होते हैं)।

संख्यायाः – V. ii. 42
('अवयव' अर्थ में वर्तमान प्रथमासमर्थ) सङ्ख्यावाची प्रातिपदिक से (षष्ठ्यर्थ में तयप् प्रत्यय होता है)।

सङ्ख्यायाः – V. ii. 47
(प्रथमासमर्थ) सङ्ख्यावाची प्रातिपदिकों से ('इस भाग का यह मूल्य है' अर्थ में मयट् प्रत्यय होता है)।

सङ्ख्यायाः – V. iii. 42
(क्रिया के प्रकार में वर्तमान) सङ्ख्यावाची प्रातिपदिकों से (धा प्रत्यय होता है)।

सङ्ख्यायाः – V. iv. 17
('क्रिया के बार बार गणन' अर्थ में वर्तमान) सङ्ख्यावाची प्रातिपदिकों से (कृत्वसुच् प्रत्यय होता है)।

सङ्ख्यायाः — V. iv. 59

(गुण शब्द अन्त वाले) सङ्ख्यावाची प्रातिपदिकों से (भी कृञ् के योग में कृषि अभिधेय हो तो डाच् प्रत्यय होता है)।

संख्यायाः — VI. ii. 163

संख्या शब्द से उत्तर (स्तन शब्द को बहुव्रीहिसमास में अन्तोदात्त होता है)।

सङ्ख्यायाः— VII. iii. 15

सङ्ख्यावाची शब्द से उत्तर (संवत्सर शब्द के तथा सङ्ख्यावाची शब्द के अचों में आदि अच् को भी ञित्, णित् तथा कित् तद्धित परे रहते वृद्धि होती है)।

सङ्ख्यायाम् — VI. iii. 46

(द्वि तथा अष्टन् शब्दों को आकारादेश होता है) सङ्ख्या उत्तरपद हो तो; (बहुव्रीहि समास तथा अशीति उत्तरपद को छोड़कर)।

सङ्ख्याविसायपूर्वस्य— VI. iii. 109

संख्या, वि तथा साय पूर्व वाले (अह्न) शब्द को (विकल्प करके अहन् आदेश होता है, ङि परे रहते)।

संख्याव्ययादेः— IV. i. 26

संख्या आदि वाले तथा अव्यय आदि वाले (ऊधस्-शब्दान्त बहुव्रीहि समास युक्त) प्रातिपदिक से (ङीप् प्रत्यय होता है)।

सङ्ख्याव्ययादेः— V. iv. 86

सङ्ख्या तथा अव्यय आदि में है, जिस (अङ्गुलि-शब्दान्त तत्पुरुष समास के, तदन्त) प्रातिपदिक से (समासान्त अच् प्रत्यय होता है)।

संख्यासंभद्रपूर्वायाः— IV. i. 115

संख्या, सम् तथा भद्र पूर्व वाले (मातृ) शब्द से (अपत्य अर्थ में अण् प्रत्यय होता है, साथ ही मातृ शब्द को उकार अन्तादेश भी हो जाता है)।

सङ्ख्यासुपूर्वस्य— V. iv. 140

सङ्ख्यावाची शब्द पूर्ववाले तथा सु शब्द पूर्ववाले (पाद) शब्द का (समासान्त लोप हो जाता है)।

...सङ्ख्ये— II. i. 48

देखें— दिक्सङ्ख्ये II. i. 48

संख्येये— II. ii. 25

संख्येय = जिसकी गणना की जाये – अर्थ में वर्तमान (संख्या के साथ अव्यय, आसन्न, अदूर, अधिक और संख्या समास को प्राप्त होते हैं और वह समास बहुव्रीहिसञ्ज्ञक होता है)।

सङ्ख्येये— V. iv. 7

(बहु तथा गण शब्द जिसके अन्त में नहीं हैं, ऐसे) सङ्ख्येय अर्थ में (वर्तमान बहुव्रीहिसमासयुक्त प्रातिपदिक से डच् प्रत्यय होता है)।

सङ्ख्यैकवचनात्— V. iv. 43

सङ्ख्याची प्रातिपदिकों से तथा एक अर्थ को कहने वाले प्रातिपदिकों से (भी वीप्सा द्योतित हो रही हो तो विकल्प से शस् प्रत्यय होता है)।

सङ्गः— VIII. iii. 80

(समास में अङ्गुलि शब्द से उत्तर) सङ्ग शब्द के (सकार को मूर्धन्य आदेश होता है)।

...सङ्गतः...— V. i. 102

देखें— अचतुरमङ्गल० V. i. 120

सङ्गतम्— III. i. 105

सङ्गत = सङ्गति अर्थ में ('अजर्यम्' शब्द का कर्तृवाच्य में निपातन है, नञ् पूर्वक जृष् धातु से)।

सङ्ग्रामे— IV. ii. 55

(प्रथमासमर्थ प्रयोजन और योद्धा के साथ समानाधिकरण वाले प्रातिपदिकों से षष्ठ्यर्थ में) सङ्ग्राम = युद्ध अभिधेय हो (तो यथाविहित अण् प्रत्यय होता है)।

सङ्घ...— III. iii. 86

देखें— सङ्घोद्घौ III. iii. 86

सङ्घ...— IV. iii. 126

देखें— सङ्घाङ्कलक्षणेषु IV. iii. 126

...सङ्घ...V. i. 57

देखें— संज्ञासङ्घसूत्रा० V. i. 57

...सङ्घस्य— V. ii. 52

देखें— बहुपूग० V. ii. 52

...सङ्घुष... — VII. ii. 28

देखें— रुष्यमत्वर० VII. ii. 28

सङ्घे — III. iii. 42

(ऊपर, नीचे स्थित न होने वाला) संघ= समूह वाच्य हो (तो भी चिञ् धातु से घञ् प्रत्यय होता है तथा आदि चकार को ककारादेश हो जाता है, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में)।

सङ्घोद्घौ— III. iii. 86

संङ्घ और उद्घ शब्द (यथासंख्य करके गण तथा प्रशंसा गम्यमान होने पर निपातन किये जाते हैं, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में)।

...सजुषः— VIII. ii. 67
देखें— ससजुषः VIII. ii. 67

...सञ्चर...— III. iii. 119
देखें— गोचरसञ्चर० III. iii. 119

...सञ्चाय्यौ— III. i. 130
देखें— कुण्डपाय्यसञ्चाय्यौ III. i. 130

...सञ्ज...— VI. iv. 25
देखें— दंशसञ्ज० VI. iv. 25

...सञ्ज...— VIII. iii. 65
देखें— सुनोतिसुवति० VIII. iii. 65

सञ्जातम्— V. ii. 36

(प्रथमासमर्थ) संजात समानाधिकरण (तारकादि प्रातिपदिकों से षष्ठ्यर्थ में इतच् प्रत्यय होता है)।

...सञ्जीव...— VI. ii. 91
देखें— भूताधिक० VI. ii. 91

सञ्ज्ञः— II. iii. 22

सम् पूर्वक 'ज्ञा' धातु के (अनभिहित कर्म कारक में विकल्प से तृतीया विभक्ति होती है)।

...संज्ञयोः— V. iv. 94
देखें— जातिसंज्ञयोः V. iv. 94

सञ्ज्ञा— I. iv. 1

('कडाराः कर्मधारये' II. ii. 38 इस सूत्र तक एक) संज्ञा होती है, (यह अधिकार है)।

सञ्ज्ञा...— III. ii. 179
देखें— संज्ञान्तरयोः III. ii. 179

संज्ञा...— IV. i. 29
देखें— संज्ञाछन्दसोः IV. i. 29

सञ्ज्ञा...— V. i. 57
देखें— संज्ञासङ्घसूत्रा० V. i. 57

सञ्ज्ञा...— VI. ii. 113
देखें— संज्ञौपम्ययोः VI. ii. 113

सञ्ज्ञा...— VI. iii. 37
देखें— संज्ञापूरण्योः VI. iii. 37

सञ्ज्ञा...— VI. iii. 62
देखें— संज्ञाछन्दसोः VI. iii. 62

...सञ्ज्ञा...— VIII. ii. 2
देखें— सुप्स्वर० VIII. ii. 2

सञ्ज्ञाछन्दसोः— :IV. i. 29

(अन्नन्त उपधालोपी बहुव्रीहि समास से) संज्ञा तथा छन्द-विषय में (नित्य ही स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय होता है)।

सञ्ज्ञाछन्दसोः— VI. iii. 62

(ङ्यन्त तथा आबन्त शब्दों को) सञ्ज्ञा तथा छन्दविषय में) उत्तरपद परे रहते बहुल करके ह्रस्व होता है)।

सञ्ज्ञान्तरयोः— III. ii. 179

(भू धातु से) संज्ञा तथा अन्तर= मध्य गम्यमान हो तो (वर्तमान काल में क्विप् प्रत्यय होता है)।

सञ्ज्ञापूरण्योः— VI. iii. 37

सञ्ज्ञावाची तथा पूरणीप्रत्ययान्त (भाषितपुंस्क स्त्री शब्दों) को (भी पुंवद्भाव नहीं होता)।

सञ्ज्ञाप्रमाणत्वात्— I. ii. 53

लौकिक व्यवहार के अधीन होने से (उपर्युक्त युक्तवद्भाव पूरी तरह से शासित नहीं किया जा सकता)।

सञ्ज्ञायाम्— II. i. 20

संज्ञाविषय में (अन्य पदार्थ गम्यमान होने पर भी सुबन्त का नदीवाचियों के साथ विकल्प से अव्ययीभाव समास होता है)।

सञ्ज्ञायाम्— II. i. 43

संज्ञा-विषय में (सप्तम्यन्त सुबन्त का समर्थ सुबन्तों के साथ तत्पुरुष समास होता है)।

सञ्ज्ञायाम् — II. i. 49

(दिशावाची और संख्यावाची सुबन्त समानाधिकरण समर्थ सुबन्त के साथ) संज्ञाविषय में (समास को प्राप्त होते हैं और वह समास तत्पुरुषसञ्ज्ञक होता है)।

सञ्ज्ञायाम् – II. iv. 20

संज्ञा-विषय में (नञ् तथा कर्मधारयवर्जित कन्यान्त-तत्पुरुष नपुंसकलिङ्ग में होता है, यदि वह कन्था उशीनर जनपद-सम्बन्धी हो तो)।

सञ्ज्ञायाम्– III. ii. 14

संज्ञा-विषय में ('शम्' उपपद रहते धातु मात्र से 'अच्' प्रत्यय होता है)।

सञ्ज्ञायाम्– III. ii. 46

संज्ञाविषय में (भृ, तृ, वृ, जि, धृ, सह, तप और दम् धातुओं से यथासम्भव सुबन्त अथवा कर्म उपपद रहते 'खच्' प्रत्यय होता है)।

सञ्ज्ञायाम्– III. ii. 88

संज्ञाविषय में (उपसर्ग उपपद रहते भी 'जन्' धातु से 'ड' प्रत्यय होता है, भूतकाल में)।

सञ्ज्ञायाम्– III. ii. 185

(पूञ् धातु से) संज्ञा गम्यमान हो तो (करण कारक में इत्र प्रत्यय होता है, वर्तमान काल में)।

सञ्ज्ञायाम्– III. iii. 19

(कर्तृभिन्न कारक में भी धातु से) संज्ञाविषय में (घञ् प्रत्यय होता है)।

सञ्ज्ञायाम्– III. iii. 99

संज्ञाविषय में (सम् पूर्वक अज, नि पूर्वक षद तथा पत, मन, विद, षुञ्, शी, भृञ्, इण् धातुओं से स्त्रीलिङ्ग में कर्तृ-भिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में क्यप् प्रत्यय होता है और वह उदात्त होता है)।

सञ्ज्ञायाम्– III. iii. 109

संज्ञाविषय में (धातु से स्त्रीलिङ्ग में कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में ण्वुल् प्रत्यय होता है)।

सञ्ज्ञायाम्– III. iii. 118

(धातु से करण और अधिकरण कारक में पुँल्लिङ्ग में प्रायः करके घ प्रत्यय होता है, यदि समुदाय से) संज्ञा प्रतीत होती है।

सञ्ज्ञायाम्– III. iii. 174

(आशीर्वाद-विषय में धातु से क्तिच् और क्त प्रत्यय भी होते हैं, यदि समुदाय से) संज्ञा प्रतीत हो।

सञ्ज्ञायाम्– III. iv. 42

संज्ञाविषय में (बन्ध् धातु से णमुल् प्रत्यय होता है)।

सञ्ज्ञायाम् – IV. i. 58

(नखशब्दान्त तथा मुखशब्दान्त प्रातिपदिकों से) संज्ञा-विषय में (स्त्रीलिङ्ग में ङीष् प्रत्यय नहीं होता है)।

सञ्ज्ञायाम्– IV. i. 67

(बाहु अन्त वाले प्रातिपदिकों से) संज्ञाविषय में (स्त्रीलिङ्ग में ऊङ् प्रत्यय होता है)।

सञ्ज्ञायाम्– IV. i. 72

संज्ञाविषय हो तो (लोक में भी कद्रु और कमण्डलु शब्दों से स्त्रीलिङ्ग में ऊङ् प्रत्यय होता है।

सञ्ज्ञायाम्– IV. ii. 5

(तृतीयासमर्थ नक्षत्रवाची श्रवण तथा अश्वत्थ शब्दों से 'युक्तः कालः' इस अर्थ में विहित प्रत्यय का) संज्ञाविषय में (सर्वत्र लुप् होता है)।

सञ्ज्ञायाम्– IV. iii. 27

(सप्तमीसमर्थ शरद् प्रातिपदिक से जात अर्थ में) संज्ञा-विषय होने पर (वुञ् प्रत्यय होता है)।

सञ्ज्ञायाम्– IV. iii. 117

(तृतीयासमर्थ कुलालादि प्रातिपदिकों से) संज्ञा गम्य-मान होने पर (कृत अर्थ में वुञ् प्रत्यय होता है)।

सञ्ज्ञायाम्– IV. iii. 144

(षष्ठीसमर्थ पिष्ट प्रातिपदिक से) संज्ञाविषय में (विकार अर्थ में कन् प्रत्यय होता है)।

सञ्ज्ञायाम्– IV. iv. 46

(द्वितीयासमर्थ ललाट तथा कुक्कुटी प्रातिपदिकों से) संज्ञा गम्यमान होने पर ('देखता है'— अर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

कुक्कुटी = दम्भ, पाखण्ड।

सञ्ज्ञायाम् – IV. iv. 82

(द्वितीयासमर्थ जनी प्रातिपदिक से) संज्ञा गम्यमान होने पर ('ढोता है' अर्थ में यत् प्रत्यय होता है)।

जनी = वधू।

सञ्ज्ञायाम् – IV. iv. 89

सञ्ज्ञाविषय में (धेनुष्या शब्द स्त्रीलिङ्ग में निपातन किया जाता है)।

धेनुष्या = दुग्धादि के द्वारा ऋण उतारने के लिये उत्तमर्ण को दी जाने वाली गाय।

सञ्ज्ञायाम्– V. i. 3

नाम अर्थ में (कम्बल प्रातिपदिक से भी 'क्रीत' अर्थ से पहले पहले पठित अर्थों में यत् प्रत्यय होता है)।

सञ्ज्ञायाम्– V. i. 61

(परिमाण समानाधिकरण वाले प्रथमासमर्थ त्रिंशत् तथा चत्वारिंशत् प्रातिपदिकों से षष्ठ्यर्थ में) सञ्ज्ञा का विषय होने पर (डण् प्रत्यय होता है, ब्राह्मण ग्रन्थ अभिधेय हो तो)।

सञ्ज्ञायाम्– V. ii. 23

(हैयङ्गवीन शब्द का निपातन किया जाता है) सञ्ज्ञा-विषय में)।

सञ्ज्ञाविषयम्– V. ii. 30

(अव उपसर्ग प्रातिपदिक से 'नासिकासम्बन्धी' झुकाव को कहना हो तो) सञ्ज्ञाविषय में (टीटच्, नाटच् तथा भ्रटच् प्रत्यय होते हैं)।

सञ्ज्ञायाम्– V. ii. 71

(ब्राह्मणक तथा उष्णिक शब्द कन्-प्रत्ययान्त निपातन किये जाते हैं) सञ्ज्ञाविषय में।

सञ्ज्ञायाम्– V. ii. 82

(प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से सप्तम्यर्थ में कन् प्रत्यय होता है, यदि वह प्रथमासमर्थ बहुल करके) सञ्ज्ञाविषय में (अन्नविषयक हो तो)।

सञ्ज्ञायाम्– V. ii. 91

(साक्षात् प्रातिपदिक से 'देखने वाला' वाच्य हो तो) सञ्ज्ञाविषय में (इनि प्रत्यय होता है)।

सञ्ज्ञायाम्– V. ii. 110

(गाण्डी तथा अजग प्रातिपदिकों से 'मत्वर्थ' में व प्रत्यय होता है) संज्ञाविषय में।

गाण्डीव = अर्जुन का बाण।

अजगव = शिव का धनुष।

सञ्ज्ञायाम्– V. ii. 113

(दन्त तथा शिखा प्रातिपदिकों से 'मत्वर्थ' में) सञ्ज्ञा-विषय में वलच् प्रत्यय होता है)।

सञ्ज्ञायाम्– V. ii. 137

(मन् अन्तवाले तथा म शब्दान्त प्रातिपदिकों से 'मत्वर्थ' में इनि प्रत्यय होता है) सञ्ज्ञाविषय में।

सञ्ज्ञायाम्– V. iii. 75

('निन्दित' अर्थ में वर्तमान प्रातिपदिक से स्वार्थ में कन् प्रत्यय होता है) संज्ञा गम्यमान होने पर।

सञ्ज्ञायाम्– V. iii. 87

('छोटा' अर्थ में वर्तमान प्रातिपदिक से) सञ्ज्ञा गम्यमान हो तो (कन् प्रत्यय होता है)।

सञ्ज्ञायाम्– V. iii. 97

(इवार्थ गम्यमान हो तो) संज्ञाविषय में (भी कन् प्रत्यय होता है)।

सञ्ज्ञायाम्– V. iv. 118

(नासिका-शब्दान्त बहुव्रीहि से समासान्त अच् प्रत्यय होता है) सञ्ज्ञाविषय में (तथा नासिका शब्द के स्थान में नस आदेश भी हो जाता है, यदि वह नासिका शब्द स्थूल शब्द से उत्तर न हो तो)।

सञ्ज्ञायाम्– V. iv. 137

सञ्ज्ञाविषय में (धनुष-शब्दान्त बहुव्रीहि को विकल्प से समासान्त अनङ् आदेश होता है)।

सञ्ज्ञायाम्– V. iv. 143

(बहुव्रीहि समास में अन्यपदार्थ यदि स्त्री वाच्य हो तो दन्त शब्द के स्थान में दतृ आदेश हो जाता है) सञ्ज्ञा-विषय में।

सञ्ज्ञायाम्– V. iv. 155

सञ्ज्ञाविषय में (बहुव्रीहि समास में कप् प्रत्यय नहीं होता है)।

सञ्ज्ञायाम्– VI. i. 151

(पारस्कर इत्यादि शब्दों में भी सुट् आगम निपातन किया जाता है) सञ्ज्ञा के विषय में।

सञ्ज्ञायाम् – VI. i. 198

(उपमानवाची शब्द को) सञ्ज्ञाविषय में (आद्युदात्त होता है)।

सञ्ज्ञायाम् – VI. i. 213

(मतुप् से पूर्व आकार को उदात्त होता है, यदि वह मत्वन्त शब्द स्त्रीलिङ्ग में) सञ्ज्ञाविषयक हो तो।

सञ्ज्ञायाम्–VI. ii. 77

सञ्ज्ञाविषय में (भी अणन्त उत्तरपद रहते पूर्वपद को आद्युदात्त होता है, यदि वह अण् कृञ् से परे न हो तो)।

सञ्ज्ञायाम्– VI. ii. 94

(गिरि तथा निकाय शब्द उत्तरपद रहते) सञ्ज्ञाविषय में (पूर्वपद को अन्तोदात्त होता है)।

सञ्ज्ञायाम्– VI. ii. 106

(बहुव्रीहि समास में) सञ्ज्ञाविषय में (पूर्वपद विश्व शब्द को अन्तोदात्त होता है)।

सञ्ज्ञायाम्– VI. ii. 129

सञ्ज्ञाविषय में (कूल, सूद स्थल, कर्ष —इन उत्तरपद शब्दों को तत्पुरुष समास में आद्युदात्त होता है)।

कूल = किनारा, तालाब।

सूद = रसोइया, कुँआ,

कर्ष = रेखा खीचना, घसीटना, हल जोतना।

सञ्ज्ञायाम्– VI. ii. 146

(गति, कारक तथा उपपद से उत्तर क्तान्त उत्तरपद को अन्तोदात्त होता है;) सञ्ज्ञाविषय में, (आचितादि शब्दों को छोड़कर)।

आचित = पूर्ण, भरा हुआ, ढका हुआ।

सञ्ज्ञायाम्– VI. ii. 159

(नञ् से परे आक्रोश गम्यमान हो तो) सञ्ज्ञाविषय में (वर्तमान उत्तरपद को अन्तोदात्त होता है)।

सञ्ज्ञायाम्– VI. ii. 165

सञ्ज्ञाविषय में (उत्तरपद मित्र तथा अजिन शब्दों को बहुव्रीहि समास में अन्तोदात्त होता है)।

सञ्ज्ञायाम्– VI. ii. 183

(प्र उपसर्ग से उत्तर अस्वाङ्गवाची उत्तरपद को) सञ्ज्ञा-विषय में (अन्तोदात्त होता है)।

अजिन = पशुचर्म।

सञ्ज्ञायाम्– VI. iii. 4

(मनस् शब्द से उत्तर) सञ्ज्ञाविषय में (तृतीयाविभक्ति का उत्तरपद परे रहते अलुक् होता है)।

सञ्ज्ञायाम्– VI. iii. 8

(हलन्त तथा अकारान्त शब्द से उत्तर) सञ्ज्ञाविषय में (सप्तमी विभक्ति का उत्तरपद परे रहते अलुक् होता है)।

सञ्ज्ञायाम्– VI. iii. 56

(उदक शब्द को उद आदेश होता है) सञ्ज्ञा विषय में, (उत्तरपद परे रहते)।

सञ्ज्ञायाम्– VI. iii. 77

(सह शब्द को स आदेश होता है, उत्तरपद परे रहते) सञ्ज्ञाविषय में।

सञ्ज्ञायाम्– VI. iii. 116

(वन तथा गिरि शब्द उत्तरपद रहते यथासंख्य करके कोटरादि एवं किंशुलकादि गणपठित शब्दों को) सञ्ज्ञा-विषय में (दीर्घ होता है)।

सञ्ज्ञायाम्– VI. iii. 124

(अष्टन् शब्द को उत्तरपद परे रहते) सञ्ज्ञाविषय में (दीर्घ होता है)।

सञ्ज्ञायाम्– VI. iii. 128

(नर शब्द उत्तरपद रहते) सञ्ज्ञाविषय में (विश्व शब्द को दीर्घ होता है)।

सञ्ज्ञायाम्– VIII. ii. 11

सञ्ज्ञाविषय में (मतुप् को वकारादेश होता है)।

सञ्ज्ञायाम्– VIII. iii. 99

(गकारभिन्न इण् तथा कवर्ग से उत्तर सकार को एकार परे रहते) सञ्ज्ञाविषय में (मूर्धन्य आदेश होता है)।

सञ्ज्ञायाम्– VIII. iv. 3

(गकारभिन्न पूर्वपद में स्थित निमित्त से उत्तर) सञ्ज्ञा-विषय में (नकार को णकारादेश होता है)।

सञ्ज्ञासङ्घसूत्राध्ययनेषु – V. i. 57

(परिमाण समानाधिकरणवाले प्रथमासमर्थ सङ्ख्यावाची प्रातिपदिकों से) सञ्ज्ञा, सङ्घ = समूह, सूत्र तथा अध्ययन के प्रत्ययार्थ होने पर (यथाविहित प्रत्यय होते हैं)।

सञ्ज्ञौपम्ययोः — VI. ii. 113

सञ्ज्ञा तथा उपमा विषय में (वर्तमान जो बहुव्रीहि, वहाँ भी उत्तरपद कर्ण शब्द को आद्युदात्त होता है)।

सञ्झलोः— VI. iv. 42

(जन, सन, खन —इन अङ्गों को आकारादेश हो जाता है; झलादि) सन् तथा झलादि (कित्, ङित्) परे रहते ।

...सञ्ज्वर...— III. ii. 142

देखें— **सम्पृचानुरुध० III. ii. 142**

स्थण्डिलात्— IV. ii. 14

(सप्तमीसमर्थ) स्थण्डिल प्रातिपदिक से (सोने वाला अभिधेय हो तो व्रत गम्यमान होने पर यथाविहित प्रत्यय होता है)।

सत्...— I. iv. 72

देखें— **सदसती I. iv. 72**

सत्...— II. i. 60

देखें— **सन्महत्परमो० II. i. 60**

...सत्...— II. ii. 11

देखें— **पूरणगुणसुहितार्थ० II. ii. 11**

सत्— III. ii. 127

(वे शतृ तथा शानच् प्रत्यय) सत् संज्ञक होते हैं।

सत्— III. iii. 14

(भविष्यत्काल में विहित जो लृट्, उसके स्थान में) सत्संज्ञक शतृ और शानच् प्रत्यय (विकल्प से होते हैं)।

सत्सूद्विषद्रुहदुहयुजविदभिदच्छिदजिनीराजाम्— III. ii. 61

सद्, सू, द्विष, द्रुह, दुह, युज, विद, भिद, छिद, जि, नी, राजृ धातुओं से (सोपसर्ग हों तो भी तथा निरुपसर्ग हों तो भी सुबन्त उपपद रहते क्विप् प्रत्यय होता है)।

सत्य...— VI. iii. 69

देखें— **सत्यागदस्य VI. iii. 69**

सत्यम्— VIII. i. 32

सत्यम् शब्द से युक्त (तिङन्त को प्रश्न होने पर अनुदात्त नहीं होता)।

सत्यागदस्य— VI. iii. 69

(कार शब्द उत्तरपद रहते) सत्य तथा अगद शब्द को (मुम् आगम हो जाता है)।

अगद = नीरोग, स्वस्थ।

सत्यात्— V. iv. 66

सत्य प्रातिपदिक से (शपथ वाच्य न हो तो कृञ् के योग में डाच् प्रत्यय होता है)।

सत्याप...— III. i. 25

देखें— **सत्यापपाश० III. i. 25**

सत्यापपाशरूपवीणातूलश्लोकसेनालोमत्वचवर्मवर्णचूर्ण-चुरादिभ्यः — III. i. 25

सत्याप, पाश, रूप, वीणा, तूल, श्लोक, सेना, लोम, त्वच, वर्म, वर्ण, चूर्ण इन शब्दों तथा चुरादि गण में पढ़ी धातुओं से (णिच् प्रत्यय होता है)।

सद्...— III. ii. 61

देखें — **सत्सू० III. ii. 61**

...सद ...— III. i. 24

देखें — **लुपसदचर० III. i. 24**

सद ...— III. ii. 108

देखें — **सदवस० III. ii. 108**

...सदः — III. ii. 159

देखें — **दाधेट्० III. ii. 159**

सदवसश्रुवः — III. ii. 108

(लौकिक प्रयोग विषय में) सद, वस, श्रु —इन धातुओं से परे (भूतकाल में लिट् प्रत्यय होता है)।

सदसती — I. iv. 62

सत् और असत् शब्द (यदि यथासंख्य करके आदर तथा अनादर अर्थ में वर्तमान हों तो उनकी क्रियायोग में गति और निपात संज्ञा होती है)।

...सदाम् — VII. iii. 78

देखें — **पाघ्राध्मा० VII. iii. 78**

सदिः — VIII. iii. 66

(प्रतिभिन्न उपसर्गस्थ निमित्त से उत्तर) षदलृ धातु के (सकार को मूर्धन्य आदेश होता है, अड्व्यवाय एवं अभ्यास के व्यवाय में भी)।

...सदृश...— II. i. 30

देखें — **पूर्वसदृशसमोनार्थ० II. i. 30**

सदृश... — VI. ii. 11

देखें — **सदृशप्रतिरूपयोः VI. ii. 11**

सदृशप्रतिरूपयोः – VI. ii. 11

सदृश तथा प्रतिरूप शब्द उत्तरपद रहते (सादृश्यवाची तत्पुरुष समास में पूर्वपद प्रकृतिस्वर होता है)।

सदेः – VIII. iii. 118

(लिट् परे रहते) षद् धातु के (परवाले सकार को मूर्धन्य आदेश नहीं होता)।

...सदेशेषु – VI. ii. 23
देखें – सविधसनीड० VI. ii. 23

सद्यः...– V. iii. 22
देखें– सद्यःपरुत्० V. iii. 22

सद्यःपरुत्परार्यैषमःपरेद्यव्यद्यपूर्वेद्युरन्येद्युरन्यतरेद्युरितरेद्युर-परेद्युरधरेद्युरुभयेद्युरुत्तरेद्युः – V. iii. 22

(सप्तम्यन्त प्रातिपदिकों से कालविशेष में) सद्यः, परुत्, परारि, ऐषमस्, परेद्यवि, अद्य, पूर्वेद्युः, अन्येद्युः, अन्यतरेद्युः, इतरेद्युः, अपरेद्युः, अधरेद्युः, उभयेद्युः तथा उत्तरेद्युः शब्दों का निपातन किया जाता है।

सध– VI. iii. 95

(माद तथा स्थ उत्तरपद रहते वेदविषय में सह शब्द को) सध आदेश होता है।

सध्रिः– VI. iii. 94

(सह शब्द को) सध्रि आदेश होता है, (वप्रत्ययान्त अञ्चु धातु के उत्तरपद रहते)।

सन्– I. ii. 8

(रुद, विद, मुष, ग्रह, स्वप तथा प्रच्छ् —इन धातुओं से परे) सन् (और क्त्वा) प्रत्यय (कित्वत् होते हैं)।

सन्– I. ii. 26

(इकार, उकार उपधावाली रलन्त एवं हलादि धातुओं से परे सेट्) सन् प्रत्यय (और सेट् क्त्वा प्रत्यय विकल्प से कित् नहीं होते)।

सन्...– II. iv. 51
देखें– संश्चङोः II. iv. 51

सन्– III. i. 5

(गुप्, तिज् और कित् धातुओं से स्वार्थ में) सन् प्रत्यय होता है।

सन्...– III. ii. 168
देखें– सनाशंस० III. ii. 168

सन्...– VI. i. 9
देखें– सन्यङोः VI. i. 9

सन्...– VI. i. 31
देखें– संश्चङोः VI. i. 31

सन्...– VI. iv. 42
देखें– सञ्झलोः VI. iv. 42

सन्...– VII. iii. 57
देखें– सन्लिटोः VII. iii. 57

...सन...– III. ii. 27
देखें– वनसन० III. ii. 27

...सन...– III. ii. 67
देखें– जनसन० III. ii. 67

...सन...– VI. iv. 42
देखें– जनसनखनाम् VI. iv. 42

सनः– I. iii. 56

(ज्ञा, श्रु, स्मृ, दृश् —इन धातुओं के) सन्नन्त से परे (आत्मनेपद होता है)।

सनः– I. iii. 62

(सन् प्रत्यय आने के पूर्व जो धातु आत्मनेपदी रही हो, उससे) सन्नन्त से (भी पूर्ववत् आत्मनेपद होता है)।

सनः– VI. iv. 45

(क्तिच् प्रत्यय परे रहते) सन् अङ्ग को (आकारादेश हो जाता है तथा विकल्प से इसका लोप भी होता है)।

सनाद्यन्ताः– III. i. 32

सन् आदि प्रत्यय अन्त में हैं जिनके, ऐसे समुदाय (धातु-संज्ञक होते हैं)।

...सनाम्– VII. ii. 49
देखें– इवन्तर्ध० VII. ii. 49

सनाशंसभिक्षः– III. ii. 168

सन्नन्त धातुओं से तथा आङ्पूर्वक शसि एवं भिक्ष् धातुओं से (तच्छीलादि कर्ता हों, तो वर्तमानकाल में उ प्रत्यय होता है)।

सनि – II. iv. 48

(आर्धधातुक) सन् परे रहते (भी अवोधनार्थक इण् को गम् आदेश होता है)।

सनि — VI. iv. 16

(अजन्त अङ्ग तथा हन् एवं गम् अङ्ग को झलादि) सन् परे रहने पर (दीर्घ होता है)।

सनि— VII. ii. 12

(ग्रह, गुह् तथा इगन्त अङ्ग को) सन् प्रत्यय परे रहते (इट् का आगम नहीं होता है)।

सनि— VII. ii. 41

वृ तथा ऋकारान्त धातुओं से उत्तर सन् आर्धधातुक को विकल्प से इट् आगम होता है)।

सनि— VII. ii. 49

(इव अन्त में है जिनके, उनसे तथा 'ऋधु वृद्धौ', 'भ्रस्ज पाके', 'दम्भु दम्भे', 'श्रिञ् सेवायाम्', 'स्वृ शब्दोपतापयोः', 'यु मिश्रणे', 'ऊर्णुञ् आच्छादने', 'भृञ्' 'भरणे', ज्ञपि, सन् —इन धातुओं से) उत्तर सन् को (विकल्प से इट् आगम होता है)।

सनि— VII. ii. 74

(स्मिङ्, पूङ्, ऋ, अञ्जू, अशू —इन अङ्गों के) सन् को (इट् आगम होता है)।

सनि— VII. iv. 54

(मी, मा, तथा घुसञ्ज्ञक एवं रभ, डुलभष्, शक्लृ, पत्लृ और पद् अङ्गों के अच् के स्थान में इस् आदेश होता है, सकारादि) सन् के परे रहते।

सनि — VII. iv. 79

सन् परे रहते (अकारान्त अभ्यास को इत्व होता है)।

सनिंससनिवांसम्— VII. ii. 69

'सनिंससनिवांसम्'— यह शब्द निपातन किया जाता है।

...सनीड...— VI. ii. 23

देखें— **सविधसनीड० VI. ii. 23**

...सनुतात्— IV. iv. 114

देखें— **सगर्भसयूथ० IV. iv. 114**

सनुमः— VIII. iv. 31

(उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर इच् आदि वाला) जो नुम्-सहित (हलन्त धातु) उससे विहित (जो कृत् प्रत्यय, तत्स्थ नकार को अच् से उत्तर णकार आदेश होता है)।

...सनोः— I. iii. 92

देखें— **स्यसनोः I. iii. 92**

...सनोः— II. iv. 37

देखें— **लुङ्सनोः II. iv. 37**

...सनोः— VIII. iii. 117

देखें— **स्यसनोः VIII. iii. 117**

सनोतेः— VIII. iii. 108

(अनकारान्त) सन् धातु के (सकार को वेदविषय में मूर्धन्य आदेश होता है)।

सन्तापादिभ्यः— V. i. 100

(चतुर्थीसमर्थ) सन्तापादि प्रातिपदिकों से ('शक्त है' अर्थ में यथाविहित ठञ् प्रत्यय होता है)।

सन्धिवेलादि...— IV. iii. 16

देखें— **सन्धिवेलाद्यृतुनक्षत्रेभ्यः IV. iii. 16**

सन्धिवेलाद्यृतुनक्षत्रेभ्यः— IV. iii. 16

सन्धिवेलादिगण पठित शब्दों से, ऋतुवाची एवं नक्षत्रवाची शब्दों से (अण् प्रत्यय होता है)।

सन्नतरः— I. ii. 40

(उदात्तपरक तथा स्वरितपरक अनुदात्त को) सन्नतर= अनुदात्ततर (आदेश हो जाता है)।

सन्निकर्षः— I. iv. 108

(वर्णों के अतिशयित) समीपता की (संहिता संज्ञा होती है)।

सन्निविभ्यः— VII. ii. 24

सम्, नि तथा वि उपसर्ग से उत्तर (अर्द् धातु को निष्ठा परे रहते इट् आगम नहीं होता)।

सन्महत्परमोत्तमोत्कृष्टाः— II. i. 60

सत्, महत्, परम, उत्तम, उत्कृष्ट —ये शब्द (समानाधिकरण पूज्यवाची सुबन्तों के साथ विकल्प से समास को प्राप्त होते हैं और वह तत्पुरुष समास होता है)।

सन्यङोः — VI. i. 9

सन्नन्त तथा यङन्त धातु के (अभ्यास अवयव प्रथम एकाच् तथा अजादि के द्वितीय एकाच् को द्वित्व होता है)।

सन्वत् — VII. iv. 93

(चङ्परक णि के परे रहते अङ्ग के अभ्यास को लघु धात्वक्षर परे रहते) सन् के समान कार्य होता है, (यदि अङ्ग के अक् प्रत्याहार का लोप न हुआ हो तो)।

सन्लिटोः— VII. iii. 57

(अभ्यास से उत्तर जि अङ्ग को) सन् तथा लिट् परे रहते (कवर्गादेश होता है)।

सपत्ने— IV. i. 145

(भ्रातृ शब्द से) सपत्न अर्थात् शत्रु वाच्य हो (तो व्यन् प्रत्यय होता है)।

सपत्न्यादिषु— IV. i. 35

सपत्न्यादियों में (जो पति शब्द उससे स्त्रीलिङ्ग ङीप् प्रत्यय तथा नकारादेश नित्य ही में हो जाता है)।

सपत्र...— V. iv. 61

देखें— **सपत्रनिष्पत्रात् V. iv. 61**

सपत्रनिष्पत्रात्— V. iv. 61

सपत्र तथा निष्पत्र प्रातिपदिकों से ('अपीडन' गम्यमान हो तो कृञ् के योग में डाच् प्रत्यय होता है)।

सपिण्डे— IV. i. 165

(भाई से अन्य) सात पीढ़ियों में से कोई (पद तथा आयु दोनों में बूढ़ा व्यक्ति जीवित हो तो पौत्रप्रभृति का जो अपत्य उसके जीते ही विकल्प से युवा संज्ञा होती है, पक्ष में गोत्रसंज्ञा)।

सपूर्वपदात्— V. i. 111

विद्यमान है पूर्वपद जिसके, (ऐसे प्रयोजन समानाधिकरणवाची प्रथमासमर्थ समापन प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में छ प्रत्यय होता है)।

सपूर्वस्य— IV. i. 34

जिसके पूर्व में कोई शब्द विद्यमान हो, (ऐसे पतिशब्दान्त अनुपसर्जन) प्रातिपदिक को (स्त्रीलिङ्ग में ङीप् प्रत्यय विकल्प से हो जाता है, ङीप् न होने पर नकारादेश भी नहीं होगा)।

सपूर्वात्— V. ii. 87

विद्यमान है पूर्व में कोई शब्द जिस (पूर्व) प्रातिपदिक के, ऐसे (प्रथमासमर्थ पूर्व) शब्द से (भी 'इसके द्वारा' अर्थ में इनि प्रत्यय होता है)।

सपूर्वायाः— VIII. i. 27

विद्यमान है पूर्व में कोई (पद) जिससे, ऐसे (प्रथमान्त पद) से उत्तर (षष्ठ्यन्त, चतुर्थ्यन्त तथा द्वितीयान्त युष्मद्, अस्मद् शब्दों को विकल्प से वाम्, नौ आदि आदेश नहीं होते)।

...सप्तति...— V. i. 58

देखें— **पंक्तिविंशतिo V. i. 58**

सप्तनः— V. i. 60

(परिमाण समानाधिकरणवाले) प्रथमासमर्थ सप्तन् प्रातिपदिक से (षष्ठ्यर्थ में अञ् प्रत्यय होता है, वेदविषय में, वर्ग अभिधेय होने पर)।

सप्तमी — II. i. 39

सप्तमीविभक्त्यन्त सुबन्त (शौण्ड इत्यादि समर्थ सुबन्तों के साथ विकल्प से समास को प्राप्त होता है और वह तत्पुरुष समास होता है)।

सप्तमी...— II. ii. 35

देखें— **सप्तमीविशेषणे II. ii. 35**

सप्तमी...— II. iii. 7

देखें— **सप्तमीपञ्चम्यौ II. iii. 7**

सप्तमी— II. iii. 9

(जिससे अधिक हो और जिसका ईश्वरवचन हो, उस कर्मप्रवचनीय के योग में) सप्तमी विभक्ति होती है।

सप्तमी— II. iii. 36

(अनभिहित अधिकरण कारक में और दूरार्थक तथा अन्तिकार्थक शब्दों से) सप्तमी विभक्ति होती है।

सप्तमी— II. iii. 43

(साधु और निपुण शब्द के योग में) सप्तमी विभक्ति होती है, (यदि प्रति का प्रयोग न हो और अर्चा गम्यमान हो तो)।

सप्तमी...— V. iii. 27

देखें— **सप्तमीपञ्चमीप्रथमाभ्यः V. iii. 27**

...सप्तमी...— VI. ii. 2

देखें— **तुल्यार्थतृतीयाo VI. ii. 2**

सप्तमी — VI. ii. 32

(सिद्ध, शुष्क, पक्व तथा बन्ध शब्दों के उत्तरपद रहते अकालवाची) सप्तम्यन्त पूर्वपद को (प्रकृतिस्वर होता है)।

सप्तमी... — VI. ii. 65
देखें— सप्तमीहारिणौ VI. ii. 65

सप्तमीपञ्चमीप्रथमाभ्यः— V. iii. 27
(दिशा, देश और काल अर्थों में वर्तमान) सप्तम्यन्त, पञ्चम्यन्त तथा प्रथमान्त (दिशावाची) प्रातिपदिकों से (स्वार्थ में अस्ताति प्रत्यय होता है)।

सप्तमीपञ्चम्यौ— II. iii. 7
(दो कारकों के बीच में जो काल और मार्ग, तद्वाची शब्दों में) सप्तमी और पञ्चमी विभक्ति होती है।

सप्तमीविशेषणे— II. ii. 35
सप्तम्यन्त पद तथा विशेषण (बहुव्रीहि समास में पूर्व प्रयुक्त होते हैं)।

सप्तमीस्थम्— III. i. 92
('धातोः' सूत्र के अधिकार में) सप्तमीविभक्ति में स्थित पद की (उपपद संज्ञा होती है)।

सप्तमीस्थात्— V. iv. 82
(प्रति शब्द से उत्तर उरस्-शब्दान्त प्रातिपदिक से समासान्त अच् प्रत्यय होता है, यदि वह उरस् शब्द) सप्तमी विभक्ति के अर्थवाला हो तो।

सप्तमीहारिणौ— VI. ii. 65
(हरण शब्द को छोड़कर धर्म्यवाची शब्दों के परे रहते) सप्तम्यन्त तथा हारिवाची पूर्वपद को (आद्युदात्त होता है)।
हारि = आकर्षक, मोहक।

सप्तम्यर्थे— I. i. 18
सप्तमी के अर्थ में ईकारान्त, ऊकारान्त शब्दरूप की प्रगृह्य संज्ञा होती है)।

सप्तम्याः—V. iii. 10
(किम्, सर्वनाम तथा बहु) सप्तम्यन्त प्रातिपदिकों से (त्रल् प्रत्यय होता है)।

सप्तम्याः— VI. ii. 152
सप्तम्यन्त से परे (उत्तरपद पुण्य शब्द को अन्तोदात्त होता है)।

सप्तम्याः— VI. iii. 8
(हलन्त तथा अकारान्त शब्द से उत्तर) सप्तमी विभक्ति का (उत्तरपद परे रहते अलुक् होता है, सञ्ज्ञाविषय में)।

सप्तम्याम्— III. ii. 87
सप्तम्यन्त उपपद रहते ('जन्' धातु से 'ड' प्रत्यय होता है, भूतकाल में)।

सप्तम्याम्— III. iv. 49
(तृतीयान्त तथा) सप्तम्यन्त उपपद हो तो (उपपूर्वक पीड, रुध तथा कर्ष् धातुओं से भी णमुल् प्रत्यय होता है)।

...सप्तम्योः— II. iv. 85
देखें— तृतीयासप्तम्योः II. iv. 85

...सप्तम्योः— V. iv. 56
देखें— द्वितीयासप्तम्योः V. iv. 56

सप्तानाम्— VI. iv. 125
(फण् आदि) सात धातुओं के (अवर्ण के स्थान में भी विकल्प से एत्त्व तथा अभ्यासलोप होता है; कित्, ङित् लिट् तथा सेट् थल् परे रहते)।

सभा— II. iv. 23
(नञ्कर्मधारयवर्जित राजा और अमनुष्य पूर्वपदवाला) सभा-शब्दान्त (तत्पुरुष नपुंसकलिंग में होता है)।

सभायाः— IV. iv. 105
(सप्तमीसमर्थ) सभा प्रातिपदिक से (साधु अर्थ में य प्रत्यय होता है)।

सभायाम्— VI. ii. 98
(नपुंसकलिङ्ग वाले समास में) सभा शब्द उत्तरपद रहते (पूर्वपद को अन्तोदात्त होता है)।

...सम्...— I. iii. 21
देखें — अनुसंपरिभ्यः I. iii. 21

सम्...— I. iii. 22
देखें— समवप्रविभ्यः I. iii. 22

...सम्...— I. iii. 30
देखें— निसमुपविभ्यः I. iii. 30

सम्...— I. iii. 46
देखें— सम्प्रतिंभ्याम् I. iii. 46

सम्...— I. iii. 575
देखें— समुदाङ्भ्यः I. iii. 75

सम्... — III. iii. 63
देखें— समुप० III. iii. 63

सम्...– III. iii. 69
देखें– समुदोः III. iii. 69

...सम्...– IV. i. 115
देखें– संख्यासंभद्र० IV. i. 115

सम्...– V. ii. 28
देखें– सम्प्रोदश्च V. ii. 28

...सम्...– V. iv. 79
देखें– अवसमन्धेभ्यः V. iv. 79

सम्...– VI. i. 132
देखें– सम्परिभ्याम् VI. i. 132

सम्...– VII. ii. 24
देखें– सन्निविभ्यः VII. ii. 24

...सम्...– VIII. i. 6
देखें– प्रसमुपोदः VIII. i. 6

...सम...– II. i. 30
देखें– पूर्वसदृशसमोनार्थ0 II. i. 30

...सम...– IV. iv. 91
देखें– तार्यतुल्य० IV. iv. 91

समः– I. iii. 29
सम् उपसर्ग से उत्तर (अकर्मक गम् तथा ऋच्छ् धातुओं से आत्मनेपद होता है)।

समः– I. iii. 53
सम् उपसर्ग से उत्तर (गृ धातु से आत्मनेपद होता है, स्वीकार करने अर्थ में)।

समः– I. iii. 54
(तृतीया विभक्ति से युक्त) सम्-पूर्वक (चर् धातु) से (आत्मनेपद होता है)।

समः– I. iii. 65
सम् उपसर्ग से उत्तर ('क्ष्णु तेजने' धातु से आत्मनेपद होता है)।

समः– VI. iii. 92
सम् को (समि आदेश होता है, व-प्रत्ययान्त अञ्चु धातु के उत्तरपद रहते)।

समः– VIII. iii. 5
सम् को (रु होता है, सुट् परे रहते, संहिता-विषय में)।

समः– VIII. iii. 25
सम् के (मकार को मकारादेश होता है, क्विप् -प्रत्ययान्त राज् धातु के परे रहते)।

समज...– III. iii. 99
देखें– समजनिषद० III. iii. 99

समजनिषदनिपतमनविदषुञ्शीङ्भृञिणः– III. iii. 99
(सञ्ज्ञाविषय में) सम्-पूर्वक अज, निपूर्वक सद, तथा पत, मन, विद, षुञ्, शीङ्, भृञ् तथा इण् धातुओं से (स्त्रीलिङ्ग में कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में क्यप् प्रत्यय होता है)।

...समम्– VI. ii. 121
देखें– कूलतीर० VI. ii. 121

...समय...– III. iii. 167
देखें– कालसमयवेलासु III. iii. 167

समयः– V. i. 103
(प्रथमासमर्थ) समय प्रातिपदिक से (षष्ठ्यर्थ में यथा-विहित ठञ् प्रत्यय होता है, यदि वह प्रथमांसमर्थ प्राति-पदिक प्राप्त समानाधिकरणवाला हो तो)।

समयात्– V. iv. 60
('बिताना' अर्थ गम्यमान हो तो) समय प्रातिपदिक से (भी डाच् प्रत्यय होता है, कृञ् के योग में)।

समर्थः– II. i. 1
(पदों की विधि) समर्थ= परस्पर सम्बद्ध अर्थ वाले (पदों की होती है)।

समर्थयोः– II. iii. 57
समानार्थक व्यवह और पण् धातुओं के (कर्म कारक में शेष विवक्षित होने पर षष्ठी विभक्ति होती है)।

समर्थयोः– III. iii. 152
समानार्थक (उत, अपि) उपपद हों तो (धातु से लिङ् प्रत्यय होता है)।

समर्थानाम्– IV. i. 82
[यहाँ से लेकर 'प्राग्दिशो विभक्तिः' (5.3.1) तक कहे जाने वाले प्रत्यय] समर्थों में (जो प्रथम, उनसे विकल्प से होते हैं)।

समर्थाभ्याम् – I. iii. 42
समान= तुल्य अर्थ वाले (प्र तथा उप उपसर्ग) से उत्तर (क्रम् धातु से आत्मनेपद होता है)।

समर्थाभ्याम् — VIII. i. 65

समान अर्थ वाले (एक तथा अन्य) शब्दों से युक्त (प्रथम तिङन्त को विकल्प से वेदविषय में अनुदात्त नहीं होता)।

...समर्याद...— VI. ii. 23

देखें— **सविधस्नीड० VI. ii. 23**

समवप्रविभ्यः— I. iii. 22

सम्, अव, प्र तथा वि उपसर्ग से उत्तर (स्था धातु से आत्मनेपद होता है)।

समवायान्— IV. iv. 43

(द्वितीयासमर्थ) समूहवाची प्रातिपदिकों से ('समवेत होता है'— अर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

समवाये— VI. i. 133

समुदाय अर्थ में (भी कृ धातु परे हो तो सम् तथा परि से उत्तर ककार से पूर्व सुट् का आगम होता है, संहिता के विषय में)।

...समाः— VIII. iii. 88

देखें— **सुपिसूतिसमाः VIII. iii. 88**

...समान...— II. i. 57

देखें— **पूर्वापरप्रथम० II. i. 57**

...समान...— IV. i. 30

देखें— **केवलमामक० IV. i. 30**

समानकर्तृकयोः— III. iv. 21

दो क्रियाओं का एक कर्ता होने पर (उनमें से पूर्वकाल में वर्तमान धातु से क्त्वा प्रत्यय होता है)।

समानकर्तृकात्— III. i. 4

(इच्छा क्रिया के कर्म का अवयव), जो इच्छा क्रिया का समानकर्तृक अर्थात् इष् धातु के साथ समान कर्ता वाला हो, उस (धातु) से (विकल्प करके सन् प्रत्यय होता है)।

समानकर्तृकेषु— III. iii. 158

समान है कर्ता जिसका, ऐसी (इच्छार्थक) धातुओं के उपपद रहते (धातु से तुमुन् प्रत्यय होता है)।

समानकर्मकाणाम्— III. iv. 48

(अनुप्रयुक्त धातु के साथ) समान कर्मवाली (हिंसार्थक) धातुओं से (भी तृतीयान्त उपपद रहते णमुल् प्रत्यय होता है)।

समानतीर्थे— IV. iv. 107

(सप्तमीसमर्थ) समानतीर्थ प्रातिपदिक से ('रहने वाला' अर्थ में यत् प्रत्यय होता है)।

समानपदे— VIII. iv. 1

(रेफ तथा षकार से उत्तर नकार को णकारादेश होता है) एक ही पद में।

समानपादे— VIII. iii. 9

(दीर्घ से उत्तर नकारान्त पद को अट् परे रहते पादबद्ध मन्त्रों में रु होता है, यदि निमित्त तथा निमित्ती दोनों) एक ही पाद में हों।

समानशब्दानाम्— IV. iii. 100

(बहुवचनविषय में वर्तमान जो जनपद के) समान ही (क्षत्रियवाची प्रातिपदिक, उनको जनपद की भांति ही सारे कार्य हो जाते हैं)।

समानस्य— VI. iii. 83

(वेदविषय में) समान शब्द को (स आदेश हो जाता है; मूर्धन्, प्रभृति, उदर्क उत्तरपद न हों तो)।

समानाधिकरण...— VI. iii. 45

देखें— **समानाधिकरणजातीययोः VI. iii. 45**

समानाधिकरणः— I. ii. 42

समान है अधिकरण = आश्रय जिनका, ऐसे पदों वाला (तत्पुरुष कर्मधारयसंज्ञक होता है)।

समानाधिकरणजातीययोः—VI. iii. 45

समानाधिकरण उत्तरपद रहते तथा जातीय प्रत्यय परे रहते (महत् शब्द को आकारादेश होता है)।

समानाधिकरणे—I. iv. 104

(युष्मद् शब्द के उपपद रहते) समान अभिधेय होने पर (युष्मद् शब्द का प्रयोग न हो या हो तो भी मध्यम पुरुष होता है)।

समानाधिकरणे — VI. iii. 33

(एक ही अर्थ में अर्थात् एक ही प्रवृतिनिमित्त को लेकर भाषित= कहा है पुँल्लिङ्ग अर्थ को जिस शब्द ने, ऐसे ऊङ्वर्जित भाषितपुंस्क स्त्री शब्द के स्थान में पुँल्लिङ्गवाची शब्द के समान रूप हो जाता है, पूरणी तथा प्रियादिवर्जित स्त्रीलिङ्ग) समानाधिकरण उत्तरपद परे हो तो।

समानाधिकरणे – VIII. i. 73

समान अधिकरण वाला (आमन्त्रित) पद परे हो, तो (उससे पूर्ववाला आमन्त्रित पद अविद्यमानवत् न हो)।

समानाधिकरणेन– II. i. 48

(पूर्वकाल, एक, सर्व, जरत्, पुराण, नव, केवल —ये सुबन्त शब्द) समानाधिकरण (सुबन्त) के साथ (विकल्प से समास को प्राप्त होते हैं और वह समास तत्पुरुषसंज्ञक होता है)।

...समानाधिकरणेन– II. ii. 11

देखें– पूरणगुणसुहितार्थ० II. ii. 11

समानाम्– I. iii. 10

बराबर सङ्ख्या वाले शब्दों के स्थान में (पीछे आने वाले शब्द यथाक्रम होते हैं)।

समानोदरे– IV. iv. 108

(सप्तमीसमर्थ) समानोदर प्रातिपदिक से ('शयन किया हुआ' अर्थ में यत् प्रत्यय होता है तथा समानोदर शब्द के ओकार को उदात्त होता है)।

समापनात्– V. i. 111

(विद्यमान है पूर्वपद जिसके, ऐसे प्रयोजन समानाधिकरणवाची प्रथमासमर्थ) समापन प्रातिपदिक से (षष्ठ्यर्थ में छ प्रत्यय होता है)।

समायाः– V. i. 84

(द्वितीयासमर्थ) समा प्रातिपदिक से ('सत्कारपूर्वक व्यापार', 'खरीदा हुआ', 'हो चुका' तथा 'होने वाला' — इन अर्थों में ख प्रत्यय होता है)।

समासः– II. i. 3

(प्रकृत सूत्र से आगे 'कडाराः कर्मधारये' से पूर्व विहित अव्ययीभावादि की) 'समास' संज्ञा होती है। यह अधिकार है।

समासत्तौ– III. iv. 50

सन्निकटता गम्यमान हो तो (तृतीयान्त तथा सप्तम्यन्त उपपद रहते धातु से णमुल् प्रत्यय होता है)।

समासस्य– VI. i. 27

समास का (अन्त उदात्त होता है)।

...समासाः– I. ii. 46

देखें– कृत्तद्धितसमासाः I. ii. 46

समासात्– V. iii. 106

(इवार्थ विषय है जिसका, ऐसे) समास में वर्तमान प्रातिपदिक से (भी इवार्थ में छ प्रत्यय होता है)।

समासान्ताः– V. iv. 68

(यहाँ से आगे कहे जाने वाले प्रत्यय) समास के एकदेश होंगे।

समासे– I. ii. 43

समासविधायक सूत्रों से (जो प्रथमा विभक्ति से निर्दिष्ट पद, वह उपसर्जनसंज्ञक होता है)।

समासे– I. iv. 8

(पति शब्द) समास में (ही घिसञ्ज्ञक होता है)।

समासे– VI. ii. 178

समासमात्र में (उपसर्ग के बाद उत्तरपद वन शब्द को अन्तोदात्त होता है)।

समासे– VII. i. 37

(नञ् से भिन्न पूर्व = अवयव है जिसमें, ऐसे) समास में (क्त्वा के स्थान में ल्यप् आदेश होता है)।

समासे– VIII. iii. 45

(अनुत्तरपदस्थ इस्, उस् के विसर्जनीय को) समासविषय में (नित्य ही षत्व होता है; कवर्ग, पवर्ग परे रहते)।

समासे– VIII. iii. 80

समास में (अङ्गुलि शब्द से उत्तर सङ्ग के सकार को मूर्धन्य आदेश होता है)।

समाहारः– I. ii. 31

समाहार= उदात्त, अनुदात्त उभयगुणमिश्रित (अच् की स्वरित संज्ञा होती है)।

...समाहारे– II. i. 50

देखें– तद्धितार्थोत्तरपद० II. i. 50

समाहारे– V. iv. 107

समाहार द्वन्द्व में वर्तमान (चवर्गान्त, दकारान्त तथा षकारान्त शब्दों से समासान्त टच् प्रत्यय होता है)।

समांसमाम् – V. ii. 12

(द्वितीयासमर्थ) समांसमाम् प्रातिपदिक से ('बच्चा देती है', अर्थ में ख प्रत्यय होता है)।

समि — III. ii. 7

सम्-उपसर्गपूर्वक (ख्या धातु से कर्म उपपद रहते 'क' प्रत्यय होता है)।

समि— III. iii. 23

सम्-पूर्वक (यु, द्रु तथा दु धातुओं से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

समि— III. iii. 31

(यज्ञविषय में) सम्पूर्वक (स्तु धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञाविषय में घञ् प्रत्यय होता है)।

समि— III. iii. 36

सम्पूर्वक (ग्रह् धातु से कर्तृभिन्न संज्ञा तथा भाव में मुट्ठी अर्थ होने पर में घञ् प्रत्यय होता है)।

समि— VI. iii. 93

(सम् को) समि आदेश होता है,(वप्रत्ययान्त अञ्चु धातु के उत्तरपद रहते)।

...समित...— IV. iv. 91
देखें— **तार्यतुल्य० IV. iv. 91**

...समीप...— II. i. 6
देखें— **विभक्तिसमीपसमृद्धि० II. i. 6**

समीपे— II. iv. 16

(अधिकरण के परिमाण का) समीप अर्थ कहना हो तो (द्वन्द्व समास में विकल्प से एकवद्भाव होता है)।

...समुच्चयेषु— I. iv. 95
देखें— **पदार्थसम्भावनान्ववसर्ग० I. iv. 95**

समुच्चारणे— I. iii. 48

(स्पष्ट वाणी वालों के) सहोच्चारण = एक साथ उच्चारण करने अर्थ में (वर्तमान वद् धातु से आत्मनेपद होता है)।

समुदाङ्भ्यः— I. iii. 75

सम्, उत् एवम् आङ् उपसर्ग से उत्तर (यम् धातु से ग्रन्थ-विषयक प्रयोग न हो तो क्रियाफल के कर्ता को मिलने पर आत्मनेपद होता है)।

समुदोः— III. iii. 69

सम्, उत् पूर्वक (अज् धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में, समुदाय से पशुविषय प्रतीत हो तो अप् प्रत्यय होता है)।

समुद्र...— IV. iv. 118
देखें— **समुद्राभ्रात् IV. iv. 118**

समुद्राभ्रात्— IV. iv. 118

(सप्तमीसमर्थ) समुद्र और अभ्र प्रातिपदिकों से (वेद-विषयक भवार्थ में घ प्रत्यय होता है)।

समुपनिविषु— III. iii. 63

सम्, उप, नि, वि उपसर्गपूर्वक (तथा विना उपसर्ग भी यम् धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में विकल्प से अप् प्रत्यय होता है,(पक्ष में घञ्)।

समूल...— III. iv. 36
देखें— **समूलाकृतजीवेषु III. iv. 36**

...समूलयोः— III. iv. 34
देखें — **निमूलसमूलयोः III. iv. 34**

समूलाकृतजीवेषु— III. iv. 36

समूल, अकृत तथा जीव कर्म उपपद हों तो (यथासङ्ख्य करके हन्, कृञ् तथा ग्रह् धातुओं से णमुल् प्रत्यय होता है)।

समूहः— IV. ii. 36

(समर्थों में जो षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिक, उससे) समूह अर्थ को कहना हो (तो यथाविहित प्रत्यय होता है)।

समूहवत्— V. iv. 22

('बहुत' अर्थ को कहने में प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से) 'तस्य समूहः' IV. ii. 36 के अधिकार में कहे हुए प्रत्ययों के समान प्रत्यय होते हैं (तथा मयट् प्रत्यय भी होता है)।

समूहे— IV. iv. 140

(वसु प्रातिपदिक से) समूह (तथा मयट्) के अर्थ में (यत् प्रत्यय होता है, वेदविषय में)।

...समूह्याः— III. i. 131
देखें— **परिचाय्योपचाय्य० III. i. 131**

...समृद्धि...— II. i. 7
देखें— **विभक्तिसमीपसमृद्धि० II. i. 7**

...सम्पत्ति...— II. i. 7
देखें— **विभक्तिसमीपसमृद्धि० II. i. 7**

सम्पदा — V. iv. 53

('अभिव्याप्ति' गम्यमान हो तो कृ, भू तथा अस् धातु के योग में तथा) सम्-पूर्वक पद् धातु के योग में (भी विकल्प से साति प्रत्यय होता है)।

सम्पद्यकर्तरि — V. iv. 50

(कृ, भू तथा अस् धातु के योग में अभूततद्भाव गम्यमान होने पर) सम् पूर्वक पद् धातु के कर्ता में (वर्तमान प्रातिपदिक से च्वि प्रत्यय होता है)।

सम्परिपूर्वात्— V. i. 91

(द्वितीयासमर्थ) सम् तथा परि पूर्व वाले (वत्सरशब्दान्त प्रातिपदिक से 'सत्कारपूर्वक व्यापार', 'खरीदा हुआ', 'हो चुका' तथा 'होने वाला' —इन अर्थों में ख तथा छ प्रत्यय होते हैं)।

सम्परिभ्याम्— VI. i. 131

(भूषण अर्थ में) सम् तथा परि उपसर्ग से उत्तर (कृ धातु के परे रहते, ककार से पूर्व सुट् का आगम होता है, संहिता के विषय में)।

सम्पादि...— VI. ii. 155
देखें— संपाद्यर्ह० VI. ii. 155

सम्पादिनि— V. i. 98

(तृतीयासमर्थ प्रातिपदिक से) 'शोभित किया' अर्थ में (यथाविहित ठञ् प्रत्यय होता है)।

सम्पाद्यर्हहितालमर्थाः— VI. ii. 155

(गुण के प्रतिषेध अर्थ में वर्तमान नञ् से उत्तर) संपादि, अर्ह, हित, अलम् अर्थ वाले (तद्धितप्रत्ययान्त उत्तरपद को अन्तोदात्त होता है)।

सम्पृच...— III. ii. 142
देखें— सम्पृचानुरुध० III. ii. 142

सम्पृचानुरुधाङ्यमाङ्यसपरिसृसंसृजपरिदेविसंज्वरपरिक्षिपपरिरटपरिवदपरिदहपरिमुहदुषद्विषद्रुहदुहयुजाक्रीडविविचत्यजरजभजातिचरापचरामुषाभ्याहनः— III. ii. 142

समपूर्वक पृची सम्पर्के, अनुपूर्वक रुधिर् आवरणे, आङ्पूर्वक यम उपरमे, आङ्पूर्वक यसु प्रयत्ने, परिपूर्वक सृ गतौ, समपूर्वक सृज विसर्गे, परिपूर्वक देवृ प्रयत्ने, सम् पूर्वक ज्वर रोगे, परिपूर्वक क्षिप प्रेरणे, परिपूर्वक रट परिभाषणे, परिपूर्वक वद, परिपूर्वक दह भस्मीकरणे, परिपूर्वक मुह वैचित्ये, दुष वैकृत्ये, द्विष अप्रीतौ, द्रुह जिघांसायाम्, दुह प्रपूरणे, युजिर् योगे अथवा युज समाधौ, आङ्पूर्वक क्रीड विहारे, विपूर्वक विचिर् पृथग्भावे, त्यज हानौ, रञ्ज रागे, भज सेवायाम्, अतिपूर्वक चर गतौ, अपपूर्वक चर, मुष स्तेये, अभि, आङ् पूर्वक हन् —इन धातुओं से (भी तच्छीलादि कर्ता हों तो वर्तमान काल में घिनुण् प्रत्यय होता है)।

सम्प्रतिभ्याम्— I. iii. 46

सम् एवं प्रति उपसर्ग से युक्त (ज्ञा धातु से आत्मनेपद होता है, उत्कण्ठा-पूर्वक स्मरण अर्थ न हो तो)

सम्प्रदानम्— I. iv. 32

(करणभूत कर्म के द्वारा जिसको अभिप्रेत किया जाये, वह कारक) सम्प्रदानसंज्ञक होता है।

सम्प्रदानम्— I. iv. 44

(परिक्रियण में जो साधकतम कारक, उसकी विकल्प से) सम्प्रदान संज्ञा होती है।

सम्प्रदाने— II. iii. 13

(अनभिहित) सम्प्रदान कारक में (चतुर्थी विभक्ति होती है)।

सम्प्रदाने— III. iv. 73

(दाश और गोघ्न कृदन्त शब्द) सम्प्रदान कारक में (निपातन किये जाते हैं)।

...सम्प्रश्न...— III. iii. 161
देखें— विधिनिमन्त्रण० III. iii. 161

सम्प्रसारणम्— I. i. 44

(यण् के स्थान में हुए या होने वाले इक् की) संप्रसारण संज्ञा होती है)।

सम्प्रसारणम्— III. iii. 72

(नि, अभि, उप तथा वि पूर्वक ह्वेञ् धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में अप् प्रत्यय होता है तथा ह्वेञ् को) सम्प्रसारण भी होता है।

सम्प्रसारणम्— V. ii. 55

(षष्ठीसमर्थ त्रि प्रातिपदिक से 'पूरण' अर्थ में तीय प्रत्यय होता है तथा प्रत्यय के साथ-साथ त्रि को) सम्प्रसारण भी हो जाता है।

सम्प्रसारणम् — VI. i. 13

(ष्यङ् को) सम्प्रसारण होता है, (यदि पुत्र तथा पति शब्द उत्तरपद हों तो, तत्पुरुष समास में)।

सम्प्रसारणम् — VI. i. 32

(सन्परक, चङ्परक णि के परे रहते ह्वेञ् धातु को) सम्प्रसारण हो जाता है

सम्प्रसारणम्— VI. i. 37

(सम्प्रसारण के परे रहते) सम्प्रसारण नहीं होता है।

सम्प्रसारणम्— VI. iv. 131

(भसञ्ज्ञक वस्वन्त अङ्ग को) सम्प्रसारण होता है।

सम्प्रसारणम्— VII. iv. 67

('द्युत दीप्तौ' तथा ण्यन्त स्वपि अङ्ग के अभ्यास को) सम्प्रसारण होता है।

सम्प्रसारणस्य— VI. iii. 138

सम्प्रसारणान्त (पूर्वपद) के (अण् को उत्तरपद परे रहते दीर्घ होता है)।

सम्प्रसारणात्— VI. i. 104

सम्प्रसारणसञ्ज्ञक वर्ण से उत्तर (अच् परे हो तो भी पूर्व, पर के स्थान में पूर्वरूप एकादेश होता है)।

सम्प्रसारणे— VI. i. 37

सम्प्रसारण के परे रहते (सम्प्रसारण नहीं होता है)।

सम्प्रोदश्च— V. ii. 29

सम्, प्र, उत् तथा वि —इन उपसर्ग प्रातिपदिकों से (कटच् प्रत्यय होता है)।

सम्बुद्धि— II. iii. 48

(आमन्त्रित प्रथमा के एकवचन की) सम्बुद्धि संज्ञा होती है।

सम्बुद्धेः— V. i. 68

(एङन्त तथा ह्रस्वान्त प्रातिपदिक से उत्तर हल् का लोप होता है, यदि वह हल्) सम्बुद्धि का हो तो।

सम्बुद्धौ— I. i. 16

(आचार्य शाकल्य के अनुसार, वैदिकेतर 'इति' शब्द के परे) 'सम्बुद्धि' संज्ञा के निमित्तभूत (ओकार की प्रगृह्य संज्ञा होती है)।

सम्बुद्धौ— I. ii. 33

(दूर से) सम्बोधन = बुलाने में (वाक्य एकश्रुति हो जाता है)।

सम्बुद्धौ— VII. i. 11

सम्बुद्धि परे रहते (चतुर् तथा अनडुह् अङ्गों को (अम् आगम होता है)।

सम्बुद्धौ— VIII. iii. 1

(मत्वन्त तथा वस्वन्त पद को संहिता में) सम्बुद्धि परे रहते (वेदविषय में रु आदेश होता है)।

सम्बुद्धौ— VII. iii. 107

सम्बुद्धि परे रहते (भी आबन्त अङ्ग को सकारादेश होता है)।

...सम्बुद्ध्योः— VIII. ii. 8

देखें— **ङिसम्बुद्ध्योः VIII. ii. 8**

सम्बोधने— II. iii. 47

सम्बोधने = आभिमुख्यकरण में (भी प्रथमा विभक्ति होती है)।

सम्बोधने— III. ii. 125

सम्बोधन विषय में (भी धातु से लट् के स्थान में शतृ, शानच् आदेश होते हैं)।

सम्भवति— V. i. 51

(द्वितीयासमर्थ प्रातिपदिक से) 'सम्भव है' ('अवहरण करता है', और 'पकाता है' अर्थों में यथाविहित प्रत्यय होता है)।

...सम्भावन...— I. iv. 95

देखें— **पदार्थसम्भावनान्ववसर्ग० I. iv. 95**

सम्भावनवचने— III. iii. 155

सम्भावन अर्थ के कहने वाला (धातु) उपपद हो तो (यत् शब्द उपपद न होने पर सम्भावन अर्थ में वर्तमान धातु से विकल्प से लिङ् प्रत्यय होता है, यदि अलम् शब्द का अप्रयोग सिद्ध हो)।

सम्भावने— III. iii. 154

(पर्याप्तिविशिष्ट) सम्भावन अर्थ में वर्तमान (धातु से लिङ् प्रत्यय होता है, यदि अलम् शब्द का अप्रयोग सिद्ध हो रहा हो)।

सम्भूते — IV. iii. 41

(सप्तमीसमर्थ प्रातिपदिक से) सम्भव अर्थ में (यथाविहित प्रत्यय होता है)।

...सम्भ्यः – III. ii. 180
देखें– विप्रसम्भ्यःIII. ii. 180

...सम्भ्याम्– V. iv. 129
देखें– प्रसम्भ्याम् V. iv. 129

...सम्मति...– VIII. i. 8
देखें– असूयासम्मति० VIII. i. 8

...सम्मति...– VIII. ii. 103
देखें– असूयासम्मति० VIII. ii. 103

...सम्मदौ– III. iii. 68
देखें– प्रमदसम्मदौ III. iii. 68

सम्मानन...– I. iii. 36
देखें– सम्माननोत्सञ्जनाचार्य० I. iii. 36

सम्मानन...– I. iii. 70
देखें– सम्माननशालीनीकरणयोः I. iii. 70

सम्माननशालीनीकरणयोः– I. iii. 70

सम्मानन = पूजन, शालीनीकरण = दबाना (तथा प्रलम्भन= ठगना) अर्थ में (ण्यन्त ली धातु से आत्मनेपद होता है)।

सम्माननोत्सञ्जनाचार्यकरणज्ञानभृतिविगणनव्ययेषु– I. iii. 36

सम्मानन= पूजा, उत्सञ्जन = उछालना, आचार्यकरण = आचार्यक्रिया, ज्ञान = तत्त्वनिश्चय, भृति =वेतन, विगणन = ऋणादि का चुकाना, व्यय = धर्मादि कार्यों में व्यय करना —इन अर्थों में वर्तमान (णीञ् धातु से आत्मनेपद होता है)।

...सम्मितेषु– IV. iv. 91
देखें– तार्यतुल्य० IV. iv. 91

सम्मितौ– IV. iv. 135

(तृतीयासमर्थ सहस्र प्रातिपदिक से) तुल्य अभिधेय हो तो (घ प्रत्यय होता है)।

...सम्मुखस्य– V. ii. 6
देखें– यथामुखसम्मुखस्य V. ii. 6

...सयूथ...– IV. iv. 114
देखें– सगर्भसयूथ० IV. iv. 114

...सयोः– VII. iii. 45
देखें– यासयोः VII. iii. 45

...सर...– VII. ii. 9
देखें– तितुत्र० VII. ii. 9

...सरजस...– V. iv. 77
देखें– अचतुर० V. iv. 77

...सरसाम्– V. iv. 94
देखें– अनोश्माय:० V. iv. 94

सरीसृपतम्– VII. iv. 65

सरीसृपतम् शब्द वेदविषय में निपातन किया जाता है।

सरूपाणाम्– I. ii. 63

समान रूप वाले शब्दों में से (एक शेष रह जाता है, अन्य हट जाते हैं, एक विभक्ति के परे रहते)।

सरूपे– II. ii. 27

समान रूप वाले से (सप्तम्यन्त तथा तृतीयान्त सुबन्त 'इदम्' = यह, इस अर्थ में समास को प्राप्त होते हैं और वह समास बहुव्रीहिसञ्ज्ञक होता है)।

...सर्ग...– I. iii. 38
देखें– वृत्तिसर्गतायनेषु I. iii. 38

सर्त्ति...– III. i. 56
देखें– सर्त्तिशास्त्य० III. i. 56

...सर्त्ति...– VII. iii. 78
देखें– पाघ्राध्मा० VII. iii. 78

...सर्त्तिभ्यः– III. ii. 163
देखें– इण्नश० III. ii. 163

सर्तिशास्त्यर्तिभ्यः– III. i. 56

सृ = गत्यर्थक, शासु तथा ऋ धातु से उत्तर (भी च्लि को अङ् आदेश होता है, कर्तृवाची लुङ् परस्मैपद परे रहते)।

सर्तेः– III. ii. 18

सृ धातु से (पुरस्, अग्रतस् और अग्र उपपद रहते 'ट' प्रत्यय होता है)।

सर्त्तेः– III. iii. 71

(प्रजन अर्थ में वर्तमान) सृ धातु से (अप् प्रत्यय होता है, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में)।

...सर्व...– II. i. 48
देखें– पूर्वकालैकसर्वजरत्० II. i. 48

सर्व... – III. ii. 42
देखें– सर्वकूलाभ्र० III. ii. 42

...सर्व...– III. ii. 48

देखें– अन्तात्यन्त० III. ii. 48

सर्व...– IV. iv. 142

देखें– सर्वदेवात् IV. iv. 142

सर्व...– V. i. 10

देखें– सर्वपुरुषाभ्याम् V. i. 10

सर्व...– V. iii. 15

देखें– सर्वैकान्य० V. iii. 15

सर्व...– V. iv. 87

देखें– सर्वैकदेश० V. iv. 87

...सर्व...– VII. iii. 12

देखें– सुसर्वार्धात् VII. iii. 12

सर्वकूलाभ्रकरीषेषु– III. ii. 42

सर्व, कूल, अभ्र, करीष —इन (कर्मों) के उपपद रहते (कष् धातु से खच् प्रत्यय होता है)।

सर्वचर्मणः– V. ii. 5

(तृतीयासमर्थ) सर्वचर्मन् प्रातिपदिक से ('किया हुआ' अर्थ में ख तथा खञ् प्रत्यय होते हैं)।

सर्वत्र– IV. i. 18

(अनुपर्सजन यञन्त लोहित से लेकर कत पर्यन्त प्रातिपदिकों से स्त्रीलिङ्ग -विषय में ष्फ प्रत्यय होता है,) सब आचार्यों के मत में (और वह तद्धितसंज्ञक होता है)।

सर्वत्र– IV. iii. 22

(हेमन्त प्रातिपदिक से) वैदिक तथा लौकिक प्रयोग में (अण् तथा ठञ् प्रत्यय होते है तथा उस अण् के परे रहने पर हेमन्त शब्द के तकार का लोप भी होता है)।

सर्वत्र– VI. i. 118

सर्वत्र = छन्द तथा भाषाविषय दोनों में (गो शब्द के पदान्त एङ् को विकल्प से अकार परे रहते प्रकृतिभाव होता है)।

सर्वत्र– VIII. iv. 50

(शाकल्य आचार्य के मत में) सर्वत्र अर्थात् त्रिप्रभृति अथवा अत्रिप्रभृति सर्वत्र (द्वित्व नहीं होता)।

सर्वदेवात्– IV. iv. 142

सर्व और देव प्रातिपदिकों से (वेदविषय में स्वार्थ में तातिल् प्रत्यय होता है)।

सर्वधुरात्– IV. iv. 78

(द्वितीयासमर्थ) सर्वधुर प्रातिपदिक से ('ढोता है' अर्थ में ख प्रत्यय होता है)।

...सर्वनाम...– V. iii. 2

देखें– किंसर्वनाम० V. iii. 2

सर्वनामस्थानम्– I. i. 42

('शि' की) सर्वनामस्थान संज्ञा होती है।

...सर्वनामस्थानयोः– VII. iii. 110

देखें– ङिसर्वनामस्थानयोः VII. iii. 110

सर्वनामस्थाने– VI. i. 193

(पथिन् तथा मथिन् शब्द को) सर्वनामस्थान = नपुंसकलिंगभिन्न सुट् [सु, औ, जस्, अम्, औट्] परे रहते (आदि उदात्त होता है)।

सर्वनामस्थाने– VI. iv. 8

(सम्बुद्धिभिन्न) सर्वनामस्थान विभक्ति परे रहते (भी नकारान्त अङ्ग की उपधा को दीर्घ हो जाता है)।

सर्वनामस्थाने– VII. i. 70

(धातुवर्जित उक् इत्सञ्ज्ञक है जिनका, ऐसे अङ्ग को तथा अञ्चु धातु को) सर्वनामस्थान परे रहते (नुम् आगम होता है)।

सर्वनामस्थाने– VII. i. 86

(पथिन्, मथिन् तथा ऋभुक्षिन् अङ्गों के इक् के स्थान में अकारादेश होता है) सर्वनामस्थान परे रहते।

सर्वनामानि– I. i. 26

(सर्वादिगणपठित शब्दों की) सर्वनाम संज्ञा होती है।

सर्वनाम्नः– II. III. 27

(हेतु शब्द के प्रयोग में तथा हेतु के विशेषणवाची) सर्वनामसञ्ज्ञक शब्द के (प्रयोग में हेतु द्योतित होने पर तृतीया और षष्ठी विभक्ति होती है)।

सर्वनाम्नः– VI. iii. 10

सर्वनामसञ्ज्ञक शब्दों को (आकारादेश होता है; दृक्, दृश, तथा वतुप् परे रहते)।

सर्वनाम्नः – VII. i. 14

(अकारान्त) सर्वनाम अङ्ग से उत्तर ('ङे' के स्थान में स्मै आदेश होता है)।

सर्वनाम्नः — VII. i. 52

(अवर्णान्त) सर्वनाम से उत्तर (आम् को सुट् का आगम होता है)।

सर्वनाम्नः— VII. iii. 115

(आबन्त) सर्वनाम अङ्ग से उत्तर (ङित् प्रत्यय को स्याट् आगम होता है तथा उस आबन्त सर्वनाम को ह्रस्व भी हो जाता है)।

...सर्वनाम्नाम्— V. iii. 72
देखें— अव्ययसर्वनाम्नाम् V. iii. 72

सर्वपुरुषाभ्याम्— V. i. 10

(चतुर्थीसमर्थ) सर्व तथा पुरुष प्रातिपदिकों से ('हित' अर्थ में यथासंख्य ण तथा ढञ् प्रत्यय होते हैं)।

सर्वभूमि...— V. i. 40
देखें— सर्वभूमिपृथिवीभ्याम् V. i. 40

सर्वभूमिपृथिवीभ्याम्— V. i. 40

(षष्ठीसमर्थ) सर्वभूमि तथा पृथिवी प्रातिपदिकों से (यथासङ्ख्य करके अण् तथा अञ् प्रत्यय होते हैं 'कारण' अर्थ में, यदि वह कारण संयोग वा उत्पात हो तो)।

सर्वम्— IV. iii. 100

(बहुवचनविषय में वर्तमान जो जनपद के समान ही क्षत्रियवाची प्रातिपदिक, उनको जनपद की भांति ही) प्रकृति, प्रत्यय आदि सारे कार्य (हो जाते हैं)।

सर्वम्— VI. ii. 93

(गुणों की सम्पूर्णता अर्थ में वर्तमान पूर्वपद) सर्व शब्द को (अन्तोदात्त होता है)।

सर्वम्— VI. iii. 105

('उत्तरपदस्य' VII. ii. 10 सूत्र के अधिकार में कही हुई जो वृद्धि, उस वृद्धि किये हुये शब्द के परे रहते) सर्व शब्द (तथा दिक् शब्द पूर्वपद को अन्तोदात्त होता है)।

सर्वम्— VIII. i. 18

(यहाँ से आगे 'तिङि चोदात्तवति' VIII. i. 71 तक जो कुछ कहेंगे, वहाँ पाद के आदि में न हो तो) सारा (अनुदात्त होता है, ऐसा अधिकार जानना चाहिये)।

...सर्वयोः— III. ii. 41
देखें— पूःसर्वयोः III. ii. 41

...सर्वलोकात्— V. i. 43
देखें— लोकसर्वलोकात् V. i. 43

सर्वस्य— I. i. 54

(अनेकाल् एवं शिदादेश) सम्पूर्ण (षष्ठीनिर्दिष्ट) के स्थान में हो ।

सर्वस्य— V. iii. 6

सर्व शब्द के स्थान में (स आदेश विकल्प से होता है, दकारादि प्रत्यय के परे रहते)।

सर्वस्य— VI. i. 185

(सुप् परे रहते) सर्व शब्द के (आदि को उदात्त होता है)।

सर्वस्य— VIII. i. 1

(यहाँ से आगे 'पदस्य' VIII. i. 16 तक सूत्र से पहले-पहले जो भी कहेंगे, वहाँ) सब के स्थान में (द्वित्व होता है, ऐसा अर्थ होगा। यह अधिकारसूत्र है)।

सर्वादीनि — I. i. 27

सर्वादिगणपठित शब्दों (की सर्वनाम संज्ञा होती है)।

सर्वादेः— V. ii. 7

सर्व शब्द आदि में है जिनके, ऐसे (द्वितीयासमर्थ पथिन्, अङ्ग, कर्म, पत्र तथा पात्र प्रातिपदिकों से 'व्याप्त होता है' अर्थ में ख प्रत्यय होता है)।

...सर्वान्न...— V. ii. 9
देखें— अनुपदसर्वान्न० V. ii. 9

सर्वान्यत्— VIII. i. 31

(गति अर्थ वाले धातुओं के लोट् लकार से युक्त लृडन्त तिङन्त को अनुदात्त नहीं होता, यदि कारक) सारा अन्य (न हो तो)।

सर्वेभ्यः— III. iii. 20

सब धातुओं से (परिमाण की आख्या गम्यमान हो तो घञ् प्रत्यय होता है)।

सर्वेषाम् — VI. iii. 48

सबको अर्थात् द्वि, अष्टन् तथा त्रि को (जो कुछ भी कह आए हैं, वह चत्वारिंशत् आदि सङ्ख्या उत्तरपद रहते बहुव्रीहि समास तथा अशीति को छोड़कर विकल्प करके हो)।

सर्वेषाम् — VII. iii. 100

(अद् अङ्ग से उत्तर हलादि अपृक्त सार्वधातुक को) सभी आचार्यों के मत में (अट् आगम होता है)।

सर्वेषाम्— VIII. iii. 22

(भो, भगो, अघो तथा अवर्ण पूर्ववाले पदान्त यकार का हल् परे रहते) सब आचार्यों के मत में (लोप होता है)!

सर्वैः— I. ii. 72

(त्यदादि शब्दरूप) सबके साथ अर्थात् त्यदादियों के साथ या त्यदादि से अन्यों के साथ भी (नित्य ही शेष रह जाता है, अन्य हट जाते हैं)।

सर्वैकान्यकिंयत्तदः— V. iii. 15

(सप्तम्यन्त) सर्व, एक, अन्य, किम्, यत् तथा तत् प्रातिपदिकों से (काल अर्थ में दा प्रत्यय होता है)।

सलोपः— III. i. 11

(उपमानवाची सुबन्त कर्ता से आचार अर्थ में विकल्प से क्यङ् प्रत्यय होता है तथा सकारान्त शब्दों के) सकार का लोप (भी विकल्प से) होता है।

सलोपः— VII. ii. 79

(सार्वधातुक में लिङ् लकार के अन्त्य) सकार का लोप होता है।

...सवनादीनाम्— VIII. iii. 110

देखें— रपरसृपि० VIII. iii. 110

सवर्णम्— I. i. 9

(मुख में होने वाले स्थान और प्रयत्न तुल्य हों जिनके, ऐसे वर्णों की परस्पर) सवर्ण संज्ञा होती है।

...सवर्ण...— I. i. 57

देखें— पदान्तद्विर्वचनवरे० I. i. 57

सवर्णस्य— I. i. 68

(अण् एवं उदित्) अपने सवर्ण का (भी ग्रहण कराते हैं, प्रत्यय को छोड़कर)।

सवर्णे— VI. i. 97

(अक् प्रत्याहार से उत्तर) सवर्ण (अच्) परे हो तो (पूर्व और पर के स्थान में दीर्घ एकादेश होता है, संहिता के विषय में)।

सवर्णे— VIII. iv. 64

(हल् से उत्तर झर् का विकल्प से लोप होता है) सवर्ण (झर्) परे रहते।

सवाभ्याम्— III. iv. 91

सकार, वकार से उत्तर (लोट्-सम्बन्धी एकार के स्थान में यथासङ्ख्य करके व और अम् आदेश हो जाते हैं)।

सविध...— VI. ii. 23

देखें— सविधसनीड० VI. ii. 23

सविधसनीडसमर्यादसवेशसदेशेषु— VI. ii. 23

सविध, सनीड, समर्याद, सवेश, सदेश —इन शब्दों के उत्तरपद रहते (सामीप्यवाची तत्पुरुष समास में पूर्वपद को प्रकृतिस्वर होता है)।

...सवेश...— VI. ii. 23

देखें— सविधसनीड० VI. ii. 23

...सव्य...— VIII. iii. 97

देखें— अम्बाम्ब० VIII. iii. 97

ससजुषः— VIII. ii. 66

सकारान्त पद तथा सजुष् पद को (रु आदेश होता है)।

ससूव— VII. iv. 74

ससूव (यह शब्द वेदविषय में निपातन किया जाता है)।

सस्थानेन— V. iv. 10

(स्थानशब्दान्त प्रातिपदिकों से विकल्प से छ प्रत्यय होता है) यदि सस्थान= सदृश व्यक्ति से स्थानशब्दान्त प्रतिपाद्य अर्थवत् हो तो।

सस्नौ— V. iv. 40

(प्रशंसा-विशिष्ट अर्थ में वर्तमान मृद् प्रातिपदिक से) स तथा स्न प्रत्यय होते हैं।

सस्य— VIII. ii. 24

(संयोग अन्त वाले रेफ से उत्तर) सकार का (लोप होता है)।

सस्येन— V. ii. 68

तृतीयासमर्थ सस्य प्रातिपदिक से ('सब ओर से उत्पन्न' अर्थ में कन् प्रत्यय होता है)।

सह — I. i. 60

(आदिवर्ण अन्त्य इत्संज्ञक वर्ण के) साथ (मिलकर दोनों के मध्य में स्थित वर्णों का तथा अपने स्वरूप का भी ग्रहण कराता है)।

सह — II. i. 4

(सुबन्त के) साथ (समर्थ सुबन्त का समास होता है) यह अधिकार है।

सह— II. ii. 28

(तुल्य योग में वर्तमान 'सह' अव्यय तृतीयान्त सुबन्त) के साथ (समास को प्राप्त होता है और वह समास बहुव्रीहिसंज्ञक होता है)।

...सह...— III. ii. 136

देखें— अलंकृञ्० III. ii. 136

...सह...— III. ii. 184

देखें— अर्त्तिलूधू० III. ii. 184

सह...— IV. i. 57

देखें— सहनञ्विद्यमान० IV. i. 57

...सह...— VII. ii. 48

देखें— इषसह० VII. ii. 48

...सह...— VIII. iii. 70

देखें— सेवसित० VIII. iii. 70

सहः— III. ii. 63

सह् धातु से (सुबन्त उपपद रहते छन्दविषय में 'ण्वि' प्रत्यय होता है)।

सहनञ्विद्यमानपूर्वत्— IV. i. 57

सह, नञ्, विद्यमान शब्द पूर्व में हो (और स्वाङ्गवाची उपसर्जन अन्त में हो जिनके, उन प्रातिपदिकों से भी स्त्रीलिङ्ग में ङीष् प्रत्यय नहीं होता)।

सहयुक्ते— II. iii. 19

'सह' = साथ अर्थ के योग में (अप्रधान में तृतीया विभक्ति होती है)।

...सहस्...— IV. iv. 27

देखें— ओजःसहोम्भसा IV. iv. 27

...सहस्...— VI. iii. 3

देखें— ओजःसहोम्भस्० VI. iii. 3

सहस्य— VI. iii. 77

सह शब्द को (स आदेश होता है, उत्तरपद परे रहते; सञ्ज्ञाविषय में)।

सहस्य— VI. iii. 94

सह शब्द को (सध्रि आदेश होता है, वप्रत्ययान्त अञ्चु के उत्तरपद रहते)।

...सहस्र...— V. i. 27

देखें— शतमानविंश० V. i. 27

...सहस्रान्तात्— V. ii. 119

देखें— शतसहस्रान्तात् V. ii. 119

...सहस्राभ्याम्— V. i. 29

देखें— कार्षापणसहस्राभ्याम् V. i. 29

...सहस्राभ्याम्— V. ii. 102

देखें— तपःसहस्राभ्याम् V. ii. 102

सहस्रेण— IV. iv. 135

(तृतीयासमर्थ) सहस्र प्रातिपदिक से (तुल्य अभिधेय होने पर घ प्रत्यय होता है)।

...सहाम्— VIII. iii. 116

देखें— स्तम्भुसिवुसहाम् VIII. iii. 116

...सहि...— III. ii. 46

देखें— भृतृवृ० III. ii. 46

सहि...— VI. iii. 111

देखें— सहिवहोः VI. iii. 111

...सहि...— VI. iii. 115

देखें— नहिवृति० VI. iii. 115

सहिवहोः— VI. iii. 111

(ढकार और रेफ का लोप होने पर) सह् तथा वह् धातु के (अवर्ण को ओकारादेश होता है)।

...सहीनाम्— VIII. iii. 62

देखें— स्विदिस्वदिसहीनाम् VIII. iii. 62

सहे— III. ii. 86

सह शब्द उपपद रहते (भी 'युध्' और 'कृञ्' धातु से 'क्वनिप्' प्रत्यय होता है, भूतकाल में)।

सहेः— VIII. iii. 56

सह् धातु के (साड् रूप के सकार को मूर्धन्य आदेश होता है)।

सहेः— VIII. iii. 109

(पृतना तथा ऋत शब्द से उत्तर भी) सह् धातु के (सकार को वेदविषय में मूर्धन्य आदेश होता है)।

...सहोः — III. i. 99

देखें— शकिसहोः III. i. 99

...सहोः — III. ii. 41
देखें— दारिसहोः III. ii. 41

संयसः— III. i. 72

सम् उपसर्गपूर्वक यस् धातु से (भी श्यन् प्रत्यय विकल्प से होता है, कर्तृवाची सार्वधातुक परे रहते)।

...संयुक्त...— VI. ii. 133
देखें— आचार्यराज० VI. ii. 133

संयुक्ते— IV. iv. 90

(तृतीयासमर्थ गृहपति शब्द से) संयुक्त= जुड़ा अर्थ में (ञ्य प्रत्यय होता है, सञ्ज्ञाविषय में)।

संयोग...— V. i. 37
देखें— संयोगोत्पातौ V. i. 37

संयोगः— I. i. 7

(व्यवधानरहित = जिनके बीच में अच् न हों, ऐसे दो या दो से अधिक हलों की) संयोग संज्ञा होती है।

संयोगस्य— VI. iv. 10

(सकारान्त) संयोग का (और महत् शब्द का जो नकार, उसकी उपधा को दीर्घ होता है, सम्बुद्धिभिन्न सर्वनाम-स्थान विभक्ति के परे रहने पर)।

संयोगात्— VI. iv. 137

(वकार तथा मकार अन्त में है जिसके, ऐसे) संयोग से उत्तर (तदन्त भसञ्ज्ञक अङ्ग के अकार का लोप नहीं होता)।

संयोगादयः— VI. i. 3

(अजादि के द्वितीया एकाच् समुदाय के) संयोग आदि में स्थित (न्, द् तथा र् को द्वित्व नहीं होता)।

संयोगादिः— VI. iv. 166

संयोग आदि में है जिस ('इन्') के, उसको (भी अण् परे रहते प्रकृतिभाव हो जाता है)।

संयोगादेः— VI. iv. 68

(घु, मा, स्था, गा, पा, हा तथा सा से अन्य) जो संयोग आदि वाला आकारान्त अङ्ग, उसको (कित्, ङित् लिङ् आर्धधातुक परे रहते विकल्प से आकारादेश होता है)।

संयोगादेः— VII. ii. 43

संयोग है आदि में जिसके, ऐसे (ऋकारान्त धातु) से उत्तर (भी आत्मनेपदपरक लिङ् सिच् को विकल्प से इट् आगम होता है)।

संयोगादेः— VII. iv. 10

संयोग आदि में है जिनके, ऐसे (ऋकारान्त) अङ्ग को (भी गुण होता है, लिट् परे रहते)।

संयोगादेः— VIII. ii. 43

संयोग आदि वाले (आकारान्त एवं यण्वान्) धातु से उत्तर (निष्ठा के तकार को नकारादेश होता है)।

...संयोगाद्योः— VII. iv. 29
देखें— अर्त्तिसंयोगाद्योः VII. iv. 29

संयोगाद्योः— VIII. ii. 29

(पद के अन्त में तथा झल् परे रहते) संयोग के आदि में (सकार तथा ककार का लोप होता है)।

संयोगान्तस्य— VIII. ii. 23

संयोग अन्तवाले पद का (अन्त्यलोप होता है)।

संयोगे— I. iv. 11

संयोग के परे रहते (ह्रस्व अक्षर की गुरु संज्ञा होती है)।

संयोगोत्पातौ— V. i. 37

(षष्ठीसमर्थ प्रातिपदिकों से 'कारण' अर्थ में यथाविहित प्रत्यय होते हैं) यदि वह कारण संयोग= सम्बन्ध वा उत्पात= झगड़ा हो तो।

संवत्सर...— IV. iii. 50
देखें— संवत्सराग्रहायणीभ्याम् IV. iii. 50

संवत्सर...— VII. iii. 15
देखें— संवत्सरसंख्यस्य VII. iii. 15

संवत्सरसङ्ख्यस्य— VII. iii. 15

(सङ्ख्यावाची शब्द से उत्तर) संवत्सर शब्द के तथा सङ्ख्यावाची शब्द के (अचों में आदि अच् को भी ञित्, णित् तथा कित् तद्धित परे रहते वृद्धि होती है)।

संवत्सराग्रहायणीभ्याम् — IV. iii. 50

(सप्तमीसमर्थ कालवाची) संवत्सर तथा आग्रहायणी प्रातिपदिकों से (ठञ् तथा वुञ् प्रत्यय होते हैं)।

...संवत्सरात् — V. i. 86
देखें— राञ्यहस्संवत्स० V. i. 86
...संवत्सरात्— V. ii. 57
देखें— शतादिमास० V. ii. 57
संशयम्— V. i. 72
(द्वितीयासमर्थ) संशय प्रातिपदिक से ('प्राप्त हो गया' अर्थ में यथाविहित ठञ् प्रत्यय होता है)।
संश्चङोः— II. iv. 51
सन्-परक, चङ्परक (णिच्) परे रहते भी (इङ् को गाङ् आदेश विकल्प से होता है)।
संश्चङोः— VI. i. 31
सन्परक तथा चङ्परक (णि) के परे रहते (भी टुओश्वि धातु को विकल्प से सम्प्रसारण हो जाता है)।
संसनिष्यदत्— VII. iv. 65
संसनिष्यदत् शब्द वेदविषय में निपातन किया जाता है।
...संसृज...— III. ii. 142
देखें— सम्पृचानुरुध० III. ii. 142
संसृष्टे— IV. iv. 22
(तृतीयासमर्थ प्रातिपदिक से) मिला हुआ अर्थ में (ठक् प्रत्यय होता है)।
संस्कृतम्— IV. ii. 15
(सप्तमीसमर्थ प्रातिपदिक से) 'संस्कार किया गया' अर्थ में (यथाविहित प्रत्यय होता है, यदि वह संस्कृत पदार्थ हो)।
संस्कृतम्— IV. iv. 3
(तृतीयासमर्थ प्रातिपदिक से) 'संस्कार किया हुआ'— अर्थ में (ढक् प्रत्यय होता है)।
संस्कृतम्— IV. iv. 134
(तृतीयासमर्थ अप् प्रातिपदिक से) संस्कृत अर्थ में (यत् प्रत्यय होता है, वेदविषय में)।
...संस्थानेषु— IV. iv. 72
देखें— कठिनान्तप्रस्तार० IV. iv. 72
संस्पर्शात्— III. iii. 116
(जिस कर्म के) संस्पर्श से (कर्ता को शरीर का सुख उत्पन्न हो, ऐसे कर्म के उपपद रहते भी धातु से ल्युट् प्रत्यय होता है)।

...संस्तु...— III. i. 141
देखें— श्याद्व्यधा० III. i. 141
...संहाराः— III. iii. 122
देखें— अध्यायन्याय० III. iii. 122
संहित...— IV. i. 70
देखें— संहितशफलक्षण० IV. i. 70
संहितशफलक्षणवामादेः— IV. i. 70
संहित, शफ, लक्षण, वाम आदि वाले (ऊरु उत्तरपद) प्रातिपदिकों से (भी स्त्रीलिङ्ग में ऊङ् प्रत्यय होता है)।
संहिता— I. iv. 108
(वर्णों की अतिशयित समीपता की) संहिता संज्ञा होती है)।
संहितायाम्— I. ii. 39
संहिताविषय में (स्वरित से उत्तर अनुदात्तों को एकश्रुति होती है)।
संहितायाम्— VI. i. 70
'अनुदात्तं पदमेकवर्जम्' VI. i. 152 सूत्रपर्यन्त कथित कार्य) संहिता के विषय में होंगे।
संहितायाम्— VI. iii. 113
'संहितायाम्' यह अधिकारसूत्र है, पाद की समाप्ति-पर्यन्त जायेगा।
संहितायाम्— VIII. ii. 108
(उनके अर्थात् प्लुत करने के प्रसङ्ग में एच् के उत्तरार्ध को जो इकार, उकार पूर्वसूत्र से विधान कर आये हैं, उन इकार, उकार के स्थान में क्रमशः य्, व् आदेश हो जाते हैं, अच् परे रहते) सन्धि के विषय में।
सा — I. iii. 55
तृतीया विभक्ति से युक्त सम्-पूर्वक दाण् धातु से भी आत्मनेपद होता है, यदि) वह तृतीया (चतुर्थी के अर्थ में हो तो)।
सा — II. iii. 48
वह (सम्बोधन में विहित प्रथमा 'आमन्त्रित'-संज्ञक होती है)।
सा — IV. ii. 20
प्रथमासमर्थ (पौर्णमासी विशेषवाची प्रातिपदिक से सप्तम्यर्थ = अधिकरण अभिधेय होने पर यथाविहित अण् प्रत्यय होता है)।

सा– IV. ii. 23

प्रथमासमर्थ प्रातिपदिकों से (षष्ठ्यर्थ में यथाविहित प्रत्यय होता है, यदि वह प्रथमासमर्थ देवताविशेषवाची प्रातिपदिक हो)।

सा– IV. ii. 57

प्रथमासमर्थ (क्रियावाची घञन्त प्रातिपदिक से सप्तम्यर्थ में ञ प्रत्यय होता है)।

...सा...– VII. iii. 37
देखें– **शाच्छासा० VII. iii. 37**

...साकल्य...– II. i. 6
देखें– **विभक्तिसमीपसमृद्धि० II. i. 6**

साकल्ये – III. iv. 29

सम्पूर्णविशिष्ट (कर्म) उपपद हो (दृशिर् तथा विद् धातुओं से णमुल् प्रत्यय होता है)।

साकांक्षे– III. ii. 114

(स्मरणार्थक शब्द उपपद हो तो यत् का प्रयोग हो या न हो तो भी अनद्यतन भूतकाल में धातु से लृट् प्रत्यय विकल्प से होता है) यदि प्रयोक्ता साकांक्ष हो।

साक्षात्– V. ii. 91

साक्षात् प्रातिपदिक से (देखने वाला वाच्य हो तो सञ्ज्ञाविषय में इनि प्रत्यय होता है)।

साक्षात्प्रभृतीनि– I. iv. 73

साक्षात् इत्यादि शब्द (भी कृ के योग में विकल्प से गति और निपात संज्ञक होते हैं)।

...साक्षि...– II. iii. 39
देखें– **स्वामीश्वराधिपति० II. iii. 39**

साड :– VIII. iii. 56

(सह् धातु के) साड्रूप के (सकार को मूर्धन्य आदेश होता है)।

साढा– VI. iii. 112

(साढ्यै, साढ्वा तथा) साढा–(ये) शब्द (वेद में निपातन किये जाते हैं)।

साढ्यै– VI. iii. 112

साढ्यै, (साढ्वा तथा साढा–ये) शब्द (वेद में निपातन किये जाते हैं।

साढ्वा– VI. iii. 112

(साढ्यै) साढ्वा (तथा साढा–ये) शब्द (वेद में निपातन किये जाते हैं)।

सात्...– VIII. iii. 111
देखें– **सात्पदाद्योः VIII. iii. 111**

...साति...– III. i. 138
देखें– **लिम्पविन्द० III. i. 138**

...साति...– III. iii. 97
देखें– **ऊतियूति० III. iii. 97**

साति– V. iv. 52

(कृ, भू तथा अस् धातु के योग में सम् पूर्वक पद् धातु के कर्ता में वर्तमान प्रातिपदिक से 'सम्पूर्णता' गम्यमान हो तो विकल्प से) साति प्रत्यय होता है।

सात्पदाद्योः– VIII. iii. 111

(इण् तथा कवर्ग से उत्तर) सात् तथा पद के आदि के (सकार को मूर्धन्य आदेश नहीं होता)।

...सात्यमुग्रि...– IV. i. 81
देखें– **दैवयज्ञिशौचिवृक्षि० IV. i. 81**

साद...– VI. ii. 41
देखें– **सादसादि० VI. ii. 41**

सादसादिसारथिषु– VI. ii. 41

साद, सादि तथा सारथि शब्दों के उत्तरपद रहते (पूर्वपद गो शब्द को प्रकृतिस्वर हो जाता है)।

सादि ...– VI. ii. 40
देखें– **सादिवाम्योः VI. ii. 40**

...सादि...– VI. ii. 41
देखें– **सादसादि० VI. ii. 41**

सादिवाम्योः– VI. ii. 40

सादि तथा वामि शब्द उत्तरपद रहते (पूर्वपद उष्ट्र शब्द को प्रकृतिस्वर होता है)।

...सादृश्य...– II. i. 6
देखें– **विभक्तिसमीपसमृद्धि० II. i. 6**

सादृश्ये– VI. ii. 11

(सदृश तथा प्रतिरूप शब्द उत्तरपद रहते) सादृश्यवाची (तत्पुरुष समास) में (पूर्वपद प्रकृतिस्वर होता है)।

साधकतमम् – I. iv. 42

(क्रिया की सिद्धि में) जो सब से अधिक सहायक है, वह (कारक करणसंज्ञक होता है)।

साधु... — II. iii. 43
देखें— साधुनिपुणाभ्याम् II. iii. 43

साधु...— IV. iii. 43
देखें— साधुपुष्यत्० IV. iii. 43

साधुः— IV. iv. 98

(सप्तमीसमर्थ प्रातिपदिक से) साधु = कुशल अर्थ को कहने में (यत् प्रत्यय होता है)।

साधुनिपुणाभ्याम्— II. iii. 43

साधु और निपुण शब्दों के योग में (सप्तमी विभक्ति होती है, अर्चा गम्यमान होने पर; यदि 'प्रति' का प्रयोग न किया गया हो तो)।

साधुपुष्यत्पच्यमानेषु— IV. iii. 43

(कालवाची सप्तमीसमर्थ प्रातिपदिकों से) साधु, पुष्यत्, पच्यमान अर्थों में (यथाविहित प्रत्यय होता है)।

...साधौ— V. iii. 63
देखें— नेदसाधौ V. iii. 63

सान्त...— VI. iv. 10
देखें— सान्तमहतः VI. iv. 10

सान्तमहतः— VI. iv. 10

सकारान्त (संयोग का) और महत् शब्द का (जो नकार, उसकी उपधा को दीर्घ होता है; सम्बुद्धिभिन्न सर्वनामस्थान विभक्ति के परे रहने पर)।

...सान्नाय्य...— III. i. 129
देखें— पाय्यसान्नाय्य० III. i. 129

साप्तपदीनम्— V. ii. 22

'साप्तपदीनम्' शब्द का निपातन किया जाता है,(मित्रता वाच्य हो तो)।

साभ्यासस्य— VIII. iv. 20

(उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर) अभ्याससहित (अन धातु) के (दोनों नकारों– अभ्यासगत तथा उत्तरवर्त्ती को णकार आदेश होता है)।

साम— IV. ii. 7

(तृतीयासमर्थ प्रातिपदिकों से) 'साम (वेद) को [देखा', इस अर्थ में यथाविहित (अण्) प्रत्यय होता है]।

साम...— V. iv. 75
देखें— सामलोम्नः V. iv. 75

सामः— VI. i. 33

(युष्मद् तथा अस्मद् अङ्ग से उत्तर) साम् के स्थान में (आकम् आदेश होता है)।

सामर्थ्ये— VIII. iii. 44

(इस् तथा उस् के विसर्जनीय को विकल्प से षकारादेश होता है;) सामर्थ्य होने पर (कवर्ग, पवर्ग परे रहते)।

सामलोम्नः— V. iv. 75

(प्रति, अनु तथा अव पूर्ववाले) सामन् और लोमन् प्रातिपदिकों से (समासान्त अच् प्रत्यय होता है)।

...सामसु— I. ii. 34
देखें— अजपन्यूङ्खसामसु I. ii. 34

सामान्यवचनम्— VIII. i. 74

(विशेषवाची समानाधिकरण आमन्त्रित परे रहते) सामान्यवचन (आमन्त्रित) को (विकल्प से अविद्यमानवत् होता है)।

सामान्यवचनैः— II. i. 54

साधारण धर्मवाची (सुबन्त) शब्दों के साथ (उपमानवाचक सुबन्तों का विकल्प से समास होता है और वह तत्पुरुष समास होता है)।

सामान्याप्रयोगे— II. i. 55

सामान्य = उपमान और उपमेय के साधारण धर्मवाचक शब्द का प्रयोग न होने पर (उपमितवाची सुबन्त का समानाधिकरण व्याघ्रादियों के साथ विकल्प से तत्पुरुष समास होता है)।

सामि— II. i. 26

'सामि' यह अव्यय (क्तान्त समर्थ सुबन्त के साथ विकल्प से समास को प्राप्त होता है और वह तत्पुरुष समास होता है)।

...सामिधेनीषु— III. i. 129
देखें— मानहविर्निवास० III. i. 129

सामिवचने— V. iv. 5

अर्धवाची शब्द उपपद हों तो (क्तप्रत्ययान्त प्रातिपदिक से कन् प्रत्यय नहीं होता)।

...सामीप्ययोः — III. iii. 135
देखें— क्रियाप्रबन्धसामीप्ययोः III. iii. 135

सामीप्ये – VI. ii. 23

(सविध, सनीड समर्याद, सवेश, सदेश —इन शब्दों के उत्तरपद रहते) सामीप्यवाची (तत्पुरुष समास) में (पूर्वपद को प्रकृतिस्वर होता है)।

सामीप्ये– VIII. i. 7

(उपरि, अधि, अधस् —इन शब्दों को) समीपता अर्थ कहना हो तो (द्वित्व होता है)।

...साम्नः– V. ii. 59

देखें– **सूक्तसाम्नः V. ii. 59**

साम्प्रतिके– IV. iii. 9

(मध्य शब्द से) साम्प्रतिक अर्थ गम्यमान हो (तो शैषिक अ प्रत्यय होता है)।

साम्प्रतिक = वर्तमान काल सम्बन्धी उचित।

सायम्...– IV. iii. 23

देखें– **सायंचिरंप्राह्णे० IV. iii. 23**

सायंचिरंप्राह्णेप्रगेऽव्ययेभ्यः– IV. iii. 23

(कालवाची) सायं, चिरं, प्राह्णे, प्रगे तथा अव्यय प्रातिपदिकों से (ट्यु तथा ट्युल् प्रत्यय होते हैं तथा इन प्रत्ययों को तुट् का आगम भी होता है)।

...सायपूर्वस्य– VI. iii. 109

देखें– **संख्याविसाय० VI. iii. 109**

...सारथिषु– VI. ii. 41

देखें– **सादसादि० VI. ii. 41**

...सारव...– VI. iv. 174

देखें– **दाण्डिनायन० VI. iv. 174**

सार्वधातुक...– VII. iii. 84

देखें– **सार्वधातुकार्धधातु० VII. iii. 84**

सार्वधातुकम्– I. ii. 4

(पदभिन्न) सार्वधातुक प्रत्यय (ङित्वत् होते हैं)।

सार्वधातुकम्– III. iv. 113

(धातु से विहित तिङ् तथा शित् प्रत्ययों की) सार्वधातुक संज्ञा होती है।

...सार्वधातुकयोः– VII. iv. 25

देखें– **अकृत्सार्व० VII. iv. 25**

सार्वधातुकार्धधातुकयोः– VII. iii. 84

सार्वधातुक तथा आर्धधातुक प्रत्यय परे रहते (इगन्त अङ्ग को गुण होता है)।

सार्वधातुके– III. i. 67

सार्वधातुक प्रत्यय परे रहते (भाव और कर्मवाची धातु मात्र से 'यक्' प्रत्यय होता है)।

सार्वधातुके– VI. iv. 87

(हु तथा श्नु प्रत्ययान्त अनेकाच् अङ्ग का, संयोग पूर्व में नहीं है जिससे, ऐसा जो उवर्ण, उसको अजादि) सार्वधातुक प्रत्यय परे रहते (यणादेश होता है)।

सार्वधातुके– VI. iv. 110

(उकार प्रत्ययान्त कृ अङ्ग के स्थान में उकारादेश हो जाता है; कित्, ङित्) सार्वधातुक परे रहते।

सार्वधातुके– VII. ii. 76

(रुदादि पाँच धातुओं से उत्तर वलादि) सार्वधातुक को (इट् आगम होता है)।

सार्वधातुके– VII. iii. 87

(अभ्यस्तसञ्ज्ञक अङ्ग की लघु उपधा इक् को अजादि पित् सार्वधातुक परे रहते (गुण नहीं होता)।

सार्वधातुके– VII. iii. 95

(तु, रु, ष्टुञ् शम तथा अम धातुओं से उत्तर हलादि) सार्वधातुक को (विकल्प से ईट् आगम होता है)।

सार्वधातुके– VII. iv. 21

(शीङ् अङ्ग को) सार्वधातुक परे रहते (गुण होता है)।

...साल्व...– IV. ii. 75

देखें– **सौवीरसाल्व० IV. ii. 75**

साल्वात्– IV. ii. 134

साल्व शब्द से (अपदाति अर्थात् पैरों से निरन्तर न चलने वाला मनुष्य तथा मनुष्यस्थ कर्म अभिधेय हो तो शैषिक वुञ् प्रत्यय होता है)।

साल्वावयव...– IV. i. 171

देखें– **साल्वावयवप्रत्यग्रथ० IV. i. 171**

साल्वावयवप्रत्यग्रथकलकूटाश्मकात् – IV. i. 171

(क्षत्रियाभिधायी जनपदवाची) साल्व = एक विशेष क्षत्रियनाम के अवयववाची तथा प्रत्यग्रथ, कलकूट एवं अश्मक प्रातिपदिकों से (अपत्य अर्थ में इञ् प्रत्यय होता है)।

प्रत्यग्रथ = नया, दुहराया हुआ, विशुद्ध।

अश्मक = दक्षिण में एक देश, उस देश के निवासी।

साल्वेय... — IV. i. 167
देखें— साल्वेयगान्धारिभ्याम् IV. i. 167

साल्वेयगान्धारिभ्याम्— IV. i. 167

(जनपदवाची क्षत्रियाभिधायी साल्वेय तथा गान्धारि शब्दों से (भी अपत्य अर्थ में अञ् प्रत्यय होता है)।

...सावर्ण...— VI. i. 176
देखें— गोश्वन्० VI. i. 176

...साहसिक्य...— I. iii. 32
देखें— गन्धनावक्षेपणसेवन० I. iii. 32

...साहिभ्यः— III. i. 138
देखें— लिम्पविन्द० III. i. 138

साह्वान्— VI. i. 12

साह्वान् शब्द (छन्द तथा भाषा में सामान्य करके) निपातन किया जाता है।

...सि...— III. ii. 159
देखें— दाधेट्० III. ii. 159

...सि...— VI. i. 66
देखें— सुतिसि० VI. i. 66

...सि...— VII. ii. 9
देखें— तितुत्र० VII. ii. 9

सि— VII. iv. 49

(सकारान्त अङ्ग को) सकारादि (आर्धधातुक) के परे रहते (तकारादेश होता है)।

सि— VIII. ii. 41

(षकार तथा ढकार के स्थान में क आदेश होता है;) सकार परे रहते।

सि— VIII. iii. 29

(डकारान्त पद से उत्तर) सकारादि पद को (विकल्प से धुट् का आगम होता है)।

सिकता...— V. ii. 104
देखें— सिकताशर्कराभ्याम् V. ii. 104

सिकताशर्कराभ्याम्— V. ii. 104

सिकता तथा शर्करा प्रातिपदिकों से (भी 'मत्वर्थ' में अण् प्रत्यय होता है)।

सिच्— I. ii. 14

(हन् धातु से परे) सिच् प्रत्यय (आत्मनेपदविषय में कित्वत् होता है)।

सिच्— III. i. 44

(च्लि के स्थान में) सिच् आदेश होता है।

सिच्...— III. iv. 107
देखें— सिजभ्यस्त० III. iv. 107

...सिच्...— VI. iv. 62
देखें— स्यसिच्० VI. iv. 62

...सिच...— III. ii. 182
देखें— दाम्नी० III. ii. 182

...सिच...— VIII. iii. 65
देखें— सुनोतिसुवति० VIII. iii. 65

सिचः— II. iv. 77

सिच् का (लुक् होता है; गा, स्था, घु सञ्ज्ञक, पा और भू —इन धातुओं से उत्तर परस्मैपद परे रहते)।

सिचः— VI. i. 181

सिच् अन्त वाला शब्द (विकल्प से आद्युदात्त होता है)।

...सिचः— VII. iii. 96
देखें— अस्तिसिचः VII. iii. 96

सिचः— VIII. iii. 112

(इण् तथा कवर्ग से उत्तर) सिच् के (सकार को यङ् परे रहते मूर्धन्य आदेश नहीं होता)।

...सिचि...— III. i. 53
देखें— लिपिसिचिह्वः III. i. 53

सिचि— VII. ii. 1

(परस्मैपदपरक) सिच् के परे रहते (इगन्त अङ्ग को वृद्धि होती है)।

सिचि— VII. ii. 40

(परस्मैपदपरक) सिच् परे रहते (भी वृ तथा ऋकारान्त धातुओं से उत्तर इट् को दीर्घ नहीं होता)।

सिचि— VII. ii. 71

(अञ्जू धातु से उत्तर) सिच् को (इट् का आगम होता है)।

...सिचोः — VII. ii. 42
देखें— लिङ्सिचोः VII. ii. 42

...सिचौ — I. ii. 11
देखें— लिङ्सिचौ I. ii. 11

सिजभ्यस्तविदिभ्यः— III. iv. 109

सिच् से उत्तर, अभ्यस्तसंज्ञक से उत्तर तथा विद् धातु से उत्तर (भी झि को जुस् आदेश होता है)।

...सित...— VIII. iii. 70
देखें— सेवसित० VIII. iii. 70

सितात्— VIII. iii. 63

सित शब्द से (पहले-पहले अट् का व्यवधान होने पर तथा अपि ग्रहण से अट् का व्यवधान न होने पर भी सकार को मूर्धन्य आदेश होता है)।

सिति— I. iv. 6

सित् प्रत्यय के परे रहते (भी पूर्व की पद संज्ञा होती है)।

सिद्ध...— II. i. 40
देखें— सिद्धशुष्कपक्वबन्धैः II. i. 40

सिद्ध...— VI. ii. 32
देखें— सिद्धशुष्क० VI. ii. 32

...सिद्ध...— VI. iii. 18
देखें— इन्सिद्धबध्नातिषु VI. iii. 18

सिद्धशुष्कपक्वबन्धेषु— VI. ii. 32

सिद्ध, शुष्क, पक्व तथा बन्ध शब्दों के उत्तरपद रहते (कालभिन्नवाची सप्तम्यन्त पूर्वपद को प्रकृतिस्वर होता है)।

सिद्धशुष्कपक्वबन्धैः— II. i. 40

सिद्ध, शुष्क, पक्व, बन्ध —इन (समर्थ सुबन्त) शब्दों के साथ (भी सप्तम्यन्त सुबन्त का विकल्प से समास होता है और वह तत्पुरुष समास होता है)।

सिद्धाप्रयोगे— III. iii. 154

(पर्याप्तिविशिष्ट सम्भावना अर्थ में वर्तमान धातु से लिङ् प्रत्यय होता है, यदि अलम् शब्द का) अप्रयोग सिद्ध हो रहा हो।

सिद्धाप्रयोगः— III. iv. 27

(अन्यथा, एवं, कथं, इत्थम् शब्दों के उपपद रहते कृञ् धातु से ण्वुल् प्रत्यय होता है, यदि कृ का) अप्रयोग सिद्ध हो।

...सिद्ध्यौ— III. i. 116
देखें— पुष्यसिद्ध्यौ III. i. 116

सिध्मादिभ्यः— V. ii. 97

सिध्मादि प्रातिपदिकों से (भी 'मत्वर्थ' में विकल्प से लच् प्रत्यय होता है)।

सिध्यतेः— VI. i. 48

षिधु हिंसासंराध्योः धातु के (एच् के स्थान में णिच् परे रहते आकारादेश हो जाता है, यदि वह धातु पारलौकिक अर्थ में वर्तमान न हो तो)।

...सिध्रका...— VIII. iv. 4
देखें— पुरगामिश्रका० VIII. iv. 4

सिन्धु...— IV. iii. 32
देखें— सिन्ध्वपकराभ्याम् IV. iii. 32

सिन्धु...— IV. iii. 93
देखें— सिन्धुतक्षशिलादिभ्यः IV. iii. 93

सिन्धुतक्षशिलादिभ्यः— IV. iii. 93

(प्रथमासमर्थ) सिन्ध्वादि तथा तक्षशिलादिगणपठित शब्दों से (यथासंख्य करके अण् तथा अञ् प्रत्यय होते हैं, 'इसका अभिजन' – ऐसा कहना हो तो)।

...सिन्ध्वन्ते— VII. iii. 19
देखें— हृद्भगसिन्ध्वन्ते VII. iii. 19

सिन्ध्वपकाराभ्याम् — IV. iii. 32

(सप्तमीसमर्थ) सिन्धु तथा अपकर शब्दों से (जातार्थ में कन् प्रत्यय होता है)।

सिप्— III. i. 34

(लेट् लकार परे रहते धातु से बहुल करके) सिप् प्रत्यय होता है।

...सिप्...— III. iv. 78
देखें— तिप्तस्झि० III. iv. 78

सिपि— VIII. ii. 74

(सकारान्त पद धातु को) सिप् परे रहते (विकल्प से रु आदेश होता है)।

सिवादीनाम् — VIII. iii. 71

(परि, नि तथा वि उपसर्ग से उत्तर) सिवादि धातुओं के (सकार को अट् के व्यवधान होने पर भी विकल्प से मूर्धन्य आदेश होता है)।

सीयुट्— III. iv. 102

(लिङ् के आदेशों को) सीयुट् आगम होता है।

सुः— I. iv. 93

सु शब्द (कर्मप्रवचनीय और निपातसंज्ञक होता है, पूजा अर्थ में)।

सुकर्मपापमन्त्रपुण्येषु— III. ii. 89

सु, कर्म, पाप, मन्त्र, पुण्य —इन (कर्मों) के उपपद रहते (कृञ् धातु से भूतकाल में क्विप् प्रत्यय होता है)।

सुखप्रिययोः— VI. ii. 15

(हितवाची तत्पुरुष समास में) सुख तथा प्रिय शब्द उत्तरपद रहते (पूर्वपद को प्रकृतिस्वर हो जाता है)।

सुखप्रियात्— V. iv. 63

('अनुकूलता' अर्थ में वर्तमान) सुख तथा प्रिय प्रातिपदिकों से (कृञ् के योग में डाच् प्रत्यय होता है)।

सुखादिभ्यः — III. i. 18

सुख आदि (कर्मवाचियों) से (अनुभव अर्थ में क्यङ् प्रत्यय होता है, यदि वे सुख आदि वेदयिता-कर्ता सम्बन्धी हों तो अर्थात् जिसको सुख हो, अनुभव करने वाला भी वही हो)।

सुखादिभ्यः — V. ii. 131
सुखादि प्रातिपदिकों से (भी 'मत्वर्थ' में इनि प्रत्यय होता है)।

...सुखादिभ्यः— VI. ii. 170
देखें— जातिकाल० VI. ii. 170

...सुखार्थ...— II. iii. 73
देखें— आयुष्यमद्रभद्र० II. iii. 73

सुच्— V. iv. 18
('क्रिया के बार-बार गणन' अर्थ में वर्तमान सङ्ख्यावाची द्वि, त्रि तथा चतुर् प्रातिपदिकों से) सुच् प्रत्यय होता है।

...सुचतुर...— V. iv. 77
देखें – अचुतर० V. iv. 77

सुञः— III. ii. 80
षुञ् धातु से ('सोम' कर्म उपपद रहते 'क्विप्' प्रत्यय होता है, भूतकाल में)।

सुञः— III. ii. 132
(यज्ञ से संयुक्त अभिषव में वर्तमान) षुञ् धातु से (वर्तमान काल में शतृ प्रत्यय होता है)।

सुञः— VIII. iii. 107
(पूर्वपद में स्थित निमित्त से उत्तर) सुञ् निपात के (सकार को वेदविषय में मूर्धन्य आदेश होता है)।

सुञि— VI. iii. 133
(इगन्त शब्द को) सुञ् परे रहते (ऋचा-विषय में दीर्घ हो जाता है, संहिता में)।

सुट्— I. i. 42
(नपुंसकलिङ्ग से भिन्न जो सुट् प्रत्याहार–सु, औ, जस्, अम्, औट् – (उसकी सर्वनाम स्थान संज्ञा होती है)।

सुट्— III. iv. 107
(लिङ्सम्बन्धी तकार और थकार को) सुट् का आगम होता है।

सुट्— VI. i. 131
(ककार से पूर्व) सुट् का आगम होता है, यह अधिकार है।

सुट्— VII. i. 52
(अवर्णान्त सर्वनाम से उत्तर आम् को) सुट् का आगम होता है।

...सुट्...— VIII. iii. 70
देखें— सेवसित० VIII. iii. 70

सुटि— VIII. iii. 5
(सम् को रु होता है) सुट् परे रहते (संहिता-विषय में)।

...सुतङ्गम...— IV. ii. 79
देखें— अरीहणकृशाश्व० IV. ii. 79

सुतिसि — VI. i. 66
(हलन्त, ङ्यन्त तथा आबन्त दीर्घ से उत्तर) सु, ति तथा सि (का जो अपृक्त हल्, उसका लोप होता है)।

...सुदिव...— V. iv. 120
देखें— सुप्रातसुश्वसुदिव० V. iv. 120

सुदुर्भ्याम्— VII. i. 68
(केवल) सु तथा दुर् उपसर्गों से उत्तर (लभ् धातु को खल् तथा घञ् प्रत्यय परे रहते नुम् आगम नहीं होता है)।

सुधातः — IV. i. 97
सुधातृ शब्द से ('तस्यापत्यम्' अर्थ में इञ् प्रत्यय होता है तथा सुधातृ शब्द को (अकङ् आदेश भी होता है)।

सुधित— VII. iv. 45
सुधित शब्द वेदविषय में निपातन किया जाता है।

...सुधियोः — VI. iv. 82
देखें— भूसुधियोः VI. iv. 82

सुनोति... — VIII. iii. 65
देखें— सुनोतिसुवति० VIII. iii. 65

सुनोतिसुवतिस्यतिस्तौतिस्तोभतिस्थासेनयसेधसिचसञ्ज-स्वञ्जाम् — VIII. iii. 65
(उपसर्गस्थ निमित्त से उत्तर) सुनोति, सुवति, स्यति, स्तौति, स्तोभति, स्था, सेनय, सेध, सिच, सञ्ज, स्वञ्ज् — इनके (सकार को मूर्धन्यादेश होता है, अट् के व्यवधान में भी तथा स्थादियों के अभ्यास के व्यवधान में एवम् अभ्यास को भी)।

सुनोतेः— VIII. iii. 117
(स्य तथा सन् परे रहते) षुञ् धातु के (सकार को मूर्धन्य आदेश नहीं होता)।

सुप्... — I. iv. 14
देखें— सुप्तिङन्तम् I. iv. 14

सुप् — II. i. 2

(आमन्त्रितसञ्ज्ञक पद के परे रहते पूर्व के) सुबन्त पद को (पर के अङ्ग के समान कार्य होता है, स्वरविषय में)।

सुप् — II. i. 9

सुबन्त पद (मात्रा अर्थ में वर्तमान प्रति के साथ अव्ययीभाव समास को प्राप्त होता है)।

सुप्... — III. i. 4
देखें — **सुप्पितौ III. i. 4**

...सुप् — IV. i. 2
देखें — **स्वौजस्मौट्० IV. i. 2**

सुप्... — VIII. ii. 2
देखें — **सुप्स्वर० VIII. ii. 2**

सुपः — I. iv. 102

सुपों के (तीन-तीन की एक-एक करके एकवचन, द्विवचन और बहुवचन संज्ञा हो जाती है)।

सुपः — II. iv. 71

(धातु और प्रातिपदिक के अवयव) सुप् का (लुक् हो जाता है)।

...सुपः— II. iv. 82
देखें — **आप्सुपः II. iv. 82**

सुपः — III. i. 8

(इच्छा करने वाले के आत्मसम्बन्धी इच्छा के) सुबन्त (कर्म) से (इच्छा अर्थ में विकल्प से क्यच् प्रत्यय होता है)।

सुपः— V. iii. 68

('किञ्चित् न्यून' अर्थ में वर्तमान) सुबन्त से (विकल्प से बहुच् प्रत्यय होता है और वह सुबन्त से पूर्व में ही होता है)।

...सुपरि... — V. iii. 84
देखें— **शेवलसुपरि० V. iii. 84**

सुपा— II. i. 4

सुबन्त के साथ (समर्थ सुबन्त का समास होता है) यह अधिकार है।

सुपाम्— VII. i. 39

सुपों के स्थान में (सु, लुक्, पूर्वसवर्ण, आ, आत्, शे, या, डा, ड्या, याच्, आल् आदेश होते हैं, वेदविषय में)।

सुपि— III. i. 106

सुबन्त उपपद रहते (उपसर्गरहित क्यप् प्रत्यय होता है, चकार से यत् प्रत्यय भी होता है)।

सुपि— III. ii. 4

सुबन्त उपपद रहते (स्था धातु से 'क' प्रत्यय होता है)।

सुपि— III. ii. 68

(अजातिवाची) सुबन्त उपपद हो, तो (ताच्छील्य = 'ऐसा उसका स्वभाव है', गम्यमान होने पर सब धातुओं से णिनि प्रत्यय होता है)।

सुपि— VI. i. 89

सुबन्त अवयव वाले (ऋकारादि धातु) के परे रहते (अवर्णान्त उपसर्ग से उत्तर पूर्व-पर के स्थान में संहिता के विषय में आपिशलि आचार्य के मत में विकल्प से वृद्धि एकादेश होता है)।

सुपि — VI. i. 185

सुप् परे रहते (सर्व शब्द के आदि को उदात्त होता है)।

सुपि — VI. iv. 83

(धातु का अवयव संयोग पूर्व नहीं है जिस उवर्ण के, तदन्त अनेकाच् अङ्ग को अजादि) सुप् परे रहते (यणादेश होता है)।

सुपि — VII. iii. 101

(अकारान्त अङ्ग को यञादि) सुप् परे रहते (भी दीर्घ होता है)।

सुपि — VIII. i. 69

(गोत्रादि-गण-पठित शब्दों को छोड़कर निन्दावाची) सुबन्त शब्दों के परे रहते (भी गति संज्ञासहित एवं गति संज्ञारहित दोनों तिङन्तों को अनुदात्त होता है)।

सुपि — VIII. iii. 16

(रु के रेफ को) सुप् परे रहते (विसर्जनीय आदेश होता है)।

सुपि... — VIII. iii. 88
देखें — **सुपिसूतिसमाः VIII. iii. 88**

सुपिसूतिसमाः — VIII. iii. 88

(सु, वि, निर् तथा दुर् से उत्तर) सुपि, सूति तथा सम के (सकार को मूर्धन्यादेश होता है)।

...सुपूर्वस्य — V. iv. 140
देखे— संख्यासुपूर्वस्य V. iv. 140

सुप्तिङन्तम् — I. iv. 94

सुबन्त तथा तिङन्त शब्दरूप (पदसंज्ञक होते हैं)।

सुप्पितौ— III. i. 4

सु आदि प्रत्यय और पित् =जिनके प् की इत्संज्ञा है, वे प्रत्यय (अनुदात्त होते हैं)।

सुप्रात... — V. iv. 120
देखें— सुप्रातसुश्व० V. iv. 120

सुप्रातसुश्वसुदिवशारिकुक्षचतुरश्रैणीपदाजपदप्रोष्ठपदाः— V. iv. 120

सुप्रात, सुश्व, सुदिव, शारिकुक्ष, चतुरश्र, एणीपद, अजपद, प्रोष्ठपद—बहुव्रीहि समास वाले ये शब्द (अच्-प्रत्ययान्त निपातन किये जाते हैं)।

सुप्स्वरसञ्ज्ञातुग्विधिषु— VIII. ii. 2

सुप्-विधि, स्वरविधि, सञ्ज्ञाविधि तथा (कृत्-विषयक) तुक् की विधि करने में (नकार का लोप असिद्ध होता है)।

सुब्रह्मण्यायाम्— I. ii. 37

सुब्रह्मण्यानामक निगदविशेष में (एक श्रुति नहीं होती, किन्तु उस निगद में जो स्वरित, उसको उदात्त तो हो जाता है)।

...सुभग... — III. ii. 56
देखें— आढ्यसुभग० III. ii. 56

...सुभ्यः— V. iv. 121
देखें— नञ्दुःसुभ्यः V. iv. 121

...सुभ्याम् — VI. ii. 172
देखें — नञ्सुभ्याम् VI. ii. 172

...सुमङ्गल...— IV. i. 30
देखें— केवलमामक० IV. i. 30

...सुम्नयोः— VII. iv. 38
देखें— देवसुम्नयोः VII. iv. 38

सुयजोः— III. i. 103

षुञ् तथा यज् धातु से (भूतकाल में ङ्वनिप् प्रत्यय होता है)।

...सुरभिभ्यः— V. iv. 135
देखें— उत्पूति० V. iv. 135

...सुरा... — II. iv. 25
देखें— सेनासुराच्छाया० II. iv. 25

सुलुक्पूर्वसवर्णाच्छेयाडाड्यायाजालः— VII. i. 39

(सुपों के स्थान में) सु, लुक्, पूर्वसवर्ण, आ, आत्, शे, या, डा, ड्या, याच्, आल् आदेश होते हैं, (वेद-विषय में)।

सुलोपः— VI. i. 128

(ककार जिनमें नहीं है, तथा जो नञ्-समास में वर्तमान नहीं हैं, ऐसे एतत् तथा तत् शब्दों के) सु का लोप हो जाता है, (हल् परे रहते, संहिता के विषय में)।

सुलोपः— VII. iii. 107

(अदस् अङ्ग को सु परे रहते औ आदेश तथा) सु का लोप होता है।

...सुवति...— VIII. iii. 65
देखें— सुनोतिसुवति० VIII. iii. 65

सुवास्त्वादिभ्यः — IV. ii. 76

सुवास्तु आदि प्रातिपदिकों से (चातुरर्थिक अण् प्रत्यय होता है)।

सुविनिर्दुर्भ्यः — VIII. iii. 88

सु, वि, निर् तथा दुर् से उत्तर (सुपि, सूति तथा सम के सकार को मूर्धन्यादेश होता है)।

...सुवोः— VII. iii. 88
देखें— भूसुवोः VII. iii. 88

...सुश्व... — V. iv. 120
देखें— सुप्रातसुश्व० V. iv. 120

सुषामादिषु— VIII. iii. 38

सुषामादि शब्दों में (वर्तमान सकार को भी मूर्धन्य आदेश होता है)।

...सुषि... — V. ii. 107
देखें— ऊषसुषि० V. ii. 107

...सुषु — III. iii. 126
देखें— ईषद्दुःसुषु III. iii. 126

सुसर्वार्द्धात् — VII. iii. 12

सु, सर्व तथा अर्ध शब्द से उत्तर (जनपदवाची उत्तरपद शब्द के अचों में आदि अच् को ञित्, णित् तथा कित् तद्धित प्रत्यय परे रहते वृद्धि होती है)।

सुहरिततृणसोमेभ्यः — V. iv. 125
(बहुव्रीहि समास में) सु, हरित, तृण तथा सोम शब्दों से उत्तर (जम्भा शब्द अनिच्प्रत्ययान्त निपातन किया जाता है)।

...सुहितार्थ...— II. ii. 11
देखें— पूरणगुणसुहितार्थ० II. ii. 11

सुहृद्...— V. iv. 150
देखें— सुहृद्दुर्हृदौ V. iv. 150

सुहृद्दुर्हृदौ— V. iv. 150
सुहृद् तथा दुर्हृद् शब्द (कृतसमासान्त निपातन किये जाते हैं, यथासङ्ख्य करके मित्र तथा अमित्र वाच्य हों तो)।

...सू...— III. ii. 61
देखें— सत्सू० III. ii. 61

...सू...— III. ii. 184
देखें— अर्त्तिलूधू० III. ii. 184

...सूकरयोः— III. ii. 183
देखें— हलसूकरयोः III. ii. 183

सूक्त...— V. ii. 59
देखें— सूक्तसाम्नोः V. ii. 59

सूक्तसाम्नोः— V. ii. 59
(प्रातिपदिकमात्र से मत्वर्थ में छ प्रत्यय होता है;) सूक्त और साम = सामवेद के मन्त्र का गान वाच्य हो तो।

...सूति...— VII. ii. 34
देखें— स्वरतिसूति० VII. ii. 34

...सूति...— VIII. iii. 88
देखें— सुपिसूतिसमाः VIII. iii. 88

...सूत्र...— III. ii. 23
देखें— शब्दश्लोक० III. ii. 23

...सूत्र...— V. i. 57
देखें— संज्ञासंघसूत्रा० V. i. 57

सूत्रम्— VIII. iii. 90
('प्रतिष्णातम्' में षत्व निपातन है;) धागा को कहने में।

सूत्रात्— IV. ii. 64
(द्वितीयासमर्थ ककार उपधावाले) सूत्रवाची प्रातिपदिकों से (भी 'तदधीते तद्वेद' अर्थ में उत्पन्न प्रत्यय का लुक् हो जाता है)।

...सूत्रान्तात्— IV. ii. 59
देखें— क्रतूक्थादि० IV. ii. 59

सूद...— III. ii. 153
देखें— सूददीपदीक्षः III. ii. 153

...सूद...— VI. ii. 129
देखें— कूलसूद० VI. ii. 129

सूददीपदीक्षः— III. ii. 153
षूद, दीपी, दीक्ष् धातुओं से (भी तच्छीलादि कर्ता हों तो वर्तमान काल में युच् प्रत्यय नहीं होता)।

...सूप...— VI. ii. 128
देखें— पललसूप० VI. ii. 128

सूपमानात्— VI. ii. 145
सु तथा उपमानवाची से उत्तर (क्तान्त उत्तरपद को अन्तोदात्त होता है)।

...सूयति...— VII. ii. 44
देखें— स्वरतिसूति० VII. ii. 44

...सूरमसात्— IV. i. 168
देखें— द्व्यञ्मगध० IV. i. 168

...सूर्त...— VIII. ii. 61
देखें— नसत्तनिषत्ता० VIII. ii. 61

...सूर्य... — III. i. 114
देखें— राजसूयसूर्य० III. i. 114

सूर्य...— VI. iv. 149
देखें— सूर्यतिष्य० VI. iv. 149

सूर्यतिष्यागस्त्यमत्स्यानाम्— VI. iv. 149
(भसञ्ज्ञक अङ्ग के उपधा यकार का लोप होता है, ईकार तथा तद्धित के परे रहते, यदि वह य) सूर्य, तिष्य, अगस्त्य तथा मत्स्य-सम्बन्धी हो।

...सृ...— III. i. 149
देखें— प्रुसृल्वः III. i. 149

...सृ...— III. ii. 145
देखें — लपसृद्रु० III. ii. 145

...सृ...— III. ii. 150
देखें— जुचङ्क्रम्य० III. ii. 150

सृ...— III. ii. 160
देखें — सृघस्यदः III. ii. 160

सृ — III. iii. 17
सृ धातु से (चिरस्थायी कर्ता वाच्य हो तो घञ् प्रत्यय होता है)।

...सृ... – VII. ii. 13
देखें– कृसृभृ० VII. ii. 13

सृघस्यदः– III. ii. 160
सृ, घसि, अद् धातुओं से (तच्छीलादि कर्ता हों तो वर्तमानकाल में क्मरच् प्रत्यय होता है)।

...सृज...– VIII. ii. 36
देखें– व्रश्चभ्रस्ज० VIII. ii. 36

सृजि...– VI. i. 57
देखें– सृजिदृशोः VI. i. 57

सृजि...– VII. ii. 65
देखें– सृजिदृशोः VII. ii. 65

...सृजि... – VIII. iii. 110
देखें – रपरसृपि० VIII. iii. 110

सृजिदृशोः – VI. i. 57
सृज् और दृशिर् धातु को (कित् भिन्न झलादि प्रत्यय परे हो तो अम् आगम होता है)।

सृजिदृशोः – VII. ii. 65
सृज तथा दृशिर् अङ्ग के (थल् को विकल्प से इट् आगम नहीं होता)।

सृपि... – III. iv. 17
देखें– सृपितृदोः III. iv. 17

...सृपि...– VIII. iii. 110
देखें– रपरसृपि० VIII. iii. 110

सृपितृदोः– III. iv. 17
(भावलक्षण में वर्तमान) सृपि तथा तृद् धातुओं से (वेदविषय में तुमर्थ में कसुन् प्रत्यय होता है)।

से... – III. iv. 9
देखें– सेसेनसे० III. iv. 9

से– III. iv. 80
टित् लकारों (लट्, लिट्, लुट्, लृट्, लेट्, लोट्) के स्थान में जो थास् आदेश, उसके स्थान में से आदेश हो जाता है।

से– VII. ii. 57
(कृती, चृती, उच्छृदिर्, उतृदिर्, नृती –इन धातुओं से उत्तर सिच् भिन्न सकारादि (आर्धधातुक) को (विकल्प से इट् का आगम होता है)।

से– VII. ii. 77
('ईश ऐश्वर्ये' धातु से उत्तर) 'से' –इस (सार्वधातुक) को (इट् आगम होता है)।

सेः– III. iv. 87
(लोडादेश जो) सिप्, उसके स्थान में (हि आदेश होता है और वह अपित् भी होता है)।

सेट्– I. ii. 18
सेट्= इड्युक्त (क्त्वा प्रत्यय कित् नहीं होता है)।

सेटि– VI. i. 190
सेट् (थल्) परे रहते (इट् को विकल्प से उदात्त होता है एवं चकार से आदि तथा अन्त को विकल्प से होता है)।

सेटि– VI. iv. 52
सेट् (निष्ठा) परे रहते (णि का लोप हो जाता है)।

सेटि– VI. iv. 121
सेट् (थल्) परे रहते (भी अनादेशादि अङ्ग के दो असहाय हलों के मध्य में वर्तमान जो अकार, उसके स्थान में एकार आदेश हो जाता है तथा अभ्यास का लोप होता है)।

...सेध...– VIII. iii. 65
देखें– सुनोतिसुवति० VIII. iii. 65

सेधतेः– VIII. iii. 113
(गति अर्थ में वर्तमान) 'षिधु गत्याम्' धातु के (सकार को मूर्धन्य आदेश नहीं होता)।

...सेन्...– III. i. 9
देखें– सेसेनसे० III. iv. 9

सेनकस्य– V. iv. 112
(अव्ययीभाव समास में वर्तमान गिरिशब्दान्त प्रातिपदिक से भी समासान्त टच् प्रत्यय विकल्प से होता है) सेनक आचार्य के मत में।

...सेनय... – VIII. iii. 65
देखें– सुनोतिसुवति० VIII. iii. 65

सेना... – II. iv. 25
देखें– सेनासुराच्छाया० II. iv. 25

...सेना... – III. i. 25
देखें– सत्यापपाश० III. i. 25

सेनान्तलक्षणकारिभ्यः— IV. i. 152

सेना अन्त वाले प्रातिपदिकों से, लक्षण शब्द से तथा कार= शिल्पीवाची प्रातिपदिकों से (भी अपत्यार्थ में ण्य प्रत्यय होता है)।

सेनायाः— IV. iv. 45

(द्वितीयासमर्थ) सेना प्रातिपदिक से ('इकट्ठा होता है'— अर्थ में विकल्प से ण्य प्रत्यय होता है, पक्ष में ढक्)।

सेनासुराच्छायाशालानिशानाम्— II. iv. 25

(नञ्कर्मधारयवर्जित) सेना, सुरा, छाया, शाला, निशा-शब्दान्त (तत्पुरुष विकल्प से नपुंसकलिङ्ग में होता है)।

सेवसितसयसिवुसहसुट्स्तुस्वञ्जाम्— VIII. iii. 70

(परि, नि तथा वि उपसर्ग से उत्तर) सेव, सित, सय, सिवु, सह, सुट्, स्तु तथा स्वञ्ज् के (सकार को मूर्धन्य आदेश होता है, सित शब्द से पहले-पहले अड्-व्यवाय एवं अभ्यास-व्यवाय में भी होता है)।

सेसेनसेऽसेन्क्सेकसेनध्यैअध्यैन्कध्यैकध्यैन्शध्यैश-ध्यैन्तवैतवेङ्तवेनः—III. iv. 9

(वेदविषय में तुमर्थ में धातु से) से, सेन्, असे, असेन्, क्से, कसेन्, अध्यै, अध्यैन्, कध्यै, कध्यैन्, शध्यै, शध्यैन्, तवै, तवेङ्, तवेन् प्रत्यय होते हैं।

सोः—VI. ii. 117

सु से उत्तर (मन् अन्त वालें तथा अस् अन्त वाले उत्तरपद शब्द को बहुव्रीहि समास में आद्युदात्त होता है, लोमन् तथा उषस् शब्दों को छोड़कर)।

सोः — VI. ii. 195

सु उपसर्ग से उत्तर (उत्तरपद को तत्पुरुष में अन्तोदात्त होता है, निन्दा गम्यमान हो तो)।

सोढः —VIII. iii. 115

सोढ् के (सकार को मूर्धन्यादेश नहीं होता)।

सोढम् — IV. iii. 52

(प्रथमासमर्थ कालवाची) सहन किया समानाधिकरण प्रातिपदिक से (षष्ठ्यर्थ में यथाविहित प्रत्यय होता है)।

सोदरात्—IV. iv. 109

(सप्तमीसमर्थ) सोदर प्रातिपदिक से ('शयन किया हुआ' अर्थ में य प्रत्यय होता है)।

सोपसर्गम्— VIII. i. 53

(गत्यर्थक धातुओं के लोडन्त से युक्त) उपसर्गरहित (एवम् उत्तमपुरुषवर्जित जो लोडन्त तिङन्त, उसे विकल्प करके अनुदात्त नहीं होता, यदि कारक सभी अन्य न हों तो)।

सोमम् — IV. iv. 137

(द्वितीयासमर्थ) सोम प्रातिपदिक से ('अर्हति' अर्थ में य प्रत्यय होता है)।

सोमवरुणयोः — VI. iii. 26

(देवतावाची द्वन्द्व समास में) सोम तथा वरुण शब्द उत्त-रपद रहते (अग्नि शब्द को ईकारादेश होता है)।

सोमात् — IV. ii. 29

(प्रथमासमर्थ देवतावाची) सोम शब्द से (षष्ठ्यर्थ में 'ट्यण्' प्रत्यय होता है)।

सोमाश्वेन्द्रियविश्वदेव्यस्य —VI. iii. 130

सोम, अश्व, इन्द्रिय, विश्वदेव्य —इन शब्दों को (मतुप् प्रत्यय परे रहते दीर्घ हो जाता है, मन्त्र विषय में)।

सोमे—III. ii. 90

'सोम' (कर्म) उपपद रहते (षुञ् धातु से 'क्विप्' प्रत्यय होता है, भूतकाल में)।

सोमे— VII. ii. 33

(ह्वरित शब्द वेदविषय में) सोम वाच्य होने पर (निपातन किया जाता है)।

...सोमेभ्यः— V. iv. 125
देखें— सुहरित० V. iv. 125

...सौ — I. iv. 19
देखें— तसौ I. iv. 19

सौ — VI. i. 162

(सप्तमीबहुवचन) सु के परे रहते (एक अच् वाले शब्द से उत्तर तृतीया विभक्ति से लेकर आगे की विभक्तियों को उदात्त होता है)।

सौ — VI. iv. 13

(सम्बुद्धिभिन्न) सु विभक्ति परे रहते (भी इन्, हन्, पूषन्, तथा अर्यमन् अङ्गों की उपधा को दीर्घ होता है)।

सौ — VII. i. 82

सु परे रहते (अनडुह् अङ्ग को नुम् आगम होता है)।

सौ — VII. i. 93

(सखि अङ्ग को सम्बुद्धिभिन्न) सु परे रहते (अनङ् आदेश होता है)।

सौ — VII. ii. 94

सु विभक्ति परे रहते (युष्मद्, अस्मद् अङ्ग के मपर्यन्त भाग को क्रमशः त्व तथा अह आदेश होते हैं)।

सौ — VII. iii. 107

(त्यदादि अङ्गों के अनन्त्य तकार तथा दकार के स्थान में) सु विभक्ति परे रहते (सकारादेश होता है)।

सौ — VII. iii. 110

(इदम् के दकार के स्थान में यकार आदेश होता है) सु विभक्ति के परे रहते।

सौवीर... — IV. ii. 75
देखें—सौवीरसाल्व० IV. ii. 75

सौवीरसाल्वप्राक्षु — IV. ii. 75

(स्त्रीलिङ्गवाची) सौवीर, साल्व तथा पूर्वदेश अभिधेय होने पर (ङ्यन्त, आबन्त प्रातिपदिकों से चातुरर्थिक अञ् प्रत्यय होता है)।

सौराज्ये — VIII. ii. 14

(राजन्वान् शब्द) सौराज्य = अच्छे राजा का कर्म गम्यमान होने पर (निपातन है)।

...स्कन्दाम् — III. iv. 56
देखें— विशिपतिपदि० III. iv. 56

...स्कन्दाम् — VII. iv. 84
देखें — वञ्चुस्त्रंसु० VII. iv. 84

स्कन्दि... — VI. iv. 31
देखें— स्कन्दिस्यन्दोः VI. iv. 31

स्कन्दिस्यन्दोः— VI. iv. 31

स्कन्द् तथा स्यन्द् के (नकार का लोप क्त्वा प्रत्यय परे रहते नहीं होता)।

स्कन्देः— VIII. iii. 73

(वि उपसर्ग से उत्तर) स्कन्दिर् धातु के (सकार को निष्ठा परे न हो तो विकल्प से मूर्धन्य आदेश होता है)।

...स्कभित...— VII. ii. 34
देखें— ग्रसितस्कभित० VII. ii. 34

स्कभ्नातेः— VIII. iii. 76

(वि उपसर्ग से उत्तर) स्कन्भु धातु के (सकार को नित्य ही मूर्धन्य आदेश होता है)।

...स्कम्भु...— III. i. 82
देखें— स्तम्भुस्तुम्भु० III. i. 82

...स्कुञ्भ्यः — III. i. 82
देखें — स्तम्भुस्तुम्भु० III. i. 82

...स्कुम्भु...— III. i. 82
देखें — स्तम्भुस्तुम्भु० III. i. 82

स्कोः — VIII. ii. 29

(पद के अन्त में तथा झल् परे रहते संयोग के आदि के) सकार तथा ककार का (लोप होता है)।

स्तनः — VI. ii. 163

(संख्या शब्द से उत्तर) स्तन शब्द को (बहुव्रीहि समास में अन्तोदात्त होता है)।

स्तनः — VIII. iii. 86

(अभि तथा निस् से उत्तर) स्तन् धातु के (सकार को शब्द की सञ्ज्ञा गम्यमान हो तो विकल्प से मूर्धन्य आदेश होता है)।

...स्तनयोः— III. ii. 29
देखें— **नासिकास्तनयोः III. ii. 29**

स्तन्भेः— VIII. iii. 67

(उपसर्गस्थ निमित्त से उत्तर) स्तन्भु के (सकार को मूर्धन्य आदेश होता है, अट् के व्यवाय एवं अभ्यास के व्यवाय में भी)।

...स्तभित...— VII. ii. 34
देखें— **ग्रसितस्कभित० VII. ii. 34**

स्तम्ब...— III. ii. 13
देखें— **स्तम्बकर्णयोः III. ii. 13**

स्तम्ब...— III. ii. 24
देखें— **स्तम्बशकृतोः III. ii. 24**

स्तम्बकर्णयोः— III. ii. 13

स्तम्ब तथा कर्ण (सुबन्त) उपपद रहते (क्रमशः रम् तथा जप् धातु से अच् प्रत्यय होता है)।

स्तम्बशकृतोः— III. ii. 24

स्तम्ब तथा शकृत् (कर्म) के उपपद रहते (कृञ् धातु से इन् प्रत्यय होता है)।

स्तम्ब = तृण, घास।

शकृत् = विष्ठा।

स्तम्बे— III. iii. 83

स्तम्ब शब्द उपपद रहते हुए (करण कारक में हन् धातु से क प्रत्यय तथा अप् प्रत्यय भी होता है और अप् प्रत्यय परे रहने पर हन् को घन आदेश भी हो जाता है)।

...स्तम्भु... — III. i. 58
देखें— **जृस्तम्भु० III. i. 58**

स्तम्भु...— VIII. iii. 116
देखें— **स्तम्भुसिवुसहाम् VIII. iii. 116**

स्तम्भुसिवुसहाम्— VIII. iii. 116

स्तम्भु, षिवु तथा षह धातु के (सकार को चङ् परे रहते मूर्धन्य आदेश नहीं होता)।

स्तम्भुस्तुम्भुस्कम्भुस्कुम्भुस्कुञ्भ्यः— III. i. 82

स्तम्भु, स्तुम्भु, स्कम्भु, स्कुम्भु तथा स्कुञ् —इन धातुओं से (श्नु प्रत्यय तथा श्ना प्रत्यय भी होता है, कर्तृवाची सार्वधातुक परे रहते)।

...स्तम्भोः— VIII. iv. 60
देखें— **स्थास्तम्भोः VIII. iv. 60**

...स्तर्या... — III. i. 123
देखें— **निष्टक्र्यदेवहूय० III. i. 123**

...स्ताव्य... — III. i. 123
देखें— **निष्टक्र्यदेवहूय० III. i. 123**

...स्तु...— III. i. 109
देखें— **एतिस्तु० III. i. 109**

...स्तु... — III. ii. 182
देखें— **दाम्नी० III. ii. 182**

...स्तु... — III. iii. 27
देखें— **द्रुस्तुस्रुवः III. iii. 27**

...स्तु... — VII. ii. 13
देखें— **कृसृभृ० VII. ii. 13**

...स्तु...— VIII. iii. 70
देखें— **सेवसित० VIII. iii. 70**

स्तु...— VII. ii. 72
देखें— **स्तुसुधूञ्भ्यः VII. ii. 72**

...स्तु...— VII. iii. 95
देखें— **तुरुस्तु० VII. iii. 95**

स्तुत्...— VIII. iii. 82
देखें— स्तुत्स्तोमसोमाः VIII. iii. 82

स्तुत्स्तोमसोमाः— VIII. iii. 82

(अग्नि शब्द से उत्तर) स्तुत्, स्तोम तथा सोम के (सकार को समास में मूर्धन्य आदेश होता है)।

स्तुत...— VIII. iii. 105
देखें— **स्तुतस्तोमयोः VIII. iii. 105**

स्तुतस्तोमयोः— VIII. iii. 105

(इण् तथा कवर्ग से उत्तर) स्तुत तथा स्तोम के (स को वेदविषय में कई आचार्यों के मत में मूर्धन्य आदेश होता है)।

...स्तुम्भु... — III. i. 82
देखें— **स्तम्भुस्तुम्भु० III. i. 82**

स्तुवः — III. iii. 31

(यज्ञविषय में सम्पूर्वक) स्तु धातु से (कर्तृभिन्न कारक संज्ञा विषय में घञ् प्रत्यय होता है)।

स्तुसुधूञ्भ्यः— VII. ii. 71

ष्टुञ्, षुञ् तथा धूञ् धातु से उत्तर (परस्मैपद परे रहते सिच् को इट् का आगम होता है)।

...स्तृ...— VII. iv. 95

देखें— **स्मृदृत्वर० VII. iv. 95**

स्तेनात्...— V. i. 124

(षष्ठीसमर्थ) स्तेन प्रातिपदिक से (भाव और कर्म अर्थ में यत् प्रत्यय होता है तथा स्तेन शब्द के न का लोप भी हो जाता है)।

स्तोः— VIII. iv. 39

(शकार और चवर्ग के योग में) सकार और तवर्ग के स्थान में (शकार और चवर्ग आदेश होते हैं)।

स्तोक...— II. i. 38

देखें— **स्तोकान्तिकदूरार्थ० II. i. 38**

...स्तोक...— II. i. 64

देखें— **पोटायुवतिस्तोक० II. i. 64**

स्तोक... — II. iii. 33

देखें— **स्तोकाल्पकृच्छ्र० II. iii. 33**

स्तोकादिभ्यः— VI. iii. 23

स्तोकादियों से उत्तर (पञ्चमी विभक्ति का उत्तरपद परे रहते अलुक् होता है)।

स्तोकान्तिकदूरार्थकृच्छ्राणि— II. i. 38

स्तोक = अल्प, अन्तिक = निकट तथा दूर अर्थ वाले (पञ्चम्यन्त सुबन्त) तथा कृच्छ्र – ये (पञ्चम्यन्त सुबन्त) शब्द (समर्थ क्तान्त सुबन्त के साथ विकल्प से समास को प्राप्त होते हैं और वह तत्पुरुष समास होता है)।

स्तोकाल्पकृच्छ्रकतिपयस्य— II. iii. 33

(असत्ववाची) स्तोक, अल्प, कृच्छ्र, कतिपय —इन शब्दों से (करण कारक में तृतीया और पञ्चमी विभक्ति होती है)।

...स्तोभति...— VIII. iii. 65

देखें— **सुनोतिसुवति० VIII. iii. 65**

...स्तोम...— VIII. iii. 82

देखें— **स्तुत्स्तोमसोमाः VIII. iii. 82**

स्तोमः— VIII. iii. 83

(ज्योतिस् तथा आयुस् शब्द से उत्तर) स्तोम शब्द के (सकार को समास में मूर्धन्य आदेश होता है)।

...स्तोमयोः— VIII. iii. 105

देखें— **स्तुतस्तोमयोः VIII. iii. 105**

स्तौति...— VIII. iii. 61

देखें— **स्तौतिण्योः VIII. iii. 61**

...स्तौति...— VIII. iii. 65

देखें— **सुनोतिसुवति० VIII. iii. 65**

स्तौतिण्योः — VIII. iii. 1

(अभ्यास के इण् से उत्तर) स्तु तथा ण्यन्त धातुओं के (आदेश सकार को ही षत्वभूत सन् परे रहते मूर्धन्य आदेश होता है)।

स्त्यः— VI. i. 23

(प्र-पूर्ववाले) स्त्यै धातु को (निष्ठा परे रहते सम्प्रसारण हो जाता है)।

स्त्रः— III. iii. 32

(प्र-पूर्वक) स्तृञ् आच्छादने धातु से (यज्ञविषय को छोड़कर कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

स्त्रिया— I. ii. 67

(पुँल्लिङ्ग शब्द) स्त्रीलिङ्ग शब्द के साथ (शेष रह जाता है, स्त्रीलिङ्ग शब्द हट जाता है, यदि उन शब्दों में स्त्रीत्व पुंस्त्वकृत ही विशेष हो, अन्य प्रकृति आदि सब समान ही हों)।

स्त्रियाः— VI. iii. 33

(एक ही अर्थ में अर्थात् एक ही प्रवृत्तिनिमित्त को लेकर भाषित= कहा है पुँल्लिङ्ग अर्थ को जिस शब्द ने, ऐसे ऊङ्वर्जित भाषितपुंस्क) स्त्री शब्द के स्थान में (पुल्लिङ्गवाची शब्द के समान रूप हो जाता है, पूरणी तथा प्रियादिवर्जित स्त्रीलिङ्ग समानाधिकरण परे हो तो)।

स्त्रियाः— VI. iv. 79

स्त्री शब्द को (अजादि प्रत्यय परे रहते इयङ् आदेश होता है)।

स्त्रियाम् — III. iii. 43

(क्रिया का अदल-बदल गम्यमान हो तो) स्त्रीलिङ्ग में (धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञाविषय तथा भाव में णच् प्रत्यय होता है)।

स्त्रियाम् – III. iii. 94

(धातुमात्र से) स्त्रीलिङ्ग में (कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में क्तिन् प्रत्यय होता है)।

स्त्रियाम्– IV. i. 3

(यहाँ से आगे कहे हुए प्रत्यय, प्रातिपदिकों से) स्त्रीलिङ्ग अर्थ में हुआ करेंगें।

स्त्रियाम्– IV. i. 109

(आङ्गिरस गोत्रापत्य में उत्पन्न जो यञ् प्रत्यय, उसका) स्त्री अभिधेय हो (तो लुक् हो जाता है)।

स्त्रियाम्– IV. i. 174

(क्षत्रियाभिधायी जनपदवाची जो अवन्ति, कुन्ति तथा कुरु शब्द, उनसे भी उत्पन्न जो तद्राज प्रत्यय, उनका) स्त्रीलिङ्ग अभिधेय हो (तो लुक् हो जाता है)।

स्त्रियाम्– V. iv. 14

(णच्प्रत्ययान्त प्रातिपदिक से स्वार्थ में अञ् प्रत्यय होता है) स्त्रीलिङ्ग में।

स्त्रियाम्– V. iv. 143

(बहुव्रीहि समास में अन्य पदार्थ) यदि स्त्री वाच्य हो तो (दन्त शब्द के स्थान में दतृ आदेश हो जाता है, सञ्ज्ञा-विषय में)।

स्त्रियाम्– V. iv. 152

(बहुव्रीहि समास में इन् अन्त वाले शब्दों से समासान्त कप् प्रत्यय होता है) स्त्रीलिङ्ग -विषय में।

स्त्रियाम्– VI. i. 213

(मतुप् से पूर्व आकार को उदात्त होता है, यदि वह मत्वन्त शब्द) स्त्रीलिङ्ग में (सञ्ज्ञाविषयक हों)।

स्त्रियाम्– VI. iii. 33

(एक ही अर्थ में अर्थात् एक ही प्रवृतिनिमित्त को लेकर भाषित = कहा है पुँल्लिङ्ग अर्थ को जिस शब्द ने, ऐसे ऊङ्वर्जित भाषितपुंस्क स्त्री शब्द के स्थान में पुँल्लिङ्गवाची शब्द के समान रूप हो जाता है, पूरणी तथा प्रियादिवर्जित) स्त्रीलिङ्ग (समानाधिकरण) उत्तरपद परे हो तो)।

स्त्रियाम्– VII. i. 96

स्त्रीलिङ्ग में वर्तमान (क्रोष्टु शब्द को भी तृजन्त शब्द के समान अतिदेश हो जाता है)।

स्त्रियाम्– VII. ii. 99

(त्रि तथा चतुर् अङ्ग को) स्त्रीलिङ्ग में (क्रमशः तिसृ, चतसृ आदेश होते हैं, विभक्ति परे रहते)।

...स्त्रियोः– I. ii. 48

देखें– गोस्त्रियोः I. ii. 48

स्त्री– I. ii. 66

(गोत्रप्रत्ययान्त) स्त्रीलिङ्ग शब्द (युवप्रत्ययान्त के साथ शेष रह जाता है और उस स्त्रीलिङ्ग गोत्रप्रत्ययान्त शब्द को पुंवत् कार्य भी हो जाता है, यदि उन दोनों शब्दों में वृद्धयुवप्रत्ययनिमित्तक ही वैरूप्य हो तो)।

स्त्री– I. ii. 73

(तरुणों से रहित ग्रामीण पशुओं के समूह में) स्त्री पशु (शेष रह जाता है, पुमान् हट जाते हैं)।

स्त्री... – IV. i. 87

देखें– स्त्रीपुंसाभ्याम् IV. i. 87

...स्त्रीपुंस...– V. iv. 77

देखें– अचतुर० V. iv. 77

स्त्रीपुंसाभ्याम्– IV. i. 87

('धान्यानां भवने०' V. ii. 1 से पूर्व कहे गये अर्थों में) स्त्री तथा पुंस् शब्दों से (यथासंख्य नञ् तथा स्नञ् प्रत्यय होते हैं)।

स्त्रीभ्यः– IV. i. 120

स्त्रीप्रत्ययान्त प्रातिपदिकों से (अपत्य अर्थ में ढक् प्रत्यय होता है)।

स्त्रीषु– IV. ii. 75

स्त्रीलिङ्गवाची (सौवीर, साल्व तथा पूर्वदेश अभिधेय होने पर ङ्यन्त और आबन्त प्रातिपदिकों से चातुरर्थिक अञ् प्रत्यय होता है)।

...स्त्रोः– III. iii. 120

देखें– तृस्त्रोः III. iii. 120

स्त्र्याख्यौ– I. iv. 3

(ईकारान्त तथा ऊकारान्त) स्त्रीलिङ्ग को कहने वाले शब्द (नदीसञ्ज्ञक होते हैं)।

...स्थ... – VI. iv. 157

देखें–प्रस्थस्फ० VI. iv. 157

स्थः — I. iii. 22

सम्, अव्, प्र तथा वि पूर्वक स्था धातु से (आत्मनेपद होता है)।

स्थः— III. i. 4

स्था धातु से (सुबन्त उपपद रहते 'क' प्रत्यय होता है)।

स्थः— III. ii. 77

(सोपसर्ग या निरुपसर्ग) स्था धातु से (सुबन्त उपपद रहते क और क्विप् प्रत्यय होते हैं)।

...स्थः— III. ii. 139

देखें— ग्लाजिस्थः III. ii. 139

स्थः— VIII. iii. 97

(अम्ब, आम्ब, गो, भूमि, सव्य, अप, द्वि, त्रि, कु, शेकु, शङ्कु, अङ्गु, मञ्जि, पुञ्जि, परमे, बर्हिस्, दिवि तथा अग्नि-इन शब्दों से उत्तर) स्था धातु के (सकार को मूर्धन्य आदेश होता है)।

...स्थयोः— VI. iii. 95

देखें— मादस्थयोः VI. iii. 95

...स्थल... — IV. i. 42

देखें— जानपदकुण्ड0 IV. i. 42

...स्थल...— VI. ii. 129

देखें— कूलसूद० VI. ii. 129

स्थलम्— VIII. iii. 17

(वि, कु, शमि तथा परि से उत्तर) स्थल शब्द के (सकार को मूर्धन्य आदेश होता है)।

स्थविरतरे— IV. i. 165

(भाई से अन्य सात पीढ़यों में से कोई) पद तथा आयु दोनों से बूढ़ा व्यक्ति (जीवित हो तो पौत्रप्रभृति का जो अपत्य, उसके जीते ही विकल्प से युवा संज्ञा होती है; पक्ष में गोत्रसंज्ञा)।

स्था...— I. ii. 17

देखें— स्थाघ्वोः I. ii. 17

...स्था... — I. iv. 34

देखें— श्लाघह्नुङ्स्थाशपाम् I. iv. 34

...स्था...— I. iv. 46

देखें— अधिशीङ्स्थासाम् I. iv. 46

...स्था...— II. iv. 77

देखें— गातिस्थाघुपा० II. iv. 77

...स्था...— III. ii. 154

देखें— लषपत० III. ii. 154

स्था...— III. ii. 175

देखें— स्थेशभास० III. ii. 175

स्था...— III. iii. 95

देखें— स्थागापापचः III. iii. 95

स्था...— III. iv. 16

देखें— स्थेण्कृ० III. iv. 16

...स्था...— III. iv. 72

देखें— गत्यर्थाकर्मक० III. iv. 72

...स्था...— VI. iv. 66

देखें— घुमास्था० VI. iv. 66

...स्था...— VII. iii. 78

देखें— पाघ्राध्मा० VII. iii. 78

...स्था...— VIII. iii. 65

देखें— सुनोतिसुवति० VIII. iii. 65

स्था...— VIII. iv. 60

देखें— स्थास्तम्भोः VIII. iv. 60

स्थागापापचः— III. iii. 95

स्था, गा, पा, पच् धातुओं से (स्त्रीलिङ्ग भाव में क्तिन् प्रत्यय होता है)।

स्थाघ्वोः— I. ii. 16

स्था और घुसंज्ञक धातुओं से परे (सिच् कित्वत् होता है और इकारादेश भी हो जाता है)।

स्थादिषु— VIII. iii. 64

(सित से पहले-पहले) स्था इत्यादियों में (अभ्यास का व्यवधान होने पर भी मूर्धन्य आदेश होता है तथा अभ्यास के सकार को भी मूर्धन्य आदेश होता है)।

...स्थान...— VI. ii. 151

देखें— मन्क्तिन्० VI. ii. 151

...स्थान...— VI. iii. 84

देखें— ज्योतिर्जनपद० VI. iii. 84

स्थानम्... — VIII. iii. 31

(भीरु शब्द से उत्तर) स्थान शब्द के (सकार को समास में मूर्धन्य आदेश होता है)।

स्थानान्त... — IV. iii. 35

देखें— स्थानान्तगोशाल० IV. iii. 35

स्थानान्तगोशालखरशालात् – IV. iii. 35

स्थान अन्त वाले, गोशाल एवं खरशाल प्रातिपदिकों से (भी जातार्थ में उत्पन्न प्रत्यय का लुक् होता है)।

स्थानान्तात्– V. iv. 10

स्थानशब्दान्त प्रातिपदिक से (विकल्प से छ प्रत्यय होता है, यदि सस्थान = तुल्य से स्थानान्त अर्थवत् हो तो)।

स्थानिनः – II. iii. 14

(क्रियार्थ क्रिया उपपद में है जिसके, ऐसी) अप्रयुज्यमान धातु के (अनभिहित कर्मकारक में चतुर्थी विभक्ति होती है)।

स्थानिनि– I. iv. 104

(युष्मद् शब्द के उपपद रहते समान अभिधेय होने पर युष्मद् शब्द का प्रयोग न हो (या हो तो भी मध्यम पुरुष होता है)।

स्थानिवत्– I. i. 55

(आदेश) स्थानी के सदृश माना जाता है, (वर्णसम्बन्धी कार्य को छोड़कर)।

स्थाने– I. i. 49

स्थान में प्राप्यमाण (आदेशों में जो स्थानी के सबसे अधिक समान हो, वह आदेश हो)।

स्थाने– VII. iii. 46

(यकार तथा ककार पूर्व वाले आकार के) स्थान में (जो प्रत्ययस्थित ककार से पूर्व अकार, उसके स्थान में उदीच्य आचार्यों के मत में इकारादेश नहीं होता)।

स्थानेयोगा– I. i. 48

(यदि अष्टाध्यायी में अनियतयोगा षष्ठी कहीं हो तो उसे) स्थान के साथ योग = सम्बन्ध वाला मानना चाहिये।

...स्याम्– VII. iv. 40

देखें– **द्यतिस्यति० VII. iv. 40**

स्थालीबिलात्– V. i. 69

(द्वितीयासमर्थ) स्थालीबिल प्रातिपदिक से ('समर्थ है' अर्थ में छ और यत् प्रत्यय होते है)।

स्थालीबिल = पकाने वाले पात्र का भीतरी हिस्सा।

स्थास्तम्भोः– VIII. iv. 60

(उत् उपसर्ग से उत्तर) स्था तथा स्तम्भ् को (पूर्वसवर्ण आदेश होता है)।

...स्थिर...– VI. iv. 157

देखें– **प्रियस्थिर० VI. iv. 157**

स्थिरः– VIII. iii. 93

(गवि तथा युधि से उत्तर) स्थिर शब्द के (सकार को मूर्धन्य आदेश होता है)।

स्थिरे– III. iii. 17

(सृ धातु से) चिरस्थायी कर्ता वाच्य होने पर (घञ् प्रत्यय होता है)।

...स्थूल...– III. ii. 56

देखें– **आढ्यसुभग० III. ii. 56**

...स्थूल... – VI. ii. 168

देखें– **अव्ययदिक्शब्द० VI. ii. 168**

स्थूल...– VI. iv. 156

देखें– **स्थूलदूर० VI. iv. 156**

स्थूल... – VII. ii. 20

देखें– **स्थूलबलयोः VII. ii. 20**

स्थूलदूरयुवह्रस्वक्षिप्रक्षुद्राणाम्– VI. iv. 156

स्थूल, दूर, युव, ह्रस्व, क्षिप्र, क्षुद्र —इन अङ्गों का (पर जो यणादिभाग, उसका लोप होता है; इष्ठन्, इमनिच् तथा ईयसुन् परे रहते तथा उस यणादि से पूर्व को गुण होता है)।

स्थूलबलयोः– VII. ii. 20

(दृढ शब्द निष्ठा परे रहते) स्थूल = मोटा तथा बलवान् अर्थ में (निपातन किया जाता है)।

स्थूलादिभ्यः– V. iv. 3

स्थूलादि प्रातिपदिकों से ('प्रकार-वचन' गम्यमान हो तो कन् प्रत्यय होता है)।

स्थे– VI. iii. 19

स्थ शब्द के उत्तरपद रहते (भी भाषाविषय में सप्तमी का अलुक् नहीं होता है)।

स्थेण्कृञ्वदिचरिहुतमिजनिभ्यः – III. iv. 16

(क्रिया के लक्षण में वर्तमान) स्था, इण्, कृञ्, वदि, चरि, हु; तमि तथा जनि धातुओं से (वेदविषय में तोसुन् प्रत्यय होता है)।

...स्थेयाख्ययोः – I. iii. 23

देखें– **प्रकाशनस्थेयाख्ययोः I. iii. 23**

स्थेशभासपिसकसः — III. ii. 175

स्था, ईश, भास्, पिस्, कस् —इन धातुओं से (तच्छीलादि कर्त्ता हों तो वर्तमानकाल में वरच् प्रत्यय होता है)।

...स्थौल्य...— IV. i. 42

देखें— वृत्यमत्रावपना० IV. i. 42

स्ध्वोः— VIII. ii. 37

(धातु का अवयव जो एक अच् वाला तथा झषन्त, उसके स्थान में भष् आदेश होता है, झलादि) सकार तथा (झलादि) ध्व शब्द के परे रहते (एवं पदान्त में)।

...स्नञौ— IV. i. 87

देखें— नञ्स्नञौ IV. i. 87

स्नातेः— VIII. iii. 89

(नि तथा नदी शब्द से उत्तर) 'ष्णा शौचे' धातु के (सकार को कुशलता गम्यमान हो तो मूर्धन्य आदेश होता है)।

स्नात्व्यादयः— VII. i. 49

स्नात्वी इत्यादि शब्द (भी वेदविषय में निपातन किये जाते हैं)।

...स्नु...— III. i. 89

देखें— दुहस्नुनमाम् III. i. 89

स्नु...— VII. ii. 36

देखें— स्नुक्रमोः VII. ii. 36

स्नुक्रमोः— VII. ii. 36

स्नु तथा क्रम् धातुओं के (वलादि आर्धधातुक को इट् आगम होता है, यदि स्नु तथा क्रम् आत्मनेपद के निमित्त न हों तो)।

स्नेहविपातने— VII. iii. 39

(ली तथा ला अङ्ग को) स्नेह = घृतादि पदार्थों के पिघलने अर्थ में (णि परे रहते विकल्प से क्रमशः नुक् तथा लुक् आगम होता है)।

...स्नौ— V. iv. 40

देखें— सस्नौ V. iv. 40

स्पर्धायाम्— I. iii. 39

स्पर्धा करने अर्थ में (आङ्पूर्वक ह्वेञ् धातु से आत्मनेपद होता है)।

...स्पर्शयोः— VI. i. 24

देखें— द्रवमूर्तिस्पर्शयोः VI. i. 24

...स्पशाम्— VII. iv. 95

देखें— स्मृदृत्वर० VII. iv. 95

...स्पष्ट ...— VII. ii. 27

देखें— दान्तशान्त० VII. ii. 27

स्पृशः— III. ii. 58

स्पृश् धातु से (उदकभिन्न सुबन्त उपपद रहते 'क्विन्' प्रत्यय होता है)।

...स्पृशः— III. iii. 16

देखें— पदरुज० III. iii. 16

...स्पृशि...— VIII. iii. 110

देखें— रपरसृपि० VIII. iii. 110

स्पृहि ...— III. ii. 158

देखें— स्पृहिगृहि० III. ii. 158

...स्पृहि ...— VIII. iii. 110

देखें— रपरसृपि० VIII. iii. 110

स्पृहिगृहिपतिदयिनिद्रातन्द्राश्रद्धाभ्यः— III. ii. 158

स्पृह, गृह, पत, दय, नि और तत्पूर्वक द्रा, श्रत् पूर्वक डुधाञ् —इन धातुओं से (तच्छीलादि कर्ता हों तो वर्तमानकाल में आलुच् प्रत्यय होता है)।

स्पृहेः— I. iv. 36

स्पृह् धातु के (प्रयोग में ईप्सित जो है, वह कारक सम्प्रदानसंज्ञक होता है)।

स्फायः— VI. i. 22

स्फायी धातु को (निष्ठा परे रहते स्फी आदेश हो जाता है)।

स्फायः— VII. iii. 41

'स्फायी वृद्धौ' अङ्ग को (णि परे रहते वकारादेश होता है)।

स्फिग...— VI. ii. 187

देखें— स्फिगपूत० VI. ii. 187

स्फिगपूतवीणाञ्जोध्वकुक्षिसीरनामनाम — VI. ii. 187

(अप उपसर्ग से उत्तर) स्फिग, पूत, वीणा, अञ्जस्, अध्वन्, कुक्षि तथा हल के वाची शब्दों को एवं नाम शब्द को (भी अन्तोदात्त होता है)।

स्फिग = कूल्हा ।

पूत = पवित्र, योजनाकृत, आविष्कृत ।

अञ्जस् = सीधा।

अध्वन् = मार्ग, समय, आकाश, साधन।

कुक्षि = कोख, पेट, गर्भाशय, गर्त, खाड़ी।

...स्फिर... – VI. iv. 157
देखें– प्रियस्थिर० VI. iv. 157

स्फी– VI. i. 22

(स्फायी धातु को निष्ठा के परे रहते) स्फी आदेश हो जाता है।

स्फुरति...– VI. i. 46
देखें– स्फुरतिस्फुलत्योः VI. i. 46

स्फुरति...– VIII. iii. 76
देखें– स्फुरतिस्फुलत्योः VIII. iii. 76

स्फुरतिस्फुलत्योः– VI. i. 46
स्फुर् तथा स्फुल् धातुओं के (एच् के स्थान में घञ् प्रत्यय के परे रहते (आकारादेश हो जाता है)।

स्फुरतिस्फुलत्योः– VIII. iii. 76

(निर्, नि, वि उपसर्ग के उत्तर) स्फुरति तथा स्फुलति के (सकार को विकल्प से मूर्धन्यादेश होता है)।

...स्फुरोः– VI. i. 53
देखें– चिस्फुरोः VI. i. 53

...स्फुलत्योः– VI. i. 46
देखें– स्फुरतिस्फुलत्योः VI. i. 46

...स्फुलत्योः– VIII. iii. 76
देखें– स्फुरतिस्फुलत्योः VIII. iii. 76

स्फोटायनस्य– VI. i. 119

(अच् परे रहते गो को अवङ् आदेश विकल्प से होता है) स्फोटायन आचार्य के मत में।

स्मयतेः– VI. i. 56

(हेतु जहाँ भय का कारण हो, उस अर्थ में वर्तमान) ष्मिङ् धातु के (एच् के विषय में णिच् परे रहते नित्य ही आत्व हो जाता है)।

स्मात्...– VII. i. 15
देखें– स्मात्स्मिनौ VII. i. 15

स्मात्स्मिनौ– VII. i. 15

(आकारान्त अङ्ग से उत्तर ङसि तथा ङि के स्थान में क्रमशः) स्मात् तथा स्मिन् आदेश होते हैं।

...स्मि...– III. ii. 167

देखें– नमिकम्पि० III. ii. 167

स्मि...– VII. ii. 74

देखें– स्मिपूङ्० VII. ii. 74

...स्मिनौ– VII. i. 13

देखें– स्मात्स्मिनौ VII. i. 13

स्मिपूङ्रञ्ज्वशाम्– VII. ii. 74

स्मिङ्, पूङ्, ऋ, अञ्जू, अशू —इन अङ्गों के (सन् को इट् आगम होता है)।

...स्मृ...– I. iii. 57

देखें– ज्ञाश्रुस्मृदृशाम् I. iii. 57

स्मृ...– VII. iv. 95

देखें– स्मृदृत्वर० VII. iv. 95

स्मृदृत्वरप्रथम्रदस्तृस्पशाम्– VII. iv. 95

स्मृ, दृ, जित्वरा, प्रथ, म्रद, स्तृञ्, स्पश् —इन अङ्गों के (अभ्यास को चङ्परक णि परे रहते अकारादेश होता है)।

स्मे– III. ii. 118

(परोक्ष अनद्यतन भूतकाल में वर्तमान धातु से) स्म शब्द उपपद रहते (लट् प्रत्यय होता है)।

स्मे– III. iii. 165

(प्रैष, अतिसर्ग और प्राप्तकाल अर्थ गम्यमान हों तो मुहूर्त भर से ऊपर के काल को कहने में) स्म शब्द उपपद रहते (धातु से लोट् प्रत्यय होता है)।

प्रैष = भेजना, आदेश, उन्माद।

अतिसर्ग = स्वीकृति, अनुमति, पृथक् करना।

प्राप्तकाल = समयानुकूल यथाऋतु।

स्मै– VII. i. 14

(अकारान्त सर्वनाम अङ्ग से उत्तर ङे के स्थान में) स्मै आदेश होता है।

स्मोत्तरे – III. iii. 176

स्म शब्द अधिक है जिससे, उस (माङ् शब्द) के उपपद रहते (धातु से लङ् तथा लुङ् प्रत्यय होते हैं)।

स्यः— VI. i. 129

स्य शब्द के (सु का वेदविषय में हल् परे रहते बहुल करके लोप हो जाता है, संहिता के विषय में)।

स्यतासी— III. i. 33

(धातु से लृ = लृट्, लृङ् तथा लुट् परे रहते यथासंख्य करके) स्य तथा तास् प्रत्यय हो जाते हैं।

स्यदः — VI. iv. 28

(वेग अभिधेय होने पर घञ् परे रहते) स्यद शब्द निपातन किया जाता है।

स्यन्दते— VIII. iii. 72

(अनु, वि, परि, अभि, नि उपसर्गों से उत्तर) स्यन्दू धातु के (सकार को मूर्धन्य आदेश होता है, यदि प्राणी का कथन न हो रहा हो तो)।

स्यसनोः— I. iii. 92

स्य और सन् प्रत्ययों के होने पर (वृतादि धातुओं से विकल्प करके परस्मैपद होता है)।

स्यसनोः— VIII. iii. 117

स्य तथा सन् प्रत्यय के परे रहते (षुञ् धातु के सकार को मूर्धन्य आदेश नहीं होता)।

स्यसिच्सीयुट्तासिषु— VI. iv. 62

(भाव तथा कर्मविषयक) स्य, सिच्, सीयुट् और तास् के परे रहते (उपदेश में अजन्त धातुओं तथा हन्, ग्रह एवं दृश् धातुओं को चिण् के समान विकल्प से कार्य होता है)।

स्याट्— VII. iii. 114

(आबन्त सर्वनाम अङ्ग से उत्तर ङित् प्रत्यय को) स्याट् आगम होता है (तथा उस आबन्त सर्वनाम को ह्रस्व भी हो जाता है)।

स्यात्— I. ii. 55

(सम्बन्ध को प्रमाण मानकर संज्ञा करें तो भी उसके अभाव होने पर उस संज्ञा का अदर्शन) होना चाहिये, (पर वह होता नहीं है)।

स्यात्— V. i. 16

(प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से षष्ठ्यर्थ में तथा प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक से सप्तम्यर्थ में यथाविहित प्रत्यय होता है) यदि वह प्रथमासमर्थ प्रातिपदिक स्यात् = 'सम्भव हो' क्रिया के साथ समानाधिकरण वाला हो तो।

स्ये— VII. ii. 7

(ऋकारान्त तथा हन् धातु के) स्य को (इट् आगम होता है)।

स्रवतिशृणोतिद्रवतिप्रवतिप्लवतिच्यवतीनाम् — VII. iv. 81

स्रु, श्रु, द्रु, प्रुङ्, प्लुङ्, च्युङ् —इनके (अवर्णपरक यण् परे है जिससे, ऐसे होने वाले उवर्णान्त अभ्यास को विकल्प से इकारादेश होता है)।

...स्रंसु... — VII. iv. 84
देखें— **वञ्चुस्रंसु० VII. iv. 84**

...स्रंसु... — VIII. ii. 72
देखें— **वसुस्रंसु० VIII. ii. 72**

...स्रिवि... — VI. iv. 20
देखें— **ज्वरत्वर० VI. iv. 20**

...स्रु... — VII. ii. 13
देखें— **कृसृभृ० VII. ii. 13**

...स्रुभ्यः— I. iii. 86
देखें— **बुधयुधनशजनेङ्० I. iii. 86**

...स्रुभ्यः— III. i. 48
देखें— **णिश्रिद्रुस्रुभ्यः III. i. 48**

...स्रुवः— III. iii. 27
देखें— **द्रुस्तुस्रुवः III. iii. 27**

...स्रुव... — VI. iii. 114
देखें— **अविष्टाष्ट० VI. iii. 114**

स्रोतसः— IV. iv. 113

(सप्तमीसमर्थ) स्रोतस् प्रातिपदिक से (वेदविषय में भवार्थ में ड्यत्, ड्य दोनों प्रत्यय विकल्प से होते है)।

स्वकरणे— I. iii. 56

स्वकरण = पाणिग्रहण अर्थ में (वर्तमान उपपूर्वक यम् धातु से आत्मनेपद होता है)।

...स्वञ्जाम् — VI. iv. 25
देखें— **दंशसञ्ज० VI. iv. 25**

...स्वञ्जाम्— VIII. iii. 65
देखें— **सुनोतिसुवति० VIII. iii. 65**

...स्वञ्जाम्— VIII. iii. 70
देखें— **सेवसित० VIII. iii. 70**

स्वतन्त्रः— I. iv. 54

क्रिया की सिद्धि में स्वतन्त्र रूप से विवक्षित (कारक की कर्ता संज्ञा होती है)।

...स्वतवसाम्— VII. i. 83
देखें— **दृक्स्ववः० VII. i. 83**

स्वतवान्— VIII. iii. 11

स्वतवान् शब्द के (नकार को रु होता है, पायु शब्द परे रहते)।

...स्वदि ...— VIII. iii. 62
देखें— **स्विदिस्वदि० VIII. iii. 62**

...स्वधा... — II. iii. 16
देखें— **नमःस्वस्तिस्वाहा० II. iii. 16**

स्वन... — III. iii. 62
देखें— **स्वनहसोः III. iii. 62**

...स्वनः— III. iii. 64
देखें— **गदनद० III. iii. 64**

स्वनः— VIII. iii. 69

(वि उपसर्ग से उत्तर तथा चकार से अव उपसर्ग से उत्तर भोजन अर्थ में) स्वन् धातु के (सकार को मूर्धन्य आदेश होता है, अड्व्यवाय एवं अभ्यासव्यवाय में भी)।

स्वनहसोः— III. iii. 62

(उपसर्गरहित) स्वन और हस् धातुओं से (कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में विकल्प से अप् प्रत्यय होता है)।

स्वमोः— VII. i. 23

(नपुंसकलिङ्गवाले अङ्ग से उत्तर) सु और अम् का (लुक् होता है)।

स्वपः— III. iii. 91

'ञिष्वप् शये' धातु से (भाव में नन् प्रत्यय होता है)।

...स्वपतेः— IV. iv. 104
देखें— **पथ्यतिथिवसतिस्वपतेः IV. iv. 104**

स्वपादि...— VI. i. 182
देखें— **स्वपादिहिंसाम् VI. i. 182**

स्वपादिहिंसाम्— VI. i. 182

स्वपादि धातुओं के तथा हिंस् धातु के (अजादि अनिट् लसार्वधातुक परे हो तो विकल्प से आदि को उदात्त हो जाता है)।

...स्वपि...— I. ii. 8
देखें— **रुदविदमुषग्रहिस्वपिप्रच्छः I. ii. 8**

स्वपि... — III. ii. 172
देखें—**स्वपितृषोः III. ii. 172**

...स्वपि... — VI. i. 15
देखें— **वचिस्वपि० VI. i. 15**

स्वपि...— VI. i. 19
देखें... — **स्वपिस्यमि० VI. i. 19**

स्वपितृषोः — III. ii. 172

स्वप् तथा तृष् धातुओं से (तच्छीलादि कर्ता हो, तो वर्तमानकाल में नजिङ् प्रत्यय होता है)।

स्वपिस्यमिव्येञाम्— VI. i. 19

ञिष्वप्, स्यमु तथा व्येञ् धातुओं को (यङ् प्रत्यय के परे रहते सम्प्रसारण हो जाता है)।

स्वम्— I. i. 34

स्व शब्द (की जस्-सम्बन्धी कार्य में विकल्प से सर्वनाम संज्ञा होती है, ज्ञाति तथा धन की आख्या को छोड़कर)।

ज्ञाति = पिता, भाई आदि।

स्वम्— I. i. 67

(इस व्याकरणशास्त्र में शब्द के) अपने (रूप का ग्रहण होता है,उस शब्द के अर्थ का नहीं और न ही पर्यायवाची शब्दों का, शब्दसंज्ञा को छोड़कर)।

स्वम्— IV. iv. 123

(षष्ठीसमर्थ असुर प्रातिपदिक से) 'अपना' —इस अर्थ में (यत् प्रत्यय होता है, वेदविषय में)।

स्वम्— VI. ii. 17

(स्वामिन् शब्द उत्तरपद रहते तत्पुरुष में) स्ववाची पूर्व-पद को (प्रकृतिस्वर हो जाता है)।

स्वयम्— II. i. 24

'स्वयम्' यह अव्यय (क्तान्त समर्थ सुबन्त के साथ विकल्प से समास को प्राप्त होता है और वह तत्पुरुष समास होता है)।

...स्वर... — I. i. 57
देखें— **पदान्तद्विर्वचनवरेयलोप० I. i. 57**

...स्वर... — VII. i. 18
देखें— **मन्थमनस्० VII. i. 18**

...स्वर... — VIII. i. 22
देखें— **सुप्स्वर० VIII. i. 22**

स्वरति... — VII. ii. 44
देखें— **स्वरतिसूति० VII. ii. 44**

स्वरतिसूतिसूयतिधूञूदितः— VII. ii. 44

'स्वृ शब्दोपतापयोः', 'सूङ् प्राणिगर्भविमोचने', 'षूङ् प्राणिप्रसवे, 'धूञ् कम्पने' तथा ऊदित् धातुओं से उत्तर (वलादि आर्धधातुक को विकल्प से इट् आगम होता है)।

स्वरादि... — I. i. 36
देखें— **स्वरादिनिपातम् I. i. 36**

स्वरादिनिपातम्— I. i. 36

स्वरादिगणपठित शब्दों की तथा निपातों (की अव्यय संज्ञा होती है)।

स्वरित... — I. iii. 72
देखें— **स्वरितञितः I. iii. 72**

स्वरितः— I. ii. 31

(समाहार = उदात्त, अनुदात्त उभयगुणमिश्रित अच् की) स्वरित संज्ञा होती है।

स्वरितः— VIII. ii. 4

(उदात्त और स्वरित के स्थान में वर्तमान यण् से उत्तर अनुदात्त के स्थान में) स्वरित आदेश होता है।

स्वरितः— VIII. ii. 6

(पदादि अनुदात्त के परे रहते उदात्त के साथ में हुआ जो एकादेश, वह विकल्प करके) स्वरित होता है।

स्वरितः— VIII. iv. 65

(उदात्त से उत्तर अनुदात्त को) स्वरित होता है।

स्वरितञितः— I. iii. 72

स्वरित इत् वाली तथा ञकार इत् वाली धातुओं से (आत्मनेपद होता है, यदि उस क्रिया का फल कर्ता को मिलता हो तो)।

...स्वरितपरस्य— I. ii. 40
देखें— **उदात्तस्वरितपरस्य I. ii. 40**

स्वरितम्— VI. i. 179

(तकार इत्सञ्ज्ञक है जिसका, उसको) स्वरित होता है।

स्वरितम्— VII. ii. 103

(आम्रेडित परे रहते, पूर्वपद की टि को) स्वरित (प्लुत) होता है; (असूया, सम्मति, कोप तथा कुत्सन गम्यमान होने पर)।

...स्वरितयोः — VIII. ii. 4
देखें— **उदात्तस्वरितयोः VIII. ii. 4**

स्वरितस्य — I. ii. 37

(सुब्रह्मण्या नाम वाले निगद में एकश्रुति नहीं होती, किन्तु उस निगद में वर्तमान) स्वरित को (उदात्त तो हो जाता है)।

स्वरितात्— I. ii. 39

स्वरित स्वर से उत्तर (अनुदात्तों को एकश्रुति होती है, संहिता-विषय में)।

स्वरितेन— I. iii. 11

स्वरितचिह्न से (अधिकारसूत्र ज्ञात होता है)।

...स्वरितोदयम्— VIII. iv. 60
देखें— उदात्तस्वरितोदयम् VIII. iv. 60

स्वरे— II. i. 2

स्वर कर्तव्य होने पर (आमन्त्रित परे रहते सुबन्त पर अङ्ग के समान होता है)।

...स्ववस्... — VII. i. 83
देखें— दृक्स्ववः० VII. i. 83

स्वसा— VIII. iii. 84

(मातृ तथा पितृ शब्द से उत्तर) स्वसृ शब्द के (सकार को समास में मूर्धन्य आदेश होता है)।

स्वसुः— IV. i. 143

स्वसृ प्रातिपदिक से (अपत्यार्थ में छ प्रत्यय होता है)।

स्वसृ... — I. ii. 68
देखें— स्वसृदुहितृभ्याम् I. ii. 68

स्वसृ... — VI. iii. 23
देखें— स्वसृपत्योः VI. iii. 23

...स्वसृ... — VI. iv. 11
देखें— अप्तृन्तृच्० VI. iv. 11

स्वसृदुहितृभ्याम्— I. ii. 68

(भ्रातृ और पुत्र शब्द यथाक्रम) स्वसृ और दुहितृ शब्दों के साथ (शेष रह जाते हैं; स्वसृ, दुहितृ शब्द हट जाते हैं)।

स्वसृपत्योः— VI. iii. 23

स्वसृ तथा पति शब्द के उत्तरपद रहते (विद्या तथा योनि-सम्बन्धवाची ऋकारान्त शब्दों से उत्तर षष्ठी का विकल्प से अलुक् होता है)।

...स्वस्ति... — II. iii. 16
देखें— नमःस्वस्तिस्वाहा० II. iii. 16

...स्वस्तिकस्य— VI. iii. 114
देखें—अविष्टाष्ट० VI. iii. 114

...स्वस्रादिभ्यः— IV. i. 10
देखें— षट्स्वस्रादिभ्यः IV. i. 10

...स्वाः...— VII. iii. 47
देखें — भस्त्रैषा० VII. III 47

स्वागतादीनाम्— VII. iii. 7

स्वागत इत्यादि शब्दों को (भी जो कुछ कहा है, वह नहीं होता)।

स्वाङ्गम्— VI. ii. 167

अपने अङ्गवाची (उत्तरपद मुख शब्द को बहुव्रीहि-समास में अन्तोदात्त होता है)।

स्वाङ्गम्— VI. ii. 177

(बहुव्रीहि-समास में उपसर्ग से उत्तर पर्शुवर्जित ध्रुव) स्वाङ्ग को (अन्तोदात्त होता है)।

पर्शु = कुठार, शास्त्र, गणेश एवं परशुराम का विशेषण।

स्वाङ्गात्— IV. i. 54

स्वाङ्गवाची, (उपसर्जन, असंयोग उपधावाले अदन्त प्रातिपदिक) से (स्त्रीलिङ्ग में विकल्प से ङीष् प्रत्यय होता है)।

स्वाङ्गात्— V. iv. 113

स्वाङ्गवाची (जो सक्थि तथा अक्षि शब्द, तदन्त) से समासान्त षच् प्रत्यय होता है, बहुव्रीहि समास में)।

सक्थि = जंघा, हड्डी, गाड़ी का धुरा

अक्षि = आंख, दो की संख्या।

स्वाङ्गात्— VI. iii. 11

(मूर्धन् तथा मस्तकवर्जित हलन्त एवम् अदन्त) स्वाङ्गवाची शब्दों से उत्तर (सप्तमी का कामभिन्न शब्द उत्तरपद रहते अलुक् होता है)।

स्वाङ्गात् — VI. iii. 39

स्वाङ्गवाची शब्द से उत्तर (भी ईकारान्त स्त्रीशब्द को पुंवद्भाव नहीं होता)।

स्वाङ्गे:... — IIi. iv. 54
(अध्रुव) स्वाङ्गवाची (द्वितीयान्त शब्द) उपपद रहते (धातु से णमुल् प्रत्यय होता है)।

स्वाङ्गे— III. iv. 61
(तस्प्रत्ययान्त) स्वाङ्गवाची शब्द उपपद हो तो (कृ, भू धातुओं से क्त्वा, णमुल् प्रत्यय होते हैं)।

स्वाङ्गे— V. iv. 159
'स्वाङ्ग' में वर्तमान (नाडीशब्दान्त तथा तन्त्रीशब्दान्त बहुव्रीहि से समासान्त कप् प्रत्यय नहीं होता है।
नाडी = किसी पौधे का पोला डंठल।
तन्त्री = डोरी, स्नायु, तात, पूंछ।

स्वाङ्गेभ्यः— V. ii. 66
(सप्तमीसमर्थ) स्वाङ्गवाची प्रातिपदिकों से ('तत्पर' अर्थ में कन् प्रत्यय होता है)।

...स्वाति... — IV. iii. 34
देखें— श्रविष्ठाफल्गुन्यनु० IV. iii. 34

स्वादिभ्यः— III. i. 73
षुञ् आदि धातुओं से (श्नु प्रत्यय होता है, कर्तृवाची सार्वधातुक परे रहते)।

स्वादिषु— I. iv. 17
(सर्वनामस्थान-भिन्न) सु आदि प्रत्ययों के परे रहते (पूर्व की पद संज्ञा होती है)।

स्वादुमि— III. iv. 26
स्वादुवाची शब्दों के उपपद रहते (समानकर्तृक पूर्वकालिक कृञ् धातु से णमुल् प्रत्यय होता है)।

...स्वान्त... — VII. ii. 18
देखें — क्षुब्धस्वा० VII. ii. 18

स्वापेः— VI. i. 18
णिजन्त स्वप् धातु को (चङ् प्रत्यय के परे रहते सम्प्रसारण हो जाता है)।

...स्वाप्योः — VII. iv. 67
देखें— द्युतिस्वाप्योः VII. iv. 67

स्वामि... — III. i. 103
देखें— स्वामिवैश्ययोः III. i. 103

स्वामिन्— V. ii. 126
'स्वामिन्' शब्द आमिन्प्रत्ययान्त निपातन किया जाता है; ('मत्वर्थ' में, ऐश्वर्य गम्यमान हो तो)।

स्वामिनि - VI. ii. 17
स्वामिन् शब्द उत्तरपद रहते (तत्पुरुष-समास में स्ववाची पूर्वपद को प्रकृतिस्वर हो जाता है)।

स्वामिवैश्ययोः— III. i. 103
स्वामी और वैश्य अभिधेय हों तो (अर्य शब्द ऋ धातु से यत्प्रत्ययान्त निपातन है)।

स्वामी... — II. iii. 39
देखें— स्वामीश्वराधिपति० II. iii. 39

स्वामीश्वराधिपतिदायादसाक्षिप्रतिभूप्रसूतैः— II. iii. 39
स्वामी, ईश्वर, अधिपति, दायाद, साक्षी, प्रतिभू, प्रसूत —इन शब्दों के योग में (षष्ठी और सप्तमी विभक्ति होती है)।

...स्वाहा... — II. iii. 16
देखें— नमःस्वस्तिस्वाहा० II. iii. 16

स्वित्— VIII. ii. 102
'उपरि स्विदासीत्' इसकी (टि को भी प्लुत अनुदात्त होता है)।

...स्विदि ...— I. ii. 19
देखें— शीङ्स्विदिमिदिक्ष्विदिधृषः I. ii. 19

...स्विदि ... — VIII. iii. 62
देखें— स्विदिस्वदि०VIII. iii. 62

स्विदिस्वदिसहीनाम्— VIII. iii. 62
(अभ्यास के इण् से उत्तर ण्यन्त) ञिष्विदा, ष्वद तथा षह् धातुओं के (सकार को सकारादेश ही होता है, षत्वभूत सन् के परे रहते भी)।

...स्वृ...— VII. ii. 49
देखें— इवन्तर्ध० VII. ii. 49

स्वे— III. iv. 40
स्ववाची (करण) उपपद रहते (पुष् धातु से णमुल् प्रत्यय होता है)।

...स्वौ...— III. iv. 2
देखें— हिस्वौ III. iv. 2

स्वौजसमौट्छष्टाभ्याम्भिस्ङेभ्याम्भ्यस्ङसिभ्याम्भ्यस्ङसोसाम्ड्योस्सुप् — IV. i. 2
सु, औ, जस्, अम्, औट्, शस्, टा, भ्याम्, भिस्, ङे, भ्याम्, भ्यस्, ङसि, भ्याम्, भ्यस्, ङस्, ओस्, आम्, ङि, ओस्, सुप्— २१ प्रत्यय (सभी ङ्यन्त, आबन्त तथा प्रातिपदिकों से होते हैं।

ह

ह्... — VII. ii. 5
देखें — हम्यन्तक्षण० VII. ii. 5

ह— प्रत्याहारसूत्र V
आचार्य पाणिनि द्वारा अपने पञ्चम प्रत्याहारसूत्र में पठित प्रथम वर्ण।
पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का दसवाँ वर्ण।

ह— प्रत्याहारसूत्र XIV
आचार्य पाणिनि द्वारा अपने चौदहवें तथा अन्तिम प्रत्याहारसूत्र में पठित वर्ण।
पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी के आदि में पठित वर्णमाला का वर्ण।

ह... — III. ii. 116
देखें— हशश्वतोः III. ii. 116

ह— V. iii. 13
(वेदविषय में सप्तम्यन्त किम् शब्द से विकल्प से) ह प्रत्यय (भी) होता है।

ह— VIII. i. 60
'ह' —इससे युक्त (प्रथम तिङन्त विभक्ति को क्षिया गम्यमान होने पर अनुदात्त नहीं होता)।

हः— III. i. 148
गत्यर्थक ओहाङ् और त्यागार्थक ओहाक् धातु से (व्रीहि और काल अभिधेय हो तो 'ण्युट्' प्रत्यय होता है)।

हः— V. iii. 11
(सप्तम्यन्त इदम् प्रातिपदिक से) ह प्रत्यय होता है।

हः— VII. iii. 54
(हन् धातु के) हकार के स्थान में (कवर्गादेश होता है; ञित्, णित् प्रत्यय तथा नकार परे रहते)।

हः— VII. iv. 52
(तास् और अस् के सकार को) हकारादेश होता है, (एकार परे रहते)।

हः— VIII. ii. 31
हकार के स्थान में (ढकार आदेश होता है, झल् परे रहते या पदान्त में)।

हः— VIII. iv. 61
(झय् प्रत्याहार से उत्तर) हकार को (विकल्प से पूर्वसवर्ण आदेश होता है)।

...हतिषु— VI. iii. 53
देखें— हिमकाषिहतिषु VI. iii. 53

...हतेषु— VI. iii. 42
देखें— घरूप० VI. iii. 42

हन्...— III. iv. 36
देखें— हन्कृञ्ग्रहः III. iv. 36

...हन्... — VI. iv. 12
देखें— इन्हन्पूषा० VI. iv. 12

...हन... — III. ii. 154
देखें— लषपत० III. ii. 154

...हन... — III. ii. 171
देखें— आदृगम० III. ii. 171

...हन... — VI. iv. 16
देखें— अज्झनगमाम् VI. iv. 16

...हन... — VI. iv. 62
देखें— अज्झन० VI. iv. 62

...हन... — VI. iv. 98
देखें— गमहन० VI. iv. 98

...हन्... — VI. iv. 135
देखें— षपूर्वहन्० VI. iv. 135

...हन... — VII. ii. 68
देखें— गमहन० VII. ii. 68

हनः— I. ii. 14
हन् धातु से परे (सिच् प्रत्यय आत्मनेपद विषय में कित्वत् होता है)।

...हनः— I. iii. 28
देखें— यमहनः I. iii. 28

हनः— II. iv. 42
हन् धातु को (वध आदेश होता है, आर्धधातुक लिङ् परे रहते)।

हनः — III. i. 108
(अनुपसर्ग) हन् धातु से (सुबन्त उपपद रहते भाव में क्यप् प्रत्यय और तकारान्तादेश होता है)।

हनः — III. ii. 49

(आशीर्वचन गम्यमान होने पर) हन् धातु से (कर्म उपपद रहते ड प्रत्यय होता है)।

हनः— III. ii. 86

'हन्' धातु से (कर्म उपपद रहते भूतकाल में 'णिनि' प्रत्यय होता है)।

हनः— III. iii. 76

(अनुपसर्ग) हन् धातु से (भाव में अप् प्रत्यय होता है, तथा साथ ही हन् को वध आदेश भी हो जाता है)।

हनः— III. iv. 37

(करण कारक उपपद हो तो) हन् धातु से (णमुल् प्रत्यय होता है)।

हनः— VII. iii. 32

हन् अङ्ग को (तकारादेश होता है; चिण् तथा णमुल् प्रत्यय को छोड़कर ञित्, णित् प्रत्यय परे रहते)।

हननी— IV. iv. 121

(षष्ठीसमर्थ रक्षस् तथा यातु प्रातिपदिकों से) हननी अर्थ में (यत् प्रत्यय होता है)।

रक्षस् = पिशाच, बेताल।

यातु = यात्रा, हवा, समय, भूतप्रेत, राक्षस।

हननी = जिसके द्वारा हनन किया जाए।

...हनोः— VII. ii. 70
देखें— ऋद्धनोः VII. ii. 70

हन्कृञ्ग्रहः— III. iv. 36

(समूल, अकृत तथा जीव कर्म उपपद हों तो यथासङ्ख्य करके) हन्, कृञ् तथा ग्रह् धातुओं से (णमुल् प्रत्यय होता है)।

...हन्त... — VIII. i. 30
देखें— यद्यदि० VIII. i. 30

हन्त— VIII. i. 54

हन्त से युक्त (सोपसर्ग उत्तमपुरुषवर्जित लोडन्त तिङन्त को भी विकल्प से अनुदात्त नहीं होता)।

हन्ति— IV. iv. 35

(द्वितीयासमर्थ पक्षी, मत्स्य तथा मृगवाची प्रातिपदिकों से) मारता है' — अर्थ में (ठक् प्रत्यय होता है)।

...हन्ति... — VIII. iv. 17
देखें— गदनद० VIII. iv. 17

हन्तेः— VI. iv. 36

हन् अङ्ग के स्थान में (हि परे रहते ज आदेश होता है)।

हन्तेः— VII. iii. 54

हन् धातु के (हकार के स्थान में कवर्गादेश होता है; ञित्, णित् प्रत्यय तथा नकार परे रहते)।

हन्तेः— VIII. iv. 21

(उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर अकार पूर्व है जिससे, ऐसे) हन् धातु के (नकार को णकारादेश होता है)।

हयवरट् — प्रत्याहारसूत्र V

ह, य, व, र वर्णों का उपदेश कर अन्त में टकार को इत् किया है, प्रत्याहार बनाने के लिए। इससे एक प्रत्याहार बनता है — अट्।

...हयोः— VIII. ii. 85
देखें— हैहयोः VIII. ii. 85

हरति— IV. iv. 15

(तृतीयासमर्थ उत्सङ्गादि प्रातिपदिकों से) 'स्थानान्तर प्राप्त करता है' — अर्थ में (ठक् प्रत्यय होता है)।

हरति— V. i. 49

(वंशादिगणपठित प्रातिपदिकों से उत्तर जो भार शब्द, तदन्त द्वितीयासमर्थ प्रातिपदिक से) 'हरण करता है', ('वहन करता है' और 'उत्पन्न करता है' अर्थों में यथाविहित प्रत्यय होते हैं)।

हरतेः— III. ii. 9

(अनुद्यमन = पुरुषार्थ से कार्य को सम्पादित न करना अर्थ में वर्तमान) हृञ् धातु से (कर्म उपपद रहते अच् प्रत्यय होता है)।

हरतेः— III. ii. 25

'हृ' धातु से ('दृति' तथा 'नाथ' कर्म उपपद रहते पशु अभिधेय होने पर 'इन्' प्रत्यय होता है)।

दृति = मशक, मछली, खाल, धौंकनी।

नाथ = प्रभु, पति, बैल की नाक में डाली रस्सी।

...हरित... — V. iv. 125
देखें— सुहरित० V. iv. 125

हरितादिभ्यः — IV. i. 100

(अञन्त) हरितादि प्रातिपदिकों से (अपत्य अर्थ में फक् प्रत्यय होता है)।

...हरिश्चन्द्रौ— VI. i. 148

देखें— प्रस्कण्वहरिश्चन्द्रौ VI. i. 148

हरीतक्यादिभ्यः— IV. iii. 164

(षष्ठीसमर्थ) हरीतकी आदि प्रातिपदिकों से (विकार अवयव अर्थों में विहित प्रत्यय का फल अभिधेय होने पर भी लुप् होता है)।

हरीतकी = हर्र का पेड़।

हर्षे— III. iii. 68

हर्ष अभिधेय होने पर (प्रमद और सम्मद —ये अप्-प्रत्ययान्त शब्द निपातित किये जाते हैं, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में)।

हल्— I. iii. 3

(उपदेश में वर्तमान अन्तिम) हल् = समस्त व्यञ्जन वर्ण (इत्सञ्ज्ञक होता है)।

हल्... — VI. i. 66

देखें - हलङ्याब्भ्यः VI. i. 66

हल्— VI. i. 66

(हलन्त, ङ्यन्त तथा आबन्त दीर्घ से उत्तर सु, ति और सि का जो अपृक्त) हल्, (उसका लोप होता है)।

हल्... — VI. iii. 8

देखें— हलदन्तात् VI. iii. 8

...हल... — III. i. 21

देखें— मुण्डमिश्र० III. i. 21

हल... — III. ii. 183

देखें— हलसूकरयोः III. ii. 183

हल... — IV. iii. 123

देखें— हलसीरात् IV. iii. 123

हल... — IV. iv. 81

देखें— हलसीरात् IV. iv. 81

हलः— I. i. 7

व्यवधानरहित =(जिनके बीच में अच् न हों, ऐसे) दो या दो से अधिक हलों की (संयोग संज्ञा होती है)।

हलः— III. i. 12

(अच्व्यन्त भृशादि शब्दों से भू धातु के अर्थ में क्यङ् प्रत्यय होता है और उन भृशादि शब्दों में विद्यमान) हलन्त शब्दों के हल् का (लोप भी होता है)।

हलः— III. i. 83

हलन्त से उत्तर (श्ना के स्थान में शानच् होता है, 'हि' परे रहते)।

हलः— III. iii. 103

हलन्त, (जो गुरुमान् धातु) उनसे (भी स्त्रीलिङ्ग कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में अ प्रत्यय हो जाता है)।

हलः— III. iii. 121

हलन्त धातुओं से (भी संज्ञाविषय होने पर करण तथा अधिकरण कारक में पुँल्लिङ्ग में प्रायः करके घञ् प्रत्यय होता है)।

हलः— VI. iv. 2

(अङ्ग के अवयव) हल् से उत्तर (जो सम्प्रसारण का अण्, तदन्त अङ्ग को दीर्घ होता है)।

हलः— VI. iv. 24

(इकार जिनका इत्सञ्ज्ञक नहीं है, ऐसे) हलन्त अङ्ग की (उपधा के नकार का लोप होता है; कित्, ङित् प्रत्ययों के परे रहते)।

हलः— VI. iv. 49

हल् से उत्तर ('य्' का लोप होता है, आर्धधातुक परे रहते)।

हलः— VI. iv. 150

हल् से उत्तर (भसञ्ज्ञक अङ्ग के उपधाभूत तद्धित के यकार को भी ईकार परे रहते लोप होता है)।

हलः— VIII. iv. 30

(इच् उपधा वाले) हलादि (धातु) से विहित (जो कृत् प्रत्यय, तत्स्थ जो अच् से उत्तर नकार, उसको भी उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर विकल्प से णकारादेश होता है)।

हलः— VIII. iv. 63

हल् से उत्तर (यम् का यम् परे रहते विकल्प से लोप होता है)।

हलदन्तात् — VI. iii. 8

हलन्त तथा अकारान्त शब्द से उत्तर (सञ्ज्ञाविषय में सप्तमी विभक्ति का उत्तरपद परे रहते अलुक् होता है)।

...हलन्तस्य – VII. ii. 3

देखें– **वदव्रज० VII. ii. 3**

हलन्तात्– I. ii. 10

(इक् के) समीप जो हल्, उससे परे (भी झलादि सन् कित्वत् होता है)।

हलसीरात्– IV. iii. 123

(षष्ठीसमर्थ) हल और सीर शब्दों से ('इदम्' अर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

हल = खेत जोतने का प्रधान उपकरण, लांगल।

सीर = हल, सूर्य, आक का पौधा।

हलसीरात्– IV. iv. 81

(द्वितीयासमर्थ) हल और सीर प्रातिपदिकों से ('ढोता है' अर्थ में ठक् प्रत्यय होता है)।

हलसूकरयोः– III. ii. 183

(पूञ् धातु से करण कारक में ष्ट्रन् प्रत्यय होता है, यदि वह करण कारक) हल तथा सूकर का अवयव हो तो।

...हलात्– IV. iv. 97

देखें– **मतजनहलात् IV. iv. 97**

हलादिः– VI. i. 173

(षट्सञ्ज्ञक शब्दों से उत्तर तथा त्रि, चतुर् शब्दों से उत्तर) हलादि विभक्ति (उदात्त होती है)।

हलादिः – VII. iv. 60

(अभ्यास का) आदि हल् (शेष रहता है)।

हलादेः– I. ii. 26

(इकार, उकार उपधावाली, रलन्त एवं) हलादि धातुओं से परे (सेट् सन् और सेट् क्त्वा प्रत्यय विकल्प से कित् नहीं होते हैं)।

हलादेः– III. i. 22

हलादि (जो एकाच् धातु, उस) से (पुनः पुनः होने या अतिशयता व्यक्त होने पर यङ् प्रत्यय होता है)।

हलादेः– III. ii. 149

हल् आदि वाली (अनुदात्तेत्) धातुओं से (तच्छीलादि कर्ता हों तो वर्तमानकाल में युच् प्रत्यय होता है)।

हलादेः– VI. iv. 161

(भसञ्ज्ञक) हल् आदि वाले अङ्ग के (लघु ऋकार के स्थान में र आदेश होता है; इष्ठन्, इमनिच् तथा ईयसुन् परे रहते)।

हलादेः– VII. ii. 7

हलादि अङ्ग के (लघु अकार को परस्मैपदपरक इडादि सिच् के परे रहते विकल्प से वृद्धि नहीं होती)।

हलादौ– VI. ii. 7

(प्राच्य देशों के जो करों के नाम वाले शब्द, उनमें भी) हलादि शब्द के परे रहते (हलन्त तथा अदन्त शब्दों से परे सप्तमी विभक्ति का अलुक् होता है)।

हलि... – V. iv. 121

देखें– **हलिसक्थ्योः V. iv. 121**

हलि– VI. i. 128

(ककार जिनमें नहीं है तथा जो नञ् समास में वर्तमान नहीं है, ऐसे एतत् तथा तत् शब्दों के सु का लोप हो जाता है;) हल् परे रहते, (संहिता के विषय में)।

हलि– VI. iv. 66

(घुसञ्ज्ञक, मा, स्था, गा, पा, ओहाक् त्यागे तथा षो अन्तकर्मणि —इन अङ्गों को) हलादि (कित्, ङित्) प्रत्ययों के परे रहते (ईकारादेश होता है)।

हलि– VI. iv. 100

(घस् तथा भस् अङ्ग की उपधा का वेदविषय में लोप होता है) हलादि (तथा अजादि कित्, ङित्) प्रत्यय परे रहते)।

हलि– VI. iv. 113

(श्नान्त अङ्ग एवं घुसञ्ज्ञक को छोड़कर जो अभ्यस्तसञ्ज्ञक अङ्ग उनके आकार के स्थान में ईकारादेश होता है;) हलादि (कित्, ङित् सार्वधातुक) परे रहते।

हलि– VII. ii. 89

(रै अङ्ग को) हलादि (विभक्ति) परे रहते (आकारादेश हो जाता है)।

हलि – VII. ii. 113

(ककाररहित इदम् शब्द के इद् भाग का) हलादि विभक्ति परे रहते (लोप होता है)।

हलि — VII. iii. 81

(उकारान्त अङ्ग को लुक् हो जाने पर) हलादि (पित् सार्वधातुक) परे रहते (वृद्धि होती है)।

हलि— VIII. ii. 77

हल् परे रहते (भी रेफान्त एवं वकारान्त धातु का जो इक्, उसको दीर्घ होता है)।

हलि— VIII. iii. 22

(भो, भगो, अघो तथा अवर्ण पूर्ववाले पदान्त यकार का) हल् परे रहते (सब आचार्यों के मत में लोप होता है)।

हलिसक्थ्योः— V. iv. 121

(नञ्, दुस् तथा सु शब्दों से उत्तर जो) हलि तथा सक्थि शब्द, तदन्त (बहुव्रीहि) से (समासान्त अच् प्रत्यय विकल्प से होता है)।

...हलिषु— III. i. 117
देखें— **मुञ्जकल्क० III. i. 117**

...हलोः— III. i. 125
देखें— **ऋहलोः III. i. 125**

...हलोः— VI. iv. 34
देखें— **अङ्हलोः VI. iv. 34**

...हलौ— I. i. 10
देखें— **अज्झलौ I. i. 10**

हलङ्याब्भ्यः— VI. i. 66

हलन्त, ङ्यन्त तथा आबन्त (दीर्घ) से उत्तर (सु, ति, सि का जो अपृक्त हल्, उसका लोप होता है)।

हलपूर्वात्— VI. i. 168

हल् पूर्व में है जिसके, (ऐसा जो उदात्त के स्थान में यण्) उससे परे (नदीसञ्ज्ञक प्रत्यय तथा अजादि सर्वनाम स्थानभिन्न विभक्ति को उदात्त होता है)।

...हविः...— III. i. 129
देखें— **मानहविर्निवास० III. i. 129**

हविः... — V. i. 4
देखें— **हविरपूपादिभ्यः V. i. 4**

हविरपूपादिभ्यः— V. i. 4

हवि विशेषवाची तथा 'अपूप' इत्यादि प्रातिपदिकों से (क्रीत अर्थ से पूर्व पूर्व पठित अर्थों में विकल्प से यत् प्रत्यय होता है)।

हविषः— II. iii. 69

(देवता सम्प्रदान है जिसका, उस क्रिया के वाचक प्र पूर्वक इष धातु तथा ब्रू धातु के कर्म) हवि के वाचक शब्द से (षष्ठी विभक्ति होती है)।

...हविष्याभ्यः— IV. iv. 122
देखें— **रेवतीजगतीहविष्याभ्यः IV. iv. 122**

हव्ये— III. ii. 66

हव्य (सुबन्त) उपपद रहते (वेदविषय में वह् धातु से ञ्युट् प्रत्यय होता है, यदि 'वह्' धातु पद के उत्तर अर्थात् मध्य में वर्तमान न हो तो)।

हव्य = आहुति, आहुति के रुप में दिया जाने वाला द्रव्य, घी।

हशश्वतोः— III. ii. 116

ह, शश्वत् —ये शब्द उपपद हों तो (धातु से अनद्यतन परोक्ष भूतकाल में लङ् प्रत्यय होता है और चकार से लिट् भी होता है)।

हशि— VI. i. 110

हश् प्रत्याहार के परे रहते (भी अकार से उत्तर रु के रेफ को उकार आदेश होता है, संहिता के विषय में)।

...हसोः— III. iii. 62
देखें— **स्वनहसोः III. iii. 62**

...हस्त...— IV. iii. 34
देखें— **श्रविष्ठाफल्गुन्यनु० IV. iii. 34**

हस्तात्— V. ii. 133

हस्त शब्द से (मत्वर्थ में इनि प्रत्यय होता है, जाति वाच्य हो तो)।

हस्तादाने— III. iii. 40

(चोरी से भिन्न) हाथ से ग्रहण करना गम्यमान हो (तो चिञ् धातु से कर्तृभिन्न कारक और भाव में घञ् प्रत्यय होता है)।

...हस्ताभ्याम्— V. i. 97
देखें— **यथाकथाचहस्ताभ्याम् V. i. 97**

हस्ति... — III. ii. 54
देखें— **हस्तिकपाटयोः III. ii. 54**

...हस्ति... — IV. ii. 46
देखें— **अचित्तहस्ति० IV. ii. 46**

हस्तिकपाटयोः — III. ii. 54

हस्ती तथा कपाट (कर्म) उपपद रहते (शक्ति गम्यमान हो, तो हन् धातु से टक् प्रत्यय होता है)।

...हस्तिभ्याम्— V. ii. 38

देखें— पुरुषहस्तिभ्याम् V. ii. 38

...हस्तिभ्याम्— V. iv. 78

देखें— ब्रह्महस्तिभ्याम् V. iv. 78

हस्ते— I. iv. 76

(हस्ते तथा) पाणौ शब्द (विवाह विषय में हों तो नित्य ही उनकी कृञ् के योग में गति और निपात संज्ञा होती है)।

हस्ते— III. iv. 39

हस्तवाची करण उपपद हो तो (वर्त्ति तथा ग्रह् धातुओं से णमुल् प्रत्यय होता है)।

...हा... — VIII. i. 24

देखें— चवाहा० VIII. i. 24

...हान्तात्— V. iv. 106

देखें— चुदषहान्तात् V. iv. 106

...हाभ्याम्— VIII. iv. 45

देखें— रहाभ्याम् VIII. iv. 45

हायनान्त... — V. i. 129

देखें— हायनान्तयुवादिभ्यः V. i. 129

हायनान्तयुवादिभ्यः— V. i. 129

(षष्ठीसमर्थ) हायन अन्तवाले तथा युवादि प्रातिपदिकों से (भाव और कर्म अर्थों में अण् प्रत्यय होता है)।

...हायनान्तात्— IV. i. 27

देखें— दामहायनान्तात् IV. i. 27

...हार... — VI. iii. 59

देखें— मन्थौदन० VI. iii. 59

...हारिणौ— VI. ii. 65

देखें— सप्तमीहारिणौ VI. ii. 65

हारी— V. ii. 69

(द्वितीयासमर्थ अंश प्रातिपदिक से) 'हरण करने वाला' अर्थ में (कन् प्रत्यय होता है)।

...हास...— VI. i. 210

देखें— त्यागराग० VI. i. 210

हास्तिन...— VI. ii. 101

देखें— हास्तिनफलक० VI. ii. 101

हास्तिनफलकमार्देयाः— VI. ii. 101

हास्तिन, फलक तथा मार्देय —इन पूर्वपद शब्दों को (पुर शब्द उत्तरपद रहते अन्तोदात्त नहीं होता)।

हास्तिन = हस्तिनापुर का नाम।

फलक = पट्ट, शिला, चपटी सतह, ढाल, पत्र, नितम्ब।

...हास्तिनायन... — VI. iv. 174

देखें— दाण्डिनायनहास्ति० VI. iv. 174

हि... — III. iv. 2

देखें— हिस्वौ III. iv. 2

हि— III. iv. 87

(लोडादेश जो सिप्, उसके स्थान में) हि आदेश होता है (और वह अपित् भी होता है)।

हि— VIII. i. 34

हि शब्द से युक्त (तिङन्त को भी अनुकूलता गम्यमान होने पर अनुदात्त नहीं होता)।

...हि ... — VIII. i. 56

देखें— यद्धितुपरम् VIII. i. 56

हिः— VII. iv. 42

(डुधाञ् अङ्ग को) हि आदेश होता है, (तकारादि कित् प्रत्यय के परे रहते)।

...हित... — II. i. 35

देखें— तदर्थार्थबलिहित० II. i. 35

...हित... — VI. ii. 155

देखें— संपाद्यर्ह० VI. ii. 155

हितम्— IV. iv. 65

हित (समानाधिकरणवाले भक्ष्यवाची प्रथमासमर्थ) प्रातिपदिक से (षष्ठ्यर्थ में ढक् प्रत्यय होता है)।

हितम्— V. i. 5

(चतुर्थीसमर्थ प्रातिपदिक से) 'हित' अर्थ में (यथाविहित प्रत्यय होता है)।

हितात् — IV. iv. 75

यहाँ से लेकर 'तस्मै हितम्' से पहले (कहे जाने वाले अर्थों में सामान्येन यत् प्रत्यय का अधिकार रहेगा)।

हिते – VI. ii. 15

हितवाची (तत्पुरुष समास) में (सुख तथा प्रिय शब्द उत्तरपद रहते पूर्वपद को प्रकृतिस्वर हो जाता है)।

...हितैः– II. iii. 73

देखें– आयुष्यमद्रभद्र० II. iii. 73

हिनु...– VIII. iv. 15

देखें– हिनुमीना VIII. iv. 15

हिनुमीना– VIII. iv. 15

(उपसर्ग में स्थित निमित्त से उत्तर) हिनु तथा मीना के (नकार को णकार आदेश होता है)।

...हिम...– IV. i. 48

देखें– इन्द्रवरुणभव० IV. i. 48

हिम...– VI. iii. 53

देखें– हिमकाषिहतिषु VI. iii. 53

हिमकाषिहतिषु– VI. iii. 53

हिम, काषिन्, हति –इनके उत्तरपद रहते (भी पाद शब्द को पद् आदेश होता है)।

हति = हत्या, प्रहार, त्रुटि, गुणा।

...हिमवद्भ्याम्– IV. iv. 112

देखें– वेशन्तहिमवद्भ्याम् IV. iv. 112

...हिमश्रथाः– VI. iv. 29

देखें– अवोदैधोद्म०VI. iv. 29

...हिरण्मयानि– VI. iv. 174

देखें– दाण्डिनायन० VI. iv. 174

हिरण्य... – VI. ii. 55

देखें– हिरण्यपरिमाणम् VI. ii. 55

हिरण्यपरिमाणम्– VI. ii. 55

हिरण्य और परिमाण दोनों अर्थों को कहने वाले पूर्वपद को (धन शब्द उत्तरपद रहते विकल्प से प्रकृतिस्वर होता है)।

...हिरण्यात्– V. ii. 65

देखें– धनहिरण्यात् V. ii. 65

हिस्वौ– III. iv. 2

(क्रिया का पौनःपुन्य गम्यमान हो तो धात्वर्थ-सम्बन्ध होने पर धातु से सब कालों में लोट् प्रत्यय हो जाता है और उस लोट् के स्थान में) हि और स्व आदेश (नित्य होते हैं तथा त, ध्वम्-भावी लोट् के स्थान में विकल्प से) हि, स्व आदेश होते हैं।

.... हिंस... – III. ii. 146

देखें– निन्दहिंस० III. ii. 146

...हिंस... – III. ii. 167

देखें– नमिकम्पि० III. ii. 167

...हिंसाम्– VI. i. 182

देखें– स्वपादिहिंसाम् VI. i. 182

हिंसायाम्– II. iii. 56

हिंसा अर्थ में विद्यमान (जसु, नि प्र पूर्वक हन्, ण्यन्त नट एवं क्रथ तथा पिष् —इन धातुओं के कर्म में शेष विवक्षित होने पर षष्ठी विभक्ति होती है)।

हिंसायाम्– VI. i. 137

(उप तथा प्रति उपसर्ग से उत्तर कृ विक्षेपे धातु के परे रहते) हिंसा के विषय में (ककार से पूर्व सुट् आगम होता है, संहिता के विषय में)।

हिंसायाम्– VI. iv. 123

हिंसा अर्थ में वर्तमान (राध् अङ्ग के अवर्ण के स्थान में एकारादेश तथा अभ्यासलोप होता है; कित्, ङित् लिट् तथा सेट् थल् परे रहते)।

हिसार्थानाम्– III. iv. 48

(अनुप्रयुक्त धातु के साथ समान कर्मवाली) हिंसार्थक धातुओं से (भी तृतीयान्त उपपद रहते णमुल् प्रत्यय होता है)।

...हिंसार्थेभ्यः– I. iii. 15

देखें– गतिहिंसार्थेभ्यः I. iii. 15

हीने– I. iv. 85

न्यून की प्रतीति होने पर (अनु कर्मप्रवचनीय और निपातसंज्ञक होता है)।

हीयमान... – V. iv. 47

देखें– हीयमानपापयोगात् V. iv. 47

हीयमानपापयोगात्– V. iv. 47

हीयमान तथा पाप शब्द के साथ सम्बन्ध है जिन शब्दों का, तदन्त शब्दों से परे (भी जो तृतीया विभक्ति, तदन्त से तसि प्रत्यय विकल्प से होता है, यदि वह तृतीया कर्ता में न हुई हो तो)।

...हु... – III. iv. 16

देखें– स्थेण्कृञ्० III. iv. 16

...हु... — VI. i. 186
देखें— भीह्रीभृ० VI. i. 186

हु...— VI. iv. 87
देखें— हुश्नुवोः VI. iv. 87

हु...— VI. iv. 101
देखें— हुझल्भ्यः VI. iv. 101

हुझल्भ्यः— VI. iv. 101

हु तथा झलन्त से उत्तर (हलादि हि के स्थान में धि आदेश होता है)।

...हुवाम्— III. i. 39
देखें— भीह्रीभृहुवाम् III. i. 39

हुश्नुवोः— VI. iv. 87

हु तथा श्नुप्रत्ययान्त (अनेकाच्) अङ्ग का (संयोग पूर्व में नहीं है जिससे ऐसा जो उवर्ण, उसको अजादि सार्वधातुक प्रत्यय परे रहते यणादेश होता है)।

हूते— VIII. ii. 84

(दूर से) बुलाने में (जो प्रयुक्त, उसकी टि को भी प्लुत उदात्त होता है)।

हूते— VIII. ii. 107

(दूर से) बुलाने के (विषय से भिन्न) विषय में (अप्रगृह्यसञ्ज्ञक ऐच् के पूर्वार्द्ध भाग को प्लुत करने के प्रसङ्ग में आकारादेश होता है तथा उत्तरवाले भाग को इकार, उकार आदेश होते हैं)।

हृ...— I. iv. 53
देखें— हृक्रोः I. iv. 53

हृक्रोः — I. iv. 53

हृञ् एवं कृञ् धातु का (अण्यन्त अवस्था का जो कर्ता, वह ण्यन्त अवस्था में विकल्प से कर्मसंज्ञक होता है)।

हृत्— VI. i. 61

(वेदविषय में हृदय शब्द के स्थान में) हृत् आदेश हो जाता है, (शस् प्रकार वाले प्रत्ययों के परे रहते)।

हृत्— VI. iii. 49

(हृदय शब्द को) हृत् आदेश होता है; (लेख, यत्, अण् तथा लास परे रहते)।

लास = कूदना, प्रेमालिङ्गन, स्त्रियों का नाच, रस।

हृत्... — VII. iii. 19
देखें — हृद्भग० VII. iii. 19

हृदयस्य— IV. iv. 95

(षष्ठीसमर्थ) हृदय प्रातिपदिक से (प्रिय अर्थ में यत् प्रत्यय होता है)।

हृदयस्य— VI. iii. 49

हृदय शब्द को (हृद् आदेश होता है; लेख, यत्, अण्, तथा लास परे रहते)।

हृद्भगसिन्ध्वन्ते— VII. iii. 19

हृद्, भग, सिन्धु ये शब्द अन्त में है जिन अङ्गों के, उनके (पूर्वपद के तथा उत्तरपद के अचों में आदि अच् को भी ञित्, णित् तथा कित् तद्धित परे रहते वृद्धि होती है)।

हृषेः— VII. ii. 29

(लोम विषय में) हृष् धातु को (निष्ठा परे रहते इट् आगम विकल्प से नहीं होता है)।

हे— VIII. iii. 26

(मकारपरक) हकार के परे रहते (पदान्त मकार को विकल्प से मकारादेश होता है)।

हेः— VI. iv. 101

(हु तथा झलन्त से उत्तर हलादि) हि के स्थान में (धि आदेश होता है)।

हेः— VI. iv. 105

(अकारान्त अङ्ग से उत्तर) हि का (लुक् हो जाता है)।

हेः— VII. iii. 56

'हि गतौ' धातु के (हकार को कवर्गादेश होता हे, चङ् परे न हो तो)।

हेः— VIII. ii. 93

(पूछे गये प्रश्न के प्रत्युत्तर वाक्य में वर्तमान) हि शब्द को (विकल्प करके प्लुत उदात्त होता है)।

...हेति...— III. iii. 97
देखें— ऊतियूति० III. iii. 97

हेतु... — III. ii. 20
देखें— हेतुताच्छील्य० III. ii. 20

हेतु... — III. iii. 156
देखें— **हेतुहेतुमतोः III. iii. 156**

हेतु... — IV. iii. 81
देखें— **हेतुमनुष्येभ्यः IV. iii. 81**

हेतुः— I. iv. 55

(उस स्वतन्त्र कर्त्ता का जो प्रयोजन कारक, उसकी) हेतु संज्ञा (तथा कर्तृसंज्ञा) होती है।

हेतुताच्छील्यानुलोम्येषु— III. ii. 20

(कर्म उपपद रहते कृञ् धातु से) हेतु, ताच्छील्य = तत्स्वभावता और आनुलोम्य = अनुकूलता गम्यमान हो तो (ट प्रत्यय होता है)।

हेतुप्रयोगे— II. iii. 26

हेतु शब्द के प्रयोग करने पर (हेतु द्योत्य हो तो षष्ठी विभक्ति होती है)।

हेतुभये— I. iii. 68

(लकारवाच्य) कर्त्ता से भय होने पर (ण्यन्त भी तथा स्मि धातुओं से आत्मनेपद होता है)।

हेतुभये— VI. i. 55

हेतु जहाँ भय का कारण हो, उस अर्थ में वर्तमान (ञिभी धातु के एच् के स्थान में णिच् प्रत्यय परे रहते विकल्प से आत्व हो जाता है)।

हेतुभये— VII. iii. 40

('ञिभी भये' अङ्ग को) हेतुभय अर्थ में (णि परे रहते षुक् आगम होता है)।

हेतुमति— III. i. 26

हेतुमत् अभिधेय होने पर (भी धातु से णिच् प्रत्यय होता है)।

स्वतन्त्र कर्ता का प्रयोजक 'हेतु' होता है। उस हेतु का व्यापार 'हेतुमत्'।

...हेतुमतोः— III. iii. 156
देखें— **हेतुहेतुमतोः III. iii. 156**

हेतुमनुष्येभ्यः— IV. iii. 81

(पञ्चमीसमर्थ) हेतु तथा मनुष्यवाची प्रातिपदिकों से ('आगत' अर्थ में विकल्प से रूप्य प्रत्यय होता है)।

हेतुहेतुमतोः— III. iii. 156

हेतु और हेतुमत् अर्थ में वर्तमान (धातु से लिङ् प्रत्यय विकल्प से होता है)।

हेतौ— II. iii. 23

फलसाधनयोग्य पदार्थ = हेतु में (तृतीया विभक्ति होती है)।

हेतौ— V. iii. 26

'हेतु' अर्थ में वर्तमान (तथा 'प्रकारवान्' अर्थ में वर्तमान किम् प्रातिपदिक से धा प्रत्यय होता है, वेदविषय में)।

...हेत्वोः— III. ii. 126
देखें— **लक्षणहेत्वोः III. ii. 126**

...हेप्रयोगे— VIII. ii. 85
देखें— **हैहेप्रयोगे VIII. ii. 85**

हेमन्त... — II. iv. 28
देखें— **हेमन्तशिशिरौ II. iv. 28**

हेमन्तशिशिरौ— II. iv. 28

हेमन्त व शिशिर (के द्वन्द्व – समासान्त का पूर्ववत् लिङ्ग होता है, वेदविषय में)।

हेमन्तात्— IV. iii. 21

(कालवाची) हेमन्त शब्द से (भी वेदविषय में ढञ् प्रत्यय होता है)।

है... — VIII. ii. 85
देखें— **हैहेप्रयोगे VIII. ii. 85**

है... — VIII. ii. 85
देखें— **हैहयोः VIII. ii. 85**

हैयङ्गवीनम्— V. ii. 23

हैयङ्गवीन शब्द का निपातन किया जाता है, (सञ्ज्ञा-विषय में)।

...हैलिहिल... — VI. ii. 38
देखें— **व्रीह्यपराहण० VI. ii. 38**

हैहयोः— VIII. ii. 85

(है तथा हे के प्रयोग होने पर जो दूर से बुलाने में प्रयुक्त वाक्य, उसमें) है तथा हे को (ही प्लुत उदात्त होता है)।

हैहेप्रयोगे — VIII. ii. 85

है तथा हे के प्रयोग होने पर (जो दूर से बुलाने में प्रयुक्त वाक्य, उसमें है तथा हे को ही प्लुत उदात्त होता है)।

होः — II. iii. 3

'हु' धातु के (अनभिहित कर्म में द्वितीया तथा तृतीया विभक्ति होती है, वेदविषय में)।

...होः— VII. ii. 104

देखें— तिहोः VII. ii. 104

...होः— VII. iv. 62

देखें— कुहोः VII. iv. 62

...होतृ... — VI. iv. 11

देखें— अप्तृन्तृच्० VI. iv. 11

होत्राभ्यः— V. i. 134

(षष्ठीसमर्थ) ऋत्विग्विशेषवाची प्रातिपदिकों से (भाव और कर्म अर्थों में छ प्रत्यय होता है)।

हौ— III. i. 83

हि परे रहते (हलन्त से उत्तर श्ना के स्थान में शानच् आदेश होता है)।

हौ— VI. iv. 35

(शास् अङ्ग के स्थान में) हि परे रहते (शा आदेश हो जाता है)।

हौ— VI. iv. 117

(ओहाक् अङ्ग को विकल्प से आकारादेश होता है तथा इकार आदेश भी विकल्प से होता है) हि परे रहते।

हौ— VI. iv. 119

(घुसञ्ज्ञक अङ्ग एवम् अस् को एकारादेश तथा अभ्यास का लोप होता है) हि (ङित्) परे रहते।

...ह्नुङः...— I. iv. 34

देखें— श्लाघह्नुङ्स्थाशपाम् I. iv. 34

हम्यन्तक्षणश्वसजागृणिश्व्येदिताम्— VII. iv. 5

हकारान्त, मकारान्त तथा यकारान्त अङ्गों को एवं क्षण, श्वस्, जागृ, णि, श्वि तथा एदित् अङ्गों को (परस्मैपद-परक इडादि सिच् परे रहते वृद्धि नहीं होती)।

...ह्यस्... — IV. ii. 104

देखें— ऐषमोह्यः० IV. ii. 104

...ह्योः— VII. i. 35

देखें— तुह्योः VII. i. 35

...ह्रदोत्तरपदात्— IV. ii. 141

देखें— कन्थापलद० IV. ii. 141

ह्रस्व... — I. ii. 27

देखें— ह्रस्वदीर्घप्लुतः I. ii. 27

ह्रस्व... — VI. i. 170

देखें— ह्रस्वनुड्भ्याम् VI. i. 170

...ह्रस्व... — VI. iv. 156

देखें— स्थूलदूर० VI. iv. 156

ह्रस्व... — VII. i. 54

देखें— ह्रस्वनद्यापः VII. i. 54

ह्रस्वः— I. ii. 46

(नपुंसकलिङ्ग में वर्तमान प्रातपिदिक को) ह्रस्व हो जाता है।

ह्रस्वः— I. iv. 6

ह्रस्व (स्त्र्याख्य इकारान्त, उकारान्त) शब्द (तथा इयङ्, उवङ्-स्थानी ईकारान्त ऊकारान्त स्त्र्याख्य शब्द भी ङित् प्रत्यय के परे रहते विकल्प से नदीसंज्ञक होते हैं)।

ह्रस्वः— VI. i. 128

(असवर्ण अच् परे हो तो इक् को शाकल्य आचार्य के मत में प्रकृतिभाव हो जाता है तथा उस इक् के स्थान में) ह्रस्व (भी) हो जाता है।

ह्रस्वः— VI. iii. 42

(भाषितपुंस्क शब्द से उत्तर ङ्यन्त अनेकाच् शब्द को) ह्रस्व हो जाता है; (घ, रूप, कल्प, चेलट्, बुव, गोत्र, मत तथा हत शब्दों के परे रहते)।

ह्रस्वः— VI. iii. 60

(ङी अन्त में नहीं है जिसके, ऐसा जो इक् अन्तवाला शब्द, उसको गालव आचार्य के मत में विकल्प से) ह्रस्व होता है, (उत्तरपद परे रहते)।

ह्रस्वः— VI. iv. 72

(मित्सञ्ज्ञक अङ्ग की उपधा को) ह्रस्व होता है, (णि परे रहते)।

ह्रस्वः— VI. iv. 94

(खच्परक णि परे रहते अङ्ग की उपधा को) ह्रस्व होता है।

ह्रस्वः — VII. iii. 80

(पूञ् इत्यादि अङ्गों को शित् प्रत्यय परे रहते) ह्रस्व होता है।

ह्रस्वः — VII. iii. 107

(अम्बा = मां अर्थ वाले अङ्गों को तथा नदीसञ्ज्ञक अङ्गों को सम्बुद्धि परे रहते) ह्रस्व हो जाता है।

ह्रस्वः— VII. iii. 114

(आबन्त सर्वनाम अङ्ग से उत्तर ङित् प्रत्यय को स्याट् आगम होता है तथा उस आबन्त सर्वनाम को) ह्रस्व भी हो जाता है।

ह्रस्वः— VII. iv. 1

(चङ्परक णि के परे रहते अङ्ग की उपधा को) ह्रस्व होता है।

ह्रस्वः— VII. iv. 12

(शृ, दृ तथा पृ अङ्गों को लिट् परे रहते विकल्प से) ह्रस्व होता है।

ह्रस्वः— VII. iv. 23

(उपसर्ग से उत्तर 'ऊह वितर्के' अङ्ग को यकारादि कित्, ङित् प्रत्यय परे रहते) ह्रस्व होता है।

ह्रस्वः— VII. iv. 59

(अङ्ग के अभ्यास को) ह्रस्व होता है।

ह्रस्वदीर्घप्लुतः— I. ii. 27

(उकाल, ऊकाल तथा ऊ३काल अर्थात् एकमात्रिक, द्विमात्रिक तथा त्रिमात्रिक अच् की यथासंख्य करके) ह्रस्व, दीर्घ और प्लुत संज्ञा होती है।

ह्रस्वनद्यापः— VII. i. 54

ह्रस्वान्त, नद्यन्त तथा आप् अन्तवाले अङ्ग से उत्तर (आम् को नुट् का आगम होता है)।

ह्रस्वनुड्भ्याम्— VI. i. 170

(अन्तोदात्त) ह्रस्वान्त तथा नुट् से उत्तर (मतुप् प्रत्यय उदात्त होता है)।

ह्रस्वम्— I. iv. 90

ह्रस्व अक्षर (लघुसञ्ज्ञक होता है)।

ह्रस्वस्य—V. i. 69

ह्रस्वान्त धातु को (पित् तथा कृत् प्रत्यय के परे रहते तुक् का आगम होता है)।

ह्रस्वस्य—VII. iii. 108

ह्रस्वान्त अङ्ग को (सम्बुद्धि परे रहते गुण होता है)।

...ह्रस्वात्—VI. i. 67

देखें—एङ्ह्रस्वात् VI. i. 67

ह्रस्वात्—VI. i. 146

ह्रस्व शब्द से उत्तर (चन्द्र शब्द उत्तरपद हो तो सुट् का आगम होता है, मन्त्रविषय में, संहिता में)।

ह्रस्वात्—VIII. ii. 27

ह्रस्वान्त (अङ्ग) से उत्तर (सकार का झल् परे रहते लोप होता है)।

ह्रस्वात्—VIII. iii. 32

ह्रस्व पद से उत्तर (जो ङम्, तदन्त पद से उत्तर अच् को नित्य ही ङमुट् आगम होता है)।

ह्रस्वात्—VIII. iii. 101

ह्रस्व (इण्) से उत्तर सकार को तकारादि तद्धित के परे रहते मूर्धन्य आदेश होता है)।

ह्रस्वादेशे—I. i. 47

ह्रस्वादेश के करने में (एच् = ए, ओ, ऐ, औ के स्थान में इक् = इ, उ, ऋ, लृ ही होता है)।

ह्रस्वान्ते—VI. ii. 174

(नञ् तथा सु से उत्तर बहुव्रीहि समास में) ह्रस्वान्त उत्तरपद में (अन्त्य से पूर्व को उदात्त होता है)।

ह्रस्वे—V. iii. 86

'छोटा' अर्थ में (वर्तमान प्रातिपदिक से यथविहित प्रत्यय होते हैं)।

...ह्री...— III. i. 39

देखें — भीह्रीभृहुवाम् III. i. 39

...ह्री...— VI. i. 186

देखें—भीह्रीभृ० VI. i. 186

...ह्री...— VII. iii. 36

देखें — अर्त्तिह्री० VII. iii. 36

...ह्रीभ्यः — VIII. ii. 56

देखें — नुदविदोन्द० VIII. ii. 56

हरु –VII. ii. 31

('ह्वृकौटिल्ये' धातु को निष्ठा परे रहते वेदविषय में) हरु आदेश होता है।

ह्लादः–VI. iv. 95

ह्लाद् अङ्ग की (उपधा को निष्ठा परे रहते ह्रस्व हो जाता है)।

ह्वः–I. iii. 30

(नि, सम्, उप तथा वि उपसर्गपूर्वक) ह्वेञ् धातु से (आत्मनेपद होता है)।

...ह्व :–III. i. 53

देखें–लिपिसिचिह्वः III. i. 53

ह्वः–III. iii. 72

(नि, अभि, उप तथा वि पूर्वक) ह्वेञ् धातु से (कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में अप् प्रत्यय होता है तथा ह्वेञ् को सम्प्रसारण भी हो जाता है)।

ह्वः–VI. i. 32

(सन्परक चङ्परक णि के परे रहते) ह्वेञ् धातु को (सम्प्रसारण हो जाता है तथा अभ्यस्त का निमित्त जो ह्वेञ् धातु, उसको भी सम्प्रसारण हो जाता है)।

...ह्वर... –II. iv. 80

देखें–घसह्वरणश० II. iv. 80

ह्वरितः–VII. ii. 33

ह्वरित शब्द (वेदविषय में सोम वाच्य होने पर) निपातन किया जाता है।

ह्वरेः–VII. ii. 31

ह्वृ कौटिल्ये धातु को (निष्ठा परे रहते वेदविषय में हरु आदेश होता है)।

ह्वा... –III. ii. 2

देखें–ह्वावामः III. ii. 2

...ह्वा... –VII. iii. 37

देखें–शाच्छासा० VII. iii. 37

ह्वावामः –III. ii. 2

ह्वेञ्, वेञ्, माङ् —इन धातुओं से (भी कर्म उपपद रहते अण् प्रत्यय होता है)।

परिमल पब्लिकेशन्स
२७/२८ व २२/३, शक्ति नगर,
दिल्ली - ११०००७ (भारत)
दूरभाष : २३८४५४५६, ४७०१५१६८